

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

प्रधान सम्पादक—पद्मश्री भुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य

[सम्मान्य सञ्चालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर]

ग्रन्थाङ्क ७६

कपिशोसर भट्ट चन्द्रशेखर विरचित

वृत्तमौक्तिक

[दुष्प्ररोदार एव दुर्गमबोध टीकाद्वय संवलित]

प्रकाशक

राजस्थान राज्य हस्तलिखित

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान

RAJASTHAN ORIENTAL RESEARCH INSTITUTE, JODHPUR

जोधपुर (राजस्थान)

१९६२ ई०

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला

राजस्थान राज्य द्वारा प्रकाशित

सामान्यतः अखिलभारतीय तथा विशेषतः राजस्थानदेशीय पुरातनकालीन
संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश, राजस्थानी, हिन्दी आदि भाषानिबद्ध
विविधवाङ्मयप्रकाशिनी विशिष्ट ग्रन्थावली

प्रधान सम्पादक

पद्मश्री मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वाचार्य

सम्मान्य सचालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर;

ऑनरेरि मेम्बर ऑफ जर्मन ओरिएण्टल सोसाइटी, जर्मनी;

निवृत्त सम्मान्य नियामक (ऑनरेरि डायरेक्टर),

भारतीय विद्याभवन, बम्बई; प्रधान सम्पादक,

सिंधी जैन ग्रन्थमाला, इत्यादि

ग्रन्थाङ्क ७६

कविशेखर भट्ट चन्द्रशेखर विरचित

वृत्तमौक्तिक

[दुष्प्ररोद्धार एव दुर्गमबोध ध्याख्याद्वय संवलित]

प्रकाशक

राजस्थान सांस्कृतिकानुसार

सञ्चालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान

जोधपुर (राजस्थान)

१९६५ ई०

सम्पादक

महोपाध्याय विनयसागर

साहित्य महोपाध्याय, साहित्याचार्य, दर्शनशास्त्री,

साहित्यरत्न, काव्यमूषण, शास्त्रविद्याभट्ट

प्रकाशनकर्ता

राजस्थान राज्याज्ञानुसार

सञ्चालक, राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान

जोधपुर (राजस्थान)

विक्रमाब्द २०२२ }
प्रथमावृत्ति १०७० }

भारतराष्ट्रीय शकाब्द १८८७

{ ख्रिस्ताब्द १९६५
{ मूल्य-१८.२५

मुद्रक- हरिप्रसाद पारीक, सापना प्रेस, जोधपुर

Vrittamauktik

of

Chandrashekhar Bhatta

with commentaries by Bhatt Lakshminath and Meghavijaya Gani



Edited with

Appendices and elaborate preface

by

M. Vinayadasagar,

**Sahitya-mahopadhyaya, Sahityacharya,
Darshan-shastri, Sahitya-ratna, Shastra-visharad etc.**

Published under the orders of the Government of Rajasthan

By

**THE RAJASTHANI ORIENTAL RESEARCH INSTITUTE
JODHPUR (Rajasthan)**

V.S. 2022 1

I 1965 A.D.

उच्चालकीय वक्तव्य

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला के ७६वें ग्रन्थांक के स्वरूप वृत्त-भौक्तिक नाम का यह एक मुक्तांकित ग्रन्थरत्न गुम्फित होकर ग्रन्थ-माला के प्रिय पाठकवर्ग के करकमलों में उपस्थित हो रहा है।

जैसा कि इसके नाम से ही सूचित हो रहा है कि यह ग्रन्थ वृत्त अर्थात् पद्यविषयक शास्त्रीय वर्णन का निरूपण करने वाला एक छन्दःशास्त्र है। भारतीय वाङ्मय में इस शास्त्र के अनेक ग्रन्थ उपलब्ध होते हैं। प्राचीनकाल से लेकर आधुनिक काल तक, इस विषय का विवेचन करने वाले सैकड़ों ही छोटे-बड़े ग्रन्थ भारत की भिन्न-भिन्न भाषाओं में ग्रथित हुए हैं। प्राचीनकाल में प्रायः सब ग्रन्थ संस्कृत और प्राकृत भाषा में रचे गये हैं। बाद में, जब देश्य-भाषाओं का विकास हुआ तो उनमें भी तत्तद् भाषाओं के ज्ञाताओं ने इस शास्त्र के निरूपण के वैसे अनेक ग्रन्थ बनाये।

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला का प्रधान उद्देश्य वैसे प्राचीन शास्त्रीय एवं साहित्यिक ग्रन्थों को प्रकाश में लाने का रहा है जो अप्रसिद्ध तथा अज्ञात स्वरूप रहे हैं। इस उद्देश्य की पूर्तिरूप में, हमने इससे पूर्व छन्दःशास्त्र से सम्बन्ध रखने वाले पाँच ग्रन्थ इस ग्रन्थमाला में प्रकाशित किये हैं। प्रस्तुत ग्रन्थ का छठा स्थान है।

इनमें पहला ग्रन्थ महाकवि स्वयंभू रचित है जो 'स्वयंभू छंद' के नाम से अंकित है। स्वयंभू कवि ६-१०वीं शताब्दी में हुआ है। वह अपभ्रंश भाषा का महाकवि था। उसका बनाया हुआ अपभ्रंश भाषा का एक महाकाव्य 'पउमचरित' है, जिसको हमने अपनी 'सिंधी जैन ग्रन्थमाला' में प्रकाशित किया है। स्वयंभू कवि ने अपने छन्दःशास्त्र में, संस्कृत और प्राकृतभाषा के उन बहुप्रचलित और सुप्रतिष्ठित छन्दों का तो यथायोग्य वर्णन किया ही है परन्तु तदुपरान्त विशेष रूप से अपभ्रंश-

भाषा-साहित्य के नवीन विकसित छन्दों का भी बहुत विस्तार से वर्णन किया है। अपभ्रंश-भाषा-साहित्य को दृष्टि से यह ग्रन्थ विशिष्ट स्तन-रूप है।

दूसरा ग्रन्थ है 'वृत्तजातिसमुच्चय'। इसका कर्त्ता विरहांक नाम से प्रकृत कोई 'कइसिठु' है। यह शब्द प्राकृत है, जिसका सही संस्कृत पर्याय क्या होगा, पता नहीं लगता। 'कइसिठु' का संस्कृत रूप कवि-श्रेष्ठ, कविशिष्ट और कृतशिष्ट अथवा कृतिश्रेष्ठ भी हो सकता है। वृत्तजातिसमुच्चय भी प्राचीन रचना सिद्ध होती है। इसकी रचना ६वी-१०वीं शताब्दी की या उससे भी कुछ प्राचीन अनुमानित की जा सकती है। यह रचना शिष्ट प्राकृत-भाषा में ग्रथित है। इसमें संस्कृत की अपेक्षा प्राकृत के छन्दों का विस्तृत निरूपण है और साथ में अपभ्रंश भाषा के भी अनेक छन्दों का वर्णन है। ग्रन्थकार ने अपभ्रंश शैली के छन्दों का विवेचन करते हुए उसकी उपशाखाएँ-स्वरूप 'आभीरी' और 'मारवी' अथवा 'मारवाणी' का भी नाम-निर्देश किया है जो प्राचीन राजस्थानी-भाषा-साहित्य के विकास के इतिहास की दृष्टि से प्राचीनतम उल्लेख है। राजस्थानी के पिछले कवियों ने जिसे 'मारवा' अथवा 'मुरधरभासा' कहा है, उसे ही कवि विरहांक ने 'मारवाणा' नाम से उल्लेख किया है। इस मारवाणी का एक प्रिय और प्रसिद्ध छन्द है जिसका नाम 'धोपा' अथवा 'धोपा' बताया है। इस उल्लेख से यह ज्ञान होना है कि ६वी-१०वीं शताब्दी में राजस्थान की प्रसिद्ध बोली 'मारई' या 'मारवी' का अस्तित्व और उसके कवि-मन्त्रदाय तथा उनकी काव्यकृतियों का व्यवस्थित विकास हो रहा था। प्राकृत और अपभ्रंश भाषा में पद्य-रचना के विविध प्रयोगों का इस ग्रन्थ में बहुत महत्वपूर्ण निरूपण है।

तीसरा ग्रन्थ है 'कविदण्ड'। यह भी प्राकृत के पद्य-स्वरूपों का निरूपण करने वाला एक विशिष्ट ग्रन्थ है। इसकी रचना विक्रम की १४वीं शताब्दी के प्रारम्भ में हुई प्रतीत होती है। विक्रम की १२वीं शताब्दी के प्रारम्भ में राजस्थान और गुजरात में प्राकृत और अप-

अथ भाषा के साहित्य में जिस प्रकार के अनेकानेक मात्रागणनीय छन्दों का विकास और प्रसार हुआ है उनका सोदाहरण लक्षण-वर्णन इस रचना में दिया गया है। 'सदेशरासक' जैसी रासावर्ग की सर्वोत्तम रचना में जिन विविध प्रकार के छन्दों का कवि ने प्रयोग किया है उन सब का निरूपण इस ग्रन्थ में मिलता है। प्राकृतपिंगल नाम के सुप्रसिद्ध ग्रन्थ में जिस प्रकार के छन्दों का वर्णन दिया गया है उनमें के प्रायः सभी छन्द इस ग्रन्थ में, उसी शैली का पूर्वकालीन पथप्रदर्शन करने वाले, मिलते हैं। जिस प्रकार प्राकृतपिंगल में दिये गये उदाहरणभूत पद्यों में, कर्ण, जयचंद, हमीर आदि राजाओं के स्तुति-परक पद्य मिलते हैं उसी तरह इस ग्रन्थ में भीमदेव, सिद्धराज जयसिंह, कुमारपाल आदि अणहिलपुर के राजाओं के स्तुतिपरक पद्य दिये गये हैं।

उक्त तीनों ग्रन्थों का सम्पादन हमारे प्रियवर विद्वान् मित्र प्रो० एच० डी० वेलणकरजी ने किया है जो भारतीय छन्दशास्त्र के अद्वितीय मर्मज्ञ विद्वान् हैं। इन ग्रन्थों को विस्तृत प्रस्तावनाओं में (जो अंग्रेजी में लिखी गई हैं) सम्पादकजी ने प्राकृत एवं अपभ्रंश के पद्य-विनास का बहुत पाण्डित्यपूर्ण विवेचन किया है। इन ग्रन्थों के अध्ययन से अपभ्रंश और प्राचीन राजस्थानी-गुजराती हिन्दीभाषा के विविध छन्दों का किस क्रम से विकास हुआ है वह अच्छी तरह ज्ञात हो जाता है।

विगत वर्ष में हमने इसी ग्रन्थमाला के ६६ वें मणि के रूप में 'वृत्तमुक्तावली' नामक ग्रन्थ प्रकाशित किया—जिसके रचयिता जयपुर के राज्यपण्डित श्रीगुरुभट्ट थे, महाराजा सवाई जयसिंह ने उनको बड़ा सम्मान दिया था। वृत्तमुक्तावली में वैदिक छन्दों का भी निरूपण किया गया है, जो उपर्युक्त ग्रन्थों में आलेखित नहीं हैं। वृत्तमुक्तावली में वैदिक छन्द तथा प्राचीन संस्कृत एवं प्राकृत-साहित्य में सुप्रचलित वृत्तों के अतिरिक्त उन अनेक देश्यभाषा-निबद्ध वृत्तों का भी निरूपण किया गया है जो उक्त प्राचीन ग्रन्थकारों के बाद होने वाले अन्यान्य कवियों द्वारा प्रयुक्त हुए हैं। श्रीगुरुभट्ट संस्कृत-भाषा के प्रौढ़

पण्डित थे। सस्कृत काव्य-रचना में उनकी गति प्रखर और अबाध थी इसलिये उन्होंने उक्त प्रकार के सब छन्दों के उदाहरण स्वरचित पद्यों द्वारा ही प्रदर्शित किये हैं। प्राकृत, अपभ्रंश और प्राचीन देशी भाषा के प्रधानवृत्तों के उदाहरण-स्वरूप पद्य भी उन्होंने सस्कृत में ही लिखे। हिन्दी-राजस्थानी-गुजराती भाषा में बहुप्रचलित और सर्वविश्रुत दोहा, चौपाई, सवैया, कवित्त और छप्पय जैसे छन्द भी उन्होंने सस्कृत में ही अवतारित किये।

इन ग्रंथों से विलक्षण एक ऐसा छन्द-विषयक अन्य बड़ा ग्रन्थ भी हमने ग्रन्थमाला में गुम्फित किया है जो 'रघुवरजसप्रकाश' है। इसका कर्त्ता चारण कवि किसनाजी आढा है, वह उदयपुर के महाराणा भीमसिंह जी का दरबारी कवि था। वि० स० १८८०-८१ में उसने इस ग्रन्थ की राजस्थानी भाषा में रचना की। जिसको कवि 'मुरधर भाखा' के नाम से उल्लिखित करता है। यह छन्दोवर्णन-विषयक एक बहुत ही विस्तृत और वैविध्य-पूर्ण ग्रन्थ है। कर्त्ता ने इस ग्रन्थ में छन्द शास्त्र-विषयक प्रायः सभी बातें अंकित कर दी हैं। वर्णवृत्त और मात्रावृत्तों के लक्षण दोहा छन्द में बताये हैं। उदाहरणभूत सब पद्य अर्थात् वृत्त कवि ने अपनी 'मुरधरभाखा' अर्थात् मरुभाषा में स्वयं ग्रथित किये हैं। इस प्रकार सस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश भाषा के सुप्रसिद्ध सभी छन्दों के उदाहरण उसने 'मरुभाखा' में ही लिखकर अपनी देशभाषा के भाव-सामर्थ्य और शब्दभंडार के महत्त्व को बहुत उत्तम रीति से प्रकट किया है। इसके अतिरिक्त उसने इस ग्रन्थ में राजस्थानी भाषाशैली में प्रचलित उन सैकड़ों गीतों के लक्षण और उदाहरण गुम्फित किये हैं जो अन्य भाषा-ग्रन्थित छन्दग्रन्थों में प्राप्त नहीं होते।

प्रस्तुत 'वृत्तमीमांसिका' ग्रन्थ इस ग्रन्थमाला का छन्द शास्त्र विषयक ६ठा ग्रन्थ है। यह ग्रन्थ भी वृत्तमुक्तावली के समान सस्कृत में गुम्फित है। वृत्तमुक्तावली के रचना काल से कोई एक शताब्दी पूर्व इसको रचना हुई होगी। इसमें भी वृत्तमुक्तावली की तरह सभी वृत्तों या पद्यों के उदाहरण ग्रन्थकार के स्वरचित हैं। वृत्तमुक्तावली की तरह इसमें

वैदिक छंदों का निरूपण नहीं है पर संस्कृत, प्राकृत, अपभ्रंश साहित्य में प्रयुक्त प्रायः सभी छंदों का विस्तृत वर्णन है। जितने छंदों अर्थात् वृत्तों का निरूपण इस ग्रन्थ में किया गया है उतनों का वर्णन इसके पूर्व निमित्त किसी भी संस्कृत छंदोग्रन्थ में नहीं मिलता है। इस दृष्टि से यह ग्रन्थ छंदःशास्त्र की एक परिपूर्ण रचना है।

संस्कृत-साहित्य में पद्य-रचना के अतिरिक्त अनेक विशिष्ट गद्य-रचनाएँ भी हैं जो काव्य-शास्त्र में वर्णित रस और अलंकारों से परिपूर्ण हैं, परन्तु गद्यात्मक होने से पद्यों की तरह उनका गेय स्वरूप नहीं बनता। तथापि इन गद्य-रचनाओं में कहीं कहीं ऐसे वाक्यविन्यास और वर्णन-कण्डिकाएँ, कविजन ग्रथित करते रहते हैं जिनमें पद्यों का अनुकरण-सा भासित होता है और उन्हें पढ़ने वाले सुपाठी मर्मज्ञ जन ऐसे ढंग से पढ़ते हैं जिसके श्रवण से गेय-काव्य का सा आनन्द आता है। ऐसे गद्यपाठ के वाक्यविन्यासों को छन्दःशास्त्र के ज्ञाताओं ने पद्यानुगन्धी अथवा पद्याभासी गद्य के नाम से उल्लेखित किया है और उसके भी कुछ लक्षण निर्धारित किये हैं। प्रस्तुत ग्रन्थ में वृत्तमीतिकार ने ऐसे विशिष्ट गद्यांशों का विस्तृत निरूपण किया है और इस प्रकार के शब्दालंकृत गद्य की कुछ विद्वानों की विशिष्ट स्वतंत्र रचनाएँ भी मिलती हैं जो विरुदावली और खण्डावली आदि के नाम से प्रसिद्ध हैं। ऐसी अनेक विरुदावलियों तथा कुछ खण्डावलियों का निरूपण इस वृत्तमीतिक में मिलता है जो इसके पूर्व रचे गये किसी प्रसिद्ध छंदोग्रन्थ में नहीं मिलता। इस प्रकार को छन्दःशास्त्र-विषयक अनेक विशेषताओं के कारण यह वृत्तमीतिक यथानाम ही मौक्तिक स्वरूप एक रत्न-ग्रन्थ है।

इस ग्रन्थ की विशिष्ट मूल-प्रति राजस्थान के बीकानेर में स्थित सुप्रसिद्ध अनूप संस्कृत पुस्तकालय में सुरक्षित है। मूल-प्रति ग्रन्थकार के समय में ही लिखी गई है—अर्थात् ग्रन्थ की समाप्ति के बाद १४ वर्ष के भीतर। यह प्रति आगरा में रहने वाले लालमणि मिश्र ने वि.सं. १९६० में लिख कर पूर्ण की।

ग्रन्थ की रचना कहाँ हुई इसका उल्लेख कहीं नहीं किया गया । परन्तु ग्रन्थकार तलमदेशीय भट्ट वश के ब्राह्मण थे और उनकी वश-परम्परा सुप्रसिद्ध वैष्णव सम्प्रदाय के धर्माचार्य श्री वल्लभाचार्य के वश से अभेद स्वरूप रही है । प्रस्तुत रचना में कर्त्ता ने सर्वत्र श्रीकृष्ण-भक्ति का और मथुरा वृन्दावन के गोप-गोपीजनो के रस-विहार का जो वर्णन किया है उससे यह कल्पना होती है कि ग्रन्थकार मथुरा-वृन्दावन के रहने वाले हों !

इस ग्रन्थ का सम्पादन श्री विनयसागरजी महोपाध्याय ने बहुत परिश्रम-पूर्वक बड़ी उत्तमता के साथ किया है । ग्रन्थ से सम्बद्ध सभी विचारणीय विषयों का इन्होंने अपनी विद्वत्तापूर्ण विस्तृत प्रस्तावना और परिशिष्टों में बहुत विशद रूप से विवेचन किया है जिसके पढ़ने से विद्वानों को यथेष्ट जानकारी प्राप्त होगी ।

ग्रन्थमाला के स्वर्णसूत्र में इस मौक्तिक-स्वरूप रत्न की पूर्ति करने निमित्त हम श्री विनयसागरजी के प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते हैं और आशा रखते हैं कि ये अपनी विद्वत्ता के परिचायक इस प्रकार के और भी ग्रन्थ-सम्पादन के कार्य द्वारा ग्रन्थमाला की सेवा और शोभावृद्धि करते रहेंगे ।

जन्माष्टमी सं. २०२२;
रात्रस्यान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान,
जोधपुर
दि० २०-८-६५

मुनि जिनविजय
सम्मान्य सञ्चालक

समर्पण

यः सूरेश्वर - वंश-सागर - मणिर्वादीमपञ्चाननः ,
तं श्रीजैनविधौ गणे दिनमणिं ध्यायामि हृद्धान्तहम् ।
हिन्द्यामागमसंप्रसारमणिना प्रोद्धारि येन श्रुतं ,
भव्यानामुपदेशदानमणये तस्मै नमः सर्वदा ॥

यस्मात्प्रादुरभून्मणेः शुभविधा श्रीगौतमाद्वागिव ,
वागीशानिव वादिनो जितवती वादेषु संवादिनः ।
सौमत्यम्बुनिधेर्मणेः समुदयात् सज्ज्ञानमालोकते ,
ग्रन्थं मौक्तिकनामकं गुरुमणौ भक्त्या मया ह्यर्प्यते ॥

षाट्षरशषट्षरीक

विनय

क्रमपञ्जिका

भूमिका

विषय	पृष्ठांक
छांदःशास्त्र का उद्भव और विकास	१ - १६
कवि-वंश-परिचय	२० - ४३
वृत्तमौक्तिक का सारांश	४३ - ६०
ग्रन्थ का बंशिष्टय	६० - ७१
वृत्तमौक्तिक और प्राकृतपिगल	७२ - ७४
वृत्तमौक्तिक और वाणीभूषण	७४ - ७८
वृत्तमौक्तिक और गोविन्दविद्यावली	७८ - ८०
वृत्तमौक्तिक में उद्धृत अप्राप्त गन्ध	८० - ८१
प्रस्तुत संस्करण की विशेषतायें	८१ - ८६
प्रति-परिचय	८६ - ८९
सम्पादन-शैली	८९ - ९२
आभार-प्रवर्तन	९२ - ९३
पारिभाषिक-शब्द	९४ - ९६

१. प्रथमखंड

विषय	पद्यसंख्या	पृष्ठांक
प्रथमं गायप्रकरणम्	१ - १२१	१ - १३
मङ्गलाचरणम्	१ - ६	१
गुणजघुस्मितिः	७ - १०	१ - २
विकल्पस्मितिः	११ - १२	२
कारप्रलक्षणेऽनिष्टफलवेदनम्	१३ - १४	२
मात्राणां गणत्ववस्थाप्रस्तारदध	१५ - १८	२ - ३
मात्रागणानां नामानि	१९ - ३८	३ - ४
वर्णवृत्तानां गणसंज्ञा	३९ - ४०	४
गणदेयता	४१	४
गणार्ध-भंशो	४२	४
गणदेयानां फलाफलम्	४३ - ५०	४ - ५
मात्रोद्दिष्टम्	५१ - ५२	५

विषय	पद्यमह्या	पृष्ठांश
मात्रानष्टम्	५२-५४	५
वर्णोद्दिष्टम्	५५	५
वर्णनष्टम्	५६	६
वर्णभेद	५७-५८	६
वर्णपताका	५९-६१	६
मात्राभेद	६२-६६	६
मात्रापताका	६६-६८	६
वृत्तद्वयस्थगुह्यलघुज्ञानम्	६९	७
वर्णमर्कटी	७०-७५	७
मात्रामर्कटी	७६-८५	७-८
नष्टोद्दिष्टम्	८६	८
प्रस्तारसख्या	८७-८८	८
गाथाभेदाः	८९-९०	८
गाथा	९१-९५	९
गाथायाः पञ्चविंशतिभेदाः	९६-१०३	९-१०
विगाथा	१०४-१०५	१०-११
गाहू	१०६-१०८	११
उद्गाथा	१०९-११०	११
गाहिनी	१११-११२	११-१२
सिहिनी	११३-११४	१२
स्कन्धकम्	११५-११६	१२
स्कन्धकस्याऽष्टाविंशतिभेदाः	११७-१२१	१२-१३
द्वितीय पदपदप्रकरणम्	१-७१	१४-२६
बोहा	१-३	१४
बोहायाः त्रयोविंशतिभेदाः	४-९	१४
रसिका	१०-११	१५
रसिकायाः सप्तौ भेदाः	१२-१५	१६
रोला	१६-१७	१६
रोलायाः त्रयोदश भेदाः	१८-२१	१७
गन्धानकम्	२२-२४	१७-१८
चीपंया	२५-२७	१८-१९
घता	२८-३०	१९
घताभगम्	३१-३३	१९
काव्यम्	३४-३७	१९-२०

विषय	पद्यसंख्या	पृष्ठांक
उत्सासम्	३८ - ३९	२०
शक्र (काव्यभेदः)	४० - ४२	२०
काव्यस्य पञ्चषत्वारिंशद्भेदाः	४३ - ५२	२० - २२
यद्वपवम्	५३ - ५५	२३
यद्वपवत्तस्यैकसप्ततिर्भेदाः	५६ - ६३	२३ - २४
काव्ययद्वपवयोर्दोषाः	६४ - ७१	२५ - २६
तृतीय रङ्गाप्रकरणम्	१ - २५	२७ - ३०
पञ्चदशिका	१ - २	२७
अष्टित्वा	३ - ४	२७
पादाकुलकम्	५ - ६	२७ - २८
घोषोला	७ - ८	२८
रङ्गा	९ - १२	२८ - २९
रङ्गायाः सप्तभेदाः	१३ - १५	२९
[१] करभी	१६ - १७	२९
[२] नादा	१८	२९
[३] मोहिनी	१९	३०
[४] वादसेना	२०	३०
[५] मन्त्रा	२१	३०
[६] राजसेना	२२	३०
[७] तासङ्गिनी	२३ - २५	३०
चतुर्थ पद्यावतीप्रकरणम्	१ - ६६	३१ - ४६
पद्यावती	१ - २	३१
कृष्णलिका	३ - ४	३१
गङ्गाकुलम्	५ - ६	३२
द्विपदी	७ - ८	३२
भुक्तना	९ - १०	३२ - ३३
सञ्ज्ञा	११ - १२	३४
शिला	१३ - १४	३४
भाला	१५ - १६	३४
चुलिघाला	१७ - १८	३५
सोरठा	१९ - २१	३५
हाकलि	२२ - २५	३५ - ३६
मधुभारः	२६ - २७	३६
घाभोरः	२८ - २९	३६

विषय	पद्यसंख्या	पृष्ठांक
दण्डकला	३० - ३१	३७
कामकला	३२ - ३३	३७
रचिरा	३४ - ३५	३७
वीपकम्	३६ - ३८	३८
सिंहबिम्बोक्तम्	४० - ४१	३८
प्लवङ्गमः	४२ - ४३	३८
लीलावती	४४ - ४५	३८
हरिगीतम्	४६ - ४७	३८ - ४०
हरिगीत[क]म्	४८ - ४९	४० - ४१
मनोहरहरिगीतम्	५० - ५१	४१
हरिगीता	५२ - ५३	४१
प्रपरा हरिगीता	५४ - ५५	४१ - ४२
त्रिभङ्गी	५६ - ५७	४२
कुमिलका	५८ - ५९	४२
होरम्	६० - ६२	४३
जनहरणम्	६३ - ६४	४४
मदनगृहम्	६५ - ६७	४५
मरहटा	६८ - ६९	४६
पञ्चम सवयाप्रकरणम्	१ - १२	४७ - ४८
सवया	१ - २	४७
सवयाभेदानां नामानि	३	४७
मदिरा सवया	४	४७
भासती सवया	५	४७
महती सवया	६	४८
मल्लिका सवया	७	४८
भापची सवया	८	४८
भागची सवया	९ - १०	४८
यनासारम्	११ - १२	४८
षष्ठ गलितकप्रकरणम्	१ - ३५	५० - ५६
गलितकम्	१ - २	५०
विगलितकम्	३ - ४	५०
सङ्गलितकम्	५ - ६	५० - ५१
मुग्धगलितकम्	७ - ८	५१
भूषणगलितकम्	९ - १०	५१

विषय	पद्यसंख्या	पृष्ठांक
मुखगलितकम्	११-१२	५१-५२
विलम्बितगलितकम्	१३-१४	५२
समगलितकम्	१५-१६	५२
अपर समगलितकम्	१७-१८	५३
अपर सङ्गलितकम्	१९-२०	५३
अपर लम्बितागलितकम्	२१-२२	५३
बिम्बितागलितकम्	२३-२४	५३-५४
ललितगलितकम्	२५-२६	५४
विषमितागलितकम्	२७-२८	५४
मालागलितकम्	२९-३०	५५
मुग्धमालागलितकम्	३१-३२	५५
उद्गलितकम्	३३-३४	५५-५६
पद्मकुरप्रशस्ति	३५-३६	५६

द्वितीय खंड

प्रथम वृत्तिरूपण-प्रकरणम्	१-६१७	५७-१८०
मङ्गलाचरणम्	१-२	५७
एकाक्षरम्	३-६	५७
श्रीः	३-४	५७
इ	५-६	५७
द्व्यक्षरम्	७-१४	५८
काम	७-८	५८
मही	९-१०	५८
सारम्	११-१२	५८
मधु	१३-१४	५८
त्र्यक्षरम्	१५-३०	५९-६०
ताली	१५-१६	५९
वाशी	१७-१८	५९
प्रिया	१९-२०	५९
रमण	२१-२२	५९
पञ्चाक्षरम्	२३-२४	६०

विषय	पद्यसंख्या	पृष्ठांक
मृगेन्द्रः	२५ - २६	६०
मन्दरः	२७ - २८	६०
कमलम्	२९ - ३०	६०
चतुरक्षरम्	३१ - ३८	६१
तीर्था	३९ - ४२	६१
घारी	४३ - ४४	६१
मगाणिका	४५ - ४६	६१
शुभम्	४७ - ४८	६१
पञ्चाक्षरम्	४९ - ४९	६२ - ६३
सम्मीहा	५० - ५०	६३
हारी	५० - ५२	६२
हस्त	५३ - ५४	६२
प्रिया	५५ - ५६	६२
यमकम्	५७ - ५८	६३
षडक्षरम्	५९ - ६७	६३ - ६५
शेषा	५९ - ५९	६३
तिलका	५२ - ५३	६३
विमोहम्	५४ - ५५	६४
चतुरस्रम्	५६ - ५७	६४
मगधानम्	५८ - ५९	६४
वाल्मीकी	६० - ६१	६४
शुभासक्तिः	६२ - ६३	६५
तनुमध्या	६४ - ६५	६५
वसनम्	६६ - ६७	६५
सप्तदशरम्	६८ - ६९	६५ - ६७
तीर्था	६८ - ६९	६५
समानिका	७० - ७१	६६
गुणासकम्	७२ - ७३	६६
करहृष्टि	७४ - ७५	६६
कुमारसलिला	७६ - ७७	६६
मधुमयी	७८ - ७९	६६ - ६७
मरसेता	८० - ८१	६७
शुभमति	८२ - ८३	६७

विषय	पद्यसंख्या	पृष्ठांक
अष्टाक्षरम्	८४ - १०१	६७ - ६९
विद्युन्माला	८४ - ८५	६७
प्रमाणिका	८६ - ८७	६८
मल्लिका	८८ - ८९	६८
तुङ्गा	९० - ९१	६८
कमलम्	९२ - ९३	६८
साणवकलीडितकम्	९४ - ९५	६९
विप्रपदा	९६ - ९७	६९
अनूद्युप्	९८ - ९९	६९
जलवम्	१०० - १०१	६९
नवाक्षरम्	१०२ - १२४	७० - ७२
हवामाला	१०२ - १०३	७०
महालक्ष्मिका	१०४ - १०५	७०
सारङ्गम्	१०६ - १०८	७०
पाङ्क्तम्	१०९ - ११०	७१
कमलम्	१११ - ११२	७१
विष्णुम्	११३ - ११४	७१
सोमरम्	११५ - ११६	७१
भुजगशिणुसूता	११७ - ११८	७२
मणिमध्यम्	११९ - १२०	७२
भुजङ्गसङ्गता	१२१ - १२२	७२
सुललितम्	१२३ - १२४	७२
दशाक्षरम्	१२५ - १४६	७३ - ७५
गोपालः	१२५ - १२६	७३
संयुतम्	१२७ - १२८	७३
चम्पकमाला	१२९ - १३१	७३
सारवती	१३२ - १३३	७३ - ७४
सुषमा	१३४ - १३५	७४
अमृतगतिः	१३६ - १३७	७४
मत्ता	१३८ - १३९	७४
स्वरितगतिः	१४० - १४२	७४ - ७५
मनोरमम्	१४३ - १४४	७५
ललितगतिः	१४५ - १४६	७५

विषय	पदसंख्या	पृष्ठांक
एकादशाक्षरम्	१४७ - १८६	७६ - ८७
मासतो	१४७ - १४८	७६
यन्मुः	१४६ - १४७	७६
सुमुखो	१४१ - १४२	७६ - ७७
शासिनो	१४३ - १४४	७७
घातोर्मा	१४५ - १४६	७७
हातिनी-वातोन्मुपजाति	१४७ - १४८	७८
घमनकम्	१४६ - १४७	७८ - ७९
चण्डिका	१६१ - १६२	७९
सेनिका	१६३ - १६४	७९ - ८०
हृद्गव्यज्जा	१६५ - १६६	८०
उपेन्द्रव्यज्जा	१६७ - १६८	८०
उपजाति	१६६ - १६७	८१
रघोद्धता	१७३ - १७४	८४
स्वागत	१७६ - १७७	८४ - ८५
भ्रमरविलसिता	१७८ - १७९	८५
अनुकूला	१८० - १८१	८६
मोदनकम्	१८२ - १८३	८६
सुकेली	१८४ - १८५	८६ - ८७
सुधद्विका	१८६ - १८७	८७
बकुलम्	१८८ - १८९	८७
द्वादशाक्षरम्	१९० - २५४	८८ - १०४
घापीडः	१९० - १९१	८८
भुजङ्गप्रपातम्	१९२ - १९३	८८
लक्ष्मीधरम्	१९४ - १९५	८८ - ८९
तीटकम्	१९६ - १९७	८९
हारङ्गकम्	१९८ - १९९	८९
मोक्तिकदास	२०० - २०१	९०
मोदकम्	२०२ - २०३	९०
सुन्दरी	२०४ - २०५	९० - ९१
प्रमिताक्षरा	२०७ - २०८	९१
धन्वतरम्	२१० - २१२	९१ - ९२
द्वतविलम्बितम्	२१३ - २१६	९२ - ९३
वैशम्पयिला	२१७ - २१८	९३

विषय	पद्यसंख्या	पृष्ठांक
इन्द्रवंशा	२१६ - २२१.	६३ - ६४
वशस्पयिलेऽब्रवंशोपभाति	२२२	६४-६७
जलोद्धतगतिः	२२३ - २२४	६७
वेदवदेवी	२२५ - २२६	६७
मन्वाकिनी	२२७ - २२८	६८
कुत्तुमविचित्रा	२२९ - २३०	६८ - ६९
तामरसम्	२३१ - २३२	६९
मालती	२३३ - २३४	६९
मणिमाला	२३५ - २३६	१००
जलधरमाला	२३७ - २३८	१००
प्रियवदा	२३९ - २४०	१०१
ललिता	२४१ - २४२	१०१
ललितम्	२४३ - २४४	१०१ - १०२
कामवता	२४५ - २४६	१०२
वसन्तचरितम्	२४७ - २४८	१०२
प्रभुवितवदना	२४९ - २५०	१०३
नयमालिनी	२५१ - २५२	१०३
तरलनयनम्	२५३ - २५४	१०३ - १०४
प्रयोवशाक्षरम्	२५५ - २६४	१०४ - ११३
वाराह	२५५ - २५६	१०४
माया	२५७ - २५८	१०४ - १०५
मत्तमपूरम्	२५९ - २६०	१०५ - १०६
तरकम्	२६१ - २६२	१०६
कन्दम्	२६३ - २६४	१०६ - १०७
पञ्चुवलिः	२६५ - २६७	१०७
प्रहृषिणी	२६८ - २७०	१०७ - १०८
वधिरा	२७१ - २७२	१०८
वधो	२७३ - २७४	१०८
भञ्जुभाषिणी	२७५ - २७६	१०९
चन्द्रिका	२७७ - २७८	१०९
कलहस	२७९ - २८०	११०
मृगेन्द्रमुखम्	२८१ - २८२	११०
क्षमा	२८३ - २८४	११० - १११
सता	२८५ - २८६	१११

विषय	पद्यसंख्या	पृष्ठांक
चन्द्रलेखम्	२८७ - २८८	१११
सुद्युतिः	२८९ - २९०	११२
सदमीः	२९१ - २९२	११२
विमलगतिः	२९३ - २९४	११२ - ११३
चतुर्विंशशतम्	२९५ - ३२९	११३ - १२०
सिंहारम्भः	२९५ - २९६	११३
सप्ततिलिका	२९७ - २९८	११३ - ११४
शक्रम्	३०० - ३०२	११४
असम्भवाधा	३०३ - ३०४	११४ - ११५
अपराजिता	३०५ - ३०६	११५
अक्षरकलिका	३०७ - ३०८	११५ - ११६
वासन्ती	३१० - ३११	११६
लोला	३१२ - ३१३	११६
नाम्नीमुखी	३१४ - ३१५	११७
वैशम्पै	३१६ - ३१७	११७
हनुवदनम्	३१८ - ३१९	११७ - ११८
शरभी	३२० - ३२१	११८
अहिधुतिः	३२२ - ३२३	११८
विमला	३२४ - ३२५	११८ - ११९
मलिका	३२६ - ३२७	११९
मणिगणम्	३२८ - ३२९	११९ - १२०
पञ्चदशशतम्	३३० - ३७२	१२० - १२८
लोलाखेलः	३३० - ३३१	१२०
मालिनी	३३२ - ३३६	१२० - १२१
वामरम्	३३७ - ३३८	१२१ - १२२
अमरावतिका	३४० - ३४२	१२२
मनोहृतः	३४३ - ३४५	१२३
शरभम्	३४६ - ३४७	१२३
मणिगुणनिकटः श्रमम्	३४८ - ३५१	१२३ - १२४
निदिपासकम्	३५२ - ३५४	१२४ - १२५
विपिनतिलकम्	३५५ - ३५७	१२५
अग्रसेना	३५८ - ३५९	१२५
चित्रा	३६० - ३६१	१२६

विषय	पद्यसंख्या	पृष्ठांक
केसरम्	३६२ - ३६३	१२६
एला	३६४ - ३६५	१२६ - १२७
श्रिया	३६६ - ३६८	१२७
उत्तमः	३६९ - ३७०	१२७
उद्गुणम्	३७१ - ३७२	१२८
पौष्पशास्त्रम्	३७३ - ४०४	१२८ - १३४
रामः	३७३ - ३७४	१२८
पञ्चदशामरम्	३७५ - ३७७	१२९
नीलम्	३७८ - ३७९	१२९
खञ्जला	३८० - ३८२	१३०
मदनसलिला	३८३ - ३८४	१३०
बाणिनी	३८५ - ३८६	१३१
प्रवरसलितम्	३८७ - ३८८	१३१
गवङ्गदत्तम्	३८९ - ३९०	१३१ - १३२
चकिता	३९१ - ३९२	१३२
गजतुरगविलसितम्	३९३ - ३९४	१३२
दीप्तिलता	३९५ - ३९६	१३३
सलितम्	३९७ - ३९८	१३३
सुकैसरम्	३९९ - ४००	१३३
सलमा	४०१ - ४०२	१३४
गिरिवरपुतिः	४०३ - ४०४	१३४
सप्तदशाक्षरम्	४०५ - ४४०	१३५ - १४२
लीलापुष्टम्	४०५ - ४०६	१३५
पुष्पी	४०७ - ४०९	१३५
मातावती	४१० - ४११	१३६
शिलरिणी	४१२ - ४१७	१३६ - १३७
हरिणी	४१८ - ४२१	१३७ - १३८
मग्धाप्राप्ता	४२२ - ४२४	१३८ - १३९
वन्द्यप्रपतितम्	४२५ - ४२६	१३९
महंटरम्	४२७ - ४२८	१३९ - १४०
कोकिलम्	४२९ - ४३०	१४०
हारिणी	४३१ - ४३२	१४० - १४१
भाराम्बिका	४३३ - ४३४	१४१
मत्तङ्गबाहिनी	४३५ - ४३६	१४०

विषय	पद्यसंख्या	पृष्ठांक
पद्यकम्	४३७ - ४३८	१४२
दशमुखहरम्	४३९ - ४४०	१४२
अष्टादशाक्षरम्	४४१ - ४७२	१४३ - १५०
लीलाचन्द्रः	४४१ - ४४२	१४३
मञ्जीरा	४४३ - ४४५	१४३
ध्वंशरी	४४६ - ४५२	१४४ - १४५
क्रीडाचन्द्रः	४५३ - ४५५	१४५ - १४६
कुसुमितलता	४५६ - ४५७	१४६
मन्दनम्	४५८ - ४६०	१४६ - १४७
नाराध	४६१ - ४६२	१४८
चित्रलेखा	४६३ - ४६४	१४८
भ्रमरपदम्	४६५ - ४६६	१४८
शाबूलललितम्	४६७ - ४६८	१४८ - १४९
मुललितम्	४६९ - ४७०	१४९
उपवनकुसुमम्	४७१ - ४७२	१४९ - १५०
एकोनविंशाक्षरम्	४७३ - ४८८	१५० - १५५
नागानन्दः	४७३ - ४७४	१५०
शाबूलविश्रीडितम्	४७५ - ४७८	१५० - १५१
ध्वजम्	४७९ - ४८१	१५१
धवलम्	४८२ - ४८४	१५२
शान्धु	४८५ - ४८७	१५२ - १५३
मेघविष्कूलितः	४८८ - ४९०	१५३
छाया	४९१ - ४९२	१५३ - १५४
सुरसा	४९३ - ४९४	१५४
पुस्तकाम	४९५ - ४९६	१५४
सुसुप्तकुसुमम्	४९७ - ४९८	१५५
विंशाक्षरम्	४९९ - ५१९	१५५ - १५९
योगानन्दः	४९९ - ५००	१५५
गोतिका	५०१ - ५०३	१५६
गण्डका	५०४ - ५०६	१५६ - १५७
तोभा	५०७ - ५०८	१५७
सुवहना	५०९ - ५११	१५७ - १५८
लक्ष्मभङ्गमङ्गलम्	५१२ - ५१३	१५८
शान्धुचलितम्	५१४ - ५१५	१५८

विषय	पद्यसंख्या	पृष्ठांक
भद्रकम्	५१६ - ५१७	१५६
धनसधिगुणगणम्	५१८ - ५१९	१५६
एकविंशाक्षरम्	५२० - ५२८	१६०-१६३
ग्रहानन्दः	५२० - ५२१	१६०
स्वाधरा	५२२ - ५२५	१६० - १६१
भञ्जरी	५२६ - ५२८	१६१
नेरुद्रः	५३० - ५३२	१६१ - १६२
सरसी	५३३ - ५३४	१६२
दक्षिण	५३५ - ५३६	१६३
निधनमल्लिकम्	५३७ - ५३८	१६३
द्वाविंशत्यक्षरम्	५३९ - ५५७	१६४-१६७
विद्यानिन्दः	५३९ - ५४०	१६४
हृत्ती	५४१ - ५४३	१६४
महिरा	५४४ - ५४५	१६५
मङ्गकम्	५४६ - ५४७	१६५
शिलरम्	५४८ - ५४९	१६५ - १६६
अच्युतम्	५५० - ५५१	१६६
मवालसम्	५५२ - ५५५	१६६ - १६७
तद्वरम्	५५६ - ५५७	१६७
प्रयोविंशाक्षरम्	५५८ - ५७५	१६७-१७१
विद्यानन्दः	५५८ - ५५९	१६८
सुन्दरिका	५६० - ५६१	१६८
पद्मावतिका	५६२ - ५६३	१६८ - १६९
अश्रितनया	५६४ - ५६७	१६९ - १७०
मालती	५६८ - ५६९	१७०
मल्लिका	५७० - ५७१	१७०
मत्ताकीडम्	५७२ - ५७३	१७१
जनकवसयम्	५७४ - ५७५	१७१
चतुविंशाक्षरम्	५७६ - ५८६	१७२ - १७४
रामानन्दः	५७६ - ५७७	१७२
कुमिलदा	५७८ - ५८०	१७२
किरीटम्	५८१ - ५८२	१७३
तन्वी	५८३ - ५८५	१७३
माधवी	५८६ - ५८७	१७४

विषय	पद्यसंख्या	पृष्ठांक
तरलनयनम्	५८८ - ५८९	१७४
पञ्चविंशश्लोकम्	५९० - ५९८	१७४ - १७६
कामानन्द.	५९० - ५९१	१७४ - १७५
कोञ्चवदा	५९२ - ५९४	१७५
मरुती	५९५ - ५९६	१७५ - १७६
मणिकणम्	५९७ - ५९८	१७६
षड्विंशश्लोकम्	५९९ - ६१०	१७६ - १७९
गोविन्दानन्द.	६९९ - ६००	१७६ - १७७
भुजङ्गविजृम्भितम्	६०१ - ६०३	१७७
अपवाह	६०४ - ६०६	१७७ - १७८
मागधी	६०७ - ६०८	१७८
कमलदलम्	६०९ - ६१०	१७९
उपसहार प्रस्तरविण्डितसह्या ख	६११ - ६१७	१७९ - १८०
द्वितीय प्रकीर्णक-प्रकरणम्	१ - ७	१८१ - १८३
भुजङ्गविजृम्भितस्य चत्वारो भेदा	१	१८१
द्वितीयत्रिभङ्गी	२ - ४	१८२ - १८३
मालूरम्	५ - ६	१८३
उपसहार	७	१८३
तृतीय दण्डक-प्रकरणम्	१ - १७	१८४ - १८७
चण्डबुष्टिप्रपात	१ - २	१८४
प्रक्षितक	३ - ४	१८४
दर्शद्वय	५ - ७	१८५
सर्वतोभद्र	८ - ९	१८५
अशोककुसुममञ्जरी	१० - ११	१८६
कुसुमस्तवक	१२ - १३	१८६
मत्तमातङ्ग	१४ - १५	१८६
अनङ्गोत्तर	१६ - १७	१८७
चतुर्थ अष्ट-सप्त-प्रकरणम्	१ - ३१	१८८ - १९१
अष्टं सप्तदश रुक्मणम्	१ - ६	१८८
पुष्टिताप	७ - ११	१८८ - १८९
उपवित्रम्	१२ - १३	१८९
वेपथ्वी	१४ - १५	१८९
हरिणप्लुता	१६ - १७	१८९

विषय	पद्यसंख्या	पृष्ठांक
मपयवधम्	१८-२०	१८६-१९०
मुग्दरो	२१-२३	१९०
भद्रविराट्	२४-२५	१९०
केतुमतो	२६-२७	१९१
वाङ्-मतो	२८-२९	१९१
पट्टपदावली	३०	१९१
उपसंहारः	३१	१९१
पञ्चम विषयवृत्त-प्रकरणम्	१-२५	१९२-१९५
विषयवृत्तलक्षणम्	१	१९२
उद्गता	२-३	१९२
उद्गताभेदः	४-६	१९२
सौरभम्	७-८	१९२-१९३
सलितम्	९-१०	१९३
भग्नः	११-१२	१९३
वधम्	१३-१५	१९३
पद्यपद्यवधम्	१६-१७	१९४
उपसंहारः	१८-२५	१९४
षष्ठ्यं वेताल्लोप-प्रकरणम्	१-३४	१९६-२००
वेताल्लोपम्	१-३	१९६
श्रीपद्यद्वयम्	४-५	१९६
आपातल्लोपम्	६-७	१९६
नल्लोपम्	८-९	१९६-१९७
नल्लोपपरम्	१०-११	१९७
द्विलोपान्तिका-वेताल्लोपम्	१२-१४	१९७
उत्तराग्निका-वेताल्लोपम्	१५-१६	१९८
प्राग्वृत्तिर्वेताल्लोपम्	१७-२०	१९७-१९८
उद्दीर्घवृत्तिर्वेताल्लोपम्	२१-२३	१९८
प्रवृत्तक वेताल्लोपम्	२४-२६	१९८-१९९
अवधल्लोपम्	२७-३०	१९९
आरुहल्लोपम्	३१-३४	१९९-२००
सप्तमं यतिनिरूपण-प्रकरणम्	१-१८	२०१-२०६
अष्टमं गद्यनिरूपण-प्रकरणम्	१-९	२०७-२१०
गद्यानि सप्तमम्	१-७	२०७

विषय	पद्यसङ्ख्या	पृष्ठांक
शुद्ध-चूर्णकम्		२०७
आविद्ध चूर्णकम्		२०७
सलित चूर्णकम्		२०८
धवृत्तिमुग्ध चूर्णकम्		२०८
अत्यल्पवृत्तिमुग्ध चूर्णकम्		२०८
जलकलिकाप्राय-गद्यम्		२०८ - २०९
धृतगन्धि-गद्यम्		२०९
प्रत्याग्तरे प्रकाश-तरेण अतुर्विय गद्यम्	८ - ९	२१०
नयम विश्वावली-प्रकरणम्		२११ - २६७
प्रथम कलिका-प्रकरणम्	१ - २२	२११ - २१८
विश्वदावली-सामान्यसंज्ञणम्	१ - ५	२११
द्वितीया कलिका	६	२११
राविकलिका	६	२११
माविकलिका	७	२१२
माविकलिका	७	२१२
गलाविकलिका	७	२१२
मिभाकलिका	=	२१२
मध्याकलिका	८	२१२ - २१३
द्विभङ्गी कलिका	९	२१३
नवधा त्रिभङ्गी कलिका	१० - २२	२१३ - २१८
विदग्धप्रिभङ्गी-कलिका	१२	२१३
सुरगप्रिभङ्गी कलिका	१२	२१३ - २१४
पराप्रिभङ्गी कलिका	१२	२१४
हरिणप्लुतप्रिभङ्गी कलिका	१२ - १३	२१४
मत्स्यप्रिभङ्गी-कलिका	१३	२१४
मुनङ्गप्रिभङ्गी-कलिका	१३ - १४	२१४ - २१५
द्विविधा त्रिगता त्रिभङ्गी-कलिका	१५	२१५
द्विविधा चरतनु-त्रिभङ्गी-कलिका	१६	२१५ - २१६
पञ्चविधा भेदप्रभेदाविता द्विषादिका	१७ - २२	२१६ - २१८
युग्मभङ्गा-कलिका		
विश्वदायन्या द्वितीय चण्डवृत्तप्रकरणम्	१ - ३६	२१९ - २५४
चण्डवृत्तस्य संज्ञणम्	१ - २	२१९
परिभाषा	३ - ८	२१९

विषय	पद्यसंख्या	पृष्ठांक
पुरुषोत्तमऽध्यायवृत्तम्	६	२२०
तिलकऽध्यायवृत्तम्	६-१०	२२०-२२१
अच्युतऽध्यायवृत्तम्	१०-११	२२१-२२२
अद्वितऽध्यायवृत्तम्	११	२२२-२२४
रणदध्यायवृत्तम्	११-१२	२२४-२२५
घोरदध्यायवृत्तम्	१२-१३	२२५-२२६
शाकदध्यायवृत्तम्	१३-१४	२२६
मातङ्गलेखितऽध्यायवृत्तम्	१४-१५	२२६-२२८
उत्पलऽध्यायवृत्तम्	१५-१६	२२८-२२९
गुणरतिदध्यायवृत्तम्	१६	२२९-२३०
कल्पद्रुमऽध्यायवृत्तम्	१६-१७	२३०-२३१
कन्दलऽध्यायवृत्तम्	१७	२३१
अपराजितऽध्यायवृत्तम्	१८	२३१
मत्तंनऽध्यायवृत्तम्	१९	२३१
तरसमाप्तऽध्यायवृत्तम्	१९-२०	२३१-२३२
वेष्टनऽध्यायवृत्तम्	२०-२१	२३२
अस्त्रलितऽध्यायवृत्तम्	२१-२२	२३२
परलवितऽध्यायवृत्तम्	२२-२३	२३२-२३३
समप्रऽध्यायवृत्तम्	२३	२३३-२३४
तुरगऽध्यायवृत्तम्	२३-२४	२३४-२३५
पद्मेदहऽध्यायवृत्तम्	२४-२५	२३५-२३७
तितकञ्जादिभेदानां लक्षणम्	२६-२८	२३७
तितकञ्जऽध्यायवृत्तोदाहरणम्		२३८-२३९
वाक्पूतऽध्यायवृत्तोदाहरणम्		२३९-२४०
हृदीमरऽध्यायवृत्तोदाहरणम्		२४०-२४१
अवणाभोदहऽध्यायवृत्तोदाहरणम्		२४२-२४३
पुरुताम्बुजऽध्यायवृत्तम्	२९-३०	२४३-२४४
अम्पकऽध्यायवृत्तम्	३१-३२	२४४-२४६
अञ्जुतऽध्यायवृत्तम्	३२	२४६-२४७
कुम्हऽध्यायवृत्तम्	३३	२४७-२४८
अङ्गुलमागुरऽध्यायवृत्तम्	३३-३४	२४८-२४९
अङ्गुलमङ्गलऽध्यायवृत्तम्	३४-३५	२४९-२५०
मञ्जरी कोरकऽध्यायवृत्तम्	३६	२५१-२५२
गुणदध्यायवृत्तम्	३७-३८	२५२-२५३

विषय	पद्यसंख्या	पृष्ठांक
कुसुमञ्जलवृत्तम्	३६	२५३ - २५४
विरुदावल्या तृतीय त्रिभङ्गी-कलिकाप्रकरणम्	१ - ६	२५५ - २५६
दण्डकत्रिभङ्गीकलिका	१ - २	२५५ - २५६
सम्पूर्णा विदग्धत्रिभङ्गीकलिका	३ - ४	२५६ - २५७
त्रिभङ्गीकलिका	४ - ६	२५७ - २५८
विरुदावर्या चतुर्थ साधारणमत चण्डवृत्त- प्रकरणम्	१ - ४	२६०
विरुदावली	१ - १६	२६० - २६७
साप्तविम्वित्तकी कलिका	१ - ७	२६१ - २६२
अष्टमयी कलिका	८ - ९	२६२ - २६४
सर्वलघुक-कलिका	१० - ११	२६४ - २६५
सर्वकलिकासु विरुदानां युगपदेव लक्षणम्	१२ - १८	२६६ - २६७
विरुदावलीपाठकलम्	१९	२६७
दशम खण्डावली प्रकरणम्	१ - ६	२६८ - २७१
खण्डावली लक्षणम्	१	२६८
तामरस खण्डावली	२	२६८ - २७०
मञ्जरी खण्डावली	३	२७० - २७१
प्रकरणोपसंहार	४ - ६	२७१
एकादश दोष प्रकरणम्	१ - ४	२७२
द्वादश अनुक्रमणी-प्रकरणम्		२७३ - २८६
१ प्रथमखण्डानुक्रमणी	१ - ४०	२७३ - २७५
१ गायप्रकरणानुक्रमणी	१ - १५	२७६ - २७४
२ यटपदप्रकरणानुक्रमणी	१५ - १६	२७४
३ रङ्गाप्रकरणानुक्रमणी	२० - २२	२७४
४ पद्मावतीप्रकरणानुक्रमणी	२२ - ३०	२७४ - २७५
५ सर्वयाप्रकरणानुक्रमणी	३१ - ३३	२७५
६ गलितकप्रकरणानुक्रमणी	३३ - ३८	२७५
छन्द प्रकरणसंख्या ख	३९ - ४०	२७५
२ द्वितीयखण्डानुक्रमणी	१ - १८८	२७६ - २८६
१ वृत्तानुक्रमणी	१ - १३७	२७६ - २८५
२ प्रकीर्णकवृत्तानुक्रमणी	१३८ - १४०	२८५ - २८६
३ दण्डकवृत्तानुक्रमणी	१४१ - १४४	२८६

विषय	पत्रसंख्या	पृष्ठाक
४ अद्वैतमवस्थानुक्रमणी	१४४ - १४८	२८६
५ विद्यमवस्थानुक्रमणी	१४८ - १५१	२८६
६ वंतालीयवस्थानुक्रमणी	१५१ - १५५	२८६ - २८७
७ यतिप्रकरणानुक्रमणी	१५५ - १५६	२८७
८ गद्यप्रकरणानुक्रमणी	१५६ - १५६	२८७
९. विदवावलीप्रकरणानुक्रमणी	१६० - १८०	२८७ - २८६
(१) कलिकाप्रकरणानुक्रमणी	१६० - १६२	२८७
(२) अण्डवृत्तानुक्रमणी	१६३ - १७३	२८७ - २८८
(३) त्रिभङ्गीकलिकानुक्रमणी	१७३ - १७५	२८८
(४) साधारणचण्डवृत्तानुक्रमणी	१७६ - १७७	२८८
(५) विदवावलीवृत्तानुक्रमणी	१७८ - १८०	२८८ - २८६
१० अण्डावली प्रकरणानुक्रमणी	१८१ - १८२	२८६
११ बोधप्रकरणानुक्रमणी	१८२ - १८३	२८६
१२. अण्डवृत्तानुक्रमणी	१८३ - १८८	२८६
ग्रन्थकृत्-प्रशस्तिः	१ - ६	२६० - २६१

टीकाद्वय - क्रम - पञ्जिका

१ वृत्तमौक्तिकवात्तिकदुष्करोद्धार	२६२ - ३२६
(१) प्रथमो विधाम (मात्रोद्दिष्टम्)	२६२ - २६५
(२) द्वितीयो विधाम (मात्रानष्टम्)	२६५ - २६६
(३) तृतीयो विधाम (वर्णोद्दिष्टम्)	२६७ - २६८
(४) चतुर्थो विधाम (वर्णनष्टम्)	३०० - ३०१
(५) पञ्चमो विधाम (वर्णमेव)	३०२ - ३०३
(६) षष्ठो विधाम (वर्णपताका)	३०४ - ३०६
(७) सप्तमो विधाम (मात्रामेव)	३०७ - ३१०
(८) अष्टमो विधाम (मात्रापताका)	३११ - ३१५
(९) नवमो विधाम (वृत्ताष्टगुरुसधुर्लक्षयाज्ञानम्)	३१५ - ३१७
(१०) दशमो विधाम (वर्णमर्कटी)	३१७ - ३२०
(११) एकादशो विधाम (मात्रामर्कटी)	३२१ - ३२५
वृत्तिट्टप्रशस्ति	३२६
वृत्तमौक्तिकदुर्गमयोध	३२७ - ३६७
मात्रोद्दिष्टप्रकरणम्	३२७ - ३३०
मात्रानष्टप्रकरणम्	३३१ - ३४२
वर्णोद्दिष्ट-नष्टप्रकरणम्	३४३

विषय

पृष्ठांक

घर्णभेदप्रकरणम्

३४४ - ३४५

घर्णपताका-प्रकरणम्

३४६ - ३५१

मात्राभेद-प्रकरणम्

३५२ - ३५६

मात्रापताकाप्रकरणम्

३५७ - ३६०

घर्णमकंदी-प्रकरणम्

३६१ - ३६२

मात्रामकंदी-प्रकरणम्

३६३ - ३६६

वृत्तिहृत्प्रवर्तिः

३६७

परिशिष्ट - क्रमपञ्चिका

प्रथम परिशिष्ट

दण्णादि कला-वृत्तभेद-वारिभाषिक-शब्द-सङ्केत

३६८ - ३७२

द्वितीय परिशिष्ट

३७३ - ३८७

(क) मात्रिक छन्दों का अकारानुक्रम

३७३ - ३७८

(ख) वर्णिक छन्दों का अकारानुक्रम

३७९ - ३८५

(ग) बिन्दवावली छन्दों का अकारानुक्रम

३८६ - ३८७

तृतीय परिशिष्ट

३८८ - ४१३

(क) पद्यानुक्रम

४८८ - ४०१

(ख) उदाहरण-पद्यानुक्रम

४०२ - ४१३

चतुर्थ परिशिष्ट

४१४ - ४६६

(क १.) मात्रिक छन्दों के लक्षण एवं नामभेद

४१४ - ४२१

(क २.) गायत्री छन्द-भेदों के लक्षण एवं नामभेद

४२२ - ४२६

(ख) वर्णिक छन्दों के लक्षण एवं नामभेद

४२७ - ४५०

(ग) छन्दों के लक्षण एवं प्रस्तावना

४५१ - ४६१

(घ) बिन्दवावली छन्दों के लक्षण

४६२ - ४६६

पञ्चम परिशिष्ट

सन्दर्भ-ग्रन्थों में प्राप्त वर्णिक वृत्त

४६७ - ४१२

षष्ठ परिशिष्ट

गाथा एवं दोहा-भेदों के उदाहरण

४१३ - ४१८

सप्तम परिशिष्ट

ग्रन्थोद्धृत-ग्रन्थ-सामिका

४१९ - ४२१

अष्टम परिशिष्ट

छन्दः शास्त्र के ग्रन्थ और उनकी टीकाएँ

४२२ - ४३४

सहायक-ग्रन्थ

४३५ - ४३८

भूमिका

छन्दःशास्त्र का उद्भव और विकास

किसी पदार्थ के आयतन को उसका छन्द कहा जाता है । छन्द के बिना किसी भी वस्तु की अवस्थिति इस ससार में संभव नहीं है । मानव-जीवन को भी छन्द कहा जाता है । सात छन्दों या मर्यादाओं से जीवन मर्यादित है । छन्द या मर्यादा के कारण ही मनुष्य स्व और पर की सीमाओं में बधा हुआ है । स्वच्छन्दत्व उसे प्रिय होता है परच्छन्दत्व नहीं । मनुष्य स्वकीय छन्दों या सीमाओं को विस्तृत करता हुआ, स्वतन्त्रता के मार्ग का अनुशीलन करता हुआ अपने जीवन का उद्देश्य प्राप्त कर लेता है ।

छन्द पद का निर्वचन—

छन्द और छन्दस् पदों की निरुक्ति श्रीरस्वामी ने 'छन्द' धातु से बतलाई है । अन्य व्युत्पत्तियों के अनुसार छन्द शब्द 'छदिर् ऊर्जने, छदि सवरणे, चदि आह्लादने दीप्ती च, छद सवरणे, छद अपवारणे' धातुओं से निष्पन्न है ।^१ वस्तुतः इन धातुओं से निष्पन्न शब्द विभिन्न अर्थों में पृथक्-पृथक् रूप से प्रयुक्त होते रहे होंगे । कालांतर में ये शब्द छन्द और छन्दस् शब्द-रूपों में खो गये । यास्क ने 'छन्दासि छादनात्'^२ कह कर आच्छादन के अर्थ में प्रयुक्त छन्द शब्द का अस्तित्व माना है । सायण ने ऋग्वेद-भाष्यभूमिका में 'आच्छादक-त्वाच्छन्दं' कथन द्वारा यास्क का समर्थन किया है । छान्दोग्योपनिषद् की एक गाथा के अनुसार देव मृत्यु से डर कर भयो-विद्या में प्रविष्ट हुए । वे छन्दों से आच्छादित हो गये । आच्छादन करने से ही छन्दों का छन्दत्व है ।^३ ऐतरेय आरण्यक के अनुसार स्तोता को आच्छादित करके छद पापकर्मों से रक्षित करते हैं ।^४ इन स्थानों पर आच्छादन अर्थ वाला छद शब्द प्रयुक्त हुआ है । असौम चैतन्य-सत्ता को सीमाओं या मर्यादाओं में बाध कर ससौम बना देने वाली प्रकृति भी आच्छादन करने के कारण ही छन्द कहो जाती है । वैदिक-दर्शन के अनुसार छन्द 'वाक्-विराज्' का भी नाम है जो सात्य की प्रकृति या वेदात् की माया के

१-वैदिक छन्दोमीमांसा, —प० मुधिष्ठिर मीमांसक, पृ० ११-१३.

२-निरुक्त ७।१२

३-छान्दोग्योपनिषद् १।४।२; तुलनीय गार्ग्य का उपनिदान सूत्र ८।२

४-ऐतरेय आरण्यक २।२

समकक्ष है। सारा विश्व इसी से विवक्षित होता है। आच्छादनभाव को स्पष्ट करने के लिए 'छदिच्छन्द' नाम का विशेष रूप से इसमें उल्लेख किया गया है।^१ यह एक छन्द ही विविध रूपों में एक से अनेक हो जाता है। इन विभिन्न छन्दों में आत्मा आच्छादित हो कर व्याप्त हो जाती है। आत्मा 'छन्दोमा' के रूप में विविध छन्दों को प्रकाशित करती है।^२ छन्द से छन्दित छन्दोमा स्वयं छन्द है और ज्योतिस्वरूप होने से उसका सम्बन्ध दीप्ति से तथा आनन्दस्वरूप होने से आह्लाद से भी जुड़ जाता है। यदि धातु से निष्पन्न छन्द (भूल रूप छन्द) का प्रयोग ऐसे प्रसंगों में होता रहा जात होता है। प्राण (प्राणा वै छन्दासि)^३, सूर्य (छन्दासि वै ब्रजो गोस्वान)^४ और सूर्य रश्मियों (ऋग्वेद १।६२।६) को छन्द कहने का कारण भी दीप्तियुक्त होना ही प्राप्त होता है। लोक में भी गायत्री आदि पद्य, वेद, पार्ष्वग्रन्थ, संहिता, इच्छा, अनियन्त्रित आचार आदि^५ अर्थों में प्रयुक्त छन्द शब्द देखा जाता है। ये सब एव छन्द शब्द के विविध अर्थ नहीं हैं, वरन् इन-इन अर्थों में प्रयुक्त अलग-अलग शब्द हैं। किसी समय इसका सूक्ष्म भेद सुविज्ञान था। स्वर आदि द्वारा यह भेद स्पष्ट कर दिया जाता था। कालान्तर में अन्य शब्दों की तरह^६ ये सारे शब्द एक छन्द शब्द में द्रिष्ट हो गये और उनके स्वर-चिह्नों में भी उदात्तादि प्रबल स्वरों में अपना अस्तित्व खो दिया।

साहित्य में छन्द—

ऊपर छन्द के विविध अर्थों में एक गायत्री आदि छन्द का भी उल्लेख किया गया है। वाङ्मय में छन्द का विशिष्ट महत्त्व है। कात्यायन के अनुसार सारा वाङ्मय छन्दोरूप है—छन्दोभूलमिदं सर्वं वाङ्मयम्।^७ छन्द के बिना वाक् उच्चारित नहीं होती।^८ कोई शब्द छन्द रहित नहीं होता।^९ इसीलिए गद्य और पद्य दोनों को छन्दोयुक्त माना जाता है।^{१०}

१-वैदिक दर्शन — डा० फतहसिंह, पृष्ठ १८२-१८३

२-वैदिक दर्शन पृ० १८४ तथा उसके उद्धृत शाब्दिक महाभाष्य १।४।११३४

३-कीर्तिनाथ शास्त्र ७।६, ११।८ १७।२

४-तैत्तिरीय ब्रह्मसूत्र ३।१।६ ३

५-वैदिक छन्दोमीमांसा पृ० ७-८

६-शब्दों के विकास का 'श्री प्रहसि' के लिए देखें— 'ऋग्वेद में शब्दत्व'— बट्टी प्रसाद पंचोली

७-ऋग्वेदपुत्र परिशिष्ट ५, ध्रुवनीय छन्दोमुद्रासन जयकीर्ति, १।२

८-नाच्छन्दसि वागुच्चारति इति — निरुक्त ७।२, दुर्गाहति

९-छन्दोहीनो न शब्दोऽस्ति — नाद-शास्त्र १।४।१३

१०-वैदिक छन्दोमीमांसा पृ० ८

छन्द की परिभाषा करते हुए कात्यायन ने ऋक्सर्वानुक्रमणी में अक्षर के परिमाण को छन्द कहा है—यदक्षरपरिमाण तच्छन्दः । अन्यत्र अक्षर सत्या का नियामक छद कहा गया है ।^१ छन्द का महत्व केवल अक्षर-ज्ञान कराना मान नहीं है । ऊपर के निबंधनों पर विचार करने पर भावो को आच्छादित करके अपने में सीमित करने वाली शब्द-सघटना को साहित्य में छन्द कह सकते हैं । अर्थ को प्रकाशित करके अर्थवेत्ता को आह्लादयुक्त कर देने में छन्द का छदत्व प्रकट होता है ।

वैदिक छद मनो के अर्थ प्रकट करने की विशेष शैली प्रक्रिया के द्योतक हैं । वेदों के व्याख्याकारों ने इस बात पर जोर दिया है कि ऋषि, देवता और छद के ज्ञान के बिना मनो के अर्थ उद्भासित नहीं होते । देवता मनो के विषय है, ऋषि वे सून हैं जिनसे अर्थ सरलतया प्रकट हो जाते हैं और छद अर्थप्राप्ति की प्रक्रिया का नाम है ।^२ छदों की अर्थ प्रकट करने की विशिष्ट प्रक्रिया के कारण ही वैदिक-शैली को 'छादस्' कहा गया है । पारसी धर्म-ग्रन्थ 'जेन्द अवस्ता' का जेन्द नाम भी छद का अपभ्रष्ट रूप ज्ञात होता है ।

ब्राह्मण ग्रन्थों में छादस्-प्रक्रिया का बड़ा ही सूक्ष्म व रहस्यात्मक वर्णन देखने को मिलता है । वहाँ छदों के नामों द्वारा सम्पूर्ण सृष्टि-प्रक्रिया को समझाने का प्रयत्न किया गया है । सब से अधिक रहस्यात्मक वर्णन गायत्री छद का है जो सूर्यलोक से प्राप्त होने वाले सावित्री प्राण का प्रतीक बन गया है । छदों का रहस्यात्मक वर्णन स्वतंत्र रूप से अनुसंधान का विषय है । यहाँ छद के व्यावहारिक रूप पर ही विचार किया जा रहा है ।

व्यावहारिक दृष्टिकोण से छद अक्षरों के मर्यादित प्रक्रम का नाम है । जहाँ छद होता है वही मर्यादा आ जाती है ।^३ मर्यादित जीवन में ही साहित्यिक छद जैसी स्वस्थ-प्रवाहशीलता और लयात्मकता के दर्शन होते हैं । मर्यादित इच्छा की अभिव्यक्ति प्राचीन गणराज्यों की जीवन्त छद परम्परा Voting System^४ कही जाती है ।

भावो का एकत्र सवहन, प्रकाशन तथा आह्लादन छद के मुख्य लक्षण हैं । इस दृष्टि से रुचिकर और श्रुतिप्रिय लययुक्त वाणी ही छद कही जाती है—

१-छ दोऽक्षरसंख्यावच्छेदकमुच्यते — अथर्ववेदीय बृहत्सर्वानुक्रमणी

२-ऋग्वेद के मन्त्रद्रष्टा ऋषि — बट्टीप्रसाद पंचोली, वेदवाणो, बनारस । १५।१

३-वेदविद्या — डॉ० वामुदेवशरण अग्रवाल, पृ० १०२

४-प्राचीन भारत में गणराज्य की व्यवस्था — बट्टीप्रसाद पंचोली, शोधपत्रिका उदयपुर, १५।१

‘छदयति पृणाति रोचते इति छद ।’ जिस वाणी को सुनते ही मन आह्लादित हो जाता है वह वाणी ही छद है—‘छदयति आह्लादयति छदते अनेन इति छद ।’

स्पष्ट है कि छद के रूप में अक्षर-भर्यादा का निर्वाह करने का सम्बन्ध शब्द-सघटना से है और प्रकाशन एवं आह्लादन का सम्बन्ध अर्थ के साथ है । इसी तरह छद के प्रथम दो लक्षणों का सबंध वक्ता से होता है और तृतीय का श्रोता से । इस दृष्टि से छद, श्रोता और वक्ता के बीच में प्रभावशाली सेतु का काम करता है । शतपथब्राह्मण में ‘रसो वै छदासि’^१ कह कर छद की रागात्मिका अनुभूति और अभिव्यक्ति की ओर स्पष्ट संकेत किया गया है ।

छन्द शास्त्र—

छद शास्त्र में छदों का विवेचन किया जाता है । भारतवर्ष में वैदिक तथा लौकिक संस्कृत भाषा के छदों पर विचार अत्यन्त प्राचीन काल से ही प्रारम्भ हो गया था । वैदिक छन्दोमोमासा में छद शास्त्र का आदि मूल वेद माना गया है ।^२ छद शास्त्र के प्राचीन संस्कृत-वाङ्मय में प्रयुक्त अनेक नामों का उल्लेख भी इसमें है । यथा—

(१) छदोविचिति, (२) छदोमान, (३) छदोभाषा, (४) छदोविजिति, (५) छदोनाम, (६) छदोविजिति, छदोविजित, (७) छदोव्याख्यान, (८) छदसा विचय, (९) छदसा लक्षणम्, (१०) छद शास्त्र, (११) छदोऽनुशासन, (१२) छदोविवृति, (१३) वृत्त, (१४) पिगल ।^३

छदोविचिति पद का अर्थ है—वह ग्रन्थ जिसमें छदों का चयन किया गया हो । यह पद पाणिनि के गणपाठ, कौटिल्य के अर्थशास्त्र, सरस्वतीकण्ठाभरण, गणरत्नमहोदधि आदि में प्रयुक्त हुआ है । पिगलप्रोक्त छदोविचिति, पतञ्जलि-प्रोक्त छदोविचिति, जनाश्रयप्रोक्त छदोविचिति, दण्डिप्रोक्त छदोविचिति तथा एक अन्य पालिभाषा के छदोविचिति का नामोल्लेख श्रीमोमासकजी में किया है ।^४

छदोमान नाम भी ग्रथवाची है । पाणिनि के गणपाठ, सरस्वतीकण्ठाभरण आदि में यह नाम प्रयुक्त हुआ है, परन्तु अभी तक इस नाम का कोई ग्रथ नहीं

१-संस्कृत साहित्य का इतिहास —वाचस्पति मेरोला, पृ० ११०

२-शतपथ ब्राह्मण ७।३।१।३७

३-वैदिक छदोमोमासा, प० युधिष्ठिर मोमासक, पृ० ४३

४-“ , , ३५

५-“ ” “ ३६

मिला है। जिस ग्रन्थ में छदो का भाषण या व्याख्यान मिलता हो उसे छदोभाषा कहा गया है। गणपाठो में यह नाम आया है।^१ ऐसी भी मान्यता है कि छदो-भाषा नाम प्रातिशाख्यो के लिए प्रयुक्त हुआ है।^२ विष्णुमित्र ने ऋक्प्रातिशाख्य की वृत्ति में छदोभाषा शब्द का अर्थ वैदिक भाषा किया है। कुछ ग्रन्थ लोगो ने छद का अर्थ छद शास्त्र तथा भाषा का अर्थ व्याकरण या निरुक्त किया है।^३ परन्तु प० युधिष्ठिर भीमासक ने इन मतों को निराकृत करके छदोभाषा-नामक छद शास्त्र के ग्रन्थों का अस्तित्व माना है उन्होंने भी इस नाम की चरण-व्यूह आदि में प्रातिशाख्य के लिए प्रयुक्त माना है।^४

जिस ग्रन्थ द्वारा छदों पर विजय प्राप्त हो सके उसे छदोविजिति कहा जाता है। चाद्र गणपाठ, जेनेन्द्र गणपाठ, सरस्वतीकण्ठाभरण आदि में यह नाम प्रयुक्त हुआ है। छदोनाम के लिए भीमासकजी ने समाधना प्रकट की है कि यह छदो-मान का गणभ्रश हो सकता है। छदोव्याख्यान, छदमा विचय, छदसा लक्षण, छदो-जुगासन, छद शास्त्र आदि भी छदोविषयक ग्रन्थों के नाम हैं। वृत्त पद के आधार पर वृत्तरत्नाकर आदि ग्रन्थों के नामकरण किए गये हैं। हमारे विवेच्य ग्रन्थ वृत्तमोपितक का नाम भी इसी परम्परा में उल्लेखनीय है।

छन्द शास्त्र के लिए पिगल-नाम छद शास्त्र के प्रमुख आचार्य पिगल के कारण ही प्रयुक्त हुआ जात होता है।^५ पिगल नाम के अनेक प्राकृतभाषा के ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं।

छन्द शास्त्र की प्राचीनता—

वैदिक छदों के नाम सर्वप्रथम वैदिक संहिताग्राम ही प्रयुक्त हुए हैं। वैदिक पङ्क्तियों में छद शास्त्र का नाम भी आता है। वेदमन्त्रों के साथ उनके छदों का नामोल्लेख भी हुआ है। उनका विशुद्ध और लयबद्ध उच्चारण छद शास्त्र के ज्ञान से ही सम्भव है। इसलिए वेदार्थ के विषय में विवेचन करने वाले सभी ग्रन्थों में छदों का भी प्रसंगवश उल्लेख मिल जाता है।

पाणिनि ने गणपाठ में छद शास्त्र-सम्बन्धी ग्रन्थों का उल्लेख किया है। उनके समय में तो लौकिक संस्कृत भाषा में महाभाष्या की रचनाएँ लिखी जाने लगी

१-वैदिक छदोभीमांसा पृ० ३७

२-संस्कृत साहित्य का इतिहास — जेरोना पृ० १२१

३-ग्रन्थ मन्त्रों के लिए देखो — वैदिक छदोभीमांसा, पृ० ३७-३८

४-वैदिक छदोभीमांसा, पृ० ३६४०

थी । इसलिए वैदिक छंदों के अतिरिक्त लौकिक छंदों पर भी विवेचना होने लगी होगी और इस विषय के अनेक ग्रंथ विद्यमान होंगे । विद्वानों की मान्यता है कि छंद शास्त्र के प्रमुख आचार्य पिंगल पाणिनि के समकालीन थे । छंद शास्त्र के विकास में पिंगल का बड़ा स्थान है जो व्याकरण-परम्परा में पाणिनि का है । तण्डी यास्क, कौटुकि, सैतव, काश्यप, रात, माण्डव्य आदि आचार्य पिंगल से भी प्राचीन हैं ।^१ इससे छंद शास्त्र की अतिप्राचीनता के विषय में किसी प्रकार कोई सदेह नहीं रह जाता है ।

छंद शास्त्र के प्राचीन आचार्य—

वेदांगों के प्रवक्ता शिव और बृहस्पति माने जाते हैं । महाभारत के एक उल्लेख के अनुसार वेदांगों का प्रवचन बृहस्पति ने^२ तथा एक दूसरे उल्लेख के अनुसार शिव ने^३ किया । परवर्ती ग्रंथकारों ने छंद शास्त्र के प्रवक्ता आचार्यों की परम्परा का उल्लेख किया है । छंद सूत्र भाष्य के अन्त में यादवप्रकाश ने छंद शास्त्र के प्रवर्तक आचार्यों की परम्परा का उल्लेख किया है —

छंदोज्ञानमिदं भवाद् भगवतो लेभे सुराणां गुरुं
तस्माद् दुश्च्यवनस्ततो सुरगुरुमण्डन्यनामा ततः ।
माण्डन्यादपि सैतवस्ततश्चपियस्किस्ततः पिंगलः,
तस्येदं यशसा गुरोर्भूवि वृत्तं प्राप्यास्मदाद्यैः कमात् ॥

इसी ग्रंथ के अंत में किसी का एक अन्य श्लोक भी दिया हुआ है —

छंद शास्त्रमिदं पुरा त्रिनयनात्लेभे गुहोऽनादित
तस्मात् प्राप सनत्कुमारमुनितस्तस्मात् सुराणां गुरुः ।
तस्माद्देवपतिस्ततः फणिपतिस्तस्माच्च सतिपंगल
तच्छिष्यैर्बहुभिर्महात्मभिर्दयो मया प्रतिष्ठापितम् ॥^४

प० युधिष्ठिर भीमासक ने इनमें से प्रथम परम्परा को अधिक विश्वसनीय माना है । उ होने राजवार्तिक में उल्लिखित —

शिवगिरिजानन्दिफणीन्द्रवृहस्पतिच्यवनशुक्रमाण्डव्या ।
सैतवपिंगलगुरुप्रमुखा आद्या जयन्ति गुरुचरणा ॥

१-वैदिक छंदोमीमांसा पृ० ४६

२-वेदांगानि ॥ बृहस्पति — महाभारत, शांतिपर्व २१२।३२

३-वेदात् पठमायुदयत्य — महाभारत, शांतिपर्व २६४।६२

४-उपयुक्त मतों के लिए द्रष्टव्य, वैदिक छंदोमीमांसा, पृ० ५७

तथा यति के प्रसंग में छंद शास्त्र-प्रवक्ता जयकीर्ति द्वारा उल्लिखित—

वाछन्ति यतिः पिंगलवसिष्ठकौडिन्यकपिलकम्बलमुनयः ।

नेच्छन्ति भरतकौहलमाण्डव्याश्वतरसंतवाद्याः केचित् ॥

परम्पराओं का उल्लेख भी किया है।^१

पिंगल छंद सूत्र में उल्लिखित आचार्यों का नाम ऊपर आ चुका है। इससे प्रकट है कि आचार्य पिंगल से पहले छंद शास्त्र के प्रवक्ताओं की एक व्यवस्थित एवं अविच्छिन्न परम्परा विद्यमान थी।

वैदिक और लौकिक छंद शास्त्र

छंद दो प्रकार के कहे गये हैं—वैदिक और लौकिक।^२ वेद संहिताओं में प्रयुक्त गायत्री, अनुष्टुप्, निष्टुप्, जगती, पक्ति, उष्णिक्, बृहती, विराट् आदि छंद वैदिक कहे जाते हैं। छंद शास्त्र के प्रारम्भिक ग्रंथों में केवल वैदिक छंदों और उनके भेद प्रभेदों पर ही विचार किया जाता था। बाद में वाल्मीकि ने लौकिक साहित्य में भी छंद का प्रयोग किया। उन्हें आदि-कवि होने का श्रेय मिला। इतिहास पुराण, काव्य आदि में छंदों का प्रभूत रूप से प्रयोग होने लगा। बाद में इन छंदों के लक्षणादि के विषय में छंद शास्त्र में विचार प्रारम्भ हुआ। संस्कृत-छंद शास्त्रों के आधार पर परवर्ती काल में प्राकृत और अपभ्रंश भाषाओं में छंदों के लक्षण ग्रंथ भी लिखे गये।

छंद के विषय में उपलब्ध प्राचीनतम सामग्री

वैदिक संहिताओं में गायत्री आदि छंदों के नाम अनेकधा उल्लिखित हैं परन्तु उनका विवेचन वहाँ प्राप्त नहीं होता। वस्तुतः उन स्थलों पर छंदों के नामों द्वारा आधिदैविक और आध्यात्मिक रहस्यों की ओर ही संकेत किया गया जात होता है। मंत्रों के ऐसे संकेतों का ब्राह्मण-ग्रंथों में विस्तार से स्पष्टीकरण किया गया है। विराट् छंद का मन्त्र विराज-गी (प्रकृति) से बत्ताते हुए ताण्ड्य-महाब्राह्मण में उसे छंदों में ज्योतिस्वरूप कहा गया है—विराट् वै छन्दसा ज्योतिः।^३ विराट् को दशाक्षर भी कहा गया है।^४ अन्य छंदों के विषय में भी ऐसे ही रहस्यमय विचार ब्राह्मण-ग्रंथों में मिलते हैं।

१-जयकीर्तिकृत छंदोद्भासन, १।१३ एवं वैदिक छंदोमीमांसा पृ० ५८

२-नारदपुराण — पूव भाग २।१७।१

३-ताण्ड्यमहाब्राह्मण, ६।३।९, १०।२।२

४-दशाक्षरं वै विराट् — शतपथब्राह्मण, १।१।१।२२, ऐतरेयब्राह्मण ६।२०; गोपथब्राह्मण पूर्वार्ध ४।२४, उत्तरार्ध, १।१८, ६।२, ६।१५; ताण्ड्यमहाब्राह्मण, ३।१।३

ऋग्वेद-प्रातिशाख्य को छंदशास्त्र की प्राचीनतम रचना माना जाता है। यह महर्षि शौनक की रचना है। इसका विवेच्यविषय व्याकरण है परन्तु प्रसंग-वश छंदों की भी चर्चा की गई है। यह चर्चा नितांत अधूरी है। छंदों का ज्ञान प्राप्त किये बिना मन्त्रों का उच्चारण ठीक तरह से नहीं हो सकता। इसीलिए इस ग्रंथ में छंदों का विवरण दिया गया है।^१

ऋग्वेद तथा यजुर्वेद की सर्वानुक्रमणियों में भी छंदों का विवरण मिलता है। छंदोऽनुक्रमणी में दस भेद हैं और उसमें ऋग्वेद के समस्त छंदों का क्रमशः विवरण दिया गया है। यह भी शौनक की रचना है। शांखायन श्रौतसूत्र में भी प्रसंगवश छंदों पर विचार किया गया है।

पतञ्जलि ने निदानसूत्र में छंदों का उल्लेख करते हुए कुछ प्राचीन छंद-शास्त्रों के प्रवक्ताओं के नामों का उल्लेख भी किया है। ये पतञ्जलि महाभाष्कार पतञ्जलि से भिन्न कोई प्राचीन आचार्य थे। एक अन्य गार्ग्य नामक आचार्य ने उपनिदानसूत्र में इन पतञ्जलि के अतिरिक्त सण्डिल्याह्वण, विगल आदि आचार्यों तथा उक्थशास्त्र का उल्लेख किया है। उक्थशास्त्र, संभव है छन्दशास्त्र के लिए प्रयुक्त कोई प्राचीन नाम रहा हो। कीथ ने हलानुबन्धकोश की साक्षी से इन वैदिक-परम्परा के प्राचीन ग्रंथों को वेदांग छन्दस् कहा है।^२

यास्क ने अपने निरुक्त में वैदिक छंदों के नामों का निर्वचन किया है। यथा—

गायत्री गायते स्तुतिकमणः। त्रिगमना वा विपरीता। गायतो मुजात् उदपतत्
इति च साह्यणम्। उष्णिगुत्सनाता भवति। स्निह्यतेर्वा ह्यास्करान्तिकर्मण। उष्णीदिनी
वेत्यौषधिकम्। उष्णीव स्नायते। ककुप्ककुभिनी भवति। ककुप्च कुञ्जश्च कुञ्जतेर्वा।
उद्वज्जतेर्वा। अनुष्टुप्पनुष्टोभनात्। गायत्रोमेध त्रिषदां सतीं धतुर्धेन पादेनानुष्टोभतीति इति
च साह्यणम्। गृह्णी परिबर्हेणात्। पंकित पञ्चपदा। त्रिष्टुप्स्तोभत्युत्तरपदा। का तु
त्रिता ह्यात्। तर्णितम् छन्दः। त्रिवृद्ध्यस्तस्य स्तोभतीति वा। यत् त्रिरस्तोभ-
सतिष्टुप्पदम्—इति विज्ञायते। जपती गततम छन्दः। अक्षचरगतिर्वा। अहगत्यमानो
प्रसृजत् इति च साह्यणम्। विराड् विराजनाद्वा। विराधनाद्वा। विप्रापणाद्वा। विरा-
जनात्सम्पूर्णक्षरा। विराधनात्पूर्णाक्षरा। विप्रापणादयिकाक्षरा। विपीलिकामध्येयो-
पमिरम्। विपीलिकाः पेलतेर्गतिकर्मणः।^३

१-वैदिक-साहित्य — रामगोविंद त्रिवेदी, पृ० २४०

२-साहित्य-साहित्य का इतिहास — कीथ (हिंदी अनुवाद, चोलम्बा) पृ० ४६२

३-निरुक्त, ७।१२

यास्क ने गायत्री को अग्नि के साथ, त्रिष्टुप् को इन्द्र के साथ तथा जगती को आदित्य के साथ भाग लेने वाला कहा है ।^१

छंदों का देवों के साथ संबंध तो वाजसनेयी-संहिता आदि में भी मिलता है ।^२ वैदिक छंदों के इस प्रकार के विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि रहस्यमिश्रित वर्णन से भी छंदों के स्वरूप पर प्रकाश पड़ता है और वेदार्थ-ज्ञान में उनकी उपयोगिता भी कम नहीं है । पाणिनि ने तो छंद को वेद का पाद कहा है —‘छन्दः पादो तु वेदस्य’ ।^३

पिंगल के पूर्ववर्ती छन्दःशास्त्र के आचार्य—

पिंगल से पूर्व का कोई ग्रंथ छंदों के विषय में प्राप्त नहीं है, परन्तु उनके पूर्ववर्ती अनेक ग्रंथकारों के नाम मिलते हैं । इससे पता चलता है कि उनके पूर्व छंदःशास्त्र की एक अविच्छिन्न परम्परा विद्यमान थी । उनके पहले के कुछ आचार्यों का परिचय यहाँ दिया जा रहा है—

१ शिव व उनका परिवार—

शिव को छंदःशास्त्र के प्रवर्तक आदि आचार्य के रूप में यादवप्रकाश और राजवातिकार ने स्मरण किया है । व्याकरण के आदि आचार्य भी शिव माने जाते हैं । संभव है ये केवल शैव-सम्प्रदाय में ही प्रवर्तक माने जाते हों । वेदांगों के शैव या माहेश्वर-सम्प्रदाय का प्राचीन काल में महत्वपूर्ण स्थान रहा ज्ञात होता है । शिव के साथ उनके पुत्र गृह व पत्नी पार्वती का नाम भी छंदःशास्त्र के प्रवक्ता के रूप में लिया जाता है । नन्दी शिव का याहन माना जाता है । संभव है यह किसी शिव-भक्त आचार्य का नाम रहा हो । राजवातिकार के अनुसार ये पतञ्जलि के गुरु तथा पार्वती के शिष्य थे । यात्स्यायन ने कामशास्त्र के आचार्य के रूप में भी नन्दी के नाम का उल्लेख किया है जो शिव के अनुचर थे ।^४

२. सनत्कुमार—

यादवप्रकाश के भाष्य के अन्त में दी हुई अज्ञात लेखक की परम्परा में

१-निदधत ७।८-११

२-वाजसनेयी-संहिता १४।१८-१९; मंत्रायणी-संहिता २।११९; ऋग्वेद-संहिता १७ ३-४; जैमिनीय-ब्राह्मण ६६

३-पाणिनीय-शिक्षा ४१

४-शामयूत्रम्, १।१।८

इनका नाम भी उल्लिखित है। कालक्रम से ये बृहस्पति के पूर्ववर्ती रहे होंगे। उपर्युक्त साक्षी से तो ये बृहस्पति के गुरु ठहरते हैं। परन्तु, इस बात की पुष्टि किसी अन्य सूत्र से होती नहीं जान पड़ती।

३ बृहस्पति—

इनका नाम उपर्युक्त तीनों परम्पराओं में आया है। व्याकरण के बाह्स्पत्य-सम्प्रदाय का अस्तित्व प० युधिष्ठिर भीमासक ने माना है।^१ महाभारत की ऊपर दी हुई साक्षी से वेदांगों के प्रवर्तक बृहस्पति हैं। ये माहेश्वर सम्प्रदाय से भिन्न परम्परा के प्रवर्तक ज्ञात होते हैं। बृहस्पति को भारतीय परम्परा में देव-गुरु माना गया है और इन्द्र इनके शिष्य कहे गये हैं।

४ इन्द्र—

ऐन्द्र-व्याकरण के प्रवक्ता इन्द्र का छन्दशास्त्र के प्रवक्ता के रूप में भी उल्लेख किया जाता है। यादवप्रकाश के भाष्य की दोनों परम्पराओं में इन्द्र का नाम आया है। राजवातिक के अनुसार फणीन्द्र ही इन्द्र ज्ञात होता है। प० युधिष्ठिरजी ने फणीन्द्र को पतञ्जलि का नाम माना है और व्यवन को दुश्क्यवन मान कर इन्द्र से अभिन्न मानने की सम्भावना प्रकट की है।^२ इस विषय में अभी निश्चय-पूर्वक कुछ भी कहना संभव नहीं है।

५ शुक्र—

यादवप्रकाश व राजवातिक दोनों में शुक्र का नाम आया है। सम्भव है शुक्रनीति के प्रवक्ता आचार्य शुक्र और छन्दशास्त्र के प्रवक्ता शुक्र अभिन्न हों।

७ कपिल—

इनको भीमासकजी ने कृतयुग का अन्तिम आचार्य माना है। जयकीर्ति के छन्दशास्त्र में यति चाहने वाले आचार्य के रूप में इनका नामोल्लेख किया गया है। सौख्यदर्शन के आचार्य कपिल और ये अभिन्न ज्ञात होते हैं।

८ माण्डव्य—

माण्डव्य के नाम का उल्लेख विंगल, जयकीर्ति, यादवप्रकाश, चन्द्रशेखर भट्ट पादि द्वारा किया गया है। इनको भीमासक जी ने त्रेतायुगीन माना है।

१-वैदिक-पदोमीमोषा, पृ० २१-२४

२- " " २८-२९

६. वसिष्ठ—

जयकीर्ति ने इनका नाम छंद शास्त्र के आचार्य के रूप में लिया है ।

१०. सेतव—

इनका नाम सभी परम्पराओं में आया है । ऐसा ज्ञात होता है कि ये बहुत प्रसिद्ध आचार्य रहे होंगे ।

११. भरत—

ये नाट्यशास्त्र-कर्त्ता भरत से अभिन्न ज्ञात होते हैं । जयकीर्ति ने छन्द शास्त्र के प्रवक्ता के रूप में इनके नाम का स्मरण किया है । नाट्यशास्त्र के १४वें तथा १५वें परिच्छेद में भरत ने छन्दों पर विचार किया है । सम्भव है इनका कोई पुण्य ग्रन्थ भी इस विषय पर रहा हो ।

१२. कोहल—

कोहल का नामोल्लेख भी जयकीर्ति ने ही किया है ।

द्वापरयुगीय अन्य छन्द-प्रवक्ता—

मीमांसकजी ने यास्क, रात, ऋग्वि, कौण्डिन्य, ठाण्डी, भद्रवतर, कम्बल, काश्यप, पाचाल (वाभ्रव्य) तथा पतञ्जलि को द्वापरकालीन छन्द-शास्त्र के आचार्य के रूप में विभिन्न साक्ष्यों के आधार पर स्वीकार किया है ।^१ यास्क के किसी पुण्य-छन्द सब भी ग्रन्थ का पता नहीं चलता । अन्य आचार्यों के मतों का ही यत्र-तत्र उल्लेख मिलता है ।

कलियुग के प्रारम्भ में होने वाले छन्द-प्रवक्ता—

मीमांसकजी ने उपन्यशास्त्रकार, बाल्यायन, गरुड, गार्ग्य, शौनव आदि का कलियुग के प्रारम्भ में होने वाले छन्द-शास्त्र-प्रवक्ताओं के रूप में नामोल्लेख किया है । पिगल का काल भी उन्होंने यही माना है ।

उपर्युक्त छन्द-शास्त्र-प्रवक्ताओं के कोई ग्रन्थ इस समय प्राप्त नहीं है, परन्तु उनके मतों के उद्धरण अन्य ग्रन्थों में मिल जाते हैं । परवर्ती विद्वानों को मन्त्रों में प्रभावित करने वाले आचार्य पिगल रहे हैं ।

आचार्य पिगल और पिगल-छन्द-ग्रन्थ—

पिगल की कृति ने प्राकृत-छन्दो-विषयक-ग्रन्थ “प्राकृत-पिगलम्” के रचयिता

से भिन्न अत्यन्त प्राचीन आचार्य माना है ।^१ पिंगलसूत्र ही छंदों के विषय में हमारे सामने सब से प्राचीन ग्रंथ है । कुछ लोगों ने पिंगल को पाणिनि से पूर्ववर्ती ग्रंथकार माना है । ऐसे लोगो में से कुछ पिंगल को पाणिनि का मामा मानते हैं, परन्तु युधिष्ठिर मीमांसक तथा गैरोला ने पिंगल को पाणिनि का अनुज, अतः समकालीन ग्रन्थकार माना है ।^२

पिंगल का महत्त्व इस बात से समझा जा सकता है कि बाद में छन्दःशास्त्र का नाम ही पिंगल-शास्त्र हो गया । इनका ग्रन्थ सर्वाधिक प्राचीन होने के साथ ही प्रौढ तथा सर्वाङ्गपूर्ण है ।^३ इसमें वैदिक-छंदों के साथ ही लौकिक छंदों पर भी विस्तार से प्रकाश डाला गया है । “प्राकृत-पिंगल” का आधार भी इनका पिंगल-सूत्र ही है । परवर्ती सभी छन्दःशास्त्रकार पिंगल के ऋणी हैं ।

पुराणों में छन्दों का विवेचन—

नारदपुराण तथा अग्निपुराण भी छन्दों के विवेचन करने वाले ग्रंथ हैं । अग्निपुराण को भारतीय-साहित्य का विश्वकोश कहा जाता है । उसमें ३२८ से ३३५ तक = अध्यायों में छंदों का विवेचन किया गया है । अग्निपुराण में छंदों के विवेचन का आधार पिंगलरचित छन्दःसूत्र-ग्रंथ ही रहा है—

छन्दो वदये भूलजैस्तैः पिंगलोक्तं यथाक्रमम् ।^४

इसमें वैदिक व लौकिक दोनों प्रकार के छन्दों का विवेचन है ।

नारदपुराण में पूर्व भाग के द्वितीय पाद के ५७वें अध्याय में देशांगो का विवेचन करते हुए प्रसंगवश छंदों के लक्षण भी बताये गये हैं । वहाँ एकाक्षर-पाद छंदों से लेकर दण्डक-छंदों तक का वर्णन मिलता है । प्रस्तार-प्रक्रिया से छंदों के विविध भेदों की ओर भी संकेत किया गया है ।

परवर्ती छन्द-सम्बन्धी ग्रन्थ सूत्रर ग्रन्थकार—

परवर्ती छन्दःशास्त्र-प्रवक्ताओं में कतिपय आचार्य ऐसे हैं जिनका नामोल्लेख मात्र प्राप्त है और जिनके ग्रन्थों के नाम और ग्रन्थ अद्यावधि अनुपलब्ध हैं । यथा :—

१-संस्कृत साहित्य का इतिहास —कीर्ष (हिन्दी) पृ० ४६३

२- “ “ —गैरोला, पृ० १६१-६२ तथा संस्कृत-व्याकरणशास्त्र का इतिहास पृ० १३२

३- “ “ —गैरोला, पृ० १६२

४-अग्निपुराण, ३२८।१

नाम	काल	नाम	काल
१. पूज्यपाद ^१ (देवनन्दो)	४७०-५१२ वि.	२. भामह ^२	६ शती
३. दण्डी ^३	७०० वि	४. पात्यकीर्त्ति ^४	८७१-९२४ वि
५. दमसागर मुनि ^५	१०५० वि.	६. वृद्धकवि ^६	
७. सालाहण ^७		८. हाल ^८	
९. मनोरथ ^९		१०. अर्जुन ^{१०}	
११. गोसल ^{११}		१२. गोविन्द ^{१२}	
१३. चतुर्मुख ^{१३}			

छद्म शास्त्र के परवर्ती ग्रंथों में से असिद्ध कतिपय ग्रन्थ निम्नलिखित हैं :—

१. बृहत्संहिता :—यह वराहमिहिर की ज्योतिष विषयक रचना है। प्रसंग-वश इसके चौदहवें अध्याय में ग्रह-नक्षत्रों की गति-विधि के साथ छद्मों का विवेचन भी मिलता है। कीय के अनुसार वराहमिहिर का स्वतन्त्र छद्मशास्त्र का ग्रन्थ भी होना चाहिए किन्तु ऐसा कोई ग्रन्थ अभी तक देखने में नहीं आया।

२. जानाश्रयो-छन्दोविचिन्ति :—जनाश्रय (?) नामक कवि ने इसकी रचना विष्णुकुण्डोन (कृष्णा और गोदावरी का जिला) के अधिपति माधववर्मन् प्रथम के राज्य में—जिसका समय ६ शताब्दी A D पूर्व माना जाता है—की है। यह ग्रन्थ ६ अध्यायों में विभक्त है। इसका प्राकृत-छन्दो का अन्तिम अध्याय महत्त्वपूर्ण है। गणशैली स्वतन्त्र है। युधिष्ठिर मीमांसकजी^{१४} ने गणस्वामी को ही इसका कर्त्ता माना है।

३. जयदेवछन्दस्—जयदेव की रचना होने से यह 'जयदेवछन्दस्' के नाम से

१-जयकीर्त्ति-छन्दोनुशासन, ८, १६

२-कीय : ए हिस्ट्री भाव संस्कृत लिटरेचर

३, ४, ५-वैदिक-छन्दोमीमांसा, पृ० ६०-६१

६-विरहाङ्क-वृत्तजातिसमुच्चय २।८-९ तथा ३।१२

७- " " २।८-९

८- " " ३।१२

९-कविदर्पण-राजस्थान शास्त्र विद्या, प्रतिष्ठान जोधपुर, सन् १९६२

१०-११-रत्नोत्तर : छन्द-शोभा (कविदर्पण गत) " " "

१२-१३-स्वयम्भूछन्द— " " "

१४-वैदिक-छन्दोमीमांसा पृ० ६१

प्रसिद्ध है। प्रो० एच० डी० वेल्हणकर^१ ने इनका समय ६००-६०० वि० स० का मध्य माना है। जयदेव जैन कवि थे। इन्होंने अपना यह ग्रंथ पिंगल के अनुकरण पर लिखा है। लौकिक-छन्दों की निरूपण शैली पिंगल से भिन्न है। छन्दों का विवेचन संस्कृत-परम्परा के अनुकूल और अत्यन्त व्यवस्थित है।

इसमें आठ अध्याय हैं। द्वितीय और तृतीय अध्याय में वैदिक-छन्दों का निरूपण है। समस्त जैन लेखक होने के कारण ही इस ग्रन्थ का विशेष प्रसार न हो सका।

४ गायालक्षण—जैन कवि नन्दितादय की यह रचना है। श्री वेल्हणकर^२ के मतानुसार इनका समय ईसा की आरम्भिक शताब्दियों में माना जा सकता है। प्राकृत-अपभ्रंश परम्परा के छन्दःशास्त्रीय ग्रन्थों में यह प्राचीनतम ग्रंथ है। नन्दितादय द्वारा इस ग्रंथ में जिन छन्दों का चयन किया गया है वे केवल जैन-गमों में ही उपलब्ध हैं। अथकार ने गायालक्षण के विविध छन्दों का विस्तार से वर्णन किया है। लेखक के दृष्टिकोण से अपभ्रंश-भाषा हेय है।^३ ग्रंथ की भाषा प्राकृत है।

५ धृतजातिसमुच्चय—विरहाक की यह रचना है। डॉ० वेल्हणकर^४ के मतानुसार इनका समय ६वीं, १०वीं शताब्दी या इससे भी पूर्व माना जा सकता है। पिंगल के पश्चात् मात्रिक-छन्दों का सर्वाधिक विवेचन इसी ग्रंथ में प्राप्त है। इसमें ६ परिच्छेद हैं। भाषा प्राकृत है किन्तु पाचवें परिच्छेद में वर्णवृत्तों के लक्षण संस्कृत में हैं। ग्रंथ में यति का उल्लेख नहीं है अतः सम्भव है ये यति-विरोधी सम्प्रदाय के हों। इस ग्रंथ में मगणादि गणों के स्थान पर पारिभाषिक शब्दावली का प्रयोग है जो कि पूर्ववर्ती ग्रंथों में प्राप्त नहीं है।

६ छन्दोनुशासन—इसके प्रणेता कवि जयदेव बगड प्रान्तीय दिगम्बर जैन थे। डॉ० वेल्हणकर^५ ने इनका समय १००० ई० के लगभग माना है। पिंगल एवं जयदेव की परम्परा के अनुसार यह ग्रंथ भी आठ अध्यायों में विभक्त है। इसमें अपभ्रंश के मात्रिक-छन्दों का विवेचन भी प्राप्त है। छन्दों के लक्षण वारिषा-शैली में हैं, उदाहरण स्वतन्त्ररूप से प्राप्त नहीं है।

१-देर्गें, जयदामन् की भूमिका-हरितोपमाता, बम्बई

२-देर्गें, बविदण्ण — गायालक्षण की भूमिका—रात्रा विप्र ओषपुर, सन् १९६२

३-गायालक्षण पृष्ठ ३१

४-देर्गें, धृतजातिसमुच्चय की भूमिका—राजस्थाप प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान ओषपुर, सन् १९६२

५-देर्गें, जयदामन् की भूमिका-हरितोपमाता, बम्बई

७ स्वयम्भूच्छन्द—इसके प्रणेता कविराज स्वयम्भू जैन हैं। कर्ता के सबध में विद्वानों व अनेक मत^१ हैं किन्तु डॉ० वेल्हणकर^२ ने इनका समय १०वीं शती का उत्तरार्द्ध माना है। स्वयम्भू अपभ्रंश-भाषा के श्रेष्ठ कवि हैं। अपभ्रंश छन्द-परम्परा की दृष्टि से यह महत्वपूर्ण कृति है। कवि ने मगणादि गणों का प्रयोग न करके 'छ प च त द'^३ पारिभाषिक शब्दों के आधार से छन्दों के लक्षण कहे हैं। इस ग्रंथ में छन्दों के उदाहरण-रूप में विभिन्न प्राकृत-कवियों के २०६ पद्य उद्धृत हैं। लेखक ने कवियों के नाम भी दिये हैं।

८ रत्नमञ्जूषा—अज्ञातकर्तृक जैन-कृति है। वेल्हणकर^४ ने इसका समय हेमचन्द्र से पूर्व स्वीकार किया है, अतः ११-१२वीं शती माना जा सकता है। इसमें आठ अध्याय हैं। लेखक ने वर्णिकवृत्तों का समान प्रमाण और वितान शीर्षक से विभाजन किया है। मगणादि-गणों की परिभाषा भी लेखक की स्वतन्त्र है। यह पारिभाषिक शब्दावली सम्भवतः पूर्ववर्ती एवं परवर्ती कवियों ने स्वीकार नहीं की है।

९ वृत्तरत्नाकर—इसके प्रणेता कश्यपवशीय पद्मेकभट्ट के पुत्र केदार-भट्ट हैं। कीथ^५ ने इनका समय १५वीं शती माना है किन्तु ११६२ की हस्त-लिखित प्रति प्राप्त होने से एवं ११वीं शती की इसी ग्रंथ की त्रिविक्रम की प्राचीन टीका प्राप्त होने से वेल्हणकर^६ ने इनका सत्ताकाल ११वीं शताब्दी ही स्वीकार किया है। पिंगल के अनुकरण पर इसकी रचना हुई है। जयदेवच्छन्दस् की तरह इसमें भी छन्दों के लक्षण लक्ष्य-छन्दों में ही देकर लक्षण और उदाहरण का एकीकरण किया गया है। इस ग्रंथ का प्रसार सर्वाधिक रहा है।

१०. सुयुत्ततिलक—इसके प्रणेता क्षेमेन्द्र का समय कीथ^७ ने हेमचन्द्र के पूर्व अथवा ११वीं शती माना है। मेकडानल^८ के अनुसार क्षेमेन्द्र की बृहत्स्थामजरी

१—डॉ० भीलासकर व्यास प्राकृतपिंगलम् भा० २ पृ० ३६५, डॉ० शिवनन्दनप्रसाद मादिक छन्दों का विशास पृ० ४३-४६

२—देखें, स्वयम्भूच्छन्द की भूमिका—राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर, सन् १९६२

३—तुलना के लिये देखें, इसी ग्रंथ का प्रथम परिशिष्ट

४—देखें, रत्नमञ्जूषा की भूमिका—भारतीय ज्ञानपीठ काशी, १९४६ ई०

५—कीथ ए हिस्ट्री ऑफ़ संस्कृत लिटरेचर पृ० ४१७

६—देखें, जयदामन् की भूमिका—हरितोपमाता बम्बई

७—कीथ : ए हिस्ट्री ऑफ़ संस्कृत लिटरेचर, पृ० १३५

८—घायर ए मेकडानल . हिस्ट्री ऑफ़ संस्कृत लिटरेचर पृ० ३७६

की रचना १०३४ ई० में हुई थी। अतः क्षेमेन्द्र का समय ११वीं शती निश्चित है। क्षेमेन्द्र ने इस ग्रंथ में पहले छन्द का लक्षण दिया है और तदुपरांत अपने ग्रंथों से उदाहरण दिये हैं। छंदों के नाम दो बार आये हैं, एक बार लक्षण में और दूसरी बार उदाहरण में। यह ग्रन्थ तीन विन्यासों में विभक्त है। क्षेमेन्द्र के विचार में विशेष रसो या प्रसंगो के लिए विशेष छंद ही उपयुक्त और पर्याप्त प्रभावशाली होते हैं। ग्रंथकार के अनुसार उपजाति पाणिनि का, मन्दाक्रांता कालिदास का, वधस्थ भारवि का और शिखरिणी भवभूति का ग्रंथ छंद रहा है।

११. ध्रुतघोष—इसके लेखक कालिदास कहे जाते हैं। कीय ने इस बात का कोई आधार नहीं माना। कुछ लोग वररुचि को भी इसका लेखक मानते हैं^१। कृष्णमाधारी^२ भी कालिदासों में से तीसरा कालिदास मानते हैं। गैरोला के अनुसार ये या ८वीं शताब्दी के कोई अन्य कालिदास होंगे। युधिष्ठिर भीमांसक^३ के अनुसार इस कालिदास का समय १२वीं शती था। संभव है यह मान्यता उचित हो और यह कालिदास राजा भोज के सखा के रूप में लोक-कथाओं में श्रद्धाति प्राप्त कालिदास हो। लक्षण में ही उदाहरण का गतार्थ हो जाना इस ग्रंथ की राय से बड़ी विशेषता है। इसका भी प्रसार सर्वाधिक रहा है।

१२. छन्दोऽनुशासन—इसके प्रणेता कालिकाल-सर्वज्ञ हेमचन्द्र पूर्णतत्त्वचन्द्रिय श्रीदेवचन्द्रसूरि के शिष्य हैं। अणहिलपुर पत्तन के नृपति सिद्धराज जयसिंह की सभा के ये प्रमुखतम विद्वान् थे और महाराजा कुमारपाल के ये धर्मगुरु थे। इनका समय वि० सं० ११४५-१२२६ माना जाता है। ये बहुमुखी प्रतिभा वाले लेखक और वैज्ञानिक-दृष्टि-गम्य आचार्य एवं शास्त्र-प्रणेता थे। हेमचन्द्र ने अपने इस ग्रंथ की विंगल, जयदेव और जयकीर्ति के अनुकरण पर ही घाठ अध्यायों में प्रयुक्त किया है। वंतालीय और मात्रासमक के कुछ नये भेद जिनका उल्लेख विंगल, जयदेव, विरहांक, जयकीर्ति आदि पूर्ववर्ती आचार्यों ने नहीं किया, हेमचन्द्र ने प्रस्तुत किये हैं। इसमें लगभग सातसौ घाटसौ छंदों का निरूपण प्राप्त है। नवीन मानिक-छंदों की दृष्टि से इस ग्रंथ का सर्वाधिक महत्त्व है।

हेमचन्द्र ने इस ग्रंथ पर श्लोपज्ञ टीका^४ भी बनाई है। इस टीका में हेमचन्द्र ने

१-कीय : ए हिस्ट्री ऑफ़ सस्कृत लिटरेचर, पृ० ४१६

२-एच० कृष्णमाधारी : ए हिस्ट्री ऑफ़ क्लासिकल सस्कृत लिटरेचर, पृ० ६०८

३-देने, वेदिङ्ग-प्रदोषोपाता पृ० ६२

४-टी० एच० डी० वेल्हणर-सम्पादित टीकासहित यह ग्रंथ सिंधी ग्रंथप्रयोगशाला में प्रकाशित है।

छंदों के नामान्तर देते हुये 'इति भरत.' कह कर जो नामभेद दिये हैं उनमें में निम्नलिखित छंद वर्तमान में प्राप्त भरत के नाट्यशास्त्र में उपलब्ध नहीं हैं, और यति-विरोधी आचार्यों में गणना होने से संभव है कि नाट्यशास्त्र में निरूपित छंदों के अतिरिक्त भरत ने छंद शास्त्र पर कोई स्वतन्त्र ग्रंथ भी लिखा हो। भरत के नाम से उल्लिखित अनुपलब्ध छंदों की तालिका निम्न है :—

३ अक्षर*	घूः	६ अक्षर	गिरा
" "	तडित्	७ "	शिखा
४ "	ललिता	" "	भोगवती
" "	जया	" "	द्रुतगति.
५ "	भ्रमरी	१० "	पुष्पसमृद्धिः
" "	वायुरा	" "	रुचिरा
" "	कुन्तलतन्वी	११ "	अपरवक्त्रम्
" "	शिखा	" "	द्रुतपदगति
" "	कमलमुखी	" "	रुचिरमुखी
६ "	नलिनी	१३ "	मनोवती
" "	वीथी		

१३ कविदर्पण—यह अज्ञात जैन-कर्तृक कृति है। छंदों के उदाहरणों में जिनसिंहसूरि-रचित 'चूडाल-दोहक' का उदाहरण है। जिनसिंहसूरि खरतर-गच्छीय द्वितीय जिनेश्वरसूरि के शिष्य हैं, इनका शासनकाल १३००-१३४१ तक का है। कविदर्पण का सर्वप्रथम उल्लेख स० १३६५ में रचित अजितशांति-स्तव की टीका में जिनप्रभसूरि ने किया है जो कि जिनसिंहसूरि के शिष्य हैं। अतः यह अनुमान किया जा सकता है कि इसका प्रणेता जिनसिंहसूरि के शिष्य और जिनप्रभसूरि के गुरुभ्राता ही होंगे।

यह ग्रंथ प्राकृतभाषा में ६ उद्देश्यों में विभक्त है। छंदों के वर्गीकरण तथा लक्षण निर्देश से इसकी मौलिकता प्रकट होती है। प्राकृत-अपभ्रंश की परम्परा में इसका यथेष्ट महत्त्व है।

१४. छन्द.कोष—इसके प्रणेता रत्नशेखरसूरि हेमतिलकसूरि के शिष्य हैं। इनका समय १५वीं शती है। यह ग्रंथ प्राकृतभाषा में है। इसमें कुल ७४ पद्य हैं। इस ग्रंथ के छंदों का विवेचन छंदों व्यवहार के अधिक निकट है और तद्युगीन छंदों के स्वरूप-विकास के अध्ययन की दृष्टि से यह महत्त्वपूर्ण है।

१५ प्राकृत-पिगल—इसके प्रणेता के सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद है किन्तु डॉ० भोलाशकर व्यास^१ के अनुसार हरिब्रह्म या हरिहर इसका कर्त्ता माना जा सकता है और प्राकृतपिगल का सकलन-काल १४वीं शती का प्रथम चरण मान सकते हैं। इसमें मात्रिक और वर्णिकवृत्त नाम से दो परिच्छेद हैं। लक्षणों में ग्रन्थकार ने टादिगण, प्रस्तारभेद, नाम, पर्याय एवं भगणादिगणों की पारिभाषिक शब्दावली का प्रयोग किया है।

अपभ्रंश और हिन्दी में प्रयुक्त मात्रिक-छंदों के अध्ययन के लिए यह ग्रन्थ सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। वर्णिकवृत्तों के लिए संस्कृत-साहित्य में जो स्थान पिगलकृत छंद सूत्र का है, मात्रिक-छंदों के लिए वही स्थान प्राकृतपिगल का है।

१६ बाणीभूषण—इसके प्रणेता दामोदर मिश्र दीर्घघोषकुलोत्पन्न मैथिली ब्राह्मण हैं। डॉ० भोलाशकर व्यास^२ ने प्राकृतपिगल के सम्राटक हरिहर को पितामह और रविकर को दामोदर का पिता या पितृव्य स्वीकार किया है। विद्वानों के मतानुसार दामोदर मिथिलापति कीर्त्तिसिंह के दरबार में थे। अतः दामोदर मिश्र और रविवर विद्यापति सम-सामयिक होने चाहिये। दामोदर मिश्र का समय १४३१ से १४६६ तक माना जाता है।

यह ग्रन्थ संस्कृत-भाषा में है। इसमें दो परिच्छेद हैं। लक्षणों का गठन पारिभाषिक शब्दावली में है और उदाहरण स्वरचित हैं। वस्तुतः यह ग्रन्थ प्राकृत-पिगल का संस्कृत में रूपान्तर मात्र है।

१७ छन्दोमञ्जरी—गैरोला^३ ने लेखक का नाम दुर्गादास माना है किन्तु यह भ्रामक है। ग्रन्थ के प्रथम पद्य में ही लेखक ने स्वयं का नाम गंगादास और पिता का नाम गोपालदास वैद्य एवं माता का नाम सतीपदेवी लिखा है।^४ इनका समय १५वीं या १६वीं शताब्दी है। ग्रन्थकार ने स्वरचित 'प्रच्युतचरित महा-काव्य' और 'कसारिशतक' एवं 'दिनेशशतक' का भी उल्लेख किया है।^५ छंदो-

१-देवे, प्राकृतपिगलम् भा० २, पृ० ६-२६

२- , , , , १६-१८

३-गैरोला । संस्कृत-साहित्य का इतिहास पृ० १६३

४-देव प्रारम्भ गोपाल वैद्यगोपालदास ।

सन्तोषातनयछन्दो गङ्गादासस्तनोत्पद ॥१११

५-सर्ग. धोइशमि समुज्ज्वलपदेर्नैव्याधर्मव्यासधर्म—

येनाचारि तदभ्युतस्य चरितं काव्य कविप्रीतिदम् ।

कमारे शतक दिनेशशतकद्वन्द्वं च सस्यास्त्वसौ,

गंगादासकवे श्रुती मुमुक्षुनां सच्चन्दसो मञ्जरी ॥६१६॥

मञ्जरी की शैली वृत्त रत्नाकर से मिलती-जुलती है। इसमें ६ स्तवक हैं। छठे स्तवक में गद्य-काव्य और उनके भेदों पर विचार है जो कि इसकी विशेषता है।

१८ वृत्तभूषितावली—इसके प्रणेता तैलगवशोय कवि कलानिधि देवर्षि कृष्णभट्ट हैं। इस ग्रन्थ का रचनाकाल १७८८ से १७९९ के मध्य का है। इसमें तीन गुम्फ हैं :—१. वैदिक छन्द, २. मानिक छन्द, और ३. वर्णिक वृत्त। पिगल और जयदेव के पश्चात् प्राप्त एवं प्रसिद्ध ग्रन्थों में वैदिक-छन्दों का निरूपण न होने से इस ग्रन्थ का महत्त्व बढ़ जाता है। मानिक-गुम्फ प्राकृतपिगल और वाणीभूषण से अनुप्राणित है। इसमें ४२ दण्डक-छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण प्राप्त हैं।

१९ वाग्मस्तम्भ—इसके प्रणेता कवि दुःखभजन शर्मा हैं जो कि काशी-निवासी कान्यकुब्जवशीय प्रताप शर्मा के पुत्र और चूड़ामणि शर्मा के पुन हैं। इसकी 'वरवर्णिनी' नामक टीका की रचना दुःखभजन कवि के ही पुत्र महोपाध्याय देवीप्रसाद शर्मा ने वि० सं० १९८५ में की है, अतः इसका रचना समय १९५० से १९७० वि० सं० का मध्य माना जा सकता है। गंगोला ने इनका समय १६वीं शती माना है जो कि भ्रामक है।^१ कवि दुःखभजन ज्योतिर्विद् तो थे ही, इसीलिए जहाँ आज तक के प्राप्त छन्दशास्त्रों में प्रयुक्त छन्द प्रायशः ग्रहण किये हैं तो वहाँ प्रस्तार का आधार लेकर संकड़ों नवान् छन्द भी निमित्त किये हैं। इस ग्रन्थ में कुल १५३६ छन्दों का निरूपण है। शैली वृत्त-रत्नाकर की है। प्रत्येक वर्णिकवृत्त प्रस्तार-संख्या के क्रम से दिया है।

इनके अतिरिक्त छन्दशास्त्र के संकड़ों ग्रन्थ और उनकी टीकाएँ प्राप्त होती हैं जिनकी सूची मैंने इसी ग्रन्थ के अन्त में परिशिष्ट में दी है।

वृत्तमीत्तिक भी छन्दशास्त्र का बड़ा ही प्रौढ और महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। चन्द्र-शेखर भट्ट ने अपने इस ग्रन्थ में जिस पाहित्य का परिचय दिया है, वह केवल उन ही तक सीमित नहीं था। उनकी बड़ा-परम्परा में जैसा कि हम देखेंगे बड़े बड़े माने हुए प्रतिभा-सम्पन्न विद्वान् हुए, और इसमें सन्देह नहीं कि ऐसी ज्ञान-गम्भिर परम्परा में जिसका व्यक्तित्व विकसित हुआ हो वह अपने कृतित्व और व्यक्तित्व के लिये उन पूर्वजों का सब से अधिक ऋणी होगा। इसीलिये कवि के परिचय से पूर्व ग्रन्थ के माहात्म्य की पृष्ठभूमि को समझने के लिए सर्वप्रथम कवि के पूर्वजों का परिचय प्राप्त कर लेना भी वाछनीय है।

१-राजस्थान शास्त्र विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर से प्रकाशित

२-गंगोला : संस्कृत साहित्य का इतिहास पृ. १९३

कवि-वश-परिचय

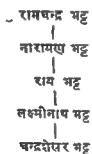
चन्द्रशेखर भट्ट वासिष्ठ-वशीय^१ लक्ष्मीनाथ भट्ट के पुत्र हैं । ग्रंथकार ने अपने पूर्वजों में वृद्धप्रपितामह रामचन्द्र भट्ट^२ , पितामह रायभट्ट^३ और पितृ-चरण लक्ष्मीनाथ भट्ट का उल्लेख किया है ।

भट्ट लक्ष्मीनाथ ने प्राकृतपिंगलसूत्र की टीका 'पिंगलप्रदीप' में अपना वश-परिचय इस प्रकार दिया है —

भट्ट. श्रीरामचन्द्रः कविविबुधकुले लब्धदेह श्रुतो यः
श्रीमाम्नारायणारूपः कविमुकुटमणिस्तत्तनूजोऽजनिष्ट ।
तत्पुत्रो रायभट्टः^४ सकलकविकुलस्यातकीर्तिस्तदीयो
लक्ष्मीनाथस्तनूजो रघयति रुचिर पिंगलार्थप्रदीपम् ॥

[मंगलाचरण पद्य ५]

इस आधार से ग्रंथकार का वशवृक्ष इस प्रकार बनता है :—



१-लक्ष्मीनाथ शुभट्टवर्म्य इति यो वासिष्ठवशीयः—
स्तरगूनु कविचन्द्रशेखर इति प्रख्यातकीर्तिर्भुवि

[वृत्तमीवितक प्रशस्तिः ५]

२-प्रहमद्रुद्धप्रपितामहमहारविपण्डितश्रीरामचन्द्रभट्टविरचिते .. ।

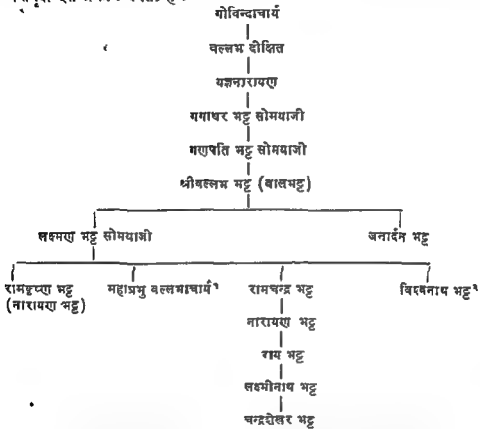
[वृत्तमीवितक पृ० १०७]

३-प्रहमप्रपितामहमहारविपण्डितश्रीरायभट्टवृत्ते .. ।

[वृत्तमीवितक पृ० १२१]

४-निर्णयगणन मन्तरण और प्राकृतवैद्वत्तम् भा० १ में 'रामभट्टः' मुद्रित है, जो कि मनुष्य है ।

ग्रन्थकार के वृद्धप्रपितामह श्रीरामचन्द्र भट्ट वस्तुतः तैलगदेशीय वेलनाट यजु-वेदान्तगत तैत्तिरीयशाखाध्यायी आपस्तम्ब त्रिप्रवरान्वित आगिरस बार्हस्पत्य भारद्वाजगोत्रीय श्री लक्ष्मण भट्ट सोमयाजी के पुत्र हैं; जोकि वसिष्ठवशीय ननिहाल में मातुल के यहाँ दत्तक रूप में चले गये थे । अतः भारद्वाजीय गोत्रापेक्षया वशवृक्ष इस प्रकार बनता है :—



वासिष्ठ एवं भारद्वाज दोनों गोत्रों का उल्लेख होने से यहाँ यह विचारणीय है कि रामचन्द्र भट्ट भारद्वाज-गोत्रीय थे या वसिष्ठ-गोत्रीय ? या नाम-साम्य से रामचन्द्र भट्ट एक ही व्यक्ति हैं अथवा भिन्न-भिन्न ? और, यदि एक ही व्यक्ति हैं तो गोत्रभेद का क्या कारण है ? तथा रामचन्द्र भट्ट यदि वल्लभाचार्य के अनुज हैं तो वल्लभ-साहित्य एवं परम्परा में रामचन्द्र एवं इनकी परम्परा का उल्लेख क्यों नहीं है ? आदि प्रश्न उपस्थित होते हैं । अतः इन पर यहाँ विचार करना असंगत न होगा ।

१-दलें, कावरोली का इतिहास, द्वितीय भाग, एष वल्लभविरचित ।

२-दलें, वल्लभविरचित ।

रामचन्द्र भट्ट ने स्वप्रणीत 'गोपाललीला-महाकाव्य', 'रोमावलीशतक' एवं 'रसिकरञ्जन' की पुष्पिकाओं में स्वयं को लक्ष्मणभट्ट का पुत्र स्वीकार किया है —

'इति श्रीलक्ष्मणभट्टात्मजश्रीरामचन्द्रविरचिते गोपाललीलाख्ये महाकाव्ये कस-
वधो नाम एकोनविंश सर्गः ।'

[गोपाललीला महाकाव्य की पुष्पिका]^१

'इति श्रीलक्ष्मणभट्टात्मजश्रीरामचन्द्रकविकृत रोमावलीशृङ्गारशतक सम्पूर्णम् ।'

[रोमावलीशतक की पुष्पिका]^२

'इति श्रीलक्ष्मणभट्टसूनुश्रीरामचन्द्रकविकृत सटीक रसिकरञ्जन नाम
शृङ्गारवैराग्यार्थसमान काव्य सम्पूर्णम् ।'

[रसिकरञ्जन की पुष्पिका]^३

कवि ने 'कृष्णकुतूहल' महाकाव्य में स्वयं को लक्ष्मणभट्ट का पुत्र और
बलभाचार्य का अनुज स्वीकार किया है —

'श्रीमल्लक्ष्मणभट्टवशातिलक श्रीवल्लभेन्द्रानुजः ।'

[कृष्णकुतूहलमहाकाव्य प्रस्तावपत्र]^४

रोमावलीशतक में कवि ने स्वयं को लक्ष्मणभट्ट का पुत्र, बल्लभ का अनुज
और विश्वनाथ का ज्येष्ठभ्राता लिखा है —

'श्रीमल्लक्ष्मणभट्टसूनुरनुज श्रीवल्लभ श्रीगुरो,
अध्येतु सममग्रजो गुणिमण श्रीविश्वनाथस्य च ।'

[रोमावलीशतक पद्य १२५]

इन उल्लेखों में भारद्वाजगोत्र का कहीं भी उल्लेख न होने पर भी लक्ष्मण
भट्ट एवं बल्लभाचार्य का उल्लेख होने से यह स्पष्ट है कि ये भारद्वाज-
गोत्रीय थे ।

रामचन्द्र भट्ट ने 'कृष्णकुतूहल-महाकाव्य' के अष्टम सर्ग के आरंभ में स्वयं का
वसिष्ठगोत्र स्वीकार किया है —

१-भारतेन्दु हरिश्चन्द्र द्वारा सन् १९२८ में प्रकाशित

२-राजस्थान प्राण्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर, प्र. म० १९२९५

३-वाङ्मयमाला चतुर्थ गुच्छक में प्रकाशित

४-गोपाललीला भूमिका

‘विद्यानिष्ठवसिष्ठगोत्रजनुषा तेन प्रणीते महा—
काव्ये कृष्णकुतूहलैर्बरहुतिः सर्गोऽजनिष्ठाष्टमः ।’

अतः यह स्पष्ट है कि रामचंद्र भट्ट स्वयं को लक्ष्मण भट्ट का पुत्र और वल्लभ का अनुज मानते हुए भी अपना वसिष्ठ-गोत्र स्वीकार करते हैं ।

चन्द्रशेखर भट्ट वृत्तमीक्षिक^१ में कृष्णकुतूहल-महाकाव्य के प्रणेता रामचंद्र भट्ट को ‘प्रवृद्धपितामह’ शब्द से सम्बोधित करते हैं । अतः यह निर्विवाद है कि नाम-साम्य से रामचन्द्र भट्ट पृथक्-पृथक् व्यक्ति नहीं हैं अपितु वही वल्लभानुज ही है । ऐसी अवस्था में गोत्रभेद क्यों ? इस सम्बन्ध में कोई प्राचीन प्रमाण तो उपलब्ध नहीं है, किन्तु गोपाललीला-महाकाव्य के सम्पादक श्री बेचनराम शर्मा सम्पादकीय-उपसंहार^२ में लिखते हैं :—

‘इयं वसिष्ठगोत्रोद्भवत्वोक्तिर्मातामहगोत्राभिप्रायेण ऊहनीया ।’

इसी बात को स्पष्ट करते हुये भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ‘वल्लभीय सर्वस्व’^३ में लिखते हैं :—

‘लक्ष्मण भट्टजी के मातुल वसिष्ठ-गोत्र के ब्राह्मण अपुत्र होने के कारण इनको (रामचन्द्र को) अपने घर ले गये थे ।’

इससे स्पष्ट है कि लक्ष्मण भट्ट के मामा जो अपुत्र थे ; उन्होंने लक्ष्मणभट्ट से अपने नाती रामचन्द्र को दत्तक रूप में ले लिया । दत्तक रूप में जाने के पश्चात् उत्तर भारत की परम्परा के अनुसार गोत्र-परिवर्तन हो ही जाता है । लक्ष्मण भट्ट के मातुल वसिष्ठगोत्रीय थे अतः रामचंद्र का गोत्र भी भारद्वाज न हो कर वसिष्ठ हो गया । यही कारण है कि रामचंद्र भट्ट ने स्वयं का गोत्र वसिष्ठ ही स्वीकार किया है ।

वसिष्ठ-गोत्र का उल्लेख करते हुए भी धर्म (दत्तक) पिता का नाम न देकर सर्वत्र लक्ष्मणभट्ट-तनुज और वल्लभानुज का उल्लेख करना अप्रासंगिक सा प्रतीत होता है किन्तु तत्त्वतः विरोध न होकर विरोधाभास ही है । इसका मुख्य कारण यह है कि रामचंद्र भट्ट ने पुरुषोत्तम-क्षेत्र में वल्लभाचार्य के सहवास में रह कर

१—देखें, पृष्ठ १०५, १०७

२—देखें, गोपाललीला पृ० २५५

३—भारतेन्दु प्रपावनी भाग ३, पृ० ५९८

सर्वशास्त्र और सर्व दर्शनो का अध्ययन आचार्यश्री से ही किया था ।' अतः पितृ-भक्ति, भ्रातृ-प्रेम एवं भक्तिवश ही इनका सर्वत्र स्मरण किया जाना स्वाभाविक ही है ।

अतएव यह तो स्पष्ट ही है कि रामचन्द्र भट्ट गोत्रापेक्षया पृथक्-पृथक् व्यक्ति न हो कर लक्ष्मण भट्ट के पुत्र एव वल्लभ के लघुभ्राता थे और दत्तक रूप में वसिष्ठ-वंश में जाने के कारण भारद्वाजगोत्रीय न रह कर वसिष्ठगोत्रीय हो गये थे । संभव है इसी कारण से पुष्टिमार्गप्रवर्तक वल्लभाचार्य के जीवनवृत्त-सम्बन्धी समग्र-साहित्य में रामचन्द्र भट्ट एव इनकी परम्परा का कोई उल्लेख नहीं हुआ हो ! अस्तु ।

वश-परिचय गोविन्दाचार्य से न देकर ग्रथकार-सम्मत वसिष्ठगोत्रापेक्षया रामचन्द्र भट्ट से दिया जा रहा है ।

रामचन्द्र भट्ट

इनके पिताश्री का नाम लक्ष्मण भट्ट^१ और माताश्री का नाम इल्लम्मागारु था । इनका जन्म अनुमानतः वि० स० १५४०^२ में काशी में हुआ था । लक्ष्मण भट्ट का स्वर्गवास वि० स० १५४६ चैत्र कृष्ण नवमी को दक्षिण में वेंकटेश्वर बालाजी नामक स्थान पर हुआ था । स्वर्गवास के पूर्व ही लक्ष्मण भट्ट ने अपने मातामह की संपूर्ण चल और अचल संपत्ति इनकी प्रदान कर अयोध्या भेज दिया था । इस सम्बन्ध में भारतेन्दु हृदिचन्द्र 'वल्लभीयसर्वस्व'^३ में लिखते हैं,—

'लक्ष्मण भट्टजी साक्षात् पूर्णपुरुषोत्तम के धाम अक्षरब्रह्म शेषजी के स्वरूप हैं, इससे आपको त्रिकाल का ज्ञान है । सो जब आपने अपना प्रयाण समय निकट जाना तब काकरवार से बड़े पुत्र रामकृष्ण भट्टजी को बालाजी में धुवाया और वही आपने डेरा किया । पुत्रों को अनेक शिक्षा देकर श्री रामकृष्ण भट्टजी को श्री

१—'श्रीमत्लक्ष्मणभट्टवसतिस्तकः श्रीवल्लभस्य प्रिय,

दिप्यस्तच्चरणाप्रमादजरणो यो रामचन्द्र त्विः ।'

[भारतेन्दु हरिश्चन्द्रः गोपाललीला-भूमिका]

'पुरपोत्तमक्षेत्रे समामृत्य ज्येष्ठभ्रातुः श्रीवल्लभाचार्यात् सत्कृतात् सर्वाणि धान्याणि मतानि च समधीत्य ।'

[बेधनराम दामा-गोपाललीला-जपत्रमन्त्रांत]

२—लक्ष्मण भट्ट जी के परिचय के लिए देखें, बाबरली का इतिहास भाग २

३—इष्टमापाती : हिस्टोरी ऑफ़ दी क्लासिकल सरकल मिटररेयर, पृ० २६१

४—भारतेन्दु प्रकाशनी भाग ३, पृ० १०५

यज्ञनारायण के समय के श्रीरामचन्द्रजी पधराय दिए और कहा कि देश में जा कर सब गाव और घर आदि पर अधिकार और बेस्लिनाटि तैलम जाति की प्रथा और अपने कुछ अनुसार सब धर्म पालन करो । ऐसे ही श्रीयज्ञनारायण भट्ट के समय के एक शालिग्रामजी और मदनमोहनजी श्रीमहाप्रभुजी को देकर कहा कि आप आचार्य होकर पृथ्वी में दिग्विजय करके वैष्णवमत प्रचार करो और छोटे पुत्र रामचन्द्रजी को, जिनका काशी में जन्म हुआ था, अपने मातामह की सब स्थावर-जगम-संपत्ति दिया ।^१

यहाँ लक्ष्मण भट्ट के वसिष्ठगोत्रीय मातामह और मातुल का नाम प्राप्त नहीं है । सम्भवत ये अयोध्या में ही रहते हों और इनकी स्थावर एव जङ्गम सम्पत्ति भी अयोध्या में ही हो । पो० कण्ठमणि शास्त्री^२ ने लक्ष्मण भट्ट का ननिहाल धर्मपुरनिवासी बह्वृच् भौद्गल्यगोत्रीय काशीनाथ भट्ट के यहाँ स्वीकार किया है जब कि प्रस्तुत ग्रंथकार चन्द्रशेखर भट्ट एव भारतेन्दु हरिश्चन्द्र^३ वसिष्ठगोत्र में स्वीकार करते हैं । मेरे मतानुसार संभव है कि लक्ष्मण भट्ट के पिता बालभट्ट ने दो शादियाँ की हों । एक बह्वृच् भौद्गल्यगोत्रीया 'पूर्णा' के साथ और दूसरी वसिष्ठगोत्रीया के साथ । फिर भी यह प्रश्न तो रह ही जाता है कि लक्ष्मण भट्ट बह्वृच् भौद्गल्यगोत्रीया पूर्णा के पुत्र थे या वसिष्ठगोत्रीया के ? इसका समाधान तो इस वंश-परम्परा के विद्वान् ही कर सकते हैं ।

कवि रामचन्द्र आदि चार भाई थे । नारायणभट्ट उपनाम रामकृष्ण भट्ट और बल्लभाचार्य बडे भाई थे और विद्वनाथ छोटे भाई थे । रामकृष्ण भट्ट काकर-वाड में ही रहते थे और पिताश्री लक्ष्मण भट्ट के स्वर्गारोहण के कुछ समय पश्चात् ही सन्यासी हो गये थे ।^४ केशवपुरी के नाम से ये प्रसिद्ध थे और दक्षिण-भारत के किसी प्रसिद्ध मठ के अधिपति थे । डॉ० हरिहरनाथ टडनलिखित 'वार्ता साहित्य एक बृहत् अध्ययन'^५ के अनुसार गोविन्दरायजी (सत्ताकाल

१-बाकरोली का इतिहास, भाग २, पृ० ५

२-भारतेन्दु-ग्रन्थालयी, भाग ३, पृ० ५६८

३-ये काकरवाड में ही रहते थे । ये कुछ दिन पीछे सन्यासी हो गये तब केशवपुरी नाम पड़ा । ये ऐसे सिद्ध थे कि सडाऊ पहिने गया पर स्पष्ट की भाँति चलते थे ।

भारतेन्दु ग्रन्थालयी भा० ३, पृ० ५६८

४-'हरिरायजी के प्राग्दय के सम्बन्ध में सम्प्रदाय के ग्रंथों में यह प्रसिद्ध है कि जब श्री कल्याणरायजी दस वर्ष के थे, तब एक दिन श्रीपादायजी के छोटे भाई केशवपुरी जो सन्यासी हो गए थे और दक्षिणभारत के किसी बडे मठ के अधिपति थे वहाँ गए और उन्होंने श्रीगुसाईजी के अपनी गद्दी के लिये एक बालक माँगा, जिस पर आपने कहा कि जिस बालक के पास टाकुरजी नहीं होंगे उन्हें दे दिया जायगा । श्रीकल्याणरायजी के पास टाकुरजी नहीं थे । इसलिये उन्हें देना निषिद्ध हुआ ।'

वार्ता साहित्य एक बृहत् अध्ययन पृ० ३६७

१५६६-१६५०) के प्रथम पुत्र कल्याणरायजी (जन्म सं० १६२५) दस वर्ष की अवस्था में केशवपुरी गुसाईजी से मिले थे। अतः 'शतायु' से अधिक ये विद्यमान रहे यह निश्चित ही है। वि० सं० १५६८ में रचित 'बद्रीकाश्रमवृत्तिपत्रक' नामक एक पत्र आपका प्राप्त होता है; जिसका आद्यन्त इस प्रकार है :-

गोभिवृत्तं प्रकृतिसुन्दरमन्वहास-

भापासमुल्लसितमञ्जुलवक्त्रबिम्बम् ।

श्रीनन्दनन्दनमल्लण्डितमण्डलार्धं,

बालार्यमिथय(क)मत्तु हृदि भावयामि ॥१॥

×

×

×

विद्वद्भिः किल कृष्णदासकमुखैः शिष्यैरनेकैर्वृतः,

सोऽहं श्रीवद्री(दरी)वनान्तमगमं शुक्रे(ज्येष्ठ)शकाब्दे तथा ।

देवाम्भःपतिभूमिते (१४३३) सह नरं नारायणं वीक्षितुं,

तत्र व्यासमुनीशसङ्गतिरभूदाकस्मिकी मे शुभा ॥६॥

×

×

×

श्रीवल्लभाचार्यमहाप्रभूणां नियोगतो बुद्धिमतां विभाव्य ।

श्रीरामकृष्णाभिषभट्ट एतल्लेखं व्यतानीत् पुरतश्च तेषाम् ॥११॥

द्वितीय बृहद्भ्राता महाप्रभु वल्लभाचार्य भारत के प्रसिद्धतम आचार्यों में से हैं। इनका प्रतिपादित पुष्टि मार्ग आज भी भारत के कोने-कोने में फैला हुआ है। इनही के साहचर्य में रह कर रामचन्द्र भट्ट ने समग्र शास्त्रों का अध्ययन किया था और वे इन्हें केवल बड़ा भाई ही नहीं अपितु अपना गुरु भी मानते थे।

रामचन्द्र भट्ट वेदान्त, मीमांसा, व्याकरण, काव्य और साहित्य-शास्त्र के विशिष्ट विद्वान् थे। न केवल विद्वान् ही अपितु वादजेता भी थे। अहनिश शास्त्रार्थ में रत रहने के कारण कई पराजित वादी आपके विरोधी भी हो गये थे और इसी विरोध-स्वरूप आपको विष भी दे दिया गया था। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि ये अल्पायु में ही स्वर्गलोक को प्राप्त हो गए थे।

महाकवि रामचन्द्र भट्ट ने अनेक ग्रंथों का निर्माण किया होगा! वर्तमान में इनके रचित निम्नलिखित ग्रंथ प्राप्त होते हैं। जिनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है:-

१-यह पत्र वार्ता साहित्य एक बृहत् अध्ययन पु० १४५ पर प्रकाशित है।

२-भारतेन्दु संवाचनी, भाग ३, पृष्ठ ५६८

१. गोपाललीला महाकाव्य :—कवि ने इस काव्य में भगवान् श्रीकृष्ण का जन्म से लेकर कंस-वध पर्यन्त भगवल्लीला का वर्णन १६ सर्गों में किया है । प्रत्येक सर्ग की पद्यसंख्या इस प्रकार है :—७०, ५८, ७८, ७१, ५१, ७६, ७६, ५२, ६२, ७४, ६१, ६०, ५१, ६१, ५६, ६१, ६६, ५७, ७६ । इसमें रचना-सवत् का उल्लेख नहीं है । प्रसाद एवं माधुर्यगुण युक्त रचना है । भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने इसका प्रकाशन वि० स० १६२६ में किया है; जो अब अप्राप्त है । इस काव्य का संपादन काशिक राजकीय पाठशाला के सांख्यशास्त्र के प्रधान-ध्यापक प० वैचनराम शर्मा ने किया है । इस काव्य का आद्यन्त इस प्रकार है:—

आदि— शुभममितमचिन्त्यचिद्विचित्र श्रुतिशतमूर्धनि केशपाशकल्पम् ।
 दिशतु किमपि घाम कामकोटि-प्रतिमटदीधिति वासुदेवसंज्ञम् ॥१॥
 वहति शिरसि नागसम्भव यः स्फुटमनुरागमिवात्मभक्तियुक्ते ।
 कटतटविगलन्मदाम्बुदम्भ-धितकरुणारसमाश्रये गणेशम् ॥२॥
 कविजनरसनाप्रतुङ्ग रङ्ग-स्थलकृतलास्यकलाविलासकाम्या ।
 कृतिषु सपदि वाञ्छितं यथेच्छं मयि ददती कृष्णां करोतु वाणी ॥३॥
 इह विदधति भव्यकाव्यबन्धान् भुवि यशसे कवयस्तदाप्नुवन्ति ।
 इति भवति ममापि काव्यतन्त्रे यजन इवाधिगिरि स्पृहाति पङ्क्तोः ॥४॥
 मयि विदधति काव्यबन्धमग्धाः स्तवमयवा पिशुनाः सृजन्तु निन्दाम् ।
 ग्रहमिह न विभेमि कीर्त्तनीयं कथमपि कृष्णकुतूहल मया यत् ॥५॥

अन्त— विप्रैराद्योप्यजादेविधिवदुपनयादेत्य जन्म द्वितीय ,

हृद्गायत्र्याः स्वयं ता निजहृदि निदधद् ग्रहाविच्चित्रकृद्यः ।

साङ्गे वेदेष्यधीती सपदि किल श्रुचो यस्य विश्वासरूपा-

स्तत्राभिव्यक्तमूर्तिविभुरपि स मम श्रीधरः श्रेयसेऽस्तु ॥७६॥

इति श्रीलक्ष्मणभट्टात्मजश्रीरामचन्द्रविरचिते गोपाललीलास्ये महाकाव्ये कस-
 वधो नाम एकोनविंशः सर्गः ।

२. कृष्णकुतूहल महाकाव्य :—कवि ने इस काव्य की रचना वि.स. १५७७ में अयोध्या में रहते हुए की है ।* इसका भी प्रतिपाद्य विषय श्रीकृष्णलीला का

१-अन्ते गोत्रमुनीपुत्रद्वयगणिते (११७७) माघस्य पक्षे तिथे-

ऽयोध्यायां निवसन् सती परगुणप्रीत्यात्मनो सेवकः ।

श्रीमत्सकमणभट्टविरचितकः श्रीवत्समेन्द्रानुजः ,

काव्यं कृष्णकुतूहलाख्यमकृत श्रीरामचन्द्रः कविः ।

[गोपाललीला पृ० २५५]

वर्णन ही है। श्रीगोपाललीला काव्य की अपेक्षा इसकी रचना अधिक प्रौढ़ और प्राञ्जल है।^१ यह काव्य अद्यावधि अप्राप्त है। वेचनराम शर्मा ने गोपाललीला के सम्पादकीय उपसंहार में अवश्य उल्लेख किया है कि आरम्भ के दो पत्रैरहित इसकी प्रति मुझे प्राप्त हुई है।^२ विशेष शोध करने पर संभव है इस महाकाव्य की अन्य प्रतियाँ भी प्राप्त हो जायें।

प्रस्तुत ग्रन्थ में चन्द्रशेखर भट्ट ने भी मत्तमयूर, प्रहर्षिणी, वसन्ततिलका, प्रहरणकलिका, मालिनी, पृथ्वी, शिखरिणी, हरिणी, मन्दाक्रान्ता, चारुलवि-
क्रीडित और स्रग्धरा छन्द के प्रत्युदाहरण कृष्णकुतूहल काव्य के दिये हैं। इन कतिचित् पद्यों का रसास्वादन करने से यह स्पष्ट है कि वस्तुतः यह काव्य महा-
काव्य की श्रेणि का ही है।

३. रोमावलीशतकम् :—१२५ पद्यों का यह खण्ड-काव्य है। वि० सं० १५७४ में इसकी रचना हुई है। यह लघुकाव्य आलंकारिक-भाषा में शृंगार-रस से भोत-प्रोत है। इसमें कवि ने अनेक छन्दों का प्रयोग किया है। इसका आद्यत इस प्रकार है :—

आदि— श्रीलावण्याब्धिवेलाकलितनववयोवासशालाविशाला ,

लीला नानाकलानां स्वरितमपसरद्वास्त्यचेलालश्रीः ।

ह्रीलामस्याग्रदूतीविहितपतिवशीभावशीलादिशिक्षा—

भीलास्यं रोमराजी हरतु हरिहविर्वाच्यवाचां श्रिया नः ॥१॥

ध्यातस्यादिकथेः सुबन्धुविदुषो बाणस्य चान्यस्य वा ,

वाचामाश्रितपूर्वपूर्ववचसामासाद्य काव्यक्रमम् ।

सर्वाब्धौ भवभूति-भारविमुखाः श्रीकालिदासादयः ,

सञ्जाताः कवयो वयं तु कवितां के नाम कुर्वीमहि ॥२॥

इत्थं जातविवस्यनेर्गप कवितामार्गे कथं सञ्चर—

क्षञ्चेयं कविकीर्तिमित्यतितरां जगन्ति चिन्तां चिरात् ।

तत्किं काव्यमुपपन्नमेककविभिः प्राङ्महिते वाङ्मये,

भारत्या विभवेऽप्यवाप्तिसुखमं किं कस्य नाम्यस्यतः ॥३॥

१-‘गोपाललीला की अपेक्षा कृष्णकुतूहल विशेष चमत्कृति बना है।’

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र : गोपाललीला भूमिका ।

२-‘१८ व कृष्णकुतूहलकाव्य काव्यमारम्भे द्वितीयपत्रैरहितं मयासादि ।’ पृ० २११

अतिशस्तवस्तुवृत्तिर्बहुशस्तन्यस्तनवरसोपाधिः ।

अर्वाचीनकवीनामुपमाता कालिदासोऽभूत् ॥४॥

प्रभवति परनेकः पञ्चपाणां समाजे,

निजमतगुणजातिदुर्ज्जनस्त्याज्यमूर्तिः ।

श्रवणरसनचक्षुर्धर्माणहृत्पददम्बे,

प्रथममिह मनीषी वेत्तु दृष्टान्तमन्तः ॥५॥

श्रितमूपचेतसि सतां जातु न वक्रादिभाषविदम् ।

भुवि कविभिरसुलभादौ विदितः सदृशः सतां सदालोढयः ॥६॥

कृतेराद्यलोके मतिमुपयता कर्तुं मधुना,

न शक्यं केनापि क्वचन शतशो वर्णनमिति ।

मुहुः श्रुत्वा लोकाञ्जनितकृतिकौतूहलहृदा,

मयोपक्रम्यान्यस्सपदि विहितं साहसमिदम् ॥७॥

अस्पृष्टपूर्वकविताच्छविता दधान,

उर्वीधरेश्वरमनोतिविनोदनाय ।

श्लोकैः शतेन कुतुकात् कविरामचन्द्रो,

रोमावलेः किमपि वर्णनमातनोति ॥८॥

×

×

×

अन्त— श्रीमल्लक्ष्मणभट्टसूनुरनुजः श्रीवल्लभयोगुरो-

रध्येतुः सममग्रजो गुणिमणेः श्रीविश्वनाथस्य च ।

अब्दे वेदमुनीपुचन्द्रगणिते (१५७४) श्रीरामचन्द्रः कृतो,

रोमालीशतकं व्यधात् सकुतुकादुर्वीधरप्रीतये ॥१२५॥

इति श्रीलक्ष्मणभट्टात्मजश्रीरामचन्द्रकविकृतं रोमावलीशृङ्गारशतकं सम्पूर्णम् ।

×

×

×

यह काव्य अद्यावधि अप्रकाशित है । इसकी एक पूर्ण प्रति विद्याविभाग सरस्वती मंदार, कांकरोली में है, और दो अपूर्ण प्रतियें राजस्थान प्राच्य-विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर एवं शाखा-कार्यालय जयपुर में हैं ।

१. अथ १६।१२, पत्र संख्या १२, प्रथमपत्र मितित परिषद—“पुस्तकमिद पञ्चनदि-मधुसूदनभट्टस्य । शृङ्गारशतके रामचन्द्रकविकृते ।”—जिनारे पर—“लक्ष्मीनाथभट्टीयम् ।”

२. ग्रन्थ नं० ११२३५ पत्र संख्या १७

३. विश्वनाथ पारदानन्दन संग्रह, संपाक ३३५ ।

४. रसिकरञ्जन स्वोपज्ञटीका-सहित :— इस लघुकाव्य का दूसरा नाम 'शृङ्गारवैराग्यशतम्' भी है। इस काव्य की यह विशेषता है कि प्रत्येक पद्य शृङ्गार और वैराग्य दोनों अर्थों का समानरूप से प्रतिपादन करता है अर्थात् इसे द्वयाश्रय काव्य या द्विसन्धान काव्य भी कह सकते हैं। इसमें कुल १३० पद्य हैं। टीका की रचना स्वयं कवि ने वि० सं० १५८०, अयोध्या में की है। ग्रंथ का आद्यत इस प्रकार है :—

आदि— शुभारम्भे दम्भे महितमतिङ्गिम्भेङ्गितशतं ,
मणिस्तम्भे रम्भेक्षणसकुचकुम्भे परिणतम् ।
अनालम्भे लम्भे पथि पदविलम्भेऽमितसुखं ,
तमालम्भे स्तम्भेरमवदनमम्भेक्षितमुखम् ॥१॥

× × ×

एकश्लोककृती पुरः स्फुरितया सत्तत्त्वगोष्ठ्या समं ,
साधूनां सदसि स्फुटां विटकथां को वाच्यवृत्त्या नयेत् ।
इत्याकर्ण्य जनश्रुति वितनुते श्रीरामचन्द्रः कविः ,
श्लोकानां सह पञ्चविंशतिशतं शृङ्गारवैराग्ययोः ॥३॥

अन्त— प्रख्यातो यः पदार्थैरमृतहरिगजश्रीसखैः श्लोकशाली ,
स्फीतातिस्फूर्तिरुद्यद्बुधमुदनुगिरं क्षीरधी रामचन्द्रः ।
भ्राग्तोऽस्मिन् मन्दरागः फणिपतिगुणभूञ्जातुमञ्जेत्कर्णं न ,
स्यादाधारोऽभुना चेदिह न विरचितः श्रीमता बाढ्मुखेन ॥१३०॥

× × ×

टीका का उपसंहार—

शृङ्गारवैराग्यशतं सपञ्चविंशत्योऽप्यानगरे व्यषत्त ।
अग्रे वियद्वारणबाणचन्द्रे (१५८०), श्रीरामचन्द्रोऽनु च तस्य टीकाम् ॥
श्रीरामचन्द्रकथिना काव्यमिदं व्यरचि विरतिबीजतपा ।
रसिकानामपि रतये शृङ्गारार्योऽपि संगृहीतोऽन ॥

पुष्पिका—इति श्रीलक्ष्मणभट्टगुणु-श्रीरामचन्द्रकविकृतं सटीकं रसिकरञ्जनं नाम शृङ्गारवैराग्यशतसमानं काव्यं सम्पूर्णम् ।

यह काव्य वि० सं० १७०३ की लिखित प्रति के आधार से संपादित होकर सन् १९८७ में काव्यमासा के चतुर्थगुच्छक में प्रकाशित हो चुका है, जो कि अब प्रायः अप्राप्य है ।

५ शृङ्गारवेदान्त—इसका उल्लेख केवल भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने ही किया है, अन्य किसी भी सूचीपत्र में इसका उल्लेख नहीं है। अप्राप्त ग्रंथ है। मेरे विचारानुसार सम्भव है रसिकरजन के अपरनाम 'शृङ्गारवेराग्यशत' को 'शृङ्गारवेदान्त' मान कर भारतेन्दुजी ने लिख दिया हो।

६ दशावतार-स्तोत्रम्—यह स्तोत्र अद्यावधि अप्राप्त है। इसका केवल एक पद्य वृत्तमोक्तिक में पञ्चचामर छन्द के प्रत्युदाहरण-रूप में उद्धृत हुआ है जो निम्नलिखित है —

अकुण्ठधार भूमिदार कण्ठपीठलोचन—

क्षणध्वनद्ध्वनत्कृतिक्वणत्कुठारभोपण ।

प्रकामवाम जामदग्न्यनाम रामहेहय—

क्षयप्रयत्ननिर्दय व्यय भयस्य जृम्भय ॥

७ नारायणाष्टकम्—यह स्तोत्र भी अद्यावधि अप्राप्त है। मदालस छन्द का प्रत्युदाहरण देते हुये चन्द्रशेखरभट्ट ने यह पद्य इस रूप में दिया है—

वृन्दातिभासि शरदिन्दावल्लण्डरुचि वृन्दावनव्रजवधू—

वृन्दागमच्छलनमन्दावहासकृतनिन्दार्थवादकथनम् ।

वन्दारविभ्यदरविन्दासनक्षुभितवृन्दारवेश्वरकृत—

च्छन्दानुवृत्तिमिह नन्दात्मज भुवनकन्दाकृति हृदि भजे ॥

कवि की प्राप्त रचनाओं में स १५८० तक का उल्लेख है। अतः अनुमान किया जा सकता है कि इसके कुछ समय पश्चात् ही विपप्रयोग से कवि स्वर्गलोक को प्रयाण कर गया हो।

नारायण भट्ट—

कवि रामचन्द्र भट्ट के पुत्र नारायण भट्ट के सम्बन्ध में कोई विशिष्ट उल्लेख प्राप्त नहीं है और न इनके द्वारा रचित किसी कृति का उल्लेख ही प्राप्त होता है।

रायभट्ट—

कवि रामचन्द्र भट्ट के पीत्र रायभट्ट के सम्बन्ध में भी कोई ऐतिह्य उल्लेख प्राप्त नहीं है। इनका बनाया हुआ शृङ्गारवल्लील नामक १०४ पद्यों का खण्ड-

१-भारतेन्दु ग्रन्थाली, भाग १, पृ० १६८

२-वृत्तमोक्तिक पृष्ठ १२६

३- .. १६७

काव्य अवश्य प्राप्त होता है। इस लघुकाव्य में पार्वती और शंकर का शृङ्गार-वर्णन किया गया है। इस का उपसंहार और पुष्पिका इस प्रकार है :—

उपसंहार—गुम्फो वाचां मसृणमधुरो मालतीनामिव स्यात्, -

अर्थो वाच्यः प्रसरणपरः सम्मितः सौरभस्य ।

भावयंभ्यो रस इव रसस्तद्विदाह्लादहेतुः-

मालिनाम्सो मुकविरचना कस्य भूपां न घत्ते ॥१०४॥

पुष्पिका—इति श्रीविद्यागरिष्ठ-वसिष्ठ-नारायणभट्टात्मजेन महाकविपण्डित-राय-भट्टेन विरचितं शृङ्गारकल्लोलनाम खण्डकाव्यम् ।

चन्द्रशेखरभट्ट^१ ने मालिनी छन्द का प्रत्युदाहरण देते हुए लिखा है :—

“अस्मत्पितामहमहाकविपण्डितश्रीरायभट्टकृते शृङ्गारकल्लोले खण्डकाव्ये—

मन इव रमणीनां रागिणी वारुणीयं,

हृदयमिव युवानस्तस्कराः स्वं हरन्ति ।

भवनमिव मदीयं नाथ शून्यो हि देश-

स्तव न गमनमीहे पान्थ कामाभिरामा ॥”

इस पद्य को देखते हुये यह कहा जा सकता है कि काव्य-साहित्य पर आपका अच्छा अधिकार था और यह लघु रचना आपकी सफल रचना है। यह खण्ड-काव्य अद्यावधि अप्रकाशित है। इसकी १६६५ की लिखित^२ एकमात्र १२ पत्रों की प्रति विद्याविभाग सरस्वती भंडार कांकरोली में सं. का. बंध ६६।१० पर सुरक्षित है। इस प्रति का द्वितीय पत्र अप्राप्त है।

केटलॉग केटलोगरम् भा. १ पृ. ४७१ के अनुसार रायभट्टरचित ‘यति-संस्कार-प्रयोग’ नामक ग्रन्थ भी प्राप्त है। रायभट्ट यही है या अन्य कोई विद्वान् ? इसका निर्णय प्रति के सम्मुख न होने से नहीं किया जा सकता।

लक्ष्मीनाथ भट्ट—

चन्द्रशेखर भट्ट के पिता एवं कवि रामचन्द्र भट्ट के प्रपौत्र लक्ष्मीनाथ भट्ट के सम्बन्ध में भी कोई ऐतिहासिक उल्लेख प्राप्त नहीं है। प्राप्त रचनाओं में पिङ्गल-प्रदीप का रचनाकाल १६५७ है, अतः इनका आविर्भाव-काल १६२० से १६३० के मध्य का माना जा सकता है। इनकी प्राप्त रचनाओं को देखते हुए यह

१. देखें, वृत्तमोक्तिक पृ. १२६.

२. भूतारपद्विपुमिते (१६६५) वर्षे वारे नितेशस्य ।

पेत्रदृष्टप्रतिपदि तिसृति हरिषद्गुरेणम् ॥

निःसंदेह कहा जा सकता है कि इनका अलङ्कार-शास्त्र, छन्दःशास्त्र और काव्य-साहित्य पर एकाधिपत्य था । 'सकलोपनिषद्-रहस्यार्णवकर्णधार' विशेषण से संभव है कि इन्होंने किसी उपनिषद् पर या उपनिषद्-साहित्य पर लेखिनी अवश्य ही चलाई हो ! वृत्तमीवितकवार्त्तिकदुष्करोद्धार की रचना १६८७ में हुई है, अतः अनुमान है कि यह रचना इनकी अन्तिम रचना हो ! इनके द्वारा सजित प्राप्त साहित्य का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार हैः—

१. सरस्वतीकण्ठाभरण-टीका—धाराधिपति भोजनरेन्द्र-प्रणीत इस ग्रन्थ की टीका का नाम 'दुष्करचित्रप्रकाशिका' है । टीकाकार ने इसमें रचना संवत् नहीं दिया है । टीका के नाम से ऐसा प्रतीत होता है कि यह विस्तृत परिमाणवाली टीका न होकर दुर्गम स्थलों का विवेचन मात्र है । इसकी एकमात्र ४६ पत्रों की कीटभक्षित प्रति एशियाटिक सोसायटी, कलकत्ता के संग्रह में सुरक्षित है । इसका आद्यन्त इस प्रकार हैः—

आदि— स्मारं स्मारमुदारदारविरहव्याधिव्यथाव्याकुलं,
 रामं चारिधिवन्धयन्धुरयसःसम्पृष्टदिङ्मण्डलम् ।
 श्रीमद्भोजकृतप्रबन्धजलघो सेतुः कवीनां मुदो
 हेतुं संरचयामि बन्धविविधव्यास्यातकीतुहलः ॥१॥

अन्त— श्रीराघभट्टतनयेन नयान्वितेन,
 धाराधिनायनूपतेः सुमतेः प्रयग्ये ।
 प्रोचे यदेव धचन रचनं गुणानां,
 वाग्देवताऽपि परितुष्यति तेन माता ॥१॥
 नृवंशु कवयः कण्ठे दुष्करार्थसुमालिकाम् ।
 तदमीनायेन रचितां वाग्देवीकण्ठभूषणे ॥२॥

पुष्पिका— इति श्रीमद्रायभट्टात्मज-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टविरचिता सरस्वती-कण्ठाभरणालङ्कारे दुष्करचित्रप्रकाशिका समाप्ता ।

२. प्राकृतपिङ्गल-टीका—इस टीका का नाम पिङ्गलप्रदीप या छन्दःप्रदीप है । इसकी रचना सं. १६५७ में हुई है । प्रोठ एव प्राग्जल भाषा में विद्यद शैली में विवेचन होने से यह टीका छन्दःशास्त्रों के लिये सचमुच प्रदीप के समान हो है । इसका आद्यन्त इस प्रकार है—

आदि— गोपीपीनपयोधरद्वयमिलञ्चेलाञ्चलाकर्पण-

क्ष्वेलिव्यापृतचारुञ्चलकराम्भोज व्रजत्कानने ।

द्राक्षामञ्जुलमाधुरीपरिणमद्वाग्बिभ्रम तन्मना-

गद्वेत समुपास्महे यदुकुलालम्ब विचित्र महः ॥१॥

सम्बोदरमवलम्बे स्तम्बेरमवदनमेकदन्तवरम् ।

अम्बेक्षितमुखकमल य वेदो नापि तत्स्वतो वेद ॥२॥

गङ्गाशीतपयोभयादिव मिलद् आलाक्षिकोलादिव,

ध्यालक्ष्वेलजफूटकुतादिव सदा लक्ष्म्यापवादादिव ।

स्त्रीशापादिव कण्ठकालिमकुहूसाभिध्ययोगादिव,

श्रोक्णस्य कृश करोतु कुशल शीतद्युतिः श्रीमताम् ॥३॥

विहितदयो मन्देष्वपि दत्त्वानन्देन वाङ्मयं देहम् ।

शब्देऽर्धे सन्देहव्ययाय वन्दे चिर गिर देवीम् ॥४॥

भट्टश्रीरामचन्द्रः कविविबुधकुले लब्धदेह श्रुतो य ,

श्रीमान्नारायणाख्य कविमुकुटमणिस्तत्तनूजोऽजनिष्ट ।

तत्पुत्रो रायभट्ट सकलकविकुलख्यातकीर्तिस्तदीयो,

लक्ष्मीनाथस्तनूजो रचयति रुचिर पिङ्गसायं प्रदीपम् ॥५॥

श्रीरायभट्टतनयो लक्ष्मीनाथ समुल्लसत्प्रतिभः ।

प्राय पिङ्गलसूत्रे तनुते भाष्य विशासमति ॥६॥

जलौकसा तुल्यतमं खलौ किं रम्येपि दीपग्रहणस्वभावं ।

मतां परानन्दनमन्दिराणां चमत्कृति मत्कृतिरातनोनु ॥७॥

यत्र सूर्येण सभिन्न नापि रत्नेन भास्वता ।

तत्पिङ्गलसूत्रप्रदीपेन नादयतामान्तर तमः ॥८॥

यद्यस्ति बौतुक वश्यन्द सन्दर्भविज्ञाने ।

सन्त पिङ्गलसूत्र दीप लक्ष्मीनाथेन दीपित पठत ॥९॥

विञ्च भवतिरिय चमत्कृति चेन्न चेतसि सता विधास्यति ।

भारती व्रजतु भारतीयया लज्जया परमसौ रसातलम् ॥१०॥

अन्त— इत्यादि गद्यवाक्येषु मया किञ्चित्प्रदर्शितम् ।

विनोपस्तत्र तत्रापि नोक्तो विस्तरस्तद्व्या ॥११॥

मन्द पथ ज्ञास्यसि सत्यदार्ढ्यमित्यावल्यान् मया प्रदीप्तम् ।

छन्द प्रदीप वयसो विनोप्य छन्द ममस्त स्वयमेव वित्त ॥१२॥

अद्वे भास्करवाजिपाण्डवरसदमा (१६५७) मण्डलोद्भासिते,

भाद्रे मासि सिते दले हरिदिने वारे तमिस्रापतेः ।

श्रीमत्पिङ्गलनागनिमित्तवरग्रन्थप्रदीप मुदे,

लोकाना निखिलार्थसाधकमिमं लक्ष्मीपतिनिर्ममे ॥३॥

विशिष्टस्नेहभरितं सत्पात्रपरिकल्पितम् ।

स्फुरद्वृत्तदशं छन्दःप्रदीप पश्यत स्फुटम् ॥४॥

छन्दःप्रदीपकः सोऽयमखिलार्थप्रकाशकः ।

लक्ष्मीनाथेन रचितस्तिष्ठत्वाचन्द्रतारकम् ॥५॥

पुष्पिका—इत्यालङ्कारिकचक्रचूडामणिश्रीमद्रायभट्टात्मजश्रीलक्ष्मीनाथभट्टविरचिते पिङ्गलप्रदीपे वर्णवृत्ताख्यो द्वितीयः परिच्छेदः समाप्तः ।

डा. भोलादाकर व्यास द्वारा सम्पादित प्राकृतपिङ्गलम्, भा. १ में यह टीका प्राकृत टेक्स्ट सोसायटी वाराणसी द्वारा सन् १९५६ में प्रकाशित हो चुकी है ।

३. उदाहरणमञ्जरी—यह ग्रन्थ अद्यावधि अप्राप्त है । लक्ष्मीनाथ भट्ट की यह स्वतन्त्र कृति प्रतीत होती है । इस ग्रन्थ में केवल छन्दों के ही नहीं, अपितु विपुल सख्या में प्राप्त छन्द-भेदों के उदाहरण भी दिये गये हैं । यही कारण है कि स्वयं लक्ष्मीनाथ ने 'पिङ्गलप्रदीप' में और भट्ट चन्द्रशेखर ने वृत्तमीक्षिक^१ में गाथा, स्वन्धक, दोहा आदि छन्द-भेदों के उदाहरणों के लिये 'उदाहरणमञ्जरी' देखने का आग्रह किया है । स० १६५७ में रचित पिङ्गलप्रदीप में उल्लेख होने से यह निश्चित है कि इसकी रचना १६५७ के पूर्व ही हो चुकी थी ।

केटलांगस् केटलांगरम्, भाग २ पृष्ठ १३ पर इसका नाम उदाहरणचन्द्रिका दिया है, जो कि भ्रमवाचक है ।

४. वृत्तमीक्षिक-द्वितीयगण्ड का अन्त—प्रस्तुत ग्रन्थ के प्रथम-गण्ड की रचना चन्द्रशेखर भट्ट ने १६७५ में पूर्ण की है और द्वितीय-गण्ड की समाप्ति होने के पूर्व ही चन्द्रशेखर इस लोक से प्रयाण कर गये । प्रयाण करने के पूर्व इन्होंने अपनी भान्तरिक अभिलाषा अपने पिता लक्ष्मीनाथ भट्ट की यतसाह कि मेरे इस ग्रन्थ की भाषा पूर्ण कर दें । सुयोग्य, प्रतिभाशाली, पाण्डित्यचरित आदि महाराज्यों के प्रणेता, विनयशील पुत्र की अन्तिम अभिलाषा के अनुसार ही गोबसन्तप्त लक्ष्मीनाथ भट्ट ने अपने पुत्र की कीर्ति की अक्षुण्ण रखने के लिये तत्काल ही स० १६७६ वात्तिकी पूर्णिमा के दिन इस ग्रन्थ की पूर्ण कर दिया ।

१-देवें, पृष्ठ १६२, १६५, १६७, ४०६, ४०८,

२-देवें, पृष्ठ १०, १३, १४, १६, १७, २१, २४,

याते दिव सुतनये विनयोपपन्ने,
 श्रीचन्द्रशेखरकवी किल तत्प्रबन्ध ।
 विच्छेदमाप भुवि तद्वचसं व साद्धं ,
 पूर्णाकृतश्च स हि जीवनहेतवेऽस्य ॥८॥

श्रीवृत्तमौक्तिकमिदं लक्ष्मीनाथेन पूरितं यत्नात् ।
 जीमादाचन्द्रार्कं जीवातुर्जीवलोकस्य ॥९॥

×

×

×

रसमुनिरसचन्द्रं भोविते (१६७६) वंक्रमेन्दे ,
 सितदलकलितेऽस्मिन्कात्तिके पौर्णमास्याम् ।
 अतिविमलमति श्रीचन्द्रमौलिवितेने ,
 रुचिरतरमपूर्वं भोवितकं वृत्तपूर्वम् ॥१॥

यहाँ यह विचारणीय है कि द्वितीय खंड का कितना अंश चन्द्रशेखरभट्ट ने लिखा है और कितने अंश की पूर्ति लक्ष्मीनाथ भट्ट ने की है ? इसका निर्णय करने के लिये वृत्तमौक्तिक का अंतरंग आलोचन आवश्यक है ।

प्रथम की शैली सूत्रकार की तरह संक्षिप्त शैली नहीं है, प्रत्येक छन्द का लक्षण वारिकारूप में न देकर उसी लक्षणयुक्त पूर्ण पद्य में दिया है जिससे छन्द का लक्षण और विराम स्पष्ट हो जाते हैं और वह लक्षण उदाहरण का भी कार्य दे सकता है । पदवात् स्वयं रचित उदाहरण और प्राचीन महाकवियों के प्रयु-
 दाहरण दिये हैं । और दूसरी बात, तत्समय में या प्राचीन छन्द शास्त्रों में प्रयोग-
 प्राप्त प्रत्येक छन्द का लक्षण देने का प्रयत्न किया है । इस प्रकार की शैली हमें द्वितीय-खण्ड के प्रथमवृत्तनिरूपण प्रकरण तक ही प्राप्त होती है । द्वितीय प्रकरण से छन्दों का संक्षिप्तीकरण दृष्टिगोचर होता है । कतिपय स्थलों पर छन्दों के लक्षण उदाहरण-स्वरूप न होकर वारिका-सूत्ररूप में प्राप्त होते हैं । और, उस वारिका को स्पष्ट करने के लिये स्वोपज्ञ टीका प्राप्त होती है, जो कि प्रथम प्रकरण तक प्राप्त नहीं है । साथ ही, पीछे के प्रकरणों में छन्द शास्त्रों के प्रचलित छन्दों के भी लक्षण न देकर अन्य ग्रंथ देखने का संकेत किया है एवं कई उदाहरणों के लिये 'ऊहाम्' कह कर या प्रथमचरण मात्र ही दिया है । अतः यह अनुमान कर सकते हैं कि प्रथम प्रकरण तक की रचना चन्द्रशेखर भट्ट की है और द्वितीय प्रकरण से १२वें प्रकरण तक की रचना लक्ष्मीनाथ भट्ट की है । किन्तु, तृतीय प्रकरण में 'प्रचितक' दण्डक का लक्षण छन्द सूत्रकार आचार्य

पिङ्गल-सम्मत दो नगण, आठ रगण^१ का प्राप्त है, जब कि लक्ष्मीनाथ भट्ट ने 'पिङ्गलप्रदीप'^२ में प्रचितक का लक्षण दो नगण, सात यगण स्वीकार किया है। दो नगण, सात यगण के लक्षण को 'वृत्तमौक्तिक' में 'सर्वतोभद्र' दण्डक का लक्षण माना है और मतान्तर का उल्लेख करते हुए लिखा है—'एतस्यैवान्यत्र 'प्रचितक' इति नामान्तरम् ।'^३ अतः मेरे मतानुसार चतुर्थ अर्द्धसम-प्रकरण तक की रचना चन्द्रशेखर भट्ट की है और पचम विपमवृत्त-प्रकरण से अन्त तक की रचना लक्ष्मीनाथ भट्ट की होनी चाहिये। अस्तु

५. वृत्तमौक्तिकवातिकदुष्करोद्धार—चन्द्रशेखरभट्ट रचित वृत्तमौक्तिक-प्रथम खण्ड के प्रथम गायक-प्रकरणस्थ पद्य ५१ से ८६ तक के ३६ पद्यों पर यह टीका है। टीकाकार ने इसे ११ विश्रामों में विभक्त किया है। मात्राहिष्ट, मात्रानष्ट, वर्णोहिष्ट, वर्णनष्ट, वर्णमेरु, वर्णपताका, मात्रामेरु, मात्रापताका, वृत्तस्य लघुगुरुसप्त्या-ज्ञान, वर्णमकंटी और मात्रामकंटी नामक विश्राम हैं। छन्दशास्त्र में यदि कोई कठिनतम विषय है तो वह है प्रस्तार। इसी प्रस्तार-स्वरूप का टीकाकार ने बहुत ही रोचक शैली में विशद वर्णन किया है, जिससे तज्ज्ञगण सरलता के साथ इस दुष्कर प्रस्तार का अवगाहन कर सकते हैं। इस टीका की रचना स० १६८७ कार्तिककृष्ण पचमी^४ को हुई है। यह टीका प्रस्तुत ग्रन्थ में पृ० २६२ से ३२६ तक में मुद्रित है।

६ शिवस्तुति—यह शायद भगवान् शिव का स्तोत्र है या अष्टव या कविकृत किसी ग्रन्थ का अंश है निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता। वृत्तमौक्तिक^५ में मदनगृह नामक मात्रिक छन्द का प्रत्युदाहरण देते हुए लिखा है—'यथा याऽस्मिन्निषु शिवस्तुति'। अतः संभवतः यह स्तोत्र ही होना चाहिए। पद्य निम्नलिखित है—

वरकलितकपाल घृतनरमाल

भालस्थानलहुतमदन कृतरिपुवदन ।

भवभयहरण गिरिजारमण

सकलजनस्तुतशुभचरित गुणगणभरितम् ।

१—देखें, वृत्तमौक्तिक पृ० १८४

२—'अथ प्रचितको दण्डक'—प्रचितकसमभिधो धीरधीभि स्मृतो दण्डको = द्रयादुत्तरं सप्तभिर्धे । नगणद्वयादुत्तरं सप्तभिर्धे गणं धीभि सप्तविंशतिवर्णात्मनचरण प्रचितकास्यो दण्डक स्मृतः । [प्राकृतपौगलम् पृ० १०६]

३—देखें, वृत्तमौक्तिक पृ० १८२

४—, पृ० ३२६ ५—, पृ० ४५

कृतफणिपतिहार त्रिभुवनसार

अ १५

दक्षमस्रक्षयसक्षुब्ध रमणीलुब्ध ।

गलराजितगरल गङ्गाविमल

कैलाशाचलधामकर प्रणमामि हरम् ॥

यह पूर्ण स्तोत्र अद्यावधि अप्राप्त है ।

७. नन्दनन्दनाष्टक—यह स्तोत्र भी अद्यावधि अप्राप्त है । इसका केवल एक पद्य चर्चरी छन्द के प्रत्युदाहरण-रूप में प्राप्त है —

"यथा वा, अस्मत्तातचरणाना श्रीनन्दनन्दनाष्टके—"

मन्दहासविराजितं मुनिवृन्दवन्द्यपदाम्बुज,

सुन्दराघरमन्दराचलधारि चारुलसद्भुजम् ।

गोपिकाकुचयुग्मकुङ्कुमपङ्कुरूपितवक्षस ,

नन्दनन्दनमाश्रये मम किं करिष्यति भास्करि ।

८. सुन्दरीध्यानाष्टकम्—यह अष्टवस्तोत्र भी अप्राप्त है । इसका भी केवल एक पद्य चर्चरी छन्द के प्रत्युदाहरण-रूप में प्राप्त है —

"यथा वा, तेषामेव श्रीसुन्दरीध्यानाष्टके"—

वरूपपादपनाटिकावृतदिव्यसीधमहाणवं ,

रत्नसङ्घकृतान्तरीपसुनीपराजिविराजिते ।

चिन्तितार्थविधानदक्षसुरत्नमन्दिरमध्यगा ,

मुक्तिपादपवत्तरीमिह सुन्दरीमहमाश्रये ॥

९. देवीस्तुति—यह देवीस्तोत्र भी अद्यावधि अप्राप्त है । इसका केवल एक पद्य प्रस्तुत ग्रन्थ में 'हीर छन्द' के प्रत्युदाहरण-रूप में प्राप्त है —

पाहि जननि ! क्षम्युरमणि ! शुभदलनपण्डिते !

तारतरलरत्नस्रचितहारवलयमण्डिते ।

भानुरधिरचन्द्रशकलशोभि सकलनन्दिते ।

देहि सततभक्तिमत्तुलमुक्तिमखिलवन्दिते ।

१०. सङ्गवर्णन—इसका एक पद्य सग्वराछन्द के प्रत्युदाहरण-रूप में प्रस्तुत ग्रन्थ में प्राप्त है । सम्भवतः कविरचित यह स्फुट पद्य हो, या हो सकता

है कि कोई लघुकाव्य का अंश हो ! पद्य निम्न है:—

संग्रामारण्यचारी विकटभटभुजस्तम्भभूद्विहारी ,
 शत्रुक्षोणीशचेतोमृगनिकरपरानन्दविशोभकारी ।
 माद्यन्मातङ्गकुम्भस्यलगलदमलस्यूलमुक्ताग्रहारी ,
 स्फारीभूताङ्गधारी जगति विजयते खङ्गपञ्चाननस्ते ॥^१

चन्द्रशेखरभट्ट—

प्रस्तुत ग्रन्थ के प्रणेता चन्द्रशेखर भट्ट लक्ष्मीनाथ भट्ट के पुत्र हैं । इनकी माता का नाम लोपामुद्रा^२ है । इन्होंने अपनी अन्तिम रचना वृत्तमौक्तिक (सं० १६७५-७६) में स्वप्रणीत पाण्डवचरित महाकाव्य और पवनदूत खण्डकाव्य का उल्लेख किया है अतः ये दोनों रचनायें सं० १६७५ के पूर्व की हैं । महाकाव्य की रचना के लिए कम से कम २५-३० की अवस्था तो अपेक्षित है ही । इस अनुमान से इनका जन्म १६४० और १६४५ के मध्य माना जा सकता है । सं० १६७५ की वसन्त पंचमी और सं० १६७६ की कार्तिकी पूर्णिमा के मध्य में इनका अल्पावस्था में ही स्वर्गवास हो गया था । अनुमान के अतिरिक्त इनके सम्बन्ध में कोई भी ज्ञातव्य वृत्त प्राप्त नहीं है । चन्द्रशेखर लक्ष्मीनाथ भट्ट के एकाकी पुत्र थे या इनके और भी भाई थे ? और चन्द्रशेखर के भी कोई सन्तान थी या नहीं ? इनकी वंश-परंपरा यही लुप्त हो गई या आगे भी कुछ पीढ़ियों तक चली ? आदि प्रश्न तिमिरालय ही हैं । इस सम्बन्ध में तो एतद्देशीय भट्ट-वंश के विद्वान् ही प्रकाश डाल सकते हैं ।

ग्रन्थकार द्वारा सजित साहित्य इस प्रकार है—

१. पाण्डवचरित महाकाव्य—स्वयं ग्रन्थकार ने प्रस्तुत ग्रन्थ में 'द्रुतविलम्बित, मालिनी, शार्ङ्गलविक्रीडित और स्रग्धरा छन्द के उदाहरण एवं प्रत्युदाहरण देते हुये 'मत्कृतपाण्डवचरिते महाकाव्ये, ममैव पाण्डवचरिते,' लिखा है । अतः उल्लिखित पद्य यहाँ दिये जा रहे हैं—

मत्कृतपाण्डवचरिते महाकाव्ये कर्णवर्णनप्रस्तावे^३ —

नृपु विलक्षणमस्यपुनर्वपुस्तहजकुण्डलवर्मसुमण्डितम् ।

सखललक्षणलक्षितमद्भुतं न घटते रयकारकुलोचितम् ॥

१. वृत्तमौक्तिक पृ. १६०

२. छन्दःशास्त्रप्रयोगिणिलोपामुद्रापति पितरम् ।

श्रीमत्लक्ष्मीनाथ सखलागमपारण वन्दे ॥ पृ. २६०

३. वृत्तमौक्तिक पृ. ६२.

यथा वा, तत्रैव विदुरोक्तौ—

मिदुरमानसमाशुचिचक्षुष स विदुरो निनदैरतिभीषणै ।
सकलबालपराक्रमवर्णने सदसि भूमिपति समबोधयत् ॥

×

×

×

यथा वा, पाण्डवचरिते^१ —

भवनमिव तसस्ते बाणजालैरकुर्वन्,
गजरथहयपृष्ठे बाहुयुद्धे च दक्षा ।
विधृतनिशितस्त्रङ्गाश्चर्मणा भासमाना
विदधुरथ समाजे मण्डलात् सज्यवोमात् ॥

×

×

×

यथा वा, ममैव पाण्डवचरिते अर्जुनागमने द्रोणवाक्यम्^२ —

ज्ञान यस्य ममात्मजादपि जना शस्त्रास्त्रशिक्षाधिक,
पार्थ सोऽर्जुनसज्जकोऽत्र सकलै कीदृहलाद् दृश्यताम् ।
श्रुत्वा वाचमिति द्विजस्य कवचो गोघाङ्गुलिनाणवान्,
पार्थस्तूणशरासनादिरुचिरस्तत्राजगाम द्रुतम् ॥

×

×

×

यथा, ममैव पाण्डवचरिते^३

तुष्टेनाऽथ द्विजेन त्रिदशपतिमुतस्तत्र दत्ताभ्यनुज्ञ,
कर्णोऽपि प्राप्तमानस्तदसि कुरूपतेर्द्वेन्द्रयुग्द्वार्यमागात् ।
जम्भाराति स्वसूनोरुपरि जलधरेःसस्यघादातपत्र,
चण्डाशुश्चापि कर्णोपरि निजभिरणानाततानातिशीतात् ॥

इन पाँचों पद्यों की रचनाशैली, शब्दयोजना, साधगिकता और शालवा-
रिष योजना की देखते हुये नि सदेह कह सकते हैं कि यह वाक्य गुणों से परिपूर्ण
महाकाव्य ही है। सधुवयस्क की रचना होते हुये भी इसमें भावों की प्रौढता
और भाषा की प्रांजलता परिलक्षित होती है। रोद है कि यह ग्रन्थ अद्यावधि
अप्राप्त है। समग्र है शोधकर्ताओं को शोध करते हुये यह महाकाव्य प्राप्त हो
जाय तो अ-संसार के जीवन और दर्शन पर अथिक् प्रकाश डाला जा सके।

२ पवनदूतम्—यह खण्डकाव्य है। इसको 'दूतम्' शब्द से मेघदूत या किसी दूत-काव्य की पादपूर्तिरूप तो नहीं समझना चाहिए किन्तु रचना इसकी मेघदूत के अनुकरण पर ही हुई है। वृष्ण के मथुरा चले जाने पर राधा पवन के द्वारा सदेश भेजती है और स्वयं की मानसिक अवस्था का दिग्दर्शन कराती है। यह खण्डकाव्य भी अद्यावधि अप्राप्त है। इसका केवल एक पद्य प्रस्तुत ग्रन्थ में पित्ररिणी छन्द के प्रत्युदाहरण रूप में प्राप्त है—

यथा वा, ममैव पवनदूते खण्डकाव्ये । —

यदा कसादीना निधनविधये यादवपुरी,
गत श्रीगोविन्द पितृमवनतोऽकूरसहितः ।
तदा तस्यो-मीलद्विरहदहनज्वालगहने,
पपात श्रीराधा कलिततदसाधारणगतिः ॥

३. प्राकृतपिङ्गल-‘उद्योत’ टीका—प्राकृतपिङ्गल में दो परिच्छेद हैं—
१ मानावृत्त परिच्छेद और २ वर्णिकवृत्त परिच्छेद। यह उद्योत नामक टीका प्रथम परिच्छेद पर है। इसकी रचना स १६७३ में हुई है। वैसे तो इस पर बीसो टीकायें हैं जिनमें रविकर, पशुपति, लक्ष्मीनाथभट्ट, वशीधर आदि की मुख्य हैं, किन्तु इस टीका की विशेषता यह है कि प्रस्तार और मात्रिक-छन्दों का विवेचन साहित्यपूर्ण भाषा में होते हुये भी सरलीकरण को लिये हुय है। पाण्डित्य-प्रदर्शन की अपेक्षा वर्णविषय का अधिब स्पष्टता के साथ प्रतिपादन किया है। इसकी १८वीं शती की लिखित ४५ पत्रों की एकमात्र-प्रति अनुप सस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर में ग्रन्थ न ५४१२ पर सुरक्षित है। यह कृति प्रकाशन-योग्य है। इसका आद्यन्त इस प्रकार है—

आदि— अहितहृदयकील गोपनारीमुलील,
सजलजलदनील शोकसत्राणसीलम् ।
सरणि निहितमाल भक्तवृन्दस्य पाल,
कलय दनुजकाल नन्दगोपानबालम् ॥१॥
तातमरचितपिङ्गलदीपध्वस्तचितघनमोहनसतति (?)
अयंभारयुतपिङ्गलभावोद्योतमाचरति चन्द्रशेखर ॥२॥
श्रीमत्पिङ्गलनागोक्त सूत्राणा विशदायिका ।
निष्पावबोधसिद्धयर्थं सक्षिप्ता वृत्तिरुच्यते ॥३॥

अन्त— श्रीमत्पिङ्गलनागोक्तमात्रावृत्तप्रकाशकम् ।

पिङ्गलोद्योतममलमविस्तृतमपि स्फुटम् ॥

हरादिमुनिशास्त्रेन्दुमितेऽब्दे (१६७३) मासि चाश्विने ।

सित मिते चन्द्रशेखर सव्यरीरचत् ॥

पुष्पिका—इति महामहोपाध्यायालङ्कारिकचक्रबूडामणि छन्द शास्त्रप्रस्थानपरमाचार्य-वेदान्तार्णवकर्णधार-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टारकात्मज-चन्द्रशेखरभट्टविरचिताया पिङ्गलोद्योताख्याया सूत्रवृत्ती मात्रावृत्ताख्य प्रथम प्रकाश समाप्तः । समाप्त-इत्यस्य सूत्रवृत्ती प्रथम खण्ड ।

सयोज्य पाणिगुणल याचे साधूनह किमपि ।

मत्सररहितैर्यन्तात् सशोध्य मे वचनित स्तलितम् ॥

भट्ट लक्ष्मीनाथ ने वृत्तमोवितक-वार्तिकदुष्करोद्धार* मे इस पिङ्गलोद्योत टीका के उद्धरण दिए हैं ।

४ वृत्तमोवितकम्—छन्द शास्त्र का प्रस्तुत ग्रन्थ है । इसमें दो खंड हैं । प्रथम मात्रावृत्त खंड, जिसकी १६७५ मे रचना हुई है और द्वितीय वर्णवृत्त खंड है, जिसकी रचना १६७६ मे हुई है । इस ग्रन्थ का विशेष परिचय आगे दिया जायगा ।

केटलॉगस केटलॉगरम् भाग १, पृष्ठ १८१ पर भट्ट चन्द्रशेखर रचित गंगादासीय छन्दोमञ्जरी की टीका 'छन्दोमञ्जरीजीवन' का भी उल्लेख है । इसकी एकमात्र प्रति इण्डिया ऑफिस लायब्रेरी लन्दन* मे है, यह प्रति बगला लिपि मे लिखी हुई है । इस टीका का मगलाचरण निम्न है—

वाणी कमलामभितो दोर्भ्यामालिङ्गितो योऽसौ ।

त नारायणमादि सुरतरुवत्प सदा वन्दे ॥१॥

छन्दसां मञ्जरी तप्ताभिधेया स्फुटमानुता ।

तस्या किं जीवन न स्याच्चन्द्रशेखरभारतो ॥२॥

किन्तु, इस टीका के मगलाचरण मे टीकाकार ने अपना नाम चन्द्रशेखर

१-वृत्तमोवितक पृ० १०६, ३१३

२-राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर के उपसंचालक श्री गोपालनारायणजी बहुरा ने इण्डिया ऑफिस लायब्रेरी लन्दन मे वापवाहकों से सम्पर्क करके इस प्रति के प्राच्यत भाग की फोटोकोपी भेजवा कर उपसध्य की उसकी लिए मैं उनका धामारी हूँ ।—स०

भारती दिया है न कि चन्द्रशेखर भट्ट । चन्द्रशेखर भट्ट ने अपनी कृतियों में अपने नाम के साथ कही भी 'भारती' शब्द का प्रयोग नहीं किया है । अपने नाम के साथ सर्वत्र भट्ट एव लक्ष्मोनाथात्मज का प्रयोग किया है । अतः यह स्पष्ट है कि छन्दोमञ्जरीजीवन के कर्ता चन्द्रशेखर भट्ट नहीं है, अपितु कोई चन्द्रशेखर भारती है । संभव है चन्द्रशेखर नाम-साम्य से भ्रमवशात् सम्पादक ने लिख दिया हो !

वृत्तमौक्तिक का सारांश

नामकरण—

कवि चन्द्रशेखर भट्ट ने प्रस्तुत ग्रन्थ का नाम 'वृत्तमौक्तिकम्'^१ रखा है, किन्तु द्वितीय-खण्ड के ग्यारहवें प्रकरण में 'वात्तिक वृत्तमौक्तिकम्'^२ तथा प्रथम खण्ड एव द्वितीय-खण्ड की पुष्पिका में 'वृत्तमौक्तिके पिङ्गलवात्तिके'^३ और प्रथम-खण्ड के १, ३, ४, ५वें प्रकरणों की तथा द्वितीय-खण्ड के प्रकरण ५, ७ से १० की पुष्पिकाओं में 'वृत्तमौक्तिके वात्तिके'^४ का उल्लेख है । लक्ष्मीनाथ भट्ट ने इस ग्रन्थ का नाम 'वृत्तमौक्तिक-वात्तिक' ही स्वीकार किया है, इसीलिए टीका का नाम भी 'वृत्तमौक्तिकवात्तिकदुष्करोद्धार'^५ रखा है । वस्तुतः प्राकृतपिंगल, छन्द-सूत्र एव प्राकृतपिंगल के टीकाकार पशुपति और रविकर की टीकाओं और शम्भु^६ प्रणीत छन्दश्चूडामणि (?) के आधार एव अनुकरण पर पिंगल के वात्तिक-रूप में ग्रन्थकार ने इसकी स्वतन्त्र रचना की है । अतः वृत्तमौक्तिक-वात्तिक नाम स्वीकार कर सकते हैं, किन्तु मूलतः अधिकांश स्थानों पर ग्रन्थकार ने एव टीकाकार महोपाध्याय मेघविजयजी ने 'वृत्तमौक्तिकम्' मौलिक नाम ही ग्रहण किया है, जो कि अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है ।

ग्रन्थ का सारांश—

प्रस्तुत ग्रन्थ दो खण्डों में विभक्त है । प्रथम-खण्ड मात्रावृत्त खण्ड^७ और द्वितीय-खण्ड वर्णिकवृत्त खण्ड^८ है ।

१-श्रीचन्द्रशेखरकविस्तनुते वृत्तमौक्तिकम् । पृ० १.

स्पष्टार्थं चरवृत्तमौक्तिकमिति ग्रन्थं मुदा निर्ममे । पृ० २६०

योवृत्तमौक्तिकमिदम् । पृ० २६१

२-पृ० २७२

३-पृ० २६ एव २६१

४-देखें पृ० १३, ३०, ४६, ४८, १६४, २०६, २१०, २६७, २७१

५-देखें, वात्तिक-दुष्करोद्धार का मंगलाचरण एव प्रत्येक विधाय की पुष्पिका ।

६-रविकर पशुपति-पिङ्गल शम्भुग्रन्थान् विलोक्य निर्बन्धात् । पृ० २७३

७-तत्र मात्रावृत्तखण्डे प्रथमे । पृ० २७३

८-अथ द्वितीयखण्डस्य वर्णिकवृत्तस्य । पृ० २७६

प्रथम खंड में छह प्रकरण हैं :—१ गाथाप्रकरण, २ पट्पदप्रकरण, ३ रङ्गाप्रकरण, ४ पद्मावतीप्रकरण, ५ सवैयाप्रकरण और ६ गलितक-प्रकरण ।

द्वितीय-खण्ड में बारह प्रकरण हैं —१ वर्णवृत्त प्रकरण, २. प्रकीर्णक-वृत्त-प्रकरण, ३ दण्डक प्रकरण, ४. अर्ध-समवृत्त-प्रकरण, ५ विषमवृत्त प्रकरण, ६ वेंतालीय प्रकरण, ७. यतिनिरूपण प्रकरण, ८ गद्य-निरूपण प्रकरण, ९ विरुदावली-प्रकरण, १० खण्डावली-प्रकरण, ११ विरुदावली-खण्डावली का दोषप्रकरण और १२. दोनों खण्डों की अनु-क्रमिका ।

द्वितीय-खण्ड के नवम विरुदावली प्रकरण में चार अवान्तर प्रकरण हैं— १. कलिका-प्रकरण, २ चण्डवृत्त-प्रकरण, ३ त्रिभङ्गीकलिका-प्रकरण और ४ साधारण चण्डवृत्त-प्रकरण ।

इस प्रकार दोनों खण्डों के १८ प्रकरण होते हैं और नवम प्रकरण के चारो अवान्तर प्रकरण सम्मिलित करने पर कुल २२ प्रकरण^१ होते हैं ।

प्रथम खण्ड का सारांश

१. गाथा प्रकरण :

यदि मगधाचरण एवं अथ-प्रतिज्ञा करके वर्णों की गुरु-सधु स्थिति का उदाहरण सहित वर्णन और लक्षण रहित काव्य का अनिष्ट फल का प्रतिपादन करता है । मात्राओं की टगणादि गणों की व्यवस्था और उनके प्रस्तार का निरूपण करते हुए मात्रा-गणों के नाम तथा उनके पर्यायों की पारिभाषिक-सांकेतिक शब्दों की तालिका^२ देता है । पश्चात् वर्णवृत्तों के मगणादि गण, गणदेवता, गणों की मंत्रों और गणदेवों का फलाफल प्रदर्शित है ।

प्रस्तार वा वर्णन करते हुये मात्राद्विष्ट, मात्रानष्ट, वर्णोद्विष्ट, वर्णनष्ट, वर्णमेष्ट, वर्णपताका, मात्रामेष्ट, मात्रापताका, वृत्तद्वयस्थ गुरु-लघुज्ञान, वर्णमर्वंटी और मात्रामर्वंटी का दिग्दर्शन कराते हुये प्रस्तारपिठ-संख्या का निर्देश किया है; त्रिगणे अनुगार गद्यवृत्तों की प्रस्तार गण्या १३,४२,१७,७२६ होती है ।

१-उभयो गण्डयोश्चापि गम्भूषेव प्रकाशितम् ।

द्वितीय-प्रकरणे रचितं वृत्तमोक्षिकम् ॥ पृ० २८६

२-पारिभाषिक शब्द शब्दों के लिए प्रथम पारिभाषिक दत्त ।

गाथा के विगाथा, गाहू, उद्गाथा, गाहिनी, सिहिनी और स्कन्धक आर्या-भेदों का नामोल्लेख कर गाथा का लक्षण और आर्या' का सामान्य लक्षण उदाहरण सहित दिया है । प्राचीन परम्परा के अनुसार आर्या का विशिष्ट भेद दिखाया है जिसके अनुसार एक जगणयुक्त आर्या कुलीना, दो जगणयुक्त आर्या अभिसारिका, तीन जगणयुक्त आर्या रण्डा और अनेक जगणयुक्त आर्या वेश्या कहलाती हैं ।^१ गाथा छन्द के २५ भेदों के नाम और लक्षण देकर उदाहरणों के लिये स्वपिता लक्ष्मीनाथ भट्ट रचित 'उदाहरणमजरी' देखने का संकेत किया है ।

विगाथा, गाहू, उद्गाथा, गाहिनी, सिहिनी और स्कन्धक छन्दों के उदाहरण सहित लक्षण दिये हैं और स्कन्धक छन्द के २८ भेदों के नाम और लक्षण देते हुये उदाहरणों के लिये 'उदाहरणमजरी' का उल्लेख किया है ।

इस प्रकार प्रथम प्रकरण में छन्दसंख्या की दृष्टि से गायत्रि ७ छन्द और गाथा के २५ भेद एवं स्कन्धक के २८ भेदों का प्रतिपादन है ।

२. पदपद प्रकरण

इस प्रकरण में दोहा, रसिका, रोला, गन्धानक, चौपैया, घत्ता, घत्तानन्द, काव्य, उल्लाल और पदपद छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण दिये हैं । इसमें उल्लाल छन्द का उदाहरण नहीं है । साथ ही दोहा के २३ भेद, रसिका के २२ भेद, रोला के १३ भेद, काव्य के ४५ भेद और पदपद के ७१ भेदों के नाम और लक्षण दिये हैं तथा इन समस्त भेदों के उदाहरणों के लिए कवि ने 'उदाहरणमजरी' देखने का संकेत किया है । इसमें काव्य के प्रथम भेद शतछन्द का उदाहरण भी दिया है ।

चौपैया छन्द के एक चरण में ३० मात्रायें होती हैं । प्रत्येक चरण में चार चरणों का अर्थात् १२० मात्राओं का एक पाद स्वीकार कर चार पदों की ४८० मात्रा स्वीकार की है ।

प्रकरण के अन्त में काव्य और पदपद के प्राकृत और संस्कृत साहित्य के अनुसार दोषों का निरूपण है ।

१-संस्कृत साहित्य में जिसे आर्या कहते हैं, उसे प्राकृत और अवस्रज साहित्य में गायत्रि कहते हैं । "आर्येव संस्कृतेवरभाषासु गायत्रिजेति ।" हेमचंद्र द्वितीय छन्दोनुशासन, पृष्ठ १२८ ।

२-एकस्मात् कुलीना द्वाभ्यामप्यभिसारिका भवति ।

नायकहीना रण्डा, वेश्या बहुनायका भवति ॥ पृ० ६

३. रड्डा प्रकरण

इस प्रकरण में पञ्चटिका, अडिल्ला, पादाकुलक, चौबोला और रड्डा छन्द के लक्षण एवं उदाहरण हैं। अन्त में रड्डा छन्द के सात भेद — करभी, नन्दा, मोहिनी, चारुसेना, भद्रा, राजसेना और तालकिनी के लक्षण मात्र दिये हैं और इनके उदाहरणों के लिए “सुबुद्धिभि स्वयमूह्यम्” कह कर प्रकरण समाप्त किया है।

४ पद्यावती प्रकरण :

इस प्रकरण में पद्यावती, कुण्डलिका, गगनागण, द्विपदी, भुल्लणा, खञ्जा, शिला, माला, चुलिआला, सोरठा, हाकलि, मधुभार, आभीर, दण्डकला, काम-कला, रुचिरा, दीपक, सिंहविलोकिता, प्लवगम, खीलावती, हरिगीतम्, त्रिभगी, दुर्मिलका, हीर, जनहरण, मदनगृह और भरहठा छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं। हरिगीत छन्द के १ हरिगीतम्, २. हरिगीतकम्, ३ मनोहर हरिगीत और ४, ५, मतिभेद से लक्षण द्वय सहित हरिगीता के लक्षण एवं उदाहरण हैं।

सोरठा, हाकलि, दीपक, हीर और मदनगृह छन्द के प्रत्युदाहरण भी हैं।

५. सवैया प्रकरण .

इस प्रकरण में मदिरा, मालती, मल्ली, मल्लिका, माधवी और मागधी सवैया के लक्षण देकर क्रमशः इनके उदाहरण दिये हैं। अन्त में घनाक्षर छन्द का लक्षण एवं उदाहरण दिया है।

६ गलितक प्रकरण

इस प्रकरण में गलितकम्, विगलितकम्, सगलितकम्, सुन्दरगलितकम्, भूषणगलितकम्, मुखगलितकम्, विलम्बितगलितकम्, समगलितकम्, अपर समगलितकम्, अपर सगलितकम्, अपर लम्बितागलितकम्, विक्षिप्तिकागलितकम्, लम्बितागलितकम्, विपमितागलितकम्, मालागलितकम्, मुखमालागलितकम् और उद्गलितकम् छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण दिये हैं।

प्रथमखण्ड के छन्द एवं भेदों का प्रकरणानुसार वर्गीकरण इस प्रकार है—

प्रकरण संख्या	छन्द संख्या	छन्द भेद नाम	भेद संख्या	मूलभेद की न्यूनता	कुल
१	७	गाया	२५	१	} ५८
		स्कन्धक	२८	१	

प्रकरण सख्या	छन्द सख्या	छन्द भेद नाम	भेद सख्या	मूल भेद की न्यूनता	कुल
२	६	दोहा	२३	१	} १६४
		रसिका	८	१	
		रोला	१३	१	
		काव्य	४५	१	
		पटपदी	७१	१	
३	१२	रह्ना		१	११
४	२७	हरिगीत	५	१	३१
५	७		०	०	॥
६	१७		०		१७
६	७६		२१८	६	२८८

छन्द का मूल भेद, छन्द-भेद-सख्या में सम्मिलित होने से ६ भेद कम होते हैं। अतः भेद सख्या २१८ में से ६ कम करने पर २०६ होते हैं और ७६ छन्द सख्या सम्मिलित करने पर कुल २८८ छन्द होते हैं। अर्थात् मूल छन्द ७६ और भेद २०६ हैं।

इस प्रकार कवि चन्द्रशेखर भट्ट ने वि. स. १६७५, वसंत पंचमी को इसका प्रथम-खण्ड पूर्ण किया है।

द्वितीय-खण्ड का सारांश

१. वर्णिकवृत्त प्रकरण

कवि चन्द्रशेखर 'गौरीश' का स्मरण कर वर्णिक छन्द कहने की प्रतिज्ञा करता है और एकाक्षर से छब्बीस अक्षरों तक के वर्णिकवृत्तों के लक्षण एवं उदाहरण देता है, जो इस प्रकार हैं —

१ अक्षर—श्री और इः छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं।

२ अक्षर—काम, मही, सार और मधु नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं।

३ अक्षर—ताली, शशी, प्रिया, रमण, पञ्चाल, मुग्ध, मन्दर और कमल नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं। ताली छन्द का नाम भेद नारी दिया है।

४ अक्षर—तीर्णा, घारी, नगाणिका और शुभ नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं। तीर्णा छन्द का नामभेद कन्या दिया है।

५ अक्षर—सम्मोहा, हारी, हस, प्रिया और यमक नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं। यमक का प्रत्युदाहरण भी दिया है।

६ अक्षर—शेषा, तिलका, विमोह, चतुरस, मन्थान, शखनारी, सुमालतिका, तनुमध्या और दमनक नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं। प्राकृतपिंगल के मतानुसार विमोह का विज्जोहा, चतुरस का चतुरसा, मन्थान का मन्थाना और सुमालतिका का मालती नामभेद भी दिये हैं।

७ अक्षर—शीर्षा, समानिका, सुवासक, करहञ्चि, कुमारललिता, मधुमती, मदलेखा और कुसुमतति नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं।

८ अक्षर—विद्युन्माला, प्रमाणिका, मल्लिका, तुङ्गा, कमल, माणवक-क्रीडितक, चित्रपदा, अनुष्टुप् और जलद नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं। मल्लिका का नामभेद समानिका दिया है।

९ अक्षर—रूपामाला, महालक्ष्मिका, सारंग, पाइन्त, कमल, बिम्ब, तोमर, भुजगशिशुसूता, मणिमध्य, भुजङ्गसङ्गता और सुललित नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं। प्राकृतपिंगल के अनुसार सारंग का सारंगिका और पाइन्त का पाइन्ता नामभेद दिये हैं। भुजगशिशुसूता के लिये लिखा है कि यह नाम आचार्य राम्भु एवं प्राचीनाचार्यों द्वारा सम्मत है और आधुनिक छन्दशास्त्री इसका नाम भुजगशिशुभूता मानते हैं। सारंग का प्रत्युदाहरण भी दिया है।

१० अक्षर—गोपाल, सयुत, चम्पकमाला, सारवती, सुपमा, अमृतगति, मत्ता, स्वरितगति, मनोरम, और ललितगति नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं। प्राकृतपिंगल के अनुसार सयुत का सयुता, चम्पकमाला का रवमवती एवं रूपयती तथा मनोरम का मनोरमा नामभेद दिये हैं। सयुत और स्वरितगति छन्दों के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

११ अक्षर—भालती, वन्धु, सुमुखी, शालिनी, वातोर्मी, शालिनी-वातो-र्म्यपजाति, दमनक, चण्डिका, सेनिवा, इन्द्रवज्रा, उपेन्द्रवज्रा, इन्द्रवज्रोपेन्द्रवज्रो-पजाति, रघोदता, सागता, अमरविलसिता, अनुकूला, मोटनन, सुवेशी, सुभद्रिषा और वहुल नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण हैं। वन्धु का दोषक, चण्डिका का सेनिवा और शेषी नामभेद दिये हैं। रघोदता का प्रत्युदाहरण भी दिया है।

शालिनी-वातोर्मी-उपजाति और इन्द्रवज्रा-उपेन्द्रवज्रा-उपजाति के ग्रन्थ बार ने १४-१४ भेद प्रस्तार-दृष्टि से स्वीकार किये हैं किन्तु इन प्रस्तार-भेदों

के लक्षण एव उदाहरण नहीं दिये हैं। इनके उदाहरणों के लिये स्वपितृ-रचित ग्रन्थ^१ को देखने का संकेत किया है।

१२ अक्षर—आपीड, भुजङ्गप्रयात, लक्ष्मीधर, तोटक, सारगक, मौक्तिक-दाम, मोदक, सुन्दरी, प्रमिताक्षरा, चन्द्रवर्त्म, द्रुतविलम्बित, वशस्थविला, इन्द्रवशा, वशस्थविला-इन्द्रवशा-उपजाति, जलोद्धतगति, वैश्वदेवी, मन्दाकिनी, कुसुमविचित्रा, तामरस, मालती, मणिमाला, जलधरमाला, प्रियवदा, ललिता, ललित, कामदत्ता, वसन्तचत्वर, प्रमुदितवदना, नवमालिनी और तरलनयन नामक छन्दों के लक्षण एव उदाहरण हैं।

आपीड का विद्याधर, लक्ष्मीधर का सग्विणी, वशस्थविला का वशस्थविल और वशस्तनित, मन्दाकिनी का प्रभा, मालती का यमुना, ललिता का सुललिता, ललित का ललना और प्रमुदितवदना का प्रभा, ये नामभेद दिये हैं।

सुन्दरी, प्रमिताक्षरा, चन्द्रवर्त्म, द्रुतविलम्बित, इन्द्रवशा, मन्दाकिनी और मालती के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं, जिसमें द्रुतविलम्बित और मालती के प्रत्युदाहरण दो दो हैं।

१३ अक्षर—वाराह माया, तारक, कन्द, पङ्कावली, प्रहृषिणी हचिरा, चण्डी, मञ्जुभाषिणी, चन्द्रिका, कलहस, मृगेन्द्रमुख, क्षमा, लता, चन्द्रलेख, सुद्युति, लक्ष्मी और विमलगति नामक छन्दों के लक्षण एव उदाहरण हैं। माया का मत्तमयूर, मञ्जुभाषिणी का सुनन्दिनी तथा प्रबोधिता, चन्द्रिका का उत्पलिनी, कलहस का सिंहनाद तथा कुटज, और चन्द्रलेख का चन्द्रलेखा नामभेद दिये हैं। माया के ५, तारक, प्रहृषिणी और चन्द्रिका के एक एक प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

१४ अक्षर—सिंहास्य, वसन्ततिलका, चक्र, असम्बाधा, अपराजिता, प्रहरण-कलिका, वासन्ती, लोला, नान्दीमुखी, वेदमी, इन्दुवदन, शरभी, अहिधृति, विमला, मल्लिका और मणिगण छन्द के लक्षण एव उदाहरण हैं। इन्दुवदन का इन्दुवदना नामभेद दिया है। वसन्ततिलका, चक्र और प्रहरणकलिका के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

१ भेदाश्चतुर्दशैतस्या क्रमतस्तु प्रदर्शिता ।

प्रस्तार्य स्वनिबन्धेषु पित्रातिस्फुटस्तत ॥ पृ ८१

इससे संभवतः यह फार का संकेत लक्ष्मीनाथ भट्ट रचित 'उदाहरणमञ्जरी' ग्रन्थ को और ही हो।

१५ अक्षर—लीलाखेल, मालिनी, चामर, भ्रमरावलिका, मनोहस, शरभ, निशिपालक, विपिनतिलक, चन्द्रलेखा, चित्रा, केसर, एला, प्रिया, उत्सव और उडुगण नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण दिये हैं। लीलाखेल का सारंगिका चामर का तूणक, भ्रमरावलिका का भ्रमरावली, शरभ का शशिकला तथा यतिभेद से मणिगुणनिकर एवं सग, चन्द्रलेखा का चण्डलेखा, चित्रा का चित्र और प्रिया का यतिभेद से अलि नामभेद दिये हैं।

लीलाखेल, मालिनी, चामर, भ्रमरावलिका, मनोहस, मणिगुणनिकर, सग निशिपालक, और विपिनतिलक के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं, जिसमें मालिनी के ३ प्रत्युदाहरण हैं।

१६ अक्षर—राम, पञ्चचामर, नील, चञ्चला, मदनललिता, नन्दिनी, प्रवरललित, गच्छक, चकिता, गजतुरगविलसित, शैलशिखा, ललित, सुकेसर, ललना और गिरिवरधृति नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण दिये हैं। राम का ब्रह्मरूपक, पञ्चचामर का नाराच, चञ्चला का चित्रसग, गजतुरगविलसित का ऋषभगजविलसित और गिरिवरधृति का अचलधृति नामभेद दिये हैं। पञ्चचामर तथा चञ्चला के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

१७ अक्षर—लीलाधृष्ट, पृथ्वी, मालावती, शिखरिणी, हरिणी, मन्दाक्रान्ता, वशपत्रपतित, नहंटक, यतिभेद से कोकिलक, हारिणी, भाराक्रान्ता, मतङ्गवाहिनी, पद्मक और दशमुखहर नामक छन्दों के लक्षण सहित उदाहरण दिये हैं। मालावती का प्राकृतपिंगल के अनुसार मालाधर, वशपत्रपतित का वशपत्रपतिता और आचार्य शम्भु के मतानुसार वशवदन नामान्तर दिये हैं। पृथ्वी, शिखरिणी, हरिणी, मन्दाक्रान्ता, वशपत्रपतित, नहंटक और कोकिलक के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं, जिसमें शिखरिणी के तीन तथा हरिणी के चार प्रत्युदाहरण हैं।

१८ अक्षर—लीलाचन्द्र, मञ्जीरा, चर्चरी, वीढाचन्द्र, कुसुमितलता, नन्दन, नाराच, चित्रलेखा, भ्रमरपद, शार्दूलललित, मुललित और उपवनकुसुम नामक छन्दों के लक्षण सहित उदाहरण दिये हैं। नाराच का मञ्जुला नामान्तर दिया है। मञ्जीरा, चर्चरी, वीढाचन्द्र, कुसुमितलता, नन्दन और नाराच के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं जिसमें चर्चरी के पाँच और नन्दन के दो प्रत्युदाहरण हैं।

१९ अक्षर—नामानन्द, शार्दूलसवित्रीडित, चन्द्र, घवल, शम्भु, मेघ-विस्फूर्जिता, छाया, गुरता, फुल्लदाम, और मृदुलकुसुम नामक छन्दों के लक्षण सहित उदाहरण हैं। प्राकृतपिंगलानुसार चन्द्र का चन्द्रमाला, और घवल का

धवला नामभेद दिये हैं। शार्दूलविक्रीडित के दो, चन्द्र, धवल, शम्भु और मेघविस्फूर्जिता के एक-एक प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

२० अक्षर—योगानन्द, गीतिका, गण्डका, शोभा, सुवदना, प्लवङ्ग-भगमगल, शशाङ्कचलित, भद्रक, और अनवधिगुणगण नामक छन्दों के लक्षण सहित उदाहरण हैं। गण्डका का चित्रवृत्त एव वृत्त नामभेद दिया है। गीतिका के दो, गण्डका और सुवदना के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

२१ अक्षर—ब्रह्मानन्द, स्रग्धरा, मञ्जरी, नरेन्द्र, सरसी, हचिरा और निरूपमतिलक नामक छन्दों के लक्षण सहित उदाहरण हैं। सरसी का सुरतव और सिद्धक नामान्तर दिया है। स्रग्धरा और मञ्जरी के दो-दो, नरेन्द्र और सरसी के एक-एक प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

२२ अक्षर—विद्यानन्द, हसी, मदिरा, भद्रक, शिखर, अच्युत, मदालस और तरुवर नामक छन्दों के लक्षण सहित उदाहरण हैं। हसी का एक और मदालस के दो प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

२३ अक्षर—दिव्यानन्द, सुन्दरिका, यतिभेद से पद्यावतिका, अद्रितनया, मालती, मल्लिका, मत्ताक्रीड और कनकवलय नामक छन्दों के लक्षण एव उदाहरण हैं। अद्रितनया का अश्वललित नामान्तर दिया है। अद्रितनया और अश्वललित के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

२४ अक्षर—रामानन्द, दुर्मिलका, किरीट, तन्वी, माधवी और तरलनयन नामक छन्दों के लक्षण सहित उदाहरण हैं। दुर्मिलका और तन्वी के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

२५ अक्षर—कामानन्द, क्रींचपद, मल्ली और मणिगणनामक छन्दों के लक्षण एव उदाहरण हैं। क्रींचपदा का प्रत्युदाहरण भी दिया है।

२६ अक्षर—गोविन्दानन्द, भुजङ्गविजृम्भित, अपवाह, मागधी और कमल-दल नामक छन्दों के लक्षण सहित उदाहरण दिये हैं। तथा भुजगविजृम्भित और अपवाह के प्रत्युदाहरण भी दिये हैं।

उपसंहार में कवि कहता है कि इस प्रकरण में लक्ष्य-लक्षण-संयुक्त २६५ छन्दों का निरूपण किया है और प्रत्युदाहरण के रूप में प्राचीन कवियों के क्वचित् उदाहरण भी लिये हैं। अन्त में लक्ष्मीनाथभट्ट रचित पिङ्गलप्रदीप के अनुसार समस्त वृत्तों की प्रस्तारपिंड-संख्या १३,४२,१७,७२६ बतलाई है।

इस प्रकरण के वर्णक्षरो के अनुसार प्रस्तारसंख्या, छन्दसंख्या, उदाहरण संख्या, प्रत्युदाहरण संख्या और नामभेदों की तालिका इस प्रकार है:—

वर्णक्षर	प्रस्तार संख्या	छन्द संख्या	उदाहरण संख्या	प्रत्युदाहरण संख्या	नामभेद संख्या
१	२	२	२	×	×
२	४	४	४	×	×
३	८	८	८	×	१
४	१६	४	४	×	१
५	३२	५	५	१	×
६	६४	६	६	×	४
७	१२८	८	८	×	×
८	२५६	८	८	×	१
९	५१२	११	११	१	३
१०	१०२४	१०	१०	२	३
११	२०४८	२०	२०	१	२
१२	४०९६	३०	२६	६	८
१३	८१९२	१८	१८	८	६
१४	१६,३८४	१६	१६	३	१
१५	३२,७६८	१५	१५	११	७
१६	६५,५३६	१५	१५	२	५
१७	१,३१,०७२	१३	१३	१२	२
१८	२,६२,१४४	१२	१२	११	१
१९	५,२४,२८८	१०	१०	६	२
२०	१०,४८,५७६	६	६	४	१
२१	२०,९७,१५२	७	७	६	१
२२	४१,९४,३०४	८	८	३	×
२३	८३,८८,६०८	७	८	२	१
२४	१,६७,७७,२१७	६	६	२	×
२५	३,३५,५४,४३२	४	४	१	×
२६	६,७१,०८,८६४	५	५	२	×
		<u>२६५</u>	<u>२६५</u>	<u>८७</u>	<u>५०</u>

इस प्रकार तालिकानुसार उक्त प्रकरण में कुल २६५ छन्द हैं, उदाहरण २६५ हैं, प्रत्युदाहरण ८७ हैं और नामभेद ५० हैं ।

२. प्रकीर्णक वृत्त-प्रकरण :

इस प्रकरण में ग्रन्थकार ने पिपीडिका, पिपीडिकाकरम्, पिपीडिकापणव और पिपीडिकामाला-नामक छन्दों के लक्षण की एक प्राचीन आचार्यों की सग्रह-कारिका दी है । स्वयं के स्वतन्त्र लक्षण एवं उदाहरण नहीं हैं । पश्चात् द्वितीय त्रिभंगी और शालूर नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण दिये हैं ।

३. दण्डक-प्रकरण :

इस प्रकरण में चण्डवृष्टिप्रपात, प्रचितक, अणं, सर्वतोभद्र, अशोकमञ्जरी, कुसुमस्तवक, भक्तमातङ्ग और अनङ्गशेखर नामक दण्डक-वृत्तों के लक्षण सहित उदाहरण दिये हैं । ग्रन्थविस्तार-भय से अन्य प्रचलित दण्डकवृत्तों के लिये लक्ष्मीनाथभट्ट रचित पिंगलप्रदीप देखने के लिये आग्रह किया है ।

प्रचितक दण्डक का लक्षण ग्रन्थकार ने छन्दसूत्रानुसार दो नगण और ८ रगण दिया है जो कि छन्दसूत्र और वृत्तमीवितक के अनुसार 'अणं' दण्डक का भी लक्षण है । छन्दसूत्र के अतिरिक्त समस्त छन्दःशास्त्रियों ने प्रचितक का लक्षण दो नगण, सात यगण स्वीकार किया है । ग्रन्थकार ने इस लक्षण के दण्डक को सर्वतोभद्र दण्डक लिखा है । यही कारण है कि आचार्यों के मतों को ध्यान में रख कर ही 'एतस्यैव अन्यत्र 'प्रचितक' इति नामान्तरम्' लिखा है ।

४. अर्धसमवृत्त-प्रकरण :

जिस छन्द में चारों चरणों के लक्षण समान हो वह समवृत्त कहलाता है; जिस छन्द के प्रथम और तृतीय चरण तथा द्वितीय और चतुर्थ चरण एक सहा हो वह अर्धसमवृत्त कहलाता है और जिस छन्द के चारों चरणों के लक्षण विभिन्न हो वह विषमवृत्त कहलाता है ।

इस अर्धसमवृत्त प्रकरण में पुष्पिताग्रा, उपचित्र, वेगवती, हरिणप्लुता, अपरवक्त्र, सुन्दरी, भद्रविराट्, केतुमती, वाङ्मती और पट्पदावली नामक छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण दिये हैं । पुष्पिताग्रा के तीन, अपरवक्त्र और सुन्दरी के एक-एक प्रत्युदाहरण भी दिये हैं । पट्पदावली का उदाहरण नहीं दिया है ।

५ विषमवृत्त प्रकरण .

जिस छन्द के चारो चरणो के लक्षण भिन्न-भिन्न हो उसे विषमवृत्त कहते हैं । विषमवृत्तो मे उद्गता, उद्गताभेद, सौरभ, ललित, भाव, ध्वन, पथ्यावधन और अनुष्टुप्-नामक छन्दो के लक्षण एव उदाहरण दिये हैं । उद्गताभेद का ग्रन्थकार का स्वोक्त उदाहरण नहीं है किन्तु भारवि और माघ के दो उदाहरण हैं ।

अनुष्टुप् के लिये लिखा है कि कतिपय आचार्य इसे भी 'ध्वन' छन्द का ही लक्षण मानते हैं और अनेक पुराणो मे नानागणभेद से यह प्राप्त होता है । अतः इसे विषमवृत्त ही मानना चाहिये । पदचतुर्ध्वदि और उपस्थित-प्रचुपित आदि विषमवृत्तो के लिये छन्द सूत्र की हलायुध की टीका देखने का संकेत किया है ।

६ वैतालीय-प्रकरण

वैतालीय, ओपच्छन्दक, आपातलिका, नलिन, द्वितीय नलिन, दक्षिणान्तिका वैतालीय, उत्तरान्तिका-वैतालीय, प्राच्यवृत्ति, उदीच्यवृत्ति, प्रवृत्तक, अपरांतिका और चारुहासिनी नामक वैतालीय छन्दो के लक्षण एव उदाहरण हैं । दक्षिणान्तिका-वैतालीय का एक, प्राच्यवृत्ति के दो, उदीच्यवृत्ति का एक प्रवृत्तक का एक, अपरांतिका के दो और चारुहासिनी के दो प्रत्युदाहरण भी दिये हैं ।

इस प्रकरण मे वृत्तो के लक्षण पूर्ण पद्यो मे न होकर सूत्र-कारिका रूप मे प्राप्त हैं और साथ ही इन कारिकाओ को स्पष्ट करने के लिये टीका भी प्राप्त है ।

७ यतिनिरूपण प्रकरण

पद्य मे जहा पर विच्छेद हो, विभजन हो, विश्राम हो, विराम हो, अवसान हो उसे यति कहते हैं । समुद्र, इन्द्रिय, भूत, इन्दु, रस, पक्ष और दिक् आदि शब्द साकाशी होने से यति से सम्बन्ध रखते हैं । अथकार मूल-शास्त्र अर्थात् छन्द सूत्र का आलोचन कर उदाहरण सहित इस प्रकरण पर विवेचन करता है ।

पद्य ४ से ७ तक प्राचीन आचार्यों की सग्रह कारिकायें और इनकी व्याख्या दी गई है । ये चारो पद्य और इनकी उदाहरणसहित व्याख्या छन्द सूत्र की हलायुध टीका मे प्राप्त है । विचित् परिवर्तन के साथ यह स्थल यहां पर ज्यो का त्यो उद्धृत किया गया है । अन्त में आचार्य भरत, आचार्य पिङ्गल, जयदेव, द्रव्यमाण्डव्य,

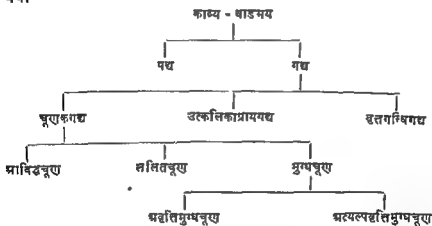
मुरारि, जयदेव (गीतगोविन्दकार), देवेश्वर, गमादास आदि के मतों का उल्लेख करते हुये यतिभग से दोष और यतिरक्षा से काव्य-सौन्दर्य की अभिवृद्धि आदि का सुन्दर, विश्लेषण किया है।

८ गद्य प्रकरण

वाङ्मय दो प्रकार का है—१ पद्यात्मक और २ गद्यात्मक। पद्य-वाङ्मय का वर्णन प्रारम्भ के प्रकरणों में किया जा चुका है। अतः यहाँ इस प्रकरण में गद्य-वाङ्मय का विवेचन है। गद्य के प्रमुख तीन भेद हैं—१ चूर्णगद्य, २ उत्कलिकाप्राय गद्य और ३ वृत्तगन्धि-गद्य।

चूर्णकगद्य के तीन भेद हैं—१ आविद्धचूर्ण, २ ललितचूर्ण और ३ मुग्धचूर्ण। मुग्धचूर्ण के भी दो भेद हैं—१ अवृत्तिमुग्धचूर्ण और २ अत्यल्प-वृत्तिमुग्धचूर्ण।

इस प्रकार इन समस्त गद्य भेदों के लक्षण एवं उदाहरण दिये हैं। उत्कलिकाप्राय का एक और वृत्तगन्धि गद्य के तीन प्रत्युदाहरण भी दिये हैं। यथा—



अन्य ग्रन्थकारों ने गद्य के चार भेद स्वीकार किये हैं—१ मुक्तक, २ वृत्तगन्धि, ३ उत्कलिकाप्राय और ४ कुलक। इन चारों भेदों के लक्षण एवं उदाहरण भी ग्रन्थकार ने दिये हैं। उत्कलिकाप्राय गद्य का प्राकृत-भाषा का उदाहरण भी दिया है।

९ विरुदावली प्रकरण

गद्य-पद्यमयी राजस्तुति को विरुद कहते हैं और विरुदों की आवली = समूह को विरुदावली कहते हैं। यह विरुदावली पाँच प्रकरणों में विभाजित है—

१. कलिका-प्रकरण, २. चण्डवृत्त-प्रकरण, ३. त्रिभंगीकलिका-प्रकरण, ४. साधारण चण्डवृत्त-प्रकरण और ५. विरुदावली ।

(१) द्विगादिकलिका-अवान्तर-प्रकरण

कलिका के नव भेद माने हैं :—१. द्विगा-कलिका, २. रादिकलिका, ३. मादिकलिका, ४. नादिकलिका, ५. गलादिकलिका, ६. मिश्राकलिका, ७. मध्याकलिका, ८. द्विभङ्गीकलिका और ९. त्रिभङ्गीकलिका । ७. मध्याकलिका के दो भेद हैं ।

त्रिभंगी-कलिका के भी ९ भेद माने हैं :—१. विदग्धत्रिभङ्गी-कलिका, २. तुरगत्रिभङ्गी-कलिका, ३. पद्यत्रिभंगी-कलिका, ४. हरिणप्लुतत्रिभंगी-कलिका, ५. नर्तकत्रिभंगी-कलिका, ६. भुजंगत्रिभंगी-कलिका, ७. त्रिगतात्रिभंगी-कलिका, ८. वरतनुत्रिभंगी-कलिका और ९ द्विपादिका-युग्मभगा कलिका ।

त्रिगतात्रिभंगी-कलिका के दो भेद हैं :—१. ललिता-त्रिगता-त्रिभंगी-कलिका और २. धलिगता-त्रिगता-त्रिभंगी-कलिका । वरतनु-त्रिभंगी-कलिका के भी दो भेद माने हैं ।

द्विपादिका-युग्मभगा-कलिका के ६ भेद माने हैं :—१. मुग्धा-द्विपादिका युग्मभगा-कलिका, २. प्रगल्भा-द्विपादिका-युग्मभगा-कलिका, ३. मध्या-द्विपादिका-युग्मभगा-कलिका, ४. क्षिथिला-द्विपादिका-युग्मभगा-कलिका, ५. मधुरा द्विपादिका-युग्मभगा-कलिका और ६. तरुणी-द्विपादिका-युग्मभगा-कलिका । इसमें मध्या-द्विपादिका-युग्मभगा कलिका के भी चार भेद माने हैं ।

इस प्रकार मूलभेद ९ और प्रतिभेद २५ कुल ३४ कलिकाओं के लक्षण और उदाहरण अथकार ने दिये हैं । लक्षण पूर्णपद्यों में नहीं हैं किन्तु पद्य के टुकड़ों में वारिका रूप में हैं । इन लक्षणों को स्पष्ट करने के लिये टीका भी दी है । उदाहरण के भी पूर्णपद्य नहीं हैं किन्तु प्रत्येक उदाहरण के लिये केवल एक चरण दिया है । मध्याकलिका का उदाहरण नहीं दिया है । यथा—

(२) चण्डवृत्त-अवान्तर प्रकरण

महाकलिकाचण्डवृत्त के दो भेद हैं — १ सलक्षण और २ साधारण ।

सलक्षण चण्डवृत्त के तीन भेद हैं — १ शुद्धसलक्षण, २. सकीर्णसलक्षण और ३ गभितसलक्षण ।

शुद्ध सलक्षण चण्डवृत्त के २० भेद हैं :— १ पुरुषोत्तम, २ तिलक, ३ अच्युत, ४ वदित, ५ रण, ६ वीर, ७ शाक, ८ मातङ्गखेलित, ९ उत्पल, १० गुणरति, ११ कल्पद्रुम, १२ कन्दल, १३ अपराजित, १४ नर्तन, १५ तरतमस्त, १६ वेष्टन, १७ अस्खलित, १८. पल्लवित, १९ समग्र और २० तुरग ।

सकीर्णसलक्षण चण्डवृत्त के ५ भेद हैं — १ पङ्केरुह, २ सितकञ्ज, ३ पाण्डूत्पल, ४ इन्दीवर और ५ अरुणाम्भोरुह ।

गभितसलक्षण चण्डवृत्त के ६ भेद हैं — १. फुल्लाम्बुज, २ चम्पक, ३ वजुल, ४ कुन्द ५ बकुलभासुर, ६. बकुलमगल, ७ मञ्जरीकोरक, ८ गुच्छक और ९ कुसुम ।

भेदकथन के पश्चात् रचना-वैशिष्ट्य में प्रयुक्त मधुर, विलिप्त, सखिलिप्त, शिथिल और ह्लादि की परिभाषा और इनका विवेचन करते हुये उपर्युक्त ३४ महाकलिका-चण्डवृत्तों के क्रमशः सलक्षण एवं उदाहरण दिये हैं । सलक्षण पूर्ण पद्यों में न होकर खण्डपद्यों में करिका रूप में हैं और इन सलक्षणों को स्पष्ट करने के लिये व्याख्या भी दी है । ग्रथकार ने ग्रथ विस्तार के भय से प्रत्येक चण्डवृत्त के उदाहरण में एक-एक चरणमात्र दिया है ।

श्रीरूपगोस्वामिप्रणीत गोविन्दविरुदावली से निम्नलिखित चण्डवृत्तों के प्रत्युदाहरण दिये हैं — १ तिलक, २ अच्युत, ३ वदित, ४ रण, ५ वीर, ६ मातङ्गखेलित, ७ उत्पल, ८ गुणरति, ९ पल्लवित, १० तुरग, ११ पङ्केरुह, १२ सितकञ्ज, १३ पाण्डूत्पल, १४ इन्दीवर, १५ अरुणाम्भोरुह, १६ फुल्लाम्बुज, १७ चम्पक, १८ वजुल १९ कुन्द, २०. बकुलभासुर, २१ बकुलमगल, २२ मञ्जरीकोरक, २३ गुच्छ और २४ कुसुम ।

वीर वा वीरमद्र, रण का समग्र और तुरग का तुरग नामभेद भी दिया है ।

(३) त्रिभगी कलिका अवान्तर-प्रकरण

विददसहित दण्डक त्रिभगी कलिका, विददमहित सम्पूर्ण विदग्धत्रिभगी-कलिका और मिथकलिका के सप्तान एवं उदाहरण दिये हैं । सप्तान-कारिकाओं

की टीका भी है। उदाहरण के एक-एक चरण है। तीनों ही विरुदावलियों के प्रत्युदाहरण दिये हैं जो कि रूपगोस्वामिकृत गोविन्दविरुदावली के हैं। ग्रन्थकार ने तीनों ही भेद चण्डवृत्त के ही प्रभेद माने हैं।

(४) साधारण चण्डवृत्त अवान्तर प्रकरण

इस प्रकरण में साधारण चण्डवृत्ता के लक्षण एवं उदाहरण दिये गये हैं।

(५) विरुदावली प्रकरण

साप्तविभक्तिकी कलिका, अक्षमयी कलिका और सर्वलघु कलिका के लक्षण देकर इन कारिकाओं की व्याख्या दी है। इन तीनों के स्वयं के उदाहरण नहीं हैं। तीनों ही कलिकाओं के उदाहरण गोविन्दविरुदावली से उद्धृत हैं। अन्त में समग्र कलिकाओं में प्रयुक्त विरुदों के युगपद् लक्षण कहे हैं।

देव, भूपति एवं सत्तुल्यवर्णनों में घोर, घोर आदि विरुदों का प्रयोग होता है। संस्कृत प्राकृत के श्रव्यकाव्यों में शौर्य, शौर्य, दया, कीर्ति और प्रतापादि प्रधान विषयों में कलिकादि का प्रयोग होता है। गुण, अलङ्कार, रीति, मन्थनु-प्रास एवं छन्दाद्वय स युक्त कलिका और विरुद का निरूपण करने हुए समग्र विरुदावलियों के सामान्य लक्षण दिये हैं। इसके अनुसार कलिका श्लोकविरुद न्यूनातिन्यून पद्वह होते हैं और अधिक से अधिक नव्ये होते हैं। नव्य कलिका-श्लोक विरुद युक्त विरुदावली मखड़ा विरुदावली या महती विरुदावली कहलाती है। मतान्तर के अनुसार किसी कलिका के स्थान पर केवल गद्य होना है या विरुद होता है और कलिका एवं विरुद आशीर्वादात्मक पद्यों से युक्त होता है। प्रत्येक विरुदावली में तीन या पाँच कलिकाएँ और इतनी ही श्लोकों की रचना ऐच्छिक होती है। अतः में विरुदावली का फल-निर्देश है।

१०. खण्डावली प्रकरण

विरुदावली के समान ही खण्डावली होती है किन्तु इतना अंतर है कि आदि और अन्त में आशीर्वादात्मक पद्य विरुदरहित होते हैं। ताम्ररसखण्डावली और मञ्जरी-खण्डावली के सदानसहित उदाहरण दिये हैं। लक्षणकारिकाओं की टीका भी है। अतः में बतलवाता है कि खण्डावली के द्वारा भेद सम्भव है किन्तु ग्रन्थ विस्तारभय से मैंने इसके भेदों के उल्लेख नहीं किये हैं, केवल मुकुमारमतिषा के लिये मार्ग-प्रदर्शन किया है।

११. दोष प्रकरण

इस प्रकरण में विरुदावली और खण्डावली के दोषों का दिग्दर्शन कराया

है। अमंत्री, अनुप्रासाभाव, दीर्घत्व, कलाहति, असाम्प्रत, हृत्तीचर्य, विपरीतयुत, विशृङ्खल और स्वस्ततालनामक ६ दोषों के लक्षण एवं उदाहरण देते हुये कहा है कि इन नव दोषों को जो विद्वान् नहीं जानता हैं और काव्य रचना करता है वह तमोलोक में उलूक होता है अर्थात् काव्य में इन दोषों का त्याग अनिवार्य है।

१२ अनुक्रमणी-प्रकरण

रविकर, पशुपति, पिंगल एवं शम्भु के छंद शास्त्रों का अवलोकन कर चन्द्रशेखर भट्ट ने वृत्तमोक्तक की रचना की है।

यह प्रकरण दो विभागों में विभक्त है। प्रथम विभाग ४० पद्यों का है जिसमें प्रथम-खण्ड की अनुक्रमणिका दी है और द्वितीय विभाग १८८ पद्यों का है जिसमें द्वितीय-खण्ड की अनुक्रमणिका दी है।

प्रथम खण्डानुक्रम—इसमें मात्रावृत्त नामक प्रथम खंड के छहों प्रकरणों की विस्तृत सूची है। प्रत्येक छंद का क्रमशः नाम दिया है और अंत में छंद-संख्या भेदों सहित २८८ दिखाई है।

द्वितीय खण्डानुक्रम :—प्रथम प्रकरण में प्ररूपित अक्षरानुसार अर्थात् एक से छहवीं अक्षर पर्यंत छंदों के क्रमशः नाम, नामभेद और प्रस्तारभेद के साथ सूची दी है और अंत में प्रस्तारपिंड की संख्या देते हुये उल्लिखित २६५ छंदों की संख्या दी है। द्वितीय प्रकरण से छठे प्रकरण तक की सूची में छंदनाम और नामभेद दिये हैं। सप्तम यतिप्रकरण का उल्लेख करते हुये आठवें गद्य प्रकरण के भेदों का सूचन किया है और नवम तथा दसवें प्रकरण के समस्त छंदों के नाम और नामभेद दिये हैं एवं ग्यारहवें दोष प्रकरण का उल्लेख किया है।

अंत में दोनों खंडों के प्रकरणों की संख्या देते हुये उपसंहार किया है।

ग्रन्थप्रशस्ति—

वि०स० १६७६ कार्तिकी पूर्णिमा को वसिष्ठवर्तीय लक्ष्मीनाथ भट्ट के पुत्र चन्द्रशेखर भट्ट ने इसवी (द्वितीय खंड) रचना पूर्ण की है। प्रशस्तिपद्य = एवं ६ में लिखा है कि चन्द्रशेखर भट्ट का स्वर्गवास हो जाने के कारण इस ग्रंथ की पूर्णादिति लक्ष्मीनाथ भट्ट ने की है।

ग्रन्थ का वैशिष्ट्य

प्रस्तुत ग्रंथ का छंद-शास्त्र की परम्परा में एक विशिष्ट स्थान है। इसी ग्रंथ के पृष्ठांक ४१४ में उल्लिखित छंद शास्त्र के १६ ग्रंथ और दो टीका-ग्रंथों के साथ

तुलनात्मक अध्ययन करने पर इस ग्रंथ का महत्त्व कई दृष्टियों से आका जा सकता है । न केवल संस्कृत और प्राकृत अपभ्रंश छन्द-परम्परा की दृष्टि से ही अपितु हिन्दी छन्द-परम्परा की दृष्टि से भी इस ग्रंथ को छन्दशास्त्र का सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ मान सकते हैं । इस ग्रंथ की प्रमुख-प्रमुख विशेषतायें इस प्रकार हैं —

१ पारिभाषिक शब्द और गण

इस ग्रंथ में मात्रिक और वर्णिक दोनों छन्दों का विधान होने से अथकार ने संस्कृत और प्राकृत-अपभ्रंश की मगणादिगण एवं टगणादिगणों की दोनों प्रणालियों का साधिकार प्रयोग किया है । स्वयंभू छन्द, छन्दोनुशासन और कवि-दर्पण आदि ग्रंथों में पट्कल, पञ्चकल, चतुष्कल आदि कलाओं का ही प्रयोग मिलता है किंतु इनके प्रस्तार-भेद, नाम और उसके कर्ण, पयोधर, पक्षिराज आदि पर्यायों का प्रयोग हमें प्राप्त नहीं होता है । इसका सर्वप्रथम प्रयोग हमें कवि विरहाक कृत वृत्तजातिसमुच्चय में प्राप्त होता है । इसके पश्चात् तो इसका प्रयोग प्राकृतपिंगल, वाणीभूषण और वाग्वल्लभ आदि अनेक ग्रंथों में प्राप्त होता है ।

वृत्तमौक्तिक में ट = पट्कल, ठ = पञ्चकल, ड = चतुष्कल, ढ = त्रिकल, ण = द्विकल गण स्थापित कर इनके प्रस्तारभेद, नाम और प्रत्येक के पर्याय विशदता के साथ प्राप्त हैं । साथ ही पृथक् रूप से मगणादि आठ गण भी दिये हैं । इस पारिभाषिक शब्दावली का तुलनात्मक अध्ययन के साथ परिचय मैंने इसी ग्रंथ के प्रथम परिशिष्ट में दिया है, अतः यहाँ पर पुनः विष्टपेयण अनावश्यक है, किंतु रत्नमञ्जूषा और जानाश्रयी छन्दोविचिति में हमें एक नये रूप में पारिभाषिक शब्दावली प्राप्त होती है जिसका कि पूर्ववर्ती और परवर्ती किसी भी ग्रंथ में प्रयोग नहीं मिलता है अतः तुलना के लिये दोनों की संकेत सूची यहाँ देना अप्रासंगिक न होगा ।

रत्नमञ्जूषा			वृत्तमौक्तिक
क्	और	आ	५ ५ ५
च्	"	ए	१ ५ ५
त्	"	औ	५ १ ५
प्	"	ई	१ १ ५
श्	"	अ	५ ५ १
प्	"	उ	५ १ ५
स्	"	ऋ	५ १ १
			मगण, हर
			यगण, इन्द्रासन आदि
			रगण, सूर्य, वीणा आदि
			सगण, करतल, कर आदि
			तगण, हीर
			जगण, पयोधर, भूपति आदि
			मगण, दहन, पितामह आदि

ह् और इ	1 1 1	नगण, भाव, रस, भामिनी आदि	
य्	5 5	कर्ण, सुरतलता, आदि	
रु	1 5	ध्वज, चिह्न, चिरालय आदि	
व्	1 1	सुप्रिय, परम	
म्	5	हार, ताटक, नूपुर आदि	
न्	1	शर, मेरु, कनक, दण्ड आदि	
×	×	×	×

जानाश्रयी छन्दोविचिती

वृत्तमौक्तिक

भ	5	ग, हार, ताटक आदि
ह	1	ल, शर, मेरु आदि
गङ्गास्	5 5	गुरुगुल, कर्ण, रसिक आदि
नदीज्	1 5	चलय, तोमर, पवन आदि
ननुर्	1 1	सुप्रिय, परम,
नूनसाग्	5 5 5	मगण, हर,
कुशाङ्गीग्	1 5 5	यगण, कुञ्जर, रदन, मेघ आदि
धीवराश्	5 1 5	रगण, गरुड, भुजंगम, विहग आदि
कुष्ठेल्	1 1 5	सगण, कमल, हस्त, रत्न आदि
तेथीःक्वव्	5 5 1	तगण, हीर,
विमातिक्	1 5 1	जगण, भूपति, कुच आदि
सातवत्	5 1 1	भगण, तात, पद, जंघायुगल आदि
तरतिम्	1 1 1	नगण, रस, ताण्डव आदि
नचरतिद्	1 1 1 1	विप्र, द्विज, बाण आदि
चन्द्रननु	5 1 1 1	अहिगण
नदीननु	1 5 1 1	कुसुम
ननुचन्द्र	1 1 5 1	शेखर
कमलिनीय्	1 1 1 5	चाप
लोलमालाय्	5 1 5 5	...
रोतिमयूरोन्	5 1 1 5 5	...
धेयमस्तुतेट्	5 1 5 1 5	...
ननुतरति	1 1 1 1 1	पापगण
जयनरयरन्	1 1 1 1 1 1	शालि

पारिभाषिक शब्दावली का ग्रन्थकार ने सफलता के साथ विविध रूपों में प्रयोग किया है :—१. विशुद्ध टादिगण, २. टादि और मगणादि मिश्र, ३. टादि और पारिभाषिक मिश्र, ४. विशुद्ध पारिभाषिक, ५. विशुद्ध मगणादि और ६. पारिभाषिक एवं मगणादि मिश्र । उदाहरण के तौर पर प्रत्येक प्रयोग का एक-एक पद्य प्रस्तुत है :—

१. विशुद्ध टादिगण का प्रयोग—

आद्यो षट्कलमिह रचय डगणत्रयमिह धेहि ।

ठगणं डगण द्वयमपि घत्तानन्दे धेहि ॥३२॥ [पृ० १६]

अर्थात् घत्तानन्द नामक मात्रिक छंद में षट्कल = ६ मात्रा, डगणत्रय = चतुष्कल तीन १२ मात्रा, ठगण = पञ्चकल ५ मात्रा और डगणद्वय = चतुष्कलद्वय ८ मात्रा कुल ३१ मात्रा होती है ।

२. टादि और मगणादि मिश्र का प्रयोग—

डगणं कुरु विचित्रमन्ते जगणमत्र ।

मध्ये द्विलमवेहि दीपकमिति विधेहि ॥३६॥ [पृ० ३८]

अर्थात् दीपक नामक मात्रिक छंद में डगण = चतुष्कल ४ मात्रा, द्विल = दो लघु २ मात्रा और जगण = ४ मात्रा, कुल १० मात्रा होती हैं ।

३. टादि और पारिभाषिक-मिश्र का प्रयोग—

यदि योगडगणकृत - चरणविरचित-द्विजगुरुयुगकरवसुचरणा ।

नायक-विरहितपद - कविजनकृतमदपठनादपि मानसहरणा ।

इह दशवसुमनुभिः त्रियते कविभिविरतियेदि युगदहनकला ।

सा पद्यावतिका फणिपतिभणिता त्रिजगति राजति गुणबहुला ॥१॥

[पृ० ३०]

अर्थात् पद्यावतीनामक मात्रिक छंद में 'योगडगण' डगण = चतुष्कल, योग = आठ अर्थात् ३२ मात्रायें होती हैं जिनमें द्विज = १ । १ । चार मात्रा, गुरु-युग = ५५ चार मात्रा, कर = १ । ५ सगण ४ मात्रा, वसुचरण = ५ । १ मगण चार मात्रा का प्रयोग अपेक्षित है और नायक = ५ । जगण चार मात्रा का प्रयोग निषिद्ध है । इस छंद में यति १०, ८, १४ मात्रा पर होती है ।

४. विशुद्ध पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग—

द्विजरसयुता कर्णद्वन्द्वस्फुरद्वरकुण्डला,

कुचतटगतं पुष्पं हारं तथा दधती मुदा ।

विस्तललित् सविभ्राण पदानगनूपुर

रसजलनिधिचिच्छन्ना नागप्रिया हरिणी मता ॥४१८॥

[पृ० १३७]

हरिणी नामक छंद १७ वर्णों का होता है। इसमें द्विज = १।१।१, रस = १, कर्णद्वन्द्व = ५५५५, कण्डल = ५, कुच = १५१, पुष्प = १, हार = ५, विस्त = १, मूपुर = ५ होते हैं अर्थात् इस छंद में, नृगण, सगण भगण, रगण, सगण, लघु और गुरु होते हैं। ६, ४ और ७ पर यति होती है।

५ विशुद्ध मगणादिगणों का प्रयोग—

कुरु नगणयुग धेहि त भगण तत,

प्रतिपदविरती भासते रगणोन्तत ।

मुनिरचितयतिर्नागराजकणिप्रिया,

सकलतनुभृता मानसे लसति प्रिया ॥३६६॥ [पृ० १२७]

१५ वर्ण के प्रियाछन्द का लक्षण है—नगण, नगण, तगण, भगण और रगण। ७ और ८ पर यति होती है।

६ पारिभाषिक और मगणादिभिन्न का प्रयोग—

पूर्व कर्णत्रित्व कारय पृश्वाद्धेहि भकार दिव्य,

हार वह्निप्रोक्त धारय हस्त देहि मकार चान्ते ।

रन्ध्रवर्णविभ्राम कुरु पादे नागमहाराजोक्त,

मञ्जीराख्य वृत्त भावय शीघ्र चेतसि कान्ते स्वीये ॥४४३॥

[पृ० १४३]

१८ मञ्जरी के मञ्जीराछन्द का लक्षण है —कर्णत्रित्व = ५५५५५५, भकार = ५।१, हार वह्नि = ५५५, हस्त = १।५ और मकार = ५५५, अर्थात् इसमें मगण, नगण, भगण, मगण, सगण और भगण होते हैं। यति ६-६ पर है।

इस पारिभाषिक शब्दावली के कारण यह सत्य है कि वृत्तरत्नाकर, छन्दो-मञ्जरी और श्रुतबोध की तरह वह बाल सरलता अवश्य हो नहीं रही किन्तु इसके सफल प्रयोग से इस ग्रंथ में जैसा शब्दमाधुर्य, भाषा की प्राञ्जलता, रचना सोष्ठव और लालित्य प्राप्त होता है वैसा उन ग्रंथों में कहाँ है ?

२ विशिष्ट छन्द—

वृत्तमोक्तक में जिन छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण ग्रन्थकार ने दिये हैं उनमें से कतिपय छन्द ऐसे हैं जिनका पृष्ठ ४१४ पर दो हुई सन्दर्भ-ग्रंथ

सूची के प्रसिद्ध छंदःशास्त्र के २१ ग्रन्थों में भी उल्लेख नहीं है और कतिपय छंद ऐसे हैं जो केवल हेमचन्द्रीय छंदोनुशासन, पिंगलवृत्त छंदःसूत्र, हरिहरकृत प्राकृतपिंगल और दुःखभञ्जनकृत वाग्वल्लभ में ही प्राप्त होते हैं। इन विशिष्ट छंदों की वर्गीकृत तालिका इस प्रकार है :—

वृत्तमौक्तिक के विशिष्ट छंद—

मात्रिक छन्द :—कामकला, हरिगीतकम्, मनोहर हरिगीतम्, अपरा हरि-गीता, भदिरा सवया, मालती सवया, मल्ली सवया, मल्लिका सवया, माधवी सवया, गागरी सवया, घनाक्षर, अपर समगलितक और अपर सगलितक।

वर्णिक छन्द. —१४ अक्षर — शरभो, ग्रहिघृति; १६ अक्षर — सुकैसरम्, ललना; १७ अक्षर — मतंगवाहिनी; १९ अक्षर — नागानन्द, मृदुलकुसुम; २० अक्षर — प्लवगभगमगल, अनवधिगुणगण; २१ अक्षर — ब्रह्मानन्द, निरुपमतिलक; २२ अक्षर — विद्यानन्द, शिखर, अच्युत; २३ अक्षर — दिव्यानन्द; कनकवलय; २४ अक्षर — रामानन्द, तरलनयन, २५ अक्षर—कामानन्द, मणिगुण; २६ अक्षर—कमलदल और विपमवृत्तो में भाव तथा वेंतालीय छंदों में नलिन और अपर नलिन।

इस प्रकार मात्रिक छंद १३ और वर्णिक छंद २४ कुल ३७ छन्द ऐसे हैं जिनका ग्रन्थ छंद शास्त्रों में उल्लेख नहीं है।

निम्नलिखित ११ छंद केवल हेमचन्द्रीय छन्दोनुशासन एवं वृत्तमौक्तिक में ही प्राप्त हैं —

मात्रिक छन्द :—विगलितक, सुन्दरगलितक, भूषणगलितक, मुखगलितक, विलम्बितगलितक, समगलितक, विक्षिप्तिकागलितक, विपमितागलितक और मालागलितक।

वर्णिक छन्द—१३ अक्षर — सुद्युति और २१ अक्षर — रुचिरा।

१८ वर्ण का लीलाचन्द्र नामक छन्द प्राकृतपिंगल और वृत्तमौक्तिक में ही प्राप्त है।

निम्नांकित १७ वर्णिक छंद वृत्तमौक्तिक और दुःखभजन कवि रचित वाग्वल्लभ में ही प्राप्त हैं।

८ अक्षर — जलद; ९ अक्षर — सुललित; १० अक्षर — गोपाल, ललितगति; ११ अक्षर — शालिनी-वातोर्म्युपजाति, बकुल; १३ अक्षर — वाराह, विमलगति; १४ अक्षर — मणिगण; १५ अक्षर — उडुगण; १७ अक्षर — लीलाघृष्ट; १८

अक्षर - उपवनकुसुम; २३ अक्षर - मल्लिका; २४ अक्षर - माघवी; २५ अक्षर - मल्ली, २६ अक्षर - गोविन्दानन्द और मागधी ।

दो नगण और साठ रगणयुक्त प्रचितक-नामक दण्डक का प्रयोग केवल छंद सूत्र और वृत्तमौक्तिक में ही है ।

चोपैया नामक भाजिक छंद अन्य ग्रंथों में भी प्राप्त है । किन्तु जहाँ अन्य ग्रंथों में १२० मात्रा का पूर्ण पद्य माना है वहाँ इस ग्रंथ में १२० मात्रा का एक पद और ४८० मात्रा का पूर्ण पद्य माना है ।

इस वर्गीकरण से स्पष्ट है कि अन्य ग्रंथों की अपेक्षा वृत्तमौक्तिक में छंदों का वैशिष्ट्य और बाहुल्य है ।

३. छन्दों के नाम-भेद

प्रस्तुत ग्रंथ में ५० छंद ऐसे हैं जिनका ग्रंथकार ने प्राकृतपिंगल, आचार्य शम्भु एवं तत्कालीन आधुनिक छंदःशास्त्रियों के मतानुसार नाम-भेद दिये हैं । इन नामभेदों की तालिका ग्रंथ के सारांश में और चतुर्थ परिशिष्ट (ख) में देखी जा सकती है । इस प्रकार की नामभेदों की प्रणाली अन्य मूलग्रंथों में उपलब्ध नहीं है । हाँ, हेमचन्द्रीय छन्दोनुदासन की स्वोपज्ञ टीका और वृत्तरत्नाकर की नारायणभट्टी टीका आदि कतिपय टीका-ग्रंथों में यह प्रणाली अवश्य लक्षित होती है किन्तु इतनी विपुलता के साथ नहीं ।

इससे यह तो स्पष्ट है कि ग्रंथकार ने प्राचीन एवं अर्वाचीन अनेक छंद शास्त्रों का आमन्त्र्यन कर प्रस्तुत ग्रंथ द्वारा नवनीत रखने का प्रयास किया है ।

४ विरुदावली और खण्डावली

ग्रंथ के द्वितीय-खण्ड के नवम प्रकरण में विरुदावली, दसवें प्रकरण में खण्डावली और ग्यारहवें प्रकरण में इन दोनों के दोषों का वर्णन है । विरुदावली में ३४ कलिका, ४० विरुदावली और २ खण्डावली के लक्षण एवं उदाहरण ग्रंथकार ने दिये हैं । यह विरुदावली कवि की मौलिक-सर्जना प्रतीत होती है, क्योंकि अन्य छंद-ग्रंथों में विरुदावली के भेद और लक्षण तो दूर रहे किन्तु इसका नामोल्लेख भी नहीं है । हाँ, इतना अवश्य है कि कवि ने २९ विरुदावलियों के उदाहरण रूपगोस्वामी प्रणीत गोविन्दविरुदावली से दिये हैं, अतः यह अनुमान किया जा सकता है कि रूपगोस्वामी के पूर्व भी इसकी परम्परा विविध-रूपों में अवश्य विद्यमान थी, अन्यथा इतने भेद और प्रभेद कैसे प्राप्त

हो सकते थे ? संभव है, इसका कोई स्वतन्त्र ग्रन्थ भी अवश्य रहा हो ! कतिपय स्फुट विरुदावलियाँ अवश्य प्राप्त होती हैं तथा शोध करने पर और भी प्राप्त होना संभव है किन्तु इनके भेद, प्रभेद उदाहरणों के साथ संकलन अद्यावधि अप्राप्त है । कवि ने इस विच्छिन्नप्राय परम्परा को अक्षुण्ण रख कर जो साहित्य जगत् को अमूल्य देन दी है वह श्लाघ्य हो नहीं महत्त्वपूर्ण भी है ।

अद्यावधि जो संस्कृत-याङ्मय प्रकाश में आया है उसमें विरुदावली-साहित्य पर नहीं के समान प्रकाश पड़ा है । अतः शोध-विद्वानों का कर्तव्य है कि वे इस ध्वस्त और वैशिष्ट्यपूर्ण विरुदावली-साहित्य पर अनुसंधान कर इसके महत्त्व पर प्रकाश डालें ।

५. यति एवं गद्य प्रकरण—

समग्र छन्दःशास्त्रियों ने मात्रिक और वर्णिक पद्य के पदान्त और पदमध्य में यतिविधान आवश्यक माना है । वृत्तमीक्षिककार ने भी यति प्रकरण में इस का सुन्दर विश्लेषण और विवेचन किया है । इनके मत से काव्य में मधुरता के लिये यति का बन्धन आवश्यक है । यति से काव्य में सौन्दर्य की अभिवृद्धि होती है । यति के बिना काव्य श्रेष्ठतर नहीं हो सकता ।

ग्रन्थकार के मत से भरत, पिंगल और जयदेव संस्कृत-साहित्य में यति आवश्यक मानते हैं और श्वेतमाण्डव्य आदि मुनिगण यति का बन्धन स्वीकार नहीं करते हैं । जयकीर्ति के मतानुसार पिंगल वसिष्ठ, कौण्डिन्य, कपिल, कम्बलमुनि यति को अनिवार्य मानते हैं और भरत, कोहल, माण्डव्य, अश्वतर, सैतव आदि कतिपय आचार्य यति को अनावश्यक मानते हैं—

वाञ्छन्ति यतिं पिङ्गल-वसिष्ठ-कौण्डिन्य-कपिल-कम्बलमुनयः ।

नेच्छन्ति भरत-कोहल-माण्डव्याश्वतरसैतवाद्याः केचित् ॥

[छन्दोनुशासन, १.१३]

स्वयम्भूच्छन्द में लिखा है—

जयदेवपिंगलाः सर्वकथमिदुच्छिद्यजइं समिच्छन्ति ।

माण्डव्यभरतकाश्यपसैतवप्रमुहा न इच्छन्ति ॥१.७१॥

[जयदेवपिंगली सृष्टेः द्वावेव यतिं समिच्छन्ति ।

माण्डव्यभरतकाश्यपसैतवप्रमुहा न इच्छन्ति ॥]

अर्थात् जयदेव और पिंगल यति मानते हैं और माण्डव्य, भरत, काश्यप, सैतव आदि नहीं मानते हैं ।

भरत के नाट्यशास्त्र के छन्द-प्रकरण में पादान्त यति तो प्राप्त है ही साथ ही पदमध्ययति भी प्राप्त है ।^१ ऐसी अवस्था में जयकीर्ति एव स्वयम्भू-छन्दकार ने भरत की यतिविरोधी कैसे माना, विचारणीय है । वृत्तमौक्तिकार ने भरत की यतिसमर्थक ही माना है ।

यति का सामोपाग विलोपण छन्द सूत्र की हलायुघटीका, हेमचन्द्रीय छन्दो-नुशासन की स्वोपज्ञटीका और वृत्तमौक्तिक में ही प्राप्त है । अन्य छन्द-शास्त्रों में कतिपय छन्द-शास्त्रियों ने इसका सामान्य-वर्णन सा ही किया है ।

गद्य काव्य-साहित्य का प्रमुख अंग है । प्रस्तुत ग्रन्थ में इसके भेद, प्रभेदों के लक्षण और प्रत्येक के उदाहरण प्राप्त हैं । साथ ही अन्य आचार्यों के मतों का उल्लेख कर उनके मतानुसार ही उदाहरण भी ग्रन्थकार ने दिये हैं । इस प्रकार गद्य-काव्य का विवेचन अन्य छन्दग्रन्थों में प्राप्त नहीं है । सम्भव है इसे काव्य का अंग मानकर साहित्य-शास्त्रियों के लिये छोड़ दिया हो ।

६ रचना-शैली—

छन्दशास्त्र की प्राचीन और अर्वाचीन रचनाशैली अनेक रूपों में प्राप्त होती है जिनमें तीन शैलियाँ मुख्य हैं—१. गद्य सूत्र रूप, २ कारिका-शैली (लक्षण सम्मत चरण रूप) और ३ पूर्णपद्य-शैली ।

गद्यसूत्ररूप शैली में छन्द सूत्र, रत्नमञ्जूपा, जानाश्रयी छन्दोविचिति और हेमचन्द्रीय छन्दोनुशासन की रचनायें आती हैं ।

कारिकारूपशैली में जयदेवछन्दस्, स्वयम्भूछन्द, कविदर्पण, जयकीर्ति-कृत छन्दोनुशासन, वृत्तरत्नाकर, छन्दोमजरी और वाग्बल्लभ की रचनायें हैं ।

पूर्णपद्यशैली में प्राकृतपिंगल, वाणीभूषण, श्रुतबोध और वृत्तमुक्तावली की रचनायें हैं ।

भरत नाट्यशास्त्र में लक्षण अनुष्टुप् छन्द में है, वृत्तमुक्तावली में मात्रिक छन्दों के लक्षण गद्य में हैं और वाग्बल्लभ में मात्रिक-छन्दों के लक्षण पूर्ण पद्यों में है ।

छन्द सूत्र, रत्नमञ्जूपा, जानाश्रयी छन्दोविचिति, जयदेवछन्दस्, जयकीर्तीय छन्दोनुशासन, हेमचन्द्रीय छन्दोनुशासन, कविदर्पण, वृत्तरत्नाकर, छन्दोमजरी एव वाग्बल्लभ में लक्षणमात्र प्राप्त है, स्वरचित उदाहरण प्राप्त नहीं हैं । स्वयम्भूछन्द, हेमचन्द्रीय छन्दोनुशासन की टीका और प्राकृतपिंगल में कतिपय

स्वरचित एवं ग्रन्थ कवियों के उदाहरण प्राप्त हैं। नाट्यशास्त्र, वाणीभूषण और वृत्तमुक्तावली में ग्रन्थकार रचित उदाहरण प्राप्त हैं।

प्रस्तुत ग्रन्थ की रचना-शैली हमें दो रूपों में प्राप्त होती है—१. पूर्णपद्य-शैली और २. कारिकाशैली। प्रारम्भ से द्वितीय-खण्ड के विषमवृत्तप्रकरण तक मात्रिक एवं वर्णिक छन्दों के लक्षण पूर्णपद्यशैली में हैं जिससे छन्द का लक्षण और यति आदि का विश्लेषण विशद और सरल रूप में हो गया है। वैतालीय छन्द तथा विरदावली खण्डावली-प्रकरण कारिकाशैली में होने से विषय को स्पष्ट करने के लिये ग्रन्थकार ने व्याख्या का आधार लिया है। यह हम पहले ही कह आये हैं कि ग्रन्थ के मूललेखक चन्द्रशेखर भट्ट का स्वर्गवास द्वितीय-खण्ड के रचनाकाल के मध्य में हो गया था और तदुपरान्त उसकी इच्छा के अनुसार उनके पिता लक्ष्मीनाथ भट्ट ने ग्रन्थ को पूर्ण करने का कार्य पूर्ण मनोयोग के साथ अपने हाथ में लिया था। पञ्चम प्रकरण में तो उन्होंने जैसे जैसे ही लक्षण स्पष्ट करने के लिये पद्यशैली को अपनाये रखने का प्रयास किया प्रतीत होता है परन्तु छठे प्रकरण (वैतालीय) पर आते ही दोनों लेखकों के व्यक्तित्व की भिन्नता का प्रतिबिम्ब हमें शैलीगत भिन्नता में मिल जाता है, क्योंकि यहाँ से लेखक ने कारिका-शैली को इस कार्य के लिये सुविधाजनक समझ कर अपना लिया है और अन्त तक उसी का निर्वाह उन्होंने किया है।

कवि ने स्वप्रणीत मुक्तक पद्यों के माध्यम से ही समग्र छन्दों के उदाहरण दिये हैं। प्रत्युदाहरणों में अवश्य ही पूर्ववर्ती कवियों के पद्य उद्धृत किये हैं। हा, विरदावलीप्रकरण में स्वप्रणीत उदाहरण एक-एक चरण के ही दिये हैं।

लक्षणों के सीमित दायरे में बद्ध रहने पर भी पारिभाषिक शब्दावली के माध्यम से छन्दों के अनुरूप ही शब्दों का चयन कर कवि ने जो लयात्मक सौन्दर्य, माधुर्य और चमत्कार का सृजन किया है वह अनूठा है। यथा—

पूर्णपद्यशैली का उदाहरण—

हारद्वय स्फुरदुरोजयुत दधाना

हस्त च गन्धकुसुमोज्ज्वलककणाढ्यम् ।

पादे तथा स्रुतनूपुरयुग्मयुक्ता,

चित्ते वसन्ततिलका किल चाकसीति ॥२६७॥ [पृ० ११३]

कारिकाशैली का उदाहरण—

अस्य युग्म रचितापरान्तिका ॥२७॥

[व्या.] अस्य-प्रवृत्तकस्य समपादकृता—'समपादलक्षणयुक्तेश्चतुर्भिः पादै रचिताऽपरान्तिका ।

उदाहरण मुक्तक पद्यों में हैं । इसमें छन्द-नामों के अनुरूप ही शृंगार, वीर, रोद्र और शान्त आदि रसों के अनुकूल जिस शाब्दिक गठन, आलंकारिकता और लाक्षणिकता का कवि ने प्रयोग किया है वह भी दर्शनीय है । उदाहरण के तौर पर दो पद्य प्रस्तुत हैं—

मनोहस-नामानुरूप उदाहरण—

तनुजाग्निना सखि मानस भम दह्यते,

तनुसन्धिरुष्णगदास्वत् परिभिद्यते ।

अधर च क्षुध्यति वारिमुक्तसुधासिखत्,

कुरु भद्रगृह कृपया सदा वनमालिमत् ॥३४४॥ [पृ० १२३]

सिंहास्यछन्द के अनुरूप उदाहरण—

यो दैत्यानामिन्द्र वक्षस्पीठे हस्तस्याग्रै-

भिद्यद् ग्रहाण्ड व्याक्रुदयोच्चैर्व्यामृदनादुग्रै ।

दत्तालोकान्युग्मिश्च नियद् विद्युद्वृद्धास्य-

स्तूर्ण सोऽस्माक रक्षा कुर्याद् घोर (वीर) सिंहास्यः ॥२६६॥

[पृ० ११३]

स्पष्ट है कि उल्लिखित ग्रन्थों की अपेक्षा इस ग्रन्थ की रचनाशीली विशद, स्पष्ट, सरल और विविधता को लिये हुये हैं ।

७. छन्दजाति—

अद्यावधि उपलब्ध समस्त छन्द शास्त्रियों ने एक अक्षर से छब्बीस अक्षर-पर्यन्त के वर्णिक छन्दों की निम्नजाति-संज्ञा स्वीकार की है—

लृक्का	=	१ अक्षर	श्रुहृती	=	९ अक्षर
अत्युक्ता	=	२ अक्षर	पक्ति	=	१० अक्षर
मध्या	=	३ अक्षर	त्रिष्टुप्	=	११ अक्षर
प्रतिष्ठा	=	४ अक्षर	जगती	=	१२ अक्षर
सुप्रतिष्ठा	=	५ अक्षर	अतिजगती	=	१३ अक्षर
गायत्री	=	६ अक्षर	शक्वरी	=	१४ अक्षर
उष्णिक्	=	७ अक्षर	अतिशक्वरी	=	१५ अक्षर
अनुष्टुप्	=	८ अक्षर	अष्टि	=	१६ अक्षर

अत्यष्टि	= १७ अक्षर	आकृति	= २२ अक्षर
घृति	= १८ अक्षर	विकृति	= २३ अक्षर
अतिघृति	= १९ अक्षर	सस्कृति	= २४ अक्षर
कृति	= २० अक्षर	अतिकृति	= २५ अक्षर
प्रकृति	= २१ अक्षर	उत्कृति	= २६ अक्षर

किन्तु प्राकृतपिंगल, वाणीभूषण और वृत्तमौक्तिक में यह परम्परा दृष्टि-गोचर नहीं होती है। इन तीनों ग्रन्थों में एकाक्षर, द्व्यक्षर, त्र्यक्षर आदि सज्ञा का ही प्रयोग मिलता है। सम्भवतः मध्ययुगीन हिन्दी-परम्परा के निकट आ जाने के कारण ही इन ग्रन्थकारों ने वैदिक-परम्परा का त्याग कर सामान्य प्रणालिका अपनाई है।

८ विषयसूची—

प्रस्तुत ग्रन्थ के द्वितीय खण्ड के बारहवें प्रकरण में दोनों खण्डों के प्रत्येक प्रकरणस्य प्रतिपाद्य विषय की विस्तृत अनुक्रमणिका ग्रन्थकार ने दी है। वर्ण्य विषय के साथ साथ छन्द-नाम, नामभेद और प्रत्येक अक्षर की प्रस्तारसंख्या का भी उल्लेख है। इस प्रकार की अनुक्रमणिका ग्रन्थ छन्द-ग्रन्थों में प्राप्त नहीं है, केवल प्राकृतपिंगल में प्रथम परिच्छेद के अंत में भाषिक-छन्द-सूची और द्वितीय परिच्छेद के अंत में वर्णिकवृत्त-सूची गद्य में प्राप्त है। इस प्रकार की वृत्तसूची जिस विधिवत् ढंग से दी गई है उससे यह प्रमाणित होता है कि रत्नक का ज्ञान बहुत विस्तृत रहा है और उसने छन्दशास्त्र के प्रतिपादन में वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने का प्रयत्न किया है और वह इसमें सफल भी हुआ है।

निष्कर्ष—उपर्युक्त छन्द-ग्रन्थों के साथ तुलना करने पर यह स्पष्ट है कि सभी दृष्टियों से ग्रन्थ ग्रन्थों की अपेक्षा वृत्तमौक्तिक छन्दशास्त्र का सर्वश्रेष्ठ एवं प्रौढ ग्रन्थ है। साथ ही मध्ययुगीन हिन्दी-साहित्य में जो स्थान और महत्त्व प्राकृतपिंगल का है उससे भी अधिक महत्त्व इस ग्रन्थ का है क्योंकि जहाँ प्राकृतपिंगल में सर्वथा छन्द के उद्भव के अंकुर प्राप्त होते हैं वहाँ वृत्तमौक्तिक में सर्वथा (मदिरा, मालती आदि ६ भेद) और घनाक्षरी छन्द सोदाहरण प्राप्त हैं। मध्ययुगीन हिन्दी-साहित्य की दृष्टि से इसमें वे सब छन्द प्राप्त हैं जिनका प्रायः प्रयोग तत्कालीन कवि कर रहे थे। अतः संस्कृत और हिन्दी दोनों के साहित्यिक दृष्टिकोण से वृत्तमौक्तिक का छन्दशास्त्र में विशिष्ट स्थान और महत्त्व सुनिश्चित ही है।

वृत्तमौक्तिक और प्राकृतपिंगल

वृत्तमौक्तिक और प्राकृतपिंगल का आलोडन करने पर ऐसा प्रतीत होता है कि चन्द्रशेखर भट्ट ने वृत्तमौक्तिक के मात्रावृत्तनामक प्रथम खण्ड में न केवल प्राकृतपिंगल का आधार ही लिया है अपितु पांचवां और छठा प्रकरण तथा कतिपय स्थलों को छोड़ कर पूर्णतः प्राकृतपिंगल की छाया या अनुवाद के रूप में ही रचना की है। मुख्य अंतर है तो केवल इतना ही है कि प्राकृतपिंगल की रचना प्राकृत-अपभ्रंश में है तो वृत्तमौक्तिक की रचना संस्कृत में है। दोनों ही ग्रन्थों की समानतायें इस प्रकार हैं—

१. दोनों ही ग्रन्थ मात्रावृत्त और वर्णवृत्त-नामक दो परिच्छेदों में विभक्त हैं। वृत्तमौक्तिक में परिच्छेद के स्थान पर 'खण्ड' शब्द का प्रयोग किया गया है।

२. प्रारम्भ से अन्त तक विषयक्रम और छन्दःक्रम एकसदृश है जो विषय सूची से स्पष्ट है।

३. रचनाशैली में पारिभाषिक (सांकेतिक) शब्दावली और उसका प्रयोग एक-सा ही है।

४. गाथा, स्कन्धक, दोहा, रोला, रसिका, काव्य और षट्पद-नामक छन्दों के प्रस्तारभेद और नाम एकसमान हैं। नामों में यत्किञ्चित् अन्तर अवश्य है, जो चतुर्थ परिशिष्ट(क) में द्रष्टव्य है। दोनों में भेदों के लक्षणमात्र ही हैं, उदाहरण नहीं हैं। वृत्तमौक्तिक में गाथा-छन्द के २७ के स्थान पर २५ भेद स्वीकार किये हैं।

५. रहु छन्द के सातों भेदों के उदाहरण दोनों में प्राप्त नहीं हैं।

६. लक्षणों की शब्दावली भी प्रायः समान है। उदाहरण के लिये कुछ पद्य प्रस्तुत हैं—

प्राकृतपिंगल

दीहो संजुत्तपरो

बिदुजुओ पाडिओ ॥ चरणते ।

स गुरु वंक दुमत्तो

अण्णो लहु होय सुद्ध एककल्लो ॥२॥

×

×

वृत्तमौक्तिक

दीर्घः सयुक्तपरः .

पादान्तो वा विसर्गबिन्दुयुतः ।

॥ गुरुर्वक्त्रो द्विकलो

लघुरन्यः शुद्ध एककलः ॥६॥

×

×

सगणा भगणा दिग्गणइ

मत्त चउद्दह पअ पलई ।

सठइ वको विरइ तहा

हाकलि रुयउ एहु कहा ॥१७२॥

सगणभंगणनलधुयुतः

सक्ल चरणा प्रविरचितम् ।

गुरुकेन च सर्वं कलित

हाकलिवृत्तमिदं कथितम्॥२२॥

[चतुर्थं प्रकरण]

+

+

+

+

प्राकृतपिंगल और वृत्तमोक्तिक में निम्न असमानतायें हैं—

१. प्राकृतपिंगलकार ने छन्दों के उदाहरण पूर्ववर्ती कवियों के दिये हैं और वृत्तमोक्तिककार ने समग्र उदाहरण स्वरचित दिये हैं, प्रत्युदाहरण पूर्ववर्ती कवियों के अवश्य दिये हैं ।

२. शिखा, कामकला, रुचिरा, हरिगीत के भेद, मदिरा सवैया, मालती सवैया, मल्ली सवैया, मल्लिका सवैया, माधवी सवैया, मागधी सवैया, घनाक्षर और गलितक प्रकरण के १७ छन्द विशिष्ट हैं जो प्राकृतपिंगल में प्राप्त नहीं हैं ।

३. प्रथम खण्ड छह प्रकरणों में विभक्त है ।

वृत्तमोक्तिक के द्वितीय खंड की रचना प्राकृतपिंगल के अनुकरण पर नहीं है । रचना-शैली, शब्दावली, प्रकरण आदि सब पृथक् हैं । प्राकृतपिंगल के द्वितीय परिच्छेद में केवल १०४ वर्णिक छन्द हैं और वृत्तमोक्तिक में २६५ वर्णिक छन्द, प्रकीर्णक, दण्डक अर्धसम, विषम, वेतालीय छन्द, यति-प्रकरण, गद्य-प्रकरण और विरुदावली आदि कई विशिष्ट प्रकरण हैं जो कि अन्यत्र दुर्लभ हैं ।

वृत्तमोक्तिक और वाणीभूषण

प्राकृतपिंगलकार हरिहर के पौत्र, रविकर के पुत्र दामोदरप्रणीत वाणीभूषण प्राकृतपिंगल का संस्कृत रूपान्तर है और इस ग्रंथ का वृत्तमोक्तिककार ने भी यथेच्छ प्रयोग किया है । प्रत्युदाहरणों में सुन्दरी, तारक, चक्र, चामर, निशिपालक, चञ्चला, मञ्जोरा, चर्वरी, श्रीडाचन्द्र, चन्द्र, धवल, गण्डका एवं दीपक (मात्रिक) के उदाहरणों का तो प्रयोग किया ही है किन्तु रुचिरा (मात्रिक) और किरीट (वर्णिक) छन्द के तो लक्षण एवं उदाहरण भी ज्यों के त्यों उद्धृत कर दिये हैं । अतः यह निःसंकोच मानना होगा कि पूर्ववर्ती वाणीभूषण का वृत्तमोक्तिककार ने पूर्णतया अनुकरण किया है ।

रोलावृत्तमवेहि
 नागपिङ्गलकविभणित,
 प्रतिपदमिह चतुरधिक-
 कलविंशतिपरिगणितम् ।
 एकादशमधि विरति-
 रखिलजनचिन्ताहरण,
 सुललितपदमदकारि
 विमलकविकण्ठाभरणम् ॥५६॥

या चरणे कलाना
 चतुरधिकविंशंदिता,
 सा किल रोला भवति
 नागकविपिङ्गलकविता ।
 एकादशकलविरति-
 रखिलजनचिन्ताहरणा
 सुललितपदकुलकलित-
 विमलकविकण्ठाभरणा ॥५६॥

[द्वितीय प्रकरण]

+ +
 प्रक्षरगुरुलघुनियमविरहित
 भुजगराजपिङ्गलपरिगणितम् ।
 भवति सुगुम्फितपोडशकलक,
 वाणीभूषणपादाकुलकम् ॥७५॥

+ +
 गुरुलघुकृतगणनियमविरहित,
 फणिपतिनायकपिगलपदितम् ।
 रसविधुकलयुतयमकितचरण
 पादाकुलक श्रुतिसुखकरणम् ॥५५॥

[तृतीय प्रकरण]

+ +
 पटकलमादौ तदनु
 चतुस्तुरग परिसतनु,
 शेषे द्विकल कलय
 चतुष्पदमेव सचिनु ।
 छन्द पटपदनाम
 भवति फणिनायकगीत,
 रुद्रे विरतिमुपैति
 नृपतिसुखकरमुपनीतम् ।
 उल्लालयुगलमत्र च
 भवेदष्टाविंशतिकलमित,
 शृणु पञ्चदशे विरतिस्थित-
 पठनादपि पण्डितजनहितम् ॥७७॥

+ +
 पटपदवृत्त कलय
 सरसकविपिगलभणित,
 एकादश इह विरति-
 रथ च दहनैविधुगणितम् ।
 पटकलमादौ तदनु
 चतुस्तुरग परिसतनु,
 शेषे द्विकल रचय
 चतुष्पदमेव सचिनु ।
 उल्लालद्वयमत्र हि
 भवेदष्टाविंशतिकलयुत,
 यदि पञ्चदशे विरतिस्थित
 पठनादपि गुणिगणहितम् ॥५३॥

[द्वितीय प्रकरण]

+ +
 द्वितीय परिच्छेद
 नरेन्द्रमुदेहि । मृगेन्द्रमवेहि ॥२१॥
 + +

+ +
 द्वितीय-खण्ड--१ वृत्तिनिरूपण प्रकरण
 नरेन्द्रविराजि । मृगेन्द्रमवेहि ॥२५॥
 + +

द्विजगणमोहर, भगणमुपाहर ।
भणति सुवासकमिति गुणनायक ॥५६॥

+ +
विनिधेहि चतु सगण रुचिर,
रविसंस्थकवर्णकृन् सुचिरम् ।
फणिनायकपिङ्गलसभणित
कुरु तोटकवृत्तमिद गणितम् ॥१३५॥

+ +
पादयुग कुरु नूपुरसयुत-
मन्न कर वररत्नमनोहर,
वज्रयुग कुसुमद्वयसगत-
कुण्डलगन्धयुग समुपाहर ।
पण्डितमण्डलिकाहृतमानस-
कल्पितसज्जनमौलिरसालय,
पिङ्गलपद्मगराजनिवेदित-
वृत्तकिरीटमिद परिभावय ॥२२१॥

+ +

वाणीभूषण की अपेक्षा वृत्तमौक्तिक में निम्नलिखित विशेषतायें पाई जाती हैं —

(१) वाणीभूषण में केवल ४३ मात्रिक छन्द हैं जब कि वृत्तमौक्तिक में ७६ मूल छन्द और २०६ छन्द-भेद हैं । निम्न छन्दों का प्रयोग वाणीभूषणकार ने नहीं किया है —

रसिका, वाव्य, उत्साल, चौबोला, भुल्लणा, शिखा, दण्डकला, वामकला, हरिगीत के भेद और पद्यम सर्वेया-प्रकरण तथा छठा गलितक प्रकरण के पूर्ण छन्द ।

(२) गाथा, स्कन्धक, दोहा, रोला, रसिका, वाव्य, और पट्पद के प्रस्तारभेद, नाम एव लक्षण तथा रहु छन्द के सातों भेदों के लक्षण वाणीभूषण में नहीं हैं ।

(३) वाणीभूषण में ११२ समवर्णिक छन्द हैं जब कि वृत्तमौक्तिक में २६५ छन्द हैं । इसका वर्गीकरण चतुर्थ परिशिष्ट (ख) में देखा जा सकता है ।

द्विजमिह धारय, भमनु च कारय ।
भवति सुवाकमिति गुणलासक ॥७२॥

+ +
यदि वै लघुयुग्मगुरुक्रमत
रविसंमितवर्ण इह प्रमित ।
अहिभूपतिना फणिना भणित
सखि तोटकवृत्तमिद गणितम् ॥१६६॥

+ +
पादयुग कुरु नूपुरराजित-
मन्न कर वररत्नमनोहर,
वज्रयुग कुसुमद्वयसङ्गत-
कुण्डलगन्धयुग समुपाहर ।
पण्डितमण्डलिकाहृतमानस-
कल्पितमज्जनमौलिरसालय,
पिङ्गलपद्मगराजनिवेदित-
वृत्तकिरीटमिद परिभावय ॥५८१॥

+ +

(४) वृत्तमौक्तिक में ७ प्रकीर्णक, ८ दण्डक, ८ विषम १२ वंतालीय, ७४ विरुदावली और २ खण्डावली छन्दों के लक्षण एवं उदाहरण प्राप्त हैं जब कि वाणीभूषण में इन छन्दों का उल्लेख भी नहीं है।

(५) वाणीभूषण में अर्द्धसम छन्दों में केवल पुष्पिताग्रा छन्द है जब कि वृत्तमौक्तिक में १० छन्द हैं।

(६) वाणीभूषण में यतिनिरूपण और गद्य-निरूपण-प्रकरण नहीं है।

(७) वृत्तमौक्तिक में दोनों खण्डों के प्रकरणों की सूची है जिसमें छन्द-नाम, नामभेद एवं प्रस्तार सख्या दी है, जब कि वाणीभूषण में सूची नहीं है।

अतः इस तुलना से स्पष्ट है कि वाणीभूषण एक लघुकाय छन्दोग्रन्थ है जब कि वृत्तमौक्तिक छन्दों का आकर और महत्वपूर्ण ग्रन्थ है।

वृत्तमौक्तिक और गोविन्दविरुदावली

वृत्तमौक्तिक के नवम विरुदावली प्रकरण में चण्डवृत्तों के प्रत्युदाहरण देने हुए प्रयकार ने श्री रूपगोस्वामी कृत गोविन्दविरुदावली का मुक्त हृदय से प्रयोग किया है। गोविन्दविरुदावली के एक या दो ही उदाहरण ग्रहण नहीं किये हैं अपितु समग्र विरुदावली ही उद्धृत कर दी है, केवल गोविन्दविरुदावली का मंगलाचरण और उपसंहार मात्र ही अवशिष्ट रहा है।^१

विरुदावली छन्द-क्रम में दोनों में अन्तर है; जो तालिका से स्पष्ट है—

गोविन्दविरुदावली		वृत्तमौक्तिक		पृष्ठांक
क्रम-सख्या	नाम	क्रम-सख्या	नाम	
१	वदित	४	वदित	२२२
२	वीरभद्र	६	वीर (वीरभद्र)	२२५
३	समग्र	५	रण (समग्र)	२२४

१-भादि—इय मङ्गलसख्या तयाद् गोविन्दविरुदावली ।

यस्याः पठनमात्रेण श्रीगोविन्दः प्रसीदति ॥

अथ—स्युत्पन्नः सुखिभरमतिगन्तवानिगन्तस्यन ।

भक्तः हृष्ये मवेद् यः स विरुदावलीपाठकः ॥

यः श्रोति विरुदावल्या मधुरामण्डले हरिम् ।

अनया रम्यया तस्मै पूर्णमेव प्रसीदति ॥

४	अच्युत	३	अच्युत	२२१
५	उत्पल	६	उत्पल	२२८
६	तुरङ्ग	२०	तुरग	२३४
७	गुणरति	१०	गुणरति	२२६
८	मातङ्गखेलित	८	मातङ्गखेलित	२२६
९	तिलक	२	तिलक	२२०
१०	पङ्केरुह	२१	पङ्केरुह	२३५
११	सितकञ्ज	२२	सितकञ्ज	२३८
१२	पाण्डूत्पल	२३	पाण्डूत्पल	२३६
१३	इन्दीवर	२४	इन्दीवर	२४०
१४	अरुणाम्भोरुह	२५	अरुणाम्भोरुह	२४२
१५	फुलाम्बुज	२६	फुलाम्बुज	२४३
१६	चम्पक	२७	चम्पक	२४५
१७	वज्जुल	२८	वज्जुल	२४६
१८	कुन्द	२९	कुन्द	२४७
१९	वकुलभासुर	३०	वकुलभासुर	२४८
२०	वकुलमगल	३१	वकुलमगल	२४९
२१	मञ्जरीकोरक	३२	मञ्जरीकोरक	२५१
२२	गुच्छ	३३	गुच्छक	२५२
२३	कुसुम	३४	कुसुम	२५३
२४	दण्डकात्रिभंगी कलिका	१	दण्डकात्रिभंगी कलिका	२५५
२५	विदग्धात्रिभंगी कलिका	२	संपूर्णा विदग्धात्रिभंगी- कलिका	२५६
२६	मिश्रा कलिका	३	मिश्रकलिका	२५८
२७	साप्तविभक्तिकी कलिका	१	साप्तविभक्तिकी कलिका	२६१
२८	अष्टमयी कलिका	२	अष्टमयी कलिका	२६२
२९	सर्वलघुकलिका	३	सर्वलघु-कलिका	२६४

गोविन्दविरदावली के अतिरिक्त जिन चण्डवृत्तों के सद्यः वृत्तभोक्तक में दिये गये हैं उनके उदाहरण एक-एक चरण के ही प्राप्त हैं, पूर्ण उदाहरण या प्रत्युदाहरण प्राप्त नहीं हैं। इन चण्डवृत्तों की तालिका इस प्रकार है—

१ पुरुषोत्तम, ७ शाक, ११, कल्पद्रुम, १२ कन्दल, १३ अपराजित, १४ नर्तन, १५ तरत्समस्त, १६ वेष्टन, १७ अस्थलित और १६. समग्र ।

पल्लवित-नामक विरुदावली गोविन्दविरुदावली में नहीं है । चन्द्रशेखरभट्ट ने इसका प्रत्युदाहरण गोविन्दविरुदावली में प्रदत्त फुल्लाम्बुज के उदाहरणस्थ अंश का दिया है ।

वृत्तमौक्तिक में चण्डवृत्त के ३४ भेद, त्रिभगी-कलिका के ३ भेद और विरुदावली के तीन भेद माने हैं जब कि गोविन्दविरुदावली में इनका वर्गीकरण इस प्रकार है—

चण्डवृत्त-कलिका के दो भेद हैं—१ नख और २ विशिख ।

नख के ६ भेद हैं—१. वधित, २ वीरभद्र, ३ समग्र, ४ अच्युत, ५ उत्पल ६ तरङ्ग, ७ गुणरति, ८ मातगखेलित और ९ तिलक ।

विशिख के ११ भेद हैं—१ पङ्केरुह, २ सितकञ्ज, ३ पाण्डूत्पल, ४ इन्दीवर, ५ अरुणाम्भोरुह, ६ फुल्लाम्बुज, ७ चम्पक, ८ वज्जुल, ९ कुन्द, १० बकुलभासुर और ११. बकुलमगल ।

द्विगादिगणवृत्त-कलिका मजरी के तीन भेद हैं—१ मञ्जरी-कोरक, २ गुच्छ और ३ कुसुम ।

त्रिभगी-कलिका के दो भेद हैं—१ दण्डकत्रिभगी कलिका और २ विद्वरघ-त्रिभगी-कलिका ।

मिश्रकलिका के ४ भेद हैं—१ मिश्राकलिका, २ साप्तविभक्तिकी कलिका, ३ अक्षमयी-कलिका और ४ सर्वलघु कलिका ।

इस प्रकार गोविन्दविरुदावली में विरुदावली के कुल २६ भेदों का दिग्दर्शन है तो वृत्तमौक्तिक में ४० विरुदावलियों और ३४ कलिकाओं का निरूपण है ।

वृत्तमौक्तिक में उद्धृत अप्राप्त ग्रन्थ

प्रस्तुत अर्थ में चन्द्रशेखरभट्ट ने छन्दों के प्रत्युदाहरण देते हुए जिन जिन ग्रन्थकारों और जिन जिन ग्रन्थों का उल्लेख किया है उनमें से कतिपय ग्रन्थ अद्यावधि अप्राप्त हैं । अप्राप्त ग्रन्थों की अधरानुक्रम से तालिका इस प्रकार है—

संख्या	ग्रन्थ नाम	ग्रन्थकार	उल्लेख-पृष्ठादि
१	उदाहरणमञ्जरी	लटमोनाथ भट्ट	१०, १३, १६ आदि

२	कृष्णकुतूहल-महाकाव्य	रामचन्द्र भट्ट	१०५, १०७ आदि
३	दशावतारस्तोत्र	"	१२६
४	नन्दनन्दनाष्टक	लक्ष्मीनाथ भट्ट	१४४
५	नारायणाष्टक	रामचन्द्र भट्ट	१६७
६	पवनदूतम्	चन्द्रशेखर भट्ट	१३६
७	पाण्डवचरित-महाकाव्य	"	६२, १२१ आदि
८	शिको-काव्य	"	१५६
९	शिवस्तुति	लक्ष्मीनाथ भट्ट	४५
१०	सुन्दरीध्यानाष्टक	"	१४४

इनके अतिरिक्त कुछ ऐसे स्थल हैं जिनमें केवल ग्रन्थकार के नाम हैं और ग्रन्थ विषय का संकेत है किन्तु उनके ग्रन्थों का कोई उल्लेख नहीं मिलता ।

१	राक्षसकवि	दक्षिणानिलवर्णन	१५३
२	लक्ष्मीनाथभट्ट	सङ्गवर्णन	१६०
३	"	देवीस्तुति	४३
४	शम्भु	छन्दःशास्त्र	१०६, १३६, १६७ आदि

धृतरत्नाकर-नारायणी-टीका में (पृ. १४५) पर शम्भु-प्रणीत छन्ददूधामणि ग्रन्थ का उल्लेख है । संभवतः यही शम्भु हों ! किन्तु ग्रन्थ अप्राप्त है ।

मालती छन्द का प्रत्युदाहरण देते हुये भारवि रचित निम्न पद्य दिया है—

अयि विजहीहि दूढोपगूहनं, त्यज नयसङ्गमभीष वत्सलम् ।

अरुणकरोद्गम एष वर्तते, धरतनु सम्प्रवेदन्ति कुक्कुटाः ॥ पृ. १००

इसका उल्लेख छन्दोमञ्जरी (पृ. ५६) में भी है किन्तु भारवि कृत किरा-तार्जुनीय काव्य (मुद्रित) में यह पद्य प्राप्त नहीं है । अतः भारवि कृत किस ग्रन्थ का यह पद्य है, अन्वेषणीय है ।

प्रस्तुत संस्करण की विशेषतायें

ग्रन्थकार ने प्रस्तुत ग्रन्थ में ६७१ छन्दों के लक्षण एवं उदाहरणों का निरूपण किया है । इन छन्दों के अतिरिक्त मैने ग्रन्थान्तरों से पाद-टिप्पणियों में ७७ और पंचम परिशिष्ट में १३८१ छन्दों के लक्षण दिये हैं । अर्थात् इस संकलन में २१२६ छन्दों का दिग्दर्शन है जो कि इस संस्करण की प्रमुख विशेषता है ।

इस संस्करण में मूल ग्रन्थ के पश्चात् दो टीकायें और ८ परिशिष्ट दिये हैं जिनका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है :—

(१) वृत्तमोक्षितक-वार्त्तिक-दुष्करोद्धार-टीका

इस टीका और टीकाकार लक्ष्मीनाथ भट्ट का परिचय प्रारम्भ में कवि-वश-परिचय में दिया जा चुका है, अतः यहाँ पिष्टपेयण अनावश्यक है ।

(२) वृत्तमोक्षितक-दुर्गमबोध-टीका

इस दुर्गमबोधटीका के प्रणेता महोपाध्याय मेघविजय १८ वीं शताब्दी के बहुमुखी प्रतिभासम्पन्न विशिष्टतम विद्वान् हैं । इनका जन्म सवत्, जन्म स्थान और गार्हस्थ्य जीवन का ऐतिह्य परिचय अद्यावधि अप्राप्त है । श्रीबल्लभोपाध्याय प्रणीत 'विजयदेवमाहात्म्य' पर मेघविजयजी रचित विवरण की स १७०६ की लिखित हस्तलिखित^१ प्रति प्राप्त होने से यह निश्चित है कि विवरण की रचना १७०६ के पूर्व ही हो चुकी थी । अतः यह अनुमान सहज-भावे से लगाया जा सकता है कि इस रचना के समय इनकी अवस्था कम से कम २०-२५ वर्ष की अवश्य होगी । अतः १६८५ और १६९० के मध्य इनका जन्म-समय माना जा सकता है ।

मेघविजयजी द्वेताम्बर-जैन-परम्परा में तपागच्छीय भक्त-प्रतिबोधक जगद्गुरु हीरविजयसूरि की शिष्य-परम्परा में कृपाविजयजी के शिष्य हैं^२ । विजयसिंहसूरि के पट्टधर विजयप्रभसूरि ने इनकी उपाध्यायपद प्रदान किया था ।^३

मेघविजयजी-गुम्फित साहित्य को देखने पर यह साधिकार कहा जा सकता है कि ये एकदेशीय विद्वान् न होकर सार्वदेशीय विद्वान् थे । काव्य-साहित्य, पादपूर्ति, व्याकरण, छन्द, अनेकार्थ, न्यायशास्त्र, दर्शनशास्त्र, ज्योतिष, सामुद्रिक और अध्यात्मशास्त्र आदि प्रत्येक विषय के ये प्रगाढ पण्डित थे और इन्होंने प्रत्येक विषय पर साधिकार वचस्वपूर्ण लेखनी चलाई है । इनका साहित्य-सर्जना काल वि स १७०६ से १७६० तक का तो निश्चित ही है । वर्तमान समय में प्राप्त इनकी रचित साहित्य-सामग्रियों की सूची निम्न है—

१—विजयदेवमाहात्म्य प्राप्तपुष्पिका

२—पुत्रिप्रबोध प्रशस्ति

३—देवानन्द महाकाव्य प्रशस्ति

१	सप्तसन्धान-महाकाव्य	र. सं. १७६० ^१	प्रकाशित
२	दिग्विजय-महाकाव्य		"
३	शान्तिनाथचरित्र (नैपथीय-पादपूर्ति)		"
४	देवानन्द-महाकाव्य (माघ-पादपूर्ति)		"
५	किरातसमस्यापूर्ति ^२		अप्रकाशित
६	मेघदूत-समस्यालेख (मेघदूत-पादपूर्ति)		प्रकाशित
७	लघुत्रिपष्टिशलाकापुरुषचरित्र		अप्रकाशित
८	भविष्यदत्तचरित्र		प्रकाशित
९	पञ्चाख्यान		अप्रकाशित
१०	पाणिनिद्वयाश्रयविज्ञप्तिसेख ^३		"
११	"	४	"
१२	विज्ञप्तिका		प्रकाशित ^४
१३	गुरुविज्ञप्तिसेखरूप-चित्रकोशकाव्य		अप्रकाशित ^५
१४	विज्ञप्तिपत्र		"
१५	"	अपूर्ण ^६	"
१६	"		"
१७	"	अपूर्ण ^७	"
१८	चन्द्रप्रभा-ध्याकरण (हैमकौमुदी) २० सं० १७५७ ^{१२}		प्रकाशित
१९	हैमशब्दचन्द्रिका		"
२०	हैमशब्दप्रक्रिया ^{१३}		अप्रकाशित

१-विषदूतसमुनीन्द्रना प्रमाणात् परिवर्तरे । [सप्तसन्धान प्रकाशित]

२-हेतुं, दिग्विजय-महाकाव्य-प्रस्तावना

३-४ भाष्यारकर घोरियम्ल रित्तं इन्स्टीट्यूट पुना २११A, १८८२-८३

५-विज्ञप्तिसेखसंग्रह प्रथम भाग (सिपी जैन ग्रन्थमाला, बम्बई)

६-समयजैन-श्रवणाय, बीकानेर

७-राजस्थान प्राञ्चविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, सं० १०४१५

८, ९, १०-,, ,, ,, शाखा कार्यालय बीकानेर, मोतीचंद सनाथी-संग्रह,
" २८४

११-विषयले से गुरुदः दीनदरपीन्दुवरतरे । [चन्द्रप्रभाप्रकाशित ७]

१२-भाष्यारकर घोरियम्ल रित्तं इन्स्टीट्यूट, पुना

२१	विष्णुमणि-परीक्षा ^१	(मध्यमापत्रवर्गक गदेतोषाध्याय- कृत तरुविष्णुमणि वा परीक्षा)	प्रकाशित
२२	मुनिप्रबोध		प्रकाशित
२३	मर्ममञ्जरी		प्रकाशित
२४	मेघमहोदयवर्णप्रबोध		प्रकाशित
२५	हस्तग्रीवम ग्रीवम-टीका-गहिण		"
२६	रत्नसागर	उद्देश्य, मेघमहोदय-वर्णप्रबोध	
२७	उदयदीपिका, २० सं० १७५२		प्रकाशित
२८	प्रत्यगुद्गरी		"
२९	वीर्यायनविधि		प्रकाशित
३०	मातृवाप्रसाद २० सं० १७५७ ^२		प्रकाशित
३१	महाबोध		प्रकाशित
३२	महोदगीता		प्रकाशित
३३	विजयदेवगाथासमविवरण		"
३४	वृत्तमोचिन-‘दुर्गमबोध’ टीका		(प्रस्तुत)
३५	पञ्चतीर्थस्तुति गटीक ^३		प्रकाशित
३६	भक्त्यामरस्तोत्र-टीका ^४		"
३७	चतुर्विंशतिजिनस्तव ^५		"
३८	आदिनामस्तोत्र ^६ अपूर्ण		"
गुजर-भाषा में रचित कृतियाँ			
३९	विजयदेवसूरिनिर्वाणरास ^७		प्रकाशित
४०	कृपाविजयनिर्वाणरास ^८		"
४१	जैनधर्मदोषवस्थाध्याय ^९		"
४२	जैनशासनदोषवस्थाध्याय ^{१०}		"

१-दुर्गा में सम्पादन कर रहा हूँ जो राजस्थान प्राञ्चविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर से प्रकाशित होगा।

२-सर्वसत्त्वदेववाच्यवैवर्धनमित्रे पोष उग्वले।

श्रीधर्मनगरे शयः पूर्यन्निधिमन्त्रिभक्तम् । [मातृवाप्रसाद प्रकाशित]

३, ४, ५-देसों दिग्विजय-महाकाव्य - प्रस्तावना

६-महोपाध्याय विनयसागर-सद्वह, कोटा

७-राजस्थान प्राञ्चविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर, सं. २०४१५

८-११-देसों, दिग्विजय-महाकाव्य - प्रस्तावना

४३	आहारगवेपणा-स्वाध्याय ^१	अप्रकाशित
४४	चौवीस जिनस्तवन ^२	"
४५	पाश्वन्नाथस्तवन ^३	"
४६	मक्षोपाश्वन्नाथस्तवन ^४	"

वृत्तमौक्तिक की दुर्गमबोध नामक टीका की रचना मेघविजयजी ने अपने शिष्य भानुविजय के पठनार्थ सं० १६१५ में की है। भट्ट लक्ष्मीनाथीय 'दुष्करोद्धार' टीका के समान ही यह टीका भी वृत्तमौक्तिक के प्रथम खण्ड, प्रथम गाय-प्रकरण के पद्य ५१ से ८६ तक अर्थात् ३६ पद्यों पर रची गई है। पूर्व टीका की तरह यह भी ६ प्रकरणों में विभक्त है। इसमें वर्णोद्दिष्ट और वर्णमण्ड एक-साथ दे दिये हैं और वृत्तस्थ गुरु-लघु-ज्ञान का स्वतन्त्र प्रकरण नहीं है। प्रस्तार जैसे गहन विषय को मेघविजयजी ने अपनी लेखनी द्वारा सरलतम बना दिया है। प्राकृत-पिगल, वाणीभूषण और छन्दोरत्नावली आदि ग्रन्थों के उद्धरण और मनेकों चित्र देकर प्रत्येक प्रकरण के वर्ण्य विषय का विशदता के साथ स्पष्टीकरण किया है। भाषा में प्रवाह और सरलता है। कहीं-कहीं देश्य शब्दों का प्रयोग भी मिलता है।

यह टीका प्रचावधि प्रज्ञात और अप्राप्त थी। इसकी स्वयं टीकाकार द्वारा लिखित एक मात्र प्रति मेरे निजी संग्रह में है।

परिशिष्टों का परिचय

प्रथम परिशिष्ट—

इस परिशिष्ट में वृत्तमौक्तिककार द्वारा स्वीकृत पारिभाषिक-शब्दावली दी गई है। टगणादि गण, इनका प्रस्तारभेद, नाम तथा उनके पर्याय यहाँ क्रमशः दिये हैं और अन्त में इस पद्धति से मगणादि ८ गणों के पर्याय दिये हैं।

पाद-टिप्पणियों में स्वयम्भूछन्द, वृत्तजातिसमुच्चय, कविदर्पण, हेमचन्द्रीय-छन्दोनुशासन, प्राकृतपिगल, वाणीभूषण और वाग्वल्गम के साथ इस पद्धति की तुलना की है अर्थात् इन ग्रन्थकारों ने इस प्रणाली को किस रूप में स्वीकार किया है, कौन-कौन से शब्द स्वीकृत किये हैं, कौन-कौन से शब्द इन ग्रन्थों में नहीं हैं और कौन-कौन से नये पारिभाषिक शब्दों को स्वीकृत किया है; इन सब का दिग्दर्शन है।

१ - १- देहों, दिग्विजय-महाकाव्य - प्रस्तावना.

४-महोपाध्याय विनयसागर-संग्रह, कोटा.

द्वितीय परिशिष्ट—

(क) मात्रिक छन्दो का अकारानुक्रम—इसमें मात्रिक छन्द ७६ और गाय, स्कन्धक, दोहा, रोला, रसिका, काव्य और पट्पद आदि के २१८ भेदों के नामों को अकारानुक्रम से दिया है।

(ख) वर्णिक छन्दो का अकारानुक्रम—इसमें वर्णिक सम-छन्द, प्रकीर्णक, दण्डक, अर्द्धसम, विषम और वंतालीय-छन्दो का एव टिप्पणियों में उद्धृत छन्दो का अकारानुक्रम दिया है। छन्दो के भागे () कोष्ठक में प्रकीर्णक का प्र, दण्डक का द, अर्द्धसम का अ, विषम का वि, वंतालीय का वं और टिप्पणी का टि दिया है। सकेत-कोष्ठक में ग्रन्थकार ने जो छन्दो के नाम-भेद दिये हैं वे भी अकारानुक्रम में सम्मिलित हैं, वे नाम-भेद भी () कोष्ठक में दिये हैं।

(ग) विरुदावली-छन्दो का अकारानुक्रम—इसमें कलिका-विरुदावली, चण्डवृत्त-विरुदावली आदि समस्त विरुदावली-छन्दो का अकारानुक्रम दिया है।

तृतीय परिशिष्ट—

(क) पद्यानुक्रम—इसमें प्रतिपाद्य विषय के पद्यों और छन्द के लक्षण-पद्यों को अकारानुक्रम से दिया है। वंतालीय-प्रकरण की लक्षण-कारिकायें भी इसी में अकारानुक्रम से सम्मिलित कर दी गई हैं।

(ख) उदाहरण-पद्यानुक्रम—इसमें ग्रन्थकार द्वारा स्वरचित-उदाहरण, पूर्ववर्ती कवियों के प्रयुदाहरण, गद्यांश के उदाहरण और टिप्पणियों में उद्धृत उदाहरण अकारानुक्रम से दिये हैं। गद्यांश के लिये कोष्ठक () में ग, और टिप्पणी के लिये टि का सकेत दिया है। यति-प्रकरण में उद्धृत और विरुदावली में प्रयुक्त एक-एक चरण के पद्यों को भी अकारानुक्रम में सम्मिलित किया गया है।

चतुर्थ परिशिष्ट—

क (१) मात्रिक छन्दो के लक्षण एव नाम-भेद—प्रारम्भ में सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची और सकेत देकर वृत्तमोक्तिक के अनुसार छन्द-नाम और उसके टगणादि में लक्षण एव प्रतिचरण की मात्रायें दी हैं। पश्चात् सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची के २२ ग्रन्थों के साथ छन्द नाम और लक्षणों की तुलना की गई है। जिन-जिन ग्रन्थों में वृत्तमोक्तिक-लक्षण-सम्मत छन्द का वही नाम है तो उन ग्रन्थों के अंक दे दिये हैं और लक्षण यही होते हुये भी नाम यदि पृथक् है तो वह नाम-भेद देकर

उन-उन ग्रन्थों के अक्षर लगा दिये हैं। ग्रन्थ-विस्तार-भय से यहाँ पर ग्रन्थों के नाम न देकर उनके अक्षर दिये हैं।

क (२) गाथादि छन्द-भेदों के लक्षण एवं नामभेद—इसमें गाथा, स्कन्धक, दोहा, रोला, रसिका, काव्य और षटपद नामक छन्दों के प्रस्तार सख्या-क्रम से लक्षण, छन्द-नाम और नामभेद दिये हैं। इन छन्दों के प्रस्तारभेद कुछ ही ग्रन्थों में प्राप्त हैं, समग्र ग्रन्थों में नहीं हैं, इसलिये अक्षरों का प्रयोग न करके ग्रन्थनाम-शीर्षक से ही दिये हैं।

ख वर्णिक-छन्दों के लक्षण एवं नामभेद—इसमें वर्णिक-सम, प्रकीर्णक, दण्डक, अद्वयसम, विषम और वेंतालिय-छन्दों के वृत्तमीतिक के अनुसार छन्द-नाम और लक्षण दिये हैं। लक्षण मगणादिगणों के संक्षिप्त रूप 'ग य र स त, ज भ न ल ग' रूप में दिये हैं। पश्चात् सन्दर्भ-ग्रन्थों के अक्षर, नामभेद और अक्षर दिये हैं। यह प्रणालिका 'क १ मानिक-छन्दों के लक्षण एवं नामभेद' के अनुसार ही है।

केवल २६५ वर्णिक सम-छन्दों में से ६१ छन्द ही ऐसे हैं जिनके कि नाम-भेद प्राप्त नहीं है। एक ही छन्द के एक से लेकर आठ तक नामभेद प्राप्त होते हैं। नामभेदों की तुलना से यह स्पष्ट है कि इसका प्रयोग कितना व्यापक था। ऐसा प्रतीत होता है कि नाम निर्वाचन के लिये छन्द शास्त्रियों के सम्मुख कोई निश्चित परिपाटी नहीं थी, वे स्वेच्छा से छन्दों का नाम-निर्वाचन कर सकते थे, ग्रन्थया इतने नामभेद प्राप्त नहीं होते।

ग छन्दों के लक्षण एवं प्रस्तार-सख्या—इसमें वृत्तमीतिक में प्रयुक्त एकाक्षर से पञ्चविंशक्षर तक के सम-वर्णिक छन्दों के क्रमशः नाम देकर 'स, १' गुरु-लघुरूप में लक्षण दिये हैं पश्चात् उसकी प्रस्तारसख्या दिखाई है कि यह भेद प्रस्तारसख्या की दृष्टि से कौन सा है। मैंने यथासाध्य समग्र छन्दों की प्रस्तार-सख्या देने का प्रयत्न किया है, फिर भी कतिपय छन्द ऐसे हैं जिनकी प्रस्तार-सख्या प्राप्त नहीं हुई है। तज्ज्ञों से निवेदन है कि इसकी पूर्ति करने का वे प्रयत्न करें।

प्रकीर्णक, दण्डक, अद्यसम और विषम छन्दों के नाम और लक्षण 'स, १' प्रणालिका से ही दिये हैं।

पञ्चम परिशिष्ट—

इस परिशिष्ट में जिन छन्दों का वृत्तमीतिक में उल्लेख नहीं है और जो सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची के २१ ग्रन्थों में प्रयुक्त हैं उन छन्दों को भी छन्द शास्त्रविषयक

जिज्ञासुओं के लिये प्रस्तार-संख्या के क्रम से दिये हैं। प्रारंभ में प्रस्तार-संख्या, छन्द-नाम, लक्षण और सन्दर्भग्रन्थ के अंक, नामभेद तथा अंक दिये हैं। यह पद्धति 'क. (१) मात्रिक-छन्दो के लक्षण एवं नामभेद' के अनुसार ही है।

इसमें अक्षरानुक्रम से इतने विशिष्ट छन्द प्राप्त हैं :—

४ अक्षर	१२	छन्द	१६ अक्षर	३६	छन्द
५	"	२७	"	१७	"
६	"	५५	"	१८	"
७	"	१२०	"	१९	"
८	"	८६	"	२०	"
९	"	५७	"	२१	"
१०	"	६८	"	२२	"
११	"	१०३	"	२३	"
१२	"	११२	"	२४	"
१३	"	६०	"	२५	"
१४	"	७७	"	२६	"
१५	"	३८	"		

इस प्रकार वर्णिक-सम के ११३६, प्रकीर्णक वृत्त २४, दण्डक-वृत्त ६६ तथा अर्धसमवृत्त १५२ अर्थात् कुल १३८१ अवशिष्ट प्राप्त-छन्दों का इसमें संकलन है।

विषमवृत्त के भी सैकड़ों छन्द और वृत्तालीय के प्रस्तार-भेद से अनेकों भेद प्राप्त होते हैं। जिनका संकलन इस संग्रह में समयाभाव से नहीं किया जा सका।

षष्ठ परिशिष्ट—

वृत्तमोक्तिक में गाथा, स्कन्धक, दोहा, रोला, रसिका, काव्य और पद्य के प्रस्तार-भेद से भेदों के नाम एवं संक्षेप में लक्षण प्राप्त हैं किन्तु इनके उदाहरण प्राप्त नहीं हैं। ग्रन्थान्तरो में भी इनके उदाहरण प्राप्त नहीं हैं। केवल कविदर्पण में गाथा-भेदों के उदाहरण और वाग्वल्लभ में गाथा और दोहा-भेदों के लक्षणयुक्त उदाहरण प्राप्त होते हैं। अतः गाथा और दोहा-भेदों के स्वरूप का दिग्दर्शन कराने के लिये इस परिशिष्ट में वाग्वल्लभ से गाथा और दोहा-भेदों के लक्षण-युक्त उदाहरण उद्धृत किये हैं।

सप्तम परिशिष्ट—

इस परिशिष्ट में ग्रन्थकार चन्द्रशेखर भट्ट ने वृत्तमीक्षितक में छन्दों के प्रत्युदाहरण देते हुए जिन ग्रन्थकारों और ग्रन्थों के उद्धरण दिये हैं उनकी अकारानुक्रम से सूची दी है। कतिपय स्थलों पर 'अन्ये च' 'यथा वा' कह कर जो उद्धरण दिये हैं, उनका भी मैंने इस सूची में उल्लेख कर दिया है।

अष्टम परिशिष्ट—

इस परिशिष्ट में मैंने अनेक सूचीपत्रों के आधार से 'छन्द' शास्त्र के ग्रन्थ और उनकी टीकायें' शीर्षक से ग्रन्थों की अकारानुक्रम से विस्तृत सूची दी है। इसमें ग्रन्थ का नाम, उसकी टीका, ग्रन्थकार एवं टीकाकार का नाम तथा यह ग्रन्थ कहा प्राप्त है या किस सूची में इसका उल्लेख है, संकेत किया है। शोध करने पर और भी अनेको ग्रन्थ प्राप्त हो सकते हैं। मैं समझता हूँ कि छन्द शास्त्रियों और शोधकर्त्ताओं के लिये यह सूची अवश्य ही उपादेय एवं मार्ग दर्शक सिद्ध होगी।

प्रति-परिचय

मूल ग्रन्थ का सम्पादन पाच प्रतियों के आधार से किया गया है जिसमें तीन प्रतियाँ प्रथम खण्ड की हैं और दो प्रतियाँ द्वितीय खण्ड की हैं। इन पाँचों प्रतियों का परिचय इस प्रकार है—

वृत्तमीक्षितक, प्रथम खण्ड

१ क सज्ञक, आदर्श प्रति

अनूप सस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर सख्या ५५२७

माप—२६ ५ cm × ११ ३ cm

पत्र सख्या ४१, पक्ति ७, अक्षर ३६

लेखन-काल १८वीं शती का पूर्वार्द्ध

शुद्धलेखन, शुद्धतम प्रति

२ ख सज्ञक प्रति

अनूप सस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर सख्या ५५२८

माप—२५ २ cm × १० ६ cm

पत्र सख्या २३, पक्ति १०, अक्षर ४२

लेखन काल १६६० के लगभग, संभवतः लालमणि मिश्र की ही लिखी हुई है।

अपूर्ण प्रति। शुद्धलेखन, शुद्धतम प्रति

३ ग मञ्जक प्रति

रोजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर सख्या ५८३

माप—२५ ८ cm × १० ७ cm

पत्र सख्या १० , पक्ति १८ , अक्षर ५६

लेखनकाल अनुमानत १८वीं शती का प्रथम चरण, लिपि सुन्दर है किन्तु अशुद्ध है।

इसमें रचना और लेखन-प्रशस्ति नहीं है।

वृत्तमौक्तिक द्वितीय खण्ड

१ क सजक. आदर्श प्रति

अनूप सस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर सख्या ५५३०

माप—२५ २ cm × १० ६ cm

पत्र सख्या १६६ ; पक्ति ७ , अक्षर ३६

लेखनकाल १६६० वि० लेखक—लालमणि मिश्र

लेखनस्थान—भर्गलपुर (आगरा)

शुद्धतम एवं सशोधित प्रति है। लेखन प्रशस्ति इस प्रकार है—

“॥सवत् १६६० समये श्रावणवदि ११ रवी शुभदिने लिखित शुभस्थाने भर्गलपुरनगरे लालमणिमिश्रेण । शुभम् । इदं ग्रन्थसख्या ३८५० ।”

२ ख सजक प्रति

अनूप सस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर सख्या ५५२६

माप २६ ५ cm × ११ ३ cm

पत्रसख्या १६१, पक्ति ७, अक्षर ३६

लेखनकाल १८वीं शती का पूर्वार्द्ध

शुद्धलेखन, शुद्धप्रति लेखन प्रशस्ति नहीं है।

दोनों टीकाओं की अद्यावधि एक-एक ही प्रति प्राप्त होने से उन्हीं के आधार से सम्पादन किया है। दोनों टीकाओं की प्रतियों का परिचय इस प्रकार है—

वृत्तमौक्तिक वार्त्तिककुण्डरोद्धार

टी० लक्ष्मीनाथ भट्ट

अनूप सस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर सख्या ५५३३

माप २७ ५ cm × ११ ५ cm

पत्र सख्या ३८, पक्ति ७; अक्षर ३७
लेखनकाल १६६० वि० लेखक - लालमनि मिश्र
लेखन स्थान - अगंसपुर (आगरा)
शुद्ध एवं सशोधित पूर्णप्रति एकमात्र प्रति
लेखन-प्रशस्ति इस प्रकार है —

“॥ सधत् १६६० समये भाद्रपदशुदि ३ भौमे शुभदिने अगंसपुरस्थाने लिखित
लालमनिमिश्रेण । शुभ भूयात् । श्रीविष्णवे नम ॥”

वृत्तभौवितकद्वगंमयोध

टी० महोपाध्याय मेघविजय

महोपाध्याय विनयसागर सग्रह, कोटा, पोथी २३, पत्र ११

माप २५.५ cm X १०.७ cm

पत्रसख्या १०, पक्ति २१; अक्षर ६०

लेखनकाल १८वीं शती टीकाकार - महोपाध्याय मेघविजय द्वारा
स्वयं लिखित शुद्ध एवं सशोधित एकमात्र प्रति पत्र २-५ तक
प्रस्तार चित्र

सम्पादन-शैली

सम्पादन में प्रथम खण्ड की तीनों प्रतियों को क, ख, ग और द्वितीय-खण्ड की दोनों प्रतियों को क, ख, सज्ञा प्रदान की है ।

प्रथमखण्ड की ख सज्ञक प्रति और द्वितीयखण्ड की क सज्ञक प्रति एक ही व्यक्ति की लिखी हुई और प्रथमखण्ड की क सज्ञक और द्वितीयखण्ड की ख सज्ञक प्रति सम्भवत इसी प्रति की प्रतिलिपि हो, क्योंकि दोनों में अतीव सामीप्य होने से विशेष पाठ-भेद प्राप्त नहीं होते ।

दोनों खण्डों की क सज्ञक प्रति को मैंने आदर्श माना है और अन्य प्रतियों के पाठभेदों को मैंने टिप्पणों में पाठान्तर-रूप में दिये हैं । कतिपय स्थलों पर प्रतिलिपिकार के भ्रम से जो अश या पक्तियाँ क सज्ञक प्रति में छूट गई हैं वे ख सज्ञक प्रति से मूल में सम्मिलित कर दी गई हैं और कतिपय शब्द ख प्रति के शुद्ध होने से उसे मूल में रखकर क प्रति के पाठ को पाठान्तर में दे दिया है ।

अथर्वार ने प्रत्युदाहरणों और नामभेदों में जिन ग्रंथों का उल्लेख किया है उन ग्रंथों के स्थान, सर्गसख्या और पद्यसख्या टिप्पणों में दी गई हैं और जिन प्रत्यु

दाहरणों के कही-कही पूर्णपद्य न देकर एक-एक चरण-मात्र दिये हैं उन्हें पूर्णरूप में टिप्पणी में दे दिये हैं ।

इन्द्रवज्रा उपेन्द्रवज्रा-उपजाति, वशस्थविला-इन्द्रवशा-उपजाति और शालिनी-वातोर्मी-उपजाति के ग्रथकार ने १४-१४ भेद स्वीकार किये हैं किन्तु उनके नाम, लक्षण एवं उदाहरण न होने से मैंने टिप्पणी में इन्द्रवज्रा-उपेन्द्रवज्रा-उपजाति और वशस्थविला-इन्द्रवशा-उपजाति के १४-१४ भेदों के नाम, लक्षण एवं उदाहरण अन्य ग्रंथों के आधार से दिये हैं तथा शालिनी-वातोर्मी-उपजाति एवं रघोद्धता-स्वागता-उपजाति के टिप्पणी में लक्षणमात्र दिये हैं क्योंकि अन्य ग्रंथों में इनके नाम और उदाहरण पूर्णरूप में मुझे प्राप्त नहीं हुये ।

कतिपय स्थलों पर लक्षण स्पष्ट न होने से एवं उदाहरण न होने से मैंने टिप्पणी में लक्षणों को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है, साथ ही अन्य ग्रंथों से प्राप्त उदाहरण भी दिये हैं । गायादि छंदभेदों के लक्षण और नाम टिप्पणी में देकर इन भेदों को स्पष्ट करने का प्रयत्न किया है ।

प्रतियो में छन्द के प्रारम्भ में कही 'अथ' का प्रयोग है और कही नहीं है, कही नाम के साथ 'वृत्त' या 'छन्द' का प्रयोग है और कही नहीं है तथा छन्द के अंत में केवल नाम ही प्राप्त है, किन्तु मैंने ग्रंथ में एकरूपता रखने के लिये प्रारम्भ में 'अथ' और छन्द का नाम और अंत में 'इति' और छन्द नाम का सर्वत्र प्रयोग किया है । इसी प्रकार श्लोक-संख्या में भी एकरूपता की दृष्टि से मैंने प्रत्येक प्रकरण की श्लोक-संख्या पूषक् पूषक् दी है ।

गोविन्दविद्यदाबली के पाठान्तर मैंने राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर ग्रन्थाक २३४८० पत्र ८ पवित्र १६. अक्षर ४१ की प्रति से दिये हैं ।

पाठान्तर, टिप्पणियाँ और परिशिष्टों द्वारा मैंने यथासम्भव इस ग्रन्थ को श्रेष्ठ बनाने का प्रयास किया है किन्तु मैं इसमें कहाँ तक सफल हुआ हूँ इसका निर्णय तो एतद्विषय के विद्वान् ही कर सकेंगे ।

आभार प्रदर्शन—

राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर के सम्मान्य सञ्चालक, मनीषी पद्मश्री मुनि श्री जिनविजयजी पुरातत्त्वाचार्य ने इस ग्रन्थ के सम्पादन का कार्य प्रदान कर मुझे जो साहित्य-साधना का अवसर दिया तथा प्रतिष्ठान के उप-संचालक, सम्माननीय श्री गोपालनारायणजी बहुरा, एम ए ने जिस आत्मीयता

के साथ समय-समय पर परामर्श एवं सहयोग देकर कृतार्थ किया, उसके लिये मैं इन दोनों का हार्दिक अभिनन्दन करता हूँ ।

श्री अग्रचन्दजी नाहटा के सत्प्रयत्न से अनूप सस्कृत लायब्रेरी, बीकानेर के सरक्षक बीकानेर के महाराजा एवं व्यवस्थापको ने वृत्तमौक्तिक की प्रतिया सम्पादनार्थ प्रदान की; अतः मैं इन सब का आभारी हूँ ।

पो० श्री कण्ठमणिशास्त्री कांकरोली, श्री गंगाधरजी द्विवेदी जयपुर, श्री भवरलालजी नाहटा कलकत्ता, डॉ० श्री नारायणसिंहजी भाटी एम ए, पी एच डी, सचालक राजस्थानी शोध संस्थान जोधपुर, श्रीबद्रीप्रसाद पच्चोली एम ए, एवं इण्डिया ऑफिस लायब्रेरी, लन्दन, के व्यवस्थापक आदि ने परामर्श देकर एवं ग्रन्थों की आद्यन्त-प्रशस्तिया भेज कर जो सहयोग प्रदान किया है उसके लिये मैं इन सब का उपकृत हूँ ।

मेरे परममित्र श्री लक्ष्मीनारायणजी गोस्वामी का अभिनन्दन मैं किन शब्दों में करूँ ! इस ग्रन्थ की शुद्ध एवं श्रेष्ठ बनाने का सारा श्रेय ही इन्हीं को है ।

साधना प्रेस जोधपुर के सचालक श्री हरिप्रसादजी पारोक भी ग्रन्थवाद के पात्र हैं जिन्होंने इसके मुद्रण में पूर्ण सहयोग दिया है ।

अन्त में, मैं अपने पूज्य गुरुदेव श्रीजिनमणिसागरसूरिजी महाराज का अत्यन्त ही ऋणी हूँ कि जिनकी कृपा और आशीर्वाद से आज मैं इस ग्रन्थ का सम्पादन करने योग्य बन सका ।

श्रीमती सन्तोषकुमारी जैन (मेरी धर्मपत्नी) के सहयोग और प्रेरणा से मैं इस कार्य में सलग्न रहा इसके लिये उसको भी साधुवाद ।

आनन्द निवास, जोधपुर

—म विनयसागर

२४-५-६५

परिभाषिक-शब्द

शब्द	गण, कला-मात्रा	पृष्ठ- संख्या	पद्य- संख्या
अधिप	१५३	४	३४
अमृत	५१५	४	३५
अहि	१५१५	३	१६
अहिगण	५१११	३	२०
आनन्द	५१	३	२४
इन्द्रासन	१५५	३	२०
ऐरावत	१५५	४	३४
कङ्कण	५	८४	१७६
कनक	५	३	२६
कनक	१	४	३७
कमल	५१५१	३	१६
कमल	११५	३	२६
कर	११५	३	२६
करतल	११५	३	२१
करताल	५१	३	२४
कर्ण	५५	३	२१
कर्णपर्याय	५५	३	३०
कर्णसमान	५५	३	२८
कलि	५५११	३	१६
काहुत	१	४	३८
कुच-पर्याय	१५१	४	३१
कुञ्जर-पर्याय	१५५	४	३४
कुण्डलर	५	३	२६
कुम्भीगुप्त	५५	६५	६४
कुमुद	१५११	३	२०
॥	१	६०	२०४
केपर	५	४	३७
ग	५		
गज	अनुमात्रा	४	३६

शब्द	गण, कला-मात्रा	पृष्ठ- संख्या	पद्य- संख्या
गजपति	१५१	४	३१
गजामरण	११५	३	२६
गण्ड	५११	४	३२
गन्ध	१	४	३८
गरुड पर्याय	५१५	४	३५
गुरुगुप्त	५५	३	२८
गोपाल	१५१	४	३१
घग्ग	११५११	३	१६
घाप	१११५	३	२०
घामर	५	३	२६
चित्त	५१२५	३५८	
चिर	१५	३	२३
चिरालय	१५	३	२३
चिह्न	१५	३	२३
चूतमाता	१५	३	२३
जगण	१५१	४	३६
जङ्गलपुगल	५११	४	३२
जोहल	५१५	४	३५
डगण	पञ्चमात्रा	२	१५
डगण	पञ्चमात्रा	२	१५
डगण	षट्मात्रा	२	१५
डगण	त्रिमात्रा	२	१५
णगण	द्विमात्रा	२	१५
तगण	५५१	४	३६
ताटकु	५	४	३७
ताण्डव	१११	३	२५
तात	५११	४	३२
तारापति	१५५	४	३४
तात	५१	३	२४

शब्द	गण, वर्ग-मात्रा	पृष्ठ- संख्या	पद्य- संख्या	शब्द	गण, वर्ग-मात्रा	पृष्ठ- संख्या	पद्य- संख्या
तुम्बुल	१५	१६१	५२६	प्रहरणनामानि	पञ्चमात्रा	४	३६
तुरङ्गम	चतुर्मात्रा	४	३६	फणि	५१	३	२६
तूर्य-वर्षादि	५१	३	२४	बाण	११११	४	३३
तोमर	१५	३	२३	बाण	१	४	३८
वण्ड	१	४	३७	बलभद्र	५११	४	३२
बहन	५११	४	३२	बाहु	११५	३	२९
द्विजवाति	११११	४	३३	भगण	५११	४	४०
द्विजवर	११११	४	३३	भामिनी-वर्षादि	१११	३	२५
धर्म	५११११	३	१९	भाष	१११	३	२५
घात	१११५१	३	१९	भुजङ्ग	५१५	४	३५
ध्रुव	१५१११	३	१९	भुजवण्ड	११५	३	२९
ध्वज	१५	३	२३	भुजाभरण	११५	३	२९
मगण	१११	४	४०	मूपति	१५१	४	३१
मदोद-वर्षादि	१५१	४	३१	मयण	५५५	४	३९
मायक	१५१	४	३१	मनोहर	५५	३	२८
मारी	१११	३	२५	मानस	५	३	२६
निर्याण	५१	३	३४	मुग्धाभरण	५	३	२६
नूपुर	५	३	२६	मुनिगण	११११	४४	६३
पक्षी	५१५	३३	६१	मृगेन्द्र	५१५	४	३५
पक्षिराज	५१५	५४	६४	मेघ	१५५	४	३४
पञ्चशर	११११	४	३३	मेघ	१	४	३७
पटह	५१	३	२४	यस	५१५	४	३५
पत्र	१५	३	२३	यगण	१५५	४	३९
पद्मवर्षादि	५११	४	३२	रगण	५१५	४	३९
पदाति	चतुर्मात्रा	४	३६	रज्जु	१५१	४	३१
पयोधर	१५१	३	२१	रति	५११	४	३२
परम	११	३	२७	रत्न	११५	३	२९
पवन	१५	३	२३	रघ	चतुर्मात्रा	४	३६
पथन	१५१	४	३१	रबन	१५५	४	३४
पाणि	११५	३	२९	रस	१५	३	२३
पापगण	१११११	३	२०	रस	१	४	३८
पितामह	५११	४	३२	रसना	५	३	२६
पुरुष	१	४	३८	रसलम्ब	५५	३	२८
प्रहरण	११५	३	२९	रसिक	५५	३	२८

शब्द	गण, कला-मात्रा	पृष्ठ- सख्या	पद्य- सख्या
रूप		१	४
ल, लघु		१	
लहलहित		५५	३
वक्र		५	३
वज्र		११५	३
वलय		१५	३
वलय		५	३
वसुचरण		५११	३
वास		१५	३
विभ्र		११११	३
विशद		५१५	४
विहप		५१५	४
वीणा		५१५	४
शक्र		५११५	३
शङ्ख		१	४
शब्द		१	४
शर		१	४
शशि		११५५	३
शालि		११११११	३

शब्द	गण, कला मात्रा	पृष्ठ- सख्या	पद्य- सख्या
शिखर		११११	४
शेखर		११५१	३
शेष		११११५	३
सगण		११५	४
सागर		५१	३
सात्विकभाव		१११	३
सुनरेन्द्र		१५५	४
सुप्रिय		११	३
सुमलिनम्बित		१५५	३
सुरतलता		५५	३
सुरपति		५१	३
सूर्य		१५५१	३
सूर्य		५१५	३
हर		५५५	३
हस्त		११५	३
हस्तायुध-पर्याय		११५	३
हार		५	४
हारायलि		५	३
होद		५५१	३

॥ दशाग्रिगणेशाय नमः ॥ श्रीगुरुभ्यो नमः ॥ यस्यान्यावुचिरतनकिमपितस्तथां वि
दोक्तमकथं तयचराचरात्मकमिदवाकितं सायत्नमयज्जिह्वसुदंतभावि
यतोयस्मिन्पुनस्तीयोतया द्विव्यकीर्णतदात्मनसामानन्दकन्दमः ॥ राखि
भनेदधीकरकलितपर्वधियेभमीतस्त्वहःशस्त्रेचदपिचरितुनासिपुन
तोयाया राध श्रीपितृचरणसंवांसुमतिनातदीयाभिर्वाग्निर्विरचितपयगंभ्यत
हमः ॥ श्रीलक्ष्मीताय नमः ॥ यत्पुनर्न तापदोवृजय श्रीचंद्रोदयरकरविभानुतेहत्त
क्तिकम् ॥ श्रीसिगलनागा कन्दचरणस्वनोदधि ॥ पद्मप्रसादादभवन्म
मोष्यदेवतेभ ॥ श्रीब्रह्मा प्रकृतकेचिद्विभिनियुक्ततत्त्वनाक्यमेवत

1-15-44
11/11

चैत्रिभा
विमली
का
४९॥

केरुविरमाभापिवलत्तपशैपव्याचैत्रविरवत्येकि॥३३॥ इत्यालकारिकव
केचुडमणिलदव्याचैत्रपरमाचापसिकललौपनिपइहस्याणवकाणधारधील
हमीनापमहात्मजकविशोरवरश्रीचम्पूखरभहविरचिते श्रीट्टमंगिके वीपदु
लवति किं गात्रारम्भप्रथमापरिलेद॥ ॥ श्रीरस्तु॥ ॥ एवमगमक॥ ॥ १६

मात्रापरि
वेद

॥५॥

[illegible]

नैऋत्ये
 री १
 १९१७
 १

योनिधिवोपायप्रापतिष्ठातरम् ॥ श्रीमन्मन्त्रनाथसकलागमपारागकेश ॥ ७ ॥
 त्रिदिवसुतनयेविनयोपपत्तेश्रीचन्द्रमसरकैलाकिलतत्प्रबध ॥ विह्वलनायभु
 विन्दु चैवसार्वभौमिष्ठातरम् ॥ श्रीजीवनदेवते ॥ १ ॥ श्रीचतुर्भुजैकमिदं
 स्तनायेनशरितयज्ञात्तुष्टीयदाचन्द्रार्कजीचतुर्भुजैवोक्त्या ॥ १ ॥ इत्यो
 लङ्कारिक चक्रचन्द्राणिष्ठादवग्रस्तपरिचयार्थसकलाभिनिपुणस्यार्त्तव
 नाकर्णधारशीनस्तीनादभावात्तज्जगत्तुष्टीयदाचन्द्रमसरकैलाकिलतत्प्रबध
 श्रीचतुर्भुजैवोक्त्या ॥ १ ॥ श्रीचतुर्भुजैवोक्त्या ॥ १ ॥ श्रीचतुर्भुजैवोक्त्या ॥ १ ॥
 यवार्त्तिकक्षीयवेष ॥ यवसरखा ॥ १ ॥ यवसरखा ॥ १ ॥ यवसरखा ॥ १ ॥

विमलज
 हिंक
 राम ४
 १९१७

मनुष्य तत्पुत्र सायकरी, मोरानेर से प्राप्त द्वितीय सृष्टि व सृजक प्रति के प्रथम पत्र धीरे
छ सृजक प्रति के अंतिम पत्र की प्रतिष्ठाति

श्रीगणेशाय नमः प्रणम्य तद्गणेशं विश्वरूपिणं श्रीशंखश्रीचक्रोत्तरकोटवर्तिकेष्टनेमो
क्तिके। ॥ अतः समाप्तमाला च नष्टादिशरिदुष्काया श्रीलक्ष्मीनाय भद्रं नृपकरी क्रियते ततो
॥ २॥ अथानन्तं ह्यन्यसिद्धिस्तथैतौतु कार्यवमात्राणां मुद्रित्पुत्रोत्तमत्रयोदशविभक्तिभिः
उपहृतप्रस्तापयोगिद्विभक्तपत्रिणिलिलिताष्टसप्तष्टीष्टम्। प्रथमप्रत्ययस्वरूपेन त्रको
रमाह। सिद्धिनेके कनाररादिनि। दद्यात्पूर्वसंगात्सुखरूपिणमप्यतः भयतः ॥ अथैकमुक्तं
शेषस्थित्यान्वितं पदयोक्तम् ॥ १॥ उक्तं ते श्रुतं योकेमीत्रादिष्ट विज्ञानीयात्तस्मिन्नालिनि
तिरेपद्विमुगादुत्तरदद्यात् ॥ तत्र गालं चारुपण्यं चारुस्वभयतः उपर्यधेयं तर्था ॥ अथपञ्च।

राम

॥ एकमात्रादिनिवृत्तकामा, बलारुद्रतत्रमात्रिमाशप्रकरीप्रस्तोतृद्वितीयमैकार
॥ १॥ ॥ श्रीम ॥ १११ ॥ ॥ समाप्तश्चायं वृत्तमौलिकवार्तिके दुष्करोद्धारः ॥ ॥ शुभमस्तु ॥ ॥
गाराजाय नमः ॥ ॥ संवत् १९८० समेव भारपर्वद्विदि ३ भौमसुभरिने प्रगीतप्रत्यनेति
विस्तमानमनिमिषेण ॥ ॥ शुभं भवत ॥ ॥ श्रीविश्वेनमः ॥ ॥ ॥

इतीमर्ण हनमा विन छे दे. ये

राम
इ
शरक मत

कविशेखर-भट्टश्रीचन्द्रशेखरप्रणीतं

वृत्तमौक्तिकम्

प्रथमः खण्डः



प्रथमं गाथाप्रकरणम्

[मङ्गलाचरणम्]

युष्मान् पातु चिरन्तन किमपि तत्सत्य चिदेवात्मक,
प्रोन यत्र चराचरात्मकमिदं वाक्चेतसोर्यत्परम् ।
यस्माद् विस्वमुदेति भाति च यतो यस्मिन्पुनर्लीयते,
यद्वित्तं श्रुतिशान्तदान्तमनसामानन्दकन्दं मह ॥ १ ॥
अमुष्मिन् मे दर्वी करकलितदुर्बोधविषमे,
मतिं ह्यन्दशास्त्रे यदपि चरितं नास्ति विपुला ।
तथाप्याराध्यश्रीपितृचरणसेवा^१ सुमतिना,
तदीयाभिर्वाग्मिविरचितपथे गम्यत इह ॥ २ ॥
श्रीलक्ष्मीनाथभट्टस्य पितुर्नत्वा पदाम्बुजम् ।
श्रीचन्द्रशेखरकविस्तनुते वृत्तमौक्तिकम् ॥ ३ ॥
श्रीमत्पिङ्गलनामोक्तचन्द्रशास्त्रमहोदधि ।
पितृप्रसादादभवन् मम गोप्यदसन्निभ^२ ॥ ४ ॥
अलसा प्राकृते केचिद् भवन्ति सुधिय इवचित् ।
तत्सन्तोषाय भवतु धार्तिकं वृत्तमौक्तिकम् ॥ ५ ॥
यो नानाविधमात्राप्रस्तारात् सागरं प्राप्य ।
गरुडमवञ्चयदतुलं स हि नागपिङ्गलो जयति ॥ ६ ॥

गुरुतृप्तिरिति

दीर्घं समुक्तपरं पादान्तो वा विसर्गं विन्दुयुत ।
स गुरुरङ्को द्विकलो लघुरन्य शुद्ध एककल ॥ ७ ॥

यथा -

गौरीवर भस्मविभूषिताङ्ग, इन्दुप्रभाभासितभालदेशम् ।
गङ्गातरङ्गावलिभासमानमूर्द्धान्मानन्दितमानमामि ॥ ८ ॥
रेफहकारध्यञ्जनसयोगात् पूर्वसस्थितस्य भवेत् ।
वंकल्पिक लघुत्व वर्णस्योदाहरन्ति विद्वांस ॥ ९ ॥

यथा -

जयति प्रदीपितकामो मम मानसहृदनिमज्जनाश्रित्यम् ।
यस्य गलगरलदम्भान् मालिन्यमन्तरस्थित^१ लग्नम् ॥ १० ॥

विकल्पस्थिति

यद्यपि दीर्घं वर्णं जिह्वा लघु पठति भवति सोऽपि लघु ।
वर्णास्त्वरित पठितान् द्वित्रानेक विजानीत^२ ॥ ११ ॥

यथा -

अरे रे* ! कथय वार्त्ता दूति तस्यातिचित्रा
मम सविधमुपेव्यत्येष कृष्ण कदा नु ।
इति चटु कथयन्त्या राधिकाया तदानी
मति-डगमगदेह केशवोप्याऽऽविरासीत् ॥ १२ ॥

काव्यलक्षणैः निष्ठकलवेदनम्

कनकतुला यद्वक्षहि सहते परमाणुवैपम्यम् ।
श्रवणतुला नहि तद्वच्छब्दोभङ्गेन वैपम्यम् ॥ १३ ॥
लक्षणविकल काव्य पण्डितससत्सु यो बुध पठति ।
हस्ताग्रलग्नखङ्गं कृत्त क्षीर्णं न जानाति ॥ १४ ॥

मात्राणां गणव्यवस्थाप्रस्तारश्च

रसबाणवेददहने पक्षाभ्या चैव सम्मिता मात्रा ।
येषां ते प्रस्ताराष्ट-ठ-ड-ढ जेत्येव सज्ञप्ता प्रोक्ता ॥ १५ ॥
ट-त्रयोदशभेदा स्युरष्टौ भेदोष्ठकारजा ।
इत्य भेदा पञ्च टस्य त्रयो ढावन्तिमस्य तु^३ ॥ १६ ॥
गुरो भ्रातृस्याधो^४ लघुकमवधेहि प्रथमत-

स्तत रोपान् वर्णानुपरितननुत्स्यान् घटयत^५ ।

१ कल मेतस्थितं । अत स्थितमिति पाठ समीचीन (सं०) । २ ग विजानीयात् ।

३ ग प्रथम शब्द इत्यं स्मृतम् । ४. ग पूर्वस्याधो । ५ ख ग विरचय ।

*अन 'रे रे' इति सप्तपठनीये स्त ।

स्थले शून्ये तद्वद् घटय* गुरुमेवेति नियमो,

लघुं सर्वो वर्णो भवति पदमध्ये च शिमुका २ ॥ १७ ॥

मात्राप्रस्तारे खलु यावद्भिः स्यात् कलापूर्ति ।

तावन्तो गुरुलघवो देया इत्यनियम प्रोक्त ॥ १८ ॥

मात्रागणानां नामानि

हर-शशि-सूर्या शक्र शेषोप्यहि-कमल-घातृ-कलि-चन्द्रा ।

ध्रुव-धर्म-शालिसज्ञा पद्मात्राणा त्रयोदशैव भिदा ३ ॥ १९ ॥

इन्द्रासिनमथ सूर्यश्चापो हीरश्च शेखर कुसुमम् ।

अहिगण-पापगणाविति पञ्चकलस्यैव सज्ञा स्युः ॥ २० ॥

गुरुयुग्म किल कर्णो गुर्वन्त करतलो भवति ।

गुरुमध्यम पयोधर इति विज्ञेयस्तृतीयोऽपि ॥ २१ ॥

आदिगुरुर्वसुचरणो विप्रो लघुभिश्चतुर्भिरेव स्यात् ।

इति हि चतुष्कलमेदा पञ्चैव भवन्ति पिङ्गलेनोक्ता ॥ २२ ॥

ध्वज-चिह्न-चिर-चिरालय-तोमर-यत्राणि चूतमाले च ।

रस-यास-पवन-जलया भेदास्त्रिकलस्य लघुकमालम्ब्य ॥ २३ ॥

करताल-पटह-ताला सुरपतिरानन्दतूर्यपर्याया ।

निर्याण-सागरावपि गुर्वादित्रिकलनामानि ॥ २४ ॥

सात्त्विकभावास्ताण्डवनारीणा भामिनीना च ।

नामानि यानि लोके त्रिलघुगणस्यैव तानि जानोत ॥ २५ ॥

नूपुर-रसना चामर फणि मुग्धाभरण-वनक-कुण्डलकम् ।

वक्रो मानस-वल्लभो हारावलि रिति गुरोश्च नामानि ॥ २६ ॥

सुप्रिय-परमो कथितो द्विलघोरिति नाम सशेषात् ।

अथ कथयामि चतुष्कलनामान्यन्यानि पिङ्गलोक्तानि* ॥ २७ ॥

सुरतलता गुरुयुगल वर्णसमानेन रसिक-रसलानी ।

सम्मित-सुमति-मनोहर-सहस्रहिताना च नाम्नापि ॥ २८ ॥

वर-पाणि-यमल-हस्ता प्रहरण भुजदण्ड-बाहु-रत्नानि ।

यस्य ४ गजभुजयोरेष्यभरण स्याच्चतुष्कले सज्ञा ॥ २९ ॥

वर्णपर्याया शब्दा गुरुयुगस्य वाचका ।

हस्तामुघस्य पर्याया गुर्वन्तस्यैव बोधका ॥ ३० ॥

१ ग. पुत्र रचय । २ ख नियम । ३ ग भेद । ४ ख ग नामानि ।

५. ग चर्यो ।

* टि. द्रष्टव्य-दाहन्तेवमम् । (परि० १, गाथा २१-३२) ।

भूपति-नायरु-गजपति-नरेन्द्र-कुचवाचका शब्दा ।
 गोपाल-रज्जु-पवना मध्यगुरोर्बोधका^१ ज्ञेया ॥ ३१ ॥
 दहन-पितामह-ताता पदपर्यायश्च गण्ड^२-वलभद्वी ।
 जङ्घायुगल रतिरित्यादिगुरौ स्युश्चतुष्कले सज्ञा ॥ ३२ ॥
 द्विज-जाति-शिखर-विप्रा परमोपायेन^३ पञ्चशर-वाणौ ।
 द्विजवर इत्यपि कथिता^४ लघुकचतुष्कले गणे सज्ञा ॥ ३३ ॥
 सुनरेन्द्राधिप-कुञ्जरपर्याया रदन-मैघयोश्चापि ।
 ऐरावत तारापतिरित्यादि लघोश्च पञ्चमात्रस्य ॥ ३४ ॥
 वीणा-विराट्-मृगेन्द्रामृत-विहगा गरुडपर्याया ।
 जोहल^५-यक्ष-भुजङ्गा मध्यलघो पञ्चमात्रस्य ॥ ३५ ॥
 विविधप्रहरणनामा पञ्चकल पिङ्गलेनोक्त ।
 गज-रथ-तुरङ्गम-पदातिसज्जक स्यान्वचतुर्मात्र ॥ ३६ ॥
 ताटङ्क-हार-नूपुर-केयूरकमिति भवन्ति गुरुभेदा ।
 शर-मेरुदण्ड कनक लघुभेदा इति विजानीत ॥ ३७ ॥
 शब्द रूप-रस गन्ध काहलं पुष्प शङ्ख-वाणनामभि ।
 सत्प्रबन्ध इह वृत्तमौक्तिके ज्ञायता लघुकनाम पण्डिता ॥ ३८ ॥

वर्णवृत्तानां गणसज्ञा

मस्तिगुरुरादिलघुको भगणो रगणश्च लघुमध्य ।
 अन्तगुरु सस्तगणोऽप्यन्तर्लघुमध्यगुरुको ज ॥ ३९ ॥
 आदिगुरुर्भगणोऽपि च तगणस्त्रिलघुर्मत सद्भि ।
 इति पिङ्गलप्रकाशित गणसज्ञा वर्णवृत्तानाम् ॥ ४० ॥

गणदेवता

पृथ्वी-जल शिशि-पवना गगन द्युमणीदु-पन्नगान् क्रमत^१ ।
 इत्यष्टौ ऋणदेवान् पिङ्गलकथितान् विजानीत ॥ ४१ ॥

गणानां मंत्रा

भगणस्त्रिलघू^२ मित्रे भृत्यौ भयगणौ स्मृतौ ।
 उदासीनौ जतगणावरी रसगणौ मतौ ॥ ४२ ॥

गणदेवानां कलाफलम्

भगणो वृद्धिकार्यं भगण सुखसम्पदो धत्ते ।
 रगणो वदाति रमण 'सगणोदेशाद् विवासयति'^३ ॥ ४३ ॥

१ ग बोधिका । २ ग गण्ड । ३ य परमोपासनम् । ४ य नास्ति पाठः । ५ य जोहल । ६ य ग पृथिवीजलशिशिलिकासा गगनं द्यमण्डलं पन्नगाणां नाम । ७ ग त्रिगुह । ८ य भगणो रसमादेषात्येव ।

*तगण दून्य^१ तनुते जगणो रुजमादधात्येव ।
 भगणो मङ्गलदायी नगण सकल फल दिशति* ॥ ४४ ॥
 इति पिङ्गलेन कथितो गणदैवाना फलाफलविचार ।
 ग्रन्थस्यादौ कविना बोद्धव्य सर्वथा यत्नान् ॥ ४५ ॥
 मित्रद्वयेन ऋद्धि स्थिरकार्यं भृत्ययोर्भवति ।
 मित्रोदास्ताभ्यामपि कार्याभावश्च बन्धोऽपि ॥ ४६ ॥
 मित्रारिभ्या वान्धवपीडा कार्यं च मित्रभृत्याभ्याम् ।
 भृत्याभ्यामुग्रो^२ऽमुख^३-मुदास्तभृत्यो धन हरत् ॥ ४७ ॥
 भृत्योदासीनाभ्या भृत्यारिभ्या^४ च हाक्रन्द^५ ।
 अल्प कार्यमुदास्तान् मित्रात् सजायतेप्युदास्ताभ्याम् ॥ ४८ ॥
 सम्पत्सम्बद्धं न भवत्युदास्तश्च न वैरिण^६ कुरुत ।
 शत्रोर्मित्रान् फल स्त्रीनाश शत्रुभृत्ययोर्भवति ॥ ४९ ॥
 शत्रुदासीनाभ्या धननाश सर्वथा भवति ।
 शत्रुभ्या नायकमृतिरिति फलमफल गणद्वये कथितम् ॥ ५० ॥

मात्रोद्दिष्टम्

वद्यात् पूर्वयुगाङ्कान् लघोरुपरि गत्य तुभयत् ।
 अत्याङ्क गुरुशीर्षस्थितान् विनुम्पेदथाङ्काश्च ॥ ५१ ॥
 उर्वरितैश्च^७ तथाङ्कमात्रोद्दिष्ट विजानीयात् ।

मात्रानष्टम्

अथ मात्राणा नष्ट यददृष्ट^८ पृच्छयते रूपम् ॥ ५२ ॥
 यत्कलकप्रस्तारो लघव कार्याश्च तावन्त ।
 दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कान् पृष्ठाङ्क^९ लोपयेदन्त्ये ॥ ५३ ॥
 उर्वरितोदरितानामङ्काना यत्र^{१०} सम्भ्यते भाग ।
 परमात्रा च गृहीत्वा स एव गुरुतामुपागच्छेत् ॥ ५४ ॥

वर्णोद्दिष्टम्

द्विगुणानङ्कान् दत्त्वा वर्णोपरि लघुक्षिर स्थितानङ्कान् ।
 एकेन पूरयित्वा वर्णोद्दिष्ट विजानीत ॥ ५५ ॥

* * ग प्रती - त्याजयति सोऽपि देवः, तगण शून्यफल च विदधति ।

भगल भगणो दायी, नगणात् सर्व समीचीनम् ।

१ स शून्य फलन विदधति । २ स ग मघे । ३ क सप्त । ४ ग भृत्या
 दिभ्या । ५ ग महाक्रन्द । ६ ग वैरिणा । ७ य उर्वरितैश्च । ८ ग विद्वि
 यत्र । ९ ग प्रश्नाङ्क । १० ग नास्ति पाठ ।

वर्णनष्टम्

नष्टे पृष्ठे भाग कर्तव्य पृष्ठसख्याया ।
समभागे ल' कुर्यात् विपमे दत्वेकमानयेद् गुरुकम् ॥ ५६ ॥

वर्णमेह

कोष्ठानेकाधिकान् वर्णं * कुर्यादाद्यन्तयो पुन ।
एकाङ्कमुपरिस्थाङ्कद्वयैरन्यात् (न?) प्रपूरयेत् ॥ ५७ ॥

वर्णमेहरय सर्वगुर्वादिगणवेदकम् * ।

प्रस्तारसख्याज्ञानञ्च फल तस्योच्यते बुधं ॥ ५८ ॥

वर्णपताका

दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कान् पूर्वाङ्कयोजयेदपरान् ।
अङ्क पूर्व यो वं भूतस्तत पक्तिसञ्चार ॥ ५९ ॥

अङ्का पूर्व भूता येन तमङ्क भरणे * त्यजेत् ।

अङ्कश्च पूर्व य सिद्धस्तमङ्क नैव साधयेत् ॥ ६० ॥

प्रस्तारसरयया चैवमङ्कविस्तारकल्पना ।

पताका सर्वगुर्वादिवेदिकेय विशिष्य तु ॥ ६१ ॥

मात्रामेह

एकाधिककोष्ठानां द्वे द्वे पक्ती समे कार्ये ।
तासामन्तिमकोष्ठेष्वेकाङ्क पूर्वभागे तु ॥ ६२ ॥

एकाङ्कमयुक्पक्ते समपङ्क्ते पूर्वयुग्माङ्कम् ।
दद्यादादिमकोष्ठे यावत् पङ्क्ति प्रपूर्ति स्यात् ॥ ६३ ॥

द्याद्याङ्केन तदीयं शीर्षाङ्कैर्वमिभागस्थै ।

उपरिस्थितेन कोष्ठ विपमाया पूरयेत् पक्ती ॥ ६४ ॥

समपक्ती कोष्ठानां पूरणमाद्याङ्कमपहाय ।

उपरिस्थाङ्कैस्तदुपरिस्थैर्वमिस्थितैरङ्कै ॥ ६५ ॥

मात्रामेहरय प्रोक्त पूर्वोक्तफलभागिति ।

मात्रापताका

अथ मात्रापताकाऽपि कथ्यते कवितुष्टये ॥ ६६ ॥

दत्वोद्दिष्टवदङ्कान् वामावर्तेन लोपयेदन्त्ये * ।

अवनिष्टो वं योऽङ्कस्ततो भवेत् * पक्तिसञ्चार ॥ ६७ ॥

एवंकाङ्कस्य लोपे तु ज्ञानमेकगुरोर्भवेत् ।

द्वित्र्यादीनां विलोपे तु पक्तिद्वित्र्यादिव्योधिनी ॥ ६८ ॥

वृत्तद्वयस्यगुणलघुज्ञानम्

पृष्ठे वर्णच्छन्दसि कृत्वा वर्णास्तथा मात्राः ।
वर्णाङ्गेन कलाया लोपे गुरवोऽवशिष्यन्ते^१ ॥ ६६ ॥

वर्णमर्कटी

मर्कटी लिख्यते वर्णप्रस्तारस्यातिदुर्गमा ।
कोष्ठमक्षरसंख्यातं^२ पंक्ती^३ रचय पट् तथा ॥ ७० ॥
प्रथमायामाद्यादीन् दद्यादङ्कांश्च सर्वकोष्ठेषु ।
अपरायां तु द्विगुणान् अक्षरसंज्ञेषु तेष्वेव ॥ ७१ ॥
आदिपंक्तिस्थितैरङ्कैर्विभाव्यापरपंक्तिगान् ।
अङ्कांश्चतुर्यपंक्तिस्थकोष्ठकानपि पूरयेत् ॥ ७२ ॥
^४पूरयेत् पष्ठ-पञ्चम्याव(म)र्द्धस्तुर्याङ्कसम्मवैः ।
एकीकृत्य चतुर्यस्य-पञ्चमस्थाङ्कान् सुधीः ॥ ७३ ॥
कुर्यात् पंक्तितृतीयस्थकोष्ठकानपि पूरितान् ।
वर्णानां मर्कटी सेय पिङ्गलेन प्रकाशिता ॥ ७४ ॥
वृत्तं भेदो मात्रा वर्णा गुरवस्तथा च लघवोऽपि ।
प्रस्तारस्य^५ पठेते ज्ञायन्ते पक्षितः श्रमतः ॥ ७५ ॥

मात्रामर्कटी

कोष्ठान् मात्रासम्मितान् पक्षितपट्कं^६,
कुर्यान् मात्रामर्कटीसिद्धिहेतोः ।
तेषु द्वयादोनादिपंक्ति(का)वयाङ्का-
स्त्यक्त्वाऽऽद्याङ्कं सर्वकोष्ठेषु दद्यात् ॥ ७६ ॥
दद्यादङ्कान् पूर्वयुग्माङ्कतुल्या-
स्त्यक्त्वाऽऽद्याङ्कं पक्षपंक्तावयाऽपि ।
पूर्वस्थाङ्कैर्भावयित्वा ततस्तान्,
कुर्यात् पूर्वाग्नेत्रपक्षितस्थकोष्ठान् ॥ ७७ ॥
प्रथमे द्वितीयमङ्कं द्वितीयकोष्ठे च पञ्चमाङ्कमपि ।
हत्वा बाणद्विगुणं तद् द्विगुणं नेत्रतुर्ययोर्देधात् ॥ ७८ ॥
एकीकृत्य तथाङ्कान् पञ्चमपंक्तिस्थितान् पूर्वान् ।
दत्वा तथैकमङ्कं कुर्यात्तेनैव पञ्चमं^७ पूर्णम्^८ ॥ ७९ ॥

१. ग. विशिष्यते । २. ग. सख्यातं । ३. ग. पक्षित । ४. ग. पूरयत्पष्ठपञ्चम्या वेधैः
५. ग. प्रस्ताररच । ६. ग. पट्के । ७. ग. पञ्चम्या । ८. ग. पूर्णम् ।

त्यक्त्वा पञ्चममङ्कं पूर्वोक्तानेव भावमापाद्य ।

दत्त्वा तथैवमङ्कं पष्ठ^१ कोष्ठं प्रपूरयेद्^२ विद्वान् ॥ ८० ॥

कृत्वेव्य चाङ्कानां पञ्चमपक्तिस्थितानां च ।

त्यक्त्वा पञ्चदशाङ्कं हित्वैकं पूरयेन् मुनेः^३ कोष्ठम् ॥ ८१ ॥

एवं निरवधिमात्राप्रस्तारेष्वङ्कबाहुल्यात् ।

^४प्रकृतानुपयोगवशात् कृतोऽङ्कविस्तारः ॥ ८२ ॥

एव पञ्चमपक्तिं कृत्वा पूर्णां च प्रथममेकाङ्कम्^५ ।

दत्त्वा पञ्चमपक्तिस्थितैरथाङ्कैः प्रपूरयेत् पष्ठीम् ॥ ८३ ॥

एकोकृत्य तथाङ्कान् पञ्चम-पष्ठस्थितान् विद्वान् ।

कुर्याच्चतुर्थपक्तिं पूर्णां नागाज्ञया तूर्णम् ॥ ८४ ॥

वृत्त प्रभेदो मात्रादच वर्णा लघुगुरू तथा ।

एते पटपङ्क्तिनः पूर्णप्रस्तारस्य विमान्ति वै ॥ ८५ ॥

नष्टाक्षितम्

नष्टोद्विष्टं यद्वन् मेरुद्वितयं तथा पताका च ।

मकटिकाऽपि तद्वत् कौतुकहेतुनिबध्यते तज्ज्ञः ॥ ८६ ॥

प्रस्तारसंख्या

पट्विंशतिः सप्तशतानि चैव,

तथा सहस्राण्यपि सप्तपक्तिः ।

लक्षानि^६ दृग्बेदमुत्तममितानि,

कोटयस्तथा रामनिशाकरैः स्युः ॥ ८७ ॥

११४२१७७२६ समस्तप्रस्तारपिण्डसंख्या ।

एकाक्षरादिपङ्क्तिर्विंशतिवर्णान्तवर्णवृत्तानाम् ।

उक्ताः समस्तसंख्या लक्ष्यन्ते जातयश्चार्याः^७ ॥ ८८ ॥

गायामेदाः

मुनिवाणकला गायत्रिवाण्यपि तथा भवेत् ।

वेदवाणवला गाहू^८ पष्ट्यो(यु)द्गाया भवेत् पुनः ॥ ८९ ॥

गाहिनी स्याद् द्विपष्ट्या तु मात्राणां सिंहिनी तथा ।

चतुःपष्ट्या चलाना तु स्कन्धक कथ्यते बुधैः ॥ ९० ॥

१. ग. मास्ति पाठः । २. ग. वे प्रपूरये । ३. ग. मास्ति पाठः । ४. प. प्रकृतोपयोग-
वशात् । ५. ग. एतेकम् । ६. ख. य. लक्षानि पञ्चाक्षराव्याप्तसंख्या, हीनानि कोटयो मय-
वर्णिताः । ७. य. न लक्षा जातयश्चार्याः । ८. ख. चार्याः । ९. ग. बुधा ।

१ गायत्री

प्रथमे द्वादशमात्रा मात्रा ह्यष्टादश द्वितीये तु^१ ।
 दहने द्वादशमात्रास्तुर्ये दशपञ्च सम्प्रोक्ता ॥ ६१ ॥
 इति गायत्री सङ्गणमायासामान्यलक्षण चाऽयम् ।
 पठे जो वा विप्रो विपमे न हि जो गणाश्च गुर्वन्ता ॥ ६२ ॥
 सप्त हरय सहारा पठे रज्जुद्विजोऽपि वा भवति ।
 चरमदले लघु पठ विपमे पवनस्तु नैव स्यात् ॥ ६३ ॥

पद्या-

गोकुलहारी मानसहारी वृन्दावनान्तसञ्चारी ।
 यमुनाकुञ्जविहारी गिरिवरवारी हरि पायात् ॥ ६४ ॥
 एकस्मात् कुलीना द्वाभ्यामप्यभिसारिका भवति ।
 नायकहीना रण्डा वेश्या बहुनायका भवति ॥ ६५ ॥

गायामा, पञ्चविंशतिभेदा

सर्वस्या गायामा मुनिवाणसमाख्यया कला ज्ञेया ।
 प्रथमे दले खरामैरपरेऽपि दलेऽक्षरपक्षाभ्याम्^२ ॥ ६६ ॥
 नखमुनिपरिमितहारा वल्लिमिता यत्र लघव स्युः ।
 सा गायामा गायत्री प्रथमा खान्यक्षरा लक्ष्मी ॥ ६७ ॥^३
 एकैकगुरुविद्योनाल्लघुद्वयस्यापि सयोगात् ।
 अस्या भवन्ति भेदा क्षरपक्षाभ्या मिता एव ॥ ६८ ॥^४
 मुनिपक्षाभ्या हारा लघवो दहनैश्च स प्रथम ।
 विधुवाणैर्लघव स्युर्गुरवो दहनैश्च सोऽन्त्य स्यात् ॥ ६९ ॥
 त्रिशद्वर्णा लक्ष्मी वदते सर्वपण्डिता कवयः ।
 नश्यत्येकैको यद्वर्णं कथयामि तानि नामानि ॥ १०० ॥^५
 लक्ष्मोऽर्द्धद्विद्वि^६ लज्जा विद्या क्षमा च वै देही^७ ।
 गौरी घात्री चूर्णा^८ छाया कान्तिमंहामाया ॥ १०१ ॥
 कीर्ति सिद्धिर्मानि^९ रामा विश्वा च वासिता च मता ।
 शोभा हरिणी चक्री कुररी^{१०} हृषी च सारसी च मता ॥ १०२ ॥

१. ग ऽपि । २. ग प्रथमदले च खरामैरपरेऽपि दलेऽक्षरपक्षाभ्या मिता एव । स क्षरपक्षाभ्याम् ।
 ३-४ ग पञ्चद्वय ६७ ६८ नास्ति । ५. ख ग. पञ्चमक १०० नास्ति । ६ ग वृद्धि ।
 ७ स ग देही च । ८ ग चूर्णा । ९ ग मानिनी । १० ग. कुररी ।

इति भेदाभिधाः पित्रा रचितायामतिस्फुटम् ।

उदाहरणमञ्जया बोध्यतासामुदाहृतिः* ॥ १०३ ॥

इति गायः

२. विगाया

यस्या द्वितीयचरणे मात्राः शरभूमिभिः प्रोक्ताः ।

सैव विगाया तुर्ये चरणे वसुभूमिसंख्यकाश्च कलाः ॥ १०४ ॥

* टिप्पणी—भट्टलक्ष्मीनाथविरचिताया पिङ्गलप्रदीपाख्याया प्राकृतपिङ्गलवृत्ती गायकछन्दसः सप्तविंशतिभेदाः—

१ लक्ष्मीः	२७ गुरु	३ लघु	३० अक्षर
२ ऋद्धिः	२६ गुरु	५ लघु	३१ अक्षर
३ बुद्धिः	२५ गुरु	७ लघु	३२ अक्षर
४ लज्जा	२४ गुरु	९ लघु	३३ अक्षर
५ विद्या	२३ गुरु	११ लघु	३४ अक्षर
६ क्षमा	२२ गुरु	१३ लघु	३५ अक्षर
७ देही	२१ गुरु	१५ लघु	३६ अक्षर
८ गीरी	२० गुरु	१७ लघु	३७ अक्षर
९ घात्री	१९ गुरु	१९ लघु	३८ अक्षर
१० चूला	१८ गुरु	२१ लघु	३९ अक्षर
११ छाया	१७ गुरु	२३ लघु	४० अक्षर
१२ कान्ति	१६ गुरु	२५ लघु	४१ अक्षर
१३ महामाया	१५ गुरु	२७ लघु	४२ अक्षर
१४ कीर्तिः	१४ गुरु	२९ लघु	४३ अक्षर
१५ सिद्धिः	१३ गुरु	३१ लघु	४४ अक्षर
१६ मानिनी	१२ गुरु	३३ लघु	४५ अक्षर
१७ रासा	११ गुरु	३५ लघु	४६ अक्षर
१८ गाहिनी	१० गुरु	३७ लघु	४७ अक्षर
१९ विरवा	९ गुरु	३९ लघु	४८ अक्षर
२० वासिता	८ गुरु	४१ लघु	४९ अक्षर
२१ क्षोभा	७ गुरु	४३ लघु	५० अक्षर
२२ हरिणी	६ गुरु	४५ लघु	५१ अक्षर
२३ चन्नी	५ गुरु	४७ लघु	५२ अक्षर
२४ चारली	४ गुरु	४९ लघु	५३ अक्षर
२५ कुररी	३ गुरु	५१ लघु	५४ अक्षर
२६ तिही	२ गुरु	५३ लघु	५५ अक्षर
२७ हसी	१ गुरु	५५ लघु	५६ अक्षर

ग्रन्थेऽस्मिन् तिही-गाहिनीति द्वौ भेदौ नैव स्वीयौ ।

यथा-

स्तरणितनूजातीरे चीरेऽपहृतेऽपि वीरेण ।
हिमनीरे रमणीनामकुटिलधारेव मनसि संजज्ञे ॥ १०५ ॥

इति विगाथा

१. गाहू^१

पूर्वाद्धे च पराद्धे सप्ताधिकविंशतिर्मात्राः ।
अर्द्धद्वयेऽपि यस्याः षष्ठो लः सैव गाहू स्यात् ॥ १०६ ॥

यथा-

अतिचदुलचन्द्रिकाञ्चितचञ्चलनवकुन्तलं किमपि ।
राधावितनुज^२बाधासाधारणमौषधं जयति ॥ १०७ ॥

यथा वा -

कलशीगलदधिचोरं रदजितहीरं स्फुरच्चौरम् ।
राधावदमचकोर नन्दकिशोरं नमस्यामः ॥ १०८ ॥

इति गाहू ।

४. उद्गाथा

यस्या द्वितीयचरणे चतुर्थचरणे भवन्ति वै मात्राः ।
यसुविधुसस्यायुक्ता. सोद्गाथा पिङ्गलेन सम्प्रोक्ता ॥ १०९ ॥

यथा -

उपवनमध्यादभिनवविलोकनासकराधिकावृष्णी ।
अन्योन्यगमनवेलाभपेक्षमाणी^३ न जग्मतुः क्वापि ॥ ११० ॥

इत्युद्गाथा

१. गाहिनी

यस्या द्वितीयचरणे यमुविधुमात्रा भवन्ति त्रयो तु ।
पादे विंशतिमात्रा सा गाहिनिका तु सिहिनी विपरीता ॥ १११ ॥

यथा-

स जयति मुरलीवादनकेलिकलाभिविमोहयन् गोपीः ।

वृन्दावनान्तभूमौ रासरसाक्षिप्तविबुध^१विधिरुद्रमुखः ॥ ११२ ॥

इति सिंहिनी ।

६. सिंहिनी

यस्या द्वितीयचरणे विशतिमात्रा मनोहराकारगुणाः ।

सा सिंहिनी प्रदिष्टा नागाधिपपिङ्गलेन सम्प्रीक्ता ॥ ११३ ॥

यथा-

यन्देऽरविन्दनयनं वृन्दारकवृन्दवन्दितपदाम्भोजम् ।

नन्दानन्दनिधानं नवजलधररुचिरमन्दिरारमणम् ॥ ११४ ॥

इति सिंहिनी

७. अथ स्कन्धकम्

यस्य द्वितीयचरणे चतुर्यं चरणे च विंशतिमात्राः स्युः ।

स स्कन्धक^२ इति कथितो यस्मिन्नष्टौ गणाश्चतुर्मात्राभिः ॥ ११५ ॥

यथा-

राधामुखाब्जतरणिः तरणिः संसारसागरोत्तरणविधौ ।

स जयति निजमक्तानां कामितदाता दुरन्तशक्तिसहायः ॥ ११६ ॥

स्कन्धकस्याऽष्टाविंशतिभेदाः

नन्दो^३ भद्रः शिवः शेषः सारङ्ग-ब्रह्म-धारणाः^४ ।

वरुणो मदनी नीलः तालाङ्कः शैलरः शरः ॥ ११७ ॥

गगनं शरभो विमतिः क्षीरं नगरं नरः स्निग्धः ।

स्नेहलु-मदकल-भूषाः^५ शुद्धः कुम्भः सरिः कलशः ॥ ११८ ॥

शशीति सप्तका भेदाः स्कन्धकस्य प्रकीर्तिताः ।

यमुपशमितास्ते स्युः गुरुह्मासाल्लवृद्धितः ॥ ११९ ॥

त्रिंशद्गुरवो यस्मिन् वेदा लघवश्च स प्रथमः ।

यसुधारलघवो यस्मिन् गुणत्रयं चैव सोऽन्त्यः स्यात् ॥ १२० ॥

१. ग. विबुध इति पाठो नास्ति । २. ग. स्कन्धं । ३. ग. नन्दो । ४. ग. धारिणः ।

५. ग. स्नेहलुकमलभूषाणाः ।

यमुपक्षपरिमितानामुदाहृति स्वप्रबन्धे तु ।

एतेषामतिरुचिरा पितृचरणे स्फुटतया प्रोक्ता ॥ १२१ ॥*

इति स्कन्धकम् ।

इति धीवृत्तमौक्तिके वातिके^१ प्रथम गायप्रकरण समाप्तम् ।

१ ग नास्ति पाठ ।

*टिप्पणी—भट्टलक्ष्मीनाथविरचिताया विज्ञानप्रदीपाख्याया प्राकृतपिङ्गलवृत्तौ गुरुह्रास-लघु-
वृद्धधनुपातेन स्कन्धकस्माष्टाविंशतिभेदा प्रवक्ष्यतास्तथा—

१ नाद	३० गुरु	४ लघु	३४ अक्षर
२ भद्र	२६ गुरु	६ लघु	३५ अक्षर
३ दोष	२८ गुरु	८ लघु	३६ अक्षर
४ सारङ्ग	२७ गुरु	१० लघु	३७ अक्षर
५ शिव	२६ गुरु	१२ लघु	३८ अक्षर
६ ब्रह्मा	२५ गुरु	१४ लघु	३९ अक्षर
७ वारण	२४ गुरु	१६ लघु	४० अक्षर
८ वरुण	२३ गुरु	१८ लघु	४१ अक्षर
९ नील	२२ गुरु	२० लघु	४२ अक्षर
१० मदन	२१ गुरु	२२ लघु	४३ अक्षर
११ तालाङ्क	२० गुरु	२४ लघु	४४ अक्षर
१२ दोतर	१९ गुरु	२६ लघु	४५ अक्षर
१३ वार	१८ गुरु	२८ लघु	४६ अक्षर
१४ गगनम्	१७ गुरु	३० लघु	४७ अक्षर
१५ वारम	१६ गुरु	३२ लघु	४८ अक्षर
१६ विमति	१५ गुरु	३४ लघु	४९ अक्षर
१७ क्षीरम	१४ गुरु	३६ लघु	५० अक्षर
१८ नगरम्	१३ गुरु	३८ लघु	५१ अक्षर
१९ नर	१२ गुरु	४० लघु	५२ अक्षर
२० स्निग्ध	११ गुरु	४२ लघु	५३ अक्षर
२१ स्नेह	१० गुरु	४४ लघु	५४ अक्षर
२२ मदवज्र	९ गुरु	४६ लघु	५५ अक्षर
२३ भूपाल	८ गुरु	४८ लघु	५६ अक्षर
२४ गुह्य	७ गुरु	५० लघु	५७ अक्षर
२५ सरित्	६ गुरु	५२ लघु	५८ अक्षर
२६ बुध्म	५ गुरु	५४ लघु	५९ अक्षर
२७ शरणा	४ गुरु	५६ लघु	६० अक्षर
२८ धमी	३ गुरु	५८ लघु	६१ अक्षर

द्वितीयं पदपद-प्रकरणम्

१. दोहा

त्रिदशकला विषमे रचय सम एकादश धेहि ।
दोहालक्षणमेतदिति कविभिः कथितमवेहि ॥ १ ॥
ढगण-ढगण-ढगणाः क्रमत इति विषमे च पतन्ति ।
समपादान्ते चैककलमिति दोहां कथयन्ति ॥ २ ॥

यथा—

गोरीविचित्रतनुशकल मस्तकराजितगङ्गा ।
जय धूपभध्वज पुरमयन महादेव नि सङ्गाः ॥ ३ ॥
दोहायाः त्रयोविंशतिभेदाः
यस्याः प्रथमतृतीये पादे जगणा भवन्ति सा कर्तुः^१ ।
स्वपञ्चगृहीतस्त्रीषद्^२ दोहादोषं प्रकाशयति ॥ ४ ॥
भ्रमर-भ्रामर-शरभाः श्येनो मण्डूक^३-मर्कटो करभः ।
मदकल-ययोधर-चलाः नरो मराल^४-स्तथा त्रिकलः ॥ ५ ॥
वानर-कच्छो मत्स्यः शार्ङ्गलोप्यहिवरो व्याघ्रः ।
उन्मुर-शुनक-बिडालाः सर्पश्चैते प्रभेदाः स्युः ॥ ६ ॥
रसपक्षवर्णयुक्तो द्वाविंशतिगुरुक-वेदलघुसहितः ।
कथितः प्रथमो भेदः गुरुगूढः सर्वलघुकोऽन्यः ॥ ७ ॥^५
एकैकस्य गुरोर्लोपाल्लघुद्वयविवृद्धितः ।
दोहाभेदस्समुद्दिष्टास्त्रयोविंशतिसंख्यकाः ॥ ८ ॥
स्फुटतरमेते भेदाः समुदाहृत्य प्रदर्शिताः पित्रा ।
स्वनिर्वाधे^६ कविवर्वस्तत एव विलोकनीयास्ते ॥ ९ ॥
इति दोहा ।

१. ग. कर्तुः । २. ग. ताषद् । ३. ग. मण्डूक । ४. ग. मराल । ५. ग. पञ्चदश १-७. मातुलि ।

*टिप्पणी—अष्टादशमीनामप्रणीते पिङ्गलप्रदीपे गुरुहास-त्रयुषद्वयपुत्रातेन दोहा-द्विपञ्चदशः त्रयोविंशतिभेदानां वर्णनप्रकरणम्—

१ भ्रमरः	२२ गुरु	४ लघु	२६ घटार
२ भ्रामरः	२१ गुरु	६ लघु	२७ घटार
३ शरभः	२० गुरु	८ लघु	२८ घटार

२. रसिका

द्विजवरयुगलमुपनय,

दहनलघुकमिह रचय ।

इति विधिशरभववदन-

चरणमिह कुरु सुवदन ।

इति हि रसिकमनुकलय,

भुजगवर कथितममय ॥ १० ॥

यथा -

जय जय हर वृषगमन,

तरणिदहन विधुनयन ।

नयनदहन जितमदन,

निजशरकृतपुरकदन ।

मम हृदयगतमपनय-

मविनयमधिकमपनय ॥ ११ ॥

४ श्येनः	१६ गुरु	१० लघु	२६ अक्षर
५ मण्डूकः	१८ गुरु	१२ लघु	३० अक्षर
६ मर्कटः	१७ गुरु	१४ लघु	३१ अक्षर
७ करमः	१६ गुरु	१६ लघु	३२ अक्षर
८ नरः	१५ गुरु	१८ लघु	३३ अक्षर
९ मरालः	१४ गुरु	२० लघु	३४ अक्षर
१० मदकलः	१३ गुरु	२२ लघु	३५ अक्षर
११ पयोधरः	१२ गुरु	२४ लघु	३६ अक्षर
१२ षलः	११ गुरु	२६ लघु	३७ अक्षर
१३ शानरः	१० गुरु	२८ लघु	३८ अक्षर
१४ त्रिकलः	९ गुरु	३० लघु	३९ अक्षर
१५ कच्छपः	८ गुरु	३२ लघु	४० अक्षर
१६ मत्स्यः	७ गुरु	३४ लघु	४१ अक्षर
१७ शार्दूलः	६ गुरु	३६ लघु	४२ अक्षर
१८ अहिवरः	५ गुरु	३८ लघु	४३ अक्षर
१९ व्याघ्र	४ गुरु	४० लघु	४४ अक्षर
२० बिडालः	३ गुरु	४२ लघु	४५ अक्षर
२१ शुनकः	२ गुरु	४४ लघु	४६ अक्षर
२२ उन्दुरः	१ गुरु	४६ लघु	४७ अक्षर
२३ सर्प	० गुरु	४८ लघु	४८ अक्षर

रसिकाया भ्रष्टो भेदाः

यस्याश्चतुष्कलद्वयमादौ स्यात् पुनरपि विकलः ।
 एवं पदपदयुक्ता या सौवकच्छा^१ भुजङ्गमप्रोक्ता ॥ १२ ॥
 अत्र लघुयुगवियोगादेर्कैकगुरोश्च संयोगात् ।
 भ्रष्टो भवन्ति भेदाः शेषाः स्पुर्दण्डकन्यायात् ॥ १३ ॥
 रसिका हंसी रेखा तालाङ्का कम्पिनी च गम्भीरा ।
 काशी कलद्राणी इत्यष्टौ भेदनामानि ॥ १४ ॥
 उदाहरणमञ्जयामुदाहृतिरतिस्फुटाः ।^{*}
 एतेषामपि भेदानां द्रष्टव्या कविपण्डितैः^२ ॥ १५ ॥

इति रसिका

३. रोला

या चरणे कलानां चतुरधिकविंशंगदिता,
 सा किल रोला भवति नागकविपिङ्गलकथिता ।
 एकादशकलविरतिरखिलजमचिन्ताहरणा,
 सुललितपदकुलकलितविमलकविकण्ठाभरणा ॥ १६ ॥

यथा-

अरिगणमभितापयति विबुधलोकानुपगच्छति,
 धरणिविवरगतभुजगनिकरमभितापेन चर्चति ।
 सकलदिगीशपुरमभिनिजतापैरभियोजयति,
 भूप कथं प्रतापस्तव^३ कीर्त्ति न शोषयति ॥ १७ ॥

१. ग. यासौ कृच्छा । ख. या सा कच्छी । २. ग. केचित् पण्डितैः । ३. ग. प्रस्तावस्तव ।

* टिप्पणी—मट्टलक्ष्मीनायप्रणीते पिङ्गलप्रदीपे गुरुबुद्धि-समुद्भासानुक्रमेण रसिकाया भ्रष्टो भेदाः—

१ रसिका	६६ लघु	० गुरु	६६ मात्रा
२ हंसी	६४ सधु	१ गुरु	" "
३ रेखा	६२ सधु	२ गुरु	" "
४ तालाङ्किनी	६० सधु	३ गुरु	" "
५ कम्पिनी	५८ सधु	४ गुरु	" "
६ गम्भीरा	५६ सधु	५ गुरु	" "
७ काशी	५४ सधु	६ गुरु	" "
८ कलद्राणी	५२ सधु	७ गुरु	" "

रोसायाः त्रयोदशभेदाः

कुन्दः करतल-मेघी तालाङ्गो रुद्र-कोकिलो कमलम् ।

इन्दुः शम्भुश्चमरो गणेश-शेखी सहस्राक्षः ॥ १८ ॥

त्रयोदशगुरुर्यत्र सप्ततिर्लघवस्तथा ।

स आद्यभेदो^१ विज्ञेयस्सोऽन्त्य एकगुरुर्यतः ॥ १९ ॥

एकैकस्य गुरोर्नाशा^२ लघुद्वयनिवेशतः^३ ।

भेदास्त्रयोदश ज्ञेया रोसायाः^४ कविशेखरैः ॥ २० ॥

त्रयोदशैव भेदानामुदाहृतिरुदीरिता ।

उदाहरणमञ्जुर्या^५ द्रष्टव्या तत एव हि ॥ २१ ॥

इति रोसा ।

४. गन्धानकम्

रचय प्रथमं पदं मुनिविधुवर्णरचितं,

तथा द्वितीयमपि वसुविधुवर्णैर्मकचितम्^१ ।

तथान्यदलमपि यतिगणनियमरहितं,

गन्धानकवृत्तमवधेहि कविपिङ्गलगदितम् ॥ २२ ॥

१. घ. आदिभेदो । २. ग. हस्तात् । ३. ग. विवृद्धितः । ४. ग. रोसायाः ।

५. ग. युतम् ।

* टिप्पणी—भट्टलक्ष्मीनाथप्रणीते पिङ्गलप्रदीपे रोसायाः त्रयोदशभेदानां गुरुहस्त-
लघुवृद्धपञ्चसारेण प्रदर्शनम्—

१ कुन्दः	१३ गुरु	७० लघु	६६ मात्रा
२ करतलः	१२ गुरु	७२ लघु	" "
३ मेघ.	११ गुरु	७४ लघु	" "
४ तालाङ्ग	१० गुरु	७६ लघु	" "
५ कालरुद्रः	९ गुरु	७८ लघु	" "
६ कोकिलः	८ गुरु	८० लघु	" "
७ कमलम्	७ गुरु	८२ लघु	" "
८ इन्दुः	६ गुरु	८४ लघु	" "
९ शम्भुः	५ गुरु	८६ लघु	" "
१० चामरः	४ गुरु	८८ लघु	" "
११ गणेशवरः	३ गुरु	९० लघु	" "
१२ सहस्राक्षः	२ गुरु	९२ लघु	" "
१३ शेखः	१ गुरु	९४ लघु	" "

यथा-

लक्ष्मण दिशि दिशि विलसति धनमनु क्षम्पा,
 इयमपि चञ्चलतरङ्गचलजलरुहपम्पा ।
 दयितोदन्त सम्प्रति^१ कथमपि न ह्यवगत,
 सोढ शक्यो विरह कथमिह हि मयकानुगत^२ ॥ २३ ॥

यथा वा-

गर्जति जलधर परिनृत्यति शिखिनिवह,
 नोपवनीमवधूय वहति दक्षिणगन्धवह ।
 दूरे दयित कथय सखि^३ किमिह हि^४ करवै,
 प्रज्वालये दहन कटिति^५ शलभमनुकरवै ॥ २४ ॥

इति गन्धानकम् ।

५ चौपैया छ व

चौपैया छन्द कविकुलचन्द्र कथयति पिङ्गलनाग,
 कुरु सप्तचतुष्कलगणमिह पुष्कलमधिगुरुचरणविभाग ।
 इह दिग्बसुसूर्ये पण्डितवर्यैर्येतिरिह भात्रास्त्रिशत्,
 यस्मिन् किल^१ कथिते कविजनमथिते राजति नृपवरसत् ॥ २५ ॥
 या विशत्यधिकशतैर्मात्राणामेकपादेयु ।
 सा चौपैया न्यस्यादशीत्यधिकशतचतुष्टयरुसाका ॥ २६ ॥

यथा-

चेत स्मरमहित कमलासहित दारितदारुणकस,
 हृतधेनुकदानवभिच्छ्रामानवमृपिजनमानसहसम् ।
 यमुनावरतीरे तरलसमीरे कारितगोपीरास,
 भवबाधाहरण राधारमण कुन्दकुसुमसमहासम् ॥
 प्रजजबकुलपाल लालितवाल वादितमृदुरववश,^१
 रोचनयुतभाल धृतवनमाल शोभिततरलवतसम् ।
 दितिजब्रजकाल वादितताल कृतसुरमुनिगणशस,
 रुचिकलिततमाल जितधनजाल भासितयादयवशम् ॥
 सरसीरुहनयन जगतामयन कण्ठतलस्थितहार,
 धृतगोपमुवेप कुञ्चितकेश स्मितजितनयधनसारम् ।

१ ग दयितोदन्तपिङ्गली । २ स ग म स ह न मि ह कुर्वन् सरणं दारणमनुगत । ३ ग
 भारित परः । ४ स ग भटिति । ५ ग कल । ६ ग मृदुतरवः ।

जितनयनचकोरं नन्दकिशोर गोपीमानसधोरं,
 कृतराधाधारं सञ्जनतारं दितिसुतनशकठोरम् ॥
 नवकलितकदम्बं जगदवलम्ब सेवितयमुनातीरं,
 नन्दितसुरवृन्दं जगदानन्द गोपीजनहृतचीरम् ।
 धृतधरणीवलय करुणानिलय दन्तविनिर्जितहीरं,
 भवसागरपारं भुवनागारं नन्दसुत यदुवीरम् ॥ २७ ॥

इति चोपेया

६. घत्ता

पिङ्गलकविकथिता त्रिभुवनविदिता घत्ता द्विरसकला भवति ।
 कुरु सप्तचतुष्कल-मन्त्रात्रकल-त्रिलघुकमेतदपि द्विपदि ॥ २८ ॥
 प्रथम दशसु यतिः स्याद् वसुमात्राभिर्द्वितीयाऽपि ।
 दहनावनिभिः पुनरपि यतिरिह(य)मेकाद्वघत्तायाः ॥ २९ ॥

यथा-

भववाधाहरण राधारमण नन्दकिशोर स्मर हृदय ।
 यमुनायास्तीरे तरलसमीरे कृतमनुराम स्वमनुसर^१ ॥ ३० ॥

इति घत्ता ।

७. घत्तानन्दम्

अहिपतिपिङ्गलकथितमयुतगुणयुतमिह भवति घत्तानन्दम् ।
 यद्येकादशविरतिर्मुनिषु च भवति यतिरधिकजनितानन्दम् ॥ ३१ ॥
 आदौ षट्कलमिह रचय डगणत्रयमिह धेहि ।
 ठगण डगण द्वयमपि घत्तानन्दे धेहि ॥ ३२ ॥

यथा^२-

दितिसुतनिवहगञ्जनमसुखमञ्जनमनुगतजनतापहरणम् ।
 निखिलमानसरञ्जनमतिनिरञ्जनमस्तु किमपि महः शरणम् ॥ ३३ ॥

इति घत्तानन्दम्

८[१] काव्यम्

अथ षट्पदहेतुत्वात् काव्य सम्यङ् निरूप्यते ।
 लक्ष्यलक्षणसयुक्तं प्रोल्लाल^३ सप्रभेदकम् ॥ ३४ ॥

१. ग. समनुसर । २. य. तद्वयथा । ३. ख. ग. प्रोल्लासम् । उत्प्लासस्थाने
 ख. ग. प्रती सर्वत्रापि उत्प्लासं विद्यते ।

टगणमिहादौ कलय जलधिकलत्रयमनु च कुरु ।
 टगण चान्ते रचय दहनयुतविप्र ज कुरु ॥ ३५ ॥
 एकादशकलविरतिरथ दहनविघुभिरपि भवति ।
 काव्य भुजगकविरिति बुधजनसुखकरमनुवदति ॥ ३६ ॥

यथा-

मुकुटविराजितचन्द्र चन्द्रकलोपमतिलकवर,
 तिलकदहनवरनयन नयनजितमदनमनोहर ।
 अमरनिकरकृतमनन मनननिरवधिकरुणाकर,
 करधृतमनुजकपाल विबुधजनतिमिरविभाकर ॥ ३७ ॥

६. चत्वारिंशत्

प्रादौ त्रयस्तुरगास्तदनु त्रिकलो रसस्तथा सुरग ।
 त्रिकलश्चान्ते यस्मिन्तुल्लाल त विजानीयात् ॥ ३८ ॥
 पदपदवृत्त द्वाभ्या वृत्ताभ्या जायते यस्मात् ।
 काव्योत्प्लासौ तस्मान्निरूपितौ वृत्तमौक्तिके स्फुटत ॥ ३९ ॥
 प्रस्तारस्तु द्विधा प्रोक्तो गुरुलघ्वादिभेदत ।
 अत्र लघ्वादिभेदेन प्रस्तारपरिकल्पना ॥ ४० ॥
 चतुरधिका इह चत्वारिंशद् गुरवो भवन्ति काव्येऽस्मिन् ।
 यद् गुरुहीन वृत्तं शक्र तन्नामतो वृत्तम्^१ ॥ ४१ ॥

यथा -

अभिनवजलधरपटलसदृशतर कनकवसनधर,
 परिणतशशधरवदन समरविधिकरणचतुरतर ।
 अविरतवितरणनिपुण सकलरिपुकुलवनकरिवर,
 विदलितगजदलतुरग विगतभय जय जय यदुधर ॥ ४२ ॥

काव्यस्य पञ्चषष्ट्यारिंशद्भेदा

यथा यथाऽस्मिन् वलयो विवर्द्धते,
 तथा तथा नाम विधिविधोयताम् ।
 पठन्तु^२ सम्भु प्रथम ततो बुधा,
 मूर्ध्ना तदन्ते श्रुतियुग्मसम्भवम् ॥ ४३ ॥

आदाय गुरुविहीन शक्र भेदान् बुधा पठत ।
 इन्द्रियवेदगणितान् नागाधिपपिङ्गलप्रोक्तान् ॥ ४४ ॥
 अथ सधुयुग्मविलोपा^१देकैकगुरोर्विवृद्धित क्रमशः ।
 बाणाम्बुधिपरिगणिता भेदा सम्यक् प्रदर्श्यन्ते ॥ ४५ ॥

प्रथा-

शक्र दाम्भु सूर्यो गण्ड स्कन्धस्तथा विजय ।
 तालाङ्क-दर्प-समरा सिंह शेषस्तथोत्तेजा ॥ ४६ ॥
 प्रतिपक्ष परिधर्मो मराल-दण्डो मृगेन्द्रश्च ।
 मकंट-मदनो राष्ट्रो वसन्त-कण्ठो मयूरोऽपि ॥ ४७ ॥
 बन्धो भ्रमरोऽपि तथा भित्तोऽय स्यान्महाराष्ट्र ।
 बलभद्रोऽपि च राजा बलितो रामस्तथा च मन्यान ॥ ४८ ॥
 मोहो बली तत स्यात् सहस्रनेत्रस्तथा बालः ।
 दृप्त शरभो दम्भो दिवसोद्गम्भी तथा च बलिताङ्क ॥ ४९ ॥
 सुरगो हरिणोऽप्यन्धो भृङ्गश्चैते प्रसख्याताः ।
 वास्तुकार्ये ह्यदति बाणाम्बुधिभिर्मिता भेदा ॥ ५० ॥
 पादे यत्पनुरोधात् तृतीयजगणानुरोधाच्च ।
 वेदाङ्कलघुकयुक्तश्चन्द्रगुरुर्यं स आद्य स्यात् ॥ ५१ ॥
 शरवेदमिता भेदा काव्यवृत्तस्य दर्शिता ।
 उदाहरणमञ्जुर्ग्या बोध्यतेपामुदाहृति ॥ ५२ ॥*

इति काव्यम् ।

१ ॥ हाताव ।

टिप्पणी - मट्टलक्ष्मीनामप्रणीते पिङ्गलप्रदीपे काव्यवृत्तस्य गुरुवृद्धि-सधुयुग्मसङ्क्रमेण पञ्च-
 चत्वारिंशद्भेदानां वर्गीकरणम्—

१ शक्र	० गुरु	६६ सधु	६६ अक्षर
२ दाम्भु	१ गुरु	६४ सधु	६५ अक्षर
३ सूर्य	२ गुरु	६२ सधु	६४ अक्षर
४ गण्ड	३ गुरु	६० सधु	६३ अक्षर
५ स्कन्ध	४ गुरु	५८ सधु	६२ अक्षर
६ विजय	५ गुरु	५६ सधु	६१ अक्षर
७ दर्प	६ गुरु	५४ सधु	६० अक्षर
८ तालाङ्क	७ गुरु	५२ सधु	५९ अक्षर
९ समर	८ गुरु	५० सधु	५८ अक्षर
१० सिंह	९ गुरु	४८ सधु	५७ अक्षर

११ शेषः	१० गुरु	७६ लघु	८६ अक्षर
१२ उत्तेजाः	११ गुरु	७४ लघु	८५ अक्षर
१३ प्रतिपक्षः	१२ गुरु	७२ लघु	८४ अक्षर
१४ परिधर्मः	१३ गुरु	७० लघु	८३ अक्षर
१५ मरालः	१४ गुरु	६८ लघु	८२ अक्षर
१६ मृगेन्द्रः	१५ गुरु	६६ लघु	८१ अक्षर
१७ दण्डः	१६ गुरु	६४ लघु	८० अक्षर
१८ मर्कटः	१७ गुरु	६२ लघु	७९ अक्षर
१९ मदनः	१८ गुरु	६० लघु	७८ अक्षर
२० महाराष्ट्रः	१९ गुरु	५८ लघु	७७ अक्षर
२१ वसन्तः	२० गुरु	५६ लघु	७६ अक्षर
२२ वृष्टः	२१ गुरु	५४ लघु	७५ अक्षर
२३ मयूरः	२२ गुरु	५२ लघु	७४ अक्षर
२४ वन्धः	२३ गुरु	५० लघु	७३ अक्षर
२५ अमरः	२४ गुरु	४८ लघु	७२ अक्षर
२६ द्वितीयो महाराष्ट्रः	२५ गुरु	४६ लघु	७१ अक्षर
२७ वलभद्रः	२६ गुरु	४४ लघु	७० अक्षर
२८ राजा	२७ गुरु	४२ लघु	६९ अक्षर
२९ वलितः	२८ गुरु	४० लघु	६८ अक्षर
३० रामः	२९ गुरु	३८ लघु	६७ अक्षर
३१ मन्वानः	३० गुरु	३६ लघु	६६ अक्षर
३२ वली	३१ गुरु	३४ लघु	६५ अक्षर
३३ मोहः	३२ गुरु	३२ लघु	६४ अक्षर
३४ सहस्राक्षः	३३ गुरु	३० लघु	६३ अक्षर
३५ बालः	३४ गुरु	२८ लघु	६२ अक्षर
३६ दुष्टः	३५ गुरु	२६ लघु	६१ अक्षर
३७ धारमः	३६ गुरु	२४ लघु	६० अक्षर
३८ दम्भः	३७ गुरु	२२ लघु	५९ अक्षर
३९ अहः	३८ गुरु	२० लघु	५८ अक्षर
४० उद्दम्भः	३९ गुरु	१८ लघु	५७ अक्षर
४१ वलितारुः	४० गुरु	१६ लघु	५६ अक्षर
४२ गुरङ्गः	४१ गुरु	१४ लघु	५५ अक्षर
४३ हरिणः	४२ गुरु	१२ लघु	५४ अक्षर
४४ अन्धः	४३ गुरु	१० लघु	५३ अक्षर
४५ भृङ्गः	४४ गुरु	८ लघु	५२ अक्षर

१०. पट्पदम्

पट्पदवृत्तं कलय सरसकविपिङ्गलभणितं ,
एकादश इह विरतिरथ च दहनैर्विधुगणितम् ।
पट्कलमादौ तदनु चतुस्तुरग परिसतनु ,
शेषे द्विकल रचय चतुष्पदमेवं सचिनु ॥
उल्लालद्वयमत्र हि भवेदष्टाविंशतिकलयुतम् ।
यदि पञ्चदशे विरतिस्थितं पठनादपि गुणिगणहितम् ॥ ५३ ॥
दहनगणनियमविरहितकाव्यं सोल्लालचरणयुगलेन ।
कथयति पिङ्गलनागः पट्पदवृत्तं मनोहारि ॥ ५४ ॥

पद्या-

जय जय नन्दकुमार भारसुन्दर वरलोचन ,
लोचनजितनवकज कञ्जनिभ्रमय भवमोचन ।
नूतनजलधरनील शीलभूषित गतदूषण ,
दूषणहर धृतभाल भालभूषितवरभूषण ॥
दूषणगणमिह^१ मम निखिलमपि कुरु दूरे नन्दकिशोर ।
तव चरणकमलयुगलमनुदिनमनुसेवे नयनचकोर ॥ ५५ ॥

पट्पदवृत्तस्यैकसप्ततिर्भेदाः ।

वेदयुग्मगुरुन् काव्यादुल्लालाद् रसपक्षकान् ।
आदाय तस्य स्थाने तु लघुद्वयनिवेशतः^२ ॥ ५६ ॥
भेदाः स्युर्भूमिमुनिभिर्गृहीत्वान्त्य तु सर्वलम् ।
आद्यस्तु रविलो विन्दुर्मुनिग सोऽजयः स्मृत ॥ ५७ ॥
विजय-बलि-कर्ण-वीरा वृताल-बृहन्नरी भवर्कः ।
हरि-हर-विधीन्दु-चन्दन-शुभङ्कराः श्वा च सिंहश्च ॥ ५८ ॥
शादूँल-कूर्म-कोकिल-क्षर-कुञ्जर-भदन-मत्स्य-तालाङ्काः ।
शेषः सारङ्गोऽपि च पयोधरः कुन्द-कमले च ॥ ५९ ॥
वारण-जङ्गम-शरभास्तथा बुतीष्टोऽपि दाता च ।
शर-सुशर-समर-सारस-शारद-भद-भदकरा मेरुः ॥ ६० ॥
सिद्धिर्बुद्धिः करतल-कमलाकर-धवल-मानस-ध्रुवकाः ।
कनक-कुण्डो रुञ्जन-मेघकर-ग्रीष्म-गरुड-शशि-सूर्याः ॥ ६१ ॥

शाल्यो नवरङ्ग-मनीहरो गगन-रत्न-नर-हीराः ।

भ्रमरः श्रेष्ठ-कुसुमाकरो ततो दीप्त-शख-असु-शब्दाः ॥ ६२ ॥

इति भेदाभिधा. पित्रा रचितायामपि स्फुटम् ।

उदाहरणमञ्जयामुक्तैतासामुदाहृतिः* ॥ ६३ ॥

इति पङ्क्तिः ।

* टिप्पणी—भट्टलक्ष्मीनाथप्रणीते पिङ्गलप्रदीपे पदपदच्छन्दसः. गुरुह्रास-लघुद्विपरिपाठ्या
एकसप्ततिभेदानामुदाहरणानि—

१ अजय	७० गुरु	१२ लघु	८२ अक्षर
२ विजयः	६६ गुरु	१४ लघु	८३ अक्षर
३ बलिः	६८ गुरु	१६ लघु	८४ अक्षर
४ कर्णः	६७ गुरु	१८ लघु	८५ अक्षर
५ वीरः	६६ गुरु	२० लघु	८६ अक्षर
६ वैतालः	६५ गुरु	२२ लघु	८७ अक्षर
७ बृहन्नसः	६४ गुरु	२४ लघु	८८ अक्षर
८ मर्कटः	६३ गुरु	२६ लघु	८९ अक्षर
९ हरिः	६२ गुरु	२८ लघु	९० अक्षर
१० हरः	६१ गुरु	३० लघु	९१ अक्षर
११ ब्रह्मा	६० गुरु	३२ लघु	९२ अक्षर
१२ इन्दुः	५९ गुरु	३४ लघु	९३ अक्षर
१३ अन्दनम्	५८ गुरु	३६ लघु	९४ अक्षर
१४ शुभङ्करः	५७ गुरु	३८ लघु	९५ अक्षर
१५ रवा	५६ गुरु	४० लघु	९६ अक्षर
१६ सिंहः	५५ गुरु	४२ लघु	९७ अक्षर
१७ शार्ङ्गलः	५४ गुरु	४४ लघु	९८ अक्षर
१८ क्रमः	५३ गुरु	४६ लघु	९९ अक्षर
१९ कौबिलः	५२ गुरु	४८ लघु	१०० अक्षर
२० क्षरः	५१ गुरु	५० लघु	१०१ अक्षर
२१ कुञ्जरः	५० गुरु	५२ लघु	१०२ अक्षर
२२ मदनः	४९ गुरु	५४ लघु	१०३ अक्षर
२३ मरस्यः	४८ गुरु	५६ लघु	१०४ अक्षर
२४ तासार्ङ्ग	४७ गुरु	५८ लघु	१०५ अक्षर
२५ रोषः	४६ गुरु	६० लघु	१०६ अक्षर
२६ शारङ्गः	४५ गुरु	६२ लघु	१०७ अक्षर
२७ पयोधरः	४४ गुरु	६४ लघु	१०८ अक्षर

काव्यपट्पदयोर्दोषा

काव्यपट्पदयोश्चापि दोषा पन्नगमापिता ।
 वक्ष्यन्ते यान् विदित्वैव काव्यं कर्तुं मिहार्हंति ॥ ६४ ॥
 पददुष्टो भवेत्पङ्क्तुः कलाहीनस्तु सञ्जकः ।
 कलाधिको वातूलः स्यात् तेन घ्न्यफलश्रुतिः ॥ ६५ ॥
 अघोऽलङ्काररहितो वधिरो मलवर्जितः ।
 प्राकृते सस्कृते चाऽपि विज्ञेयं पददूषणम् ॥ ६६ ॥
 गणोद्वणिका यस्य पञ्चत्रिकलवा भवेत् ।
 स मूकः कथ्यतेऽर्थेन विना स्याद् दुर्बलस्तथा ॥ ६७ ॥

२८ कुन्द	४१ गुरु	६६ लघु	१०६ अक्षर
२९ कमलम्	४२ गुरु	६७ लघु	११० अक्षर
३० वारण	४३ गुरु	७० लघु	१११ अक्षर
३१ शरभ	४४ गुरु	७२ लघु	११२ अक्षर
३२ जङ्गम	३६ गुरु	७४ लघु	११३ अक्षर
३३ द्यूतीष्टम्	३७ गुरु	७६ लघु	११४ अक्षर
३४ दाता	३७ गुरु	७७ लघु	११५ अक्षर
३५ शर	३६ गुरु	८० लघु	११६ अक्षर
३६ सुगर	३५ गुरु	८२ लघु	११७ अक्षर
३७ समर	३४ गुरु	८४ लघु	११८ अक्षर
३८ सारस	३३ गुरु	८६ लघु	११९ अक्षर
३९ शारद	३२ गुरु	८८ लघु	१२० अक्षर
४० मेह	३१ गुरु	९० लघु	१२१ अक्षर
४१ मदकर	३० गुरु	९२ लघु	१२२ अक्षर
४२ मद	२९ गुरु	९४ लघु	१२३ अक्षर
४३ सिद्धि	२८ गुरु	९६ लघु	१२४ अक्षर
४४ बुद्धि	२७ गुरु	९८ लघु	१२५ अक्षर
४५ करतलम्	२६ गुरु	१०० लघु	१२६ अक्षर
४६ कमलाकर	२५ गुरु	१०२ लघु	१२७ अक्षर
४७ धवल	२४ गुरु	१०४ लघु	१२८ अक्षर
४८ मन	२३ गुरु	१०६ लघु	१२९ अक्षर
४९ ध्रुव	२२ गुरु	१०८ लघु	१३० अक्षर
५० कनकम्	२१ गुरु	११० लघु	१३१ अक्षर
५१ कृष्ण	२० गुरु	११२ लघु	१३२ अक्षर

हठात्कृष्टाश्चरैश्चापि कठोर केकरोऽपि च ।
 श्लेष प्रसादादिगुणैर्विहीन काण उच्यते ॥ ६८ ॥
 सर्वैरङ्गैः सम शुद्ध स लक्ष्मीक स रूपवान् ।
 काव्यात्मा पुरुष कोऽपि राजते वृत्तभोक्तिके ॥ ६९ ॥
 दोषानिमानविज्ञाय यस्तु काव्य चिकीर्षति ।
 न ससदि स मान्य स्यात् कवीनामतदहण ॥ ७० ॥
 एते दोषा समुद्दिष्टा सस्कृत प्राकृतेऽपि च ।
 विशेषतश्च तत्रापि केचित्प्राकृत एव हि ॥ ७१ ॥

इति शास्त्रमन्त्रोपस्थारे द्वितीय पटपदप्रकरण समाप्तम् ।

५२ रञ्जनम्	१६ गुरु	११४ लघु	१३३ अक्षर
५३ मेघवर	१८ गुरु	११६ लघु	१३४ अक्षर
५४ ग्रीष्म	१७ गुरु	११८ लघु	१३५ अक्षर
५५ गरुड	१६ गुरु	१२० लघु	१३६ अक्षर
५६ शशी	१५ गुरु	१२२ लघु	१३७ अक्षर
५७ सूर्य	१४ गुरु	१२४ लघु	१३८ अक्षर
५८ शल्य	१३ गुरु	१२६ लघु	१३९ अक्षर
५९ नवराङ्ग	१२ गुरु	१२८ लघु	१४० अक्षर
६० मनोहर	११ गुरु	१३० लघु	१४१ अक्षर
६१ गगनम्	१० गुरु	१३२ लघु	१४२ अक्षर
६२ रत्नम्	९ गुरु	१३४ लघु	१४३ अक्षर
६३ नर	८ गुरु	१३६ लघु	१४४ अक्षर
६४ शीर	७ गुरु	१३८ लघु	१४५ अक्षर
६५ भ्रमर	६ गुरु	१४० लघु	१४६ अक्षर
६६ शस्त्र	५ गुरु	१४२ लघु	१४७ अक्षर
६७ कुमुदाकर	४ गुरु	१४४ लघु	१४८ अक्षर
६८ दीप	३ गुरु	१४६ लघु	१४९ अक्षर
६९ पाद्म	२ गुरु	१४८ लघु	१५० अक्षर
७० मनु	१ गुरु	१५० लघु	१५१ अक्षर
७१ गङ्गा	० गुरु	१५२ लघु	१५२ अक्षर (१५२मात्रा)

तृतीयं रङ्गा-प्रकरणम्

१. पञ्चटिका

डगणाश्चतुरः पादे विधेहि,
 अन्ते गणमिह मध्यगमवेहि ।
 इति पञ्चटिका निखिलचरणेषु,
 षोडशमात्रा सर्वचरणेषु ॥ १ ॥

पद्या-

गाङ्गा वन्द्य परिजयति वारि,
 निखिलजनानां दुरितविनिवारि^१ ।
 भवमुकुटविराजिजटाविहारि,
 मज्जज्जनमानसतापहारि ॥ २ ॥

इति पञ्चटिका ।

२. अष्टित्ता^२ [अरिहता]

सर्वे डगणा अरिहता छन्दसि,
 नायकमत्र नयति तं नन्दसि ।
 षोडशमात्रा विदिता यस्मि-
 न्ते सुप्रियमपि कुरु तस्मिन् ॥ ३ ॥

पद्या-

हरिरूपगत इति सखि ! मयि वेदय,
 कुञ्जगृहोदरगतमपि खेदय ।
 इह यदि सपदि सविधमुपयास्यति,
 रदवसनामृतमिदमनुपास्यति ॥ ४ ॥

इति अरिहता ।

३. पादाकुलकम्

गुरुलघुकृतगण^३-नियमविरहित,
 फणिपतिनायकपिङ्गलगदितम् ।
 रसविधुकलयुतयमकितचरणं,
 पादाकुलकं श्रुतिमुखकरणम् ॥ ५ ॥

यथा—

जलभरदान^१-हरितवनभागः,
 शीतलमारुतकृतपरभागः^२ ।
 चञ्चलचपलाघृतवनमालः,
 समुपागत इह जलधरकालः ॥ ६ ॥
 इति पादाकुलकम् ।

४. चौबोला

रसविधुकलकमयुगमवधारय,
 सममपि वेदविधूपमितम् ।
 सर्वमपि पण्टिकलं विचारय,
 चौबोलास्यं फणिकथितम् ॥ ७ ॥

यथा—

दिशि दिशि विलसति जलधरगजित-
 मय^१'तोकेका' राजयते ।
 सा मम चेतः कुरुते तजित-
 मपि का कान्तो भासयते ॥ ८ ॥
 इति चौबोला ।

५. रट्टा^३

विपमचरणेषु ढगण^४मुपनय
 ढगणत्रयमनुविरचय
 जगणमुत^५ विप्रमन्त्र्यमुपनय
 ढगणत्रयमपि रचय
 समेऽन्ते^६ सर्वलघु विरचय ।
 दोहाचरणचतुष्टयं तेषामन्ते धेहि ।
 फणिपत्तिपिङ्गलभापितं रट्टा^७युत्तमवेहि ॥ ९ ॥
 विपमः शरविधुमात्रो द्वादशमात्रास्तथा द्वितीयोऽपि ।
 तुर्यो रुद्रकलाक. प्रथमान्ते जगणविप्रनियमः स्यात् ॥ १० ॥

१. जलधरदाय । २. परिभाषः । ३. ग. छविरज । ४. ग. टपण । ५. ग. मनु ।
 ६. स. ग. तम ते । ७. ग. रट्टा । ग. प्रतो रट्टाया रवाने सर्वत्रावि रट्टायाः प्रयोगो
 विद्यते ।

अपरान्ते लघुयुगनियम स्यात् कलाद्वयम् ।

समादौ स्याच्चतुर्षान्ते त्रिलघुर्गुण ईरित ॥ ११ ॥

यथा-

पिकरुतमिदमनुविलसति दिक्षु
किञ्चुककलिका विकसति^१
बहति मलयमरुदयमपि मुलघु
विरुतमलिरपि बलयति
विकसति मञ्जुल^२ मञ्जरिरपि च ।

इति मधुरमुवनमनुसरति बहुलोभूय सुकेशि ।

हरिरपि विनमति चरणयुगमनुमर त हृदयेशि । ॥ १२ ॥

रङ्गाया सप्तभेदा

अथैतस्या सप्तभेदा कथ्यन्ते पिङ्गलोदिता ।

यान् विधाय कवि काव्यगोष्ठ्या बहुमतो भवत् ॥ १३ ॥

प्रथमा करमी प्रोक्ता ततो नन्दा च मोहिनी ।

चारुसेना चतुर्थी स्यात्तथा^३ भद्रापि पञ्चमी ॥ १४ ॥

राजसेना तु षष्ठी स्यात् तथा तालङ्किनी मता ।

सप्तमी कथिता रङ्गा भेदा लक्षणमुच्यते ॥ १५ ॥

५[१] करमी

विपमेऽग्निविधुकलाको रुद्रकनाको द्वितीयोऽपि ।

तुर्योऽपि रुद्रमात्र पञ्चपदानीह कथितानि ॥ १६ ॥

एव पञ्चपदानामग्रे दोहापि यस्यास्ताम ।

करमीति नामराज कथयति शण्कल्पना तु दोहावत् ॥ १७ ॥

इति करमी ।

५[२] नन्दा

विपमेषु वेदविधुर्निद्वितीयतुर्यो^४ च रुद्रमात्रामि ।

अग्र दोहा यस्या^५ ता न दामामनन्ति वत्तज्ञा ॥ १८ ॥

इति नन्दा ।

५[३] मोहिनी

अयुजि पदे नवमात्राः समेऽपि दिग्वृद्धसंख्याभिः ।

पुरतो दोहा यस्यां शेषस्तां मोहिनीमाह ॥ १६ ॥

इति मोहिनी ।

५[४] चारुसेना

असमपदे शरचन्द्राः^१ समयोरेकादशैव यस्यास्ताम् ।

दोहाविरचितशीर्षा^२ भणति फणीन्द्रस्तु^३ चारुसेनेति ॥ २० ॥

इति चारुसेना ।

५[५] भद्रा

विपमेषु पञ्चदशभिर्द्वितीयतुयो^४ च सूर्यसंख्याभिः ।

या दोहाङ्कितशीर्षा सा भद्रा भवति पिङ्गलेनोक्ता ॥ २१ ॥

इति भद्रा ।

५[६] राजसेना

पूर्ववदेव हि विपमे समे क्रमादेव सूर्यवृद्धैश्च ।

पूर्ववदेव हि दोहा यत्र स्याद् राजसेना सा ॥ २२ ॥

इति राजसेना ।

५[७] तालङ्किनी

विपमे पदेषु (च) यस्यां षोडशमात्रा विराजन्ते ।

पूर्ववदेव हि समयोर्दोहाऽपि च पूर्ववद्भवति ॥ २३ ॥

तालङ्किनीति कथिता सा रट्टा नागराजेन ।

एव सप्तविभेदा विविच्य सम्यक् प्रदर्शिताः क्रमशः^५ ॥ २४ ॥

उदाहरणमेतेषां ग्रन्थविस्तरशङ्कया ।

नोक्तं सुबुद्धिभिस्तद्वि^६ स्वयम्बूह^७ महात्मभिः ॥ २५ ॥

इति श्रीवृत्तमौक्तिकवार्तिके^८ तृतीय रट्टा^९-प्रकरणं समाप्तम् ।

१. ग. चन्द्रो । २. ल. ग. च. । ३. ग. जमतः । ४. ग. तद् । ५. ग. विरचया ।
६. ग. 'वागिके' नास्ति । ७. ग. चईडा ।

चतुर्थं पद्यावती-प्रकरणम्

१. पद्यावती

यदि योगदृग्गणकृत-चरणविरचित-द्विजगुरुयुगकरवसुचरणाः ,
नायकविरहितपद-कविजनकृतभद-पठनादपि मानसहरणा ।
इह दशवसुमनुभिः^१ क्रियते कविभिर्विरतियंदि युगदहनकला ,
सा पद्यावतिका फणिपतिभिणिता त्रिजगति राजति गुणबहुला ॥ १ ॥

पद्या^२ -

करयुगधृतवंशी रुचिरवतंसो गोवर्द्धनधारणशीलः ,
प्रियगोपविहारी भवसन्तारो वृन्दावनविरचितलीलः ।
धृतवरवनमाली निजजनपाली वरयमुनाजलरुचिशाली^३ ,
मम मङ्गलदायी कृतभवमायी^४ वरभूषणभूषितमाली^५ ॥ २ ॥

इति पद्यावती ।

२. कुण्डलिका

दोहाचरणचतुष्टय प्रथम नियतमवेहि,
कुण्डलिका फणिरनुवदति काव्य तदनु विधेहि ।
काव्य तदनु विधेहि पदं प्रतियमकितचरणं,
तदुभयविरतौ भवति पुनरपि च^१ तदुभयपठनम् ।
तदुभयसुपठनसमयरचितकरकविजनमोहा ।
कुण्डलिका सा भवति भवति यदि पूर्वं दोहा ॥ ३ ॥

पद्या-

चरणं शरणं भवतु तव मुरलीवादनशील,
सुरगणवन्दितचरणयुग वनभुवि विरचितलील ।
वनभुवि विरचितलील दुष्टजनखण्डनपण्डित,
दुर्जनजनहृदि कील गण्डयुगकुण्डलमण्डित ।
दुर्जनजनहृदि कील^२ भीतममतापविहरण^३,
मुनिजनममनसहस हरतु मम तापं चरणम्^४ ॥ ४ ॥

१. ग. मुनिभिः । २. ग तद्वयम् । ग प्रती पद्या शब्दस्य स्थाने सर्वत्र तद्वयम् पाठो दृश्यते । ३. ग मालो । ४. ग नववरदायी । ५. ग मालो । ६. ग नास्ति पाठः । ७. ग, नास्ति पाठः । ८. स विहरण । ९. स. चरण, ग वरणम् ।

३. गगनाङ्गणम्

टगण^१मिहादौ रचयत विरमित^२विनतानन्दन^३,
मध्ये नियमविरहितं रविकृतयति कविवन्दनम्^४ ।
शरपक्षकलितकलाक^५-नखमित^६-वर्णविकासितं,
गगनाङ्गणमिदं भवति फणिपतिपिङ्गलमापितम् ॥ ५ ॥

यथा -

मानसमिह मम कृन्तति कोकिलविरुतमकारणं,
कलितशरासनसायकमतनुः कलयति भारणम् ।
मधुसमये कथमपि^{*} सखि^७ ! जीवं निजमपि धारये,
रुचिरमधुभिदमन्तरा क्षणमपि सोढुमपारये ॥ ६ ॥

इति गगनाङ्गणम् ।

४. द्विपदी

आदौ टगणसमुपरचितं तदनु च शरडगणसुविहितम् ।
गान्तं द्विपदीवृत्तं वसुपक्षकलं फणिपतिमणितम्^८ ॥ ७ ॥

यथा -

मम मानसमभिलपति सखि-कृतरासकेलिरसनायके ।
निजरुचिजितनूतनजलधर-मुरलीनादसुखदायके ॥ ८ ॥

इति द्विपदी ।

५. भ्रुत्सणा^९

प्रथममिह दशसु यतिरनु च तदवधि भवति,
तदुपरि च मुनिविधुभिरथ युक्ता ।
इति^{१०} हि विधियुगदला मुनिदहनकृतकला
भ्रुत्सणा भवति क्षणनियममुक्ता ॥ ९ ॥

यथा -

करविधूतवंशरवकृतहृदय-चित्तभव
गोकुलानन्दकररुचिररासे ।

१. ग. डगण । २. ग. विरचित । ३. ग. विनतानन्द । ४. ग. कविदाय ।
५. ग. कला । ६. ग. नखमित । ७. ग. कथितमपि । ८. ग. सखी । ९. ग.
भाषितम् । १०. ग. भ्रुत्सणा । ११. ग. इह ।

मम सविद्यमुपयासि मम वचनमनुपासि

वल्लवीरभिभूय जनितदासे' ॥ १० ॥

इति भुल्लणा* ।

१. ग. हासे ।

'द्विपथी—धोकृष्णमद्वेन हसमुक्तावत्या द्वितीयगुण्येऽस्य छन्दसः भुल्लण-उपभुल्लण-
मुभुल्लन-प्रतिभुल्लननामभिश्चत्वारो भेदाः प्रदक्षितास्ते आत्राविकल समुद्भिद्यन्ते—

अथ भुल्लनच्छन्दः

यस्य चरणे सप्त पञ्चकलास्ततो द्वे कले तन् भुल्लन नाम । यद्यपि पञ्चकलभेदा भवि-
शेपेणैव गृहीतास्तथापि प्रतिगण्य द्वितीया कला परया कलया मिथितो द्वेजिकेत्यनुभव-
साक्षिकम् ।

यथा—

शेषपतगोक्षविनुषेशभुवनैशभूतेशसविशेषमुनिवेशचरणी,
कव्लितसुन्दरानन्दमकरन्दरसमज्जनमिलिन्दमवसिन्धुतरणी ।
ज्ञानमण्डनपरा कमलमण्डनपरा लभनदण्डनपरा भूतिहरणी,
निरयमिह वक्ति भुनिवृद्धमनुरक्तिमज्जयति हरिभक्तिरासक्तिचरणी ॥ ६१ ॥

अष्टविंशत् कल उपभुल्लनम् । तस्मिन् चोपात्त्यो गुरुरन्यो लघुर्नियत ।

यथा—

चण्डभुजदण्डसदलण्डकोदण्ड(क्ष)क्षिण्डशरखण्डभरदण्डितविपक्ष,
पर्वभूतदावरीनायकचिगर्वहरसर्वहृदलर्वसुखलीलनवलक्ष ।
हुण्टनरुण्टतरपुण्टनयजुण्टजनतुण्टमतिपुण्टचरितोषकृतिदक्ष,
सखण्डसप्तकृतरक्षणासपक्षगणलक्षितसुनक्षणा जयेश गवलक्ष ॥ ६२ ॥

कलाद्वयाधिक्येन एकोनचत्वारिंशत्कलचरणमपि सम्भवति, तच्च सुभुल्लन नाम ।

यथा—

भूतनवपल्लववपायकलकण्ठवल्लमञ्जुकलकीर्णिसाकूजितनिदान,
माधुरीमधुरमधुपानमसातिमूलबल्लकीर्तारभङ्गारसुखदानम् ।
सासमलयाचलोद्यातपवमानजयजागरितचित्राभवसायकवितानम्,
पदय सखि पदय कुसुमाकरमुदितवर मा कल्य मानसे मानमतिमानम् ॥ ६३ ॥

चत्वारिंशत्कल अतिभुल्लनमपि स्वीकष्यम् ।

यथा—

वासकैलासमविलासहरहासमधुमाससविकाससितमारससमानमति,
सारदतुषारवरसारधनसारमरहाराहिमपारदविसारसमुदारमनि ।
दालकमूलात्तमृदुमालतीजासहविधासितविशालविनुषालयमरालतति,
राजमृगराजवर राजते तव यजो राम गुरुराजसुमभाजितसमाजनति ॥ ६४ ॥

६. सञ्ज ।

नवजलधिकलमितगणमिह^१ समुपनय
 तदनु च कुरुत रगणमपि फणिभणितखञ्जके ।
 इति विधिविरचितदलयुगमिह भवति
 निखिलभुवनगतवरकविजनहृदयसुखसञ्जके ॥ ११ ॥

यथा—

निजतनुरुचिविजितनवजलधररुचि-
 विधूतरुचिरतर^२मुकुट हरिरिह मम हृदि भासताम् ।
 मम हृदयमधिरतमनुभवतु तव
 निजजनसुखवितरणरसिकचरणसरसिजदासताम् ॥ १२ ॥
 इति सञ्जा ।

७. शिखा

रसजलधिकलमुपनयत फणिरिति वदति सकलकविसखा हि ।
 अपरखलमथ मुनिकृतमुभयमपि जगणविरतिगमिति^३ भवति शिखा हि ॥ १३ ॥

यथा—

विकचनलिनगतमधुरमधुकरकलरवमनुकलय सुकेशि ।
 हरिरिति विनमति चरणयुगमपि मयि^४ कुरु हृदयमपरूपमति^५ सुवेपि । ॥ १४ ॥
 इति शिखा ।

८. भासा

जलनिधिकलमिह^६ नवगणमुपनय तदनु च
 रगणमपि हि गुरुयुगनमय कुरु पिङ्गलप्रोक्तम् ।
 भाषोत्तरार्द्धसहितं भासावृत्तं विजानीहि ॥ १५ ॥

यथा—

अपितहृदय करयुगकृतवसन वसनहरण-
 परवक्षयुवतिकृतविनतिरभयमान्ततद्वाप्राः* (?) ।
 तीरे कदम्बशाली वरवनमाली हरिः पायात् ॥ १६ ॥
 इति भासा ।

१. ग. कलमगुलनगणमिह । २. ग. वर । ३. ग. विरचितमिति । ४. ग. तम् ।
 ५. ॥ हृदि रयमति । ६. ग. तिह । ७. ग. वृत्तत्रातः ।

६ चुलिमाला^१

यदि दोहादलविरतिकृत,
 गरकलकुमुमगणो हि विराजति ।
 फणिनायकपिङ्गलरचित,
 चुलिमाला किल जातिषु राजति ॥ १७ ॥

यथा—

क्षणमुपविश वनभुवि हरे,
 भम पुनरागमनाञ्जलि पालय ।
 उपयाता^२मिह भम सखी^३,
 तामङ्गे राधामुपलालय^४ ॥ १८ ॥
 इति चुलिमाला ।

१० सोरठा

सोरठाख्य तत्तु फणिनायक भणित भवति ।
 दोहावृत्त यत्तु विपरीत कविजनभवति ॥ १९ ॥

यथा—

रूपविनिर्जितमार । सकलमादवकुलपालक ।
 जय जय नन्दकुमार । गोपगोपीजनलालक ॥ २० ॥

यथा वा—

गलकृतमस्तकमाल । भालगतदहनविराजित ।
 जय जय हर । भूतेश । शेषकृतभूषणभासित ॥ २१ ॥

इति सोरठा

११ हाकलि

सगर्ण^१ भंगर्णप्रंलघुमुत्तं,
 सकल चरण प्रविरचितम्^२ ।
 गुरुवेन च सर्वे कलित,
 हाफनिवृत्तमिदं कथितम् ॥ २२ ॥

प्रथमद्वितीयचरणौ द्वापार्णविय तृतीयतुर्यौ च ।
 दशमणौ^३ सवलेषु च मात्रा वेदमृदि प्रोक्ता ॥ २३ ॥

१. ग घृलोत्तमा । २. ल. उनुपाता । ३. ल ग सखी । ४. ॥ पालय ।

५. ग सगुर्ण । ६. क प्रविरचित ।

यथा-

विकृतभयानकवेपकलं,
चरणाङ्कितवरभूमितलम् ।
व्योमतलामलकम्बुगलं,
नोमि विभूषितमालतलम् ॥ २४ ॥

यथा वा^१ -

यमुनाजलकेलिषु कलितं,
वनिताजनमानसवसितम् ।
सुरभीगणसङ्घा^२च्चलितं,
नोमि हृदा वलसंम्मलितम् ॥ २५ ॥
इति हाकलि ।

१२. मधुभारः

डगणमवधेहि, जगणमनु देहि ।
मधुभारमाशु, परिकलय वासु ॥ २६ ॥

यथा-

उरसि कृतमाल, भक्तजनपाल ।
रुचिजिततमाल, जय नन्दबास ॥ २७ ॥
इति मधुभारः ।

१३. आभीरः

अन्ते जगणमवेहि,
विधुयुगकला विधेहि ।
आभीरं परिशोभि,
कविजनमानसलोमि ॥ २८ ॥

यथा -

क्षजमुवि रचितविहार,
श्रुतिशतकलितविचार ।
मदुकुलजनितनिवास,
जय भूतलकृतरास^३ ॥ २९ ॥
इत्याभीरः ।

१४. दण्डकला

वेदङ्गणविरचितमनु^१ च^२ टगणकृत^३-मन्ते ङगणद्वयविहित,
गुरुकृतपदविरत कविजनसुमत दण्डकलास्यमिद विदितम् ।
वरफणिकुलपतिना विमलसुमतिना पक्षदहनकृतचरणकल,
गगनेन्दुधिराजित-योगविकासित-वेदावनिवृत्यतिविमलम् ॥ ३० ॥

पद्या-

खरकेशिनिपूदन-विनिहतपूतन-रचितदितिजकुलबलदलन,
बाणावलिमालित-सङ्गरपालित-पार्यं विलोकितशुभवदनम् ।
कृतमायामानव-रणहतदानव-दुस्तरमवजलराशितरि,
सुरसिद्धि^४-विधायक-यादवनायकमशुमहर प्रणमामि हरिम् ॥ ३१ ॥

इति दण्डकला ।

१५. कामकला

यदि रसविधुमात्राणामन्ते विरतिर्भवेत्तदा संव^५ ।
कामकलेति फणीदवरपिङ्गलकयिता मता सद्धि^६ ॥ ३२ ॥

पद्या-

कमलाकरलालितपदकमल निजजनहृदयविनाशित^७शमल,
पीतवसनपरिभासितममल जितकम्बुमनोहरविमलगलम् ।
नाभिकमलगतविधिवृतनमन फणिमणिकुण्डलमण्डितवदन,
नोमि जलधिशयमतिरुचिसदन दानयनिवहसमरवृतकदनम् ॥ ३३ ॥

इति कामकला ।

१६. रुचिरा

सप्तचतुष्फलव सितसकसदल-भग्न्याहितकुण्डलरुचिरा ।
न कुरु पयोधरमिह फणिपतिवर-भणितमिद वृत्त रुचिरा ॥ ३४ ॥

पद्या-

कस्य तनुर्मनुजस्य सितासित-सङ्गममधिविधित पतिता ।
यस्य वृत्ते वरमोरु विपीदसि मिहिरातपनिहिते^८च सता ॥ ३५ ॥

इति रुचिरा ।

१. ग. तनु । २ ग 'च' नास्ति । ३. ग विरचित । ४ ग. तिद्ध । ५ ग. संव । ६ ग सद्धि । ७ ग हृदयविनाशित । ८ ग विहिते ।

१७. दीपकम्

दृगणं कुरु विचित्र-

मन्ते जगणमत्र ।

मध्ये द्विलमवेहि^१,

दीपकमिति विधेहि ॥ ३६ ॥

यथा-

क्षेपविरचितहार,

पितृकाननविहार ।

जय जय हर ! महेश,

शोरीकृतसुवेप ! ॥ ३७ ॥

प्रथमा-

तुरगैकमुपधाय,

सुनरेन्द्र^२मवधाय ।

इति^३ दीपकमवेहि,

धु मन्तमधिधेहि ॥ ३८ ॥

प्रथा^४-

क्षणमात्रमतिवल्गु,

जगदेतदतिफल्लु ।

धनलोभमपहाय,

नम पद्मनयनाय ॥ ३९ ॥

इति दीपकम् ।

१८ सिंहविलोकितम्

सगणद्विजगणविरक्षितचरणं,

चरणे रसभूमिकलाभरणम् ।

फणिनायकपिङ्गलभणितवरं,

वरसिंहविलोकितहृदयहरम् ॥ ४० ॥

यथा-

हृत्तद्रूपणकृतजलनिधित्तरणं,

रणभुवि^५कृतदानवकुलमरणम् ।

रणरणितशरासन^६मङ्गलकर,

करकलितशिरो नम^७ देववरम् ॥ ४१ ॥

इति सिंहविलोकितम् ।

१. ग. द्विलमवेहि । २. ग. सुनरेन्द्र । ३. व. द्रह । ४. ग. उव

५. ग. 'रण' नास्ति । ६. ग. शरासन । ७. ग. मङ्गल ।

१९. प्लवङ्गमः

आदावादिगुरुं कुरु पट्कलभाषितं,
[पञ्चकलं तदनु च डगणं विभूषितम् ।
अन्ते नायकमथ रचय गुरुविकासितं]`
वृत्तमिदं प्लवङ्गममहिपतिसुभाषितम् ॥ ४२ ॥

पद्या-

कुञ्चितचञ्चलकुन्तलकलितवराननं,
वेषुविरावविनोदविमोहित^१काननम् ।
मण्डलनायकदानवल्लण्डनवण्डित,
चिन्तय चण्डकरोपमकुण्डलमण्डितम् ॥ ४३ ॥
इति प्लवङ्गमः ।

२०. लीलावती

लघुगुरवर्णरचित-नियमविरहित-यसुडगणकृत-वरणविरचिता,
सगणद्विजवर-जगण-भगण-गुरुयुगकृतपदमतिरमकसुकथिता ।
लीलावतिका पक्षदहनकृतकला वरकविजनहृदयमहिता,
विरचितललितपद-जनहृदयकृतमद-फणिनायकपिङ्गलभणिता ॥ ४४ ॥

पद्या-

गुञ्जाकृतभूषणमखिलजनहृतदूषणमधिककृतरासकलं,
करपुगधृतमुरलि नवजलधर^२नील वृन्दावनभुवि चपलम् ।
हतगोपीमान नारदकृतगान लीलाबलदेवपुतं,
स्मर नन्दतनूज सुरवरकृतपूजं मम हृदयमुनिजननुतम् ॥ ४५ ॥

इति लीलावती ।

२१[१] हरिगीतम्

अस्यो प्रथम विरचय ठगण तदनु टगणविराजितं,
रचय पारकल तदनु दहनमिदमन्ते गुरुविकासितम् ।
अमुपशकमाक कविजनसंसदि हृदयमुखदायकं,
हरिगीतमिति वृत्तमहिपतिकविनृपतिजल्पितनायकम् ॥ ४६ ॥

१. कोट्टवास्तर्गतोऽयं पाठः ख. घ. प्रतायेवास्ति । पाठेऽस्मिन् पञ्चकल-चतुःकलयो-
विधानं दृश्यते तत्रैव प्राकृतपञ्चकलमविष्टं 'पञ्चमल चतुसल गणा वहि विजग' इति
नियमान् । (स०)

२. घ. विमोहित । २ नवजलधर ।

यथा-

रचय कदलीदलनवशयन कमलदलावलिमालित,
बीजय मृदुपवनेन घनाघनसुन्दरविरहदालितम् ।
अङ्गकमपि धनसारविराजितचन्दनरचनलालित,
कुरु मम वचनमानय कमलाननवनमालिनमालि तम् ॥ ४७ ॥

इति हरिगीतम्*

२१. [२] हरिगीत[क]म्

अन्ते यदि गुरुयुगकृतचरण नून भवेदिदं हि तदा ।
हरिगीत[क]मिति फणोश्वरपिङ्गलकथित विजानीत ॥ ४८ ॥

यथा-

उरसि विलसिता*ऽनुपमनलिनकृतमधुकररुतपुतवनमाल,
मुनिजनयमनियमादिविनाशकसकलदनुजकुलविकरालम् ।

१ ग विद्यालता ।

* दिव्यणी—धीकृष्णमर्द्वेन वृत्तमुक्तावल्या द्वितीयगुप्ते 'हरिगीत' वृत्तस्य अनुहरिगीत मङ्गहरि-
गीत लघुहरिगीतञ्चेति त्रयो भेदा स्वीकृतास्ते यथा—

'अन्त्यगुरुमात्रेण हीन अनुहरिगीतम् । यथा —

भवकोकिलाकुलललितकलकलकलितजागरकाम
भतिधीरमलयसमीरधोरिणविलितमधुकरदाम ।
सखि भूरिकुसुमपरामपूरितकुञ्जमञ्जुलघाम,
परिपश्य मानिनि मधुदिन रमणेन सन्तनु साम ॥ ४९ ॥

यदा तु अनुहरिगीतस्यादौ कलाद्वय वदेते तदा मङ्ग(हरि)गीत उत्प्रेक्षितं भवति । यथा—

जलधरधामधारण मोहतारण भवनिवारणशील,
मधुमुरनरकमञ्जन दुरितमञ्जन नयनरञ्जनलील ।
त्रिभुवनमव्यभावक निजजननायक कलितपावकपान,
जय रसकेलिभाजन सुरभाजन कृतसभाजनमान ॥ ५० ॥

अथ कलाद्वयह्यामे लघुहरिगीतम् । यथा —

मल्लिकानवमल्लिकासुप्रतल्लिकारसपीन,
मालिकानवमालिकाकमलालिकामधुलीन ।
सोऽधुना विकरालकालकलाकुलोद्यत एव,
मुन्दकानमकीतुकी मा घाव मधुकरदेव ॥ ५१ ॥"

मुरलीरव^१-मोहनमनु^२-मोहितनिखिलयुवतिजन^३-कृतरास,
विलसतु मम हृदि किमपि गोपिकाजनमानसजनितविलासम् ॥ ४६ ॥

इति हरिगीत[क]म् ।

२१ [३] मनोहर हरिगीतम्^४

इयमेव यदि विरामे गुर्वन्त शरकल भवति ।
नैयत्येन कवीन्द्रैर्वसुपक्षकल मनोहर कथितम् ॥ ५० ॥

एतदनुसारेण पाठान्तर धया-

उरसि विलसितानुपमनलिनकृतमधुकररुतयुतमाल,
मुनिजनयमनियमादिविनाशकसकलदनुजकुलकालम् ।
मुरलीरवमोहनमनुमोहितनिखिलयुवतिकृतरास,
विलसतु मम हृदि किमपि गोपिकामानसजनितविलासम् ॥ ५१ ॥

इति मनोहर हरिगीतम्

२१ [४] हरिगीता

रन्ध्रैर्मुनिभि सूर्यै कृतविरतिर्माविता कविभि ।
इद(य)मेव हि हरिगीता फणिनायकपिङ्गलोदिता भवति ॥ ५२ ॥

धया-

भुजगपरिवारित-यूपभधारित-हस्तडमरुविराजित,
कृतमदनगञ्जन मञ्जुभभञ्जन-मुरमुनिगणसमाजितम् ।
हिमकरणभासित-दहनभूपित-भालमुमया सङ्गत,
धृतवृत्तियाससममलमानसमनुसर सुखदमङ्ग तम् ॥ ५३ ॥

इति हरिगीता ।

२१ [५] अपरा हरिगीता

इयमेव वेदचन्द्रै कृतविरतिर्माविता कविभि ।
पितृचरणरतिविशदा पिङ्गलयिधृताबुदाहृता स्फुटत ॥ ५४ ॥

सदुदाहरण धया^५-

सखि ! वध्रमीति मनो भूग जगदेव धूयमवेदयते,
परिमितते मम हृदयमर्म न धर्मं सम्प्रति वीदयते ।

१. म मर । २ मम । ३ म 'जन' नास्ति । ४. म प्रती धृन्वसोऽय सशयो
दाहृते न ह । ५. म म प्रती नास्तिपुदाहरणपद्यमिहम् ।

परिहीयते वपुषा भृश नलिनीव हिमततिसङ्गता,
नृदती वने^१ वदतीति सा मुदती रतीशवशगता ॥ ५५ ॥

इत्यपरा हरिगीता ।

२२ त्रिभङ्गी

प्रथम दशसु च^२ यतिरनु च वसुपु यतिरथ च तदधिकृति-रस^३कथित,
शेषे गुरुगदित त्रिभुवनविदित जगणविरहित जगति हितम् ।
वसुङ्गणकृतचरण-मधिकसुखकरण-सकलजनधारण मतिसुमति,
वदतीति त्रिभङ्गीमिह निरनङ्गीकृतरतिसङ्गी फणिनृपति ॥ ५६ ॥

वया—

वरमुक्ताहार हृदि कृतभार विरहितसार कुरु मुपित,
छादय विधुविम्ब न कुरु विलम्ब हर निकुम्ब कमलवृत्तम् ।
जहि^४ मलयजपवन लघु लघुवहन तनुकृतदहन मोहकर,
मम चित्तमधोर रदजितहीर यदुवरघोर याति परम् ॥ ५७ ॥

इति त्रिभङ्गी ।

२३ दुर्मिलका

यनाऽष्टौ ङगणा कविसुखकरणा प्रतिपदगुम्फनललितयुता
गगनावनिरचिता वसुपु च कथिता यत्र वेदविधुयतिरुदिता ।
द्वात्रिंशन्माना स्युरतिविचित्राश्चरणे यस्मिन् कविगणिता
जनहृदि सुखदात्री बुद्धिविधात्री सा दुर्मिलका फणिभणिता ॥ ५८ ॥

वया—

हैयङ्गवचोर नन्दकिशोर तन्दुलकणरुचिसमरदन,
घनकुञ्चितकेश मञ्जुलवेप विजितमनुजसुररुचिसदनम् ।
अपरिस्फुटगदन दधियुतवदन नौमि दितिजवरशकटहर,
मुक्ताभूपालकमदभुतबालकमखिलमुनिजनहृदि सुखकरम्^५ ॥ ५९ ॥

इति दुर्मिलका ।

१ 'वदती पर' इति पाठ पिङ्गलप्रदीपे । २ 'त' नास्ति । ३. क प्रथ । ४. ग नास्ति । ५ 'मुक्ताभूपालकमदभुतबालकमुषिजनहृदये सोल्यकरम्' इति पाठे श्रुतिकदुरव-
शोपनिवृत्ति स्यात् (त)

२४. हीरम्

आदिगयुत-वेदलयुत-नागरचितपट्कलं,
 वह्निगदित-लोकविदितमन्त्यकथितमध्यकलम् ।
 भाति यदनु-पादमतनु-कान्तिसुतनुसङ्गत,
 हीरमहिपवीरकथितमोदृगखिलसम्मत् ॥ ६० ॥

पद्या-

चन्द्रवदन-कुन्दरदन-मन्दहसनभूषणं,
 भीतिकदन-नीतिसदन^१-कान्तिमदनदूषणम् ।
 धीरमतुलहीरवहुलचौरहरणपण्डित,
 नौमि विमलधूतकमलनेत्रयुगलमण्डितम् ॥ ६१ ॥

पद्या वाग्मतातत्परणानाम्-

पाहि जननि ! क्षम्भुरमणि ! शुम्भ^२दलनपण्डिते !
 तारतरलरत्नसंचितहारवलयमण्डिते ।
 भालरुचिरचन्द्रशकलशोभि^३सकलनन्दिते^४ !
 देहि सततभक्तिमतुसमुक्तिमखिलवन्दिते ! ॥ ६२ ॥
 इत्यादिमहाकविप्रधानेषु शतशः प्रयुक्ताहरणानि ।
 इति हीरम्* ।

१. ग. नास्ति । २. ग. क्षम्भु । ३. ग. कलशशोभि । ४. ग. सकलसनन्दिते ।

*टिप्पणी—वृत्तमुक्तावल्यां द्वितीयगुप्ते 'हीर'वृत्तस्य सुहीर हीर लघुहीरक परिवृत्ताहीरक-
 चेति चत्वारो भेदा निबद्धास्तेऽत्र प्रदर्शयन्ते—

प्रतिपट्कल यस्या रहित सुहीरम् ।

पद्या-

रासललितसाक्षिसितहासवलितशोभन,
 लोचसकलशोचसमलमोचमखिलसोभनम् ।
 जातनयनपातजनितपातमुदितभारम,
 भाति मदनमानवदनमोदददनसारसम् ॥ ५१ ॥

पद्या-

प्रतिपट्कल यस्या सहित हीरम् ।
 सञ्जनवरपञ्जनवरमञ्जनरुचिराजित,
 कामहृदभिराममलितसामरतिसमाजितम् ।
 नीलकमलशोचमुदितनीलविरहमोचन,
 जातिकुटिलयाति, मुदति भाति तव विलोचनम् ॥ ५६ ॥

२५. जनहरणम्

गगनविधुयतिमहित-वसुजयतिसहित-
 मनु वसुजविहितचरणयति,
 कुरु मुनिमुनिगणकल^१-विगन^२सकलमल-
 वरसगणवहुलपदविरतिम् ।
 यसुडगणकृतचरण सकलसुखकरण-
 अधिकरुचिघरणकविशरण,
 फणिवरनृपतिरचित-निखिलमनुजहित-
 सकलगुरुरहितजनहरणम् ॥ ६३ ॥

यथा-

वरजलनिधिजलशय निरुपमरुचिचय
 सुरगणहृतभय गतकुमते,
 बहुदितिसुतकुलहर निजजनसुखकर
 सुरमुनिगणवरकृतसुमते ।
 अमलकनकसुवसन कटिधृतसुरसन
 कुसुमनिभहसन सुखकरण,
 तव भवतु पदकमलमधिकतरविमल
 सुखद शुभयुगल भवतरणम् ॥ ६४ ॥

इति जनहरणम् ।

१ अत्र मुनिगणो विप्रगणपर्याय (स.) । २. ग. गलित ।

अत्र पटकस्य सयलश्रुत्वे, तुर्याक्षरस्यैव गुरुत्वे वा छन्दोन्तरमुत्प्रेक्षितं भवति ।
 तच्च लघुहीरकं परिवृत्तहीरकं चेति व्यवहृत्यर्थम् । इयमपि यथा—

विरहगरलभरिततरलकुटिलसरसलोचना,
 चरणनखरकलितमदनयुवतिमदविमोचना ।
 अमलकमलरजनिर्मणमुकुरविलसितानना,
 त्वमिह जयसि सुतनु किरणवसितसकलकानना ॥ ५७ ॥
 विलसद्भङ्ग रुचितरङ्गललितरङ्गरञ्जिनी,
 लसदपारपटिमभारमदनदारगञ्जिनी ।
 सबलयामसुखदवामतरलसामलीलना,
 जयसि नामहृदभिरामरतिनिकामशीलना ॥ ५८ ॥

२६ मदनगृहम्

प्रथमं द्विल^१सहितं वरगुरुमहितंविरतो विमलसकल^२-धरणे श्रुति^३-सुखकरणे,
नवडगणविकासितं मध्यविराजित-

जनशुभदायकदेहधरं फणिमणितवरम् ।

गगनावलिर्कल्पित-वसुमित्रजल्पित-

वेदविधूदितयतिसहित^४ वसुयतिमहित,^५

गगनोदधिमात्रं भवति विचित्रं

मदनगृहं पवनविरहित^६ सकलकविहितम् ॥ ६५ ॥

पद्या-

सुरनतपदकमलं हृत्तजनशमलं

वारिजविजयिनयनयुगलं धारिद^७विमलं,

दितिसुतकुसुमिलयं कमलानिलयं

क्ल^८करयुगलकलितवलयं केलिपुं सलयम् ।चन्द्रकचित^९-मुकुटं विनिहतशकटं

दुष्टकसहृदि बहुविकटं मुनिजननिकटं,

गतयमुनारूपं कृतवहुरूपं

नमत्तारूढहरितनीप^{१०} श्रुतिशतदीपम् ॥ ६६ ॥

पद्या वाऽस्मत्पितु शिष्यश्रुती—

करकलितकपालं धृतनरमालं

भालस्थानलहृतमदनं कृतरिपुकदनं,

भवभयभरहरण^{११} गिरिजारमणंसकलजनस्तुतशुभचरितं गुणगणभरितम्^{१२} ।

कृतफणिपतिहारं त्रिभुवनसारं

दक्षमखक्षयसक्षुब्धं रमणीसूक्ष्मं,

गलराजितगरलं गङ्गाविमलं

वैलाशाचलधामकरं प्रणमामि हरम् ॥ ६७ ॥

इति प्रत्युदाहरणम् ।

इति मदनगृहम् ।

१ ग द्विलसहितम् । २ ग कमलम् । ३ ग श्रुतिम् । ४ क्ल मरितम् । ५ ग वसुयतिमहितं नास्ति । ६ पवनविरहितं मदनगृहं इति पाठात् श्रुतिशतदीपशेषोपनिरासः स्यात् । (स०) ७ ग धारिजः । ८ ग धारकरः । ९ ग चन्द्रकश्रुतः । १० ग हरितानीपम् । ११ क ग भवभयभरहरणम् । १२ ग वैलाशाचलधामकरम् ।

२७ मरहट्टा [महाराष्ट्रम्]

प्रथमं कुरु टगणं पुनरपि डगण शरपरिमितमतिशोभि,
 शेपे कुरु हार लघुमथ सार कविजनमानसलोभि ।
 गगनेन्दौ विरतिं तदनु वसुर्याति पुनरथ विधुयुगलेऽपि,
 मरहट्टावृत्ते कविजनचित्ते नवयुगरचितकलेऽपि ॥ ६८ ॥

यथा-

गर्वावलिभासुर हतकंसासुर भुवि कृतविमलविलास,
 मुरलीभासितकर वृषभासुरहर वरतरुणीकृतरास^१ ।
 दावानलवालक^२ गोधनपालक हिमकरकरनिमहास,
 कृपया कुरु दृष्टिं मयि सुखवृष्टिं मुनिहृदि^३ जनितविकास ॥ ६९ ॥

इति मरहट्टा ।

इति श्रीवृत्तमौक्तिके धार्तिके षतुर्थे पद्यावलीप्रकरणम् ।

—50—

पञ्चमं सवया-प्रकरणम्

अथ सवया^१

सप्तमकारविभूषितं पिङ्गलभाषितमन्तगुरुपहितं,
 अन्यदथापि तथैव भूषितमन्तगुरुद्वयसविहितम् ।
 अष्टसकारमयो गुरुसङ्गतमेतदधान्यदपि प्रथितं,
 सप्तजकारविराजितमन्त्यलघुं^२ गुरुं^३ भासितमन्यदिदम् ॥ १ ॥
 अन्यदिदं [मुनिनायकभाषितमन्त्यलघुं गुरुयुग्मसुयुक्तं,
 योगचतुष्कलपूजितं]^४ अन्यदिदं युगकल्लिकलाभिरमुक्तम्^५ ।
 पण्डितमण्डलिनायकभूषतिमानसरञ्जनमद्भुतवृत्तं,
 सर्वमिदं सवयामिधमुक्तमशेषकवीन्द्रविमोहितचित्तम् ॥ २ ॥

अयंतेषां भेदानां नामानि

मदिरा मालती मल्ली मल्लिका माधवी तथा ।
 मागधीति च नामानि तेषामुक्तान्यशेषतः ॥ ३ ॥

कमेणोदाहरणानि^६, यथा^७—

१ मदिरा सवया

भालविराजितचन्द्रकल नयनानलदाहितकामवर,
 बाहुविराजितशेषफणीन्द्रफणामणिभासुरकान्तिधरम् ।
 भूधरराजसुतापरिमण्डितसण्डित^८ नूपुरदण्डधर,
 नोमि महेशमशेषसुरेशविलक्षणवेषमुमेश^९ 'हरम् ॥ ४ ॥

इति मदिरा सवया ।

२ मालती सवया

चन्द्रवचाहचमत्कृतिचञ्चलमीलिविभूषित-^{१०} 'चन्द्रविशोभ,
 दयनयनीनविभूषणभूषितनन्दसुतं वनिताधरलोभम् ।
 धेनुकदानवदारणदक्ष-दयानिधिदुर्गमवेदरहस्य
 नोमि हरिं दितिजावलिमालितं^{११} 'भूमिभरापनुद सुयशस्यम् ॥ ५ ॥

इति मालती सवया ।

१ ग सचईया । २ ग पिहितम् । ३ य ग सधु । ४ ग मुनि । ५ कोट्टक-
 र्त्तो गो भासित क प्रतो । ६ ग कसारसमुच्चयम् । ७ ग ताता कमेणोदाहरणानि ।
 ८ ग तदप्ययः । ९ क प्रतो 'सण्डित' शब्दो नैव । १० ग मुनेश । ११ ग विल-
 षित । १२ ग दितिजावलिभाषित ।

३ मल्लो सवया

गिरिराजसुताकमनीयमनङ्गविभङ्गकर गलमस्तकमाल,
 परिधूतगजाजिनवाससमुद्धतनृत्यकर विगृहीतकपालम् ।
 गरलानलभूपित दोनदयालु मदभ्रमरोद्धत^१-दानवकाल,
 प्रणमामि विलोलजटातटगुम्फितशेष^२ क्लानिधिलालितभालम् ॥ ६ ॥

इति मल्लो सवया ।

४ मल्लिका सवया

धुनोति मनो मम चम्पककाननकल्पितकेलिरय पवन,
 कयामपि नैव करोमि तथापि वृथा कदन कुरुते मदन ।
 क्लानिधिरेव वलादयि । मुञ्चति वल्लिकलापमलीकहिम
 विधेहि तथा मतिमेति यथा सविधेन पथा व्रजभूमहिम ॥ ७ ॥

इति मल्लिका सवया ।

५ माधवी सवया

विलोलविलोचनकोणविलोकित मोहितगोपवधूजनचित्त,
 मयूरकलापविकल्पितमौलिरपारक्लानिधिवालचरित्र ।
 करोति मनो मम विह्वलमिन्दुनिभस्मितसु दरकुन्दमुदन्त,
 सखीमिति^३ कापि जगाद हरेरनुरागवशेन विभावितमन्त ॥ ८ ॥

इति माधवी सवया ।

६ मागधी सवया

माधव^४विद्युदिय गगने तव कलयति पीतवसनमभिरामम्,
 जलधरनीलगगनपद्धतिरपि तव तनुरुचिमनुसरति निकामम् ।
 हृद्भरासनमपि तव वक्षसि भासितवरवनमालाशोभ
 [कुरु मम वचन सफलम् हृदय राधाघरमधुविरचितलोभम्^५] ॥ ९ ॥

इति मागधी सवया ।

उक्तानि सवयाख्यानि छन्दास्येतानि कानिचित् ।

ऊह्यानि लक्ष्यमालोच्य^६ शेषाणि निजबुद्धित ॥ १० ॥

७ घनाक्षरम्^१

रसभूमिवर्णयतिक्^२ तदनु च क्षरभूमिविरतिक् यत्तु^३ ।

विधुवह्निवर्णं^४ सङ्गतमिदमप्रतिम घनाक्षर वृत्तम् ॥ ११ ॥

यथा-

रावणादिमानपूर-द्वरनाशनेति वीर

राम कि विशालदुर्गमायाजालमेव ते,

मंथिलीविलासहास धूतसिन्धुवासर(रा)स^५

भूतपतिक्षरासनभङ्गकर^६ भासते ।

दीनदु खदानसावधान पारावारपार^७-

थान-वीरवानरेन्द्रपक्ष कि महामते^८,

ते रणप्रचण्डबाहुदण्डमेव हतुमत्र

बाणदावदग्धशत्रुसंनिष्ठा प्रकुर्वन्ते ॥ १२ ॥

इति घनाक्षरम् ।

इति वृत्तमीक्षितके वासिष्ठे^९ पञ्चम सवया^{१०} इक्षरणम् ।



१ ग तदवया धार्या । २ ग य वि । ३ य यमनु । ४ य विपुर्णो वली ।
५ ग वासतार । ६ ग सवदर । ७ ग पारावान । ८ ग भाति । ९ ग
सवाम ।

पष्ठं गलितकप्रकरणम्

अथ गलितकानि—

१. गलितकम्

शरकल पञ्चपरिमित जलधिकलमुग
प्रविलसति यस्मिन्श्चरणे लघुगुर्वनुगम्^१ ।
विधुयुगकलारचितमहिपतिफणिकलितकं
वरकविजनमानसहर^२ भवति गलितकम् ॥ १ ॥

अथा—

मल्लि^३—मालतियूथिपद्मजकुन्दकलिके,
कुमुदचम्पककेतकिपरिमलबलदलिके^४ ।
मलयपर्वतशीतल त्वयि जातपवनः,
हरिवियोगतनोरिय मम कथं दहन. ॥ २ ॥
इति गलितकम् ।

२ विगलितकम्

ठगणद्वय^५ भवति चतुष्फलद्वयसङ्गत
तदनु च शरकल भवति सुललितकविसम्मतम् ।
दहनपक्षकलाविलसितविमलसकलचरण,
विगलितकमेतत् फणिपतिमधिकसुखकरणम् ॥ ३ ॥

अथा—

भयजलघितारिणि^६ सकलतापहारिणि गङ्गे,
अघदहनकारिणि रुचिधारिणि हरकृतसङ्गे ।
गिरिनिकरदारिणि मनोहारिणि तरलभङ्गे,
स्वपिमि वारिणि हसहारिणि तव विलसदङ्गे ॥ ४ ॥
इति विगलितकम् ।

३ सङ्गलितकम्

ठगणयुगेन विराजित,
पञ्चकलेन सभाजितम् ।
सङ्गलितकमिति कल्पित,
फणिपतिपिङ्गलजल्पितम् ॥ ५ ॥

१. ग. गुर्वनुग । २. ग. मानसहर तवति । ३. य. मल्लिका । ४. म. कुन्दचम्पकके
परिमलवल्लिके । ५. ख. ठगणद्वयम् । ६. य. भयजलघितारिणि ।

धृतिमवधारय मानसे,
हरिमपि^१ गततनुरानशे ।
सखि । तव वचनं मानये,
ननु वनमालिनमानये ॥ ६ ॥
इति सङ्गलितकम् ।
४. सुन्दरगलितकम्

ठगणद्वयेन आपित,
लादित्रिकलविकासितम्^२ ।
सुन्दरगलितकनामकं,
वृत्तममलरुचिधामकम् ॥ ७ ॥

पद्या-

विगलितचिह्नुरविलासिनी,
नवहिमकरनिभहासिनीम् ।
सुवसराधिकान्ताभये^३,
तनुजितकनकां कामये ॥ ८ ॥
इति सुन्दरगलितकम् ।
५. भूषणगलितकम्

ठगणद्वितय प्रथम चरणे,
रसभूमिसुसह्यकलाभरणे ।
त्रिकलद्वितय पुनरेव यदा,
फणिभाषित-भूषणकेति तदा^४ ॥ ९ ॥

पद्या-

रुचिरवेणुविरावविमोहिता
द्रुतपदाः श्रुतरासरसे^५ हिता ।
हरिमदूरवने हरिणेक्षणा
स्तमनुजम्पुरनन्यगतेक्षणाः^६ ॥ १० ॥
इति भूषणगलितकम् ।
६. मुक्तगलितकम्

पट्कनं प्रथममय वेदत्रिकलयुत,
पुनरपि यन्चरणोपगतवलयचितम् ।

१. ग. हरिमपगत । २. ग. विलासितम् । ३. ग. सुवसराविलासम् । ४. ग. यदा ।
५. स. ग. रते । ६. ग. शयम् ।

गगनपक्षकलाकृतचरणविकासित,

मुखगलितकमिद वरफणिपत्तिभाषितम् ॥ ११ ॥

यथा—

ब्रह्म भवादिकनुतपदपङ्कजयुगल,

नाशितभक्तहृदयमतदारुणशमलम् ।

दीनकृपानिधि-भवजलराशितारक,

नोमि ह्रिं कमलनयनमशुभदारकम्^१ ॥ १२ ॥

इति मुक्तगलितकम् ।

७. विलम्बितगलितकम्

आदौ पट्कल तदनु चान्तगेन सहित,

जलनिधिकलचतुष्कमहिनायकेन विहितम् ।

समगणे जगणेन सहित^२ फणीन्द्रभणित,

विलम्बिताख्यमेतदखिलसुकवीन्द्रगणितम्^३ ॥ १३ ॥

यथा—

नमामि पङ्कजानन सकलदुःखहरण,

भवाम्बुराशितारक निखिलवन्द्यचरणम्^४ ।

कपोललोलकुण्डल^५ व्रजवधूजनसहित,

विलासहासपेशल सरसरासमहितम् ॥ १४ ॥

इति विलम्बितगलितकम् ।

८ [१] समगलितकम्

ङगणविभूष प्रथममवेहि पञ्चकलयुगयुत^६,

तदनु चतुष्कलयुगसहित विरती लगुरुमहितम्^७ ।

शरयुगमात्रासहितमनुत्तमपिङ्गलभाषित,

समगलितकमिदमतिसुखकरसुललितपदभाषितम् ॥ १५ ॥

यथा—

निखिलसुरगणविनुतपङ्कजकोमलचरणयुगल,

पीतवसनविलसितशरीरमनुत्तमकम्बुगलम् ।

नोमि निगमपरिगदितमपारगुणयुतमिन्दुमुख,

नन्दतनूज निखिलगोपवधूजनदत्तसुखम् ॥ १६ ॥

इति समगलितकम् ।

१ ग दापकम् । २ ग रहितम् । ३ ग गदितम् । ४. ग व.द्या चरणम् ।

५ ग कुण्ड । ६ ग णयुतम् । ७ ग सधुगुरुसहितम् ।

८ [२]. अपरं समगलितकम्

समगलितकं प्रभवति^१ विषये यदि ङगणत्रिकलाभ्या कलितकम्^२ ।

मुखगलितकं समचरणे किल भवति निखिलपण्डितमुखवलितकम्^३ ॥ १७ ॥

यथा-

विभूतिसित शिरसि निवसिता^४-नुपमनदीभवपङ्कजविलसितम् ।

अहिप^५-रुचिर किमपि विलसिता^६ मम हृदि वेदरहस्यमतिमुचिरम् ॥ १८ ॥

इति द्वितीयं समगलितकम् ।

८ [३] अपरं सङ्गलितकम्

विपरीतस्थितसकलपदयुतमेव समगलितकं सङ्गलितकम्^७ ॥ १९ ॥

विपरीतपठितमिश्रमेवोदाहरणम् । यथा-

शिरसि निवसिता^८-नुपमनदीभवपङ्कजविलसित विभूतिसितम् ।

किमपि विलसिता मम हृदि वेदरहस्यमतिमुचिरं अहिप^९-रुचिरम् ॥ २० ॥

इति द्वितीयं सङ्गलितकम् ।

८ [४] अपरं सम्बितागलितकम्

शरमितङ्गणै स्याद् भाविता^{१०} निखिलपादे

विषमजगणमुक्ता चान्तगा^{११} विगतवादे ।

युगयुगकृतमात्राः कल्पिता^{१२} यदनुपाद,

फणिपतिमणितेय सम्बिता ह्यज विपादम् ॥ २१ ॥

यथा-

राजति वशीरुतमेतत् नाननदेसे,

गच्छति कृष्णे तस्मिन्त्रय मञ्जुलकेसे ।

याहि मया सार्द्धमितो रासाहितचित्ते,

तत्सविधे प्रेमविलोले तेन च वित्ते^{१३} ॥ २२ ॥

इति द्वितीयं सम्बितागलितकम् ।

९ त्रिशित्तिकागलितकम्

दारोदितवलो यदि भाति^{१४} गणो विषमस्थितियुत

समस्थित (ति) विभूषितेन तदनु चतुष्कलेन युत ।

१. ग. 'समगलितक' नास्ति, भवति च । २. ग. 'सकलितकम्' । ३. ग. 'मुखवलितकम्' ।
४. ग. 'निवासिता' । ५. ग. 'अहिप' । ६. ग. 'विलसिता' । ७. ग. 'नास्ति' । ८. ग.
'विलसिता' । ९. ग. 'अहिप' । १०. ग. 'भाविता' । ११. ग. 'वान्तगा' । १२. ग. 'युगयुगकृतमात्राः' ।
१३. ग. 'वित्ते' । १४. ग. 'भाति' ।

शरोदितगणैः परिभावितसकलचरणैः सहिता^१,
कवीन्द्रकथितान्तगुरुः^२ किल विक्षिप्तिका महिता^३ ॥ २३ ॥

यथा-

चन्द्रकचितमुकुटमखिलमुनिजनहृदयसुखकरणं,
धृतवेणुकसं वरभक्तजनस्याद्भुतं शरणम् ।
वृन्दावनभूमिषु वल्लवनारीमनोहरणं,
रुचिरं निजचेतसि चिन्तय गोवर्द्धनोद्धरणम्^४ ॥ २४ ॥
इति विक्षिप्तिकागलितकम् ।

१०. ललितागलितकम्

पूर्वं कथिता विक्षिप्तिकैव^५ चरणसुकलिता,
ठगणे^६ चतुष्कलेन भूषिता प्रभवति ललिता ॥ २५ ॥

यथा-

कमलापति कमलसुलोचनमिन्दुनिभाननं,
भञ्जुलपरिपीतवाससमपारगुणकाननम् ।
सनकादिकमानसजनितनिवाससमस्तनुतं,
प्रणमामि ह्रिं निजभक्तजनस्य हिते निरतम् ॥ २६ ॥
इति ललितागलितकम् ।

११. विषमितागलितकम्

पूर्वं^७ द्वितीयचरणे विषमस्थितिकपञ्चकलः,
तुर्ये^८ तृतीयचरणे प्रथम भवति चतुष्कलः ।
सकले समस्थित(ति)वेदकलो^९ विरती विरचिता,
या(यो)गेन^{१०} क्षरोक्तगणेन च सा भवति विषमिता ॥ २७ ॥

यथा-

येषु^१ करे^२ कलयता सति ! गोपकुमारकेण,
पीताम्बरावृतशरीरभृता भवतारकेण ।
प्रेमोद्गतस्मितरुचा वनजभूषणशोभिना,
चेतो भमाऽपि कवलीकृतं मानसलोभिना ॥ २८ ॥
इति विषमितागलितकम् ।

१. ग. सहिताः । २. ग. गुरुः । ३. ग. महिताः । ४. ग. धरणम् । ५. ग. विक्षिप्तिकैः कथिता च । ६. ग. ठगणेन । ७. ग. तुर्यं । ८. ग. कसो । ९. ग. सागेन । १०. ग. येणुकरे ।

१२ मालागलितकम्

पद्कलविरचित तदनु च दश^१-सख्यङ्गण-

परिभावितचरणमुदेति मालाभिध गलितकम् ।

मध्यगुरुजगणेन विरचितसमस्तसमगण-

रसोदधिकलकमहीन्द्रफणिवदने^२ वलितकम् ॥ २६ ॥

यथा^३ -

कालियकुलविभञ्जक-मसुरविडम्बक-दनुजविलुम्पक-

मखिलजनस्तुतशुभचरितमुनिनुत,

नौमि विमलतर सकलसुखकर कलिकलुपहर,

भवजलधितरि हरि पालने सुनियतम् ।

दसहृदि विवट मुनिगणनिकट विनिहतशकट

परिधृतमुकुट जगद्विरचनेऽतिचतुर,

भक्तजनधारण भवभयहरण वरसुखकरण

स्वपदवितरण जगनाशने धृतधुरम् ॥ ३० ॥

इति मालागलितकम् ।

१३ मृगधमालागलितकम्^४

मालाभिष्यमेव^५ हि भवति चतुष्कल-

युगरहित फणिपविष्ट^६ मृगधपूर्वम् ॥ ३१ ॥

यथा^७ -

वन्दे नन्दनन्दनमनवरत मरकतसुतनु धृतरुचि मुरारिमा(मी)श,

वादितवशमानसमुनिजन-नारदविरचितगायनमवनीमणीमनीषम् ।

कारितरामहासपरवशरत विरचितसुरत विततकुङ्कुमेन पीत,

त देव प्रमोदभरसुविदित मुदितसुरनृत सततमात्मजेन गीतम् ॥ ३२ ॥

इति मृगधमालागलितकम् ।

१४ जवुगलितकम्

मृगधपूर्वकमेव टगणयुगलेन रहितपदमुद्गलितकम् ॥ ३३ ॥

यथा^८ -

नन्दनन्दनमेव कलयति न किञ्चिदिह जगति सारमपर,

पुत्रमित्रकलत्रमत्तिलमपि चित्रघटितमिव भाति न परम् ।

१. ग दारतस्य । २. ग फणिपवनेद । ३. ग ऋषभमुखाहरण, उवाहरण नास्ति ।

४. ग मृगधमालागलितकम् । ५. ग मालाभिष्यमेव । ६. ग विष्ट । ७. ग ऋषभमुखाहरण, उवाहरण नास्ति । ८. ग सज्जनानुसारादेव कविमिरदाहरणमूह्यम्, उवाहरण नास्ति ।

सावधानतयैव लवमपि मन परमचलमिदं न विदितं
भावयन्तु दिवानिशमनिमिपमात्मनि परमपदं प्रमुदितम् ॥ ३४ ॥

इत्युद्गलितकम् ।

एव गलितकादीनि वृत्ताभ्युक्तानि कानिचित् ।
लक्ष्याणि लक्ष्यमास्तक्ष्यं शेषाणि निजवुद्धितः ॥ ३५ ॥

इति गलितक-प्रकरणं पठम् ॥

[ग्रन्थकृतप्रशस्तिः]

रन्ध्रसूर्याश्वसरायात मानाच्छन्द इहोदितम् ।
सप्रभेदवसुद्वन्द्वशतद्वयमुदीरितम् २८८ ॥ ३६ ॥
सोदाहरणमेतावदस्मिन्खण्डे मयोदितम् ।
प्रस्तारसरायया तेषां भाषणे पिङ्गल क्षम ॥ ३७ ॥
१ श्रीचन्द्रशेखरवृते रचिरतरे वृत्तमौक्तिकेऽमुष्मिन् ।
मात्रावृत्तविधायकखण्डे सम्पूर्णतामगमत् ॥ ३८ ॥
वाणमुनितर्कचन्द्र [१६७५] गणितेव्दे वृत्तमौक्तिके रचिरम् ।
माधे धवलपक्षे पञ्चम्या चन्द्रशेखररचित्रे ॥ ३९ ॥

४ इत्यालङ्कारिचन्द्रचूडामणि छन्दशास्त्रपरमाचार्य सकलोपनिषदरहस्यार्णव-

वर्णधारधीलक्ष्मीनाथभट्टात्मज-कविशेखर श्रीचन्द्रशेखरभट्ट-

विरचिते धीवृत्तमौक्तिके पिङ्गलवात्तिके

मात्रास्य प्रथम परिच्छेदे ।

धीरस्तु ।

१. ग पूर्णं पद्यं नास्ति । २. ग इति वृत्तमौक्तिके गलितक-प्रकरणं पठम् । तदनन्तरं
ग प्रतीतिरन्यपद्यं वक्तव्यम्—

जनकुम्भपालं सलिलभासं वादितमृदुतरदासं,
रोषनमुत्तमालं धृतपद्ममालं द्योभिततरलपञ्चलम् ।
दितिप्रज्ज्वालं वादिततासं वृत्तमुरमुनिमणिरासं,
रचिरलिततमालं जिनधनञ्जालं भासितपादपञ्चलम् ॥

३. ग इति धीमन्चन्द्रशेखरवृते रचिरतरे वृत्तमौक्तिकेऽमुष्मिन् मात्रावृत्तविधायकखण्डे
समाप्तम् । ४. ग पूर्णं पद्यं नास्ति । ५. ग 'इत्यालङ्कारस्य 'विरच्ये' पद्यं पठम्
नास्ति' ।

श्रीलक्ष्मीनाथभट्टसूनु-कविचन्द्रशेखरभट्टप्रणीतं

वृत्तमौक्तिकम्

द्वितीयः खण्डः

प्रथमं वृत्तिनिरूपण - प्रकरणम्

[मङ्गलाचरणम्]

गिरोऽदिव्यद्^१ गङ्गाजलभवकलासोलकमला-

न्यल घुण्डादण्डोद्धरणविषयान्यारचयता ।

जटाया वृष्टाया द्विरदवदनेनाथ रभसा,

दुदश्रुर्गोरीश क्षपयतु मन क्षोभनिकरम् ॥ १ ॥

मात्रावृत्तान्युक्त्वा वीतूहलत फणीन्द्रमणितानि ।

अथ चन्द्रशेखरकृती वर्णच्छन्दासि कथयति स्फुटत ॥ २ ॥

[अथैकाक्षर वृत्तम्]

१ श्री

यो ग । सा श्री ॥ ३ ॥

यथा-

श्री र्मा मव्यात् ॥ ४ ॥

इति श्री १

२ अथ इ-

स इ रि-ति ॥ ५ ॥

यथा-

दा म यु र ॥ ६ ॥

इति इ- २

अथैकाक्षरस्य प्रस्तारगत्या द्वावेव भेदो भवत^१ ।

इत्यैकाक्षरं वृत्तम् ।

अथ द्व्यक्षरम्

तत्र-

३. कामः

गो चेत् कामो ।

नाग-प्रोक्तः ॥ ७ ॥

यथा

वन्दे कृष्णम् ।

केली-तृष्णम् ॥ ८ ॥

इति कामः ३.

४. अथ मही

लग्नी महीम् ।

वदत्यहिः ॥ ९ ॥

यथा-

रमापते ।

नमोऽस्तु ते ॥ १० ॥

इति मही ४.

५. अथ सारम्

वक्र-सौ च ।

सार-मन्त्र ॥ ११ ॥

यथा-

कंस-काल ।

नीमि बाल ॥ १२ ॥

इति सारम् ५.

६. अथ मधुः

द्विसकृति ।

मधुरिति ॥ १३ ॥

यथा-

मतिमव ।

मम भव ॥ १४ ॥

इति मधुः ६.

अत्रापि द्व्यक्षरस्य प्रस्तारगत्या चत्वार ४ एव भेदा भवन्तीति, तावन्तोप्युक्ताः ।

इति द्व्यक्षरम् ।

अथ त्र्यक्षरम्

तत्र-

७. ताली

पादे या म प्रोक्ता ।

ताली सा नागोक्ता ॥ १५ ॥

यथा-

गोवृन्दे सञ्चारी ।

पायाद् दुग्धाहारी ॥ १६ ॥

इति ताली ७. 'मारी'त्यग्यत्र ।

८ अथ शशी

शशीवृत्तमेतत् ।

यकारो यदि स्यात् ॥ १७ ॥

यथा-

मुदे नोऽस्तु कृष्णः ।

प्रियायां सतृष्णः ॥ १८ ॥

इति शशी ८.

९. अथ प्रिया

मल्लकी राजते ।

सा प्रिया भासते ॥ १९ ॥

यथा-

राधिका-रागिणम् ।

नौमि गोचारिणम् ॥ २० ॥

इति प्रिया ९.

१०. अथ रमणः

प्रियते सगणः ।

फणिना रमणः ॥ २१ ॥

यथा-

सखि मे भविता ।

हरिरप्यचिता ॥ २२ ॥

इति रमणः १०.

११. अथ पञ्चालम्*

पादेपु तो यहि ।

पञ्चाल-वृत्तं हि ॥२३॥

यथा-

शं देहि गोपेश ।

मन्दे महत्केस ॥ २४ ॥

इति पञ्चालम् ११.

१२. अथ मृगेन्द्रः

नरेन्द्र विराजि ।

मृगेन्द्र मवेहि ॥ २५ ॥

यथा-

विलोलवत्तंस ।

नमो घृतवंश ॥ २६ ॥

इति मृगेन्द्रः १२.

१३. अथ मन्दरः

भो यदि मुन्दरि ।

मन्दरमेव हि ॥ २७ ॥

यथा-

चञ्चलकुन्तल ।

नौमि सुमङ्गल ॥ २८ ॥

इति मन्दरः १३.

१४. अथ कमलम्

नमनुकलय ।

कमलममल ॥ २९ ॥

यथा-

अहिपवलय ।

शमिह कलय ॥ ३० ॥

इति कमलम् १४.

अत्रापि व्यक्षरस्य प्रस्तारगत्या अष्टौ भेदा भवन्तीति तावन्तोप्युदाहृताः ।

इति व्यक्षरम् ।

अथ चतुरक्षरम्

सत्र-

१५. तोर्णा

यस्मिन् कर्णो वृत्ते स्वर्णो ।

सा स्यात् तोर्णा नागोत्कीर्णा ॥ ३१ ॥

यथा-

गोपीचिन्ताकर्णे सक्तम् ।

न्दे कृष्णं गोभिर्युक्तम् ॥ ३२ ॥

इति तोर्णा १५, 'कन्या' इत्यन्यत्र ।

१६. अथ पारो

पक्षिभासि मेरुघारि ।

वारिराशि वर्णवारि* ॥ ३३ ॥

यथा-

गोपिकोडुसङ्घचन्द्र ।

नीमि जन्मपूतनन्द ॥ ३४ ॥

इति पारो १६.

१७. अथ नगाणिका

विधेहि ज ततो गुरुम् ।

नगाणिका भवेदरम् ॥ ३५ ॥

यथा-

विलोलमौलिभासुरम् ।

नमामि संहतासुरम् ॥ ३६ ॥

इति नगाणिका १७.

१८. अथ शुभम्

द्विजवरमिह यदि ।

विदधत, शुभमिति ॥ ३७ ॥

यथा-

अशुभमपहरतु ।

हृदि हरिरुदयतु ॥ ३८ ॥

इति शुभम् १८.

अत्रापि चतुरक्षरस्य प्रस्तारगत्या षोडश १६ भेदा भवन्ति, तेषु चाद्यन्तभेद-
युक्ता ग्रन्थविस्तरस्तद्ध्याञ्च चत्वारो भेदा प्रदर्शिताः, दोषभेदाः शुभोभिरूह्या इति ।*

इति चतुरक्षरम् ।

१. स. वर्णवारि ।

* दोषभेदाः पञ्चमपरिनिष्टे दृष्टव्याः ।

अथ पञ्चाक्षरम्

तत्र-

१९ सम्मोहा

आदौ स प्रोक्त पश्चात् कर्णोक्तम् ।
वाणार्णयुक्त सम्मोहावृत्तम् ॥ ३६ ॥

यथा-

वन्दे गोपाल दैत्याना कलम् ।
गोपीगोपाना पाल दीनानाम् ॥ ४० ॥

इति सम्मोहा १९

२० अथ हारी

यस्मिन् तकार पक्षोक्तहारः ।
पञ्चार्णयुक्त हारीति वृत्तम् ॥ ४१ ॥

यथा-

भानन्दकारी गोपीविहारी ।
मा पातु बाल बेलीरसाल ॥ ४२ ॥

इति हारी २०

२१ अथ हस

आदिरयान्त कुण्डलयुक्त ।
मध्यगत सो यत्र स हस ॥ ४३ ॥

यथा -

नन्दकुमार सुन्दरहार ।
गोकुलपाल पातु स बाल ॥ ४४ ॥

इति हस २१

२२ अथ प्रिया

सगणाहिता सग-सयुता ।
भवतीह या किल सा प्रिया ॥ ४५ ॥

यथा -

सखि ! गोकुले सुखसकुले^१ ।
ब्रजसुन्दरो ननु निर्दय ॥ ४६ ॥

इति प्रिया २२-

२३. अथ यमकम्

नमिह कुरु लयुगमय ।

इति यमकमनुकलय ॥ ४७ ॥

यथा—

असुरयम शमिह मम ।

अनुकलय फणिवलय ॥ ४८ ॥

यथा वा—

सुपहर घरणिघर ।

दलितभव सुजनभव ॥ ४९ ॥

इति यमकम् २३

अत्र प्रस्तारगत्या पञ्चाक्षरस्य द्वात्रिंशद् ३२ भेदा भवन्ति, तेषु कतिच-
नोक्ताः शेषास्तूह्या ।*

इति पञ्चाक्षरम् ।

अथ षडक्षरम्

तत्र—

२४ शेषा

नागाधीशप्रोक्त सर्वैर्दोषैर्युक्तम् ।

षड्भिर्वर्णैर्बृत्त^१ शेषाख्य स्याद् वृत्तम् ॥ ५० ॥

यथा—

वसादीना काल भोगोपीना पाल ।

पायान्मायाबाल मुक्ताभूषाभाल^२ ॥ ५१ ॥

इति शेषा २४

२५ अथ तिलका

यदिसद्वितयाचित सर्वं पदा ।

तिलकेति षण्णिवंदसीह तदा ॥ ५२ ॥

यथा—

कमनीयवपु शकटादिरिपु ।

जयतीह हरि भवमिन्दुतरि ॥ ५३ ॥

इति तिलका २५

१ त त्रिगुण इव । २ ल मात ।

*टिप्पणी—नेपभेदा पञ्चमपरिगण्ये द्रष्टव्या ।

२६. अथ विमोहम्

पक्षिराजद्वय यत्र पादस्थितम् ।

पिङ्गलेनोदित तद् विमोह मतम् ॥ ५४ ॥

यथा-

गोपिकामानसे य सदा व्यानशे ।

पातु मा सेवक सोऽह्नद्यो बकम्^१ ॥ ५५ ॥

इति विमोहम् २६.

‘विज्जोहा’ इति स्त्रीलिङ्ग पिङ्गले^{*१} ।

२७ अथ चतुरसम्

प्रथमनकार^२ तदनु यकारम् ।

कुरु चतुरसे फणिकृतशसे ॥ ५६ ॥

यथा-

विनिहतकस तरलवतसम् ।

नम धृतवश सुरकृतशसम् ॥ ५७ ॥

इति चतुरसम् २७

‘चउरसा’ इति स्त्रीलिङ्ग पिङ्गले^{*२} ।

२८ अथ मग्यान्तम्

पादे द्वित देहि पङ्क्वर्णमाधेहि ।

जानीहि नागोक्तमन्यान्मेतद्वि ॥ ५८ ॥

यथा-

धूतासुराधीश गोगोपकाधीश ।

मा पाहि गोविन्द गोपीजनानन्द^३ ॥ ५९ ॥

इति मग्यान्तम् २८. स्त्रीलिङ्गमन्यत्र ।

२९ अथ शङ्खनारी

यदा स्तो यकारो रसप्रोक्तवर्णी ।

तदा शङ्खनारी फणीन्द्रोदिता स्यात् ॥ ६० ॥

यथा

व्रजे रासकारी मनस्तापहारी ।

वधूभि समेतो हरि पातु चेत ॥ ६१ ॥

इति शङ्खनारी २९ ‘सोमराजो’ त्यन्यत्र ।

१. ख. पक्षिराज नास्ति । २ क ख. पुस्तके ‘नकार’ स्थाने ‘नमस्कार’ पाठ

सोऽसमोधीन १ (स०) ३. ख. अमन्त्र ।

*टिप्पणी—१ प्राकृतपञ्चमपरिच्छेद २ पद्य ४५

*टिप्पणी—२ “ ” “ ४७

३०. अथ सुमालतिका

जकारयुगेन विभाति युतेन ।

अहिर्वदतीति सुमालतिकेति ॥ ६२ ॥

यथा-

व्रजाधिपवाल विभ्रूपितवाल* ।

सुरारिविनाश नमाम्यनलाग ॥ ६३ ॥

इति सुमालतिका ३०. 'मालती'ति पिङ्गले* ।

३१. अथ तनुमध्या

यस्या शरयुग्मं कुन्तीसुतयुग्मे ।

ग्रन्थः खलु साध्या सा स्यात्तनुमध्या ॥ ६४ ॥

यथा-

राघामुखकारी वृन्दावनचारी ।

कसामुरहारी पायाद् गिरिधारी ॥ ६५ ॥

इति तनुमध्या ३१.

३२. अथ दमनकम्

नगणयुगलमिह रचयत ।

दमनकमिति परिकलयत ॥ ६६ ॥

यथा-

व्रजजनयुत सुरगणवृत् ।

जय मुनिनृत व्रजपतिमुत ॥ ६७ ॥

इति दमनकम् ३२.

अन प्रस्तारगत्या षडक्षरस्य चतु पष्टि. ६४ भेदा भवन्ति, तेषु आद्यन्त-
सहिता कियन्तो भेदा उक्ता, शेषभेदा सुधीभिरुह्या । ग्रन्थविस्तरशङ्कया
नात्रोक्ता इति ।**

इति षडक्षरम् ।६।

अथ सप्ताक्षरम्

३३. शीर्षा

वर्णा दीर्घा यस्मिन् स्युः पादेऽशीष्वा सख्याका ।

नागाधीशप्रोक्त तत् शीर्षामित्य वृत्त स्यात् ॥ ६८ ॥

यथा-

मुण्डाना मालाजालैर्भास्वत्कण्ठं मूतेशम् ।

कालव्यालैः खेलन्तं वन्दे देव गौरीशम् ॥ ६९ ॥

इति शीर्षा ३३.

* ल भाल ।

*टिप्पणी—१ प्राकृतपङ्कजम-परिच्छेद २ पद्य १५ ।

*टिप्पणी—२ शेषभेदा. पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्याः ।

३४ अथ समानिका

पक्षिराजभासिता जेन सविभूषिता ।

अन्तर्गेन शोभिता सा समानिका मता ॥ ७० ॥

यथा—

पुल्लपङ्कजानन केलिशोभिकाननम् ।

वल्लवीमनोहर नौमि राधिकावरम् ॥ ७१ ॥

इति समानिका ३४.

३५ अथ सुवासकम्

द्विजमिह धारय भमनु च कारय ।

भवति सुवासक-मिति गुणलासक ॥ ७२ ॥

यथा—

विवुधतरङ्गिणि भुवि कृत^१रिङ्गिणि ।

सरलतरङ्गिणि जय हरसङ्गिणि ॥ ७३ ॥

इति सुवासकम् ३५.

३६ अथ करहञ्चि

नगणमिह धेहि तदनु समवेहि ।

इति किन[श]राचि भवति करहञ्चि ॥ ७४ ॥

यथा—

स्रजभुवि विलास युवतिकृत[रा]स ।

जय निहतदैत्य जघन^२कृतशैत्य ॥ ७५ ॥

इति करहञ्चि ३६.

३७ अथ कुमारललिता

जकारयुतकर्णा मुनीन्द्रमितवर्णा ।

सधुद्वितयमध्या कुमारललिता स्यात् ॥ ७६ ॥

यथा—

स्रजाधिपकिशोर नवीनदधिचोरम् ।

कुमारललित [त] नमामि हृदि सत्तम् ॥ ७७ ॥

इति कुमारललिता ३७.

३८ अथ मधुमती

नगणयुगयुता तदनु ग-महिता ।

वदति मधुमती-महिरतिसुमतिः ॥ ७८ ॥

यथा-

दितिसुतकदन शशधरवदन ।
विलसतु हृदि न तनुजितमदन ॥ ७६ ॥

इति भधुमती ३८

३६ अथ मदलेखा

आद्यन्ते कृतकर्णा शैलैः सम्मितवर्णा ।
मध्ये भेन विशेषा नागोवता मदलेखा ॥ ८० ॥

यथा-

गोपाल कृतरास गो - गोयोजनवासम् ।
वन्दे कुन्दसुहास वृन्दारण्यनिवासम् ॥ ८१ ॥

इति मदलेखा ३६.

४०. अथ कुसुमतति

द्विजमनुफल्य नमनु विरचय ।
अहिरनुवदति कुसुमततिरिति ॥ ८२ ॥

यथा-

विपमशरकृत कुसुमततियुत ।
युवतिमनुसर मनसि-शयकर ॥ ८३ ॥

इति कुसुमतति ४०.

अत्र प्रस्तारगत्या सप्ताक्षरस्य अष्टाविंशत्यधिक क्षत १२८ भेदा भवन्ति,
तेषु आद्यन्तसहित भेदाष्टक प्रोक्त, शेषभेदा ऊहनीया सुबुद्धिभिर्ग्रन्थविस्तर-
शङ्कया नाप्रोक्ता इति ।*

इति सप्ताक्षरम् ।

अथ अष्टाक्षरं वृत्तम्

तत्र-

४१. विद्युन्माता

सर्वे वर्णा दीर्घा यस्मिन्नष्टौ नागाधीशप्रोक्ता ।
अष्टधावर्धो विद्युन्मा स्याद् विद्युन्मासावृत्त तत् स्यात् ॥ ८४ ॥

यथा-

कण्ठे राजद्विद्युन्माता श्यामाम्भोदप्रस्थो बाल ।
गो-गोपीना नित्य पाल पायात् कसादीनां बाल ॥ ८५ ॥

इति विद्युन्माता ४१

*१ शेषभेदा पञ्चमपरिनिष्टे द्रष्टव्या ।

४२. अथ प्रमाणिका

शरैस्तथा च कुण्डलैः क्रमेण याजतिशोभिता ।
गिरोन्द्रवर्णभासिता प्रमाणिकेति सा भता ॥ ८६ ॥

यथा-

विलोलमौलिशोभितं ब्रजाङ्गनासु लोभितम् ।
नमामि तन्ददारकं तटस्थचौरहारकम् ॥ ८७ ॥

इति प्रमाणिका ४२.

४३. अथ मल्लिका

हारमेरुमत्र देहि तं पुनः क्रमादवेहि ।
भेहि योगवर्णमासु (शु) मल्लिका कुरुष्व वासु ॥ ८८ ॥

यथा-

वेणुरन्ध्रपूरकाय गोपिकासु मध्यगाय ।
वन्धहारमण्डिताय मे नमोऽस्तु केशवाय ॥ ८९ ॥

इति मल्लिका ४३.

इयमेव ग्रन्थान्तरे अष्टाक्षरप्रस्तारे समानिका इत्युच्यते । अस्मानिस्तु सप्ताक्षरप्रस्तारे समानिका प्रोक्तेति विशेषः ।

४४. अथ तुङ्गा

द्विजवरगणमुक्ता तदनु करतलोक्ता ।
पुनरपि गुरुसङ्गा फणिपतिकृततुङ्गा ॥ ९० ॥

यथा-

ब्रजविहरणशीलः युवतिषु कृतलीलः ।
हृदि विलसतु विष्णुः दितिसुतकुलजिष्णुः ॥ ९१ ॥

इति तुङ्गा ४४.

४५. अथ कमलम्

नगण-सगणाचितं लघुगुरुविराजितम् ।
फणिनूपविकासितं कमलमिति भाषितम् ॥ ९२ ॥

यथा-

वरमुकुटभासुरः ब्रजभुवि हतासुरः ।
ब्रजनूपतिनन्दनः जयति हृदि चन्दनः ॥ ९३ ॥

इति कमलम् ४५.

४६ अथ माणवकक्रीडितकम्

भेन युत तेन चित दण्डकृत हारवृत्तम् ।

वेदयति नागमत माणवकक्रीडितकम् ॥ ६४ ॥

धया-

वेणुघर तापहर^१ नन्दमुत धालयुतम् ।

चन्द्रमुख भक्तसुख नीमि सदा शुद्धहृदा ॥ ६५ ॥

इति माणवकक्रीडितकम् ४६

४७ अथ चित्रपदा

भद्रितयाचितकर्णा शैलविकासितवर्णा ।

वारिनिघो यतियुक्ता चित्रपदा फणिनोक्ता ॥ ६६ ॥

धया-

वेणुविराजितहस्त गोपकुमारकनस्तम् ।

वारिदसुन्दरदेह नीमि कलाकुलगेहम् ॥ ६७ ॥

इति चित्रपदा ४७

४८ अथ अनुष्टुप्

सर्वत्र पञ्चम यस्य तद्यु पठ गुरु स्मृतम् ।

सप्तम समपादे तु ह्रस्व तत्स्यादनुष्टुभम् ॥ ६८ ॥

धया-

कमल ललितापाङ्गि कालालिकुलसङ्कुलम् ।

विलूलत् कुन्तल मुधु^१ कलयत्यतुल मुखम् ॥ ६९ ॥

इति अनुष्टुप् ४८.

४९ अथ जलदम्

गुरु नगणयुगल मनु च लयुगमिह ।

वरफणिपतिवृत्ति^२ कलय जलदमिति ॥ १०० ॥

धया-

नवजलदविमल धुमनयनकमल ।

कलय मम हृदय-भक्तिसजनसदय ॥ १०१ ॥

इति जलदम् ४९

अत्र च प्रस्तारगत्या अष्टाक्षरस्य षट्पञ्चाशदधिक^३ द्विशत २५६ भेदा-
स्तेषु प्राच्यन्तसहितं क्रियन्तस्समुदाहृता, शेषभेदा प्रस्तार्ये समुदाहृतं व्या इति ।^{*}
इत्यष्टासृत्म् ।

१. 'तापहर' क प्रती मास्ति । २. अ. फणिपतिवृत्तमप ।

*टिप्पणी—अस्यान्तरेषु संप्राप्त ये शेषभेदास्ते पञ्चमपरिगणिते दृष्टव्या ।

अथ नवाक्षरम्

तत्र—

५०. रूपामाला

नेत्रोक्ता माः पादे दृश्यन्ते यस्मिन्नङ्गा वर्णा भासन्ते ।

यच्छ्रुत्वा भूपाला मोदन्ते तद् रूपामालाख्य प्रोक्तं ते ॥ १०२ ॥

यथा—

भव्याभिः केकाभिः सम्मिश्राः कुर्वन्तः सम्पूर्णाः सर्वाशाः ।

एते दन्तीन्द्राणां संकाशा मेघाः पूर्णास्तस्मात् सन्त्वाशाः ॥ १०३ ॥

इति रूपामाला ५०.

५१. महालक्ष्मिका

वैनतेयो यदा भासते साऽपि चेद् वह्निना भूष्यते ।

रन्ध्रवर्णा यदा सङ्गताः सा महालक्ष्मिका सम्मता ॥ १०४ ॥

यथा—

कानने भाति वंशीरुतं कामबाणावलीसंयुतम् ।

मानसं भावनादाहितं शीतय स्वं मनो याहि तम् ॥ १०५ ॥

इति महालक्ष्मिका ५१.

५२. अथ सारङ्गम्

नगणयकारप्रयितं लघुयुगलैः^१ सकथितम् ।

कविजनसञ्ज्ञातमदं कलयत सारङ्गमिदम् ॥ १०६ ॥

यथा—

सखि हरिरायाति यदा विरचितकम्पेन हृदा ।

न किमपि वक्तुं कलये कथमपि दृष्टे वसये ॥ १०७ ॥

यथा वा—

प्रणमत सर्वाधहरं दितिसुतगर्वापहरम् ।

सुरपतितर्वाहरण विलसदसर्वाचरणम् ॥ १०८ ॥

इति सारङ्गम् ५२.

इदमेव सारङ्गिकेति विज्ञेते* नामान्तरेणोक्तम् ।

१. क. युगलैः ।

*टिप्पणी—१ प्राकृतपंगलम्-परि० २, पद्य

५३ अथ पाइन्तम्

यस्यादिर्वे मगणवृत्तश्चान्तो हस्तेन विरचित ।

मध्ये भो यस्य विलसित तत् पाइन्त फणिमणितम् ॥ १०६ ॥

यथा-

गोपालानां रचितसुख सम्पूर्णो-दुप्रतिममुखम् ।

कालिन्दीकेलिषु ललित वन्दे गोपीजनवलितम् ॥ ११० ॥

इति पाइन्तम् ५३ पाइन्ता इति पिङ्गले* ।

५४ अथ कमलम्

नगणयुगलमहित तदनु करविरचितम् ।

फणिमणितमतिविमल प्रभवति किल कमलम् ॥ १११ ॥

यथा-

तरलनयनकमल रुचिरजलदविमलम् ।

ध्रुमदचरणकमल कलय हरिमपमलम् ॥ ११२ ॥

इति कमलम् ५४.

५५ अथ बिम्बम्

द्विजवरनरेन्द्रकर्णं प्रविरचितनन्दश्वर्णं ।

फणिनूपतिनागवित्त कविमुखदविम्बवृत्तम् ॥ ११३ ॥

यथा-

लुलितनलिनालसाक्ष सलिलतवाचिदक्ष ।

कलयसि सुरागिवक्ष त्वमपि मयि जातभिक्ष ॥ ११४ ॥

इति बिम्बम् ५५.

५६ अथ तोमरम्

सगण मुदा त्वमवेहि जगणद्वय च विधेहि ।

नदसह्यघा वणविधारि कुरु तोमर सुखकारि ॥ ११५ ॥

यथा-

कमलेषु 'सलुलितालि वबुली[कृत] वरमालि ।

अवलोकये वनमालि वपुरेति'^१ किं वनमालि ॥ ११६ ॥

इति तोमरम् ५६

१. * ' चित्तमभ्यग पाठो नास्ति अ प्रती ।

* गिरिणी - प्राकृत-द्वय-परि. २ पद्य ८० ।

पद्या-

माधवमासि हिमाशुकर चिन्तय चेतसि तापकरम् ।
माधवमानय जातरस चित्तमिदं मम तस्य वशम् ॥ १३३ ॥

इति सारवती ६४

६५ अथ सुषमा

आदौ ज(त)गण पश्चाद् यगण यस्यामनु पाद स्याद् भगण ।
हार कथितश्चान्ते महिता सेय सुषमा नागप्रथिता ॥ १३४ ॥

पद्या-

गोपीजनचित्ते सवलित वृन्दावनकुञ्जे सललितम् ।
वन्दे यमुनातीरे सरल कसादिकदैत्यानां गरलम् ॥ १३५ ॥

इति सुषमा ६५

६६ अथ अमृतगति

नगण-नरेन्द्र-नविहिता तदनु च चामरमहिता ।
अमृतगति कविकथिता फणिभणितोदधिमथिता ॥ १३६ ॥

पद्या-

सखि मनसो मम हरण हरिमुखलीकृत^१करणम् ।
भव मम जीवितशरण किमु कलये निजभरणम् ॥ १३७ ॥

इति अमृतगति ६६.

६७ अथ मत्ता

आदौ कुर्यान् भगणसुयुक्त ज्ञेय पश्चाद् भगणसुवित्तम् ।
अन्ते हस्त कुरु युतहार मत्तावृत्त कविजनसारम् ॥ १३८ ॥

पद्या-

वृ दारण्ये कुसुमितकुञ्जे गोपीवृन्दै सह मुखपुञ्जे ।
रासासक्त जलधरनीले प्रोष वन्दे मुक्ति वृत्तसीतम् ॥ १३९ ॥

इति मत्ता ६७

६८ अथ त्वरितगति

नगणवृत्ता जगणघृता नगणहिता गुरसहिता ।
इति ह फणिभणति यदा त्वरितगतिर्भवति तदा ॥ १४० ॥

यथा-

सरसमतिर्यदुन्नपति परमततिस्त्वरितगति ।

क्षपितमद कलितगद सकलतरिर्जयति हरि ॥ १४१ ॥

यथा वा-

क्षितिर्विजिति स्थितिर्विहृति-भ्रंतरतय परगतय ।

उरु रुधुर्गुरु दुधुवु-र्युधि कुरु स्वमरिकुलम् ॥ १४२ ॥

इति दण्डिनी*१

इति स्वरितगति ६८

६९ अथ मनोरमम्

नगणपक्षिराजराजित कुरु मनोरम सभाजितम् ।

जगणकुण्डलप्रकाशित फणिप-पिङ्गलेन भाषितम् ॥ १४३ ॥

यथा-

कलय भाय नन्दनन्दन सकललोकचित्तचन्दनम् ।

दितिज-देवराजवन्दन कठिनपूतनानिकन्दनम् ॥ १४४ ॥

इति मनोरमम् ६९

स्त्रीलिङ्गनिदमन्यम्*२ । अत्रापि न तेन काचित् क्षति ।

७० अथ ललितगति

दहननमिह कलयत तदनु क्षरमपि कुरुत ।

यदति फणिनूपतिरिति पठत ललितगतिमिति ॥ १४५ ॥

यथा-

ललितललिततरगति हरिरिह समुपसरति ।

सव नविधमयि सुदति ! सफल्य निजजगुरति ॥ १४६ ॥

इति ललितगति ७०.

अत्र प्रस्तावरगत्या दशाक्षरस्य चतुर्विंशत्यधिक सहस्र १०२४ भेदा भवन्ति
तेषु किमन्तो भेदा ललितता, शेषभेदा [स्तु सुधोभिरूह्या] *१, *२

इति दशाक्षरवृत्तम् ।

१ स प्रस्तावं सप्तमीया ।

*टिप्पणी—१ वाक्यादौ तृतीय परिच्छेद पद्य ८५

*टिप्पणी—२ दशमंभरी द्वि० स्त० वा० ३४

*टिप्पणी—३ य वाचरेपूरलभ्या शेषभेदा पञ्चमपरिच्छेदे द्रष्टव्या ।

५७ अथ भुजगशिशुसूता

नगणयुगलसदिष्ट तदनु भगणनिदिष्टम् ।

भुजगशिशुसूतावृत्त कलयत फणिना वित्तम् ॥ ११७ ॥

पद्या-

अनुपमयमुनात्तीरे नवपवस (कमल) लसन्तीरे ।

प्रणमत कदलीकुञ्जे हरिमिह सुदृशा पुञ्जे ॥ ११८ ॥

इति भुजगशिशुसूता ५७

सूता इत्येव शम्भुप्रभृतिषु पाठ । भृता इति आधुनिका पठन्ति*

५८ अथ मणिमध्यम

आदिभकार देहि तत सोऽपि गणाते^१ नागमत ।

मध्यमकारो भाति यदा स्यान्मणिमध्य नाम तदा ॥ ११९ ॥

पद्या-

वल्लवनारोमानहर पूरितवगीरावपरः ।

शोकुलनेता गोपुचर पातु हरिस्त्वा गोपवर ॥ १२० ॥

इति मणिमध्यम ५८

५९ अथ भुजङ्गसङ्गता

सगण विधेहि सङ्गत जगण ततोऽपि सयुतम् ।

रगण च नागसम्मता कथिता भुजङ्गसङ्गता ॥ १२१ ॥

पद्या-

मम दह्यते मनो भृश परिभावयाङ्गक कृशम् ।

कथयामि य तमानये धृतिमालि येन धारये ॥ १२२ ॥

इति भुजङ्गसङ्गता ५९

६० अथ सुललितम्

दहन-नमिह वितनु चरणमनु च सुतनु ।

फणिपतिनृपतिकृति कलय सुललितमिति ॥ १२३ ॥

पद्या-

कलितललितमुकुट निहतदितिजशकट ।

मम सुखमनुकलय करयुगधूतवलय ॥ १२४ ॥

इति सुललितम् ६०.

अत्र प्रस्तारगत्या नवाक्षरस्य द्वादशाधिकपञ्चशत भेदेषु ५१२ आद्यन्त-
महिता एकादशभेदा प्रदर्शिता, दोषभेदा ऊहनीया ॥ ६ ॥**

इति नवाक्षरं धृतम् ।

१. स गणोत्ते ।

* टिप्पणी—१ एदोमञ्जरी द्वि० स्त० वारिका २४

• टिप्पणी—२ अर्वाणिष्टा प्राप्तभेदा पञ्चमपरिचिते पर्यालोभ्या ।

अथ दशाक्षरम्

सप्त प्रथमम्—

६१ गोपाल

वह्नेस्सख्याका मा पादे यस्मिन्नन्ते हारश्चको युक्तो यस्मिन् ।

नागाधीशप्रोक्त तद् गोपाल पक्व्यर्ण्युक्तं मुह्यद्भूपालम् ॥ १२५ ॥

यथा—

गो-गोपालानां वृन्दे मञ्चारी भूमौ दृष्यद्देल्यानां सहारी ।

यद्वेणुवक्वर्णर्मोह सप्रापु गोप्य सोऽध्यान् मा य देवा नापु ' ॥ १२६ ॥

इति गोपाल. ६१

६२. अथ सयुतम्

सगण विधाय मनोहर जगणद्वय च ततोऽपरम् ।

गुप्तसङ्गत फणिजल्पित सखि । सयुत परिवर्लितम् ॥ १२७ ॥

यथा—

सगि गोपवेदाविहारिण सिखिपिच्छचूडविधारिणम् ।

मधुमुन्दराधरदालिन ननु कामये वनमालिनम् ॥ १२८ ॥

यथा वा—

प्रजनायिका हतकालिय बलयमिन् या मनसालि यम् ।

सदय मया सह दालिन कुरु तामु त वनमालिनम् ॥ १२९ ॥

इति सयुतम् ६२

सयुता इति स्त्रीलिङ्ग पिङ्गले ।*

६३ अथ चम्पकमाता

प्रादिभक्तारो यत्र वृत्त स्यात् प्रेयसि पद्वान् मांवि मत स्यात् ।

प्रन्तमनारो गेन युत स्यात् चम्पकमालावृत्तमिदं स्यात् ॥ १३० ॥

यथा—

सवमह जाने हृदय ते कामिनि । वि कोपेन वृत्त ते ।

पद्मप्रधानैर्लोचनपानै कामितमाप्त चेतसि ता तै ॥ १३१ ॥

इति चम्पकमाता ६३

रूपमयतीति अन्यत्र । रूपवतीनि च ववचित् नामान्तरेण इयमेव शेषा ।

६४ अथ सारवती

भक्तिपयाचितं सर्वपदा पण्डितमण्डलिजातमदा ।

गेन युता किल सारवती नागमना गुणभारवती ॥ १३२ ॥

१. स पदवानापु ।

*टिप्पणी—प्राकृतलिङ्गसम्, परि० २, पद्य ६० ।

अथ एकादशाक्षरम्

तत्र—

७१. मालती

यस्या पादे हारा रुद्धं सख्याता ,
 सर्वे वर्णास्तद्वद् यस्या विख्याता ।
 सर्वेषा नामाना भूपेनोक्ता सा,
 मालत्युक्तेय लोकाना पूर्णाशा ॥ १४७ ॥

यथा—

सिन्धूना पृष्ठा^१ यत्पृष्ठे लीयन्ते,
 दंस्यात् सर्वे वेदा येनादीयन्ते ।
 यत्पुच्छोच्छालैर्द्वेन्द्रा घूर्णन्ते,
 धर्मं सोऽव्यान्मायामीनस्तूर्णं ते ॥ १४८ ॥
 इति मालती ७१

७२ अथ बन्धु-

भ्रत्रितय-प्रविकाशितवर्णं ,
 शेषविभूषितभासुरकर्णं ।
 पण्डितचेतसि राजति बन्धु ,
 पिङ्गलनागकृतो गुणसिन्धु ॥ १४९ ॥

यथा—

ह्यामललोमगजालिसदृक्ष-
 दचण्डसमीरणकम्पितवृक्ष ।
 वारिधरस्तरुभञ्जितनीड ,
 भूततिवृष्टिकृतावनिपीड ॥ १५० ॥
 इति बन्धु ७२

इदमेवान्यत्र दोषकमिति नामान्तरेणोक्तं, पिङ्गले* तु उट्टवणिकान्तरकृत-
 लक्षणान्तरमादाय रूपभेद इति न कश्चिद्विशेष फलत इति समञ्जसम् ।

७३ अथ समुत्थी

कुरु चरणे प्रथमं नयणं,
 तदनु च पक्षमित जगणम् ।

१. च प्रेक्षा ।

*टिप्पणी—१ प्राकृतपद्यसम् परि० २, पद्य १००

लघुमय ग च जनः सुमुखी,
भवति^१ यतः किल सा सुमुखी ॥ १५१ ॥

यथा-

तरुणविधूपमितं वदन,
मम हृदये कुरुते मदनम् ।
इति कथयश्चरणी नमते^२,
हरिरनुषेहि दृश वनिते ॥ १५२ ॥
इति सुमुखी ७३.

७४. अथ शालिनी

कृत्वा पादे नूपुरी हारयुग्म,
धृत्वा वीणामङ्कितां चामरेण ।
पुष्पप्रोत चापि^३ कर्णं दधाना,
नागप्रोक्ता शालिनीयं विभाति ॥ १५३ ॥

यथा-

चन्द्राकी^४ ते राम^५कीर्तिप्रतापी,
चित्र शत्रुक्षोणिपालापकीर्तिम् ।
भासागाढध्वान्तमध्वसयन्ती,
त्रैलोक्यस्य^६ श्वेतता सन्दधाते ॥ १५४ ॥

यतिरप्यत्र वेदलोकैर्लया ।

इति शालिनी ७४.

७५. अथ वातोर्मी

पूर्वं पादे मगणेन प्रमुक्ता,
या वै पदचाद् भगणेनाथ मुक्ता ।
वातोर्मीय सगणान्तस्थकर्णा,
वेदलोकैः स यती रत्नवर्णा ॥ १५५ ॥

यथा-

भायामीनोऽप्यतु लोक समस्त,
लीलागत्या धुमिताम्भोधिमध्य ।
धात्रे दास्यग्रयन वेदरूप,
य कल्पादधी जगृहे तिर्यंगाख्याम् ॥ १५६ ॥
इति वातोर्मी ७५.

१. स. भवति अतः । २. स. भवते । ३. स. चापि । ४. स. योन । ५. स.
विदधत्यपि ।

७६. अथानयोः पञ्जातिः

चेद् वातोर्मोचरणानां यदि स्यात्,

पाठः सार्द्धं शालिनीवृत्तपादः ।

इन्द्रप्रोषताः सम्भवन्तीह भेदा-

स्तेषां नामान्युपजातीति विद्धि ॥ १५७ ॥

यथा--

गोपं वन्दे गोपिकाचित्तचौर,

ह्रास्यज्योत्स्नालुब्धहृत्पञ्चकोरम् ।

शब्दायन्तं^१ धेनुसघे धुनानं,

ववत्रं वशीमघरे सन्दधानम् ॥ १५८ ॥

इति शालिनी-वातोर्म्युपजातिः ७६.

अनयोरेकत्र पञ्चमाक्षरगुरुत्वादपरत्र च पञ्चमलघुत्वात् अल्पो भेद इति चतुर्दशोपजातिभेदाः, पदेन पदाभ्यां पदैश्च परस्परं योजनात् प्रस्ताररचनया जायन्त इत्युपदेशः ।

७७. अथ दमनकम्

दहनमितनगणरचितं,

तदनु कुरु लघुगुरुयुतम् ।

फणिवरनरपतिमयित,

दमनकमिदमिति कथितम् ॥ १५९ ॥

१. ल. पदमर्त ।

*टिप्पणी—१ छन्दसोऽयं चतुर्दशभेदानां नामसंक्षेपोदाहृतयोऽग्र्यकृतप्यनुलिखिता, नैव चाऽयत्र ग्रन्थेषु भवन्ति समुपलब्धाः, अतश्चात्र प्रस्ताररीत्या चतुर्दशभेदानां संक्षेपान्यथो निरूप्यन्ते—

१. शा. वा. वा. वा.

२. वा. शा. वा. वा.

३. शा. शा. वा. वा.

४. वा. वा. शा. वा.

५. शा. वा. शा. वा.

६. शा. वा. वा. शा.

७. शा. शा. शा. वा.

८. वा. वा. वा. शा.

९. शा. वा. वा. शा.

१०. वा. शा. वा. शा.

११. वा. शा. वा. वा.

१२. वा. वा. शा. शा.

१३. वा. वा. शा. वा.

१४. वा. वा. वा. शा.

अत्र 'शा' 'वा' इति संज्ञेतद्वयेन शालिनी-वातोर्मौ क्रमो ज्ञेयः ।

यथा -

हृदि कलयत मधुमयन,
गिरिकृतजलनिधिमयनम् ।
रचितसलिलनिविशयन,
तरलकमलनिभनयनम् ॥ १६० ॥

इति इमनकम् ७७.

७८. अथ चण्डिका

आदिशेषशोभिहारभूषितौ,
विभ्रती पयोधरावदूषितौ ।
स्वर्णशङ्खकुण्डलावभासिता,
चण्डिकाऽहिभूषणस्य सम्मता ॥ १६१ ॥

यथा-

व्यालकालमालिकाविकाशित,
भालभासितानलप्रकाशितम् ।
शैलराजकन्यकासभाजित,
नौमि चारुचन्द्रिकाविराजितम् ॥ १६२ ॥

इति चण्डिका ।

सेनिका इति अन्यत्र । क्वचिच्च श्रेणीति^१ रगण-जगण-रगण-लघु-गुरुभिर्ना-
मान्तर, फलतस्तु न कश्चिद्विशेषः । किञ्च इयमेव चण्डिका यदि लघुगुरुक्रमेण
त्रियते तदा सेनिका इत्यस्म-मतम् । अतएव भूषणकारोऽपि^२ हारसाङ्गविपरीता-
भ्या रूपनूपुराभ्या लघुगुरुभ्या क्रमशो मण्डिता चण्डिकामेव सेनिकामुदाजहार ।
त-मतमवलम्ब्य वयमपि सलक्षणमुदाहराम ।

७९. अथ सेनिका

शारेण कुण्डलेन च क्रमेण,
महेन्द्रवर्णसह्यया भ्रमेण ।
समस्तपादपूरण विधेहि,
फणिप्रयुक्त-सेनिकामवेहि ॥ १६३ ॥

१ ख रेणीति ।

*टिप्पणी—हारसाङ्गकुण्डलेन मण्डिता या पयोधरेण वीरुपाभिता ।

रूपनूपुरेण चापि दुर्लभा सेनिका भुवङ्गराजवत्समा ॥ २१२ ॥

[वाणीभूषण टि० अ०]

यथा-

सरोजसस्तरादि सविधेहि,
 पिकालिवक्त्रमुद्रण विधेहि ।
 मुरारिवश्यजीवमालि देहि,
 भूतामया-यथा च मामवेहि ॥ १६४ ॥
 इति सेनिका ७६.

८०. अथ इन्द्रवज्रा

हारद्वय मेरुयुत दधाना,
 पादे तथा नूपुर्युग्मक च ।
 हस्त सुपुष्प वलयद्वय च,
 सधारयन्ती जयतीन्द्रवज्रा ॥ १६५ ॥

यथा-

आलोक्य वेदस्य मुरारिभीति,
 यो दैत्यदाव दय(दद)दादिदेव^१ ।
 पाठीनदेह^२ कठिन वभार,
 भीन^३ स नो मङ्गलमातनोतु ॥ १६६ ॥
 इति इन्द्रवज्रा ८०

८१. अथ उपेन्द्रवज्रा

पयोधर कुण्डलयुग्मयुक्त,
 विधारयन्ती वरमेश्युग्मम् ।
 सहारपुष्प दधती मुकर्ण-
 भुपे द्रवज्या रभमेन भाति ॥ १६७ ॥

यथा-

पराम्बुधावामिपवत्सुधाशु^४,
 विलोकिन्तु पूर्वदरीगतस्य ।
 महन्द्रसिंहस्य विभाति जिह्वा,
 सम पुर सामितराशुबिम्बम्^५ ॥ १६८ ॥
 इति उपेन्द्रवज्रा ८१.

१. स दैत्यदेवः । २. स पाठाददेहः । ३. स विष्णुः । ४. वरतराशे ।

५. स सामिपुषाशुबिम्बम् ।

८२. अयानयोः उपजातयः

उपेन्द्रवज्राचरणेन युक्तं,

स्यादिन्द्रवज्राचरणं यदैव ।

नागप्रयुक्ताश्च तदैव भेदाः,

महेन्द्रसंख्या उपजातयः स्युः ॥ १६६ ॥

यथा—

मुखन्तवैणाक्षि ! कठोरमानोः,

सोढुं कर नालमिति ध्रुवाणः ।

पटेन पीतेन वनेषु राधा^१,

चकार कृष्णः परिपूतवाधाम् ॥ १७० ॥

इति उपजातिः ८२.

भेदाश्चतुर्दशैतस्याः क्रमतस्तु प्रदर्शिताः ।

प्रस्तार्य स्वनिबन्धेषु पित्राऽतिस्फुटस्ततः ॥ १७१ ॥

विलोकनीया भेदास्ते नास्माभिस्समुदाहृताः ।

कथितत्वाद् विदोषेण ग्रन्थविस्तराद्ध्या^२ ॥ १७२ ॥

१. ल. राधा ।

*टिप्पणी—१. ग्रन्थकृता वृत्तस्यास्य भेदानां सहासोदाहरणार्थं स्वपितृधीसदमीनापभट्टकृतो-
दाहरणमञ्जरी द्रष्टव्येति समूचितम्, किन्तु उदाहरणमञ्जरीपुस्तकस्या-
द्याप्यनुपलब्धत्वादप्रास्माभिः 'प्राकृतपङ्क्त्या' २(१२२) भामसहासणानि, छन्द-
सूत्र- (निर्णयसागरसंस्करण) स्य अनन्तधर्मवृत्तटिप्पणीत उदाहरणानि
समुद्घृतान्यथ प्रदर्शितानि—

१. कीर्तिः [उ. इ. इ. इ.]

२. वाणी [इ. उ. इ. इ.]

३. माता [उ. उ. इ. इ.]

४. दाता [इ. इ. उ. इ.]

५. हृत्ती [उ. इ. उ. इ.]

६. माया [उ. उ. उ. इ.]

७. जाया [इ. उ. उ. उ.]

८. बाला [इ. इ. इ. उ.]

९. आर्द्रा [उ. इ. ■ उ.]

१०. मद्रा [इ. उ. ■ उ.]

११. प्रेषा [उ. उ. इ. उ.]

१२. रागा [इ. इ. उ. उ.]

१३. ऋद्धि [उ. इ. उ. उ.]

१४. वृद्धि [इ. उ. उ. उ.]

१. कीर्तिः —

(उ.) ल. मानवी भेदगतः त्रितुल्या,

(इ) ग्रन्था वृत्तस्य स्थितये स्थितिः ।

(इ) मेना मुनीनामपि माननीया-

(इ) मात्मानुरूपा विदितोपयेमे ॥

[कुमारसम्भव १।१८]

२ चाषी—

(इ.) यः पूरयन् कीचकरन्ध्रभागान्,

(उ) दरीमुखोत्थेन समीरणेन ।

(इ.) उद्गमास्यतामिच्छति किन्नराणां,

(इ.) तानप्रदायित्वमिषोपगन्तुम् ॥

[कुमारसम्भव १।१८]

३. माला—

(उ.) कपोलकण्डूः करिभिविभेत्,

(उ) विषट्टितानां सरसद्रुमाणाम् ।

(इ.) यत्र स्नुतक्षीरतया प्रसूतः,

(इ) सानूनि गन्धं मुरभीकरोति ॥

[कुमारसम्भव १।१९]

४. शाला—

(इ.) उद्वेजयत्यद्भुतलिपाङ्गिभागान्,

(इ.) मार्गे शिलीभूतहिमेषि यत्र ।

(उ.) न दुर्बह्मश्रोणिपयोधरातां

(इ.) भिन्दन्ति मग्दां गतिमश्वमुख्यः ॥

[कुमारसम्भव १।१९]

५. हत्ती [विपरीताख्यानिनी]

(उ) पदं तुषारस्रुतिघोतरक्तं,

(इ) यस्मिन्नद्दृष्ट्वापि हतद्विषानाम् ।

(उ) विदन्ति मार्गे नक्षरघ्नमुक्ते-

(इ) मूर्धजाफलैः वेसरिणा किराताः ॥

[कुमारसम्भव १।२०]

६. माया—

(उ) प्रसीद विश्राम्यतु वीरवज्र,

(उ) दारमदीये वतमं गुरादिः ।

(उ) विभेत्तु मोषीवृत्तबाहुवीर्यं,

(इ) स्त्रीभ्योऽपि कोपस्फुरिताघराभ्यः ॥

[कुमारसम्भव ३।६]

७. जाया—

(इ) वासकमेलाय तयो प्रवृत्ते,

(उ.) स्वल्पयोग्ये गुरतप्रसङ्गे ।

- (उ) मनोरम यौवनमुद्धहत्या
(उ) भर्मोऽभवद् भूधरराजपत्या ॥

[कुमारसम्भव १।१६]

८ बाला—

- (इ) य सर्वसंसा परिकल्प्य वत्स,
(इ) मेरी स्थिते दोषरि दोहदक्षे ।
(इ) मास्वन्ति रत्नानि महीपधीदध,
(उ) पुष्पदिष्टां दुहुर्धरिनीम् ॥

[कुमारसम्भव १।२]

९ पार्श्व—

- (उ) दिवाकराद रक्षति यो गुहासु,
(इ) नीन दिवाभौतमिवा-वकारम् ।
(इ) क्षुद्रेऽपि मून वारण प्रपन्ने,
(उ) भर्मत्वमुच्चै क्षिरसा सतीव ॥

[कुमारसम्भव १।२]

१० भद्रा (प्राण्यानिकी)—

- (इ) अस्त्युत्तरस्या दिशि देवतात्मा
(उ) हिमालयो नाम नवाधिराज ।
(इ) पूर्वापरौ तोयनिधी वगाह्य,
(उ) स्थित पृथिव्या इव मानदण्ड ॥

[कुमारसम्भव १।२]

११ प्रेमा—

- (उ) अनन्तरत्नप्रभवस्य मस्य,
(उ) हिम न सौभाग्यविलोपि जातम् ।
(इ) एको हि दोषो गुणसन्निपात,
(उ) निमज्जतीन्दो किरणेष्विवाङ्कु ॥

[कुमारसम्भव १।३]

१२ रामा—

- (इ.) यश्चाप्सरोविभ्रममण्डनानां
(इ) सम्पादयित्री शिखरैर्विभ्रति ।
(उ) वताहकञ्छेदविमत्तराया
(उ) मकान्तस ध्यामिव धातुमत्ताम् ॥

[कुमारसम्भव १।४]

८३. अथ रथोद्धता

स्वर्णशङ्खवलयं रसाहितं,
सुन्दरं करतलेन सङ्गतम् ।
पुष्पहारमथ राविनूपुरं,
बिभ्रती विजयते रथोद्धता ॥ १७३ ॥

अथा-

यामिनीयधिजगाम धामतः,
कामिनीकुलमनन्तसीरिणोः ।
नामनी कथयदाशु संगलत्-
सामिनीवि सखि नन्दनन्दनम् ॥ १७४ ॥ ;

अथ वा-

गोपिके तव सुतोऽपि केवलो,
मायिनामयि^१ ममापि नायकः ।
'नीतमेव नवनीतमेधय-
त्येष यः कपटवेपनन्दनः'^२ ॥ १७५ ॥
इति रथोद्धता ८३.

८४. अथ स्वागता

हारभूषितकुशास्तनुवाण-
भ्राजिता कुसुमकङ्कणहस्ता ।

१. क. मायिनामयः । २. ल. '—'बोरपत्यनुविन गृहे गृहे, न तमेव नवनीतमेधयत् ।

१३. श्रुति —

- (उ.) प्रसन्नदिव्यामुबिबिस्तवात,
(इ.) शङ्खस्वनानन्तरपुष्पवृष्टिः ।
(उ.) शरीरिणां स्वावरजङ्गमाना,
(उ.) सुखाय तज्जन्मदिनं बभूव ॥

[कुमारसम्भव १।२३]

१४. श्रुति:—

- (इ.) यत्राङ्गुलाद्येपवितज्जितानां,
(उ.) यदुच्छ्रया किंपुरुषाङ्गनानाम् ।
(उ.) दरीगृहद्वारविसम्बिम्बा-
(उ.) स्तिरस्करिष्यो जलदा भवन्ति ॥

[कुमारसम्भव १।१४]

नूपुरेण च विराजितपादा,
स्वागता भवति चेत् किमिहाज्यत् ॥ १७६ ॥

यथा

वत्सवीनयनपङ्कजभानु,
दानवेन्द्रकुलदावकृशानु ।
राधिकावदनचन्द्रचकोर,
सकटादवतु नन्दविजोर ॥ १७७ ॥

इति स्वागता* १ ८४

८५ अथ भ्रमरविलसिता

[४ ५]

पूर्वं म स्यात् तदनु च भगण,
पश्चाद यस्मिन् प्रकटितनगण ।
अन्ते लो ग कविजनसहिता,
सेय प्रोक्ता भ्रमरविलसिता ॥ १७८ ॥

यथा-

स्वान्ते चिन्ता परिहर वनिते,
नन्दादेशात् सपदि सुलसिते ।
आगन्तास्मिन् हरिरिह न चिर,
कुञ्जे शय्या सफलय सुचिरम् ॥ १७९ ॥

इति भ्रमरविलसिता ८५

*टिप्पणी—१ रथोद्धता—स्वागतोपजातिवृत्तस्यास्य ग्रन्थेऽस्मिन् लक्षणोदाहरणान्यनुलिखितानि,
नैव च ग्रन्थान्तरेषु समुपलब्धानि, अथोऽथ चतुर्दशभेदानां प्रस्तारगत्या निम्न
लक्षणा येव समुदाधियन्तेऽस्माभिः —

१	र	स्वा	स्वा	स्वा	८	स्वा	स्वा	स्वा	र
२	स्वा	र	स्वा	स्वा	९	र	स्वा	स्वा	र
३	र	र	स्वा	स्वा	१०	स्वा	र	स्वा	र
४	स्वा	स्वा	र	स्वा	११	र	र	स्वा	र
५	र	स्वा	र	स्वा	१२	स्वा	स्वा	र	र
६	र	र	र	स्वा	१३	र	स्वा	र	र
७	स्वा	र	र	र	१४	स्वा	र	र	र

अत्र 'र' कारेण रथोद्धता 'स्वा'शब्देन स्वागतेति च सर्वोप्या ।

८६ अथ अनुकूला

नूपुरमुच्चैः कलितसुराव,
पुष्पसुहारं सरससुवक्रम् ।
रूपविराजत्सवलयहस्तं,
स्यादनुकूला यदि किमिहाजन्यत् ॥ १८० ॥

यथा—

गोकुलनारीवलयविहारी,
गोधनचारी दितिसुतहारी ।
नन्दकुमारस्तनुजितमारः,
पातु सहारः सुरकुलसारः ॥ १८१ ॥

इति अनुकूला ८६.

८७. अथ मोदनकम्

वन्दे वलयद्वयसवलितं,
हस्तद्वितय कलयन्तममुम् ।
गन्धोत्तमपुष्पसुहारघरः,
नागस्य सदा प्रियमोदनकम् ॥ १८२ ॥

यथा—

कृष्णं कलये वनितावलये,
नृत्ये सरसे ललिते सलये ।
दिव्यैः कुसुमैः कलित मुकुटे,
स्तुत्य भूनिभिर्वलितं लकुटे ॥ १८३ ॥

इति मोदनकम् ८७.

८८. अथ मुक्तेशी

विभ्राणा वलयो सुवर्णचित्री,
संराजत्वरसङ्गशोभमानी ।
हाराभ्यां ललितं कुच दधाना-
माद्यन्तं कुरुते न कं मुक्तेशी ॥ १८४ ॥

यथा—

गोपालं कलये विलासिनीनां,
मध्यस्थं कलचारुहासिनीनाम् ।

कुर्वन्त वदनेन वशराय,

यस्तासा प्रकटीचकार भासः^१ ॥ १८५ ॥

इति सुकेशो ८८

८८. अथ सुभद्रिका

अतनुरचितबाणपञ्चकं,

कुसुमकलितहारसङ्गतम् ।

कुचमनुदधती च नूपुरं,

मुदमिह तनुते सुभद्रिका ॥ १८६ ॥

अथ-

हृदि कलयतु कोपि बालकः,

सुललितमुखसम्बितालकः ।

अलिविलसितपङ्कजधियः,

परिकलयति य स मत्प्रियम् ॥ १८७ ॥

इति सुभद्रिका ८९.

९०. अथ बकुलम्

द्विजवरगणयुगलमिति,

तदनु नगणमपि भवति ।

सुकविफणिपतिविरचित-

मनुकलयत बकुलमिति ॥ १८८ ॥

अथ-

अथय कमलनिचयमिह,

बकुलशयनमनुरचय ।

कुरु मणिहृतिभिरगृह-

मिह हरिरुपसरति सखि ! ॥ १८९ ॥

इति बकुलम् ९०.

अत्रापि प्रस्तारगत्या रुद्रसख्याक्षरस्य अष्टचत्वारिंशदधिक सहस्रद्वय २०४८ भेदा भवन्ति । तत्र कियन्तोऽपि भेदा प्रोक्ताः, शेषभेदाः प्रस्तार्य सूचनीया इति^१ ।*

इत्येकादशाक्षरम् ।

१. छ भाषम् । २. पक्षिद्वय नास्ति क प्रती ।

*टिप्पणी—१. ग्रन्थातरेषु समुपलभ्यमानाः शेषभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे पर्यवेक्षणीयाः ।

अथ द्वादशाक्षरम्

तत्र—

६१. आपीडः

यस्मिन् वेदानां संख्याका मा दृश्यन्ते,
पादे वर्णाः सूर्योः सम्प्रोक्ता जायन्ते ।
आपीडाख्यं दिव्यं वृत्तं धेहि स्वान्ते,
सम्प्रोक्तं नागानामीशेनैतत्कान्ते ! ॥ १६० ॥

पद्या—

कूर्मो, नित्यं भामव्यादत्यन्तं पीनः,
यत्पृष्ठेऽद्रिः कस्मिन्चित्कोणे संलीनः ।
यः सर्वेषां देवानां कार्यार्थं जात-
स्त्रं लोबये नानारत्नादाता विख्यातः ॥ १६१ ॥
इति आपीडः ६१.

। - अयमेवान्यत्र विद्याधरः*१ ।

६२. अथ भुजङ्गप्रयातम्

लघुः पूर्वमन्ते भवेद् यत्र कर्णः,
रवेः संख्यया यत्र चाऽऽभाति वर्णः ।
तकारत्रयं यत्र मध्ये सुयुक्तं,
भुजङ्गप्रयातं तदा भावि वृत्तम् ॥ १६२ ॥

पद्या—

चलत्कुन्तलं केलिलोलाकुलाक्षं,
सदा बलबीलालितं नन्दवालम् ।
कपोलोलसत्कुण्डलालङ्कृताऽऽस्थं,
विलोलाभलस्रगुल्लामं नमामि ॥ १६३ ॥
इति भुजङ्गप्रयातम् ६२.

६३. अथ लघमीवरम्

मानुसंख्यामितेरक्षरैर्मसितं,
वेदसंख्यैस्तथा पक्षिभिः शोभितम् ।
सर्वनामाधिराजेन संभाषितं,
तद्धि लघमीधरं मानसे शोभितम् ॥ १६४ ॥

यथा-

वेणुनादेन संमोहयन् गोकुले,
वत्सलवीमानसं रासकेलीं व्यधात् ।
यः सदा योगिभिर्वन्दितस्तं तदा*,
गोपिकानायकं गोकुलेन्द्रं भजे ॥ १६५ ॥
इति लक्ष्मीधरम् ६३.

इदमेवान्यत्र स्मिन्निषी* इति नामान्तरं लभते ।

६४. अथ तोटकम्

यदि वै लघुयुग्मगुरुक्रमतः
रविसम्मितवर्णं इह प्रमितः ।
अहिभूपतिना फणिना भणितं,
सलि तोटकवृत्तमिदं गणितम् ॥ १६६ ॥

यथा-

अलिमालितमालतिभिलंसितं,
ललितादिनितम्बवतीकलितम् ।
कलितपहरं कलवेणुकलं,
कलये नलिनामलपादतलम् ॥ १६७ ॥
इति तोटकम् ६४.

६५. अथ सारङ्गकम्

जायेत ह्यारद्वयेनाथ शङ्खेन,
यद्वै क्रमात् सूर्यसंख्यातवर्णेन ।
सारङ्गकं तत्तु सारङ्गनेत्रेण,
संभाषितं सर्वनागाधिराजेन ॥ १६८ ॥

यथा-

श्रीनन्दसूनो कथं घृष्ट गोपाल,
गोपीषु घाष्टर्थं विघत्से महामाल ।
आस्थाय वालैः सहाय सुखस्थस्य,
भीतिर्न ते कंसतो गोकुलस्य ॥ १६९ ॥
इति सारङ्गकम् ६५.

६६. अथ मौक्तिकदाम

पयोनिधिभूपत्तिमन्त्र विधेहि,

स्वराशुविराजितवर्णमवेहि ।

फणीन्द्रविकासितसुन्दरनाम,

हृदा परिभावय मौक्तिकदाम ॥ २०० ॥

यथा—

स्ववाहुवलेन विनाशितकस,

कपोलविलोलललामवतस ।

समस्तमुनीश्वरमानसहस,

सदा जय भासितयादववश ॥ २०१ ॥

इति मौक्तिकदाम ६६

६७. अथ मोदकम्

वेदविभावितभ परिभावय,

भानुविभासितवर्णमिहानय ।

भामिनि ! पिङ्गलनागमुभापित-

मोदकवृत्तमितीह निभासय ॥ २०२ ॥

यथा—

नन्दकुमार विपारगुणाकर,

गोपवधूमुखकजदिवाकर ।

मद्वचन हितमाशु निशामय,

कुञ्जगूह ननु माहि^१ निशामय ॥ २०३ ॥

इति मोदकम् ६७.

६८. अथ सुन्दरी

कुसुमरूपरसेन समाहिता,

ललितनूपुररावविहारिणी ।

कुचपुगोपरिहारविराजिता,

हरति कस्य मनो न हि सुन्दरी ॥ २०४ ॥

यथा—

उदयददंदिवाकरश्छन्द^२,

ललितवर्तुलवाद्यविशेषम् ।

सकलदिग्रचित विहगारवै ,

स स्तमातनुते विधिभिक्षुक ॥ २०५ ॥

यथा वा, 'वाणीभूषणे'०*—

अमुलभा शरदिन्दुमुखीप्रिया,

मनसि कामविचेष्टितमीदृशम् ।

मलयमारुतचालितमालती-

परिमलप्रसरो हृतवासर ॥ २०६ ॥

इति सुन्दरी ६८

६९. अथ प्रमिताक्षरा

सुमुगन्धपुष्पकृतहारकुचा',

सग्सेन वासरचितेन यथा ।

वलयेन शोभितकरा कुरुते,

प्रमिताक्षरा रसिकचित्तमुदम् ॥ २०७ ॥

यथा—

हरपञ्च इ(ए)व बभुगिरय ,

पतगास्तथा जगति हसनिभा ।

यमुनापि देवतलिनीव बभौ,

हिमभाससा जगति सवलिते ॥ २०८ ॥

यथा वा भूषणे'०*—

अभजद् भयादिव नभो वसुधा,

दधुरेकतामिव समेत्य दिश ।

अभवन् महीपदयुगप्रमिता,

तिमिरावलीकवलिते जगति ॥ २०९ ॥

इति प्रमिताक्षरा ६९

१०० अथ चन्द्रवर्त्म

पक्षिराजमयन कुरु चरणे,

स विधेहि भगण सुखकरणे ।

हस्तमत्र कुरु पिङ्गलकथित,

चन्द्रवर्त्म कविभिर्हृदि मथितम् ॥ २१० ॥

१ क हवा ।

*टिप्पणी—१ वाणीभूषणम् द्वितीय अध्याय, पद्य २५२

" २ " " २५४

यथा—

देवकूलिनि मिलद्वनसलिले,
 दिव्यपुष्पकलिते सुरनमिते ।
 चन्द्रशेखरजटावलिवलिते,
 देहि शं भम सदा भुवि ललिते ॥ २११ ॥

यथा वा—

चन्द्रवर्त्म पिहितं घनतिमिरै-
 राजवर्त्म रहित जनगमनैः ।
 इष्टवर्त्म तदलङ्कुर सरसे,
 कुञ्जवर्त्मनि हरिस्तव कुतुकी ॥ २१२ ॥

इति छन्दोमञ्जर्यामपि*१ ।

इति चन्द्रवर्त्म १००.

इति प्रथमं शतकम् ।

१०१. अथ द्रुतविलम्बितम्

कुरु नकारमथो भगणं ततः,
 सरवनूपुरपुष्पगुरुं कुरु ।
 कलय शब्दमतो गुरुरन्ततो,
 द्रुतविलम्बितवृत्तमिदं सखि ! ॥ २१३ ॥

अत्रापि समपादस्थयोः पादान्तलघ्वोः वैकल्पिकं गुरुत्वम् ।

यथा—माकृत 'पाण्डवचरिते' महाकाव्ये कर्णवर्णनप्रस्तावे—

नूपु विलक्षणमस्य पुनर्वपु-
 स्सहजकुण्डलवर्मसुमण्डितम् ।
 सकललक्षणलक्षितमद्भुतं,
 न घटते रथकारकुलोचितम् ॥ २१४ ॥

यथा वा, तत्रैव विदुरोक्तो—

मिदुरमानसमाशुचिचक्षुषं,
 स विदुरो निनदरतिभीषणैः ।
 सकलवालपराश्रमवर्णनैः
 सदसि भूमिपतिं समबोधयत् ॥ २१५ ॥

यथा वा, छन्दोमञ्जर्याम्^{१*}—

तरणिजापुलिने नवपल्लवी-
परिपदा सह केलिकुतूहलात् ।
द्रुतविलम्बितचारुविहारिणं,
हरिमहं हृदयेन सदा बहे ॥ २१६ ॥
इत्यादि रघुवंशमहाकाव्यादिषु च सहस्रशो निदर्शनानि ।
इति द्रुतविलम्बितम् १०१.

१०२. अथ वंशस्थविला

पयोधरं हारयुगेन सङ्गतं,
करं तथा पुष्पसुकङ्कणान्वितम् ।
सुरावयुक्तं दधती च नूपुरं,
विभाति वंशस्थविला सखे ! पुरः ॥ २१७ ॥

यथा—

विलोलमीलि तरलावतंसकं,
अजाङ्गनामानसलोभकारकम् ।
करस्थवशं परिवीतबालकं,
हरि भजे गोकुलगोपनायकम् ॥ २१८ ॥
इति वंशस्थविला १०२.

नपुंसकमिदमभ्यन^{२*} : अशस्तनितमिति अवचित् ।

१०३. अथ इन्द्रवशा

कर्णं सुरूपं धृतकुण्डलद्वयं,
पुष्पं भुग्न्ध दधती च नूपुरम् ।
वक्षोजसंभूषितहारखोभिनी,
स्यादिन्द्रवशा हृदि मोददामिनी ॥ २१९ ॥

यथा—

कूर्मः दा(रा)मव्यान् मम यः पयोनिधौ,
पृष्ठे महापर्वतघोरधर्पणात् ।

* टिप्पणी—१ छन्दोमञ्जरी, द्वितीय स्तवक, कारिकाया ७४ उदाहरणम् ।

२ 'वदन्ति वंशस्थविलं जतो जरी' छन्दोमञ्जरी द्वि० स्त० का० ६६

कद्रू^१विनोदेन सुखातिसभ्रमान्,
निद्रां जगामालसमीलितेक्षणः ॥ २२० ॥

यया वा-

कम्पायमाना सखि ! सर्वतो दिश,
क्षम्पा दधाना नवनीरदावलिः ।
कम्पायित सविदधाति भानसं,
मा पाहि नन्दस्य सुतं समानय ॥ २२१ ॥

इति द्व-द्रवशा १०३.

१०४. सपानयोपजातयः

यदीन्द्रवशाचरणेन सङ्गता^२,
पादोऽपि वंशस्यविलस्य जायते ।
भेदास्तदा स्युः सुरराजसख्यकाः,
नागोदितास्तेप्युपजातिसज्जका ॥ २२२ ॥

इति वंशस्यविलेन्द्रवशोपजातिः*१ ।

अनयोरप्येकत्र प्रथमाक्षरं लघुः, अपरत्र च प्रथमाक्षरं गुरुरिति स्वल्पभेदत्वा-
च्चतुर्दशोपजातिभेदाः पूर्ववदेव प्रस्ताररचनया भवन्ति । तथा चान्न सर्वत्र स्वल्प-
भेदाच्छब्दोभ्यामुपजातयो भवतीति उपदिश्यत इति दिक् ।

१. ल. कुण्डविनोदेन । २. छ. सङ्गत ।

*टिप्पणी—१ क. छ. प्रती वंशस्यविलेन्द्रवशोपजातेरदाहरणं न विद्यते ।

*टिप्पणी—२ ग्रन्थकारेण वंशस्यविलेन्द्रवशोपजातेष्वस्य चतुर्दशभेदाः स्वीकृताः, पर तत्तद्-
भेदानां सहाणोदाहरणादिभिः प्रतिपादनं नैव कृतम् । अतोऽत्रास्माभिरन्यग्रन्था-
धारेण तत्तन्नामसहाणोदाहरणानि प्रस्तूयन्ते ।

१. वैरागिणी [य. इ. इ. इ.]

२. रतास्यानिनी [इ. व. इ. इ.]

३. इन्दुमा [य. य. इ. इ.]

४. पुष्टिदा [इ. इ. वं. इ.]

५. उपमेया [य. इ. य. इ.]

६. तोरमेयी [इ. य. य. इ.]

७. शीतानुरा [य. वं. वं. इ.]

८. वासन्तिका [इ. इ. इ. य.]

९. मन्दहासा [नं. इ. इ. य.]

१०. विधिरा [इ. य. इ. य.]

११. वंशात्री [य. य. इ. य.]

१२. दादुचूडा [इ. इ. य. य.]

१३. रमणा [य. इ. य. य.]

१४. कुमारी [इ. य. य. य.]

१. धैरातिकी—

- व. महाचमूनामधिया समन्ततः,
 द. सनह सद्यः सुतरामुदायुधाः ।
 इ. तस्मिन्निनप्रवृत्तिपालसङ्कुते,
 इ. तस्याङ्गुणद्वारि बहिः प्रकोष्ठके ॥

[कुमारसम्भव १५।६]

२ रतालवानिकी—

- इ. परं रनन्वीतवधूमुल्लसुतो,
 व. गता न हसैः श्रियमासपत्रजाम् ।
 इ. दूरेऽभवन् भोजबलस्य गच्छत,
 इ. दौलोपमातीतगजस्य निम्नगाः ॥

[शिशुपालवधम् १२।६१]

३ इण्डुमा—

- व. चमूप्रभु मन्मथमर्दनात्मजं,
 व. विजित्वरीभिर्विजयधियाभितम् ।
 इ. श्रुत्वा सुराणां वृत्तनाभिरागत,
 इ. चित्ते चिरं चुलुभिरे महासुराः ॥

[कुमारसम्भव १५।२]

४ मुष्टिदा—

- इ. द्युत्वेति वाचं वियतो गरीयसी,
 इ. क्रोधादहङ्कारपरो महासुर ।
 व. प्रकम्पिताद्येपजगत्त्रयोऽपि स-
 इ. साकम्पनोच्चैर्दिवमभ्यधाञ्च स ।

[कुमारसम्भव १५।३६]

५ उपमया [रामणीयकम्]—

- व. नितान्तमुत्तुङ्गतुरङ्गहेपितै-
 इ. रुद्रामदानद्विषवृ हितं शतैः ।
 व. असद्व्यजस्यन्दनैमिनि स्वने-
 इ. श्वाशूनिस्त्वस्मिन्महाकुल नभः ।

[कुमारसम्भव १५।४१]

६ सौरभेयी—

- इ. सङ्गेन वो गर्भतपस्विन शिशु
 व. धंराक एषोऽन्तमवाप्स्यति ध्रुवम् ।
 व. अतस्करस्तस्करसङ्गतो यथो,
 इ. तद्वो निहन्मि प्रथमं ततोप्यमुष ।

[कुमारसम्भव १५।४२]

७. शीलातुरा—

- व निवार्यमाणं रभितो नु मायिभि-
 व. ग्रंहीतु कामैरिव त भुहुमुं ह ।
 व अपाति गृध्रं रभिमोति चाकुलं-
 इ भविष्यदेतन्मरणोपदेशिभि ।

[कुमारसम्भव १५।२६]

८. वासन्तिका—

- इ अम्याजतोऽम्यागततूणं तर्णं का-
 इ निर्याणहस्तस्य पुरो दुधुक्षत ।
 इ वर्गाद्गवा हुकृतिचार निर्यंती-
 व मरमंधोरक्षत गोमतलिकाम् ।

[शिशुपालवध १२।४१]

९. मन्त्रहाता—

- व न जामदग्न्य क्षयकालरात्रिकृत्,
 इ स क्षत्रियाणां समराय वक्ष्यति ।
 इ येन तिलोकीसुभटेन तेन ते,
 व कुतोऽवकाश सह विग्रहग्रहे ।

[कुमारसम्भव १५।३७]

१०. शिजिरा—

- इ. साऽवज्ञमुन्मील्य विलोचने सहृत,
 व क्षण भूगन्ध्रेण सुपुष्पुना पुन ।
 इ संयास यात समयाप्रिय विभ्यये,
 व. कथ सुराजम्भवमययाऽयवा ।

[शिशुपालवध १२।५२]

११. वैधात्री—

- व प्रयाति मन्त्र (न्त्रे) प्रथम भुजङ्गमा
 व न मन्त्रसाध्यास्तु भवति धातव ।
 इ केचिच्च कञ्चिच्च ददाति पद्मगा,
 व सदा च सर्वं च तुदति धातव ।

[सौन्दरानन्द]

१२. दाह्यधूषा—

- इ निम्ना प्रदेशा स्थसतामुपागमन्
 इ निम्नत्वमुच्चैरपि सर्वतदध ते ।
 व. सुरङ्गमाणां व्रजतां सुरं दाता-
 व. रथेगजेऽः परित समीकृता ॥

[कुमारसम्भव १५।४४]

१०५ अथ जलोद्धतगति

अवेहि जगण ततोऽपि सगण,
विधेहि जगण पुनश्च सगणम् ।
फणोन्द्रकथिता जलोद्धतगति,
चकास्ति हृदये कृतातिसुमति ॥ २२३ ॥

पद्या-

नवीननस्तिनोपमाननयन,
पयोदरुचिर पयोधिसायनम् ।
नमामि कमलासुसेवितहरि,
सदा निजहृदा भवाम्बुधितरिम् ॥ २२४ ॥
इति जलोद्धतगति १०५

१०६ अथ बंशवदेवी

कर्णा जायन्ते यत्र पूर्वं नियुक्ता,
बह्लेस्सल्याका यद्वयेन प्रयुक्ता ।
वाणार्णेदिह्यता वाजिमिदृशापि भिन्ना,
नागेनोक्ता सा बंशवदेवी विभाति ॥ २२५ ॥

पद्या-

बन्दे गोविन्द चारिणी राजमान,
श्रीलक्ष्मीकान्त नागतल्पे शयानम् ।
अत्यन्त पीत वस्त्रयुग्म दधान,
पादर्वे तिष्ठत्या पद्मया सेव्यमानम् ॥ २२६ ॥
इति बंशवदेवी १०६.

१३ रमणा-

व बली बलारातिबलाऽतिशयतन,
इ दिग्दन्तिनादद्वेवनाशमस्वनम् ।
व महीशराम्भोमिनवारितक्रम,
व मयो रथ चोरमयाधिरूहा स ॥
[कुमारसम्भव १५।८]

१४ कुमारी-

इ किं ब्रूय रे व्योमचरा महामुरा,
व स्मरारिसूनुप्रतिपक्षवतिन ।
व मदीयबाणव्रणवेदना हि सा
व ऽधुना कथं विस्मृतिगोचरीकृता ।
[कुमारसम्भव १५।४०]

१०७ अथ मन्दाकिनी

इह यदि नगणद्वय जायते,
तदनु च रगणद्वय दीयते ।
फणिपमुल्लसुमेरुमन्दाकिनी,
प्रभवति हि तदेव मन्दाकिनी ॥ २२७ ॥

यथा—

सखि ! मम पुरतो मुरारे कथा,
कुरु न कुरु तथा वृथाऽन्या कथाम् ।
दि मधुरिपुरेति वृन्दावन,
कलय मम तदा शरीरावनम् ॥ २२८ ॥

इति मन्दाकिनी १०७

क्वचिदियमेव प्रभेति*^१ नामान्तर लभते । 'सह शरधि निज तथा कार्मुकम्'
इत्यादि किराते*^२ । यथा वा—'अतिसुरभिरभाजि पुष्पश्रिया' इति माघेऽपि । *

१०८ अथ कुसुमविचित्रा

विरचय विप्र तदनु च कर्णं,
पुनरपि तद्वत् कुरु रविवर्णम् ।
श्रुतिमितपादे विमलचरित्रा,
परमपवित्रा कुसुमविचित्रा ॥ २२९ ॥

*टिप्पणी—१ वृत्तारत्नाकर अ० ३, का० ६५

*टिप्पणी—२ सह शरधि निजस्तथा कार्मुक
वपुरतनु तथैव सर्वमितम् ।
निहितमपि तथैव पश्यधसि,
वृषभगतिरुपाययी विस्मयम् ॥

[किरातार्जुनीयम् स० १८, प० १६]

*टिप्पणी—३ अतिसुरभिरभाजि पुष्पश्रिया-
मतनुतरतयेव सतानक ।
सदृशपरभूत स्वन रागिणा-
मतनुत रतये वसन्तानक ॥

[दिगुपालवधम् स० ६, प० ६७]

यथा-

मय्युतचित्तो विगतविलम्ब,
 कथमपि यातो हरितवदम्बम् ।
 तरणिसुतायास्तटभुवि कृष्ण,
 स जयति गोपीवसनसत्पृष्ण ॥ २३० ॥
 इति कुसुमविचित्रा १०८.

१०९ अथ तामरसम्

सरससुरूपसुगन्धसङ्गोभ,
 कुचयुगसङ्गमसंवृत^१लोभम् ।
 रसयुतहारयुगाहितमुक्क,
 कलयत तामरस वरवृत्तम् ॥ २३१ ॥

यथा -

विलसति भालतिपुष्पविकास,
 न हि हरिदर्सनतो वनवास ।
 सखि ! नवकेतकिकण्टककर्प,
 वनकलितोनुतनूहहर्ष ॥ २३२ ॥
 इति तामरसम् १०९

११० अथ मासती

कलय नकारमतोपि नायवी,
 तदनु विधारय पक्षिणा पतिम् ।
 कणिपतिपिङ्गलनागमायिता,
 कविहृदि राजति मासती मता ॥ २३३ ॥

यथा-

कलयति^२ चेतसि नन्ददारक,
 सकलवधूजनचित्त^३हारकम् ।
 निखिलविमोहकवेणुधारक,
 दितिमुतसङ्घविनाशवारकम् ॥ २३४ ॥
 इति मासती ११०

कुत्रचिद् इयमेव यमुना इति नामान्तर लभते । 'अयि विजहीहि दूढोपगूहनम्'
इत्युदाहरणान्तर भारविस्थिरम्* ।

१११. अथ मणिमाला

आदो विदधाना हारो वरमेरु,
युक्ता रवयद्भ्या सन्नूपुरकाभ्याम् ।
कर्णे रसपुष्पोद्यत्कुण्डलयुग्मा,
छिन्ना रसयुक्तं वङ्गैर्मणिमाला ॥ २३५ ॥

यथा—

गौरीकृतदेह व्यालावलिमाल,
नृत्ये विधुनान कृत्ति पुरकालम् ।
लोलानलकालं * सभूषितभाल,
कामै शरण त्व सप्राप्य शिवालम् ॥ २३६ ॥
इति मणिमाला १११

११२ अथ जलधरमाला

यस्यामादो पदविरती वा कर्णा,
पक्षप्रोक्ता दिनकरसख्यावर्णा ।
मध्ये विप्रो जलनिधिशैलैश्छिन्ना,
नागप्रोक्ता जलधरमाला भिक्षा ॥ २३७ ॥

यथा—

क्षीतं पुष्पैरभिनवशय्या कृत्वा,
ताम्यच्चित्ता मलयजभूति धृत्वा ।
वक्षस्पीठे तव सुचिर ध्यायन्ती,
तिष्ठत्येषा शठविधिदोष पश्यन्ती ॥ २३८ ॥
इति जलधरमाला ११२

१ ख कोले ।

*टिप्पणी—१ अयि विजहीहि दूढोपगूहनम्
रपत्र नवसङ्गमभीरु ! वल्लभम् ।
अरुणवरोद्गम एष वतते,
वरतनु ! सश्रवदन्ति पुनकुटा ॥

पद्यमिदं वृत्तामोचिनककारेण छन्दोमञ्जरीवृत्ता च भारवे स्वीकृतं किन्तु तद्वृत्तौ
निरात्रानुगोये तु नास्त्युपसन्धिरस्य । पद्योऽयम् चोद्यम् ।

११३. अथ प्रियंवदा

कुसुमसङ्गतकरा रसाहिता,
 विमलगन्धकुचहारभूषिता ।
 सरुतनूपुरसुदोमिता सदा,
 जयति चेतसि सखे ! प्रियंवदा ॥ २३६ ॥

अथा—

नजवधूजनमनोविमोहनं,
 सरसकेलिषु कलानिकेतनम् ।
 सरसचन्दनविलेपचर्चितं,
 कलय चेतसि हरिं सदाचित्तम् ॥ २४० ॥
 इति प्रियवदा ११३.

११४. अथ ललिता

हारद्वयाचितकुचेन भूषिता,
 हस्तस्थितोज्ज्वलसुषुप्पकङ्कणा ।
 पादे विरावयुतनूपुराञ्जिता,
 चित्ते चकास्ति ललिता विलासिनी ॥ २४१ ॥

अथा—

गोपीषु केलिरससकचेतसं,
 सूर्यात्मजा विलुलितातिवेतसम् ।
 चित्तावमोहकरवेणुधारकं,
 वन्दे सदा ललितनन्ददारकम् ॥ २४२ ॥
 इति ललिता ११४.

इयमेव अन्यत्र सुललिता इति गणभेदेन उक्तम् । अतएव 'तो मो जरी सुललिता थुतो यतिः ।' इति वृत्तसारे सयति लक्षणं सङ्क्षिप्तमिति ।

११५. अथ ललितम्

येहि भकारं तदनु च तगणं,
 धारय न वा तदनु च सगणम् ।
 बाणविराम फणिपतिकलितं,
 चेतसि वृत्तं कलयत ललितम् ॥ २४३ ॥

यथा—

चेतसि कृष्ण कलयति^१ ललित,
गोकुलगोपीजनहृदि वलितम् ।
वादितवश तरलितमुकुट,
कारितरास विनिहतशकटम् ॥ २४४ ॥

इति ललितम् ११५

इदमेव अन्यत्र ललना^{*१} इत्युक्तम् ।

११६ अथ कामदत्ता

द्विजवर-सगणौ विधेहि तूर्णं,
जगणमय ततोऽपि देहि कर्णम् ।
सरससुकविपिङ्गलेन वित्ता,
लसति कविमुखेषु कामदत्ता ॥ २४५ ॥

यथा—

कलपरिमलचञ्चलालिमाल,
सुललितदलमालतीविशालम् ।
वनमिदमलिसलुलदरसाल,
हरिमिह हि विना सुखाय नालम् ॥ २४६ ॥

इति कामदत्ता ११६

११७ अथ वसन्तचतुर्वरम्

यदा लघुगुंरु क्रमेण भासते,
खराशुवर्णकेन चेद् विकासते ।
फणोन्द्रनागभाषित सुसत्वर,
विधेहि भानसे वसन्तचतुर्वरम् ॥ २४७ ॥

यथा—

मुदा विलोन्नमोल्लिगोपनायक,
हृदा सदैव चित्तमोददायकम् ।
यदा विभावयिष्यसि त्वमानु रे,
तदा मुसे निमग्जितासि^२ भासुरे ॥ २४८ ॥
इति वसन्तचतुर्वरम् ११७

१ ल ललितम् । २ छ. निमद्ध्यति प्रभासुरे ।

*टिप्पणी—१ एट्-भूय टि०पु० ११७

१२८. अथ प्रमुदितवदना

सरसकविजनाहिता भाविता,
भवति सुकविपिङ्गलेनोदिता ।
सकलरसिकचित्तहृद्या तदा,
प्रमुदितवदना तु नो रो यदा ॥ २४६ ॥

यथा-

कलय सखि ! विराजि वृन्दावनं,
सहचरि ! कुरु मे शरीरावनम् ।
यदि कथमपि मानसे भावयेः,
यदुबुल्लितलकं तद्वानये. ॥ २५० ॥
इति प्रमुदितवदना १२८.

इयमेव अन्यत्र प्रभा* ।

११६. अथ नवमालिनी

सखि ! नवमालिनी रसविरामां,
ननु कलयालि पूर्वयतिमुक्ताम् ।
नजभयकारभाषितपदाढ्या,
फणिपतिनागपिङ्गलविभक्ताम् ॥ २५१ ॥

यथा-

इह कलयालि ! नन्दसुतबाल,
नवधनकान्तिनिजिततमालम् ।
सरसविलासरासवृतमाल,
मुनिवरयोगिमानममरालम् ॥ २५२ ॥

इति नवमालिनी ११६.

१२०. अथ तरलनयनम्

अलधि-नगणमिह रचयत,
रविमित लघुमिह कलयत ।
सुकविफणिपतिरिति वदति,
तरलनयनमिति हि भवति ॥ २५३ ॥

यथा-

तव कुसुमनिभहसितमयि,
गततनुमनुकलयति मयि ।
इति हि सखि ! हरिरनुवदति,
परिकलय दृशमयि सुदति । ॥ २५४ ॥
इति तरलनयनम् १२०

'अत्र प्रस्तारगत्या द्वादशाक्षरस्य षण्णवत्यधिक सहस्रचतुष्टय ४०६६ भेदा भवन्ति, तेषु कियन्त प्रदर्शिता शेषभेदा, सुधीभि प्रस्तार्य भूचनीया इति' ।^१
इति द्वादशाक्षरम् ।

अथ त्रयोदशाक्षरम्

तत्र-

१२१ आराह

यस्मिन् पादे दृश्यन्ते सयुक्ता षट्कर्णा,
सूर्याणामेकेनाप्राणा सख्याका वर्णा ।
कर्णस्यान्ते यस्मिन् सप्रोक्तश्चैको हार,
सोऽय नागोक्तो वाराहो वृत्ताना सार ॥ २५५ ॥

यथा-

कल्पान्तप्रोद्यद्वारा राक्षी दृव्या भग्न,
म क्षोणीपृष्ठ दष्टाग्रे कृत्वा सलग्नम् ।
हत्वा दंत्य दृप्यन्त सिन्धोर्मध्यादागात्,
कुर्यात् काल^२ सोऽय सर्वेषा रक्षा वेगात् ॥ २५६ ॥
इति आराह १२१.

१२२ अथ नायः

हारी वृत्वा स्पर्णमुमेरुद्वययुक्ती,
प्रत्येन हस्ती वलयाभ्यामपि सक्ती ।
मिथ्याचित्तस्थस्य दधाना^३ वरवर्णे,
माया सर्वेषा हृदये राजति तूर्णे^४ ॥ २५७ ॥

१ क प्रती '-' परिगृह्यं नास्ति । २ स कोल । ३ स दधाना वरवर्णम् ।

४ स तूर्णम् ।

* टिप्पणी-१ अयमर्थः प्रोक्तो भेदा षण्णवत्यधिकसहस्रचतुष्टयभेदा ।

एतस्या एवान्यत्र श्रुति नवयतिसहित भगण - तगण - यगण - सगण -
गुरुयुत मत्तमयूरमिति गणान्तरेण नामान्तरमुक्तम् । तथा च छन्दोमञ्जर्याम्
[द्वितीयस्तवके का ६७] 'वेदै र-ध्रैभ्यो यसगा मत्तमयूरम् ।' इति लक्षणात् ।

यथा-

वन्दे गोप गोपवधूभिं कृतरास,
हस्ते वक्ष रावि दधान वरहासम् ।
नध्ये कुञ्जे सविदधान नवकेलि,
लीलाक्ष राघामुखपद्माकरहेलिम् ॥ २५८ ॥
इति माया १२२

यथा वा,

भस्मद्वृद्धप्रपितामहश्रीरामचन्द्रभट्टविरचित कृष्णकृतहले महाकाव्य
रासवर्णनप्रस्तावे—

रासक्रीडासक्तवचस्कायमनस्वा,
सस्कारातिप्रापितनाट्यादिविशेषा ।
वृन्दाग्न्य तासतलोदघट्टनवाचा-
मत्यासगाच्चक्रुरिमा मत्तमयूरम् ॥ २५९ ॥

यथा वा, छन्दोमञ्जर्याम् [द्वितीयस्तवके का० ६७]

लीलानृत्यन्मत्तमयूरध्वनिकान्त,
चञ्चत्रीषामोदपयोदानिलरम्यम् ।
कामक्रीडाहृष्टमना गोपवधूभिं,
कसध्वसी निर्जनवृन्दावनमाप ॥ २६० ॥

'गौरीमध्वामम्बुहृद्गौरीमहमोदे,'* त ससारध्वान्तविनाश हरिमोदे**

* टिप्पणी—१

'नीसारध्वस्थापितपुष्पासितकोशं
सोपातीर्तर्षोर्गिभिरतदिचरभ्याम् ।
बासादिरयथालिप्तमानद्युतिपुञ्जा
गौरीमध्वामम्बुहृद्गौरीमहमोदे ॥ १ ॥

[सङ्कटपायंशुगौरीदशस्तोत्र प० १]

** टिप्पणी—२

स्तोत्रे भक्त्या विष्णुमनादि वगदादि
यदिप्रसक्तं समुत्तिष्ठ भ्रमतीत्यम् ।
यस्मिन् दृष्टे नश्यति तत्समुत्तिष्ठ,
त ससारध्वान्तविनाश हरिमोदे ॥ १ ॥

[सङ्कटपायंशुहरिमोदे स्तोत्र प०-१]

इति च श्रीशङ्कराचार्यविरचिते गीरोदशके हरिस्तोत्रे च । 'हा तातेति-
क्रन्दितमाकर्ण्यविपण्ण' *१ इत्यादि रघुवशे च सहस्रशो निदर्शनानि ।

इति मलामयूरम् १२२

१२३ अथ तारकम्

अलराशिविराजितहस्तसयुक्त,
चरणस्य तथा विरती गुरुवृत्तम्* ।
हृदये कुरुताखिलमोहितचित्त,
फणिनायकभाषित-सारकवृत्तम् ॥ २६१ ॥

अथा-

विमल कमल गरल मनुते सा,
सरसेन विस्रेण सुसेवितवेपा ।
अवन गमन तदनन्दितचित्त,
हृदये सदये तदये कुरु वित्तम् ॥ २६२ ॥

अथा वा, भूयणे*२-

भक्तिभारतर हृदि चन्दनपङ्क्त,
मनुते सरसीपवन विपशङ्कम् ।
तव दुस्तरतारविमोगपयोधि-
नं हि पारमसी भविता परमाये ॥ २६३ ॥

इति तारकम् १२३

१२४ अथ कन्दम्

शर हारयुग्म क्रमादत्र सधेहि,
त्रय पवितसस्याकवर्णं तथा धेहि ।
इदं कन्दसज्ज समुक्त फणीन्द्रेण,
कवीनां यथा मोदकन्द कवीन्द्रेण ॥ २६४ ॥

१ स वित्तम् ।

*टिप्पणी—१

हा तातेति क्रन्दितमाकर्ण्य विपण्ण-
स्तस्याविष्यन् वेतसगूढ प्रभव ॥ ।
सत्यप्रोक्त वीक्ष्य मनुज मुनिपुत्र,
सापादन्त सत्य दयासीत् क्षितिपोषि ॥

[रघुवशः स० ६, प० ७५]

*टिप्पणी—२ बाणीनूपणम् टि० अ० पद्य २४८

यथा-

विलोलद्विरेफावलीनां विरावेण,
 हिमाशोः कराणां च सङ्घेन दावेण ।
 वपुर्मो सदा दाहितं शीतयस्वालि,
 पुरो दर्शयित्वा वपुर्मालिनीमालि ॥ २६५ ॥
 इति कण्डम् १२४.

१२५. अथ षड्भाषतिः

भ कुह तदनु नकारमिहानय,
 धेहि जमय जगण परिभावय ।
 शंखमिह तदनु भामिनि मानय,
 पङ्कमुपरिकलितावलिमानय ॥ २६६ ॥

यथा-

कोमलसुललितमालति^१ मालिनि,
 पङ्कजपरिमलसलुलितालिनि ।
 कोकिलकलकल^२ कूजितशालिनि,
 राजति हरिरिह वञ्जुलजालिनि ॥ २६७ ॥
 इति षड्भाषतिः १२५.

१२६. अथ प्रहृषिणी

कर्णाभ्या सुललितकुण्डलं दधाना,
 शलाभ्यामतिसुरसा कुचाढधहारा ।
 विश्राम ननु रवनूपुरस्य युग्मे,
 बिभ्राणा सखि ! जयति प्रहृषिणीयम् ॥ २६८ ॥

यथा-

यदन्ते विलसति भूमिमण्डल त-
 न्मालिन्यश्रियमुपयातमुज्ज्वलाभे ।
 देवेन्द्ररभिकलितः स्तवप्रयोगै-
 रस्माक वितरतु श स कीलदेहः ॥ २६९ ॥

यथा वा,

अस्मद्वृद्धप्रपितामह-महाकविपण्डितश्रीरामचन्द्रभट्टविरचिते कृष्णकुतूहले
 महाकाव्ये श्रीमगवदाविर्भाववर्णनप्रस्तावे—

सत्य सद्बसु वसुदेवदेवकीभ्या,
 रोहिण्यामुडुनि नभस्य कृष्णपक्षे ।
 पर्जन्ये कटति निशीथनीरवाया-
 मष्टम्या निगमरहस्यमाविरासीत् ॥ २७० ॥

इति प्रहर्षिणी १२६

१२७ अथ रुचिरा

पयोधरे वसुमितहारभूषिता,
 सुपुष्पिणी सरसरिवारिणूपुरा ।
 रसान्विता सकनकरावकङ्कणा,
 चतुर्थेति सखि ! रुचिरा विराजते ॥ २७१ ॥

वधा-

कलापिन निजदयिताविहारिण
 पयोधर सखि ! कलये विरादिणम् ।
 हरिं विना मम सकल विपायित,
 हरे पुन सकलमिद सुखयितम् ॥ २७२ ॥

इति रुचिरा १२७

१२८. अथ चण्डी

कलय नयुगमिह धारय हस्त,
 तदनु च विरचये स किल शस्तम् ।
 चरणविरतियुतभासुरहारा,
 त्रिजगति वरसखि राजति चण्डी ॥ २७३ ॥

वधा-

सरनचरणयुतनूपुरशोभा,
 बहुविधविरचितमानसलोभा ।
 हरिगतवनमनुगच्छति राधा
 सखि मनसिजवृत्तमानसवाधा ॥ २७४ ॥

इति चण्डी १२८

१२६. अथ मञ्जुभाषिणी

करसङ्गिपुष्पयुतकङ्कणान्विता,

रसरूपरावमितनूपुराञ्चिता ।

कुचशोभमानवरहारघाग्नि,

कुरुते मुद मनसि मञ्जुभाषिणी ॥ २७५ ॥

यथा-

जनितेन मित्रविरहेण दुःखिता,

मिलितुं तथैव वनिता हरेर्हस्ति ।

विधुबिम्बचित्तभवयन्त्रपूजन,

कुसुमंस्तनोति नवतारकामयैः ॥ २७६ ॥

इति मञ्जुभाषिणी १२६

सुनन्विनो इत्यन्यत्र । अन्यत्रेति शम्भौ । क्वचिदियमेव प्रबोधिता च^{१*} ।

१३०. अथ अग्निहोत्रा

कुरु नगणयुग धेहि पादे ततः,

तगणयुगलक गोऽपि चान्ते ततः ।

चरणमनु तथा कामवर्णान्विता,

हयरसविरसिचन्द्रिका पूजिता ॥ २७७ ॥

यथा^१ -

कलयत हृदये सौलसधारक,

मुनिजनमहित देवकीदारकम् ।

व्रजजनवनिता-दुःखसन्तारकं,

जलधररुचिर दैत्यसंहारकम् ॥ २७८ ॥

इति अग्निहोत्रा १३०.

यथा ता-

‘इह दुरधिगमै किञ्चिदेवागमै ।’ इत्यादि किराताजुं नोये^{२*} । क्वचिदियमेव उत्पलिनी इति प्रसिद्धा ।

१. यथा उदाहरण भासित ।

*टिप्पणी—१ एन्दोमञ्जरी, द्वितीयस्तवक, चारिवा ६६ एव १०२ ।

*टिप्पणी—२

‘इह दुरधिगमैः किञ्चिदेवागमै

शततममुनर चर्णयत्यन्तरम् ॥

धमुपतिविपिन वेददिम्यापिन

पुरुषमिव पत्र पच्योनि. परम् ॥

[किराताजुं नीयम् प० ४, प० १८]

१३१ अथ कलहसः

सगणं विधेहि जगणं च सुयुक्तं,
 सगणद्वयं कुरु पुनः फणिवित्तम् ।
 गुरुमन्तर्गं कुरु तथा हृतचित्तं,
 कलहंसनामकमिदं वरवृत्तम् ॥ २७६ ॥

यथा-

नवनीतचोरममलद्युतिशोभं,
 ब्रजमुन्दरीवदनपङ्कजलोभम् ।
 लालतादिशोपवन्निताकृतरास,
 कलये हरिं निजहृदा वरहासम् ॥ २८० ॥
 इति कलहंसः १३१.

कुत्रचिदयमेव सिंहनाद इति, ववचिञ्च कुटजाख्यमिति ।

१३२. अथ मृगेन्द्रमुखम्

कुरु मगणं तदनन्तरं नरेन्द्रं,
 तदनु च जं कुरु पक्षिणामयेन्द्रम् ।
 तदनु विधारय नूपुरं पदान्ते
 रचय मृगेन्द्रमुखं सुखेन कान्ते ! ॥ २८१ ॥

यथा-

कुमुदवनीषु सखे ! विधूतवन्धः,
 कमलवनस्य सदा हृतातिगन्धः ।
 विधुरुदितो धवलीकृतातिलोकः,
 प्रतिरजनीषु च दत्तकोकसोकः ॥ २८२ ॥
 इति मृगेन्द्रमुखम् १३२.

१३३. अथ क्षमा

द्विजवर-सगणो धेहि वैनतेयं,
 यगणमय तथा पण्डितालियेयम् ।
 मुनिरचितयतिः सज्जनादिमेयं,
 फणिपतिकथिता राजति क्षमेयम् ॥ २८३ ॥

यथा-

कलयत हृदये नन्दगोपसूनुं,
 फणिपतिदमनं न्यवृत्तातिमानुम् ।

दाशधरवदन राधिकारसाल,

सरसिजनयन पङ्कजालिमालम् ॥ २८४ ॥

इति क्षमा १३३.

इयमेव क्वचिद् गणान्तरेणापि क्षमैव^{१*} भवति ।

१३४ अथ सता

कलय नगण विधेहि तत् कर,

जगण्युगल च देहि तत् परम् ।

चरणविरती गुरु कुरु सम्मता,

रसकृतयतिमूर्दा विहिता सता ॥ २८५ ॥

क्षमा-

कलय हृदये मुदा प्रजनायक,

ललितमुकुट सदा सुखदायकम् ।

युवतिसहित प्रजेन्द्रसुत हरि,

कनकवसन भवाम्बुनिधेस्तरिम् ॥ २८६ ॥

इति सता १३४.

१३५ अथ चन्द्रलेखम्

कुरु न-सगणो पक्षिराज च युक्त,

रचय रगण कामवर्णरमुक्तम् ।

तदनु च पुन कुण्डल धेहि क्षेप,

कलय फणिना भापित चन्द्रलेखम् ॥ २८७ ॥

क्षमा-

नमस्त सतत नन्दगोपस्य सूनु,

फणिप दमन दानवोलूकभानुम् ।

कमलवदन राधिकाया रसाल,

तरलनयन पङ्कजालीगुमालम् ॥ २८८ ॥

इति चन्द्रलेखम् १३५

चन्द्रलेखा^{२*} इत्यन्यत्र ।

* टिप्पणी—१ हरारत्नाकरस्य (ध० ३ वा० ७५) नारायणीटीकायां 'इय क्षमैव

क्षायावो यत्तमेदेन तन्नातरार्थं पुनरुक्ते' ।

* टिप्पणी—२ छन्दोमञ्जरी, द्वितीयस्तवक, चारिका १०५

१३६ अथ सुद्युति

कुरु न-सगणो पादे तकारो तथा,
 कलय वलय स्यु कामवर्णा यथा ।
 रसपरिमितैर्वर्णैस्तथा स्याद यति,
 फणिपकथिता सशोभते सुद्युति ॥ २८६ ॥

अथा-

धदनवलितंभूर्झयुता सद्वया,
 लूलितललिता लोलालसाक्षिद्वया ।
 सखि हरिगृहाद् याति प्रगे राधिका,
 सकलमुदुषा नित्य मनोवाधिका ॥ २८७ ॥

इति सुद्युति १३६

१३७ अथ लक्ष्मी

कर्णे विराजिसरसकुण्डलान्विता,
 गन्धाढ्यपुष्पयुतकरेण शोभिता ।
 वक्षोरहे च विमलहारशोभिनी,
 लक्ष्मी सदा फलतु ममातुल फलम् ॥ २८८ ॥

अथा-

वन्दे हरिं फणिपतिभोगशायिन,
 सर्वेश्वर सकलजनेष्टदायिनम् ।
 पीताम्बर मणिभुक्टादिभासुर,
 गो-गोपिकानिखरवृत हृतासुरम् ॥ २८९ ॥

इति लक्ष्मी १३७

१३८ अथ विमलगति

जलधिमित नगणमिह कलय,
 तदनु च सखि सधूमिह रचय ।
 फणिपतिमुन्नतमिति भवति,
 विदनु यति विमलगति मुदति ! ॥ २९० ॥

यथा-

अभिनवसजलजलदविमल,
निजजनविहृतसकलशमल^१ ।
कमलसुललितनयनयुगल,
जय^१ जय^१ सुरनुतपदकमल ॥ २६४ ॥
इति विमलगति १३८

^१अत्रापि प्रस्तारगत्या त्रयोदशाक्षरस्य द्विनवत्युत्तरशतमष्टौ सहस्राणि च ८१६२ भेदा भवन्ति, तेषु कतिचन भेदा समुदाहृता, शेषभेदा सुधीमि प्रस्तार्य समुदाहरणीया इत्यल पल्लवेन ।*

इति त्रयोदशाक्षरम् ।

अथ चतुर्दशाक्षरम्

तथा-

१३९ तिहास्य

यस्मिन्निन्द्रं सख्याता राजन्ते युक्ता वर्णा,
पादे सूर्याश्वै सख्याका सशोभन्त कर्णा ।
नागानामीशेनैतत् प्रोक्तं सिंहास्य कान्ते ।
भूपासना चित्तानन्दस्थान मेहि स्वान्त ॥ २६५ ॥

यथा-

यो दैत्यानामिन्द्र वक्षस्पीठे हस्तस्याग्रै-
भिद्यद् ब्रह्माण्ड व्याश्रयोन्वैर्व्यामूदनादुग्रै ।
दत्तालीकान्युन्मिथ निर्यद्विद्युद्वृद्धास्य-
स्तूर्णं सोऽस्माक रक्षा कुर्यादघोर(वीर)सिंहास्य ॥ २६६ ॥
इति तिहास्य १३९

१४० अथ वसन्ततिलका

हारद्वय स्फुरदुरोजयुत दधाना,
हस्त च गन्धबुसुमोज्ज्वलक दूणाढयम् ।
पादे तथा सरत्तनूपुरयुग्मयुक्ता,
चित्ते वसन्ततिलका किल चावसीति ॥ २६७ ॥

१ स समस । २ यस्मिन्त्रय नास्ति क प्रती ।

* टिप्पणी- ग्रन्थाद्यरेषु समुपलब्धशेषभेदा यन्त्रचमपरिनिष्टे समवेगलीया ।

यथा-

लोके त्वदीययशसा धवलीकृतेऽस्मिन्,
 छयाभय निजशरीरकृत विमुच्य^१ ।
 ज्योत्स्नावतीषु रजनीध्वमिसारिकाणा,
 सङ्घ प्रियस्य सदन सुखत प्रयाति ॥ २६८ ॥

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

पातु न पारयति यत्कथित पयस्त-
 द्धनो विनाश्य दृढनाशयति स्वकीयान्^१ ।
 खण्ड निधाय दक्षिणखण्डमखण्डमेव,
 क्षिप्त्वा मुखे निखिलमस्ति मुखे सुतस्ते ॥ २६९ ॥
 इति वसन्ततिलका १४०

१४१ अथ चक्रम

कुण्डलकलितदहनमित नगण,
 शङ्खसहितमिह विरचय सगणम् ।
 कुण्डल^२नरपतिवरकविकलित,
 क्रमखिलकविजनहृदि ललितम् ॥ ३०० ॥

यथा-

कोकिलकलरवसुललितसमये,
 शीतलमलयजपवनसुखमये ।
 कामविश्लेषयविदलितहृदये,
 सुन्दरि ! परिहर हृदयमदमये ॥ ३०१ ॥

यथा वा वाणीभूषणे— [द्वितीयाध्याय, पद्य २५८]

सुन्दरि ! नभसि जलदचयरुचिरे,
 देहि नयनयुगमतिघनचिकुरे ।
 मानमिह न कुरु जलधरसमये,
 किं तव भवति हृदयमिदमदय ॥ ३०२ ॥

इति चक्रम १४१

१४२ अथ अष्टम्भाया

विभ्राणा कर्णो^३ कलितललितताटङ्कौ (ङ्का),
 वार्ण सञ्छिन्ना द्विजविरचितगोमाढ्या ।

हस्ताग्रे राजद्विरचितवलयद्वन्द्वान्,
स्तुत्या सप्रोक्ता वरकविभिरसम्वाधा ॥ ३०३ ॥

यथा

वन्दे गोपाल व्रजजनतरुणीधीर,
रासक्रीडायामभिगतयमुनातीरम् ।
देवाना वन्द्य हृत्वरवनिताचीर,
वालं सयुक्त दितिसुतदलने वीरम् ॥ ३०४ ॥

इति असम्वाधा १४२

१४३ अथ अपराजिता

द्विजपरिकलिता करेण विराजिता,
कुचयुगकलिता प्रभम्बितहारिणी ।
भुवननिगदितातिशोभितवर्णिनी,
कृतमुनिविरतिर्जयत्यपराजिता ॥ ३०५ ॥

यथा-

प्रतिरुचिदशनैः सभातमसा हूर,
दितिसुतरुधिरं सुरकनखाङ्कुर ।
जलभृदुडुगणौ सटाभिरुपाहरत्^१,
जयति ह्रस्तिनुमंढानपि सहरत्^२ ॥ ३०६ ॥

इति अपराजिता १४३

१४४ अथ प्रहरणकलिका

रञ्जयत नगणद्वयमथ भगण,
सधुगुरसहित कलयत नगणम् ।
प्रहरणकलिवा मुनियतिसहिता,
फणिपतिकथिता कविजनमहिता ॥ ३०७ ॥

यथा -

नम मधुमथन जसनिधिशयन,
सुरगणनमित सरसिजनयनम् ।
इति गदनमतिर्भवति हृदि यदा,
भवजसनिधि[त]स्तरति सति । सदा ॥ ३०८ ॥

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

व्रजयुवतिभिरित्यभिमतवचसि,

प्रतिपदममृतद्रवमिव विकिरति ।

मनसिजविशिखप्रपत्तनविधुत-

स्वविरहदहनप्रशमनमकलि^१ ॥ ३०६ ॥

इति प्रहरणकलिका १४४

१४५. अथ वासन्ती

कर्णौ कृत्वा कुण्डलसहितौ गन्ध पुष्प,

हस्ते धृत्वा कङ्कणमथ हार राजन्तम् ।

स्वर्णेनाढ्य नूपुरमथ धृत्वा राजन्ती,

नागप्रोक्ता राजति कविचित्ते वासन्ती ॥ ३१० ॥

यथा—

वन्दे गोपीमन्मथजनक कसारार्ति,

भूमे कार्यार्थं नृपु कृतमिथ्याविख्यातिम् ।

रासे वशीवादननिपुण कुञ्जे कुञ्जे,

लीसालोल गोकुलनवनारीणा पुञ्जे ॥ ३११ ॥

इति वासन्ती १४५.

१४६. अथ शोला

कर्णे कुण्डलयुक्ता हस्त स्वर्णसनाथ,

विभ्राणा वलयाढ्य हारी चोज्ज्वलपुष्पी ।

सध्वान च दधाना दिव्य नूपुरयुग्म,

नागोक्ता कविचित्ते कान्ता राजति शोला ॥ ३१२ ॥

यथा—

गोपाल कलयेऽहं नित्य नन्दकिशोर,

वृन्दारण्यनिवास गोपीमानसचोरम्^२ ।

वशीवादनसक्त नव्ये कुञ्जकुटीरे,

नारीभिः वृतरास कालिन्दीवरतीरे ॥ ३१३ ॥

इति शोला १४६.

१४७ अथ नान्दीमुखी

द्विजपरिकलिता हस्तयुक् कङ्कणादद्या,
विरुतविलसितो नूपुरो धारयन्तो ।
रसकनकयुतं हारमुच्चैर्देवाना,
स्वरविरतियुता भाति नान्दीमुखीयम् ॥ ३१४ ॥

वया-

नखगलदत्तजा पानतो भीषणास्यः
सुरनृपतिमुखैर्देवसर्पैरुत्पास्यः ।
भयजनकरघैर्नादयद्दिङ्मुखानि,
प्रकटयत् स व. सिंहवक्त्र. मुखानि ॥ ३१५ ॥
इति नान्दीमुखी १४७,
१४८. अथ वैदर्भी

कर्णे कृत्वा कनकमुललितं ताटङ्कं,
सबिभ्राणा द्विजमथ वलयं हस्ताग्रे ।
दिव्यं हारद्वितयमथ दधाना मुक्तं
वेदैर्द्विभ्रा जगति विजयते वैदर्भी ॥ ३१६ ॥

वया-

वन्दे निरयं नरभृगपतिदेहं व्यग्रं,
दैत्येशोर स्यलदलनविधिवत्पुत्रम् ।
प्रह्लादस्याभिलषितवरदं मुक्ताग्रे,
सलिलान्तं रुधिरविलुलितं जिह्वाग्रम् ॥ ३१७ ॥
इति वैदर्भी १४८.
१४९. अथ इन्दुवदनम्

येहि जगण तदनु धारय जकारं,
हस्तमथ कारय ततोर्जि च नकारम् ।
हारयुगलं तदनु देहि चरणान्ते,
जागृतेमिन्दुवदनं भवति भान्ते ! ॥ ३१८ ॥

वया-

नीमि वनिताविततरासरसयुक्तं,
योदुसवभूजममनोहरणसक्तम् ।

देवपतिगर्वहरखण्डनसुदक्ष,

भूमिवलये निहतदैत्यगणलक्षम् ॥ ३१६ ॥

इति हनुवदनम् १४६

स्त्रोलिङ्गमन्यत्र* ।

१५० अथ शरभी

कर्णं स्वर्णोज्ज्वलललितताटङ्कयुक्तं ,

सबिभ्राणा द्विजमय रुत नूपुराढयम् ।

हार पुष्प वलययुगल धारयन्ती,

वेदेक्षिन्ना जयति शरभी पिङ्गलोक्ता ॥ ३२० ॥

यथा-

वन्दे कृष्ण नवजलधरस्यामलाङ्ग,

वृन्दारण्ये व्रजयुवतिभिर्जातसङ्गम् ।

कालिन्दीये सरसपुलिने क्रीडमानः,

कालीयाहे प्रथितयशसो धूतमानम् ॥ ३२१ ॥

इति शरभी १५०

१५१ अथ ग्रहिघृति

रचय नयुगल कुरु ततो भगण,

लघुगुरुसहित कुरु तथा जगणम् ।

मुनिविरतियुता फणिनूपस्य कृति ,

जगति विजयते सुविमलाऽहिघृति ॥ ३२२ ॥*

यथा-

सकलतनुभूता जलमपेयतर,

विगतवि[प]भय रचयितु कृपया ।

पतति तरुवराच्छिरसि नन्दसुते,

भुवनभरसहा विजयतेऽहिघृति ॥ ३२३ ॥*

इति ग्रहिघृति १५१-

१५२ अथ विमला

रचय न-भूपती कुरु तथा भगण,

सधुवलयचित्तं च विरती जगणम् ।

एव तत्त्वमानं । २ पूर्णं यद्यपि नास्ति क प्रती ।

टिप्पणी—१ वृत्तारत्नावर अ० ३, पं० ८२

फणिपतिमापिता रविहयैर्विरति-

वैरकविमानसेज्जतिविमला जयति ॥ ३२४ ॥

यथा-

व्रजजननागरीदधिहृतावतुला,

तरणिमुतातटे हरितनुविमला^१ ।

वरवनितादृशा सुमुकृत्ककला,

मम विमले सदा भवतु हृद्यचला ॥ ३२५ ॥

इति विमला १५२

१५३ अथ मल्लिका

कुरु गन्धयुग्मसहित मृगाधिपति,

रचयाद्यु सन्ततमयो नरावपि सम् ।

इह मल्लिका कलमता विलासवती,

नवपञ्चवैर्यंतियुता मुदो^२ जननीम् ॥ ३२६ ॥

यथा-

सखि ! नन्दसूनुरिह मे मनोहरण,

जनताप्रसादसुमुखस्तमोहरण ।

भविता सहायकरणो जनानुगत,

करवै कमत्र शरण बने सुखत ॥ ३२७ ॥

इति मल्लिका १५३

१५४ अथ मणिगणम

जलधिमित नगणमिह कलयत,

तदनु च लघुयुग्मपि रचयत ।

सकलफणिनृपतिविरचितमिति,

निजहृदि कलयत मणिगणमिति ॥ ३२८ ॥

यथा-

भुजयुगलविलसितफणिवलय,

वृत्तसकलदितिमुतबुलविलय ।

प्रलयसमयभयजनक सलय^३,

वृषगमनमपि सुगमनुकलय ॥ ३२९ ॥

इति मणिगणम १५४

‘अत्रापि प्रस्तारगत्या चतुर्दशाक्षरस्य चतुरशीत्यधिकानि त्रिशतानि षोडश-
सहस्राणि च भेदास्तेषु कियन्तो भेदाः प्रदर्शिताः, शेषभेदाः सुधीभिराकरोतः
स्वमत्या वा प्रस्तारं समूहनीया इति दिक्’* ।

इति चतुर्दशाक्षरम् ।

अथ पञ्चदशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्—

१५५. लीलाखेलः

यस्मिन् वृत्ते रध्यद्वैः संख्याता दृश्यन्ते कर्णाः,

पादे पादे तिष्ठ्या सम्प्रोक्ताः संशोभन्ते वर्णाः ।

हारद्वैकोऽन्ते यस्मिन्नागानामीशेन प्रोक्तः,

लोके वृत्तानांसारं लीलाखेलाख्यं तद्वृत्तम् ॥ ३३० ॥

यथा

देवैर्वन्द्यं त्रैलोक्यास्थानं देहं खर्वीकुर्वन्,

दैत्यानामीशं भूम्यां ख्यातः^१ पातालस्थं कुर्वन् ।

स्वाराज्यं देवेशा धान्त्यन्तं स्थैर्याद्विधं संयच्छन्,

मामध्याद् गोविन्दो वैरोच्यानाशीः^२ पथं गजं ॥ ३३१ ॥

इति लीलाखेलः १५५.

यथा वा —

‘मा कान्ते पक्षस्यान्ते पर्याकाशे देशेस्वाप्सीः’, इति ज्यौतिषिकाणां कालपरि-
माणपरं उदाहरणमिति कण्ठाभरणे^३ । लीलाखेलस्य एतस्यैवान्यत्र सारङ्गिका^४
इति नामान्तरमुक्तम् ।

१५६. अथ मालिनी

द्विजकरवलयाद्या नूपुरारावयुक्ता,

श्वेत्तणरचितपुष्पप्रोतताटङ्कयुग्मा ।

धसुरचितविरामा सर्वलोककवर्णा,

फणिपनृपतिकान्ता भासते मालिनीयम् ॥ ३३२ ॥

१. पवित्रप्रयं नास्ति क. प्रती । २. ल. वातः । ३. ल. वैरोच्यानाशीः

*टिप्पणी—१ अन्तान्तरेषु प्राप्तोपभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे पर्यालोच्यताः ।

*टिप्पणी—२ मा कान्ते ! पक्षस्यान्ते पर्याकाशे देशे स्वाप्सीः,

कान्ते यत्र वृत्ता पूर्णं चन्द्रं मत्वा रात्रौ वेत् ।

क्षुत्तामः प्राटंश्चेत्तपक्षौ राहुः क्रूरः प्राणात्,

तस्मादुद्धान्ते हर्म्येद्यान्ते शर्म्येद्यान्ते वर्याव्या ॥

[कण्ठाभरण]

*टिप्पणी—३ प्राकृतपद्यसम्-द्वितीयपरिच्छेद, पद्य १५६ ।

यथा—

अथममृतमरीचिदिग्वधूकणपूरं
 सपदि परिविधातु कोऽपि कामीव कान्तः ।
 सरस इव नभस्तोऽप्यन्तुविस्तारयुक्ता-
 दुडुगणकुमुदानि प्रोच्चकैरुच्चिनोति ॥ ३३३ ॥

यथा वा, पाण्डवचरिते—

भवनमिव तलस्ते वारणजालं कुर्वन्,
 गजरयहयपृष्ठे बाहुयुद्धे च दक्षाः ।
 विघृतनिशितखङ्गाश्चर्मणा भासमाना,
 विदधुरय समाजे मण्डलात् सव्यवामात् ॥ ३३४ ॥

यथा वा, अस्मत्पितामहमहाकविपण्डितश्रीरायभट्टकृते शृङ्गारकल्लोसे
 खण्डकाव्ये—

मन इव रमणोनां रागिणी वारुणीयं,
 हृदयमिव युवानस्तस्कराः स्व हरन्ति ।
 भवनमिव मदीय नाथ दून्यो हि देश-
 स्तव न गमनमीहे पान्य कामाभिरामा ॥ ३३५ ॥

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

निरवधिदिनमाना य विना गोपवध्व-
 स्तमभिकमभितायं वीक्षमाणा ननन्दुः ।
 स्मितमधुरमपाङ्गालोकन प्रीतिदल्या.,
 कुसुममिव तदीर्यं वीक्ष्य कृष्णोप्यतुष्यत् ॥ ३३६ ॥
 इति मालिनी १५६

१५७ अथ चामरम्

पक्षिराजभूपतिक्रमेण यद् विराजते,
 बाणभूमिसख्ययाक्षरं च यत्र भासते ।
 नागराजभाषित तदेव चारुचामर,
 मानसे विधेहि पाठ्यतोऽपि मोहितामरम् ॥ ३३८ ॥

यथा—

नौमि गोपकामिनीमनोविनोदकारण,
 लीलयावधूतकंसराजमत्तवारणम् ।
 कालियाहिमस्तकोत्ससन्मणिप्रकाशित,
 नन्दनन्दन सदैव योगिचित्तभासितम् ॥ ३३८ ॥

यथा वा, भूषणे^१ *—

रासलास्यगोपकामिनोजनेन खेलता,
 पुष्पपुञ्जमञ्जुकुञ्जमध्यगेन दोलता ।
 तालनृत्यशालिगोपवालिकाविलासिना,
 माधवेन जायते सुखाय मन्दहासिना ॥ ३३६ ॥
 इति चामरम् ११७.

एतस्यैव अन्यत्र सूत्रकं *^२ इति नामान्तरम् ।

११८. अथ भ्रमरावलिका

धरणे विनिधेहि सकारमिषूपमितं,
 कुरु वर्णंभपीपुनिशाकरसंप्रमितम् ।
 फणिनायकपिङ्गलचित्तमुदः कलिका,
 सखि ! भाति कवीन्द्रमुखे भ्रमरावलिका ॥ ३४० ॥

यथा—

कलकोकिलकूजितपूजितनू (तनू) वनं,
 वनजाक्षिन्वीनसरोजवनीपवनम् ।
 हिमदीधितिकान्तिपयःपरिधोतमिदं,
 जगदाशु विलोक्य^१ परित्यज मानमिदम् ॥ ३४१ ॥

यथा वा, भूषणे^२—

सखि ! सम्प्रति क प्रति मीनमिदं विहितं,
 मदनेन धनुः सशरं स्वकरे निहितम् ।
 नतिशालिनि का वनमालिनि मानकया,
 रतिनायकसायकदुःखमुपैवि^३ वृषा ॥ ३४२ ॥
 इति भ्रमरावलिका ११८.

भ्रमरावलीति पिङ्गले^४ *

१. ल. जगदाशुचि लोचय । २. 'मुपैति' बाणीभूषणे ।

*टिप्पणी—१ बाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, प० २६२

२ छन्दोमञ्जरी, द्वितीयस्तव, कारिका ११७

३ बाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, पद्य २६६

४ प्राकृतपञ्चतन्त्रम्, द्वितीयपरिच्छेद, प० ११४

१५६. अथ मनोहस

प्रथम विधेहि कर जकारविराजित,
जगण ततो भगणेन कारय भूषितम् ।
विनिधेहि पक्षिपति ततस्तिथिजाक्षर,
कुरु हसमेणविलोचने मनस परम् ॥ ३४३ ॥

यथा-

तनुजाग्निना सखि । मानस मम दह्यते,
तनुसन्धिरुष्णगदारवत् परिभिद्यते ।
अथ च द्युप्यति वारिमुक्तमुद्रासिवत्,
कुच मद्गृह कृपया सदा वनमालिमत् ॥ ३४४ ॥

यथा वा-

नवमञ्जुवञ्जुलरुञ्जवृजितकोकिले,
मधुमत्तचञ्चलचञ्चरीककुलाकुले ।
समयेतिधीरसभोरकम्पितमानसे,
किमु चण्डि मानमनोरये न विसिद्यसे ॥ ३४५ ॥
इति मनोहस १५६

१६०. अथ धारभम्

जलनिधिकृतमिह विरचय नगण ,
चरणविरतिमनुविरचय सगणम् ।
वरफणिपतिविरचितमतिरचिर ,
धारभमतिलहृदि विलसति सुचिरम् ॥ ३४६ ॥

यथा-

नभसि समुदयति सखि । हिमकिरण ,
बहति सुलघुलघुमलयजपवनम् ।
त्यजति तिमिरमिदमपि (भि) जननयन ,
द्रुतमनुविरचय मधुरिपुशपनम् ॥ ३४७ ॥
इति धारभम् १६०

इदमेवायत्र शशिबला* इति नामान्तरेण उक्तम् ।

अथ मणिगुणनिकरसुजो हृदसी, विञ्च -

इदमेव हि यदि वमुपति ८ मणिगुणनिकराभ्यमीर्यते हि तदा ।
यदि तु रसे ६ विथाम अगिति समाख्या तदा समते ॥ ३४८ ॥

अपि च

मणिगुणनिकरोदाहृतिरिह शरभोदाहृतौ ज्ञेया ।

स्रगुदाहरण ज्ञेयम् लक्षणवाक्ये तु शरभस्य ॥ ३४६ ॥

यथा वा—

नरकरिपुरवतु निखिलमुरगति-

रमितमहिमभरसहजनिवसति ^१ ।

अनवधिमणिगुणनिकरपरिचित ,

सरिदधिपतिरिव धृततनुविभव ॥ ३५० ॥

अयि । सहचरि । रुचिरतरगुणमयो ,

अदिमवसतिरनपगतपरिमला ।

लग्निव निवसति लसदनुपमरसा ,

सुमुखि ! मुदितदनुजदलनहृदये ॥ ३५१ ॥

इति ध्रुवोमञ्जरीमुदाहरणद्वय* यतिभेदेनोक्तम् । प्रकृत तु शरभमेव इति न कश्चिद् विशेषः ।

१६१ अथ निशिपालकम्

धेहि भगण तदनु भूपतिमयो कर ,

देहि नगण च रगण कुरु तत परम् ।

नागनृपपिङ्गलसुभाषितमुदीरित ,

वृत्तममल हृदि निधेहि निशिपालकम् ॥ ३५२ ॥

यथा—

गोऽतरुणीजनमनोहरणपण्डित ,

हस्तयुगधारितसुवेणुपरिमण्डितम् ।

चन्द्रकविराजितविलोममुकुट हृदा ,

नोमि हरिपर्वतनयात्तटगत सदा ॥ ३५३ ॥

यथा वा, भूपणे*—

चन्द्रमुखि ! जीवमुखि (पि) ! याति मलयानिले ,

याति मम चित्तमिव पाति* मदनानिले ।

* क तानितिलसुगति । २ गाङ्गावाणीभूपणे ।

* टिप्पणी—१ ध्रुवोमञ्जरी, द्वितीयस्तवक, बारिका १३३, १३३

२ वाणीभूपणम् द्वितीयाध्याय, पद्य २५६

तापकर-कामदार-शल्यवरकीलितं^१,

मामिह हि पश्य जहि कोपमतिशीलितम्^२ ॥ ३५४ ॥

इति निशिपालकम् १६१.

१६२. अथ विपिनतिलकम्

रचय नगणं तदनु धेहि हस्तं मुदा,

नगणसहितं रगणयुग्ममन्ते सदा ।

रसनवयति फणिपभाषितं सुन्दर

विपिनतिलकं कलय बाणविध्वंसरम् ॥ ३५५ ॥

यथा-

नरवरपतेरिव नराः दाक्षाङ्कांशवः,

तिमिरनिकरः सपदि चोरवद् गच्छति ।

अयमपि रविः सखि ! हुताधिकारिप्रभः,

कथयति विधोः खगकुलं जयं वदिवत् ॥ ३५६ ॥

यथा वा-

जयति करुणानिधिरक्षेपसत्तारकः,

कलितललितादिबनितामतोहारकः ।

सकलघरणीपकुलमण्डलीपालकः,

परमपदवीकरणदेवकीबालकः ॥ ३५७ ॥

इति विपिनतिलकम् १६२.

१६३. अथ चन्द्रलेखा

कर्णे ताटङ्कयुग्म पुष्पाढ्यहारौ दधाना,

विभ्राणा नूपुरस्य द्वन्द्वं सुराव सुचित्तम् ।

पादान्ते धारयन्ती वीणा सुवर्णावियुक्ता,

नागोक्ता चन्द्रलेखा सप्ताष्टछेदैरमुक्ता ॥ ३५८ ॥

यथा-

नित्य वन्दे महेश गौरीशरीराढ्ययुक्तं,

दग्धाजङ्ग पुरारि वेतालसङ्घैरमुक्तम् ।

विभ्राण चन्द्रलेखा नृत्येषु वृत्ति धुनान्,

गङ्गासञ्जातसङ्ग दृष्ट्या त्रिलोकी पुनानम् ॥ ३५९ ॥

इति चन्द्रलेखा १६५.

चण्डलेखा इत्यन्यत्र ।

१६४. अथ चित्रा

कर्णद्वन्द्वं ताटङ्काभ्यां योजितं कारयित्वा,
 हारौ विभ्राणा स्वर्णद्विधं पुष्पयुक्तं तथैव ।
 तिर्य्युक्तेर्वर्णैः संयुक्ता कङ्कणी धारयन्ती,
 शोभां घत्ते चित्रां चित्रा शब्दवन्नूपुराभ्याम् ॥ ३६० ॥

यथा—

कालिन्दीकूले केलीलोलं वधू^१सङ्घयुक्तं,
 वन्दे गोपालं रक्षायां नन्दगोपस्य सक्तम् ।
 हस्तद्वन्द्वे धृत्वा श्वासैर्वेशिकां पूरयन्तं,
 दैतेयान् हत्वा देवानां संकटं दूरयन्तम् ॥ ३६१ ॥
 इति चित्रा १६४.

चित्रमिदमन्यत्र^{१*} ।

१६५. अथ केसरम्

कुरु नगणं ततोऽपि च विधेहि भूपति,
 भगणपयोधरौ तदनु पक्षिणां पतिम् ।
 फणिपतिभाषितं त्रिविविभाषिताक्षरं,
 सुकविमनोहरं हृदि निधेहि केसरम् ॥ ३६२ ॥

यथा—

चिरमिह मानसे कलय नन्ददारकं,
 धरवनमालिनं दितिसुतापहारकम् ।
 ब्रजवनितारसोदधिनिमग्नमानसं,
 रवितनयातटे कलितपीतवाससम् ॥ ३६३ ॥
 इति केसरम् १६५.

१६६. अथ एता

प्रथमं करं रचय जगणमनु कान्ते !
 भगणद्वयं तदनु कुरु यगणमन्ते ।
 फणिभाषिता क्षरपरिकलितविरामा,
 कृतसंस्तुतिः सकलवरकविभिरेता ॥ ३६४ ॥

धया-

हृदि भावये विमलकमलनयनान्त ,
जनपावन नवजलधररुचिकान्तम् ।
व्रजनायिकाहृदयमधिजनितकाम ,
वनमालिन सकलसुरकुलललामम् ॥ ३६५ ॥
इति एता १६६

१६७ अथ प्रिया

कुरु नगणयुग धेहि त भगण तत ,
प्रतिपदविरती भासते रगणोज्ज्वलत ।
मुनिरचितमति 'नागराजफणिप्रिया ,
सकलतनुमृता मानसे लसति प्रिया ॥ ३६६ ॥
इदमेव हि यदि वसुयति = रलिरिति मजा तदाप्नोति ।
लक्षणवाक्ये मुनियतिरुदिता वसुकृतयतिश्च यथा ॥ ३६७ ॥

धया-

कलय ददामुस्त्वारि हृताखिलदानव ,
मुनिजनमल्लपालमृपा भुवि भानवम् ।
सरसिजनयनान्त क्षरासनभञ्जक ,
कपिकुलवरराज सदा प्रियसज्जकम् ॥ ३६८ ॥
इति प्रिया १६७

१६८ अथ जलसव

पक्षिराज-नगणौ भगण द्वितय तत
कारयानु पदसौपवृत्तो रगणौ मत ।
जलसव फणिनागद्वय सखि ! भासते ,
पङ्क्तिजाक्षरविरामयुत कविमानसे ॥ ३६९ ॥

धया-

वभ्रमीति हृदय जलघो तरणिर्यथा ,
दह्यते सखि ! तनुर्नलिनीव हिमागमे ।
वायुसौलव्यदलीव तनुर्भ्रम वेपते ,
चन्दन शुचि सरोवदिद परिशुष्यति ॥ ३७० ॥
इति जलसव १६८

१६६. अथ उडुगणम् ।

भुवनविरचितमिह लघुमुपनय ,

तदनु विघुकृतलघुमिह विरचय ।

उडुगणमखिसहृदयकृतसदन—

मृपिकृतविरतिमनुकुरु सुवदन ! ॥ ३७१ ॥

यथा—

दहनगतमलकनकनिभवसन,

कटिधृतविस्तरुचिरवररसन ।

सुरकृतनमन जलनिधिनिवसन,

शमनुविरचय कुसुमनिमहसन ॥ ३७२ ॥

इति उडुगणम् १६६.

‘अत्रापि प्रस्तारगत्या पञ्चदशाक्षरस्य द्वात्रिंशत्सहस्राणि सप्तशतानि अष्ट पट्षुत्तराणि ३२७६८ भेदास्तेषु आद्यन्तसहिताः कियन्तः प्रोक्ताः, शेषभेदाः प्रस्तार्य लक्षणीया इति दिक्’* ।

इति पञ्चदशाक्षरम् ।

अथ योडशाक्षरम्

तत्र—

१७०. राम-

यस्मिन्नष्टौ पादस्थित्या युक्ता. संदृश्यन्ते कर्णाः,

संक्षोभन्ते पादे पादे शृङ्गारैः सख्याता वर्णाः ।

यस्मिन् सर्वस्मिन् पादे स्याद् वेदैर्वेदैर्द्विविश्रामः,

सर्पाणामीशेन प्रोक्तः सच्छन्दः स्युः (स्तु) प्रेष्टो राम. ॥ ३७३ ॥

यथा—

इन्द्राद्यैर्वेन्द्रेनित्यं बन्धः पायाल्लोकं राम,

लक्षाणां दातृत्वे दक्षः सर्वेषां क्षत्राणां वामः ।

अङ्गीकृत्यात्यन्तं पित्रा दत्ताभाशा सस्रु वेगात्,

मातुर्मूर्च्छि च्छेदे* विभ्रद् यो वं हस्ते कम्प नागात् ॥ ३७४ ॥

इदमेवाऽन्यत्र ग्रहपकम्** इति नामान्तरं लभते ।

इति रामः १७०.

१. पणितत्रय नास्ति क. प्रती । २. ल. मातर्मूर्च्छेदे ।

* टिप्पणी—१ अन्यान्तरेषु पञ्चदशाक्षरवृत्तस्योपलब्धशेषभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे द्रष्टव्याः ।

* टिप्पणी—२ प्राकृतपैगलम् द्वितीयपरिच्छेद, प० १७४

१७१. अथ पञ्चचामरम्

शरेण नूपुरेण यत्कमेण भाविताक्षर,
 वसुप्रयुक्तभेदभाग् भवेच्च फोडशाक्षरम् ।
 फणीन्द्रराजपिङ्गलोक्तमुक्तमत्र भासुरं,
 विधेहि मानसे सदैव चारु पञ्चचामरम् ॥ ३७५ ॥

यथा—

कठोरठात्कृतिध्वनत्कुठारधारभीषणं,
 स्वयं कृतप्रतिज्ञया सहस्रबाहुद्रूपणम् ।
 समस्तभूमिदक्षिणे मत्से मुनीन्द्रतोषणं,
 नतो महेन्द्रवासिनं भृगुन्तु^१ वशभूषणम् ॥ ३७६ ॥

यथा वा, अस्मद्वृद्धप्रपितामह-घोरामचन्द्रभट्टमहाकविपण्डितविरचित-वशाव-
 तारस्तोत्रे जामदग्न्यवर्णने—

अकृष्णधार भूमिदार कण्ठपीठलोचन-
 क्षणध्वनद्ध्वनत्कृतिवर्णत्कुठारभीषण ।
 प्रकामवाम जामदग्न्यनाम राम हैहय-
 क्षयप्रयत्ननिर्दय व्यय भयस्य जम्भय ॥ ३७७ ॥
 इति पञ्चचामरम् १७१.

एतस्यैव अन्यत्र नराक्षम्^२* इति नामान्तरम् ।

१७२. अथ नीलम्

वेद-भकारविराजितमद्भुतवृत्तवरं,
 भामिनि ! भावय चेतसि कङ्कणशोभि करम् ।
 पिङ्गलनागसुभाषितमालि विमोहकर,
 नीलमिद रसभूमिविभावितवर्णधरम् ॥ ३७८ ॥

यथा—

पर्वतधारिणि गोपविहारिणि 'नन्दसुते,
 सुन्दरि^३ हारिणि'^२ कस्तुविदारिणि बालयुते ।
 पङ्कजमालिनि केलिषु शालिनि मे सुमति-
 वेंगुविराविणि भ्रम(भ)रहारिणि जातरति ॥ ३७९ ॥
 इति नीलम् १७२.

१. अ. भृगुः । '—' २. क. प्रतो नास्ति ।

*टिप्पणी—१. वाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, प० २७३

१७३. अथ चञ्चला

‘हारमेरुजक्रमेण यद्विराजते मुकेशि !,
पोडशाक्षरेण यद् विकसितं भवेत् सुवेपि ! ।
पिङ्गलेन भापितं समस्तनागनायवेन,
तद्वि चञ्चलाभिधं कवीन्द्रमोददायकेन ॥ ३८० ॥

यथा—

आलि ! रासजातलास्पलोलया सुशोभितेन,
गैरिकादिघातुवन्यभूषणानुभूषितेन ।
गोपिकाविमोहिरावदशिकाविनोदितेन,
मन्मनो हृतं व्रजाटवीषु केलिमोदितेन ॥ ३८१ ॥

यथा वा, भूषणे*—

आलि ! याहि मञ्जुकुञ्जगुञ्जतालिलालितेन,
भास्करात्मजाविराजिराजि^१तीरकाननेन ।
शोभिते स्थले स्थितेन सङ्गता यदूत्तमेन,
माधवेन भाविनी तद्विस्तरेव नीरदेन ॥ ३८२ ॥

इति चञ्चला १७३.

एतस्यैवान्यत्र चित्रसङ्गम्* इति नामान्तरम् ।

१७४. अथ मदनललिता

कर्णं कृत्वा कनकरुचिरं तादृक्कसहितं,
सविभ्राणा द्विजमथ पुनः स्वर्णाढ्यवलयः ।
हारो धृत्वा कुसुमकलितौ हस्तेन रुचिरा,
वेदे पद्भिर्मदनललितां द्विज्जां रसयति ॥ ३८३ ॥

यथा—

कालिन्दीये तटभुवि सदा^२ केलीषु ललितं,
रागाचित्तप्रणयसदनं गोपेषु^३(पीसु) वलितम् ।
सविभ्राणं विरुतरुचिरं वक्ष्य करतले,
ध्यायेन्नित्यं व्रजपतिसुतं चित्तेऽतिविमले ॥ ३८४ ॥
इति मदनललिता १७४.

१ स हारमेरुजक्रमेण सदाविराजते पुरेण, यद्विकसितं भवेत् मुकेशि पोडशाक्षरेण ।

२ अ रम्यतीरकाननेन । ३ स. तटपरिसरे ।

* टिप्पणी—१. वाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, पृष्ठ २७८

२. छन्दोमञ्जरी, द्वितीयस्तवक, कारिका १४८

१७५ अथ घाणिनी

कुरु नगण विधेहि जगण ततो भकार,
जगणमयोऽपि रेफयुतमन्तजातहारम् ।
पडधिकपवितवर्णकलित सुवृत्तसार,
कलयत घाणिनीति वविभि कृतप्रचारम् ॥ ३८५ ॥

वया—

अनवरत खराशुतनयाचलज्जलौघं,
तदभुवि 'सलुप्ते' *ऽसिलनृणा विनाशिताघं ।
द्विजजनसाधिताऽनुपमसप्ततन्तुभोक्ता,
पशुपजनैर्हंरि सह वनोदन जघास * ॥ ३८६ ॥
इति घाणिनी १७५.

१७६ अथ प्रवरललितम्

यकार पूर्वस्मिन् रचय मगण धारयाशु,
नकार हस्त च प्रयय रगण धेहि वासु ।
गुरु पादस्यान्ते विरचय फणोन्म्रेण गीत,
सुहास्ये विश्राम प्रवरललित नाम वृत्तम् ॥ ३८७ ॥

वया—

तडिल्लोलैर्मधैर्दिशि दिशि महाध्वानवद्भि-
र्गंजानीकाकारैरनवरतमाप सृजद्भि ।
व्रज भीत * वीक्ष्य द्रुतमचलराज कराग्रे,
दघद्रक्षा कुर्यात् भयजलनिघावत्युदग्रे ॥ ३८८ ॥
इति प्रवरललितम् १७६
१७७ अथ गरुडहस्तम्

द्विजवरमन धेहि रगण नकार तत,
कुरु रगण ततोऽपि रगण पदान्ते मत ।
पडधिकपक्विवर्णकलित समस्ते पदे,
गरुडरुत समस्तफणिराजचित्तास्पदे ॥ ३८९ ॥

१ ख विटपितले लुते । २ क वतोदन भुक्ति । ३ ख छस्र ।

*टिप्पणी—१ अत्र पादे नगणमनु जगणोपस्थितिर्युक्ता किन्त्वत्र 'सलुप्ते' इति पाठे वगणो जायते तदयुक्तम् ।

यथा-

मृगगणदाहके वननदीसर गोपके,
 असति तरुन् विलोलनिजहेतिजिह्वाशतै ।
 भयभरखित्त^१डिम्भवदन निरीक्षयाशु य,
 दवदहन पपौ स दिशतान् मनोवाञ्छितम् ॥ ३६० ॥
 इति गद्यरुतम् १७७

१७८. अथ चकिता

देहि भमिह स कर्णं हारौ कुण्डलमयले !,
 धारय कुमुभ पुष्पद्वन्द्व वामिनि ! तरले ! ।
 रूपवलयक पादप्रान्ते स्यादिह चकिता,
 पडसु च विरति काव्यव्यक्ति स्मरले^२ भविता ॥ ३६१ ॥

यथा-

कामिनि ! सुपने वृन्दारण्ये नन्दय नयन,
 भामिनि ! भवने भव्याकारे भावय शयनम् ।
 क्षीतलपवने धृत्ये पुण्ये स्रज्जननयने,
 त्वामिह कलये तल्पेऽनल्पे कुञ्जरगमने ॥ ३६२ ॥
 इति चकिता १७८

१७९ अथ गजतुरगविलसितम्

धारय रोहिणेयमथ पतगवरपति,
 कारय वल्लिमेय नगणवरगुरुयतिम् ।
 षोडशवर्णधारि गजतुरगविलसित,
 भामिनि ! भावयेदमपि मुनियतिरचितम् ॥ ३६३ ॥

यथा

सुन्दरि ! नन्दनन्दनमिह धरणिवलये,
 मानिनि ! मानदानमपि^३ न हि न हि कलये ।
 भावय भावनीयगुणगणपरिकलित,
 चेतसि चिन्तयाशु सखि ! मुनिजनवलितम् ॥ ३६४ ॥
 इति गजतुरगविलसितम् १७९

क्वचिद इदमव श्लेषभगजविलसितम्^४ इति नामान्तरेणोक्तम् ।

१ ल भिन्न । २ ल तरले । ३ ल मानवीचरमुमिह न कलये ।

^४टिप्पणी—१ वृत्तरत्नाकर अ० ३, का० ६१, छदोमञ्जरी द्वि० स्त० का० १४६

१८० अथ शैलशिखा

धेहि भकारमत्र खगराजमवेहि तत
 कारय न ततोऽपि भगणो भगणेन युत ।
 नूपुरमेकसख्यमववेहि पदान्तगत
 शैलशिखाभिघ त्वमवधारय नागकृतम् ॥ ३६५ ॥

यथा-

गोपवधूमयूरवनिनानवमेधनिभ ,
 दानवसङ्घदारणविधावतिसप्रतिभ ।
 तुम्बरुनारदादिकमन सरसीपु गज ,
 वाञ्छितमाप्तमोतु तव गोपपतेस्तमुज ॥ ३६६ ॥

इति शैलशिखा १८०

१८१ अथ ललितम

कारय भ ततोऽपि रगण विधेहि नगण
 पक्षिपति विधारय पुनस्तयैव नगणम् ।
 कङ्कणमन्तग कुरु समस्तपादविरती
 धेहि मन सदैव ललिते फणीश्वरकृतौ ॥ ३६७ ॥
 अत्रापि सप्तभिर्नवभि प्रायो विरतिर्भवतीति उपदिश्यते ।

यथा-

गोपवधूमुखाम्बुजविकासने दिनपति ,
 दानवसङ्घमन्तकारिदारणे भृगपति ।
 लोकभयापह सकलबन्धपादयुगल ,
 दा कुरता ममापि च विलोसनेत्रकमल ॥ ३६८ ॥

इति ललितम १८१

१८२ अथ सुकेसरम्

नगण-सगणो विधेहि जगण तत पर,
 सगण-जगणौ च नूपुरमयोऽनन्तरम् ।
 कणिनृपतिभापित रसविघ्नदिताक्षर,
 वलय हृदये सदा सुखकर मुकेसरम् ॥ ३६९ ॥

यथा-

नरपतिसमूहकण्ठतटघट्टनोद्भव
 रुहुगणनिर्भं स्फुलिङ्गनिकरर्भयानक ।
 बिलसति नृपेन्द्रशतगुणधूमकेतुवत
 तव रणविधौ स्थित करतले वृषाणक ॥ ४०० ॥
 इति सुकेसरम् १८२

१८३ अथ ललना

प्रथम कलय करतलमात्मना ह्यपथा^१,
 ललना नगणयुगलवती जभाकलिताम् ।
 फणिराजभणितगुण(रु)विराजितामतुला,
 कलयाशु सपदि सुजनमानसे वलिताम्^२ ॥ ४०१ ॥

यथा

विदधातु सकलफलमनारत तनुते,
 सनकादिनिखिलमुनिनतो वने वनिते । ।
 व्रजराजतनय इह सदा हृदा कलित ,
 स चराचरजनतनुमहोदधौ फलित ॥ ४०२ ॥
 इति ललना १८३

१८४ अथ गिरिवरधृति

शरपरिमितमिह नगणमनु कुरुत,
 विधुविरचितमथ लघुमपि रचयत ।
 फणिपतिरिति किल मधुरमनुवदति,
 कलयत निजहृदि गिरिवरधृतिरिति ॥ ४०३ ॥

यथा —

विशिखनिचयहतनिखिलरजनिचर ।,
 निजभुजयुगवलरणविनिहृतस्वर । ।
 विबुधनिहतभय । दशमुखकुलहर ।,
 दशरथनृपसुत । जय । जय । रघुवर । ॥ ४०४ ॥
 इति गिरिवरधृति १८४

अचलधृति * इत्ययम् ।

^१ अत्रापि प्रस्तावश्रवणं षोडशाक्षरस्य पञ्चपट्टिसहस्राणि पञ्चभक्तानि षट्
 त्रिंशदुत्तराणि ६५५३६ भदास्तेषु कियं तो लक्षिता शपभदा प्रस्ताय स्वेच्छया
 नामानि चारयज्या (विचार्यं) लक्षणीया इत्युपदिश्यत ।^२

इति षोडशाक्षरम् ।

१ ख ह्यप ताम । २ ख वलितम् । ३ यचितप्रय नास्ति क प्रती ।

*टिप्पणी—१ छ दोमञ्जरी द्वितीयस्तबक, का० ११५

, —२ षोडशाक्षरवृत्तस्योपलब्धशपभदा पञ्चमपरिशिष्टे पर्यालोच्या ।

अथ सप्तदशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्-

१८५. सीताघृष्टम्

वृत्ते यस्मिन्नष्टौ पादे वर्णा सयुक्ता सदृश्यन्ते,
 हारश्चैकं प्रान्ते यस्मिन् वर्णा शैलश्चन्द्रौ क्षोभन्ते ।
 सर्वेषां नागाणामीशेनंतत्सप्रोक्तं धेहि स्वान्ते,
 भूपालानां चित्तानन्दस्थानं सीताघृष्टास्य कान्ते ! ॥ ४०५ ॥

पद्या-

वारा राशौ सेतुं बद्ध्वा लङ्कायामातङ्कोऽपि दास्यन्,
 नानावर्णं सुप्रोवाद्यं लङ्काया' भिन्नं दुर्गं कुर्वन् ।
 सीताचित्ते प्रेमाधिपयै लोहं कीलं प्राणीयोत्कीर्णं,
 काकुत्स्थ कत्याणं कुर्यादि युष्माकं श्रव्यादादिं तीर्णं ॥ ४०६ ॥

इति सीताघृष्टम् १८५

१८६ अथ पृथ्वी

पयोधरविराजिता करसुवर्णवत्कङ्काणा,
 सुगन्धकुसुमोज्ज्वला सरसहारसशोभिनी ।
 सुरूपयुतकुण्डला कनकरावसुनूपुरा,
 वसुप्रथितसंस्थितिर्जगति भाति पृथ्वी सदा ॥ ४०७ ॥

पद्या-

हरिभूजगनायक निजगिरि भवानीपति,
 गजेन्द्रममराधिपो निजमरालमञ्जासन ।
 द्विजा विबुधकूलिनी जगति जायमाने नृप !,
 त्वदीयशसोज्ज्वले किल गवेपयन्त्यातुरा ॥ ४०८ ॥

पद्या वा, कृष्णकुसुहले-

अनेन नयतः श्रुता महदुलूखल शास्त्रिनो,
 रयाति युगमन्तरा वकुभयोरिह क्रामता ।
 इतीरयति केचन श्रद्धाघराशु गोपान्हुदा,
 पुरो विहरति स्वके शिशुकदम्बके नापरे ॥ ४०९ ॥
 इत्यादि शतशो निदर्शनानि काव्येषु ।

इति पृथ्वी १८६

१८७ अथ मालावती

द्विजविलसिता पयोधरविराजिता हारिणी,

सरसकरयुक्सुवर्णवलयो लसत्कुण्डला ।

विस्तृततनूपुरा मुनिदिगीशसस्याक्षरा,

भुजङ्गपतिभाषिता जगति भाति मालावती ॥ ४१० ॥

यथा—

वनचरकदम्बकैरपरसिन्धुशोभाधरं,

करजदशनायुर्धर्जलधिनीरमाच्छादयन् ।

रघुपतिरूपागत सखि ! निशाचराधोश्वर,

रणभुवि निहत्य दास्यति तवातुल सम्मदम् ॥ ४११ ॥

इति मालावती १८७

मालाधर इति विज्ञाते^१* नामान्तरम् ।

१८८ अथ शिखरिणी

सुरूप स्वर्णाढ्य श्रवणमधिताटङ्कयुगल,

सदा सविभ्राणा द्विजमय सुपुष्पाढ्यवलयो ।

सुरूप हस्ताग्र तदनु दधतो राजति रसें,

शिवैरिच्छन्ना नागप्रथितमहिमेय शिखरिणी ॥ ४१२ ॥

यथा—

दिशि स्फारीभूतै कविनिकरगीतैस्तव रण-

स्तवैर्वर्त्याचक्रैर्द्विगुणितरय क्षोणितिलक ।

प्रतापो दावाग्निस्तव खरकरस्पर्शकठिनो,

विपक्षक्षोणीन्द्र प्रथितवनमत्र प्रभवति^१ ॥ ४१३ ॥

यथा वा, ममैव एवमदूते खण्डकाव्ये—

यदा कसादीना निघनविषये यादवपुरी,

गत श्रीगोविन्द पितृभवनतोऽक्रूरसहित ।

तदा तस्योन्मीलदविरहदहनज्वालगहने,

पपात श्रीराघाकलिततदसाधारणरति ॥ ४१४ ॥

१ स प्रदति ।

*टिप्पणी—१ प्राकृतपद्यम्, द्वितीयपरिच्छेद, पद्य १७८

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

विना तत्तद्वस्तु क्वचिदपि च भाण्डानि भगवत्,
प्रसादान्ताऽभूवन् प्रतिभवनमित्यद्भुतमभूत् ।
भयोद्यद्वैलक्ष्याऽवितथवचस्तच्चरणयो-
निपेनुस्ता हस्ताहतवसनमुक्तामणिगणः ॥ ४१५ ॥

यथा वा, रूपगोस्वामिकृत-हसद्वृत्तकाव्ये^१—

दुकूल विभ्राणो दलितहरितालद्युतिहर,
जपापुष्पश्रेणीरुचिरुचिरपादाग्वुजतल ।
तमालश्यामाङ्गो दरहसितलीलाञ्जितमुख,
परानन्दाभोग स्फुरतु हृदि मे कोऽपि पुरुषः ॥ ४१६ ॥

यथा वा, श्रीशङ्कराचार्यकृत-सौन्दर्यलहरीस्तोत्रे^२—

दृशा द्राघोयस्या दरदलितनीलोत्पलरुचा,
दधोयास दीम स्नपय कृपया मामपि शिवे ।
अनेनाज्य धन्यो भवति न च ते हानिरियता,
धने वा हर्म्ये वा समकरनिपातो हिमकर ॥ ४१७ ॥^३
इत्यादि महाकविप्रवन्धेषु शतशो निदर्शनानि द्रष्टव्यानि ।

इति त्रिलिङ्गी १८८

१८९ अथ हरिणी

द्विजरसयुता कर्णद्वन्द्वस्फुरद्वरकुण्डला,
कुचतदगत पुष्पहार तथा दधती मुदा ।
विस्तललित सविभ्राण^४ पदात्तगनूपुर,
रसजलनिधिदिङ्मया नागप्रिया हरिणी मता ॥ ४१८ ॥

यथा—

सपदि कपय शीयविशस्फुरत्करजद्विजा,
गिरिवरतरुनुमृदन्तस्तथोत्पयगामिनः ।
अहमहमिका कृत्वा वारानिधेरतिलङ्घने^५,
तटभुवि गता सप्रेक्षन्ते मुखानि परस्परम् ॥ ४१९ ॥

१. क. प्रतो नास्तोदम्पद्यम् । २. ख सविभ्राणा । ३. ल. सप्रेते ।

*टिप्पणी—१ श्रीरूपगोस्वामिकृत-हसद्वृत्तम् प्रथमपद्यम्

२ शंकराचार्यकृत सौन्दर्यलहरी पद्य ५७

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

हसितवदने दृष्ट्वा चेष्टा सुतस्य सविस्मये,
ययतुरथ ते गोपापत्यौ तदद्भुतमन्यत ।
तदनु कतिचिद् बाला मात्रे दलेन सहोचिरे,
मृदमनुपद कृष्ण प्राशीदिति प्रतिभाजुष ॥ ४२० ॥

यथा वा, लक्ष्यलक्षणयुक्त तत्रैव—

ग्रहिलहृदयोदञ्चत्तत्तद्गतिप्रतिभाजुषा,
त्रिभुवनपतिप्रस्थासत्तिस्फुरत्पुलकस्पृशाम् ।
शिथिलकबरीवन्धस्त्रस्तस्रजा हरिणीदृशा,
न समरसत कायप्रायो लघुर्गुरुरप्यभूत् ॥ ४२१ ॥

इलेपार्थं ऊहनीय । यथा वा— 'अथ स विषयव्यावृत्तात्मा यथाविधिसूनवे' * ।
इत्यादि रघुवशे महाकाव्यादिसत्कविप्रबन्धेषु च भूमनिदर्शनानि ।

इति हरिणी १८६

१६० अथ मन्दाक्रान्ता

कणौ पुष्पद्वितयसहिती गन्धवद्धस्तयुक्ता,
हार रूप तदनु बलय स्वर्णसञ्जातशोभम् ।
सविभ्राणा विरुतललितो नूपुरी वा पदान्ते
मन्दाक्रान्ता जयति निगमैश्छेदयुक्ता रसैश्च ॥ ४२२ ॥

यथा—

सिन्धोप्पारे दशमुखपुरी वानरास्तत्र दूता,
पम्पाशम्पाशतयुतचलत्रीलमेघावलीका ।
वास कैकाकवलिततटे मादृशामृध्यमूत्रे,
देवो वाम पुनरयमतो भावि किं किं न जाने ॥ ४२३ ॥

*टिप्पणी— १ अथ स विषयव्यावृत्तात्मा यथाविधिसूनवे,
नूपतिरनुद दत्वा मूत्रे सितातपवारणम् ।
मुनिवनतश्छाया देव्या सया सह शिश्रिये,
गलितवयसामिद्वानूणाभिद हि कुलव्रतम् ॥

[रघुवश, स० ३, प० ७०]

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

हृत्वा ध्वान्तस्थितमपि वसुप्रक्षिपत् पक्ष्म[राजि-]

स्पन्द विन्दन् व्रजति कुहचित् कैश्चनालक्ष्यमाणः ।

छिद्राणि द्राक् कलयति शयाशक्यशिक्यस्थभाण्डे^१,

निद्रा भक्त्वा द्रवति ज्वतस्ताडयत् सुप्तबालात् ॥ ४२४ ॥ (?)

इति मन्दाक्रान्ता १६०.

१६१ अथ वशपत्रपतितम्

कारय भ ततोऽपि रगण रचय न-भगणौ,

धेहि नकारमेरुवलयान् तदनु सुललितान् ।

व्योममुघाशुभि कुरु ह्ये तदनु च विरति^२,

चेतसि वशपत्रपतित रचय फणिक्कृतम् ॥ ४२५ ॥

यथा—

जानकि । नैव चेतसि कृथा रजनिधरमति,

राधषट्कततामुपगत कलय हृदि निजे ।

जल्पति मारुताविति तदा जनकतनयया-

वत्त^३ न मुद्रिकाऽपि कलिता जलपिहितदृशा ॥ ४२६ ॥

यथा वा—

‘सम्प्रति लब्धजन्म शनकं कथमपि लघुनि ।’ इति किरातार्जुनीये^४ ।

इति वशपत्रपतितम् १६१

स्त्रीलिङ्गमिति केचित् । वशवदनम् इति शाब्भवे तस्यैव नामान्तरमुक्तम् ।

१६२ अथ नहटकम्

कुरु नगण तत कलय ज षट् भ च ततो,

जगणयुग ततो रचय कारय मेरुगुरू ।

फणिपतिमायित मुनिविधूदितवर्णधर,

कविजनमोहक हृदि विधारय नहटकम् ॥ ४२७ ॥

१ ख भारो । २ ख विरति । ३ ख हन्त ।

*टिप्पणी—१ सम्प्रति लब्धजन्म शनकं कथमपि लघुनि,

क्षीणपयस्युपेयुषि भिदा जलधरपटले ।

खण्डितविग्रह बलमिदो घनुरिह विविधा,

पूरयितु भवन्ति विभवसिखरमणिरुच ॥ ४३ ॥

[किरातार्जुनीये स० ५, प० ४३]

यथा—

अनुलवमूच्छंया क्षपितदेहलता गलता,
नयनजलेन दूषितमुखी^१ तव भूमिसुता ।
रघुवरमुद्रिका हृदि निधाय सुखातिशय-
मु^२कुलितलोचना क्षणमभूदमृतस्नपिता ॥ ४२८ ॥

यथा वा, श्रीभागवते दशमस्कन्धे वेदस्तुती^३—

जय ! जय ! जह्यजामजितदोषगृहीत^४गुणाम् । इत्यादि ।
इति नृदंकम् १६२.

अथ कोकिलकम्

मुनिरसवेदैर्विरतिर्यदि कोकिलक तदेदमेव भवेत् ।
तदुदाहरण लक्षणवाक्ये ज्ञेय सुधीभिरिति ॥ ४२९ ॥

यथा वा, छन्दोमञ्जर्याम्^५—

लसदरुणक्षेप मधुरभाषणभोदकर,
मधुसमयागमे सरसकेलिभिस्त्वलसितम् ।
अलिललितद्युति रविसुतावनकोकिलक,
ननु कलयामि त सखि ! सदा हृदि नन्दसुतम् ॥ ४३० ॥
गणविरचना सैव, विरतिकृत एवात्र भेद इति नामान्तरम् ।
इति कोकिलकम् ।

१६३ अथ हारिणी

कर्णं धृत्वा कनकललित ताटङ्कमराजित,
सविभ्राणा द्विजमथ रुतस्वर्णाचिती नूपुरी ।
पुष्प हारौ सरसबलय सधारयन्ती मुदा,
वेदे यद्भिर्विरचितयतिः दौलोदिता हारिणी ॥ ४३१ ॥

१. स. दूषितमुखा । २. स. गृहीतगुणाम् ।

* टिप्पणी—१ जय जय जह्यजामजितदोषगृहीतगुणां

स्वमसि यदात्मना समवरदसमस्तभाग ।

अगत्रगदोक्तसामलिलपाशरवबोधक ते

यवचिदजयात्मना च चरतोऽनुचरोभिगमः ॥

[भागवत दशमस्कन्ध, अ० ८७, श्लो० १४]

२. छन्दोमञ्जरी, द्वि० स्त० वा० १६७ ।

पया-

वद्ध्वा सिन्धु नगरमिह मे राम समायात्यय,
 रोद्धु^१ श्रुत्वा दशमुख इति प्रीतोऽभवत्तत्क्षणम् ।
 बाह्यो कण्डू गमयितुमना पश्चान्नर राघव,
 श्रुत्वाऽवज्ञाकलुषितमना लङ्केऽवरोऽभूत्तदा ॥ ४३२ ॥
 इति हारिणो १६३

१६४ अथ भाराङ्गा-न्ता

प्रादो कुर्यान् भगण-भगणौ ततो नगणो मत,
 रेफ दद्यात्तदनुचिर विधेहि कर तत ।
 मेरु हार विरचय तत फणोश्चरभापिता,
 भाराङ्गान्ता जलनिधिरसैर्विरामयुता मता ॥ ४३३ ॥

पया-

सिन्धोर्दन्ध रघुवरकृत निशम्य दशाननो,
 दध्यौ मूर्द्धना^२ सपदि बहुधा व्यधाञ्च विघ्ननम् ।
 शङ्के च्योतन्मणिकपटतो रघूत्तमरागिणी,
 सत्यामाख्या जगति तनुते तदा कमलालया ॥ ४३४ ॥
 इति भाराङ्गा-न्ता १६४

१६५ अथ मतङ्गवाहिनी

हारमेरुजक्रमेण जायते यदा विराजिता,
 शैलभूमिसख्यकाक्षरैस्तथा भवेद् विकसिता ।
 पण्डितवलीविनोदकारिपिङ्गलेन भापिता,
 जायते मतङ्गवाहिनी गुणावलीविभूषिता ॥ ४३५ ॥

पया-

नीम्यह विदेहजापति क्षरासनस्य 'भञ्जक',
 बालिजीवहारिण विभीषणस्य राज्यसञ्जकम् ।
 लक्ष्यवेधने तथा सदा क्षरासनस्य^३ धारिण,
 रावणद्रुह कठोरमानुवशदोप्तिकारणम् ॥ ४३६ ॥
 इति मतङ्गवाहिनी १६५

१६६ अथ पञ्चकम्

रचय नगण स तस्थान्ते चेहि पश्चान्मकार,
 तदनु चरणे तस्य द्वन्द्व कारयाशु द्विहरम् ।
 समुनिविद्युभि पादे छिन्न पिङ्गलेन प्रयुक्त,
 कलय हृदये छन्द श्रुष्ठ पञ्चक वृत्तसारम् ॥ ४३७ ॥

यथा—

अयमिह^१ पुर पारावार चेतसा गम्यपार,
 सपदि सहित पाद सङ्घर्मापणो वीचिहस्तै ।
 कपिगणमहासेना चैय पारमुत्प्रेक्षमाणा,
 रचय यदिह न्याय शीघ्र वानराणा पते^२ तत् ॥ ४३८ ॥

इति पञ्चकम् १६६

१६७ अथ दशमुखहरम्

जलनिधिपरिमित नगणमिह विरचय,
 तदनु च शरपरिमितलघुमपि कलय ।
 सकलफणिगणनरपतिरेति हि वदति,
 सखि ! कलय निजहृदि दशमुखहरमिति ॥ ४३९ ॥

यथा—

जय ! जय ! रघुवर ! जलधितरणनिपुण !,
 दशरथसुत ! विबुधनिकरकथितगुण ! ।
 सुरविमतदशवदनकुलकदनकर !
 सुरगणनुतचरण ! शमिह मम वितर ॥ ४४० ॥

इति दशमुखहरम् १६७

^१अत्रापि प्रस्तारगत्या सप्तदशाक्षरस्य एक लक्ष एकत्रिंशत् सहस्राणि द्विसप्त-
 तिस्रश्च १३१०७२ भेदास्तेषु कियन्त प्रोक्ता, दोषभेदा प्रस्तार्य समुदाहरणीया,
 इत्यलमतिविस्तरेण^२ ।

इति सप्तदशाक्षरम् ।

१ एत अयमपि । २ एत पते । ३ यस्मिन्त्रय नास्ति क प्रती ।

*टिप्पणी १—सप्तदशाक्षरवृत्तस्यावगच्छन्प्राप्तभेदा पञ्चमपरिनिष्ठेऽऽमोदनीया ।

अथ अष्टादशाक्षरम्

ततः—

१६८ अथ लीलाचन्द्र

अथै सरयाता यस्मिन् वृत्ते पादे पादे शोभन्ते कर्णा ,
पश्चाद् वेदै सरयाता हारा योगेश्चन्द्रैस्समुक्ता वर्णा ।
लीलाचन्द्रारय वृत्त प्रोक्त नागानामीशेनेतन् कान्ते ^१,
रन्ध्राङ्कर्वर्णे सविच्छिन्न येहि स्वान्ते भास्वनेनान्ते ॥ ४४१ ॥

यथा—

हालापानोद्धूर्णनेवान्तस्तुच्छीकुर्वत्कैलास भासा,
नीलाम्भोजप्रोद्यच्छोभावत् स्कन्ध द्वन्द्वे सराजद्वासा ।
माला वक्ष पीठे विभ्राणो न्यक्कुर्वन्ती कान्त्यालीन् तूर्ण,
तानाङ्कस्सर्वेषा लोकाना कल्याणोद्य दद्यात् सम्पूर्णम् ॥ ४४२ ॥

इति लीलाचन्द्र १६८

१६९ अथ मञ्जीरा

पूर्वे ^१ कर्णप्रित्व कारय पश्चाद्वेहि भकार दिव्य,
हार वह्निप्रोक्त धारय हस्त देहि मकार चान्ते ।
रन्ध्रैर्वर्णविभ्राम कुरु पादे नागमहाराजोक्त,
मञ्जीराख्य वृत्त भाषय शीघ्र चेतसि कान्ते । स्वीये ॥ ४४३ ॥

यथा—

सिन्धुर्गम्भीरोज्य राजति गन्तार कपयस्तत्पार,
शैल शैले केकी कूजति वातोऽय मलयान्नेर्वति ।
लङ्काया वंदही तिष्ठति कामोऽय पुरत सज्जास्त्र,
सामग्रीय तावत्सदमण सर्वं पूर्वकृतस्याधीनम् ॥ ४४४ ॥

यथा वा, भूपणे^१—

प्रीढध्वान्ते गर्जद्वारिदधाराधारिणि काले गत्वा,
त्यक्त्वा प्राणानग्र कौलसमाचारानपि हित्वा यान्ती ।
कृत्वा सारङ्गाक्षी साहसमुच्चै केतिनिकुञ्ज शून्य,
दृष्ट्वा प्रागन्त्राण भावि कथ वा नाथ ^१ वद प्रेयस्या ॥ ४४५ ॥

इति मञ्जीरा १६९

^१ स पूज्यम् ।

*टिप्पणी—१ वाल्मीययुगलम्, द्वितीयाध्याय, पद्य २९४

२००. अथ चचंरी

कुण्डलं दधती सुरूपसुवर्णरावरसाहितं,
नूपुरं कुचयुग्मसङ्गतदिव्यहारविभूषिता ।
हस्तयुक्तसुरूपकङ्कणभासिता फणिभाषिता,
चचंरी कविमानसे परिभाति भावुकदायिनी ॥ ४४६ ॥

यथा—

रासकेलिरसोद्धतप्रियगोपवेप ! जगत्पते !
दैत्यसूदन ! भोगिमर्दन ! देवदेव ! महामते !
कंसनाशन ! वारिजासनवन्द्यपाद ! रमापते !,
चिन्तयामि विभो ! हरे ! तव पादुके त्रिदशैर्नुते ॥ ४४७ ॥

‘यथा वा, अस्मत्तातचरणानां श्रीनन्दनन्दनाष्टके—

मन्दहासविराजितं मुनिवृन्दबंधपदाम्बुजं,
सुन्दराधरमन्दराचलधारि चारु लसद्भुजम् ।
गोपिकाकुचयुग्मकुङ्कुमपङ्कजपितवक्षसं,
नन्दनन्दनमाधये मम किं करिष्यति भास्करिः ॥ ४४८ ॥

‘यथा वा, तेषामेव श्रीसुन्दरीध्यानाष्टके—

कल्पपादपनाटिकावृतदिव्यसौधमहार्णवे,
रत्नसङ्घकृतान्तरीपसुनीपराजि विराजते,
चिन्तितार्थविधानदक्षसुरत्नमन्दिरमध्यगां,
मुक्तिपादपवल्लरीमिह सुन्दरीमहमाश्रये ॥ ४४९ ॥

यथा वा, भूषणे*—

कोकिलाकलकूत्रितं न शृणोषि सम्प्रति सादरं,
मन्यसे तिमिरापहारि सुधाकर न सुधाकरम् ।
दूरमुज्झसि भूषणं विकलासि चन्दनभारते,
कस्य पुण्यफलेन सुन्दरि ! मन्दिरं न सुखायते ॥ ४५० ॥

१. २. नन्दनन्दनाष्टक—सुन्दरीध्यानाष्टकञ्चेति पद्यद्वयं नास्ति क. प्रती ।

३. वाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, पद्य २६६

यथा वा, मार्कण्डेयमहामुनिविरचितचन्द्रशेखराष्टके—[प्रथम पद्यम्]

रत्नसानुशरोसन रजतादिशृङ्ग निवेतन,

सिञ्जिनीकृतपद्मगेश्वरमच्युतानलसायकम् ।

क्षिप्रदग्धपुरत्रय त्रिदशालयैरभिवन्दित,

चन्द्रशेखरमाश्रये मम किं करिष्यति वै यम ॥ ४५१ ॥

यथा वा, शङ्कराचार्यकृत-नवरत्नमालिकास्तोत्रे—

कुन्दसुन्दरमन्दहासविराजिताधरपल्लवा-

मिन्दुबिम्बनिभाननामरविन्दचारुविलोचनाम् ।

चन्दनागुरुपङ्क रूपिततुङ्गपीनपयोधरा,

चन्द्रशेखरवल्लभा प्रणमामि शैलसुतामहम् ॥ ४५२ ॥

इत्यादि महाकविप्रबन्धेषु सहस्रशो निदर्शनानि अनुसन्धेयानि ।

इति चर्चरी २०० इति द्वितीयं ततःकम् ।

२०१ अथ श्रीहाचन्द्रः

यकार रसेनोदित सर्वपादेषु सधेहि युक्तं,

तथा धेहि पादे नगाधीशशीतागु^३सख्यातवर्णम् ।

कवीनामधीशेन नामाधिराजेन सभापितं तत्,

मुदा श्रीडया शोभितं चन्द्रसज्जं हृदा धेहि^३ वृत्तम् ॥ ४५३ ॥

यथा— मुनीन्द्रा पतन्ति स्म हस्तं नृपा कर्णयुग्मे तथाधु,

सभाया नियुक्ता दधु कम्पमुन्व्वंस्तदा स्तम्भमञ्ज्वा ।

सुराणा समूहेन नाथावि लोके तथान्योन्यवाच^४—

स्तदा रामसभिन्नवाणासनाढ्यातपूर्णा^५ त्रिलोके ॥ ४५४ ॥

यथा वा, भूपणे^६—

भ्रमन्ती धनुर्मुत्तनाराचधारानिरुद्धे समस्ते,

नभः प्राङ्गणे पक्षिवाय्वो प्रयाते निरन्ते प्रशस्ते ।

१. नवरत्नमालिकाया पद्यं क प्रतीति नास्ति । २. 'शीतांगु' क प्रतीति नास्ति ।
३. धेहि । ४. स. बाणो । ५. स. सनाढ्यातपूर्णा ।

टिप्पणी—१. रा प्रा वि प्र ४० स० १४२५० इत्युपरोक्तपद्यं नास्ति, किन्त्वस्य स्थाने निम्नोद्धृतं पद्यं वर्तते ।

‘पदान्यासनम्रीकृतशोणिककृतन्मर्मत्रुर्म’

भ्रमन्तुङ्गश्चन्द्राङ्गुविक्षेपकोत्तरवैरश्च दधम् ।

भुक्तं प्राणि दद्यात्पशतोन्व्वमन्व्वकवायाचनेन्द्र^७ ।

सिवापास्तु चन्द्रेन्दुवृद्धामलेशनाण्डवाडम्बरं च ॥ २६६ ॥

[वाणीभूपणम्, दि. अ. प. २६८]

तथा चण्डगाण्डीवबाणावलीनीचरक्षाविरक्षा^१,

वभूवाङ्गराजो यथा न स्थितोऽसौ विपक्ष स्वपक्ष ॥ ४५५ ॥

इति श्रीडाचन्द्र २०१

२०२ अथ कुसुमितलता

कणौ^२ ताटङ्कप्रथितयशसो^३ धारयन्ती द्विज च,

प्रोद्यदरूपाढ्य कनककलित कङ्कण चादधाना ।

पुण्याक्तौ हारो तदनु दधती राववतूपुरौ च,

द्विन्ना बाणार्णो कुसुमितलता स्याद् रसैर्वाजिभिश्च ॥ ४५६ ॥

यथा-

घूर्णन्नेत्रा^४ त हलकलनया^५ भिन्नपातालमूल,

तालाङ्के गाङ्ग क्षिपति रमसान्नागसाङ्ग प्रवाहे^६ ।

हर्म्याणा सङ्घं^७ कुरुभिरभितश्चूर्णित घूर्णित च,

क्रीडार्थं बालैरिव विरचिते^८ क्रीडित शैलराजे ॥ ४५७ ॥

यथा वा-

‘गौड पिप्ताग्र दधि सकृशर निजेल मद्यमम्लम् ।’ इत्यादि वाग्भटे
विकित्साग्रन्थे ।^९*

इति कुसुमितलता २०२

२०३ अथ मन्दनम्

रचय नकारपुस्त-जगण विधेहि पश्चाच्च भ,

कुरु जगण ततोऽपि रगण विधेहि रेफ तत ।

शिवरचिता विधेहि विरति तथा हयैर्भासिता,

कविजननन्दन कुरु सखे ! सदा हृदा नन्दनम् ॥ ४५८ ॥

यथा-

तव यशसा त्रिलोकवलये वलक्षतामागते,

बहुलमिशास्वपि प्रकटिताश्चकोरकैश्चञ्चव ।

जगति पद्म प्रवाहमतिभि सुख मरालैर्बृत्त,

सपदि गुहा गता हिमधिया मुनीश्वरा दुर्वंसा ॥ ४५९ ॥

१ ल विलसो । २ ल यशसो । ३ ल हलकलनया । ४ ल प्रवाहो ।
५ ल विरचित कौतुहात् ।

*टिप्पणी— १ आभ्याञ्जनारूप पिणितमवल गुच्छगाव तिलाग्र,
गौड पिप्ताग्र दधि सलवण विञ्जस मद्यमम्लम् ।

धानावत्तूर समानमयो गुर्वंसात्म्य विदा हि

स्वर्ण चारात्रो दव्यगुणवान् वजयेर्मयुन च ॥

{वाग्भट—पट्टाङ्गहृदय, प ०१७ श्लो० ४२}

यथा वा, छन्दोमञ्जर्याम्* —

तरणिमुत्तातरङ्गपवनै सलीलमान्दोलित,

मधुरिपुपादपङ्कजरज सुपूतपृथ्वीतलम् ।

मुरहरचित्रचेष्टितकलाकलापसस्मारक,

क्षितितलनन्दन व्रज सखे । सुखाय वृन्दावनम् ॥ ४६० ॥

यथा वा, 'अहृत धनेश्वरस्य युधि य समेतमायोधनम्' । इत्यादि भट्टिकाव्ये** ।

इति नन्दनम् २०३

२०४ अथ नाराच

रचय न-युगल समस्ते पदे वेदसप्त्याकृत,

तदनु च कलयाणु पक्षिप्रभु भासमान पदे ।

वसुह्मकिरणप्रयुषताक्षरोद्भासमान हृदा,

परिकलय कणोन्द्रनागोक्त-नाराचवृत्त मुदा ॥ ४६१ ॥

यथा—

सुरपतिहरितो गलत्कुन्तलच्छाद्यमान मुख,

सपदि विरहजेन दु खेन मित्रस्य पाण्डुप्रभम् ।

अनुहरति घनेन सञ्छादित किञ्चिदुद्यत्प्रभम्,

समुदितवरमण्डलोऽप्य पुर जीनरविम प्रिये । ॥ ४६२ ॥

यथा वा, 'रघुपतिरपि तात वेदो विभुदो प्रगृह्य प्रियाम् ।' इत्यदि रघुवशे*** ।

पोडशाक्षरप्रस्तारे नाराच , अथ तु नाराच इत्यनयोर्भेद ।

इति नाराच २०४.

मञ्जुला इत्यन्यत्र ।

१ पवितरिप नास्ति क प्रती ।

*टिप्पणी—१ छन्दोमञ्जरी, द्वि० स्तवक, का० १७५ या उदाहरणम्

„ २ अहृत धनेश्वरस्य युधि य समेतमायोधन,

तमहमितो विलोक्य विवुर्ध कृतोत्तमाऽऽयोधनम् ।

विभवमदेन निहनुतह्रियाऽतिमात्रसम्पन्नक

व्यथयति सत्पथादधिगताऽवहेह सपन्न कम् ॥

[भट्टिकाव्य, सर्ग १० प० ३७]

„ ३ रघुपतिरपि जातवेदोविभुदो प्रगृह्य प्रिया,

प्रियमुहृदि विभीषणे सगमस्य श्रिय वैरिण ।

रविगुणमहितेन तेनानुयात स सौमित्रिणा

मुजविजितविमानरत्नाधिहृद प्रनश्ये पुरीम् ॥

[रघुवंग, स० १३, प० १४]

२०५. अथ चित्रलेखा

कर्णं कृत्वा कनकसुललित कुण्डलप्राप्तशोभ,
सविभ्राणा द्विजमथ च कर कङ्कणेन प्रयुक्तम् ।
पुष्प हारद्वयमथ दधती राववन्नूपुरी च,
वेदैरक्षर्वर्मु निरचितयतिर्भासते चित्रलेखा ॥ ४६३ ॥

यथा-

श्रीमद्द्राजस्यमिह गगने त्वत्प्रतापाहितस्य,
छिद्रस्येन्दु. कलयति सुपमा भुद्रणे सीसकस्य ।
ताराशोभा विदधति वियतो हारितस्य प्रतापं-
स्फोटस्यैषा दिगपि किमु हरे कुङ्कुमैर्भाति कीर्णा ॥ ४६४ ॥

इति चित्रलेखा २०५.

२०६. अथ भ्रमरपदम्

कारय भ ततोऽपि रगणमथ नगणयुगल,
धेहि नकारक तदनु च विरचय करतलम् ।
भासितमक्षरैर्गिरिवरहिमकरपरिमितं,
मिङ्गलभाषित भ्रमरपदमिदमतिललितम् ॥ ४६५ ॥

यथा-

नीलतम पटाधिगतमिदं मुहुगणमखिलं,
मोक्तिकमेव कालनरपतिरतिललिततरम् ।
वासवदिग्गतद्विजपतय इह कलितकर,
यच्छति सोऽपि ताननुकलयति निजकरगणं ॥ ४६६ ॥

इति भ्रमरपदम् २०६.

२०७. अथ शार्ङ्गसन्निहितम्

प्रादो मं सतत विधेहि तदनु ज्ञेय सरसिज,
तत्पश्चाद् विरचय ज कलय स कर्णं तदनुगम् ।
तस्यान्ते गुरु रुचहस्तमतुल जानीहि सरस,
नव्यप्रेमभरालसे मुललिते शार्ङ्गसन्निहितम् ॥ ४६७ ॥

पद्या-

श्रीगोविन्दपदारविन्दमनिश वन्देऽतिसरस,
 मायाजालजटालमाकुलमिदं मत्वाऽतिविरसम् ।
 वृन्दारण्यनिकुञ्जसञ्चरणतः सञ्जातसुषम,
 'दम्भोत्थं कुक्षसध्वज सरसिजप्रोद्धासमसमम् ॥ ४६८ ॥
 इति धार्ढ्यसप्ततितमम् २०७.

२०८. अथ सुसतितम्

कलय नयुगलं पश्चाद्बन्धं तयातिमनोहर,
 तदनु विरचयेः कर्णो^१ पुष्पाग्वितौ भगण ततः ।
 वितनु सुललित पक्षीन्द्र वा विलासिनीसुन्दरं,
 मुनिधिरतियुत वेदंश्चिन्न हर्षश्च विभावितम् ॥ ४६९ ॥

पद्या-

त्रिजगति जयिनरते ते भावा नवेन्दुकलादयः,
 परिणतिमधुरा. काम सर्वे मनोरमतां गताः ।
 मम तु तदखिल गून्धारण्यप्रभ सखि ! जायते,
 मुररिपुरहित तस्माद् भद्रे समाह्वय त हरिम् ॥ ४७० ॥
 इति सुसतितम् २०८.

२०९. अथ उपवनकुसुमम्

सलिलनिधिपरिमित नगणमिह विरचय,
 तदनु च रसनिगदितलघुमपि कलय ।
 कविजनहितसकलफणिपतिकथितमिह,
 हृदि कलय सुललितमुपवनकुसुममिति ॥ ४७१ ॥

पद्या-

असितवसनवरललितहलमुशसधर !,
 निजतनुरुचिर्वाजितपुरमयनगिरिवर ! ।
 द्विदिदमपिधरखदनकर ! नवरुचिचय !,
 जय ! जय ! कुरुनरपतिनगरजनिमय ! ॥ ४७२ ॥
 इति उपवनकुसुमम् २०९.

‘अत्रापि प्रस्तावगत्या अष्टादशाक्षरस्य सप्तद्वय द्वाषष्टिसहस्राणि चतुष्चत्वारिंशदुत्तरं च शत २६२१४४ भेदास्तेषु कियन्तो भेदा प्रोक्ता, शेषभेदास्तूह्य सुधीभिरिति दिक् ।*’

इति अष्टादशाक्षरम् ।

अथ एकोनविंशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्—

२१० अथ नागानम्

अश्वाना सख्याका यस्मिन् सर्वस्मिन् पादे सदृश्यन्ते कर्णा,
पश्चाद् बाणं सप्रोक्ता हारा युक्ता रन्ध्रभूम्या चोक्ता वर्णा ।
सर्वेषां नागानामीशेनैतत् प्रोक्तं नागानन्दाख्यं वृत्तं,
विश्वेषां यच्छ्रुत्वा समज्जत्यानन्दानां वारा राशौ चित्तम् ॥ ४७३ ॥

यथा—

जैनप्रोक्तानां धर्माणां सर्वेभ्यो लोकेभ्यः शिक्षा सदास्यन्,
यज्ञानां हिंसाङ्गानां तन्मूलानां वेदानां वा निन्दा कुर्वन् ।
सर्वस्मिन्त्रैलोक्ये भूतानां रक्षारूपा धर्मानेवाधास्यन्,
कल्याणं कुर्यात् सोऽयं गोविन्द श्रीडायं बोद्धाभिख्यां गृह्णन् ॥ ४७४ ॥

इति नागानम् २१०

२११ अथ शार्ङ्गलविक्रीडितम्

कर्णं कुण्डलपुष्पगन्धललितं हारं च वक्षोरुहे,
हस्तं कङ्कणयुग्मसुन्दरतरं शब्दोल्लसन्नूपुरी ।
रूपाढ्या रसना तथैव च दधतीक्ष्णाशुविच्छेदितं,
श्रीमत्पिङ्गलभाषितं विजयते शार्ङ्गलविक्रीडितम् ॥ ४७५ ॥

यथा—

ते राजत्रित्तिचण्ड*कीर्तितटिनीटिण्डीरपिण्डाकृति-
ग्रंहाण्डातिलसत्करण्डनिहितस्वेताण्डजप्रोज्ज्वलम् ।
तन्वीगण्डविषाण्डरद्युतिपुरस्फूर्जद्विधोमण्डलं,
राहोमण्डक(स)खण्डमेतदुदयत्याखण्डलाशामुले ॥ ४७६ ॥

१ पतितत्रय नास्ति क प्रती । २ य राजस्ते परिपूजकीर्ति ।

*टिप्पणी—१ अष्टादशाक्षरस्य अष्टादशरेष्वन्येष्वेकभेदा यन्ममपरिगण्ये द्रष्टव्या ।

यथा वा, ममैव पाण्डवर्चरिते अर्जुनागमने द्रोणवाक्यम्—

ज्ञान यस्य ममात्मजादपि जनाः शस्त्रास्त्रशिक्षाधिकं,
पार्थः सोऽर्जुनसंज्ञकोऽत्र सकलः कौतूहलाद् दृश्यताम् ।
श्रुत्वा वाचमिति द्विजस्य कवचो गोधाङ्गुलित्राणवान्,
पार्थस्तूणशरासनादिरुचिरस्तत्राजगाम द्रुतम् ॥ ४७७ ॥

यथा वा, कृष्णकुसुहले—

उन्मीलन्मकरध्वजप्रजवधूहस्तावधूताञ्चल-
ध्याजोदञ्चितबाहुमूलकनकद्रोणीक्षणादीक्षणे ।
उद्यत्कण्टककैतवस्फुटजनानन्दादिसंख्यामित-
ग्रह्याद्वैतसुखश्चिरं स भगवांश्चिक्रीड तत्कन्दुकैः ॥ ४७८ ॥
इत्यादि महाकविप्रबन्धेषु सहस्रश उदाहरणानि प्रत्युदाहरणत्वेन^१ द्रष्टव्यानि ।
इति शार्ङ्गलविक्रीडितम् २११.

२१२. अथ चन्द्रम्

प्रतिपदमिह कुरु नगणत्रितयमथ कलय,
जगणमिह नगणयुगलं तदनु च विरचय ।
चरणविरतिमनु रुचिरं कुमुममथ वितनु,
सकलफणिनृपतिकृत-चन्द्रमिति शृणु सुतनु ! ॥ ४७९ ॥

यथा —

नवकुलवनजनितमन्दमरुदिह बहति,
किरणमनुकलयति विधुस्त्रिजगति सुमहति ।
सपदि सखि ! मम निजहित वचनमनुकलय,
समनुसर वनगतहरिं तनुमतिसफलम् ॥ ४८० ॥

यथा वा, भूषणे^१—

अनुपहतकुसुमरसतुल्यमिदमधरदल-
ममृतमयवचनमिदमालि विफलयसि चल ।
यदपि यदुरमणपदमोक्ष मुनिहृदि लुठति,
तदपि तव रतिवलितमेत्य धनतटमटति ॥ ४८१ ॥

इति चन्द्रम् २१२.

चन्द्रमासा इत्यस्यैव नामान्तरं विज्ञेते^२ ।

१. अ. 'प्रत्युदाहरणत्वेन' नास्ति ।

टिप्पणी—१. बाणीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, पद्य ३००

टिप्पणी—२. प्राकृतपद्यम्, परिच्छेद २, पद्य १६०

२१३. अथ घवलम्

द्विजवरगणमिह रचय जलनिधिपरिमितं,
तदनु कलय सगणमथ चरणविरतिगतम् ।
सकलकविकुलहृदयतलविलुठनकरणं,
फणिपतिभणित-घवलमिह शृणु सुखकरणम्^१ ॥ ४८२ ॥

यथा—

जलमिह कलय सखि ! कनकयुतमिव विमलं,
गगनतलमपि दिगतजलधरमतिघवलम् ।
गसवचनरचनमिदमपि शिखिकुलमवलं,
नववपुरिदमव मम कुसुमविशिखतरलम् ॥ ४८३ ॥

यथा वा, भूषणे^२—

उपगत इह सुरभिसमय इति सुमुखि ! वदे,
निधुवनमधि सह पिब मधु जहि रूपमपदे ।
कमलनयनमनुसर सखि ! तव रमसपरं,
प्रियतमगृहगमनमुचितमनुचितमपरम् ॥ ४८४ ॥

इति घवलम् २१३.

घवला इति पिङ्गले^{३*} ।

२१४. अथ शान्धुः

क्रुष हस्तं स्वर्णविराजत्कङ्कणपुष्पोद्यद्गन्धैर्युक्तं,
श्रवणं ताटङ्कसुरूपप्राप्तरसं हारद्वन्द्वं पश्चात् ।
रसनायुग्मं कनकेनात्यन्तविराजद्वकाभ्यां प्रान्ते,
नवभूषणैः कथितं नागाचितशम्भ्वाख्यं वृत्तं कान्ते ! ॥ ४८५ ॥

यथा—

नवसन्ध्या वह्निज्योत्या पश्चिमसिन्धौ मित्रे संमग्ने,
नलिनीयं पङ्कजनेत्रं मीलयतीवात्यन्तं दोकेन ।
हरितो यध्वः पतंगौघानां विरतैरञ्जनेर्नादि संदधुः^१,
वरभृत्यांश्चाम्बरमुष्चेर्मानुसमूहारक्तं संवधुः ॥ ४८६ ॥

१. स. सुखकरणम् । २. क संघञ्जः ।

*टिप्पणी—१ बालीभूषणम्, द्वितीयाध्याय, पद्य ३०२

॥ २ प्राकृतप्रेषणम्, परि० २, पद्य १६२

पया वा*१—

जय । मायामानवमूर्ते दानववशध्वसव्यापारी^१,
 वलमाद्यद्रावणहत्याकारण^२ लङ्कालक्ष्मीसहारी^३ ।
 कृतकसध्वसन-कर्मशिसन गो गोपी-गोपानन्दी^४,
 बलिलक्ष्मीनाशन-लीलावामन-दैत्यश्रेणोनिष्कन्दी^५ ॥ ४८७ ॥

इति सप्तमः २१४

२१५ अथ मेघविष्कृजिता

यकार सदेहि प्रथममय म देहि पश्चात्कार,
 कर तस्याप्यन्ते रचय रुचिर रेफयुग्म ततोपि ।
 गुरु तस्याप्यन्ते कलय ललित पङ्कसच्छेदयुक्त,
 कुरु च्छन्द सार फणिपकथित मेघविष्कृजिताख्यम् ॥ ४८८ ॥

पया—

विलोले^६ कल्लोलैस्तरणिदुहितु क्रीडन कारयन्त,
 लसद्वक्ष कसप्रभृतिकठिनान् क्षानवानहंयन्तम् ।
 सुराणा सेन्द्राणा ददतमभय पीतवस्त्र दधान,
 सलील विन्यासैश्चरणरचितैर्मूमिमाग पुनानम् ॥ ४८९ ॥

पया वा, कविराक्षतवृत्तदक्षिणानिसवर्णने—

उदञ्चत्कावेरीलहरिपु परिष्वङ्गरङ्गे सुष्ठु
 कुङ्कुमण्डी कण्ठीरवरवलवत्रासितप्रोपितेभा ।
 शमी चेत्रे मैत्रावरुणितरुणीकेतिकङ्कुल्लिमल्ली-
 बलदबल्लीहल्लीसकसुरभयश्चण्डि चञ्चन्ति वाता ॥ ४९० ॥

इत्यादि ।

इति मेघविष्कृजिता २१५

२१६ अथ छाया

गुरुपादय कर्णे कनकललित ताटङ्कुमुमान्वित,
 द्विज गन्ध स्वर्ण घलयुगल पुण्याढ्यहारद्वयम् ।
 दधाना पादाते ललितविहृतप्रोद्भासित नूपुर,
 रसं पदमिद्विधवा फणिपकथिता छाया सदा राजते ॥ ४९१ ॥

१ स व्यापारिन् । २ स हिताकारण । ३ सहारिन् । ४ स गोपानविन् ।
 ५ स निरुग्धिन । ६ स वपुटी ।

*टिप्पणी—१ बाणभूषणम्, द्वितीयाध्याय, पद ३०४

यथा—

भवच्छेदे दक्ष दितिसुतकुलध्वान्तस्य विध्वसने,
सदार्काभि वक्ष स्थलगतलसद्गत्नाशुभिभू^१पितम् ।
वधूभिर्गोपाना तरणितनयाकुञ्जेषु रासस्पृह,
सदा नन्दादीनाममितसुखद गोपालवेध भजे ॥ ४६२ ॥

इति द्वाया २१६

२१७ अथ सुरसा

कर्णद्वन्द्व विराजत कुसुमसुललित कुण्डलयुग,
सविभ्राणा ततोपि द्विजमथ च कर कङ्कणयुतम् ।
रूपाढ्या दिव्यरावा कुसुमविलसिता नूपुरयुता,
शैलैरश्वैश्च वाणैर्विरचितविरतिर्भाति सुरसा ॥ ४६३ ॥

यथा—

गोपाल केलिलोल व्रजजनतरुणी-रासरसिक,
कालिन्दीये निकुञ्जे पशुपसुतगर्णवैष्टितनुम् ।
वशीरावेण गोपीसुललितमनसा मोहनपर,
कसादीनामराति व्रजपतितनय नमि हृदये ॥ ४६४ ॥

इति सुरसा २१७

२१८ अथ फुल्लदाम

कर्णी^१ स्वर्णाढ्यौ कुसुमरसमयी रूपरावाग्वितौ चेद्,
पुष्पोद्यद् रूपौ कनकविरचित नूपुर पुष्पशोभम् ।
हारौ रावाढ्यौ विलसदमलगौ कङ्कणेनातिरम्यौ,
शस्वत्लोकाना सुकथितमतुल फुल्लदाम प्रसिद्धम् ॥ ४६५ ॥

यथा—

दीप्यद् देवाना परमघनकर कामपूर जनाना,
शस्वद्भवताना परिकलितबलाकोशल कामिनीनाम् ।
दिव्यान्^२दाना परम^३निलयन वेदगम्य पुराण,
पुष्पारण्यानां गहनमहमिम नमि मूर्द्धना नितान्तम् ॥ ४६६ ॥

इति फुल्लदाम २१८

२१६. अथ मृदुलकुसुमम्

रचय नगणमिह रसपरिमित^१मनुकलय,

शिशिरकिरणरचित कुसुमगणनमपि कुरु ।

सकलभुजगनरपतिकथितमिदमतिशय-

सुललितमृदुलकुसुममिति हृदि परिकलय ॥ ४६७ ॥

यथा-

अयि ! सहचरि ! निरुपममृदुलकुसुमरचित-

मनुकलय सरसमलयजकणलुलितमिति ।

वरविपिनगतसरवरतलकलितशयन-

मनुसर सरसिजनयनमनुपमगुणमिह ॥ ४६८ ॥

इति मृदुलकुसुमम् २१६

^१अत्रापि प्रस्तारगत्या एकोनविंशत्यक्षरस्य लक्षपञ्चक चतुर्विंशतिसहस्राणि
अष्टाशीत्युत्तर दातद्वय ५२४२८८ भेदास्तेषु कतिपयभेदा प्रोक्ता, शेषभेदाः
सुधीभि प्रस्तार्य उदाहरणीया, इत्युपदिश्यते^{१*} ।

इत्यूनविंशत्यक्षरम् ।

अथ विंशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्-

२२०. योगानन्द

यस्मिन् वृत्ते दिवसस्याता सप्तमना शोभन्तेऽन्यन्त पूर्णा कर्णा-

स्तद्वल्लीलालोले पादप्रान्ते विख्याता ख्याप्यन्ते मह्या वर्णा ।

श्रीमन्नागाधीशप्रोक्त विद्वत्सार हारोद्धार धेहि स्वान्ते,

तद्वद्वृत्त योगानन्द सर्वानन्दस्थान धैर्याधान कान्ते । ॥४६९॥

यथा-

वन्देऽहं तं मम्य काम्य सर्वार्थदा देव दीप्त धीर,

नाय नव्याम्भोदप्रहस्य काम श्रव्य राम मित्र सेव्य वीरम् ।

सर्वधार भव्याकार दक्ष पाल वसादीना बाल बाल,

आनन्दाना वन्द विद्यासिन्धु सेवे येन क्षिप्त भायाजालम् ॥५००॥

इति योगानन्द २२०

१. ल. परिणम् । २. पञ्चमत्रय नास्ति क प्रती ।

*टिप्पणी—१. सप्तमभेदाः पञ्चमपरिणिष्टे विलोकनीयाः ।

२२१ अथ गीतिका

कुरु हस्तसगिमुदाह्वकङ्कणरूपरावसमन्वित,

वरपक्षिराजविराजित नवगन्धयुग्मविभूषितम् ।

कुरु बल्लकोरवधारिण रसमुग्धसुन्दररूपिणो-

रचयुक्तनूपुरमत्र धेहि विधेहि भाभिनि । गीतिकाम् ॥ ५०१ ॥

यथा-

अयि ! मुञ्च मानमवेहि दानमुपेहि कुञ्जगत हरि,

नवकञ्जचारुविलोचन भयमोचन भवसन्तरिम् ।

कुरुपे विलम्बमकारण सखि । साधयाशु मनोरय,

ननु खिद्यसेऽतिभृश वृथैव जनुविधारयसे कथम् ॥ ५०२ ॥

यथा वा-

अलमीश-पावक-पाकशासन-वारिजासनसेवया,

गमित जनुर्जनकात्मजापतिरप्यसेव्यत नो मया ।

कह्णापयोनिधिरेक एव सरोजदामविलोचन,

स पर करिष्यति दुःखशेष 'मशेषदुर्गन्तिमोचन. ॥ ५०३ ॥

'अथ सालतालतमालवञ्जुलकोविदारमनोरमा' इत्यादि । शिको काव्ये च प्रत्युदाहरण^१मिति ।

इति गीतिका २२१

२२२ अथ गण्डिका^१

हारपुष्पसुन्दर विधेहि तन्मनोहर मनोहरेण,

नागराजकुञ्जरेण भापित च रेण यत्पयोधरेण ।

अन्तगेन चामरेण राजित विराजित च काहलेन,

गण्डकेति यस्य नाम धारित सुपण्डितेन पिङ्गलेन ॥ ५०४ ॥

यथा-

देव! देव! वासुदेव! ते पदाम्बुजद्वय विभावयेम,

नाम पुष्पदाम^२धामतेजसा सदा हृदा विधारयेम ।

तावदेव सारवस्तु नाभ्यदस्ति किञ्चनात्र धारितेन,

वाजिराजिबुञ्जरादिसाधनेन तेन किं विभावितेन ॥ ५०५ ॥

१ ख एक । २ ख दुःखनाश । ३ ख तदुदाहरणम् । ४ ख पुण्डितान ।

* टिप्पणी— १ इत्यस्यास्य निदिष्टलक्षणवारिका परित्फुटा नैवास्ति किन्तु ग्रन्थवर्तुषंद-
भीष्ट तदुदाहरणं नैव परिज्ञायते—'यच्चन्दसि हारपुष्पयो (५) नववारमनु-
प्रमेण योजन तदनु चामर-काहलयो (५)-यस्य नवेत्तद् गण्डकावृता स्यादिति ।

यथा वा, भूषणे^{१*} प्रत्युदाहरणम्—

दृष्टमस्ति वासुदेव विश्वमेतदेव शेष[वक्त्र]क तु^१,

वाजिरत्नभूत्यदारमूनुगेहवित्तमादिवन्नव तु ।

त्वत्पदाब्जभक्तिरस्तु चित्तसीम्नि वस्तुतस्तु सर्वदेव,

शेषकालनुप्तकालदूतभीतिनाशनीह हन्त सैव ॥ ५०६ ॥

कवचिदियमेव चित्तवृत्तम् इति । केवल वृत्तमात्रमन्यत्र^{१*} ।

इति गण्डका २२२.

२२३. अथ शोभा

यकार प्रागस्ते तदनु च भगण कथ्यते यत्र बाले ।,

ततोऽपि स्यात् पश्चाद् यदि भगणयुग स्वातकारद्वय च ।

ततश्चान्ते हारद्वयमुपरितन कारयानु प्रकाम,

रसरश्चैदिच्छन्ना मुनिविरतिगता भासते काऽपि शोभा ॥५०७॥

यथा—

रमाकांत वन्दे त्रिभुवनशरण शुद्धभावंकगम्य,

विरञ्चे स्रष्टार विजितघनरुचि वेदयाचावगम्यम् ।

शिव लोकाध्यक्ष भगवद्विजयिन कुन्दवृन्दभदन्त (वदात),

महन्नार्थरूप विभूतगिरिवर हार्दकञ्जे वसन्तम् ॥ ५०८ ॥

इति शोभा २२३

२२४ अथ सुवदना

आदौ सो यत्र बाले । तदनु च रगणो जह्वा सुषटितः,

पश्चाद्देवो नकारस्तदनु च यगणस्तातेन रचित ।

कायो^१ तत पाश्वंदेसो तदनु सधुगुरु स्नेया सुवदना,

नागाधीसेन नुम्ना नममितचरणा नम्या सुमदना ॥ ५०९ ॥

यथा—

श्रीमन्नारायण त नमत बुधजना मसारशरण,

सर्वाध्यक्ष वनन्त निजहृदि मदय गोपीविहरणम् ।

कल्याणाना निधान कलिमलदला वाचामविषय,

क्षोराब्धो भगवान् दमिनदितिसुत वेदान्तविषयम् ॥ ५१० ॥

१. तोषवक्त्रभाजि 'वाचोभूषणे' ।

* टिप्पणी—१ वाणीभूषणम् ३० प०, प० ३०८

२ छन्दोमञ्जरी, ३० लवण, का० २०६ एव वृत्तसारसर, प० ३, वा १०३

यथा वा, हलायुधभट्टविरचितछन्दोवृत्तौ^१—

या पीनाङ्गोरुतुङ्ग^२स्तनजघनघनाभोगालसगति-

यस्या कर्णवितसोत्पलरुचिजयिनी दीर्घे च नयने ।

सीमा सीमन्तिनीना^३ मलिलहृतया या च त्रिभुवने,

सम्प्राप्ता सम्प्रत मे नयनपथमसौ देवात् सुवदना ॥ ५११ ॥

इति सुषवना २२४.

२२५. अथ प्लवङ्गभङ्गमङ्गलम्

यदा लघुगुं रु निवेद्यते तदा प्लवङ्गभङ्गमङ्गलम्,

जरो जरो जरौ रसप्रयुक्तमुच्यते लगी सुमङ्गलम् ।

कवीन्द्रपिङ्गलोदित सुशङ्खहारभूषित मनोहर,

प्रमाणिका-पदद्वयेन पूर्यते च यच्च पञ्चचामरम् ॥ ५१२ ॥

यथा-

नवीनमेघसुन्दर भजेम भूपुरन्दर विभु वर,

प्रकामधामभासुर दधानमद्भुताम्बर^३ दयापरम् ।

विलासिनीभुजान्तरानिरुद्धमुग्धविग्रह स्मरातुर,

चराचरादिजीवजातपातकापह जगद्धुर-धरम् ॥ ५१३ ॥

इति प्लवङ्गभङ्गमङ्गलम् २२५

२२६. अथ शशाङ्कचलितम्

कर्णं पयोधरकरो यदा च भवतो विलासललिते,

ज्ञेयस्तत सुतनु^१ ज सुहस्तकलित. शशाङ्कचलिते ।

ततोऽपि चेद् भवति ज मुपाणिषटितो वसो च विरति-

स्ततो रसैरपि यति कलावति भवेत् पुना रसयति ॥ ५१४ ॥

यथा-

शृणु प्रणौमि सतत बलेन सहित सदा शुभरत,

कत्याणकारिचरित सुरैरभिनुत प्रमोदभणितम्^४ ।

कसादिदर्पदलन च कलाकुतुकिन विलासभवन,

समारपारकरण परोदयकर सरोजनयनम् ॥ ५१५ ॥

इति शशाङ्कचलितम् २२६

१. या पीनो गाढतुङ्ग-हलायुधे । २. इयामा सीमन्तिनीनां 'हलायुधे' । ३. स. प्रदभुत वरम् । ४. स भरितम् ।

*टिप्पणी—१ अष्टमाय ७, कारिकाया २३ उदाहरणम् ।

२२७ अथ भद्रकम्

वेदसुसम्मितमादिगुरु कुरु जोहल कमल प्रिये ^१,
अन्तगत कुरु पुष्पसुकङ्कणराजित विजितक्रिये ।
र०ध्ररसैरपि बाणविभेदितविशक कुरु वर्णक,
कामकलारसरासयुते निजमानसे कुरु भद्रकम् ॥ ५१६ ॥

यथा-

चेतसि पादयुग नवपल्लवकोमल किल भावये,
मञ्जुलकुञ्जगत सरसीरुहलोचन ननु चिन्तये ।
आनय नन्दसुत सखि^१ मानय मेदुर रजनीमुख,
कृञ्चितकेशममु परिशीलय कामुक कुरु मे सुखम् ॥ ५१७ ॥

इति भद्रकम् २२७

२२८ अथ अनवधिगुणगणन

रसपरिमितमिति सरसनगणमिति^१ विरचय
विकचकमलमुखि^१ लघुयुगमनुमतमनुनय ।
सुतनु^१ सुदति^१ यदि निगदसि बहुविधमनवधि
गुणगणमनुसर नखलघुमितमनुलवमयि ॥ ५१८ ॥

यथा-

अनुपमगुणगणमनुसर मुरहरमभिनव-
मभिमतमनुमत^१ मतिशयमनुनयपरमव ।
सकपटयदुवरकरधृतगिरिवरपरमयि
वुरु मम सुवचनमफलय सखि न हि न हि मयि ॥ ५१९ ॥

इति अनवधिगुणगणन २२८

^१अत्रापि प्रस्तावरगत्या विशत्यक्षरस्य दशसप्तमष्टचत्वारिंशत्सहस्राणि पद-
सप्तत्युक्तराणि पञ्चाशत्तानि च १०४८५७६ भेदा भवन्ति, तेषु चाद्यतसहिता
विस्तरभीत्या नियतो भेदा लक्षिता, शेषभेदा सुषुद्धिभिः प्रस्तार्य सूचनीया
इति दिव् ।^{१*}

इति विराट्तरम् ।

१ ल मिहः २ मनुगतः ३ पश्चिधनुष्य नास्ति ४ प्रतोः

*टिप्पणी—१ सप्तशेषभेदा यञ्चमपरिगण्य समीचीनीयः ।

अथ एकाविंशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्—

२२६ अथ ब्रह्मानन्द

यस्मिन् वृत्ते पवित्र रयाता शोभन्तेऽत्यन्त कर्णा प्रान्ते चैकोहार,
 नागाधीशप्रोक्तोऽपार सारोद्धारो ब्रह्मानन्दो वृत्ताना सार ।
 विश्रामश्च प्रायो यस्मिन् वेध श्रोत्रे शैलेन्द्रे शस्त्रैर्वा स्यात् प्रान्ते,
 विशल्या वर्णैरेकाग्रं समुक्तैर्लीलासोले सोऽय ज्ञेय कान्ते ॥५२०॥

यथा—

सर्वं कालव्यालग्रस्त मत्वा स्त्रीषु व्यासङ्गं हित्वा कृत्वा धैर्यं,
 कालीन्दीये कुञ्जे कुञ्जे आम्यद्भृङ्गं सगीते भ्रातृमुक्त्वा कौर्यम् ।
 श्रीगोविन्द वृन्दारणे मेघश्याम गायन्त वेणुक्वाणंमन्द,
 ब्रह्मानन्द प्राप्याजस्र ध्यात्वा चेत साफल्यं धेहि स्वान्तेऽनन्दम् ॥५२१॥

इति ब्रह्मानन्द २२६

२२७ अथ स्रग्धरा

आदौ मो यन वाले । तदनु च रगण स्यात् प्रसिद्धस्तु यस्या,
 पश्चाद् भ चापि न च त्रिगुणितमपि य धेहि कान्ते । विचित्रम् ।
 शैलेन्द्रे सूर्यवाहिरपि च मुनिगणैर्दृश्यते चेद् विराम,
 कामव्यासक्तचित्ते सुदति । निगदिता स्रग्धरा सा प्रसिद्धा ॥ ५२२ ॥

यथा, ममेव पाण्डवचरिते—

तुष्टेनाथ द्विजेन त्रिदशपतिसुतस्तत्र दत्ताभ्यनुज,
 कर्णोपि प्राप्तमानस्सदसि कुरूपतेर्द्वन्द्वयुद्धार्थमागात् ।
 जम्भाराति स्वसूनोरुपरि जलधरैस्सव्यघादातपत्र,
 चण्डाशुश्चापि कर्णोपरिनिजकिरणानाततानातिशीतात् ॥५२३॥

यथा वा, मत्पितु खड्गवर्णने—

सङ्ग्रामारण्यचारी विवटभटभुजस्तम्मभूमृदुविहारी,
 सप्तशोणीशचेतोमृगनिरपरानन्दविशोभकारी ।
 माधव्मातङ्गबुद्धमस्यलगलदमलस्यूलमुक्ताग्रहारी,
 स्फारीभूताङ्गघारी जगति विजयते खड्गपञ्चाननस्ते ॥ ५२४ ॥

यथा वा, कृष्णकुतूहले—

केशिद्वेपिप्रसूच क्वचिदय समये सदादासीषु कार्य-

व्यग्रासु प्रग्रहान्तग्रहणचलभुजाकुण्डलोद्ग्रीवसूनु ।

पुत्रस्नेहस्तुतोस्तनमनणुरणत्कङ्कणक्वाणमुद्यत्-

कम्पस्विद्यत्कपोल दबिकचविगलद्दामबन्ध समन्ध ॥५२५॥

इति धर्मधरा २३०.

२३१ अथ मञ्जरी*

कङ्कण कुरु मनोहर तदनु सुन्दर रचय तुम्बुर,

सुन्दरी कलय सुन्दरी तदनु पक्षिणामपि पतिं तत ।

भावमातनु तत पर सुतनु । पक्षिण च कुरु सङ्गत,

भावमेव कुरु मञ्जरी [तदनु] जोहल विरचयातत ॥५२६॥

रागनगणक्रमेण च सप्तगणा भान्ति यत्र सरचिता ।

नव-रस-रसयतिसहिता वदन्ति तज्ज्ञास्तु मञ्जरीमिति ताम् ॥ ५२७ ॥

यथा—

हारभूपुरकिरीटकण्डलविराजिता वरमनोहर,

सुन्दराघरविराजिवेणुरवपूरिताखिलदिगन्तरम् ।

नन्दनन्दनमनङ्गवर्द्धनगुणाकर परमसुन्दर,

चिन्तयामि निजमानसे रुचिरगोपगोधनधुरन्धरम् ॥ ५२८ ॥

यथा वा, श्रीशङ्कराचार्याणां नवरत्नमालिकायाम्—

दाडिमीकुसुममञ्जरीनिकरसुन्दरे मदनमन्दिरे,

यामिनीरमणलण्डमण्डितशिलण्डके तरलकुण्डे (कुण्डले) ।

पाशमकुशमुदञ्चित दधति क्रोमले कमललोचने ।

तावके वपुषि सन्तत जननि ! मामक भवतु मानसम् ॥५२९॥

इति मञ्जरी २३१

२३२ अथ नरेन्द्र

कुण्डलवज्ररज्जुमुनिगणयुतहस्तविराजितशोभ ,

पाणिविराजिशय्ययुगवलयित-मङ्गलधामरलोभ ।

वामविशोमयोगवरविरतिगचन्द्रविलोचनवर्ण ,

पद्मगराजपिङ्गल इति गदति राजति वृत्तनरेन्द्र ॥ ५३० ॥

माननि । मानकारणमिह^१ जहिहि नन्दय त सखि । कृष्ण,
चिन्तय चिन्तनीयपदमनुमतमाकलयाशु सतृष्णम् ।
जीवय जीवजातमुपगतमपि मा कुरु मानसभङ्ग ,
केवलमेव तेन सह सहचरि ! सन्तनु तत्तनुसङ्गम ॥ ५३१ ॥

यथा वा—

पञ्चजकोपपानपरमघुकरगीतमनोज्ञतडाग ,
पञ्चमनादवादपर^२परभृतकाननसत्परभाग ।
वत्सलभविप्रयुक्तकुलवरतनुजीवनदानदुरन्त ,
किं करवाणि वक्षि^३ मम सहचरि ! सन्निधिमेति वसन्त । ५३२ ।

इति नरेन्द्र २३२

२३३ अथ सरसी

सहचरि ! नो यदा भवति सा कथिता सरसी कवीश्वर-
येदि तु जभौ जजौ च भवतोपि जरी समनन्तर परै ।
इह विरती यदा शरविलोचनजे भवतो मुनीश्वर ,
शिशिरकरैस्सदा भवति लोचनतो गणनापदाक्षरै ॥ ५३३ ॥

यथा—

नमत सदा जना प्रणतकल्पतरु जगदीश्वर हरि,
प्रवसहृदम्भकारतरणि भवसागरपारसन्तरिम् ।
सकलमुरामुरादिजनसेवितपादमरोरुह पर,
जलरुहशङ्ख चक्रकमनीयगदाधरसुन्दराम्बरम् ॥ ५३४ ॥

यथा वा—

'तुरगशताकुलस्य परित परमेकतुरङ्गज-मन ।' इत्यादि माघकाव्ये^४ ।

इति सरसी २३३

सुरतररिति अन्यथ । सिद्धकम्^५ इति वयचित् ।

१ क मानकारणमिह । २ स पञ्चमनादगानपर । ३ स वरिध

*टिप्पणी—१ तुरगशताकुलस्य परित परमेकतुरङ्गज-मन ,
प्रमथितभूमत प्रतिपद्य मथितस्य भूग महोभूता ।
परिषलतो बलानुबलस्य पुर सतत पुनथिय
दिपरविगतश्रियो जननिषेदच सदाभवदन्तर महत् ॥ ८२ ॥

[गिण्पासवधम्—पृ० ३, प० ८२]

२ वृत्तरत्नाकर , नारायणोटीरायाम्—प्र ३, वा १०४

२३४. अथ रुचिरा।

कुरु नगण ततो रचय भूमिपतिं दहनं च सुन्दर,
तदनु विभेहि ज त्रिगुणित ललित विहग तत परम् ।
मुनिमुनिभिर्भवेद्विरतिरप्यतुला सुक्ला मनोहरा,
सुकविवरं, परा निगदिता रुचिरा परमार्थतो वरा ॥ ५३५ ॥

यथा—

नयनमनोहर परमसौख्यकर सखि ! नन्दनन्दन,
कनकनिभाशुक त्रिजगतीतिलक मुरलीविनोदनम् ।
भुवनमहोदय घनरुचिं रुचिर कलये सदोन्नत*,
सुरकुसुमपालक श्रुतिनुत सदय दयित श्रिय पतिम् ॥ ५३६ ॥

इति रुचिरा २३४

२३५ अथ निरुपमतिलकम्

सुतनु ! सुदति ! सरसमुनिमितनगणमिह रचय,
शिशिरकरजनयनमितमुपदमपि परिकलय ।
कनककटकवलयकलितकरकमलमुपनय,
कणिपतिमणितमिह निरुपमतिलकमिति वथय ॥ ५३७ ॥

यथा—

जय ! जय ! निरुपम ! दिशि दिशि विलसितगुणनिवर !,
करधृतगिरिवर ! विगणितगुणगणवरसुकर ! ।
कनकयसनकटकमुकुटवलित ! मिलितलसन !,
विजितमदन ! दलितशकट ! सबलदितिजदसन ! ॥ ५३८ ॥

इति निरुपमतिलकम् २३५

*अत्रापि प्रस्तारणत्या एकविंशत्यक्षरस्य नव्यलक्ष सप्तनवतिगह्वराणि
द्विसप्तदशकपञ्चाशदुत्तरात् तात् २०८७१५२ भेदा भवन्ति, तेषु भेदमप्याव प्रोक्त,
सोपभेदा सुधीभिः स्वबुद्ध्या प्रस्तायं सूचनीया इति दिट् ।*

इति एवविंशत्यक्षरम् ।

१ छ सरोरुति । २ वनित्रय नास्ति च प्रती ।

*टिप्पणी—१ एवविंशत्यक्षरस्य अष्टाक्षरेषु सप्तत्येकभेदा पञ्चमपरिचिते २०८७१५२

अथ द्वाविंशत्यक्षरम्

तत्र प्रथमम्—

२३६ विद्यानन्द

यस्मिन् वृत्ते रुद्रप्रोक्ता कुन्तीपुत्रा नेत्रैर्नैर्वर्णा पादप्रान्ते,
पङ्क्ति कर्णविश्राम स्यात् तदवद् यस्मिन् रम्यं पाण्डो पुत्रे स्यात् तस्यान्ते ।
ध्रीमन्नागाधीशेनोक्त सार वृत्तं त्रय्यं मय्य नव्यं काव्यं कान्ते !
बाले ! लीलालोले ! मुग्धे ! विद्यानन्द दिव्यानन्द सम्यग धेहि स्वान्ते ॥५३६॥

यथा—

काशीक्षेत्रे गङ्गातीरे चञ्चलीरे विश्वेशाग्निद्वन्द्वं सम्यग् ध्यात्वा,
कृत्वा तत्तन्मात्रायुक्तप्राणायामं शोच्यं नश्यत्तत्तसङ्गं मुक्त्वा ।
मायाजालं सर्वं विश्वं मत्वा चित्ते रम्यं हर्म्यं पुत्रा किञ्चित्तैत-
च्छस्वत्कामक्रोधक्रौर्याक्रान्तं श्रान्तं प्रान्ते नाहं देहं सोऽहं तत्सत् ॥५४०॥

इति विद्यानन्द २३६

२३७ अथ हसी

यस्यामण्टौ पूर्वं हारास्तदनु च दिनपतिमितं वरवर्णा,
दण्डाकारा कान्ते ! चञ्चलकरयुगविलसितवलमविलोले !
तद्वद्दोर्धावन्त्यौ वणौ*यतिरिह विलसति वसुभुवनार्णं,
सा विज्ञेया हसी बाले ! प्रभवति यदि किल नयनयुगार्ण* ॥५४१॥

यथा—

प्रौढध्वान्ते प्रावृट्कालं क्षितितलविलसिततरलितकन्दे,
कालिन्दीये कुञ्जे कुञ्जे त्वदभिसरणकृतं सरभसवेपा ।
राधात्यन्तं बाधायुक्ता प्रमरति मनसिजविशिखविलूना,
वन्धस्त्रग्निभिरचितभूपस्त्वमपि च विहरसि सरसकदम्बे* ॥ ५४२ ॥

यथा वा—

श्रीकृष्णेन क्रीडन्तीनां क्वचिदपि वनभुवि मनसिजभाजा,
१ गोपालीनां चन्द्रज्योत्स्नाविशदरजनिगुह्यनितरतीनाम् ।
धर्मभ्रष्टपतपत्रालीनामुपचितरभसविमलतनुभासा,
‘रासक्रीडायासध्वसी मुदमुपनयति’ मलयगिरिवात ॥ ५४३ ॥

इति हसौ २३७

*‘विहं नगतोऽयं पाठो नास्ति कः प्रची । १ १ कः रासक्रीडायापराधसमुदमुपनयति ।

*टिप्पणी—१ पाठोऽयं सवधायुद्धं वणद्वयवर्द्धनादीधद्वयरहितत्वाच्च । अतोऽस्मिन्
पादे यदि विरचितं पदस्याने सृष्टा पदयोजना स्यात्तदोपपरिहारसम्भवः ।

२३८ अथ मदिरा

आदिगुरुं कुरु सप्तगण सखि । पिङ्गलभापितमन्तगुरु,
पक्तिविराजि-यति च तत कुरु सूर्यविभरसिर्यति च तत ।
चिन्तय चेतसि वृत्तमिद मदिरेति च नाम यत प्रथित,
सप्तभकारगुरुर्पाहित बहुभि कविभिर्वहुधा कथितम् ॥ ५४४ ॥

पद्या-

मा कुरु माचिनि । मानमये वनमालिनि सन्तति^१शालिनि हे,
पाणितलेन कपोलतल न विमुञ्चति सम्प्रति किं मनुपे ।
यीवनमेतदकारणक न हि किञ्चिदतोऽपि फल तनुपे,
कुञ्जगत परिशीलय त परिसम्बन्धि सखि । किं कुरुपे ॥ ५४५ ॥

इति मदिरा २३८

इयमेव अस्माभिर्मन्त्राप्रस्तारे पूर्वखण्डे सबयाप्रकरणे मदिराभिसन्धाय
सबया इत्युक्ता, सा तत एवावधारणीया ।

२३९ अथ मन्दकम्

कारस्य भ ततोपि रगण ततो नरनरास्ततश्च न गुरु,
दिगूरविभिर्भवेच्च विरतिर्विलोचनयुगैरपीन्दुवदने ।
कल्पय पादमत्र रुचिर कवीन्द्रवरपङ्गलेन कथित,
मन्द्रकवृत्तमेतदत्रले । सुभाषितमहोदधे सुमथितम् ॥ ५४६ ॥

पद्या-

दिध्यमुगीतिभि सकृदपि स्तुवन्ति भवये (भुवि ये) भवन्तमभय,
भक्तिभराधनभक्षिरस कृताञ्जलिपुटा निरावृत्तभवम् ।
ते परमीश्वरस्य पदबीमवाप्य सुखमाप्नुवति विपुल,
भर्त्यभुव स्पृशति न पुनर्मनोहरसुताङ्गनापरिवृता ॥ ५४७ ॥

इति मन्दकम् २३९

२४०. अथ शिपरम्

मन्द्रकमेव हि वृत्त यदि दशरथयुगविरति भवेत् ।
शिपर तदत्र भाते । कथित कविपिङ्गलेन तदा ॥ ५४८ ॥

यथा—

कृष्णपदारविन्दयुगल नमन्ति ननु ये जना सुवृत्तिन,
ससृतिसागर सुविपुल तरन्ति मुदितास्त एव वृत्तिन ।
दिव्यधुनोतरङ्गललिते तटे धृतकुटा स्मरन्ति परम,
धाम निरन्तर भनसि तज्जराकवलित जनुर्न चरमम् ॥ ५४९ ॥

इति शिखरम् २४०

मन्द्रकस्य गणा एव अत्रापि यतिकृत एव पर भेद ।

२४१ अथ अच्युतम्

सलयुग-निगमनगणमिह^१* कुरु पक्षि-पाणिमभाजित,
तदनु च रचय कमलमुखि । सखि । पुष्पहारविराजितम् ।
निगमशिशिरकरदिरचितयतियोगवद्ध विभावित,
कविवरफणिपतिसुभणितमिति^२ मानसे कलयाच्युतम् ॥ ५५० ॥

यथा—

सधनतिमिरभरमरितविपिनमात्मनैव विभावित,
न खलु सहचरि । वितनु विदलितमाश्रयामि सुजीवितम् ।
कनकनिभवसनमरुणनयनमानयाशु मनोहर,
मसृणमणिगणलचिततनुमपि हारयामि तमोहरम् ॥ ५५१ ॥

इति अच्युतम् २४१

२४२ अथ मदालसम्

कर्णं जकार रसयुग्म विधेहि सखि । कर्णं तत कुरु रस,
हार नकारमथ कर्णं नरेन्द्रमिह हस्त विधेहि च तत ।
सूर्याश्वसप्तयति कुर्याद् यथाभिरुचि पश्चाद् वसो च विरति^३,
नेत्रद्वयत कुरु पादान्तदर्णमिति धृत मदालसमिदम् ॥ ५५२ ॥

यथा—

शम्भो । जय प्रणमदम्भोजनामविधिदम्भोलिपाणितरणे-
रम्भोरगाढपरिरम्भोपभोगदिवि रम्भोपगीतसततम् ।
स्तम्भोदयप्रणतजम्भोपघाति^४ शिशुदम्भोपकल्पिततनो^५,
रम्भोदरप्रतिमशम्भो^६ जयामलविदम्भोधि^७ वद्धनविधो । ॥ ५५३ ॥

१ क सुभाषितमिति । २ ख विरति । ३. ख जम्भो च घाति । ४ ख चिदम्भोधि ।

*टिप्पणी—१ सलयुगनिगमनगणमिह इह—अच्युतवृत्ते लघुद्वयसहितच तुर्नगणमर्पाद्
चतुर्दशलक्षरमत्र 'कुरु' रचयेत्यथ ।

यथा वा—

मन्दाकिनीपुलिनमन्दारदामशतवृन्दारकाञ्चितविभो^१ !

नारायणप्रखरनाराचबिद्धपुरनाराघिद्रुपकृतवता ।

गङ्गाचलाचलतरङ्गावलीमुकुटरङ्गावनीमतिपटो^२ !

गौरीपरिव्रह्मणगौरीकृताहं तव गौरीदूगौ श्रुतिगता ॥ ५५८ ॥

यथा वा, अस्मद्वृद्धप्रपितामहकविपण्डितमह्यश्रीमद्रामचन्द्रभट्टकृतनारायणाष्टके-

कुन्दातिभासि शरदिन्दावस्त्रण्डरुचि वृन्दावनत्रजवधू-

वृन्दागमच्छलनमन्दावहामकृतनिन्दार्यवादकयनम् ।

वृन्दाग्विभ्यदरविन्दावनक्षुभितमृन्दारकेदवरकृत-

च्छन्दानुवृत्तिमिह नन्दात्मज भुवनकन्दाकृति हृदि भजे ॥ ५५९ ॥

इत्यादि महाकविप्रबन्धेषु शतशः प्रत्युदाहरणानि^३ ।

इति मवाणसम् २४२.

२४३. अथ तत्परम्

सहचरि ! रविहृयपरिमित सुनगणमिह विरचय,

तदनु सिधिरकरपरिमित कुमुममिह परिकलय ।

कविवरमकलभुजगपतिनिगदितमिदमनुसर,

नवरससुषटित-नरवरसुषटित-तरुवरमिति ॥ ५६० ॥

यथा—

अवनतमुनिगण ! करधृतगिरिवर ! सदवनपर !,

त्रिभुवननिरुपम ! नरवरबिलसित ! सवपटवर ! ।

दमितदितिजकुल ! कलितसकलवल ! सततमदय !,

सम्भसविदलितकरिवर ! जय ! जय ! निगमनिलय ! ॥ ५६१ ॥

अथ प्रायोऽष्टाष्टरसंविरतिरित्युपदेशः ।

इति तत्परम् २४३.

अत्रापि प्रस्तारगत्या द्वाविंशत्यक्षरस्य एकचत्वारिंशत्लक्ष्याणि चतुर्नवसि-
सहस्राणि चतुरत्तर शतत्रयं ४१६४३०४ भेदा, तेषु भेदाष्टकमुष्णम् । शेषभेदास्तु
षास्त्रोत्था प्रस्तार्य प्रतिभावाद्भिरुदाहर्तव्याः । इति दिङ्मात्रमुपदिश्यते^४ ।

इति द्वाविंशत्यक्षरम् ।

१. स विभो । २. स गतिपटो । ३. स. तदुदाहरणम् ।

* टिप्पणी—१. सख्याः शेषभेदा इष्टव्याः पञ्चमपरिदिष्टे ।

अथ त्रयोविंशत्सरम्

तत्र पूर्वम्—

२४४ दिव्यानन्द

कुन्तीपुत्रा यस्मिन् वृत्ते दिक्स्थिता सैका शोभन्ते प्रान्ते चैको हार,
 रोद्रनैर्द्यौस्मिन् सर्वैर्वर्णैर्वा सोऽय दिव्यानन्दस्त्रन्दोग्रन्ये सार ।
 विश्राम स्यात् पङ्क्ति कर्णैर्यस्मिस्तद्वत् सार्द्धं ' पाण्डो पुत्रैर्वा स्यात्तस्यान्ते,
 बाले । लोलालोले । कामक्रीडासक्ते । पूर्वोक्त दिव्य वृत्त धेहि स्वान्ते ॥५५८॥

यथा—

वन्दे देव सर्वाधार विश्वाध्यक्ष लक्ष्मीनाथ त क्षीराब्धौ तिष्ठन्त,
 यो हृत्तीन्द्र भक्त ग्राहप्रस्त मत्वा हित्वाप्त सर्वे स्त्रीवर्ग भासन्तम् ।
 भ्रातु सौपर्णे पृष्ठेऽनास्तीर्णेऽपि प्राप्तश्चक्री वेगादेवोच्चैः क्रीडत्,
 व्यापाद्यामु नक्त^१ मध्ये ववन्न सद्यस्त दन्तीन्द्र ससारान्मुक्त कुर्वन् ॥५५९॥

इति दिव्यानन्द २४४

२४५ [१]. अथ सुन्दरिका

करयुक्तसुपुष्पद्वयललिता ताटस्कृमनोहरहारधरा,
 द्विजकर्णविराजत्पदयुगला गण्डेन सुमण्डितकुण्डलका ।
 यदि सप्तविभिन्ना शरविरति शर्वैरपि चेद्विहतिर्विहिता,
 किल सुन्दरिका सा फणिभणिता नेत्राग्निकला कविराजहिता ॥५६०॥

यथा—

सखि ! पङ्कजनेन मुरहरण विज्ञ कमनीयकलाललित,
 वरमौक्तिकहार सुखकरण रम्य रमणीवलये वलितम् ।
 तदृणीजनचित्त वरतरुण भव्य भवभीतिविनाशकर,
 घनकुञ्चितकेश मुनिशरण नित्य कलयेऽखिलदैत्यहरम् ॥ ५६० ॥

इति सुन्दरिका २४५[१]

२४५[२] अथ पद्मावतिका

सुन्दरिकाैव हि बाले । यदि मुनिरसदशविरामिणी भवति ।
 विज्ञापयन्ति तज्ज्ञा पद्मावतिकेति नयनदहनकमलाम् ॥ ५६२ ॥

यथा—

सखि ! नन्दकुमार तनुजितमार कुण्डलमण्डितगण्डयुग,
 हतकसनरेश रचितसुवेश कुञ्चितकेशमशेषसुगम् ।

इयमेवास्माभिः पूर्वखण्डे भल्लिका सवया इत्युक्ता । सा तत एवावधारणीया ।

२४६. अथ मत्ताश्रीडम्

यस्मिन्नष्टौ पूर्वं हारास्तदनु च मनुमित लघुमिह रचयेत्^१,
पादप्रान्ते चैक हारं विकचकमलमुखि ! विरचय नियतम् ।
मत्ताश्रीड वृत्तं बाले ! वसुतिथियतिवृत्तरतिसुखनिबह,
कुन्तीपुत्र वेदैरुक्त निगमनगणमपि विरचय सगणम् ॥ ५७२ ॥

पद्या-

मध्ये कालिन्दीये कुञ्जे सुरभिसमयमधुमधुरसुखरस,
रासोल्लासक्रीडारङ्गे युवतिसुभगभुञ्जरचितवरवशम्^२ ।
सान्द्रानन्द^३ मेघश्याम मुरलिमधुर^४ रवविमुपितहरिण,
वृन्दारण्ये दीव्यतपुण्ये स्मरत परममिह हरिमतवरतम् ॥ ५७३ ॥

इति मत्ताश्रीडम् २४६.

२४७. अथ कनकवलयम्

सुतनु ! सुदति ! मुनिमित्तमिह सुनगणमिति ह विरचय,
तदनु विकचकमलमुखि ! सखि ! खसु लघुयुगमुपनय ।
दहननयनमितलघुमिह पदगतमपि परिकलय,
कनकवलयमिति कथयति भुञ्जगपतिरिति तदवय^५ ॥ ५७४ ॥

पद्या-

कनकवलयरचिनमुगुट ! *विघृतलकुट ! निकटवस !,
शमितशकट ! कनकसुपट ! दलितदितिजसुभटदल ! ।
कमलनयन* ! विजितमदन ! युवतिवलयरचितलय !,
तरलवसन ! विहितमजन ! घरणिघरण ! जय ! विजय ! ॥ ५७५ ॥

इति कनकवलयम् २४७

^१ अत्रापि प्रस्तारगत्या त्रयोविंशत्यक्षरस्य अष्टाशीतिलक्ष्याणि अष्टाशीतिसहस्राणि
अष्टोत्तराणि षट्सप्ततानि च ८३८८६०८ भेदा भवन्ति, तेषु अष्टौ भेदा प्रोक्ताः,
शेषभेदाः प्रस्तायं गणयतिवर्णनामसहितास्त्रमुदाहरणीया इति दिगुपदिश्यते* ।

इति त्रयोविंशत्तरम् ।

१. ल. रचये । २. अ. परवशम् । ३. व. साग्रावश । ४. ल. मदनमधुर ।
५. ल. अ. तदवय । ६. एतिनयन मारित व प्रयो । *—*विघृतलकुट पाठ व प्रयो नास्ति ।
*टिप्पणी—१. त्रयोविंशत्यक्षरस्य अष्टाशीतिलक्ष्याणि अष्टोत्तराणि षट्सप्ततानि च ८३८८६०८ भेदा भवन्ति । पञ्चमपरिचिते पद्यालोचना ।

अथ चतुर्विंशोऽक्षरम्

तत्र प्रथमम्-

२५१ रामानन्द

आदित्यं सस्यातां यस्मिन् वृत्ते दिव्ये श्रीनागाख्याते शोभन्तेऽन्यन्त वर्णा,
पङ्क्तिं वर्णं द्वित्वं प्राप्त्येद्विधाम स्यात् सत्तत्त्वं स्यात् रयातास्तद्द्वयवर्णा ।
कामक्रीडाकृतस्फीत प्राप्तानन्दे भव्यावादे चन्द्रागव्ये नव्ये कान्ते ।
देवनेत्रैर्यस्मिन् पादे हारा सप्तकन्द रामानन्द वृत्त धेहि स्वान्ते ॥ ५७६ ॥

यथा-

रासोत्तलासे गोपस्त्रीभिवृन्दारण्ये कालि दीये कुञ्जे कुञ्जे गुञ्जदभृङ्गे,
दिव्यामोदे पुष्पाकीर्णे घृत्वा वशी मन्द मन्द दिव्यस्तानै सङ्गायन्तम् ।
कामक्रीडाकृतस्फीत तासामङ्गेऽङ्ग साङ्ग कुर्वन्तत काम धान्त,
सर्वानन्द तेजोरूप विदवाधमक्ष वन्दे देव भासन्त प्रात सायान्तम् ॥ ५७७ ॥

इति रामानन्द २५१

२५२ अथ दुर्मिलका

विनिधाय कर सखि । पाणितल कुरु रत्नमनोहरबाहुयुग,
सगण च तत कुरु पाणितल सखि । रत्नविराजितपादयुतम् ।
यदि योगरसेरपि पङ्क्तिविराजित-तत्त्वविभासितवर्णधरा,
भवतीह तदा किल दुर्मिलका सखि । नेत्रविभावसुभासिकला ॥ ५७८ ॥

यथा-

गिरिराजसुताकमनीयमनङ्गविभङ्गकर नृकपालधर,
परिधूतगजाजिनवाससमुद्धतनृत्यकर शशिखण्डवरम् ।
गरलानलभूषित दीनदयालमदभ्रमदोद्धतनीलगल,
प्रणमामि विलोलजटातटगुम्फितशेषकलानिधिभालतलम् ॥ ५७९ ॥

यथा वा, भूपणे*-

कति सन्ति न गोपकुले ललिता स्मरतापह्ताश्च विहाय च ता,
रतिकेलिकलारसलालसमानसमागतमुज्ज्वलमानरसम् ।
वनमालिनमालि नमस्य नमस्य नमस्य मुदस्य चिरस्य वृथा,
भविता परितापवती भवती युवती जनससदि हासकथा ॥ ५८० ॥

इति दुर्मिलका २५२

यमुनातटकुञ्जे सतिभिरपुञ्जे कारितरासविलासपरं,
मुक्तनिजितचन्द्रं विगलिततन्द्रं चिन्तय चेतसि चित्तहरम् ॥ ५६३ ॥

इति पद्मावतिका २४५[२].

२४६. अथ अद्रितनया

सहचरि ! चेन्नजौ भजगणौ भजौ च भवतस्ततो भलगुरु,
शिवविरतिस्तथैव विरतिः प्रभाकरभवा भवेच्च नियता^१ ।
प्रतिपदमत्र वह्निनयनाक्षरैर्गणय पादमिन्दुवदने !,
जगति जया प्रकाशितनया जनैः किल विभाविताऽद्रितनया ॥ ५६४ ॥

प्रकारान्तरेणापि लक्षणं यथा—

सुदति ! विधेहि नं तदनु जं ततोऽपि भगणं ततश्च जगणं,
तदनु च देहि भं तदनु ज ततोऽपि भगणं ततो लघुगुरु ।
कुरु विरतिं शिवे दिनकरे यतिं सुरुचिरां विभावितनयां,
दहनविलोचनाक्षरपदां विधेहि सुभगे^२ ! मुदाऽद्रितनयाम् ॥ ५६५ ॥

यथा—

नयनमनोरम विकसित पलाशकुसुमं विलोक्य सरसं,
विकचसरोरुहां च सरसी विभाव्य सुभृश मनोऽतिविरसम् ।
गगनतल च चन्द्रकिरणैः कर्णैरिव^३ विभावसोऽसुपिहित,
सहचरि ! जीवनं न कस्ये विना सहचरं विधेहि विहितम् ॥ ५६६ ॥

यथा वा—

‘विलुलितपुष्परेणुकपिशप्रशान्तकलिकापलाशकुसुमम् ॥’ इत्यादि भट्टिकाव्ये^४ *

इति अद्रितनया २४६.

अश्वललितमिदमन्यत्र^५, तथाहि—

१. स. नियता । २. अ. सुभगे । ३. स. कर्णैरिव ।

* टिप्पणी—१ ‘विलुलितपुष्परेणुकपिश प्रशान्तकलिकापलाशकुसुमं,
कुसुमनिपातविचित्रवसुधं सशब्दनपसद् द्रुमोत्फलाकुनम् ।
साधुननिनादनादिबहुविलोचविपलायमानहरीण,
हरिणविलोचनाधिवसति वमञ्ज पद्मनात्मजो रघुवनम् ॥

[भट्टिकाव्य, स० ८, प. १३१]

२ वृत्तरत्नाकर—नारायणीटीका अ० ३, पृ० १०६ ।

पवनविधूतवोचिचपल विलोकयति जीवित तनुभृता,
न पुनरहीयमानमनिश जरावनितया वशीकृतमिदम् ।
सपदि निपीडनव्यातिकर यमादिव नराधिपाद्गरपशु,
परवनितामवेक्ष्य कुरुते तथापि हृतबुद्धिरद्वललितम् ॥ ५६७ ॥

इति प्रत्युदाहरणम्^१ ।

^१अत्रापि गणयतिवर्णविन्यासस्तु पूर्ववदेव, नाममात्रे भेद, फलतो न कश्चिद् विशेषः ।^२

२४७ अथ मालती

अत्रैव सप्तभगणानन्तर गुरुद्वयदानेन मालतीवृत्त भवति । लक्षण च यथा—
इयमेव सप्तभगणादनन्तर भवति मालतीवृत्तम् ।
यदि गुरुयुगलोपहिता पिङ्गलनागस्तदाख्याति ॥ ५६८ ॥

यथा—

चन्द्रकचारुचमत्कृतिचञ्चलमोलिविलुम्पितचन्द्रकिशोभ,
बन्धनवीनविभूषणभूषितनन्दसुत वनिताधरलोभम् ।
धेनुकदानवदारणदक्ष-दयानिधि दुर्गमवेदरहस्य,
नीमि हरि दितिजावलिमालितभूमिभरापनुद^३ सुयशस्यम् ॥ ५६९ ॥

इति मालती २४७

इयमेव अस्माभिः पूर्वखण्डे मालती सवया इत्युक्ता । [सा तत् एवावलोकनीया]

० किञ्च—

२४८ अथ मल्लिका

सप्तजगणादनन्तरमपि चैलघुगुरुनिवेशन भवति ।
जल्पति पिङ्गलनाग सुकविस्तन्मल्लिकावृत्तम् ॥ ५७० ॥

यथा—

धुनोति मनो मम चम्पककाननकल्पितकेलिरय पवन,
कथामपि नैव करोमि तथापि वृथा कदन कुरुते मदन ।
कलानिधिरेष बलादयि मुञ्चति वह्निकलापमलीकहिम्^४,
विधेहि तथा मतिमेति यथा सविधेन पथा ब्रजभूमहिम्^५ ॥ ५७१ ॥

इति मल्लिका २४८

१ ए उदाहरणम् । २-२ चिह्नगोप्यमथो नास्ति क प्रती । ३ ए भरापनुदे ।
४ ए हित । ५ ए ब्रजभूमहित ।

तत्त्वेरात्मा यस्मिन् वृत्ते वर्णं रयाता ^१ छन्दोविद्भिः सद्भिः ससेव्य सर्वानन्द,
सोऽयं नागाधीशेनोक्तो वृत्ताध्यक्ष ससाध्य पुम्भिश्चित्ते काम कामानन्द ॥५६०॥

यथा-

वन्यं पीतं पुष्पैर्मलिता सदग्रन्थतः ^२ श्रीमद्वन्दारण्ये गोपीवन्दे ^३ खेलन्त,
मायूरं पत्रैर्दिध्यं च कुर्वन्त वृक्षाणां शाखा घृत्वा हिन्दोले दोलन्तम् ।
वशीमोष्ठप्रान्ते कृत्वा सगायन्त तासां तन्नाम्नान्युक्त्वा गोपीराह्वायन्त,
दक्ष पाद वामे घृत्वा सतिष्ठन्त काल्पेवाक्षं ^४ मूले वन्दे कृष्णं ^५ भासन्तम् ॥५६१॥

इति कामानन्द २५७

२५८ अथ क्रीञ्चपदा

वारय भ म धारय स भ निगमनगणमिह विरचय रुचिर,
सञ्चितहारा पञ्चविरामा शरवमुमुनियुतसुरचितविरति ।
क्रीञ्चपदा स्यात् काञ्चनवर्णं गतिवशमुविजितमदगजगमने,
तत्त्वविभेदैर्वर्णविरामा बहुविधगतिरपि भवति च गणने ॥ ५६२ ॥

यथा

या तरलाक्षी वृञ्चितकेशी भद्रकलकरिवरगमनविलसिता,
फुल्लसरोजश्रेणिकटाक्षा मधुमदसुमुदितसरमसगमना ।
स्थूलतन्त्रा पीनकुचाढ्या बहुविधमुखयुतसुरतसुनिपुणा,
सा परिणया सौख्यकरा स्त्री बहुविधनिधुवनसुखमभिलपता ॥ ५६३ ॥

यथा वा, हलायुधे ^{१*}

या कपिलाक्षी पिङ्गलकेशी कलिरुचिरनुदिनमनुनयकठिना,
दीर्घतराभि स्थूलशिराभि परिवृतवपुरतिशयकुटिलगति ।
आयतजङ्घा निम्नकपोला लघुतरकुचयुगपरिचितहृदया,
सा परिहार्या क्रीञ्चपदा स्त्री ध्रुवमिह निरवधिसुखमभिलपता ॥ ५६४ ॥
इति प्रत्युदाहरणम् ।

इति क्रीञ्चपदा २५८

२५९ अथ मल्ली

सगणाष्टकगुरुघटिता शरपक्षकवर्णविलसिता या स्यात् ।
तामिह पिङ्गलनाम कथयति मल्लीमिति स्फुटत ॥ ५६५ ॥

१ अ स्यात् । २ क सदग्रन्थतः । ३ अ गोपीवन्दे । ४ अ त तिष्ठन्त
सत्कादम्बे । ५ क कृष्णे ।

*टिप्पणी—१ छन्दशास्त्रे हलायुधीयटीकायां पृ० ७, कारिकायां ३० उदाहरणम् ।

यथा-

गिरिराजसुताकमनीयमनङ्गविभङ्गकर गलमस्तवभाल,
परिधूतगजाजिनवाससमुद्धतनृत्यकर विगृहीतकपालम् ।
गरलानलभूपित-दीनदयालमदभ्रमदोद्धतदानवकाल,
प्रणमामि विलोलजटातटगुम्फितशेपकलानिधिलालितभालम् ॥ ५६६ ॥
इति मल्ली २५६.

इयमेव मात्रावृत्ते मल्लीसवया इत्युक्ता ।

२६० अथ मणिगणम्

सुतनु ! सुदति ! वसुमितनगणमिह विघुसुमुखि ! सुविरचय,
तदनु विकचकमलसदृशमुखि ! सुरभिकुसुममपि कलय ।
गतिवशविदलितमदकलकरिवरगमन इह सुरमणि,
मणिगणमिति फणिपतिरपि कथयति विमलमतिरतिरणि* ॥ ५६७ ॥

यथा-

निगमविदित सततमुदित परमपुरुषसुकृतसुललित*,
सकलमनुजकलुषदहन तरलयुवविवचनविचलित ।
विकटगहनदहनकवल पिहितनयन मिसितसखिवल !
कलितविविधविबुधसुखचय जय जय दलितदितिजदल ॥ ५६८ ॥
इति मणिगणम् २६०.

*अत्रापि प्रस्तारगत्या पञ्चविंशत्यक्षरस्य कोटिनय पञ्चत्रिंशल्लक्षाणि
चतुःपञ्चसहस्राणि द्वात्रिंशदुत्तराणि चतुःशतानि च ३३५५४४३२ भेदास्तेषु
दिगुपदर्शनाथं भेदचतुष्टयमुक्तं वृत्तान्तराणि च प्रस्तार्य सुधीभिरूह्यानीति
शिवम्* ।

इति पञ्चविंशत्यक्षरम् ।

अथ षड्विंशाक्षरम्

तत्र प्रथम सर्वगुहम्-

२६१ श्रीगोविन्दानन्द

यस्मिन् वृत्ते दिक्सख्याता कर्णा रामे. सपत्ना शोभन्तेऽन्यन्त वामभंव्याकारा,
विश्राम. स्यात् षड्भि कर्णे पश्चादन्ते कुन्तीपुत्रैर्मौन्तेषा लोकं ख्याताहाराः ।
सर्वेषा नागानामीशेनाय प्रोक्त. सर्वान्त्य* प्रस्तारः षड्विंशत्याहारैस्तारै.
सोऽय श्रीगोविन्दानन्दश्छन्दस्सारः सर्वाधार कार्यश्चित्तोऽपारैश्छन्दस्कारै.
॥५६९॥

१. क. विलमतिरतिरणि । २. ख. सुफलित । ३. पक्षित चतुष्टय नास्ति क. प्रती ।

*टिप्पणी—१ पञ्चविंशत्यक्षरवृत्तास्योपलब्धशेषभेदा पञ्चमपरिशिष्टे लोकनीया ।

२५३. अथ द्वितीयम्

पादयुगं कुरु नूपुरराजितमत्र वरं वररत्नमनोहर-
 चक्षुगुणं पुष्पमण्डपराजितवृक्षलग्नपुष्पं समुपाहर ।
 पण्डितमण्डनिपातुतमानगवत्यातगञ्जनमोतिरगालग,
 पिङ्गलपद्मराजनिभेदिनपुतकिरीटमिदं परिभाषय । ५८१ ॥

अथ-

मल्लिलने मन्विनासि किमित्तासिना रक्षिता भवतो वत यद्यपि,
 सा पुनरेति वरद्वरजनी तव या सनुने घवत्तानि जगन्तवपि ।
 पादद्वयोद्विचिचट्टिनपुण्ड्रन^१ कौटिलिनिगंतमौरमगम्मादि,
 न त्वयि कौटिलि विधास्यति गादरमन्तरमुत्तरनागरगंसदि ॥ ५८२ ॥

इति द्वितीयम् २५३.

२५४. अथ तृतीयम्

वारय म त मुचरितभरितं न पुर त सग्नि ! सुगृहीतवृत्ते,
 धेहि मयुग्म गणगुगृहीत वारय सुन्दरि ! यगणमिहान्त्रे ।
 भूजमुनीनयंतिरिह धणिता द्वादशानिश्च सुकव्यजनविज्ञा,
 तत्त्वविरामा भुजगविरचिता राजति चेतसि परमिति त्वयो ॥ ५८३ ॥

अथ-

मा कुर भाग पुर मम वचन मुञ्जजन भज सहचरि ! वृष्णं,
 वारितराग वलमित्तमनित गोपवभूजनमुक्तिगतृष्णम् ।
 यो किल रावंमं धुक्कविग्ने^२ स्फोटितवर्णमुगलपरितिन्ना,
 दाहमुपेता मलयजसत्तिलैस्तम्प्रतिदेहजदारभरमिज्ञा ॥ ५८४ ॥

अथ वा, 'द्वयोद्विती' * द्वादशाक्षरविरतिः—

चन्द्रमुगी सुन्दरधनजघना कुन्दममानक्षितरदक्षनाग्रा,
 निष्कलवीणा श्रुतिमुगधचना अस्तकुरद्वतरसनयनान्ता ।
 निर्मुत्तपीनोन्नतवृक्षवसदा मत्तगजेन्द्रक्षलितगतिभावा,
 निर्भरसीला निधुवनविधये मुञ्जनेन्द्र ! भवतु तव तन्वी ॥ ५८५ ॥
 इति प्रत्युदाहरणम् ।

इति तृतीयम् २५४.

१. स कृष्णम् । २. क मयुक्करविरतिः ।

* टिप्पणी—१ छन्दःशास्त्र-द्वितीयोपटीका अ० ७, वारिकाया २६ उदाहरणम् ।

२५५. अथ माधवी

तत्त्वाक्षरकृतवृत्तं यदि वसुभिर्नायकैर्भटितम् ।

तत्सखि ! पिङ्गलमणितं कथितं त्विह माधवीवृत्तम् ॥ ५८६ ॥

यथा—

विलोलविलोचनकोणविलोकितामोहितगोपवधूजनचित्तः,

मयूरकलापविकल्पितमोलिरपारकलानिधिबालचरित्रः ।

करोति मनो मम विह्वलमिन्दुनिभस्मितसुन्दरकुन्दसुदन्तः,

सखीमिति कापि जगाद हरेरनुरागवशेन विभावितमन्तः ॥ ५८७ ॥

इति माधवी २५५.

इदमेवास्माभिः पूर्वखण्डे माधवी सवया इत्युक्ता ।

२५६. अथ तरलनयनम्

वसुमितलधुमिह सहचरि ! विकचकमलमुखि ! विरचय,

तदनु घटय सखि ! रसदशलधुमपि तरलनयन इह ।

सकलचरणमिति वसुमितसुनगणमनु कुरु सुरमणि,

फणिमणिरिह विभुरनुवदति सुखचिरमिति परिकलय ॥ ५८८ ॥

यथा—

कुसुमनिकरपरिकलितमधुरवनविहरणसुनिपुण,

सरभसविदलितकरिवरनखरदलितदितिजगण ।

करघृतगिरिवर विलसितमणिगण मुनिमतमुरहर,

फणिपतिविगणितगुणगण जय जय जय सदवनपर ॥ ५८९ ॥

इति तरलनयनम् २५६.

*अत्रापि प्रस्तारगत्या चतुर्विंशत्यक्षरस्य एकाकोटिः सप्तपट्टिलक्षाणि सप्त-
सप्ततिसहस्राणि षोडशोत्तरं शतद्वयं च १६५७७२१६ भेदास्तेषु भेदपट्कमुदा-
हृतं, शेषभेदाः प्रस्तार्य सुखीभिरुदाहरणीया, इति दिक् ।

इति चतुर्विंशत्यक्षरम् ।

अथ पञ्चविंशाक्षरम्

तत्र प्रथमम्—

२५७. कामानन्दः

यस्मिन् वृत्ते सावित्राः कौन्तेयाः कान्ताः यत्नादप्रान्ते कान्ते ! चैको मुक्ताहारः,

विश्रामः स्यात् पङ्क्तिभिः कर्णमव्याकारैः सार्द्धैस्तैरेव स्यात् सोऽयं वृत्तानां सारः ।

१. पवित्राय नास्ति क. प्रती ।

*टिप्पणी—१ चतुर्विंशत्यक्षरवृत्तस्य लम्प्यशेषभेदाः पञ्चमपरिशिष्टे पर्यवेसणीयाः ।

यथा-

श्रीगोविन्द सर्वानन्दश्चित्ते ध्येय वित्त मित्र स्वाराज्य स्त्रीवर्गं सर्वो हेय,
चून्दारण्ये गुञ्जद्भृङ्गे पुष्पं कीर्णं श्रीलक्ष्मीनाय श्रीगोपीकान्त शश्वद्गेय ।
द्वारे द्वारे व्ययं ससारे रे रे रे भ्राम भ्राम काम किं कुर्यास्त्व क्षाम चेत्,
मायाजाल सर्वं चैतत् पश्यच्छ्रवन्भ्राम्यतानायोनौ पूर्वं खिन्नोऽसि त्व भ्रात
॥ ६०० ॥

इति श्रीगोविन्दान व २६१

२६२ अथ भुजङ्गविजृम्भितम्

आदौ यस्मिन् वृत्ते काले^१ मगणयुग-सनननगणा रसौ च लघौ ततो-^२
वस्थोशाश्वच्छेदोपेत चपलतरहरिणनयने विधेहि सुखेन वै ।
पादप्रान्त यस्मिन् वृत्ते रसनरनयनविलसित मनोहरण प्रिये^३,
नागाघोशेनोपेत प्रोपत^४ विबुधहृदयमुखजनक भुजङ्गविजृम्भितम् ॥ ६०१ ॥

यथा-

ध्यानैकाग्रालम्बादृष्टिष्कमलमुखि । लुलितमलकं करे स्थितमानन,
चिन्तासक्ता धूम्या बुद्धिस्त्वरितगतिपतितरसनातनुस्तमुषा गता ।
पाण्डुच्छायक्षाम वक्त्र मदजनति रहसि सरसा^५ करोपि न सकया,
को नामाय रम्यो व्याधिस्तव सुमुखि^६ कथय किमिदं न खल्वसि नातुरा^७
॥ ६०२ ॥

यथा वा, हलायुधे^८—

यै सतद्धानेकानोकैर्नरतुरगकरिपरिवृतै सम तव शत्रव,
युद्धश्रद्दालुब्धात्मान^९स्त्वदभिमुखमथ गतभिय पतन्ति धृतायुधा ।
तेऽद्य त्वा दृष्ट्वा सग्रामे तुङ्गिनृपकुपणमनस पतन्ति दिगन्तर
किं वा सोढुं शक्य तैस्तैर्वहुभिरपि सविपविपम भुजङ्गविजृम्भितम् ॥ ६०३ ॥

इति प्रत्युदाहरणम् ।

इति भुजङ्गविजृम्भितम् २६२

२६३ अथ अपवाह

आदौ म तदनु च कुरु सहचरि^१ रसपरिमितमिह नगण गण्य,
हस्त सविरचय सखि^२ विकचकमलमुखि^३ तदनु च रुचिर कर्णम ।
विश्राम सुतनु^४ सुदति^५ नवरसरसशरपरिमित इह वोभूयात्
नागो जल्पति फणिपतिरतिशयमिति रतिकृतिधृतिरपवाह स्यात् ॥ ६०४ ॥

१ ख बाले । २ ख तनो । ३ ख यदा । ४ ख सरसा । ५ ख चातुरा । ६ ख सत्त्वात्मान ।

*टिप्पणी—१ छंद स्यात्सहलायुधटीकाया अ० ७ कारिकाया ३१ उदाहरणम् ।

यथा—

श्रीकृष्ण भवभयहरमभिमतफलकरणनिपुणतरमाराध्य,
लक्ष्मीश दलितदितिजभवजितपरमवनतमुनिवरससाध्यम् ।
सर्वज्ञ मरुडगमनमहिपतिकृतचिरशयनमनघ नय्य,
त वन्दे कनकवसनतनुरुचिजितजलदपटलमजित दिव्यम् ॥ ६०५ ॥

यथा वा, हस्तायुधे^१—

श्रीकण्ठ त्रिपुरदहनममृतकिरणशकलकलितशिरस रुद्र,
भूतेश हतमुनिभयमखिलभुवनमितचरणयुगमीशानम् ।
सर्वज्ञ वृषभगमनमहिपतिवृत्तबलयचिरकरमाराध्य,
त वन्दे भवभयनुदमभिमतफलवितरणगुरुमुमया युक्तम् ॥ ६०६ ॥

इति प्रत्युदाहरणम् ।

इति ऋषवाह २६३

२६४ अथ मागधी

अत्रैव वसुभगणानन्तर गुरुद्वयदानेन मागधीवृत्त भवति । तल्लक्षण यथा—

भगणाष्टकगुरुयुगला रसयुगवर्णा रसाग्निराशिकला ।
पद्मगपिङ्गलसपिता विज्ञेया मागधी सुधिया ॥ ६०७ ॥

यथा—

माधव विद्युदिय गगने तव सतनुते नवकाञ्चनरञ्जितवस्त्र,
नीरदवृत्तमिह गगनेऽपि च भावयति प्रसभ तव देहमहास्त्रम् ।
इन्द्रशरासनजालमिद तव वक्षसि भावयत^२ वनमालतिमाला,
मानय मे वचन कुरु सम्प्रति सुन्दर चैतसि भावयतामिह बालाम ॥ ६०८ ॥

इति मागधी २६४

इयमेव च द्वात्रिंशत्कलका मागधी सवया इत्युक्ता पूर्वखण्डे । अत्र तु गुरुद्वयमधिकमिति षड्त्रिंशत्कलेति, ततो भेद । वर्णप्रस्तारस्त्वान्च षड्विंशत्यक्षरनियम । *अतएव च जातिवृत्तसाकर्येण छन्दसन्दर्भवैचित्रीभावहृतीति सर्वत्र रहस्य चाकसीति छन्दशास्त्रेषु ।*

१ ख सतनुते । * चिह्ननगस्तोऽय पाठ क प्रती मास्ति ।

*टिप्पणी—१ छन्दशास्त्रहलायुषटीकायां अ० ७, कारिकाया ३२ उदाहरणम् ।

अथान्त्य सर्वलघु—

२६५ अथ कमलदलम्

सहचरि ! विकचकमलमुखि ! वसुमितसुनगणमिह विरचय,
तदनु सकलपदविशदसुरभिकुसुमपुगमपि परिकलय ।
रसपुगपरिमितपदगतलघुमनुकलय कमलदलमिति,
तदिह मनसि कुरु सुरुचिरगुणवति ! कथयति फणिपतिरपि ॥ ६०६ ॥

यथा—

कलुपशमन ! गरुडगमन ! कनकवसन ! कुसुमहसन ! [जय,
ललितमुकुट ! दलितशकट ! कलितलकुट ! रचितकपट ! जय !
कमलनयन !] * जलधिसनयन ! धरणिधरण ! मरणहरण ! जय,
सदयहृदय ! पठितसुनय ! विदितविनय ! रचितसमय ! जय ॥ ६१० ॥

इति कमलदलम् २६५.

* अत्रापि प्रस्तारगत्या रसलोचनवर्णस्य कोटिपट्टक एकसप्ततिलक्षाणि
वसुसहस्राणि चतुःपट्टचूलराणि अष्टौ शतानि च भेदाः ६७१०८८६४ तेषु
भेदपञ्चकमभिहित, शेषभेदा प्रस्तार्य गुरुपदेशत स्वच्छया नामानि आरचय्य
सूचनीया इति सर्वमवदात्तमिति । *

इति षड्विंशत्यक्षरम् ।

लक्तग्रन्थमुपसहरति*—

लक्ष्यलक्षणसमुक्त मया छन्दोऽत्र कीर्तितम् ।
अत्युदाहरणत्वेन ऋचित् प्राचामुदाहृतम् ॥ ६११ ॥
सुजातिप्रतिभायुक्त सालङ्कार स्फुरद्गुणम् ।
कुर्वन्तु सुधिय कण्ठे वृत्तमौक्तिकमुत्तमम् ॥ ६१२ ॥
सर्वगुर्वादिलङ्घनप्रस्तारस्त्वतिदुष्कर ।
इति विज्ञाय बाधन्तभेदकल्पनभोरितम् ॥ ६१३ ॥
पञ्चपट्टचधिक नेत्रशतक समुदीरितम् ।
स्यक्त्वा लक्षणमिश्राणि* वर्णवृत्तमिति स्फुटम् ॥ ६१४ ॥
ययामति यथाप्रज्ञमवधार्य मनीषिभि ।
शोधनीय प्रयत्नेन वद सन्तोऽग्रमञ्जलि ॥ ६१५ ॥

१ [-] कोष्ठगतोऽत्र क प्रती नारित ।

२ पठितचतुष्टय नास्ति क प्रती । ३ ल नास्ति पाठ । ४ ल वृत्ताणि ।

*टिप्पणी—१ सम्प्रत्येभेदा पञ्चमपरिधिष्टे पर्यालोच्य ।

अथ चेकाक्षरादिपङ्क्तिशत्यक्षरावधिप्रस्तारपिण्डसंख्या—

रसलोचनसप्ताद्वचन्द्रदृग्वेदवह्निभिः ।

आत्मना योजितैर्वागम्यता ज्ञेया भनीपिभिः ॥ ६१६ ॥

इत्यस्मत्पितृचरणप्रदीपित 'पिङ्गलप्रदीपभाष्य'* निर्दिष्टदिशा 'त्रयोदश कोटयो द्विचत्वारिंशल्लक्षाणि सप्तदशसहस्राणि पङ्क्तिशत्युत्तराणि सप्तशतानि च १३४२१७७२६ समस्तप्रस्तारस्य ।

पङ्क्तिशतःसप्तशतानि चैव तथा सहस्राण्यपि सप्तपञ्चितः ।

लक्षाणि दृग्वेदसुसम्मितानि कोट्यस्तथा रामनिशाकरैः स्युः ॥६१७॥

इति मनुपदिष्टपूर्वखण्डोक्तपिण्डसंख्या च सिंहावलोकनशालिभिरनुसन्धा-
तव्या इति सर्वमनवद्यम् ।

इति श्रीलक्ष्मीनाथभट्टात्मज-कविशेखरचन्द्रशेखरभट्टविरचिते

* श्रीयुत्तमोक्तके एकाक्षरादिपङ्क्तिशत्यक्षर-

प्रस्तारेष्व्याद्यन्तभेदसहितयुत्तमिरूपण-

प्रकरणं प्रथमम् ।

१ ल. युत्तमोक्तके पिङ्गलवाक्तिके एकाक्षरादिपङ्क्तिशत्यक्षरान्तप्रस्तारे ।

* टिप्पणी—१ लक्ष्मीनाथभट्टकृताया प्राकृतपिङ्गलवृत्तौ २११ पद्यस्य टीकायाम् ।

द्वितीयं प्रकीर्णक-प्रकरणम्

अथ प्रस्तारोत्तीर्णानि कतिचिद् वृत्तानि वर्णनियमरहिताग्यभिधीयन्ते । तत्र प्राचीनानां संग्रहकारिका—

१-४. अथ भुजङ्गविजुम्भितस्य चत्वारो भेदाः

वेदैः पिपीडिका स्यान्नवभिः करभश्चतुर्दशभिः ।

पणवमिदं तु शरैश्चेन्माला इह मध्यगैर्लघुभिरधिकैः ॥ १ ॥

इति भुजङ्गविजुम्भितभेदनिरूपणम् १-४.*

*टिप्पणी—१ प्र-पकारेण द्वितीयखण्डस्य द्वादशप्रकरणे विज्ञापितमिदं यदस्य द्वितीय-
खण्डस्य द्वितीयप्रकरणे पिपीडिका-पिपीलिकाकरभ - पिपीलिकापणव-
पिपीलिकामालाच्छन्दोसि लक्षणोदाहरणसहितानि निरूपितानि । परमत्र
चतुर्वृत्तानां लक्षणोदाहरणानि क्वचिदपि नैव दृश्यन्ते, केवलं एवम प्राचीन-
संग्रहकारिकैव समुपलभ्यन्ते । कारिकायाः पूर्वापरप्रसङ्गरहितत्वात् लक्षणा-
भ्यसि न प्रस्फुटीभवन्ति । अतः कनिकाससर्गस्य हेमचन्द्राचार्यप्रणीताच्छन्दोनु-
शासनादेवा चतुर्वृत्तानां लक्षणोदाहरणान्यथ प्रस्तूयन्ते । वृत्तान्येतानि
सन्ति पटुविशतयशरःसक-भुजङ्गविजुम्भितस्यैव भेदरूपाणि ।

“मातमीजभ्रा पिपीलिका जणैः ॥३८५॥

[व्या०] मध्य तगणो नगणचतुष्टयं जभरा । जलीरिति षष्टभिः पञ्चदशभिश्च यतिः ।

यथा—

निप्रत्यूहं पुण्यां लट्मीमविरतमभिसपति यदि रमयितुं गुणं च यदीच्छति,
स्यात् न्यायोग्मीलदुष्टे लघुभिरपि सह बहुभिरिह कुर मा विरोधपदं तदा ।

विस्तूर्जस्तूरारि श्रीडाकचित्तसकलमुगकुलमजगरं भुजङ्गममुग्धद,

सङ्क्रातं कृत्वा पञ्चैतां स्तपितपुपुषमनवधिरचितदजः षडन्ति पिपीलिका ॥३८५॥

एवं नीपरतः पञ्च दश-पञ्चदशलघुदाकभेदः करभः ॥३९॥ पणवः ॥४०॥

माता ॥४१॥—॥३८६॥

[व्या०] एवं पिपीलिका चतुर्ध्वरे नगणैश्च परतः पञ्चभिः, दशभिः, पञ्चदशभिश्च
लघुभिर्षुटा रोपणेषु तथैव स्थितेषु त्रयेण करमादयो भवन्ति । तेऽत्र पञ्चभिर्षुटा-
पिपीलिकाकरम । यथा—

५, अथ द्वितीयत्रयम्

प्रथमत इह कुरु सहचरि । दश-परममपि च भ
 कुरु शेपे गुरुयुग्म हस्तमुयुक्त,
 पुनरपि गुरुयुग-लघुयुग-गुरुयुगमपि कुरु,
 जल्पति नाग कृतराग पीतविभाग ।
 श्रुतिपदमिह सखि । सममिति विरचय शुभदति ।
 वेदहगुक्ता विरतौ मात्रा कुरु युक्ता,
 वसुरसशक्तिमितकलमिह कलय सकलपद—
 मङ्गदभङ्गी सुखरङ्गी सज्जनसङ्गी ॥ २ ॥

१ ल वरतनु ।

*टि०—कण्ठस्थेय दासी श्यामापरभूतयुवतिरपि
 मधुपरिचयकलविहतिनिसर्गकलध्वने,
 भ्रूवल्लीभङ्गे छेकाया हरिणनयनमधतुर-
 मतिललिततनु करभोरु वे सदृश दृश ॥ ३८६ ॥

वशाभिर्बुद्धापिपीलिकापणय । यथा—

रुदोऽमन्द कुन्दच्छाय शरदमलघनतुहिनविकच-
 कुमुदवनहरहसितसित शशाङ्ककरोञ्जल,
 तार पारावारापार स्थनजलमग्नतलसकल-
 भुवनपथधवलनपरिचित प्रसाधितदिङ्मुख ।
 लोकाभोकच्छेद गत्वा दृढकठिनविकटदिग्-
 धधितटघटनविवलनचलमितो विधुदयशङ्कय
 प्रोत्तुङ्ग श्वेतप्राकारो ज्वनितगुणपणव तव जयति
 नृपवर नवलनितबसतेजयत्त्रितयश्च ॥ ३८७ ॥

पञ्चदशभिर्बुद्धा पिपीलिकामाला । यथा—

उत्पुल्लाम्भोजश्यास्तस्या कुसुमशरसुभग तव विरहदव
 इह हि जयिनि समुपवरणविषये व्यघ्रायि सखीजनै,
 अङ्गे वास कर्पू रम्भस्तिमितशुचितुहिनकिरणकरपरि-
 भवचतुरधवलमकुचतटयुगे सुमीनितवदाम च ।
 रम्भागुल्म लीसामार मलयजरसकलितवसुधामभिनव-
 विकचकुमुदवनदलसमुदयेश्च तल्पककल्पना,
 नव्या मौलौ मल्लीमाला तदिदमलितमपि दवद्वतवहरहि-
 परिचितमहिम विरचयति मुहु प्रदाहमहाज्वरम् ॥ ३८८ ॥

[छन्दोगासनम् टि० ५०]

द्वकलधुदशकस्यान्ते भगण-मयुग-सगण-गुरुयुगलम् ।
लघुयुगलं गुरुयुगलं यदि घटित स्यात् त्रिभङ्गिकावृत्तम् ॥ ३ ॥

यथा-

स जयति हर इह बलयितविषधर तिलकितसुन्दरचन्द्रः
परमानन्दः सुखकन्दः ।
वृषभगमन डमरुधरण नयनदहन अनितातनुभङ्गः -
कृतरङ्गः सज्जनसङ्गः ।
जयति च हरिरिह करघृतगिरिवर विनिहृतकंसनरेशः
परमेशः कुञ्चितकेशः ।
गरुडगमन कलुषशमनचरणशरणजनमानसहंसः
सुवतंसः पालितवंशः ॥ ४ ॥

इति द्वितीयत्रिभङ्गी ५.

६. अथ शालूरम्

कर्णद्विजवरगणमिह रसपरिमितमत्तिमुरुचिरमनुकलय करं,
शालूरममलमिति विकचकमलमुखि ! सखि ! सहचरि ! परिकलय वरम् ।
नेत्रानलकलमिदमतिशयसहृदय विशदहृदय सुखरसजनकम् ।
नागाधिपकथितमस्त्रिविधजनमथितमगणितगुणगणकनकम् ॥ ५ ॥

यथा-

गोपीजनबलयित - मुनिगणसुमहितमुपचितदितिसुसमदहरणं ,
व्यर्थीकृतजलधर-करघृतगिरिवर-गतभय-निजजनसुखकरणम् ।
वृन्दावनविहरण - परपदवितरण - विहितविधिधरसरभसपरं ,
पीताम्बरधरमरणचरणकरमनुसर सखि ! सरसिजनयनवरम् ॥ ६ ॥

इति शालूरम् ६.

इति प्रकीर्णकं वृत्तमुक्तं सद्बृत्तमौक्तिके ।
प्रस्तारगत्या वृत्तानि क्षेपाण्युत्थानि पण्डितैः ॥ ७ ॥

इति प्रकीर्णक-प्रकरणं द्वितीयम् ।

तृतीयं दण्डक-प्रकरणम्

अथ दण्डका

तत्र यत्र पादे द्वौ नगणौ रगणाश्च सप्त भवन्ति स दण्डको नाम षड-
विंशत्यक्षरपादस्य वृत्तस्यानन्तर 'दण्डको नो र' [॥७।३३॥]^{१*} इति सूत्रकार
पाठात् सप्तविंशत्यक्षरत्वमेव युक्त दण्डकस्य । प्रथम तावदेकाक्षरश्रृङ्गादिवृत्तानां
मेकैकाक्षरवृद्ध्या प्रस्तारप्रवृत्तिरत ऊर्ध्वं पुनरेकैकरेफवृद्ध्या प्रस्तार ।
सल्लक्षण यथा—

१ अथ चण्डवृष्टिप्रपात

नगणयुगलादनन्तरमपि यदि रगणा भवन्ति सप्तैव ।

दण्डक एव निगदितश्चण्डकवृष्टिप्रपात इति ॥ १ ॥

यथा—

इह हि भवति दण्डकारण्यदेशे स्थिति पुण्यभाजा मुनीना मनोहारिणी,
त्रिदशविजयिकीयंदुष्प्रदृशग्रीवलक्ष्मीविरामेण रामेण ससेविते ।

जनकयजनभूमिसम्भूतसीमन्तिनीसीमसीतापदस्पर्शपूताश्रमे,

भुवननमितदिव्यपद्माभिधानाम्बिकातीर्थयात्रागतानेकसिद्धाकुले ॥ २ ॥

इति चण्डवृष्टिप्रपात १

२ अथ प्रचितक

'शेष प्रचितक' [७।३६]^{१*} इति सूत्रकारोक्तदिशा [चण्डवृष्टिप्रपातादूर्ध्व
अधिकैकरेफदानेन प्रस्तारे कृते दण्डक प्रचितक इति सज्ञा लभते । लक्षण,
यथा—

यदि ह न-द्वयानन्तरमपि रेफा स्युर्वमुप्रमिता ।

प्रचितक इति तत्सज्ञा कथिता श्रीनागराजेन ॥ ३ ॥

यथा—

प्रथमकथितदण्डक]^१ चण्डवृष्टिप्रपाताभिधानो मुने पिङ्गलाचार्यनाम्नो मत,
प्रचितक इतितत्पर^२ दण्डकानामपि जातिरेकैकरेफाभिवृद्ध्या यथेष्ट भवेत् ।
स्वरुचिरचितसज्ञया तद्विशेषैरशेषै पुन काव्यमन्येपि कुर्यन्तु वागीश्वरा,
भवति यदि समानसंख्याक्षरैस्तत्र पादव्यवस्था ततो दण्डक पूज्यतेऽसी जनै
इति प्रचितक ३. ॥ ४ ॥

१ [-] कोष्ठकात्तमसोऽक्षो नास्ति क प्रती । २ 'प्रचित इति तत् पर' इति हलामुधे ।

*टिप्पणी—१ छन्द शास्त्र ।

२ छन्द शास्त्र हलामुपटीका ।

३ अथ अर्णादयः

पितृचरणैरिह कथिताः प्रतिचरणविवृद्धिरेफा ये ।
दण्डकमेदाः पिङ्गलदीपे^१*अर्णादयः स्फुटतः ॥ ५ ॥
तत एव हि ते विमुर्धः विज्ञेया रेफवृद्धितः प्राज्ञैः ।
प्रस्तायं ते विधेया इत्युपदेशः कृतोऽस्माभिः ॥ ६ ॥

अथापि समानसख्याक्षर एव पादो भवतीति ध्येयम् । तन्नाणो यथा—
जय जय जगदीश विष्णो हरे राम दामोदर श्रीनिवासाच्युतानन्त नारायण,
त्रिदशगणगुरो मुरारे [मुकुन्दासुरारे]^१ हृषीकेश पीताम्बर श्रीपते माधव ।
गरुडगमन कृष्ण वैकुण्ठ गोविन्द विद्वन्महरोपेन्द्र चक्रायुधाघोक्षज श्रीनिधे,
बलिदमन नृसिंह क्षीरे भवाम्भोधिघोराणंसि त्व निमज्जन्त^२ मभ्युद्धरोपेत्य माम्^३

इत्युवाहरणम्^३

इत्यर्णादयो दण्डकाः ३.

४ अथ सर्वतोभद्रः

रसपरिमितलघुकान्ते यदि यगणा स्युर्मुनिप्रमिताः ।
दण्डक एव निगदितः पिङ्गलनागेन सर्वतोभद्रः ॥ ८ ॥

यथा—

जय जय यदुकुलाम्भोधिचन्द्र प्रभो वामुदेवाच्युतानन्तविष्णो मुरारे,
प्रबलदितिजकुलोद्दामदन्तावलस्तोमविद्रावणे केसरीन्द्रासुरारे ।
प्रणतजनपरितापोप्रदावानलच्छेदमेघोपनारायण श्रीनिवासा,
चरणनख[ज]सुधाशुच्छटोन्मेपनि शेषिताशेषविद्वान्धकारप्रकाश ॥ ९ ॥

एतस्यैव अन्यत्र प्रक्षितक इति नामान्तरम् ।

इति सर्वतोभद्रः ४.

१. [—] शीघ्रमर्तोऽपि नास्ति क. प्रती । २. ध्वस्तमज्जन्त । ३. क. इति प्रत्युवाहरणम् ।

*टिप्पणी—१. “अर्णादयः—प्रतिचरणविवृद्धिरेफाः स्फुरणैर्विभक्तजीमूतसोसाभरोद्दाम-

५. अथ अशोककुसुममञ्जरौ

रगण-जगण-क्रमेण हि रन्ध्रगणा यत्र लघ्वन्ताः ।

पिङ्गलनागनिगदिता ज्ञेया साऽशोककुसुममञ्जरिका ॥ १० ॥

यथा-

राधिके विलोक्याद्य केलिकाननं पिकावलीविरावराजितं मनोरमं च,
सुन्दराङ्गि चारुचम्पकसमावली-विराजिते विलोलहारमण्डितेऽपरं च ।^१
मद्वचः^२ शृणुष्व ते हितं च वच्मि हे सखि प्रमोदकारणं मनोविनोदनं च,
फुल्लनागकेसरादिपुष्परेणुभूषितं भजाद्य नन्दनन्दनं मनोहरं च ॥ ११ ॥

इति अशोककुसुममञ्जरौ ५.

६. अथ कुसुमस्तवकः

सखि ! यत्र रन्ध्र-सगणाः श्रुतिपदघटिता विराजन्ते ।

कुसुमस्तवकं दण्डकमाह तदा तं तु पिङ्गलो नागः ॥ १२ ॥

यथा-

सखि ! नन्दसुतं कमनीयकलाकलितं करुणावरुणालयमीशहर्षि,
रजनीशमुखं भवभीतिहरं नवनीतकरं भवसागरपारतरिम् ।
चपसारुचिरांशुकवलिघरं कमलावलिमालितमालि तमालरुचि,
भवमोक्षन-पङ्कजलोचनरोचनरोचितभालमहं शरणं कलये ॥ १३ ॥

इति कुसुमस्तवकः ६.

७. अथ मत्तमातङ्गः

यत्र स्वेच्छा घटिता भवन्ति विहगाः^३ सरोजाक्षि ! ।

पिङ्गलभुजगाधिपतिः कथयति तं मत्तमातङ्गम् ॥ १४ ॥

यथा-

यामुने संकते रासखेलामतं गोपिकामण्डलीमध्यगं वेणुवाद्येतरं,
मञ्जुगुञ्जावतंस जगन्मोहनं चारुहासश्रिया सञ्चितं कुन्तलेरञ्चितम् ।
दिव्यकेलीकलोत्लाससम्भावितं दासवृन्दापदुन्मूलकं कामनापूरकं,
कल्पवृक्षस्य मूले स्थितं चन्द्रिकोत्तसहाराञ्चितं चेतसा कृष्णचन्द्रं भजे ॥ १५ ॥

इति मत्तमातङ्गः ७.

८. अ अतङ्गशेखरः

जगण-रगण-क्रमेण च रन्ध्रगणा यत्र लघ्वन्ताः (गुर्वन्ताः) ।

फणिपतिपिङ्गलभणिताः* स ज्ञेयोऽतङ्गशेखरः कविभिः ॥ १६ ॥

यथा-

विलोलचारुकुण्डलः स्फुरत्सुगण्डमण्डलः सुलोलमोसिकुन्तल स्मरोल्लसत्,

नवीनमेघमण्डलीवपुविभासिताम्बरप्रभातडित्ममाश्रितः स्मितं दधत् ।

मयूरचारुचन्द्रिकाचयप्रपञ्चचुम्बितोल्लसत्किरीटमण्डितः समुच्छ्वसन्,

विलासिनोभुजावलीनिरुद्धबाहुमण्डलः करोतु वः कृतार्यतां जनानवन्* ॥ १७ ॥

इति अतङ्गशेखरः ८.

इति दण्डकाः

एवमन्येपि नकारद्वयानन्तरमनियतस्तकारैः दण्डकाः प्रबन्धेषु दृश्यन्ते । तेऽस्मा-
भिरपि यत्तत्त्वादेवोपेक्षिताः अन्यविस्तरमयाच्चेह न लक्षिता, इत्युपरम्भते** ।

इति श्रीवृत्तमोक्तिके[तृतीय]दण्डकप्रकरणम् ।

चतुर्थं अर्द्धं सम-प्रकरणम्

अथ अर्द्धसमवृत्तानि लक्ष्यन्ते—

चतुष्पद भवेत् पद्य द्विधा तच्च प्रकीर्तितम् ।

जातिवृत्तप्रभेदेन छन्द [शास्त्रविशारदं ॥ १ ॥

मात्राकृता भवेज्जातिवृत्त वर्णकृत मतम् ।

तच्चापि त्रिविधं प्रोक्तं समाद्धं^१ समकं तथा ॥ २ ॥

विषम चेति तस्यापि लक्ष्यते लक्षणं त्विह ।

चतुष्पदी समा यस्य तत्समं परिकीर्तितम् ॥ ३ ॥

यस्य स्यात् प्रथमं पादस्तृतीयेन समस्तथा ।

द्वितीयस्तु चतुर्थेन भवत्यर्द्धं समं हि तत् ॥ ४ ॥

यस्य पादचतुष्कं स्याद् भिन्नं लक्षणभेदतः ।

तदाहुर्विषमं वृत्तं छन्दःशास्त्रविशारदा ॥ ५ ॥

समं तत्र मया प्रोक्तमयार्द्धसममुच्यते ।

यथा श्रीनागराजेन भाषितं सूत्रवृत्तिभिः ॥ ६ ॥

तत्र प्रथम—

१. पुष्पिताग्रा

यदि रसलघुरेफतो यकारो, विषमपदे परिभाति पद्मगोक्षा^२ ।

समं इह चरणे च नो जजौ रो, गुरुरपि चेज्जयतीह पुष्पिताग्रा ॥ ७ ॥

यथा—

सहचरि ! कथयामि ते रहस्यं, न खलु कदाचन तद्गूहं व्रजेया^३ ।

इह विषमविषमा गिर सखीनां, सकपटचाटुतरां गुरस्सरन्ति ॥ ८ ॥

यथा वा—

प्रसरति पुरतः सरोजमाला, तदनु मदान्धमधुव्रतस्य पङ्क्तिः ।

तदनु धृतशरासनो मनोभू^४स्तव हरिणाक्षि विलोकनं तु पश्चात् ॥ ९ ॥

इति वा—

दिशि दिशि परिहासगूढगर्भा, पिशुनगिरो गुरुगञ्जनं च तादृक् ।

सहचरि ! हरये निवेदनीयं, भवदनुरोधवशादयं विपाकः । १० ॥

अथ च-

इह मनु विपम पुरा कृतार्ता, विलसति जन्तुषु कर्मणा विपाय ।

भव जनकतनया कथं रामजाया, न च रजनीचरसङ्गमापवाद ॥ ११ ॥

इत्यादि महाकविप्रबन्धेषु सततं प्रत्युदाहरणानि^१ ।

इति पुष्पिताया १.

२ अथ उपचित्रम्

विपमे यदि सौ सलगा प्रिये । भौ च समे भगगा सरमाश्चेत् ।

फणिना भणित गणित गणं वृत्तमिदं कथितं ह्युपचित्रम् ॥ १२ ॥

मया-

नवनीतकर कदणाकर, कासियगञ्जनमञ्जनवर्णम् ।

भवभोचन पङ्कजलोचन, चित्तं चेतसि हे सति । कृष्णम् ॥ १३ ॥

इति उपचित्रम् २

३ अथ वेगवती

विपमे यदि सावधानिर्गो, भवितुं समके गुग्गुलुम् ।

कविना फणिना भणितं व, वेदय चेतसि वेगवतीयम् ॥ १४ ॥

मया-

सति । नन्दमुत्तममनीय, मादववदधुरन्धरभीक्ष्णम् ।

सनकादिमुनीन्द्रविचिन्त्य, कृष्णगत परितोषय कृष्णम् ॥ १५ ॥

इति वेगवती ३

४ अथ हरिणप्लुता

विपमे यदि सौ सगणो लगी, सति । समे नगणे भमरा कृता ।

कविना फणिना पारजलिता, सुमुग्धि । सा गदिता हरिणप्लुता ॥ १६ ॥

मया-

नवनीरदयुत्तमनोहर^२, नवनीतपटलसुन्दर ।

मल्लिके तिलकीकृतचन्दनस्तव तनोतु मुदं मधुमूदन ॥ १७ ॥

इति हरिणप्लुता ४

५ अथ अपरवक्त्रम्

विपमे इह पदं तु नी रनी, गुग्गुलि चेट्टितं मुग्ध्यमे ।

समं इह चरणे नजी जरी, तदपरवक्त्रमिदं भवेन्न विम् ॥ १८ ॥

यथा—

स्फुटमधुरवचः प्रपञ्चनैः, कलितमिदं हृदयं तदैव ते ।

अलमलमधुना तवाननं, न खलु कदापि विलोकयाम्यहम् ॥ १६ ॥

यथा या, हर्षचरिते [प्रथमोच्छ्वासे]—

तरलयसि दृशं किमुत्सुका-मविरतवासविलासलालसे^१ ।

अवतर कलहसि बापिकां, पुनरपि यास्यसि पङ्कजालयम् ॥ २० ॥

इति प्रत्युदाहरणम् ।

इति अत्रवक्त्रम् ५.

६. अथ सुन्दरी

विपमे यदि सौ लगी लगी, समके स्मौ रलगा भवन्ति चेत् ।

घनपीनपयोधरे ! तदा, कथिता नागनुषेण सुन्दरी ॥ २१ ॥

यथा—

अयि मानिनि ! मानकारणं, ननु तस्मिन् विलोकयाम्यहम् ।

कुव सम्प्रति मे वचोऽमृत, प्रियगेहं ब्रज किं विडम्बनैः ॥ २२ ॥

यथा वा—

अथ तस्य विवाहकोतुकं, ललितं बिभ्रत एव पार्थिवः ।

वसुधामपि हस्तगामिनी-मकरोदिन्दुमतीमिवापराम् ॥ २३ ॥^{*१}

इति रघुवंशादिमहाकाव्येषु शतशः प्रत्युदाहरणानि^२ ।

इति सुन्दरी ६.

७. अथ भद्रविराट्

यस्मिन् विपमे तजौ रगौ चेद्, मः सो जः समके गुरू भवेताम् ।

तद्वै कथितं कवीन्द्रवर्यै—स्तज्जं भद्रविराडिति प्रसिद्धम् ॥ २४ ॥

यथा—

यद्देवैर्विरावमोहितास्ता, गोप्त्रः स्वं वसनं च न स्मरेयुः^३ ।

द्वार्यैव^४ निवारिता जनोघैर्ध्वर्षितव्ये कृतनिश्चया वभूवुः ॥ २५ ॥

इति भद्रविराट् ७

१. मरुतुप्रमानतशासलानिते 'हर्षचरिते' । २. ख. समुदाहरणानि । ३. ख. स्मरन्ति । ४. क. द्वाप्येव ।

* टिप्पणी—१ रघुवंश, स० ८, पद्य १

८ अथ केतुमती

विषमे सजौ सखि । सगौ चेद्, भ समके रनौ गुरुयुगाभ्याम् ।
मिलितौ यदैव भवतस्तौ, केतुमतीति सा भवति वृत्तम् ॥ २६ ॥

यथा-

यमुनाविहारकलनाभि, कालियमौलिरत्ननटनाभि ।
विदितो जनेन परमेश, केवलभक्तिस्तु भुवनेश ॥ २७ ॥

इति केतुमती ८.

९ अथ वाङ्मती

यद्ययुग्मयोः रजौ रजौ कृती च, जरौ जरौ च युग्मयोर्गसगती वा ।
हारशङ्खकक्रमैरयुग्मतश्च, सभानयोर्विषयंयेण वाङ्मतीयम् ॥ २८ ॥

यथा-

काञ्चनाभ-वाससोपलक्षितश्च, मयूरचन्द्रिकाधर्यैर्विराजितश्च ।
नन्दनन्दन पुनातु सन्तत च, मनोविनोदन प्रकामभासुरश्च ॥ २९ ॥
अत्र समयो पादयो पादान्तगुरुत्वमवधेयम् ।

इति वाङ्मती ९.

१० अथ पट्पदावली

वाङ्मत्येव हि सुकले, विपरीता भवति चेद् वाले ।
कथयति पिङ्गलनागस्ताभेता पट्पदावली रुचिराम् ॥ ३० ॥
ऊह्यमुदाहरणम् ।

इति पट्पदावली १०.

इत्यर्द्धसप्तमवृत्तानि कथिताभ्यत्र कानिचित् ।
सुधीभिरूहाभ्याग्यानि प्रस्तायं स्वमनीषया ॥ ३१ ॥

इति धीवृत्तमोक्तिके [चतुर्थ] अर्द्धसप्तमप्रकरणम् ।



पञ्चमं विषमवृत्त-प्रकरणम्

अथ विषमवृत्तानि

भिन्नचिह्नचतुष्पादमुद्दिष्ट विषम मया ।

अथेदानीं तदेवात्र सोदाहरणमुच्यते ॥ १ ॥

तत्र प्रथमम्—

१ उद्गता

सजसा लघु प्रथमतस्तु, नसजगुरुकाणि युग्मत ।

स्युस्तदनु भनभा गयुता, सजसा जगौ चरमतरपदोद्गता ॥ २ ॥

यथा—

विललास गोपरमणीषु, तरणितनयातटे हरि ।

वशमधरदले कलयन्, धनिताजनेन निभृत निरीक्षित ॥ ३ ॥

इति उद्गता १.

अथोद्गताभेद

सजसा लघु प्रथमतस्तु, नसजगुरुकाणि युग्मत ।

स्युस्तदनु भनलजा गयुता, सजसा जगौ च खलु तुर्यतो भवेत् ॥ ४ ॥

तृतीयचरणे वा स्याद् भेद समुपलभ्यते । ततो भारवि माघावौ उद्गते-

यमुदीरिता । यथा—

अथ वासवस्य वचनेन, रुचिरवदनस्त्रिलोचनम् ।

क्लान्तिरहितमभिराधयितु, विधिवत्तपासि विदधे धनञ्जय ॥ ५ ॥*

यथा वा, माघे*

तव धर्मराज इति नाम, सदसि यदपष्टु पठ्यते ।

भीमदिनमभिदधत्ययवा, भृशमप्रशस्तमपि भङ्गल जना ॥ ६ ॥

इति उद्गताभेद १.

२. अथ सौरभम्

प्रथम द्वितीयमथ तुर्य-मिह सममुशन्ति पण्डिता ।

सौरभ यदि तृतीयपदे, बिहगो नभौ गुरुरपीह दृश्यते ॥ ७ ॥

*टिप्पणी—१ किराताजुनीयम्, स० ११, पद्य १ ।

.. २ शिशुपालवधम्, स० १५, पद्य १७ ।

यथा-

यमुनातटे विहरतीह, सरसविपिने मनोहरे ।
रासकेलिरभसेन सदा, व्रजसुन्दरीजनमनोहरो हरि ॥ ८ ॥

इति सौरभम् २

३ अथ सलितम्

न-युग च हस्तयुगल च, सुमुखि । चरणे तृतीयके ।
भवति सुकविविदित ललित, कथित तदेव भुवने मनोहरम् ॥ ९ ॥

यथा-

व्रजसुन्दरोसहचरेण^१, मुदिनहृदयेन गीयते ।
मुललितमधुरतर हरिणा, कृष्णाकरेण सतत मुरारिणा ॥ १० ॥

इति ललितम् ३

४ अथ भाव

पद्मसङ्घाता हारा, पादेषु त्रिज्वेवम् ।
अन्ते कान्त यस्मिन्, म-त्रय-न-द्वितय^२ वद भावम् ॥ ११ ॥

यथा-

राधामाधायैना, चित्ते बाधा त्यक्त्वा ।
कल्पान्ते य श्रीडेत्, त किल चेतसि भावय नित्यम् ॥ १२ ॥

इति भाव ४

५ अथ वक्त्रम्

कदाचिद्वदंसमक, वक्त्र च विषम भवेत् ।
द्वयोस्तयोरुपान्तेषु, वृत्त सदधुनोच्यते ॥ १३ ॥

तत्र वक्त्रम्-

मुग्ध्या वक्त्र मणी स्यात्ता, सागराद् म^३स्त्वनुष्टुभिः ।
स्यात् सर्वगणैरेतत्, प्रसिद्ध तद्वलायुधे ॥ १४ ॥

यथा-

मुखाम्भोज सदा स्मेर, नेत्र नीलोत्पल फुल्लम् ।
गोपिकाना भुरारातेश्चेतोभृङ्ग जहारोच्चै ॥ १५ ॥

इति वक्त्रम् ५

६ अथ पथ्यावकत्रम्

अपि च—

युजोश्चतुर्थतो येन (जेन), पथ्यावकत्रं प्रकीर्तितम् ।
[एवमन्येऽपि भेदास्तु, विज्ञेया गणभेदतः ॥ १६ ॥]*

पथा—

रासकेलिसत्पणस्य, कृष्णस्य मधुवासरे ।
आसीद् गोपमृगाक्षीणा, पथ्यावकत्रं मधुश्रुतिः ॥ १७ ॥
इति पथ्यावकत्रम् ६.

एवमन्याग्नयपि गणविभेदात् ज्ञेयानि वक्त्रवृत्तानि ।

अथवा—

पञ्चम लघु सर्वत्र सप्तम द्विचतुर्थयो ।
गुरुपष्ठ तु पादाना शेषेष्वनियमो मतः ॥ १८ ॥
अतः श्रीकालिदासश्च स्वप्रबन्धे समुज्जगौ ।
तथान्येऽपि कवीन्द्राश्च स्वनिबन्धे यवन्धिरे ॥ १९ ॥

अथा—

वागर्थाविव सम्पृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये ।
जगतः पितरो बन्धे, पार्वतीपरमेश्वरी ॥ २० ॥**

किञ्च—

प्रयोगे प्रायिक प्राहुः वेप्येतद् वक्त्रलक्षणम् ।
लोकेऽनुष्टुबिति स्यातिस्तस्याष्टाक्षरता कृता ॥ २१ ॥
तथा नानापुराणेषु नानागणविभेदतः ।
वृत्तमष्टाक्षर वक्त्र, विपमाख्या प्रयाति हि ॥ २२ ॥
एव तु विपम वृत्त दिङ्मात्रमिह कीर्तितम् ।
शेषमाकरतो ज्ञेय, सुधीभिर्भावनापरैः ॥ २३ ॥
पदचतुरुर्द्ध्व वृत्त मात्रासमकमेव च ।
उपस्थितप्रचुपित-मथान्यदपि वृत्तकम् ॥ २४ ॥
हृत्पथ्ये प्रसिद्धत्वादत्र [नारद]योगिन ।
तदग्रन्थगौरवभोत्या च भयका न प्रपञ्चितम्** ॥ २५ ॥

इति श्रीवृत्तमोहितके भातिके द्वितीये वृत्तपरिच्छेदे

विपमवृत्तप्रकरण पञ्चमम् ।

[—] कोष्ठवर्त्यंशो नास्ति क प्रती ।

*टिप्पणी—१ रघुवश, स० १, प० १

**टिप्पणी—२ पदचतुरुर्द्ध्वर्वादिवृत्तानां लक्षणानि श्रीहलायुधरचित-ध्वन्द्व सूत्रटीकानुसारेण
संक्षेपेणोद्घ्रियन्ते—

पदचबुद्धवम्—प्रथमचरणे अष्टौ वर्णा द्वितीयचरणे द्वादशाक्षरवर्णा, तृतीयचरणे पौष्ट्य वर्णा, चतुर्थचरणे च विंशतिवर्णा भवति । अस्मिन् वृत्ते गुरुलघुनियमो नास्ति ।

आषीड — [प्रच] लघु ६, गुरु २ । [द्विच] लघु १०, गुरु २ ।

[तृच] लघु १४, गुरु २ । [चच] लघु १८, गुरु २ ।

प्रत्याषीड — [प्रच] गुरु २, लघु ६ । [द्विच] गुरु २, लघु १० ।

[तृच] गुरु २, लघु १४ । [चच] गुरु २, लघु १८ ।

प्रत्याषीड — [प्रच] ग २, ल ४, ग २ । [द्विच] ग २ ल ८, ग २ ।

[तृच] ग २ ल १२ ग २ । [चच] ग २, ल १६, ग २ ।

मञ्जरी— [प्रच] १२ वर्णा । [द्विच] ८ वर्णा ।

[तृच] १६ वर्णा । [चच] २० वर्णा ।

लवली— [प्रच] १६ वर्णा । [द्विच] १२ वर्णा ।

[तृच] ८ वर्णा । [चच] २० वर्णा ।

अमृतधारा — [प्रच] २० वर्णा । [द्विच] १६ वर्णा ।

[तृच] १२ वर्णा । [चच] ८ वर्णा ।

उपस्थितप्रचुपितम्— [प्रच] म स ज भ ग ग । [द्विच] स न ज र ग

[तृच] न न स [चच] न न न ज य

वद्धमानम्— [प्रच.] म स ज भ ग ग [द्विच] स न ज र ग

[तृच] न न स न न स [चच] न न न ज य

शुद्धविराटवृत्तम्— [प्रच] म स ज भ ग ग [द्विच.] स न ज र ग

[तृच] स ज र [चच] न न न ज य



पष्ठं वैतालीय-प्रकरणम्

१. अथ वैतालीयम्

विपमे रसस्यकाः कलाः, समकेऽष्टौ न कलाः पृथक्कृताः ।

न समात्र पराथया कला, वैतालीयेऽस्थे र-दण्ड-गाः ॥ १ ॥

विपमे रसमात्रा. स्युः समे चाष्टौ कलास्तथा ।

वैतालीयं भवेद् वृत्तं तयोरन्ते रलौ गुरुः ॥ २ ॥

यथा-

तव तन्त्रि ! कटाक्षवीक्षितैः, प्रचरद्भिः श्रवणान्तगोचरैः ।

विशिखैरिव तीक्ष्णकोटिभिः, प्रहृतः प्राणिति दुष्करं नरः ॥ ३ ॥

अस्य च भूयासि सप्रपञ्चमुदाहरणप्रत्युदाहरणानि पिङ्गलवृत्तौ सन्ति,
तानि तत एवावधेयानि । [नैपथकाख्ये च द्वितीये सर्गे सन्ति तानि तत एवावधेयानि]

इति वैतालीयम् १.

२. अथ श्रीपञ्चदशकम्

तत्रैवान्तेऽधिके गुरौ स्याद्दौपञ्चदशकं कवीन्द्रहृद्यम् ।

फणिभाषितमुत्तम रसालं, पठनीयं कविपण्डितैरुदारैः ॥ ४ ॥

यथा-

परमर्मनिरीक्षणानुरक्तं, स्वयमत्यन्तनिगूढचित्तवृत्तिम् ।

अनवस्थितमर्थलुब्धमाराद्, विपरीतं विजहीहि मित्रमेवम् ॥ ५ ॥

इति श्रीपञ्चदशकं वैतालीयम् २.

३. अथ आपातलिका

आपातलिका कथितेयं, भाद् गुरुकावथ पूर्ववदन्यत् ॥ ६ ॥

यथा-

पिङ्गलकेशी कपिलाक्षी, वाचा या विकटोन्नतदन्ती ।

आपातलिका पुनरेषा, नृपतिकुलेऽपि न भाग्यमुपैति ॥ ७ ॥

इति आपातलिका १.

४. अथ नलिनम्

विषमपदैः रयान्नलिनाख्यम् ॥ ८ ॥

[ध्या०] विषमरेव चतुभिरापातलिकापदैर्नलिनस्य वंतालीयमित्यर्थः ।

यथा-

कुञ्चितकेशी नलिनाक्षी, स्थूलनितम्बा रुचिकान्ता ।
पद्मसुहस्ता रुचिरोष्ठी, गोप्ठीरसिका परिणया ॥ ६ ॥

इति नलिनास्य वंतालीयम्

५. अथापर नलिनम्

समचरणैरपि चाग्यदुदीते ॥ १० ॥

[ध्या०] समरेव चतुभिरापातलिकापादैरपर नलिन भवतीत्यर्थः ।

यथा-

पङ्कजलोचनमम्बुददेह, बालविनोद-सुमन्दितगेहम् ।
पद्मजशम्भुद्वस्तुतिमीश, चिन्तय कृष्णमपारमनीयम् ॥ ११ ॥

इति अपर नलिनस्य वंतालीयम् ५

६ अथ दक्षिणान्तिका वंतालीयम्

द्वितीयलस्यान्त्ययोगत, पदेषु सा स्याद् दक्षिणान्तिका ॥ १२ ॥

[ध्या०] द्वितीयलघोरन्त्येन-तृतीयेन योगतश्चतुर्व पादेषु यत्र सा दक्षिणान्तिका इत्यर्थः ।

अतएव शुद्धवंतालीयस्य विषमपदैर्दक्षिणान्तिका, समपदैरुत्तरान्तिका इति क्षम्भुरप्याह ।

यथा-

वक्षो भरुदक्षिणान्तिको, वियोगिनीप्राणहारक ।
प्रकम्पिताशोकचम्पको, वसन्तजोऽनङ्गबोधक ॥ १३ ॥

यथा वा, भसप्रत्युदाहरणम्^१—

नमोऽस्तु ते रुचिमणीपते, जगत्पते श्रीपते हरे ।
भवाम्बुधेरतारयाशु मा, विधेहि सन्मति शुभाम् ॥ १४ ॥

इति दक्षिणान्तिका वंतालीयम् ६

७ अथ उत्तरान्तिका वंतालीयम्

शुद्धवंतालीयस्य समपदैरुत्तरान्तिका ॥ १५ ॥

यथा-

सहसा सादितकसम्पति, घृतगोवर्द्धनशेसमुद्धुरम् ।
समुनाकुञ्जविहारिण हरि, यदुवीर कलयाम्यहर्निशम् ॥ १६ ॥

इति उत्तरान्तिका वंतालीयम् ७

८ अथ प्राच्यवृत्ति

तुर्यस्य तु शेषयोगत, प्राच्यवृत्तिरिह युग्मपादयो ॥ १७ ॥

[४५०] [चतुर्थलकारस्य शयन-पञ्चमेन योगत प्राच्यवृत्तिर्नाम वेतालीयं पुनःपादयो-
समपादयोरित्यय ॥]^१

यथा- हलायुधे—^{*१}

विपुलार्थमुवाचकाक्षरा, कस्य नाम न हरन्ति मानसम् ।

रसभावविशेषपेशला प्राच्यवृत्ति कविकाव्यसम्पद ॥ १८ ॥

यथा वा, सुहृणे—

स्वगुणैरनुरञ्जितप्रज, प्राच्यवृत्तिपरिपालने रत ।

रणभूमिषु भीमविक्रमो, विन्ध्यवर्मनूपतिर्जयत्यसौ ॥ १९ ॥

यथा वा, मम^१ प्रत्युदाहरणम्—

कति सन्ति न गोपबालका, कामकेलिकलनामुकोविदा ।

अयि माधव ! एव केवल, चेतना ननु^२ परिक्षिणोति मे ॥ २० ॥

इति प्राच्यवृत्तिर्नाम वेतालीयम् ८

६ अथ उदीच्यवृत्तिर्वेतालीयम्

उदीच्यवृत्तिस्त्वयुगमयो, भवति तृतीयस्याद्ययोगत ॥ २१ ॥

[४५०] अयुगमयो—अथमर्तुतीययो पादयो तृतीयस्य लघोराद्येन—द्वितीयेन योपाठु-
दीच्यवृत्तिर्नाम वेतालीयम् । यथा—

यथा- हलायुधे^{*२}

अवाचकमनूजिताक्षर, श्रुतिदुष्ट श्रुतिकष्टमरुमम् ।

प्रसादरहित च नेष्यते, कविभि काव्यमुदीच्यवृत्तिभि ॥ २२ ॥

यथा वा, ममापि उदाहरणम्—

अवञ्चकमनिन्दित पर, परमेश परमार्थपेशलम् ।

अनाकलितवैभव विभ, जगता बन्धमनारत भजे ॥ २३ ॥

इति उदीच्यवृत्तिर्वेतालीयम् ६

१० अथ प्रवृत्तक वेतालीयम्

प्रवृत्तक पद्भिरेतयो ॥ २४ ॥

[४५०] उदीच्यवृत्ति-प्राच्यवृत्तयोर्गुणप्रवृत्तयो पदे प्रवृत्तक, युक्पादे पञ्चमन पूर्व
सम्युच्यते अयुक्पादे तृतीयेन पूर्वमित्यय ।

१ [—]कोष्ठमाश्रित्य स्थान 'समयोरित्यर्थ' इत्यश एवास्ति क प्रती ।

१ स भर्मवोदाहरणम् । २ स न तु ।

*टिप्पणी—१ छंद शास्त्र हलायुधटीका अ० ४ का० ३७ उदाहरणम्

२ ,, ,, ,, ३ ,, ३८ ,,

यथा, हलायुधे^१—

जयो भरतवशस्य^२, श्रूयता श्रुतमनोरसायनम् ।

पवित्रमधिक शुभोदय, व्यासवक्त्रकथित प्रवृत्तकम् ॥ २५ ॥

यथा वा, मम प्रत्युदाहरणम्—

हरिं भजत रे जना पर, श्रूयता परमधर्ममुत्तमम् ।

न काल इह कालयत्यसौ, सर्वधस्मरघनाधनद्युति^३ ॥ २६ ॥

इति प्रवृत्तक धैतालीयम् १०

११ अथ अपरान्तिका

अस्य युग्मरचिताऽपरान्तिका ॥ २७ ॥

[ध्या] अस्य-प्रवृत्तकस्य समरचकृता-समपादलक्षणयुक्तैश्चतुर्भिः पादै रचिताऽपरान्तिका ।

यथा, हलायुधे^४—

स्थिरविलासनतमोतिपेशला^५, [वमलकोमला]^६ङ्गी मृगेशणा ।

हरति कस्य हृदय न कामिन, सुरतकेलिकुशलाऽपरान्तिका ॥ २८ ॥

यथा वा, सुल्हसे—

तुङ्गपीधरघनस्तनालसा, चारुकुण्डलवती मृगेशणा ।

पूर्णचन्द्रवदनाऽपरान्तिका, चित्तमुन्मदयतीयमङ्गना ॥ २९ ॥

यथा वा, मम प्रत्युदाहरणम्—

चारुकुण्डलयुगेन मण्डितो, बहिर्बहकृतमौलिशेखर ।

भूत भी वनसपिप्पलादयो, नन्दसुनुरिह नावलोकित ॥ ३० ॥

इति अपरान्तिका ११

१२ अथ चारुहासिनी

अयुक्कृता चारुहासिनी ॥ ३१ ॥

[ध्या०] प्रवृत्तकस्यैव धियमपादलक्षणयुक्तैश्चतुर्भिः पादैर्विरचिता चारुहासिनी नाम धैतालीयम् । किं तल्लक्षणम् ? चतुर्दशभास्व तृतीयेन च द्वितीययोगः ।

१ इदं भरतभूभूताम् । २ ख युति । ३ कावसी 'हलायुधे' । ४. कोष्ठगतोऽसौ नास्ति क प्रती ।

*टिप्पणी—१ छन्द शास्त्रहलायुधटीका अ० ४, वा ३६ उदाहरणम् ।

२ . " " " " ४१ उदाहरणम् ।

यथा, हलायुध* १—

मनाक्प्रसूतदन्तदीधिति, स्मरोल्लसितगण्डमण्डला ।

कटाक्षललिता च कामिनी, मनो हरति चारुहासिनी ॥ ३२ ॥

यथा वा, घृत्तरत्नाकरटीकाया सुल्हणः प्रोवाच—

न कस्य चेत समन्मय, करोति सा सुन्दराकृति ।

विचित्रशक्त्योक्तिपण्डिता, विलासिनी चारुहासिनी ॥ ३३ ॥

यथा वा, मम प्रत्युदाहरणम्—

सुवृत्तमुक्तावलीघर, प्रतप्तचामीकराम्बरम् ।

मयूरपिच्छैर्विराजित, नमाम्यह नन्दनन्दनम् ॥ ३४ ॥

इति चारुहासिनी वंतालीयकम् १२

इति भोवृत्तमौक्तिके वंतालीयप्रकरणं पठम् ।



*टिप्पणी—१ छन्दशास्त्रहलायुधटीकाया अ० ४, कारिकाया ४० उदाहरणम्

सप्तमं यतिनिरूपण—प्रकरणम्

अथाभिधीयते चात्र यतिविच्छेदसंज्ञिता ।
 विरामघृतिविश्रामावसानपदरूपिणी ॥ १ ॥
 समुद्रेन्द्रियभूतेन्द्ररसपक्षदिगादय ।
 साकाक्षत्वादिभे शब्दा यस्या सम्बन्धमात्रिता ॥ २ ॥
 तस्यास्तु लक्षण सम्यगुच्यते वृत्तमौचितिके ।
 आलोच्य मूलशास्त्राणि सोदाहरणमञ्जसा ॥ ३ ॥
 यति सर्वत्र पादान्ते श्लोकस्याद्धं विशेषत ।
 समुद्रादिपदान्ते च व्यक्ताव्यक्तविभक्तिके ॥ ४ ॥
 ष्वचित्तु पदमध्येऽपि समुद्रादौ तथैव च ।
 अत्र पूर्वपरौ भागौ न स्यातामेकवर्णकौ ॥ ५ ॥
 पूर्वान्तवत् स्वर सन्धौ ष्वचिदेव परादिवत् ।
 द्रष्टव्यो यतिचिन्ताया यणादेश परादिवत् ॥ ६ ॥
 नित्य प्राक्पदसम्बन्धाश्चादय प्राक्पदान्तवत् ।
 परेण नित्यसम्बन्धा प्रादयश्च परादिवत् ॥ ७ ॥

‘यति सर्वत्रपादात्’ इत्यादि कारिकास्तुष्टय यथास्थान व्याकरिष्याम । तत्र—यति सर्वत्र
 सर्वज्ञत्तयु इत्ययं, पादात् एव भवति । यथा—

[मिश्रद्विज्ञानदेहाय, शिवाय गुरवे नमः । इत्यादि ।
 तस्यैव प्रत्युदाहरणं यथा]^१—

नमस्तस्मै महादेवाय शशाङ्काद्धर्ममौलये । इति ।

श्लोकस्याद्धं विदोषत इत्यत्र सन्धिरूपान्तात् । स्पष्टविभक्तिकत्वं च विज्ञायतो यत्र
 भवति । तदयथा—

नमस्यामि सदोदभूतमिन्धनीभूतमन्मयम् ।

ईश्वराय पर ज्योतिरज्ञानतिमिरापहम् ॥

अत्रद्वरनित्यस्य भकारेण लयोगो न कर्तव्यः । समाप्ते तस्यैव प्रत्युदाहरणं । यथा—

सुरासुरशिरोरत्नस्फुरत्किरणमञ्जरी—

पिञ्जरीवृत्तपादाब्जद्वन्द्वं वन्दामहे शिवम् ॥ इति ।

‘समुद्रादिपदान्ते च व्यक्ताव्यक्तविभक्तिके ।’ तत्र स्पष्टतन्त्रव्यक्तविभक्तिकः मनासात्तभूत
 मध्यस्तविभक्तिकम् । यथा—

यक्षश्चक्रे जनकतनयास्नानपुण्योदकेषु । इत्यादि

वपश्चात्पश्यतविभक्तिक इति । यतिः सर्वत्रपादान्ते इत्यनेन सम्बध्यते ।

यथा—

वशीकृतजगत्कालं कण्ठेकालं नमाम्यहम् ।

महाकाल कलाशेषं शशिलेखाशिखामणिम् ॥

अपि च—

नमस्तुङ्गशिरश्चुम्बिचन्द्रचामरचारवे ।

त्रैलोक्यनगरारम्भमूलस्तम्भाय शम्भवे ॥

क्वचित्तु पदमध्येऽपि समुद्रादौ यतिर्भवेत् ।

यदि पूर्वापरौ भागौ न स्यातामेकवर्णकौ ॥ ५ ॥

इति । चतुरक्षरा यतिर्भवति । यथा—

पर्याप्त तप्तचामीकरकटकट्टे श्लिष्टशीतेतराशौ ।

इत्यादि । यथा वा—

जग्मीलनीलपङ्केरुहचिररुचो देवदेवस्य विष्णोः ।

इत्यादि । तथा—

कूजत्कोयष्टिकोलाहलमुखरभुवः प्रान्तकूलान्तदेशाः ।

इत्यादि । तथा—

वैरिञ्चाना^१ तयोन्चारितरुचिरश्चूर्णां चाननानां चतुर्णाम् ।

इत्यादि ।

समुद्रादौ इति किम् ? पादमध्येऽपि यतिः । पदान्ते तु भाऽभूत् । तद्वया—

प्रणमत भवबन्धवनेशनाशाय नारा-

यणचरणसरोजद्वन्द्वमानन्दहेतुम् ।

इत्यादि ।

पूर्वोत्तरभागयोरकाराक्षरत्वे तु पदमध्ये यतिर्दृश्यति ।

यथा—

एतस्या गण्डमण्डल-ममलं गाहते चन्द्रकक्षाम्^२ ।

इत्यादि । यथा—

एतस्या राजति मुखमिद पूर्णचन्द्रप्रकाशम् ।

इत्यादि । तथा—

सुरासुरशिरोनिघृष्टचरणारविन्दः शिवः ।

इत्यादि

पूयन्तिवत् स्वरः सन्धौ षष्चिदेव पराविवत् । अस्याप्यर्थः—योऽयं पूर्वपरयोरेकादेशः स्वरः सन्धौ विधीयते । ॥ षष्चिद् पूर्वस्यान्तवद् भवति, षष्चिद् परस्यादिवद् भवति । तथा च पाणिनिः स्मरति—‘अन्तादिवच्च’ [पा०सू० ६।१।८५] इति । तत्र पूर्वा-तवद्भावे यथा स्यात् । यथा—

स्यादस्थानोपगतयमुनासङ्गमे चाभिरामा^१ ।

इत्यादि । तथा—

जम्भारातीभकुम्भोद्भवमिव दधत् । सान्द्रसिन्दूररेणुम् ।

इत्यादि । तथा—

दिवकालाद्यनवच्छिन्नानन्तचिन्मात्रमूर्त्तये ।

स्वानुभूत्येकमानाय नमः शान्ताय तेजसे ॥

इत्यादि ।

परादिवद्भावे यथा—

स्कन्धं विन्ध्याद्रिमूर्द्धां निकपति [महिषस्याहितोज्जनहारीत् ।

इत्यादि । तथा—

धूलं धूलं तु गाढं प्रहरं हरं हृषीकेश]^२ केशोऽपि वदन्—

इच्छन्नेनाऽकारि किं ते ।

इत्यादि ।

अत्र हि स्वरूपस्य परादिवद्भावे व्यञ्जनमपि तदमवृत्तत्वात् तथादिवद् भवति ।

‘यदि पूर्वापरी भागौ ॥ स्यातामेकवर्णकौ’ इत्यन्तादिवद्भावे विधावपि सम्भवति । तेन—

अस्या वक्त्राब्जमवजितपूर्णैन्दुशोभं विभाति ।

इत्येवविधा यति[नं]भवति । यथा वा स्वरः सन्धौ—

राकाचन्द्रादधिकमबलावक्त्रचन्द्रं विभाति ।

तथा शेषेऽपि, यथा—

रामातरुणिमोद्गमान्द्गरङ्गप्रसङ्गिनी ।

इत्यादि^३ उन्नेयम् । ‘यथादेशं परादिवत्’ भवतीति शेषः । यथा—

विततजलतुपारास्वादुशुभ्राशुपूर्णा-

स्वविरलपदमाला द्यामलामुल्लिखन्तः ।

इत्यादि ।

‘नित्यं प्राक्पदसम्बन्धादच्चादयः प्राक्पदान्तयत् ।’ तेभ्यः पूर्वा यतिनं कर्त्तव्या इत्यर्थः ।

यथा

स्वादु स्वच्छ सलिलमपि च प्रीतये कस्य न स्यात् ।

इत्यादि ।

नित्य प्राग्पदसम्बन्धा इति किम् ? अन्येषां पूर्वपदान्तवद्भाषो माऽभूत् । तद्यथा—
मन्दायन्ते न खलु सुहृदामभ्युपेतार्थकृत्या ।

इत्यादि ।

‘परेण नित्यसम्बन्धे प्राग्पदेषु परादिबत् ।’ तेभ्यः परा यतिर्न भवतीत्यर्थः । तद्यथा—
दुःखं मे प्रक्षिपति हृदये दुस्सहस्तद्वियोगः ।

इत्यादि ।

‘परेण नित्यसम्बन्धा’ इत्यादि किम् ? कर्मप्रवचनीयसज्ञकेभ्यः प्राविभ्य परापि यतिर्यथा
स्यादिति । तच्च यथा—

प्रियं प्रति स्फुरत्पादे मन्दायन्ते न खल्विति ।

श्रेयासि बहुविघ्नानि भवन्ति महतामपि ।

इत्यादि ।

अथ तु चादीनां प्रादीनां चैकाक्षराणामनेकाक्षराणां वा पादाति यतावादिबद्भाष इष्यते,
न तु अनेकाक्षराणां पादमध्ये यती । तत्र हि पदमध्येषि च चामीकरादिष्विव यतैरभ्यनुज्ञा-
तत्वात् । तत्र चादीनां यथा—

प्रत्यादेशादपि च मधुनो विस्मृतभ्रूविलासम् ।

इत्यादि ।

प्रादीनामपि, यथा—

दूरारूढं प्रमोदं हसितमिव तथा दूष्टभारात् सखीभिः ।

इत्यादि ।

एव माधुर्यसपत्तिनिमित्तं यतिवन्धनम्^१ ।

न विना यतिसौन्दर्यं काव्यं भव्यतरं भवेत् ॥ ८ ॥

भरतादिमुनीन्द्रैरप्येवमेवाभिधीयते ।

तथाऽप्येपि कवीन्द्रास्तु यतिं बध्नन्त्यनुत्तमाम् ॥ ९ ॥

अन्यैरप्युक्तम्—

एव यथा यथोद्वेगं सुधिया नोपजायते ।

तथा तथा मधुरतानिमित्तं यतिरिष्यते ॥ १० ॥

इति । किञ्च—

पिङ्गले जयदेवश्च सस्कृते यतिमिच्छति ।

श्वेतमाण्डव्य^२मुख्यैस्तु मुनिभिर्नानुमन्यते ॥ ११ ॥

तेन सत्कृते यतिरक्षायां गुण । यतिभङ्गेन दोषोऽपीति तेषामाशयः ।

अतएव मुरारिः*—

याच्ञादैत्यपराञ्चि यस्य कलहायन्ते मियस्त्व वृणु,
त्व वृण्वित्यभितो मुखानि स दशग्रीवः कथं वण्यताम् ॥

इत्यादि ।

जयदेवोऽपि**—

भोव शृङ्गारसारस्वतमयजयदेवस्य विष्वग् वचांसि ।

इति । एवमन्येऽपि—

कोष्ठीकृत्य जगद्धनं कति वराटोभिर्मुदं यास्यति ।

इत्यादि, महाकवीनां ह्येवसाधिति दिक् । अपि च—

*यतिभङ्गो नामधातुभागभेदे भवेद् यथा ।

पुनातु नरकारिश्चक्रभूषितकराम्बुजः ॥ १२ ॥

दिविपद्बृन्दवन्द्यं वन्दे गोविन्दपदद्वयम् ।

स्वरसन्धौ तु न श्रीशोऽस्तु भूत्यै भवतो यथा ॥ १३ ॥

न स्याद्विभक्तिभेदे भात्येष राजेति कुत्रचित् ।

वचचित्तु स्याद् यथा देवाय नमश्चन्द्रमौलये ॥ १४ ॥

चादयो न प्रयोक्तव्या विच्छेदात् परतो यथा ।

नमः कृष्णाय देवाय च दानवविनाशिने ॥ १५ ॥

*टिप्पणी—१ 'सत्पुष्टे तिसृणां पुरामपि रिपो कण्ठलदोर्मण्डली-

श्रीहावृतपुनः प्रकृष्टशिरसो धीरस्य निम्बोर्वरम् ।

याच्ञादैत्यपराञ्चि यस्य कलहायन्ते मियस्त्व वृणु,

त्वा वृण्वित्यभितो मुखानि स दशग्रीवः कथं वण्यताम् ॥

[मुरारिकृतं मनधराधनम् अंक-३, पं० ४१]

२ 'साव्वी माव्वीकचिन्ता न भवति भवतः शर्करे कर्कशादि,

द्रास्ते द्रवयन्ति के त्वाममृतमृतमसि क्षीरनीर रसस्ते ।

मात्रन्द क्रन्द कान्ताधर धर न तुलां गच्छ यच्छन्ति भाव,

यावच्छृङ्गारसारं शुभमिव जयदेवस्य वैदग्ध्यवाचः ॥

[जयदेवकृत-गीतगोविन्द-सं० १२, पं० १२]

३ देवेश्वरकृत-कविकल्पलतायां सन्दस्तवकच्छ-दोऽभ्यासप्रकरणे ।

एकस्वरोपसर्गेण विच्छेदः श्रुतिसौख्यहृत्^१ ।

यथा पिनाकपाणिं प्रणमामि स्मरशाशनम् ॥ १६ ॥

इत्यादि, कविकल्पलतायां वाग्भटनन्दनेन देवेश्वरेणाभ्यधायि ।

छन्दोमञ्जर्या^२ तु—

यतिर्जित्वेष्टविधामस्यान कविभिरुच्यते ।

सा विच्छेदविरामाद्यैः पदैर्वाच्या निजेच्छया ॥ १७ ॥

इति सामान्यलक्षणमुक्तम् । किञ्च—

क्वचिच्छन्दस्यास्ते यतिरभिहिता पूर्वकृतिभिः,

पदान्ते सा शोभां न्नजति पदमध्ये त्यजति च ।

पुनस्तत्रैवासी स्वरविहितसन्धिः श्रयति तां,

यथा कृष्णः पुष्पात्त्वतुलमहिमा मां करुणया ॥ १८ ॥

इति छन्दोगोविन्दे^३ गङ्गादासेनाप्युक्तमित्युपरम्यते । इति सर्वमङ्गलम् ।

इति श्रीवृत्तमौक्तिके वार्तिके द्वितीयपरिच्छेदे

यतिनिरूपण-प्रकरणं सप्तमम् ।

१. क. ख. सौख्यहृत् ।

*टिप्पणी—१. छन्दोमञ्जरी, प्रथमस्तवक, प० १२, १३ ।

२. 'गोविन्दे' इत्यस्य स्थाने 'मञ्जरी' इति पाठ एव समीचीनोऽस्ति गङ्गादास-
कर्तृत्वात् ।

अष्टमं गद्यनिरूपणम्—प्रकरणम्

अथ गद्यानि

वाङ्मय द्विविधं प्रोक्तं पद्यं गद्यमिति उन्मात् ।
तत्र पद्यं पुरा प्रोक्तं गद्यं सम्प्रति गद्यते ॥ १ ॥
असवर्णं सवर्णं च गद्यं तत्रासवर्णकम् ।
त्रिविधं कथितं तच्च कवीन्द्रैर्गद्यवेदिभिः ॥ २ ॥
चूर्णकोत्कलिकाप्रायवृत्तगन्धिप्रभेदतः ।

तत्र—

अकठोराक्षरं स्वल्पसमासं चूर्णकं विदुः ॥ ३ ॥
तद्धि वेदभरोतिस्थं गद्यं हृद्यतरं भवेत् ।
आविद्धं ललितं मुग्धमिति तच्चूर्णकं त्रिधा ॥ ४ ॥

तत्र—

दीर्घवृत्ति-कठोरार्णमाविद्धं परिकीर्तितम् ।
स्वल्पवृत्तं कठोरार्णं ललितं कीर्त्यन्ते बुधैः ॥ ५ ॥
मुग्धं मृदुक्षरं प्रोक्तमवृत्त्यल्पवृत्तिं वा ।
भवेदुत्कलिकाप्रायं दीर्घवृत्त्युत्कटाक्षरम् ॥ ६ ॥
वृत्त्यक'वेशसम्बद्धं वृत्तगन्धिं पुनः स्मृतम् ।
अथान्नमत्तश्चैयामुदाहरणमुच्यते ॥ ७ ॥

तत्र प्रथमं यथा—

१ शुद्धचूर्णकम्

स हि खलु त्रयाणामेव जगतां गतिं परमपुरुषं पुरुषोत्तमो दृप्तसमस्तदैत्य-
दानवभरेण भङ्गुराङ्गीमिमामवनिमवलोक्य करुणरसामृतपरिपूर्णाद्रिहृदयस्तथा
भुवो भारमवतारयितुं रामकृष्णस्वरूपेण यदुकुलेष्वततार । यः प्रसङ्गनापि स्मृतो-
ऽभ्यर्चितः प्रणता वा गृहीतनामा पुंसः ससारसागरपारमवलोकयति ।

इति शुद्धचूर्णकम् १

१[१] अथ आविद्धं चूर्णकम्

यथा—

दलदलितं सहकारमञ्जरीविगल-मकरन्दबिन्दुसन्दोहसन्दानितमन्दानिलवीज्य-
मानदशदिगाभोगमुरभिसमयं समुपाजगाम । इत्यादि ।

इति आविद्धं चूर्णकम् १[१]

१[२]. अथ सत्तित धूर्णकम्

यथा-

सदाभिराम नाभिजितकाम रामणोयकधाम माधुर्यसौन्दर्यशौर्यादिगुणग्रामाभि-
राम भक्तजनपरिपूरितकाम सकललोकविश्रामधाम वामदेवाभिनन्द्यपौरुष राम जय
जय ।

इत्यादि ।

इति सत्तित धूर्णकम् १[२]

मुग्धसपि द्विविधम् । अवृत्ति-अत्यल्पवृत्ति चेति । तत्र—

१[३]. अवृत्तिमुग्ध धूर्णकम्

यथा-

यत्र च नायिकाना नयनैः कमलमयमिव, वदनैः परिपूर्णचन्द्रमण्डलमयमिव,
हस्तैः मृणालमयमिव, जघनैः^१ कदलीस्तम्भमयमिव विराजित भवनकुलम् ।

इत्यादि ।

इत्यवृत्तिमुग्ध धूर्णकम् १[३].

१[४]. अथ अत्यल्पवृत्तिमुग्ध धूर्णकम्

यथा-

कमलमिव चन्द्रविम्बमिव मुखं, मृणालमिव कामपाशमिव भुजयुगलं, मीन-
वृन्दमिव खञ्जरीटयुगमिव नीलोत्पलमिव एणनयनमिव नयनयुगलं, कोकयुग्म-
मिव सिन्दूरसमूहकमिव पुष्पगुच्छमिव कनककलशयुगलमिव वक्षोजयुगलम् ।

इत्यादि ।

इत्यल्पवृत्तिमुग्ध धूर्णकमिवम् १[४].

२. अथोत्कलिकाप्रायम्

यथा-

सङ्ग्रामसीमकण्डूलदोर्दण्डकुण्डलितकोदण्ड^१निर्गलितकाण्डप्रचण्डाघातखण्डि-
तरातिवृन्दनरपतिसीमन्तिनीनयनारविन्दाविरसविगलदम्बुनिकरकीर्णसप्तार्णवान्त-
र्भ्रमत्कमनोयकीर्तिहस , निजगत्कामिनीकर्णवितसानन्तसामन्तसन्तानशिरो-
मुकुटरत्नरागद्विगुणिताघ्ननखमयूखानवरतवलघोतदानसम्मानसन्तोषिताशेषयाचक
चयविकर्णवाक्पीयूषप्रयाणकालकोलाहलसमुच्छ्रल^२त्पाथोधिपाथ प्लाविता-
शेषभुवनमण्डल , भयङ्करभेरीमाङ्गारसम्मर्द्दसभ्रान्तखण्डलातिचपलचलच्चारुचतुर-
चतुरङ्गचमूचकचक्रमणमरभङ्गुरितफणिपतिफणानिधायविश्वविख्यातनिजा-
न्ववायप्रखरतरतुरगधुरपुटोद्भूतधूलौषारान्धकाराकुलितचक्राङ्गनासमूहनीति-
निरस्तसमस्तप्रत्यूहब्यूहप्रतिनृपतिविलासिनीताटङ्कापसारणसावधानचतुर्दशविद्या -

निधानदानपथातीतमुरद्रुमकथासमारम्भरम्भादिविषयनारीगणोद्गीयमानकमनीय -
कीर्त्तिभरभरणीयजनप्रवृद्धकृपापारावारवारणेन्द्रसमानसारसादितारातिथुवतिवचो-
वर्णदत्तकर्णकर्णवलिदीयमानोपमानमानवतीमानापमानोदनविशारदशारदेन्दुकुला-
वदातकीर्त्तिप्रीणिताशेषजनहृदयानुरूपसमरसीमव्यापादितारातिवर्गचक्रवर्त्तिमहा -
महोग्रप्रतापमातृण्डसमरविजयी महाराजाधिराज, समान्नापयत्यशेषसामन्तगणान् ।
इत्यादि ।

यथा वा ~

प्रणिपातप्रवर्णप्रधानाशेषसुरासुरादिवृन्दसौन्दर्यप्रकटकिरीटकोटिनिविष्टस्पष्ट-
भणिमयूखचन्द्राचन्द्रितचरणनखचक्रबिन्दुमोहामवामपादाङ्गुलनखरशिखरखण्डित-
ब्रह्माण्डभाण्डविवरनिस्सरत्क्षरदमृतकरप्रकरभाम्बरमुरवाहिनीप्रवाहपवित्रीकृत -
विष्टपत्रयकैटभारे क्रूरतरससारारापारसागरनानाप्रकारावर्त्तविवर्त्तमानविग्रहं माममु-
गृहाण । इत्यादि ।

इत्युत्कलिकाश्राय गद्यम् २.

३. अथ वृत्तगन्धि गद्यम् ।

यथा—

समरकण्डूलनिविडभुजदण्डमण्डलीकृतकोदण्डसिञ्जनीटङ्कारोजजागरितवैशि-
नागरजनसस्तुतानेकविस्दावलीविराजमानमानोन्नतमहाराजाधिराज जय जय ।
इत्यादि ।

यथा वा, मालतीमाधवे^१—

गतोऽहमवसोकिताललितकौतुक^२ कामदेवायतनम् । इत्यादि ।

यथा वा, कावचवर्धाम्—

पातालतालुतलवासिषु दानवेषु । इत्यादि ।

हरद्रवजितमन्मथो गुहृ इवाप्रतिहतशक्तिः । इत्यादि ।

यथा वा—

जय जय जनादेन सुकृतिजनमनस्तहागविकस्वरचरणपद्म पद्मनयन पद्मिनी-
विनोदराजहसभास्वरयशःपटलपूरितभुवनकृहर हरकमलासनादिवृन्दारवृन्दधन्व-
नीयपादारविन्द द्वन्द्वनिर्मुक्त^३ योगीन्द्रहृदयमन्दिराविष्टतनिरञ्जनज्योति स्वरूप
नीरूप विश्वरूप स्वर्णधनाय जगन्नाथ मामनवविदुः खव्याकुल रक्ष रक्ष ।

इति वृत्तगन्धिश्रवणम् ३

१. क. जानतकौतुकः । २. ख. द्वन्द्व द्वन्द्वनिर्मुक्त ।

^३टिप्पणी—१ मालतीमाधवम्, प्रथमाद्धे विशतिपद्यान्तर गद्यभागः ।

ग्रन्थान्तरे तु प्रकारान्तरेण चतुर्विधमेव गद्यं तल्लक्षणमुपलक्षितं विचक्षणैः ।

यथा—

वृत्तबन्धोज्झित गद्यं मुक्तकं वृत्तगन्धि च ।

भवेदुत्कलिकाप्रायं कुलकं च चतुर्विधम् ॥ ८ ॥

सत्र—

आद्यं समासरहित वृत्तभागयुतं परम् ।

अन्य दीर्घसमासाढ्यं तुर्यं चाल्पसमासकम् ॥ ९ ॥

सत्र मुक्तकं, यथा—

गुरुर्वचसि^१ पृथुरुरसि । इत्यादि ।

वृत्तगन्धि—‘समरकण्डूल’ इत्यादिनैवोदाहृतम् ।

उत्कलिकाप्राये तु—व्यपगतघनपटलममलजलनिधिसदृशमम्बरतलं विलोभयते अञ्जन-
चूर्णपुञ्जश्यामल शार्वर तमस्त्यायत । इत्यादि ।

यथा वा, प्राकृते चापि—

अणिसविमुमरणि^२ सिदसरविदलिदसमरपरिगदपवरपरबलहणिदमअगलहल-
हलिदसअलजलनिहिसरिससमत्तुसमूहसखुहिअवैरिणअरणाअरीणिदह अग्र महाराअ
चक्कवट्टि करुणाअरा । इत्यादि ।

कुलकम्, यथा—

गुणरत्नसागर जगदेकनागर कामिनीमदनजनचित्तरञ्जन करुणापरायणनारा-
यणचरणस्मरणसमासादितपुरुषार्थचतुष्टयप्रार्थनीयगुणगण क्षरणागतरक्षणविच-
क्षण जय जय । इत्यादि ।

इति श्रीकविशेखरसम्प्रदायशेखरविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिके वास्तिके

गद्यनिरूपणप्रथम प्रकरणम् ॥ ८ ॥

नवमं विरुदावली-प्रकरणम्

[प्रथमं कलिकाप्रकरणम्]

अथ विरुदावली

अथाऽथ विरुदावल्याः सोदाहरणमुच्यते ।

लक्षणं लक्षितार्थोप-विशेषपरिकल्पनम् ॥ १ ॥

तत्र-

अद्य-पद्यमयो राजस्तुतिविरुदमुच्यते ।

तदावली समाख्याता कविभिविरुदावली ॥ २ ॥

किञ्च-

कलिकाभिस्तु कलिता विरुदावलिका मत्रा ।

सवर्णा कलिका प्रोक्ता विरुदावल्या मनोहरा ॥ ३ ॥

तत्र च

द्वादशार्द्धकलाः कार्याः चतुःषष्टिकलावधि ।

तद्भेदाश्चात्र कथ्यन्ते लक्ष्यलक्षणसंयुताः ॥ ४ ॥

द्विगा रादिश्च मादिश्च नादिर्गलादिरेव च ।

मित्रा मध्या द्विमङ्गी च त्रिमङ्गी कलिका नव ॥ ५ ॥

तत्र-

१. द्विगाकलिका

चतुर्भिस्तुरगैः निर्जद्विगा मैत्री हयद्वये ।

अथा-

जय जय वीर ! क्षितिपति हीर !

इत्यादि । एष अरण्यचतुष्टयं बोद्धव्यमत्र । प्रथमविस्तरमथादत्तम् प्रकरणे पूर्वत्र पादमात्र-
मुराहियते ।

इति द्विगाकलिका १.

२. अथ रादिकलिका

वेदैः पञ्चकलैः कार्या मैत्र्यर्द्धे रादिका कला ॥ ६ ॥

अथा -

कामिनीकलितमुखं यामिनीरमणमुख ।

इत्यादि ।

इति रादिकलिका २.

३. अथ मादिकलिका

अष्टभिः पट्कलैर्मादिर्मध्यर्द्धे विरतिर्भता ।

यथा-

भूमीमानो प्रभवसि भुवने बहलारम्भः
सत्तत्तदा नोघता बहुमानोज्वलतरदम्भः ।

इत्यादि ।

इति मादिकलिका ३.

४. अथ नादिकलिका

सानुप्रासस्तु नो नादिः—

यथा-

दलितशकट कलितलकुट
सलितमुकुट रचितकपट ।

इत्यादि ।

इति नादिकलिका ४.

५. अथ गलादिकलिका

—गाद्या गलादिरुच्यते ॥ ७ ॥

यथा-

वीरवर हीररद
चीरहर तीरचर ।

इत्यादि

इति गलादिकलिका ५.

६. अथ मिथ्याकलिका

तिसतन्दुलघन्मिश्राः—

गसयोस्तिसतन्दुलघद्विग्यासो मिथ्याः । यथा-

क्षीरनीरविवेकधीर सङ्गरीवीर
गोपिकाचीरहर हरे जय जय ।

इति मिथ्याकलिका ६.

७. अथ मध्याकलिका

—मध्या कलिकयोर्यदि ।

मध्ये गद्य कलावापि गद्ययो रसपद्ययोः* ॥ ३ ॥

[श्या०] अस्यायं—मध्याकलिका साद्यत् द्विभेदा, तथा चादायन्ते च कलिका तयोः कलिकयोर्मध्ये यदि गद्यं भवतीत्येको भेदः ॥ १ ॥ तथा असवर्णयोर्मैत्रीरहितयोगंशयोर्मध्ये वा कला-कलिका भवतीत्यपरो भेदः ॥ २ ॥ इत्येवं द्विभेदा मध्याकलिका भवति । ङह्यमुदाहरणम् ।

इति मध्याकलिका ७.

८. अथ द्विभङ्गी कलिका

द्वितुर्यो मधुरदिलिप्यो यद्वा सान्तादचतुर्गुः ।

अत्र भङ्गात्तयोर्मैत्री पदभङ्गा स्यात् द्विभङ्गिका ॥ ६ ॥

यथा—

रङ्गरक्त सङ्गसक्त
घण्टचक्र दण्डशक्र
चन्द्रमुद्र सान्द्रभद्र
जिष्णो जिष्णो ।

इत्यादि ।

इति द्विभङ्गीकलिका ८.

९. अथ त्रिभङ्गी कलिका

तत्र—

त्रिभिर्भङ्गैस्त्रिभङ्गी स्यान्नवधा सा तु कथ्यते ।
विदग्ध-तुरगी पद्य-हरिणप्लुत-नर्तका ॥ १० ॥
भुजग-त्रिगते सार्द्धं वरतन्वा द्विपादिका ।
युग्माणंभङ्गी श्यावृत्ती तनो भो मित्रिती सतः ॥ ११ ॥

तत्र—

९[१] विदग्ध-त्रिभङ्गी कलिका

विदग्धे—

यथा—

सदीपितशर-मन्दीवृतपर-नन्दीश्वरपद-भावन-पावन ।

इत्यादि ।

इति विदग्धत्रिभङ्गी कलिका ९ [१].

९[२] अथ तुरगत्रिभङ्गी कलिका

—तुरगे तद्वत् तमला. शेषगो गुरु. ।

३ अथ मादिकलिका

घट्टभि पट्कलेर्मादिर्मध्यर्द्धे विरतिर्मता ।

यथा-

भूमीभानो प्रभवसि भुवने बहलारम्भ-
सत्तत्तदा नोघ्नता बहुमानोज्वलतरदम्भ ।

इत्यादि ।

इति मादिकलिका ३.

४ अथ नादिकलिका

सानुप्रासस्तु नो नादि —

यथा-

दलितशकट कलितलकुट
ललितमुकुट रचितकपट ।

इत्यादि ।

इति नादिकलिका ४

५ अथ गलादिकलिका

—गाद्या गलादिरुच्यते ॥ ७ ॥

यथा-

वीरवर हीररद
धीरहर तीरचर ।

इत्यादि

इति गलादिकलिका ५.

६ अथ मिश्राकलिका

तिस्रस्तन्दुलवन्मिश्रा.—

गमयोस्तिस्तम्बुलवद्विन्यासो मिश्रा । यथा-

क्षीरनीरविवेकधीर सङ्गरवीर
गोपिकाचीरहर हरे जय जय ।

इति मिश्राकलिका ६

७ अथ मध्याकलिका

—मध्या कलिकयोर्यदि ।

मध्ये गद्य कलावापि गद्ययो रसपद्ययोः^१ ॥ ८ ॥

[१५०] अस्यापि—मध्याकलिका तावत् द्विभेदा, तथा चादायन्ते च कलिका तयोः कलिकयोर्मध्ये यदि गद्य भवतीत्येको भेदः । १। तथा असवर्णयोर्मन्त्रोरहितयोर्मध्योर्मध्ये वा कला-कलिका भवतीत्यपरो भेदः । २। इत्येव द्विभेदा मध्याकलिका भवति । उक्तमुदाहरणम् ।

इति मध्याकलिका ७

■ अथ द्विभङ्गी कलिका

द्वितुयीं मधुरदिलिप्यौ पङ्गा सान्ताश्चतुर्गुं ॥

अथ भङ्गात्तयोर्मन्त्रौ पङ्गुभङ्गा स्यात् द्विभङ्गीका ॥ ९ ॥

यथा—

रङ्गरक्त सङ्गसक्त
चण्डचक्र दण्डसक्त
चन्द्रमुद्र सान्द्रभद्र
विष्णो जिष्णो ।

इत्यादि ।

इति द्विभङ्गीकलिका ८

९, अथ त्रिभङ्गी कलिका

तत्र—

त्रिभिर्भङ्गैस्त्रिभङ्गी स्यान्नवधा सा तु कथ्यते ।
विदग्ध-तुरगी पद्य हरिणप्लुत नर्तका ॥ १० ॥
भुजग-त्रिगले सार्द्धं वरतन्वा द्विपादिका ।
युग्माणभङ्गी न्यावृत्ती तनी भो मित्रिती तत ॥ ११ ॥

तत्र—

९[१] विदग्ध-त्रिभङ्गी कलिका

विदग्धे—

यथा—

सदीपितश्वर मन्दीवृत्तपर-नन्दीश्वरपद भावन-पावन ।

इत्यादि ।

इति विदग्धत्रिभङ्गी कलिका ९ [१].

९[२] अथ तुरगत्रिभङ्गी कलिका

—तुरगे तद्वत् तभला शेषगो गुरु ।

यथा-

चण्डीपतिप्रवण-पण्डीकृतप्रबल-खण्डीकृताहितविभो ।

इत्यादि ।

इति तुरगत्रिभङ्गी कलिका ६[२].

६[३]. अथ पद्यत्रिभङ्गी कलिका

त्रिभङ्गीभिः पदैः पद्यत्रिभङ्गी—

यथा-पद्यावतोत्रिभङ्गीदण्डकलावयोऽत्र स्पष्टाः पूर्वखण्डे समुदाहृतास्तास्त एव द्रष्टव्याः ।*

इति पद्यत्रिभङ्गी कलिका [६]३.

६[४]. अथ हरिणप्लुतत्रिभङ्गी कलिका

—हरिणप्लुते ॥ १२ ॥

पण्ठभङ्गा त्रिरावृत्ता नयमा^१मित्रितौ च भी ।

यथा-

अतिनत-देवाराधित बहुविधसेवासाधित

सुरतररेवासि प्रिय-दायक । यक !

इत्यादि ।

इति हरिणप्लुतत्रिभङ्गी कलिका ६[४].

६[५]. अथ नर्तकत्रिभङ्गी कलिका

हरिणो नजलान्तश्चेन्नर्तकः—

[ध्या०] हरिणप्लुत एव नयमानन्तरं यदि नगण-जगण-सत्त्वन्तो भवेत् तदा नर्तकी भवतीति शेषः । यथा-

मनसिजरूपाराधित बहुबलभूपावाधित

बहुतरयूपासञ्जक निजकुलरञ्जक ।

इत्यादि ।

इति नर्तकत्रिभङ्गी कलिका ६[५].

६[६]. अथ भुजङ्गत्रिभङ्गी कलिका

—भुजगे पुनः ॥ १३ ॥

त्र्यावृत्ता भभला लान्ता युग्मे तुर्ये च भङ्गिनः ।

क्वचित्तुर्ये न भङ्गः स्यान् मित्रितौ भगणौ ततः ॥ १४ ॥

१. क. नयना ।

*१टिप्पणी—३१, ३७, ४२, पृष्ठे द्रष्टव्याः ।

यथा-

दम्भारम्भामितवल जम्भालम्भाधिकवल
जम्भासम्भावितरण-मण्डित पण्डित ।

पञ्चित्तुर्धे न भङ्गः, इति समुदाह्रियते । यथा-

जम्भारातिप्रतिवल-दम्भावाधानतदल
सम्भारासादनचण-दारणकारण ।

इति भुजगत्रिभङ्गी कलिका ६[६].

६[७]. अथ त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका

तृतीये वृत्तभङ्गा त्रिमनना भो च वल्लिता ।

ध्यायुत्तास्तनभा भोऽन्ते ललितात्रिगता द्वये ॥ १५ ॥

[६ १०] अर्थः— त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका सावद् द्विविधा, यत्र मननाः—मगण-नगण-नगणास्त्रयो गणास्त्रिवारत्रयं भवति, अन्ते भो—भगणद्वयं, तृतीये च वर्णे भङ्गः सा वल्लिता-भिधाना त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका । यस्यां च ध्यायुत्तास्तनभाः—तगण-नगण-भगणास्त्रयो गणा भवति, एतस्यान्ते भो—भगण एक एव भवति । परन्तु द्वये—द्वितीये वर्णे भङ्गः सा ललिता-भिधाना त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका इति द्विविध्यम् । तत्रैव यथा—

६[७-१]. अथ वल्लिता त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका

वाणाली-हृतरिपुयण तालाली-तत-शरवण

भालाली-वृत्तनुवर-दायक नायक !

इत्यादि ।

इति वल्लिताभिधाना त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका

[६[७-२]. अथ ललिताभिधाना त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका

नाकाधिपसमनायक पाकाधिकसुखदायक

राकाधिपमुखसायक सुन्दर !

इति ललिताभिधाना त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका

एव त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका द्विविधोदाहृता ६[७] *]

६[८]. अथ वरतनुत्रिभङ्गी कलिका

पृष्ठभङ्गा वरतनुस्त्र्यावृत्ता नयना लघु ।

भो च—

यथा—

अविकलताराधिपमुख अधिगतनारायणमुख

बहुविधपारायणपर पण्डित मण्डित !

इत्यादि । किञ्च-

—भङ्गान्तसंयुक्ता छविरेपैव कथ्यते ॥ १६ ॥

यथा-

चतुरिभञ्चद्विगुणगण विवल्दुदञ्चद्रणचण
मधुरिभञ्चद्विस्तवकित कुङ्कुमभूषित ।

इत्यादि ।

इति द्विदिपा धरतनुत्रिमङ्गी कलिका ६[८].

६[९]. अथ द्विपादिका युग्मभङ्गा कलिका

द्विपादिका च कलिका षड्विधा परिकीर्तिता ।

द्विपावृत्ता सा तु विज्ञेया छन्दःशास्त्रविशारदः ॥ १७ ॥

तत्र-

मुग्धा प्रगल्भा मध्या च शिथिला मधुरा तथा ।

तद्वर्णी चेत्यमो भेदा द्विपादाया उदीरिताः ॥ १८ ॥

तत्र-

६[९-१]. मुग्धा द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका

मतला मतलाश्चैव युग्मभङ्गा भयुग्मकम् ।

मुग्धा स्यात्—

यथा-

दण्डादेशाकम्पित चण्डाघोशालम्बित

वन्दन नन्दन !

इत्यादि ।

इति मुग्धा द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका ६[९-१].

६[९-२]. अथ प्रगल्भा द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका

—भद्वये कर्णी चेत् प्रगल्भा तदा मता ॥ १९ ॥

[व्या०] भद्वये—मगणद्वयस्थाने आदेशरूपेण चेत् कर्णी भयतस्तदा मुग्धैव प्रगल्भा मता
इत्यर्थः । यथा-

देवाघोशाराधक सेवादेशासाधक

भूमीमानो

इत्यादि ।

इति प्रगल्भा-द्विपादिका-द्विभङ्गी कलिका ६[९-२].

६[६-३]. अथ मध्या द्विषादिका द्विभङ्गी कलिका

उक्ता भनी समी मध्या भी नली वा भनी जली ।

ननसा लहय वापि शोषे वा नजना लघू ॥ २० ॥

[व्या०] अस्याथं — मध्यायास्तावत् चत्वारो भेदा लक्ष्यन्ते । यथा—समी—मगण-भगणी, अथ च समी—सगण-मगणी, ततो भी—भगणद्वयं यत्र भवति, एतादृशी मध्या उच्यता—कविता इत्यर्थः । इति प्रथमो भेदः ।

यथा—

नित्यं नृत्यं कलयति काली केलीमञ्चति चञ्चति ।

इत्यादि ।

इति मध्यायाः प्रथमो भेदः । १।

अथ मध्याया द्वितीयो भेदः

[व्या०] 'मली वा भनी जली' इति । यत्र नली—नगणलघू, अथ च भनी—भगणलघू, ततश्च जली—जगणलघू भवतः । इति द्वितीयो भेदः ।

यथा—

रणभुवि मञ्चति रणभुवि चञ्चति ।

इत्यादि ।

इति मध्याया द्वितीयो भेदः । २।

अथ मध्याया तृतीयो भेदः

[व्या०] 'ननसा लहय वापि' इति । ननसा—नगण-नगण सयना, अथ च लघूद्वयं भवति यत्र स तृतीयो भेदः । यथा—

अतिशयमधिरणमञ्चति ।

इत्यादि ।

इति मध्याया तृतीयो भेदः । ३।

अथ मध्यायाश्चतुर्थो भेदः

[व्या०] 'शोषे वा नजना लघू' इति । शोषे—चतुर्थो भेदे नजना—नगण-नगण-नगणाः, अथ च लघू—लघूद्वयं यत्र भवति स चतुर्थो भेदः । यथा—

अतिशयमञ्चति रणभुवि ।

इत्यादि ।

इति मध्यायाश्चतुर्थो भेदः । ४।

एव मध्याया असकीर्णश्चित्त्वारी भेदाः सलक्षणाः समुदाहृत्य प्रदर्शिताः ।

इति मध्या द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका ६[६-३].

६[६-४]. अथ शिथिला द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका

मुग्धाया भद्वये विप्रो यदि सा शिथिला मता ।

[ध्या०] मुग्धाया-प्रथमोक्ताया भद्वये-भगणद्वयस्थाने आदेशन्यायेन यदि विप्र-
चतुर्लङ्घ्यात्मको षणो भवति तदा सा शिथिला मता भवतीत्यर्थः ।

यथा-

केलीरङ्गारञ्जित-नारीसङ्गासञ्जित मनसिजः ।

इत्यादि ।

इति शिथिला द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका ६[६-४].

६[६-५] अथ मधुरा द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका

द्विधावृत्ता ममला लान्ता भद्वयं मधुरा मता ॥ २१ ॥

[ध्या०] अत्रत्य द्विधावृत्तत्वं पूर्वत्र सर्वत्र समद्वयम् । तथा च ममला-भगण-भगणलपवश्चेत्
द्विधावृत्ता सन्तो लान्ता-लङ्घन्ता भवति । अथ च भद्वय-भगणद्वयं भवति तदा मधुरा मता-
सम्पन्ना भवतीत्यर्थः । यथा-

तारादाराधिकमुख-पारावाराशयसुख-दायक नायकः ।

इत्यादि ।

इति मधुरा द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका ६[६-५].

६[६-६] अथ तरुणी द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका

मधुरा भद्वये कर्णौ तरुणी समनन्तरम् ।

[ध्या०] उक्तया-मधुराया भगणभगणलान्ताया भद्वये-भगणद्वयस्थाने पूर्वोक्तन्यायेन
यदि कर्णौ भवतस्तदा तरुणी भवति ।

ताराहारानतमुख आरादारागतसुख-पाता-दाता ।

इत्यादि ।

इति तरुणी द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका ६[६-६].

इति द्विपादिका कलिका युग्मभङ्गिनो भेदा प्रोक्ता इति शेषः ।

इति विहङ्गावस्थामवान्तर-द्विभङ्गी-त्रिभङ्गी-कलिकाप्रकरण प्रथमम् ।

[विरुदावल्या द्वितीय चण्डवृत्त प्रकरणम्]

अथाभिधीयते चण्डवृत्त विरुदमुत्तमम् ।

शुद्धादिभेदसहित कलिका-कल्पनान्वितम् ॥ १ ॥

[श्रु०] आदिपदेन सकोर्णा ममितमिधिता गृह्यते तावच्च यथास्थानमुदाहरिष्याम ।
अथ महाकलिकारूप चण्डवृत्तम्, तच्च द्विविध-सलक्षण साधारणभेदेन ।

तत्र-

उत्तलक्षणसम्पूर्णं सलक्षणमुदीरितम् ।

अन्यत् साधारण प्रोक्त चण्डवृत्त द्विधा बुधं ॥ २ ॥

अथ परिभाषा

तत्र-

मधुर श्लिष्ट-सश्लिष्ट शिथिल ह्लादिभेदतः ।

सयोगा पञ्चह्रस्वाच्च दीर्घाच्च दशधा मता ॥ ३ ॥

अनुस्वारविसर्गौ तु न दीर्घव्यवधायकौ ।

स्वस्ववर्गान्त्यसमुक्ता मधुरा इतरे पुनः ॥ ४ ॥

श्लिष्टा सरेफशिरसः सश्लिष्टास्त्वन्ययोगिनः ।

यमात्रयुक्ता इत्युक्ता शिथिला ह्लादिनस्त्वमी ॥ ५ ॥

ह्रस्वैरसाम्यमत्र नणयो खपयोस्तथा ।

जययोर्ध्वयोरहः सच्चयोः सशयोरपि ॥ ६ ॥

ह्राप्यमोर्ध्वध्वयोश्चैव क्षच्छयोरित्सवर्णयोः ।

खपयोः क्षच्छयोश्चैव क्षययोरपि वणयोः ॥ ७ ॥

श्लिष्टसश्लिष्टयोरुभतौ सग्राह्या मधुरेतरा ।

इत्येषा परिभाषाऽत्र रजते वृत्तमीकितके ॥ ८ ॥

इति परिभाषा

अथ चण्डवृत्तस्य महाकलिकारूपस्य व्यापकस्य व्याप्यव्यापकभावेन पुरुषोत्तमादि-कुमु-
भा त चतुस्त्रिंशति ३४ प्रभेदा भवन्ति । तेषां चोद्देशकमोऽनुक्रमणिकाप्रकरणे स्फुटतरं दक्ष-
माणत्वाभावे ह प्रपञ्च्यते ।

तत्र प्रथमम्—

१ पुरुषोत्तमश्चण्डवृत्तम्

एव सर्वत्र—

द्विष्टी तुर्याष्टमी दीर्घा त्रि-पष्ठी सगणी च भ ।

पुरुषोत्तमचण्ड स्यात्—

[व्या०] अस्यार्थ — यत्र चतुर्थाष्टमी षणो द्विष्टी-सरेफक्षिरस्की च, तृतीय पष्ठी च दीर्घा भवत । तत्र गणनियममाह—‘सगणी’ इति । सगणी भवत । ततश्च भ-भगणो भवति तत् पुरुषोत्तमास्तं महाकलिकारूप चण्डवृत्त भवति । महाक्षरमिदं वृत्तम् । अस्मिन् प्रकारे सर्वत्र विरामद्वयमेव भवतीत्युपदिश्यते । यथा—

दितिजाईन जातप्रभ ।

इत्यादि ।

इति पुरुषोत्तमश्चण्डवृत्तम् १

२ अथ तिलक चण्डवृत्तम्

—सादो नो शेषगौ च नो ॥ ९ ॥

मधुरो दशमो वर्णस्तिलकम्—

[व्या०] अयमर्थ — यत्र सादो-सगणस्याविभूतो नो-नवगौ यत्र च सगणस्य शेषगौ-शेषे च वृत्तमानो नगणायेव भवत । मध्यभूतस्य सगणस्याद्यस्त्यो नगणी भवत इति फलितोऽर्थ । किञ्च—दशमो वर्णो मधुर-स्ववर्गात्यस्यवृत्त परसवर्णो भवति । तिलक नाम चण्डवृत्तस्यावा-तरो भेद इति । पञ्चदशाक्षरमिदं वृत्तम् । यथा—

विपमविशिखगणगञ्जितपरबल ।

इत्यादि । यथा वा—

अमलकमलरुचिखण्डनपटुपद
नटनपटिमहूतकुण्डलिपतिमद
नवकुबलयकुलसुन्दररुचिभर
घनतडिदुपमितवन्धुरपटघर
तरणिदुहितुतटमञ्जुलनटवर
नयननटनजितखञ्जनपरिफर
भुजतटगतहरिचन्दनपरिमल
पद्मपयुवतिगणनन्दन वरकल
नवमदमधुरदृगञ्चलविलसित
मुखपरिमलभरसञ्चलदलिवृत

शरदुपमितशशिमण्डलवरमुख
 कनकमकरभयकुण्डलकृतमुख
 युवतिहृदयशुकपञ्जरनिम(ज)भुज
 परिहृतविचकिलमञ्जर(ञ्जुल)शिरसिज
 सुतनुवदनविबुचुम्बनपटुतर
 दनुजनिबिडमदङ्गुम्बनरणखर
 वीर !

रणति हरे' तव वेषो नायों दनुजाश्च कम्पिता स्निग्धा ।
 वनमनपेक्षितदयिता करवालाङ्गप्रोक्ष्य धावन्ति ।

कुङ्कुमपुण्ड्रक गुम्फितपुण्ड्रक-
 सकलकङ्कण कण्ठगरङ्गण
 देव ।

सारङ्गाक्षीलोचनभृङ्गावलिपानचारभृङ्गार ।
 त्वा मङ्गलशृङ्गार शृङ्गाराधीश्वर स्तोमि ।

विहवमिद तिसकम् २.

३. अथ अच्युत चण्डवृत्तम्

—वाञ्छ्युत पुन ।

[ध्या०] अत्राप्य शब्दार्थद्वयकार । तेन अच्युताख्य चण्डवृत्तमुच्यत इत्युक्तं भवति ।
 लक्षण गणनियमवकाशह—

नयौ चेत् पञ्चमो दीर्घं पष्ठ द्दिलष्टपरो नजी ॥ १० ॥
 सर्वशेषे—

[ध्या०] अत्रार्थ — यत्र नयौ—नगण्यगणौ चेद् भवत, किञ्च पञ्चमो वर्णो यत्र दीर्घो
 भवति, पष्ठो वर्णं द्दिलष्टपर—द्दिलष्ट पर स सप्तमो यस्य स सादृशो भवति । एवं चत्वारो-
 ऽष्टौ वा पादा द्येष्ट भवन्ति । सर्वशेषे नजी—नगण्य जगणौ भवत सोऽच्युताख्यचण्डवृत्तस्या-
 शास्त्रो भेद इति । चतुर्विधपरिवारमिदं पदम् । ध्या—

प्रसरदुदार-श्रुतिगरतार-प्रगुणितहार-स्थिरपरिवार ।

इत्यादि । शेषेषु—

कृतरणरग । इत्यादि ।

यथा वा—

जय जय वीर स्मररसधीर द्विजजितहीर प्रतिमटवीर
 स्फुरदुप(ह)हार-प्रियपरिवारच्छुरितविहार-स्थिरमणिहार

प्रकटितरास स्तवकितहास स्फुटपटवास-स्फुरितविलास
 ध्वनदालजाल-स्तुतयनमाल व्रजकुलपाल प्रणयविशाल
 प्रविलसदस-भ्रमदवतस ववणदुरुवश-स्वनहृतहस
 प्रशमितदाव प्रणयिषु तावद्विलसितभाव स्तनितविराव
 स्तनघनरागश्रितपरभाग क्षतहरियाग त्वरितघृताग
 कृतरससग^१

वीर !

स्थितिनियतिमतीते धीरताहारिगीते,
 प्रियजनपरिखीते कुङ्कुमालेपपीते ।
 कलितनवकुटीरे काञ्च्युदञ्चकटीरे,
 स्फुरतु रसगभीरे गोष्ठवीरे रतिर्न ॥
 अम्बाविनिहृतचुम्बामलतर-
 बिम्बाघरमुखलम्बालक जय !
 देव !

दृष्ट्वा ते पदनस्रकोटिकान्तिपूर,
 पूर्णानामपि दाशिना शतैर्दुरापम् ।
 निर्विण्णो मुरहर मुक्तरूपदर्प,
 कन्दर्पं स्फुटमशरीरतामयासीत् ॥
 इति अष्टमोऽध्यायः
 ४ अथ वदितञ्चञ्चवृत्ताम्
 —यदि श्लिष्टा, द्वि-नव-द्वादशा अपि ।

वदितो भनजा जोलः—

[अ्या०] एतदुक्तं भवति, यदि द्वि नव द्वादश अपि वर्णा श्लिष्टा—सरेफशिरस्काश्चेत्—
 समुत्तवा वदित इति नाम चण्डवृत्तं भवतीति । तत्र च गणनियममाह—भनजा—भगणा-
 नगणजगणा, अथ च जो—जगणा, ततो ल—लघुरित्यर्थ । त्रयोदशाक्षरनिद पदं स्वेच्छया यत्र
 विनिवेशितं भवति तद् वदितारूपं चण्डवृत्तम् । यथा—

दुर्जयपरवलगर्जनवर्जित ।

इत्यादि ।

यथा वा, श्रीगोविन्दविरुदावल्याम्—

ब्रह्मा ब्रह्माण्डभाण्डे सरसिजनयन स्रष्टुमाक्रीडनानि,
 स्थाणुर्भक्तु च खेलाखुरलितमतिना तानि येन न्ययोजि ।

तादृक्क्रीडाण्डकोटीवृतजलकुडवा यस्य वैकुण्ठयुत्स्या ।

कतंव्या तस्य का ते स्तुतिरिह कृतिभिः प्रोक्ष्य लीलायितानि ॥

अपि च-

निविडत्तरत्तरापाडन्तरीणोष्मसंपद्^१-

विघटनपटुखेलाडम्बरोमिच्छटस्य ।

सगरिमगिरिराजच्छत्रदण्डायितथी-

जंगदिदमघशत्रोः सव्यबाहू^२घिनोतु ॥

अभ्रमुपतिमदमर्हिपदक्रम

विभ्रमपरिमलपुप्तसुहृच्छ्रम

दुष्टदनुजदलदपंविमर्दन

तुष्टहृदयसुरपक्षविवर्द्धन

दम्पंकविलसितसर्गनिरगल

सर्पंतुलितभुजकर्णंगकुण्डल^३

निर्मलमलयजचितविग्रह

नर्मलसितपरिवर्जितविग्रह^४

दुष्करकृतिभरलक्षणविस्मित-

पुष्करभवभयमर्दनसुस्मित

वत्सलहलघरतविकतलक्षण

वत्सरविरहितवत्ससुहृद्गण

गजितविजयिविशुद्धतरस्वर-

तजितखलगण दुर्जनमत्सर

धीर !

तव मुरलीध्वनिरमरीकामाम्बुधिवृद्धिशुभ्राणु ।

अचटुलगोकुलकुलजायैर्गाम्बुधिपानकुम्भजो जयति ।

धृतगोवर्द्धन सुरमोवर्द्धन

पशुपालप्रिय रचितोपक्रिय

वीर !

भुजङ्गरिपुचन्द्रकस्फुरदखण्डचूडाङ्कुरे,

निरङ्कुशदृगञ्चलभ्रमिनिवद्धभूङ्गभ्रमे ।

१. गोवि. सप्तम्य । २. गोवि. सप्त्यबाहु । ३. गोवि. कुण्डल । ४. गोवि. नर्मल-
लितकृतसर्पविनिग्रह ।

पतङ्गदुहितुस्तटीवनकुटीरकेलिप्रिये,
परिस्फुरतु मे मुहुस्त्वयि मुकुन्द शुद्धा रतिः ।

इति विरदमिदं वर्द्धितं ४.

५ अथ रणशब्दवृत्तम्

—त्रि पञ्च-नव-सप्तमा ॥ ११ ॥

आदिरेकादशश्चैव श्लिष्टा जो रो जरौ लघु ।

सर्वशेषे रणाख्ये स्यात्—

[व्या०] इदमत्राकृतम् । यत्र त्रि-पञ्च-नव-सप्तमा वर्णा, आदिरेकादशश्चेति च पञ्चवर्णां श्लिष्टा भवति । तत्र गणनियममाह—'जो रो जरौ लघु' जो-जगण रो-रणण भवतीति शेष । अथ च जरौ-जगणरणौ एव भवत, ततः सर्वशेषे पदे चंको लघुर्भवति । तत् रणाख्य सविरव महाकलिकारूपचण्डवृत्त भवति । द्वादशाक्षरमिदं पदम् । अतुर्दशाक्षर चान्य पद भवति । विरामद्वयेषु एकैकस्याधिकस्य लघोर्दानादित्याशयः^१ । पदविन्यासस्तु स्वैच्छया भवतीत्युपदेशः । तथा चान्तपदे विरामद्वयेषु लघुदानाजगमता-जगण-भगणी लघवो भवतीति या^२ । यथा—

प्रगल्भविक्रम प्रसप्पिसत्क्रम ।

इत्यादि ।

प्रपन्नवर्द्धनक प्रसन्नगर्द्धनक ।

इत्युत्तरम्^३ ।

एतस्य चायत्र समग्र इति नामान्तरम् । तथोदाहृतमपि श्रीरूपस्वामिभिः श्रीगोविन्द-विशदावलयाम् । यथा—

अनिष्टखण्डन^४ स्वभक्तमण्डन

प्रयुक्तचन्दन प्रपन्ननन्दन

प्रसन्नचञ्चल स्फुरद्दृग्ञ्चल

श्रुतिप्रलम्बक-भ्रमत्कदम्बक

प्रविष्टकन्दरप्रकृष्टसुन्दर-

स्थविष्टसुन्दरक-प्रसर्पबन्धुरक^५

देव ।

वृन्दारकतरुवीते वृन्दावनमण्डले वीर ।

नन्दितवान्धववृन्द सुन्दरवृन्दारिका रमय ।

१ स लघोर्दानादित्याशयः । २ स च । ३ स. इत्यन्तम् । ४. गोवि. परिष्ट-खण्डन । ५. गोवि. स्थविष्टसिन्धुरप्रसर्पबन्धुर ।

खलिनीहुम्बक मुरलीचुम्बक

जननीवन्दक - पशुपीनन्दकः

वीर ।

अनुदिनमनुरक्तः पद्मिनीचक्रवाले,

नवपरिमलमाद्यच्चञ्चरीकानुकर्पी ।

कलितमधुरपद्यः कोऽपि गम्भीरवेदी,

जयति मिहिरकन्याकूलवन्याकरीन्द्रः ।

इति सविष्ट सप्तोवाहरणम् ।

इति रणश्चण्डवृत्तम् ५.

६. अथ वीरश्चण्डवृत्तम्

—ममो नो वीरचण्डके ॥ १२ ॥

प्राद्यवर्णात्तु चत्वारो वर्णाः स्युर्मधुरेतराः ।

[व्या०] अस्यार्थ —यत्र ममो-मगणमगणो, अथ च मी-मगणौ भवतः । किञ्च, प्राद्यवर्णात्-
प्रथमाक्षरात् चत्वारो वर्णाः मधुरेतरा — केवलं इतिष्टा एवेत्यर्थः । तत् वीरचण्डकास्य चण्ड-
वृत्त भवति । इदमपि द्वादशाक्षरमेव पदम् । अत्रापि पदविन्यासः पूर्ववदेव । बाहुल्येन द्वादश-
पदमिदं भवति, तथा वृष्टरवादिति । यथा—

युद्धक्रुद्धप्रतिभटजयपर ।

इत्यादि ।

एतस्यैव अन्यत्र वीरभद्र इति नामान्तरम् । यथा—

उद्यद्विद्युद्युतिपरिचितपट

सर्पंत्सर्पस्फुरदुरुभुजतट

स्वस्थस्वस्थत्रिदशयुवतिनुत

रक्षदक्षप्रियमुहदनुसृत

मुग्धस्निग्धव्रजनकृतमुख

नव्यश्रव्यस्वरविलासितमुख

हस्तन्यस्तस्फुटसरसिजवर

सज्जद्गज्जन्तुपलवृपमदहर

युद्धक्रुद्धप्रतिभटलयकर

वर्णस्वर्णप्रतिमतिलकधर

रुप्यत्तुप्यद्युवतिपु कृतरस

भक्तव्यक्तप्रणय मनसि वस

वीर !

प्रचुरपरमहंसैः काममाचम्यमाने,
 प्रणतमकरचक्रैः शश्वदाक्रान्तकुक्षौ ।
 अघहर जगदण्डाहिण्डिहिन्दोलहासै,
 स्फुरतु तव गभीरे केलिसिन्धौ रतिनः ।
 उद्गीर्णतारुण्य विस्तीर्णकारुण्य
 गुञ्जालतापिञ्छपुञ्जालघतापिञ्छ ।
 धीर !

उचितः पशुपत्यलंघ्रियायै नितरां नन्दितरोहिणीयशोदः ।
 तव गोकुलकेलिसिन्धुजन्मा जगदुद्दीपयति स्म कीर्तिचन्द्रः ।
 सविहसं धीरभद्रोदाहरणमिदम् ।

इति धीरश्चण्डवृत्तम् । ६।

७. अथ शाकश्चण्डवृत्तम्

भौ रो लः पञ्चमः श्लिष्टो दीर्घो नवम-सप्तमी ॥ १३ ॥
 द्वितीयो मधुरः शाके—

[व्या०] अथमर्थं.—शाके-शाकाख्ये चण्डवृत्ते प्रथम भौ-भगणो, अथ च रो-रगणः, ततो लो-लघुः । किञ्च-पञ्चमो गणं श्लिष्टः-संयुक्तो भवति, नवमसप्तमी दीर्घो भवतः, द्वितीयो मधुरः-परसवर्णो वर्णो यत्र भवतीत्यर्थः । तत् शाकनामकं चण्डवृत्तं भवति । दशाक्षर पदं, विन्यासः पूर्ववत् । यथा—

सञ्चितचक्र-भुजाभिराम ।

इत्यादि ।

इति शाकश्चण्डवृत्तम् । ७ ।

८ अथ मातङ्गश्लेषित चण्डवृत्तम्

—हाथ मातङ्गश्लेषितम् ।

श्लिष्टो वा मधुरो वाणदशमी रो यलो यदि ॥ १४ ॥
 वाणे मङ्गलच^१ मैत्रो च प्रथमाष्टमपष्ठकाः ।
 तृतीयश्चात्र दीर्घा. स्यु—

[व्या०] इदमत्रानुसन्धेयम्—अथ मातङ्गश्लेषित-मातङ्गश्लेषिताभिधानं चण्डवृत्तं लक्ष्यत इति शेषः । अत्र चार्थे शाकारः । तथा च यत्र 'वाणदशमी' वाण-पञ्चम दशमश्चेति द्वौ वर्णौ श्लिष्टौ मधुरो-परसवर्णौ च भवतः । तथा रो-रगणौ, अथ च यलो-यगणलघू यदि

भवतस्तथा बाणे-पञ्चमे भङ्गश्च-मन्त्री च यदि भवति, तथा प्रथमाष्टमयष्टकाः वर्णा-
स्तृतीयश्च वर्णश्चेच्चत्वारोऽत्र वर्णा दीर्घाः स्युस्तदा मातङ्गखेलिताभिधानं क्षण्डवृत्तं भवति ।
वशाक्षरं पदमिदम् । अत्र पदविन्यासः स्वेच्छया विधेयः । यथा-

साधितानन्तसारसामन्त ।

इत्यादि । यथा या-

नाथ हे नन्द-गेहिनीशन्द
पूतनापिण्डपातने चण्ड
दानवे दण्डकारकाखण्ड-
सारपौगण्डलीलयोद्दण्ड
गोकुसालिन्दगूढ गोविन्द
पूरितामन्द-राधिकानन्द
वेतसीकुञ्ज-माधुरीपुञ्ज
लोकनारम्भजातसंरम्भ-
दीपितानङ्गकेलिमायङ्ग-
गोपसारङ्ग-लोचनारङ्ग-
कारिमातङ्गखेलितासङ्ग-
सौहृदाशङ्कमोपितामङ्क-
पालिकासम्ब चारुरोलम्ब-
मालिकाकण्ठ कौतुकाकुण्ठ
पाटलीकुन्दमाधवीवृन्द-
सेवितोत्तुङ्गशेखरोत्सङ्ग
मां सदा हन्त पालयानन्त
वीर !

स्फुरदिन्दीवरसुन्दर सान्द्रतरानन्दकन्दलीकन्द ।

शो तय पदारविन्दे नन्दय मन्थेन गोविन्द ॥

कुन्ददशन मन्दहसन^१

बद्धरसन रक्मवसन^२

देव !

प्रपन्नजनतातमःसपणधारदेन्दुप्रभा-

ग्रजाम्बुजविसोचना स्मरसमृद्धिसिद्धीपथिः ।

विडम्बितमुधाम्बुधिप्रवलमाधुरीडम्बरा,

विभर्तुं तव माधव स्मितकदम्बफान्तिर्मुदम् ।

इति श्रीगोविन्दविरुदावल्यां मातङ्गखेलितप्रत्युदाहरणम् ।

सविश्वमिदं मातङ्गखेलितम् ।८।

६. अथ उत्पलं चण्डवृत्तम्

—भद्रयं चोत्पलं मतम् ॥ १५ ॥

श्लिष्टौ द्विपञ्चमौ—

[६५।०] अयमर्थः—भद्रय-भगणयोर्द्वयं, भगणचतुष्टयमित्यर्थः । सद्ये तया दर्शनादर्शं
हयात् । किञ्च-तस्मिन्नेव भगणद्वये द्विपञ्चमौ-द्वितीयपञ्चमौ वृत्तौ' श्लिष्टौ-सरेफ-
शिरस्की च भवतो यत्र सद् उत्पलनामकं चण्डवृत्तं भवतीत्यर्थः । पञ्चमं भगणद्वयपक्षे, भगण-
चतुष्टयपक्षे तु द्वादशाक्षरमेव पदम् । परविन्यासस्तु पूर्ववदेव । यथा—

सर्वजनप्रिय

सर्वसमक्रिय

इत्यादि । यथा वा, श्रीगोविन्दविरुदावल्याम्—

नर्तितशक्कर-चक्रं तक्कर-
वृद्धमरुद्भर-तर्हन् निर्भर-
दुष्टविमर्हन् शिष्टविबर्हन्
सर्वविलक्षण मित्रकृतक्षण
सद्भुजलक्षित-पर्वतरक्षित-
निधुरगज्जन-खिन्नसुहृज्जन
रुष्टदिवस्पति-गर्वसमुन्नति-
तर्जनविभ्रम निर्गलितभ्रम-
क्षत्रकृतस्तव विस्फुरदुत्सव
वीर !

बुद्धीनां परिमोहनः किल ह्रियामुच्चाटनः स्तम्भनो

दर्भोदग्रधियां^१ मनःकरटिनां वश्यत्वनिष्पादनः ।

कालिन्दीकलहंस हन्त वपुषामाकर्षणः सुभ्रुवां,

जीयाद् वैणवपञ्चमध्वनिमयो मन्त्राधिराजस्तव ।

काननारब्ध काकलीशब्द-
पाटवाकृष्ट-गोपिकादृष्ट
चातुरोजुष्ट-राधिकातुष्ट
कामिनीलक्ष-भोदने दक्ष
भामिनीपक्ष^१ भाममु रक्ष,
देव ।

भजजंरपतिव्रताहृदयवज्रभेदोद्धुरा,
कठोरतरमानिनी^२-निकरमानमर्मच्छिद^३ ।

अनङ्गधनुस्सुतप्रचलचित्सिपापच्युता,
क्रियासुरघविद्विपस्तव मुद कटाक्षेपव ।

सविदबमिदमुत्पलम् । १६ ।

१०. अथ गुणरतिवर्णवृत्तम्

—सो नो, लक्ष् दीर्घं तृतीयकम् ।

गुणरत्याख्य—

[ध्या०] अस्यार्थ—यत्र स—सगण भो—नगण ततो लक्ष्—सधुर्भवति । अत्र चतुर्वशाक्षर-
पदविद्यासस्य अयत्रापि वृष्टत्वात् सनलानामावृत्तिरवगन्तव्या, तेन प्रकृतोद्वेषणिका सिद्धि-
र्भवति । किञ्च, तृतीयक—तार्तीयमक्षर दीर्घं भवति । तद् गुणरत्याख्य वर्णवृत्तं भवति ।
चतुर्वशाक्षर पदम् । पदविद्यास पूर्ववदेव । यथा—

विदिताखिलसुख

सुख(प)भाधिकमुख ।

इत्यादि । यथा का—

प्रकटीकृतगुण शकटीविधटन
निकटीकृतनवलकुटीवर वन-
पटलीतटचर नटलील मधुर
सुरभीकृतवन सुरभीहितकर
मुरलीविलसित-खुरलीहृतजग-
दरुणाधर नव-तरुणायतभुज^४
वरुणालयसमकरुणापरिमल
कलभायितबल शलभायितखल

१ गोवि भामिनीपक्ष ।

२ गोवि कठोरतरमानिनी ।

३ गोवि मर्मच्छिद ।

४ गोवि कदलायतभुज ।

घवलाधृतिधर^१ गवलाश्रितकर
सरसीकृतनर सरसीरूहघर
कलशीलितमुख कलशीदधिहर
सलितारतिकर ललितावलिपर
धोर !

हरिणीनयनावृत प्रभो करिणीवल्लभकेलिविभ्रम ।
तुलसीप्रिय दानवाङ्गनाकुलसीमन्तहर प्रसीद मे ॥

चन्दनचर्चित गन्धसमर्चित
गण्डविवर्त्तन-कुण्डसनर्त्तन
सन्दलदुग्ज्ज्वल कुन्दलसद्गल
वञ्जुलकुन्तल^२ मञ्जुलकज्जल
सुन्दरविग्रह नन्दलसद्ग्रह
धोर !

रतिमनुवध्य गृहेभ्यः कर्षति राधां वनाय या निपुणा ।
सा जयति निसृष्टार्था^३ वरवंशजकाकली दूती ।

सविरहा गुणरतिरियम् । १०।

११. अथ कल्पद्रुमश्चण्डवृत्तम्

तत्र-

—अन्त्यान्त्यो नवमः श्लिष्टपूर्वगः ॥ १६ ॥

कल्पद्रुमे तजौ यश्च श्लिष्टाः पट्-त्रि-नव-द्विकाः ।

[श्या०] कोऽर्थः ? उच्यते—यत्र कल्पद्रुमे चण्डवृत्ते अन्त्यो-यमणः सत्यान्त्यो नवमो वर्णः श्लिष्टपूर्वगः—श्लिष्टो वर्णः पूर्वगो यस्य स तादृशो भवति । तत्र च गणनियममाह—तजौ—तगणजगणौ, अथ च यश्च—यगणोपि भवति । एवं गणत्रयं यत्र भवति तदेतत् कल्पद्रुम-माहयं चण्डवृत्तं भवति । नवाक्षरमित् पदम् । पदविन्यासोपि पूर्ववत् । किञ्च—पट्त्रिनवद्विकाः—पठतृतीयनवमद्वितीयका वर्णाः श्लिष्टा भवन्ति । यत्र च नवमश्लेषादेव द्वितीये पदे प्रथम-वर्णस्य गुणस्य भवतीति भावः ।

यथा-

उद्विक्ततरस्थितगवं

प्रव्यक्तपरिस्थितसर्वं ।*

एवं पदान्तरमपि बोद्धव्यम् ।

इति कल्पद्रुम ॥११॥

१२ अथ कन्दलञ्चण्डवृत्तम्

कन्दले पञ्चम. श्लिष्टो द्वितीये मधुरोऽनु भौ ॥ १७ ॥

[ध्या०] कन्दले-कन्दलाख्ये चण्डवृत्ते पञ्चमो वर्णं श्लिष्टो भवति । द्वितीयो वर्णो मधुर-परसवर्णो भवति । तत्र गणनैयत्यमाह-अत्रास्मिन् भौ-भगव्यो एव स्तः । पङ्कशमेव पदम् । सत्कादसाभिधानं चण्डवृत्तं भवतीति । यथा-

पण्डितवर्द्धन ।

इत्यादि ।

इति कन्दलः ॥१२॥

१३. अथ अपराजितञ्चण्डवृत्तम्

पङ्कटदशमा दीर्घा द्वितीयो मधुरो यदि ।

अपराजितमेतत्तु असजाश्च गुरुलंघु ॥ १८ ॥

[ध्या०] एतदुक्तं भवति । यत्र पङ्कटदशमा-पङ्कटमदशमा वर्णा दीर्घा भवन्ति । द्वितीयो वर्णो यदि मधुर-परसवर्णो भवति । यदि च असजा-अगण्यसमन्वयगणा भवन्ति । अथ च गुरुस्ततो लघुश्चेद् भवति । तर्हेतुः अपराजिताख्यं चण्डवृत्तं भवति । एकादशाक्षर पदम् । यथा-

गञ्जितपरवीर धीर हीर ।

इत्यादि ।

इति अपराजितम् ॥१३॥

१४ अथ नर्त्तनञ्चण्डवृत्तम्

चतु सप्तमकी श्लिष्टो सो रो लो यदि नर्त्तनम् ।

अष्टमो मधुर -

[ध्या०] अस्यार्थ - यदि चतु सप्तमकी वर्णो श्लिष्टो भवतः, अष्टमो वर्णो मधुर-परसवर्णो भवति । किञ्च, यदि सो-सगणो स्याताम् । अथ च रो-रण, ततो लो-लघुद्वय स्यात् सदा नर्त्तन-नर्त्तनाख्यं चण्डवृत्तं भवति । इदमप्येकादशाक्षर पदम् । यथा-

भुवनत्रयशनुम्प्रमह्ये ।

इत्यादि ।

इति नर्त्तनम् ॥१४॥

१५. अथ तरुतमस्तञ्चण्डवृत्तम्

-श्लिष्ट-सश्लिष्टमधुरा यदि ॥ १९ ॥

पट्त्रिपञ्चमका जो मः सगणो लघुयुग्मकम् ।

तरस्समस्तमित्याहुः—

[ध्या०] एवमुक्तं भवति । यदि पट्त्रिपञ्चमका—पट्त्रिपञ्चमका—वर्णाः सिल्ल-
सिल्ल-मधुराः स्युः । तत्र गणनियममाह—जो—जगणः, मो—मगणः, सगणः गुर्वन्तश्चतुष्कलो
गणस्ततो लघुयुग्मक—लघुयुगलं च यदि भवति तदा तरस्समस्तमिति नामकं षण्डवृत्तमाहुः शब्द-
सिका । एकादशाक्षरमेव पदम् । यथा—

निरस्तचण्डद्वेपिधराधर

इत्यादि ।

इति तरस्समस्तम् । १५ ।

१६. अथ वेष्टनञ्चण्डवृत्तम्

—दीर्घो पट्पञ्चमो यदि ॥ २० ॥

वेष्टने सप्तमः सिल्लो नयो लघुचतुष्टयम् ।

[ध्या०] अथमर्थः—वेष्टने—वेष्टनात्ये षण्डवृत्तप्रभेदे यदि पट्पञ्चमो—पट्पञ्चमको
वर्णो दीर्घो स्याताम् । सप्तमश्च वर्णः सिल्लो भवेत् । गणनियममाह—नयो—गणयगणी
स्तः, ततो लघुचतुष्टयं यत्र भवति । दशाक्षरं च पदं भवति । तत् वेष्टनाभिधानं षण्डवृत्तं
भवतीति । यथा—

मलयजसाराञ्चितहर ।

इत्यादि ।

इति वेष्टनम् । १६ ।

१७. अथ अस्खलितञ्चण्डवृत्तम्

तरो भलावस्खलिते अष्टपञ्चमसप्तमा ॥ २१ ॥

सिल्लिटा दीर्घं आद्यः स्यात्—

[ध्या०] कोऽर्थः ? उच्यते—अस्खलिते—अस्खलितभिधाने षण्डवृत्ते यदि तरो—तगणरगणो
स्याताम् । अथ च भलो—भगणतघूस्तः । किञ्च, अष्टपञ्चमसप्तमा—तृतीयाष्टमपञ्चम-
सप्तमा वर्णाश्चेत् सिल्लिटा अन्त्ययोगिनः स्युः । आद्यः—प्रथमो वर्णश्चेद् दीर्घं स्यात् तदा
अस्खलितभिधानं षण्डवृत्तं भवति । दशाक्षरमेव पदं भवति । यथा—

आनन्दशुद्धयुद्धप्रणय ।

इत्यादि ।

इति अस्खलितम् । १७ ।

१८. अथ पल्लवितञ्चण्डवृत्तम्

—दीर्घो चैतुर्यपञ्चमो ।

सिखिलो मधुरो वाञ्छ द्वितीयो मतनद्विजा ॥ २२ ॥

एतत् पल्लवितम्—

कुन्तिलनुठदुरङ्ग
कुङ्कुमरुचिलसदम्बर
लङ्गिमपरिमलहम्बर
नन्दमवनवरमङ्गल-
[मञ्जुलघुसृणमुपिङ्गल
हिङ्गुलरुचिपदपङ्कज
सञ्चितयुवतिसदङ्गज]^१
सन्ततभृगुपदपङ्क्ति
सतनु मयि कुशलङ्किल
वीर ।

गिरितटीकुनटीकुलपिङ्गले खलतृणावलिसञ्ज्वलदिङ्गले ।
प्रखरसङ्गरासन्धुतिमिङ्गिले मम रतिर्वलता व्रजमङ्गले ।
जय चारुदाम ललनाभिराम
जगतीललाम रुचिहारिवाम*
वीर ।

उन्दितहृदये-दमणिः पूर्णकल कुवलयोल्लासी ।
परित क्षावर्ममनो विलसति वृन्दाटवीचन्द्र ।

इति गुरग ॥२०॥

एते महाकलिकारूपस्य चण्डवृत्तस्य विंशति शुद्धा प्रभेदा ।

अथ सङ्कीर्णा

तत्र-

२१. पङ्केह चण्डवृत्तम्

पङ्केह नयी पण्डे भङ्गी मंत्री च दृश्यते ॥ २४ ॥

सा चेत् कवर्गरचिता यथा लाभमनुक्रमात् ।

तथैव पण्डो मधुर स्वरभेदेऽपि तद्भिदा ॥ २५ ॥

[ध्या०] एतस्यार्थ — यत्र नयो-नगणयगणो भवत । तथा पण्डे वर्ण भगो मंत्री च दृश्यते ।
किञ्च, सा मंत्री चेत् कवर्गेण यथा लाभमनुक्रमात् रचिता स्यात् । तथा पण्डो वर्णो मधुर-
परसवर्णो यदि स्यात् तदा पङ्केह नाम चण्डवृत्त भवति । किञ्च, स्वरभेदेऽपि-इकारादिरस्वर-
भेदेऽपि सति तद्भिदा पङ्केहभेदो भवतीति बोद्धव्यम् । पदस्वरमेव पदम् । पदविन्यासोऽपि पूर्व
वदिति बोद्धव्यम् ।

यथादिम्ये' पदे 'लः-एको सधुरधिको देय इत्यर्थः, तेनान्त्य पदं त्रयोदशाक्षरं भवति । तच्च,
अरचमलान्तमित्युपदिश्यते । पदविन्यासस्तु स्वेच्छया विधेयः । यथा-

अनङ्गवर्जनं प्रसङ्गसञ्जनं ।

इत्यादि ।

अनङ्गमङ्गलं प्रसङ्गसञ्जनकं ।

इत्यन्तम् ।

अत्र च मधुरतृतीयपदादेव विश्रवावत्यन्तर-समप्रादं भिन्नमिदं समप्रमितिः ।

इति समप्रम् ॥१६॥

२०. अथ तुरग^१श्चण्डवृत्तम्

—भनौ जलौ ॥ २३ ॥

मधुरी^२ युग्मनवमौ चेच्चण्डतुरगाह्वयम् ।

[श्या०] अथमर्थः—यत्र भनौ—भगण नगणौ भवतः, ततो जलौ—जगणलघू स्याताम् । किञ्च,
युग्मनवमौ वणौ चेत् मधुरी—परसवणौ स्तस्तदा तुरगाह्वयचण्डवृत्तं भवतीत्यर्थः । दशाक्षरं
पदमिदम् । पदविन्यासः पूर्ववत् । यथा—

पण्डितगुणगणमण्डित ।

यथा वा—

सँव्वल^३ विचकिलकुण्डल
मण्डितवरतनुमण्डल
कुण्डलिपतिकृतसङ्गर
दण्डित^४ भुवनभयङ्कुर
शङ्करकमलजवन्दित
किङ्कुरनुतिलवनन्दित^५
गञ्जितसमदपुरन्दर
चञ्चलदमनधुरन्धर
बन्धुरगतिजितसिन्धुर
चन्दनसुरभितकन्धर
सुन्दरभुजलसदङ्गद^६
सन्ततसखिगणरङ्गद
भङ्कृतिकरमणिकङ्कण

१. गोवि. सुरंग । २. क. मधुर । ३. गोवि. सवल । ४. गोवि. लण्डित ।

५. क. किङ्कुरनुतिलवनन्दित । ६. क. भुजलवङ्गद ।

वर्णिकारकृतकर्णिकाद्युति वर्णिकापदनिमुक्तगैरिका ।
मेचका मनसि मे चकास्तु ते मेचकाभरण भारिणी' तनु ।

मदनरसङ्गत सङ्गतपरिमल
युवतिविलम्बित लम्बितकचभर
बुभुमविटङ्कित टङ्कितगिरिवर
मधुरससञ्चित सञ्चितनरवर^१
वीर ।

भ्रूमण्डलतण्डवितप्रसूनकोदण्डचित्रकोदण्ड ।
हृतपुण्डरीकगर्भं मण्डय मे^२ पुण्डरीकाक्ष ।

सयिषद सितरञ्जमिदम् । २२ ।

२३ अथ पाण्डुरूपलञ्चण्डवृत्तम्

जय जय दण्ड-
प्रिय कचखण्ड-
अधितक्षिण्ड-
रज शशिखण्ड-
स्फुरणसपिण्ड-
स्मितवृत्तगण्ड
प्रणयकरण्ड
द्विजपतितुण्ड
स्मररसकुण्ड
क्षतफणिमुण्ड
प्रवटपिचण्ड-
स्थितजगदण्ड
श्वणदण्डघण्ट
स्फुटरणघण्ट
स्फुरदुरगुण्डा-
वृत्तिभुजदण्डा-
हृतगलचण्डा-
सुरगण पण्डा-

[व्या०] एतेषां सितकञ्जादिभेदानाम्, शेषं स्पष्टम् । तत्र-

२२. सितकञ्जञ्चण्डवृत्तम्

जय कचचञ्चद्-
 धृतिसमुदञ्च-
 न्मधुरिमपञ्च-
 स्तवकितपिञ्छ-
 स्फुरित विरिञ्च-
 स्तुत गिरिगञ्ज^१-
 व्रजपरिगुञ्ज-
 न्मधुकरपुञ्ज-
 द्रुतमृदुशिञ्ज
 द्विपदहिगञ्ज
 धत्ततिपु खञ्ज-
 न्नवरजसञ्ज^२-
 न्मरुदतिपिञ्ज
 प्रवलित^३मुञ्जा-
 नलहर गुञ्जा-
 प्रिय गिरिकुञ्जा-
 धित रतिसञ्जा-
 गर नवकञ्जा-
 मलकर भञ्जा-
 निसहर मञ्जी-
 रजरवपञ्ज ,
 परिमलसञ्जी-
 वितनवपञ्चा-
 शुगशरसञ्चा-
 रणजितपञ्चा-
 ननमद धीर ।

कृपय सपद्धे
किल मयि धीर ।

उत्तुङ्गोदयश्च सङ्गमजुपा विभ्रततङ्गत्विपा,
वासस्तुङ्गमनङ्गसङ्गरत्नाशोटीयंपारङ्गत ।
स्वान्त रिङ्गदपाङ्गभिर्ल गोपाङ्गनाना विल',
भयारत्व पङ्गुपालपुङ्गव दशोरव्यङ्ग रगाय मे ॥

धिसदलिवगतकृष्णमपरिमल
कटितटघृतमणिकिङ्किणिवरक्ष
नवजलधरकुलसङ्गिमहचिभर
मसृणमुरलिवलमङ्गिमधुरतर
घोर ।

अवतसितमञ्जुमञ्जरे तरुणीनेत्रचकोरपञ्जरे ।
नवकूटकुमुदपुञ्जपिञ्जरे रतिरास्ता मम गोपकृञ्जरे ।

पञ्चैह सविददमिबम् । २१ ।

अथ सितकञ्जादयश्चण्डवृत्तस्य चत्वारो भेदाः सन्त्यन्ते । तत्र—

एतादेव गणौ यत्र मङ्गो मैत्री च पूर्ववत् ।

क्रमेण चादिवर्गस्तु रचिता सार्जप पूर्ववत् ॥ २६ ॥

(व्या०) इत्यादि—यत्र एतो-नगणयमणी एव-पूर्वोक्तो मणी भवति । चिच्छ, भङ्गो मंत्रो
 च पूर्ववत्, यथाक्षर एव भवतीत्यये । एतच्च परब्रह्मण्य मयुरारमणि मय्यर्पितं बोद्धव्यम् ।
 पूर्ववद् इत्यनेनैवोपस्थापितत्वात् । किञ्च, साऽपि मंत्रो जाति-चतुर्विधं पूर्ववत् एवार्पणं
 रक्षितं चेद् भवति । अपि शब्दात् स्वरात्तरणामेवेति सति तत्रा तत्तद्वैरो भवतीत्या बोद्ध-
 व्यम् । यक्षरमेव यदम् । यदविन्यासोऽपि पूर्ववदेवेति च ॥२६॥

तद्देवचतुष्टयमाह माद्वेन श्लोकेन—

सितकज्ज तथा पाण्डूत्वसामिन्दीवर तथा ।

अरुणाम्भोरुह्येति नेय भेदघाट्यम् ॥ ३३ ॥
विरुदेन सम चापि घण्टवृत्तस्य गान्धर्व ।

[ध्या०] सितकञ्ज, पाण्डूतप, हवीवर, परमाम्भोजं चेति तत्पितृव्यवृत्तयः प्रिय
 तुल्य पण्डिते—अपीतक्ष्ण वास्तत्रिणुषमतिभिर्ज्ञेयमिच्छुर्गिरि ।
 उदाहरणमेतेषां जमेर्णयोष्यः ॥ २८ ॥

१. गोविं स्तुत्य । २ गोवि गितम् ।

जनितवितण्डा-
जितबल भण्डी-
रदयित खण्डी-
कृतनवडिण्डी-

।

गण कलकुण्डी'-
कृतकलकण्ठी-
कुल मणिकण्ठी-
स्फुरितसुकण्ठी-
प्रिय वरकण्ठी-
रवरण वीर !

दण्डी कुण्डलिभोगकाण्डनिभयोरुदण्डदोर्दण्डयोः,
दिलप्टश्चण्डिमहम्बरेण निविडश्रीखण्डपुण्ड्रोज्ज्वलः ।
निर्द्धूतोद्यदचण्डरश्मिघटया तुण्डधिया मामकं
कामं मण्डय पुण्डरीकनयन त्वं हन्त हृन्मण्डलम् ।
कन्दर्पकोदण्ड-दर्पश्रियोदण्ड-
दृग्भङ्गिकाण्डीर संजुष्टभाण्डीर
धीर !
त्वमुपेन्द्र कलिन्दनन्दिनी-तटवृन्दावनगन्धसिन्धुर ।
जय सुन्दरकान्तिकन्दलैः स्फुरदिन्दीवरवृन्दवधुभिः ।
सविरुषं पाण्डुत्पलमिदम् । २३।

२४. अथ इन्दीवरम्

जय जय हन्त
द्विप दभिहन्त-
मधुरिमसन्त-
पितृजगदन्त-
मृदुल वसन्त-
प्रिय सितदन्त-
[स्फुरितदिगन्त
प्रसरदुदन्त]^१

प्रम चदनन्त-
 प्रियसख सन्त-
 स्त्वयि रतिमन्त.
 स्वमुदहरन्त]'
 प्रभुवर नन्दा-
 रमज गुणकन्दा-
 सितनवकन्दा-
 कृतिधर^१ कुन्दा-
 मलरद तुन्दा-
 त्तभुवन वृन्दा-
 वनभवगन्धा-
 स्पदमकरन्दा-
 न्वितनवमन्दा-
 रकुसुमवृन्दा-
 चितकच वन्दा-
 रुनिखिलवृन्दा^२-
 रकवरवन्दी-
 डित विधुसन्दी-
 पितलसदिन्दी-
 वरपरिनिन्दी-
 क्षणयुग नन्दी-
 श्वरपतिनन्दी-
 हित जय वीर !

स्मितरुचिमकरन्दस्पन्दि वक्त्रारविन्द,
 तव पुरुषरहसान्विष्ट गन्ध मुकुन्द ।
 विरचित^३पशुपालीनेप्रसारङ्गरङ्ग,
 मम हृदयतडागे सङ्गमङ्गीकरोतु ।
 अम्बरगतसुरविनतिविलम्बित
 तुम्बरुपरिमविमुरलिकरम्बित

[—] १. पक्षितचतुष्टय नास्ति क. प्रती । २. गोवि. घृतिधर । ३. ख. पंक्तिरियं
 नास्ति । ४. गोवि. परिचित ।

शम्बरमुसमृगनिकरकुटुम्बित
सभ्रमवलयितयुवतिविचुम्बित
घोर !

अम्बुजकुटुम्बदुहितुः कदम्बसम्बाधवन्धुरे पुलिने ।
पीताम्बर कुरु केलि त्व वीर ! नितम्बिनीघटया ॥

सविश्वमिदमिन्वीचरम् । २४।

२५. अथ अरुणाम्भोरुहञ्चण्डवृत्तम्

जय रससम्पद्-विरचितकम्प
स्मरकृतकम्प-प्रियजनशम्प
प्रवणितकम्प-स्फुरदनुकम्प
द्युतिजितशम्प-स्फुटनवचम्प-
श्रितकचगुम्प श्रुतिपरिलम्ब-
स्फुरितकदम्ब स्तुतमुख डिम्ब-
पिय रविविम्बो-दयपरिजृम्भो-
न्मुखसदम्भो-रुहमुख लम्बो-
दभटभुज लम्बो-दरवरशुम्भो-
पमकुचविम्बो-ष्ठयुवतिचुम्बो-
द्भट परिरम्भोस्तुक कुरु श भो-
स्तडिदवलम्बो-जितमिलदम्भो-
घरसुविडम्बो-दधुर नतशम्भो
रपिजितदम्भो^१-लिगरिमसम्भा-
वितभुजजृम्भा^२-हितमद लम्पा-
कमनसि सम्पादय मयि त पा-
किममनुकम्पालवमिह घोर !

दिद्ये दण्डघरस्वसुस्तभवे फुलाटवीमण्डले,
वल्लीमण्डपभाजि लब्धमदिरस्तम्बेरमाहम्बरः ।
कुर्वन्नञ्जनपुञ्जगञ्जनमति श्यामाङ्गकान्तिश्रिया,
लीलापाङ्गतरङ्गितेन तरसा मा हन्त सन्तर्पय ।

अम्बुजकिरणविहम्बक खञ्जनपरिचलदम्बक
चुम्बितयुवतिकदम्बक कुन्तललुठितकदम्बक
कीर !

प्रेमोद्वेल्लितवल्गुभिर्वल्लयितस्त्व वल्लवीभिर्विभो !
रागोत्सापितवल्गुकीविततिभिः कल्याणवल्लीभुवि ।
सोल्लुण्ठं मुरलीकलापरिमलं^१ मल्लारमुल्लासयन्,
वात्येनोत्ससिते दृशौ मम तडिल्लीलाभिरत्फुल्लय ।

सवित्त्वमिदमरुणाम्भोरुहम् ॥ २५ ॥

एते फादिपञ्चवर्गोत्थापिताः पञ्चचण्डवृत्तस्य महाकलिकारूपस्य सङ्कीर्णाः
प्रभेदाः ।

अथ गमिताः

तत्र प्रभेदाः—

२६. फुल्लाम्बुजञ्चण्डवृत्तम्

पष्ठे भङ्गश्च मैत्री च नयावेव गणौ यदि ।
अन्तस्थस्य तृतीयेन यदि मैत्रीकृता भवेत् ॥ २६ ॥
स्वरोपस्थापिता श्लिष्टा रमणीयतरा क्वचित् ।
फुल्लाम्बुज तदुद्दिष्ट चण्डवृत्तं सुपण्डितैः ॥ ३० ॥

[ध्या०] कोऽयं ? उच्यते—यदि नयावेव—नगणमगणावेव गणौ स्तः । पष्ठे वर्गं भङ्गो
मैत्री च यदि अन्तस्थस्य मवर्गस्य तृतीयेन लकारेण कृता भवेत् । सापि क्वचित् स्वरोपस्थापिता
श्लिष्टा च स्यात् । तदा एतद्देशावृत्तमिव नामतः फुल्लाम्बुज इति प्रसिद्धं सुपण्डितैश्चण्ड-
वृत्तमुद्दिष्टं—कथितमित्यर्थः । यथा—

व्रजपृथ्वल्ली^१-परिसरवल्ली-
वनभुवि तल्लीगणभृति मल्ली-
मनसिजमल्ली-जितशिवमल्ली-
कुमुदमल्लीजुपि गत मल्ली-
परिपदि हल्ली-सकसुखमल्ली^३-
रत परिफुल्ली-कृतचलचिल्ली-

जितरतिमल्लीमद भर सल्ली-
लतिलक कल्या-तनुशततुल्या-
हवरसकुल्या-चटुतिलखल्या-
प्रमथन कल्याणचरित धीर ।

गोपी सम्भृतचापल-चापलताचित्रया भ्रुवा भ्रमयन् ।
विलस यशोदावत्सल वत्सलसद्देनुसचीत ।

* वल्लवललनालीलावलमित
पल्लवरचना मल्लीविलसित
वल्लभकलनाखेलासमुदित
सत्सवधटना नीलालकवृत ।

तव चरणाम्बुजमनिश विभावये नन्दगोपाल ।
गोपालनाम वृन्दावनभुवि यद् रेणुरञ्जिता धरणी ।*

सविरुद कुस्ताम्बुजनिवम् । २६।

१ * *टिप्पणी—सङ्केता-तर्गताशस्य स्थाने निम्नांशो वर्तते गोवि-दविरुदावत्याम् । परञ्च
धृत्तमौक्तिकवृत्ता ध्यायमश पल्लवितञ्चण्डवृत्तस्य शिथिलद्वितीयवर्णोदा-
हरणरूपेण स्वीकृत, स च २३३ पृष्ठेऽवलोकनीया विद्वद्भि ।

वल्लवलीलासमुदयसमुचित
पल्लवरागाघरपुटविलसित
वल्लभगोपीप्रवर्णित मुनिगण
दुर्लभकेतीभरमधुरिमकण
मल्लविहारादभुततरुणिमधर
कुल्लमृगाक्षीपरिवृतपरिसर
चिल्लिविलासापितमनसिजमद
मल्लिकलापामलपरिमलपद
रल्लकराजीहरसुमधुरकल
हल्लकमालापरिवृतकचकुल
वीर ।

वल्लवललनावल्ली करपल्लवशीलितस्कन्धम् ।
वल्लवित परिपुल्ल भजाम्यह कृष्णकङ्केलिम् ॥

२७. अथ अम्पारञ्चण्डवृत्तम्

द्वितीयो मधुरो यत्र दित्थं. वयापि भवेद् यदि ।

नगो पट्टशर चैतन् म्वेच्छात गदवत्पनम् ॥ ३१ ॥

नम्पय अञ्जुल स्यात्—

[प्या०] आयायं — 'यत्र द्वितीयो वर्णो मधुर - परसद्वर्णो भवेत् : वयापि-बुधचित् यदि दित्थोपि स्यात् ।' तत्र गचनियममाह— भग्नो-भगचनगचो गचो भवेताम् । पट्टशरं चैतन् परम् । रिञ्च, परस-पा रवेच्छातो यत्र भदति हृदेच्छम्पय नाम अञ्जुल स्यात् । यथा—

मञ्जुलदरण^१-मुदरनयन
व दरदयन वलवगरण
पल्लवचरण मञ्जुलमुगुण-
गिञ्जलमगुण चन्दनचन
मन्दनवचन गण्डितशकट
दण्डितशकट-गवितदनुज
पवितमनुज रक्षितपवल
लक्षितगवल पन्नगदलन
मन्नगवलन वधुरवलन
सिञ्जुलसदन^२ कल्पितसदन^३-
जल्पितमदन^४ मञ्जुलमुकुट
अञ्जुलमुकुट-रञ्जितकरभ
गञ्जितशरभ-मण्डलवलित
कुण्डलवलित-मण्डितपन
नन्दितपन-अन्यकमुपम
अन्यकमुमुम^५-गर्भक धरण^६-
दग्भकधारण तर्णकवलित
धर्णकललित दा यरवलय
हम्बर वलय
देव

१-१. ल. प्रती नास्ति पाठ । २. भोवि. सचलवदणचञ्चलकदणमुन्दरनयन । ३. क.
पदन । ४. गोवि. मदन । ५. गोवि. सदन । ६. गोवि. अन्यकमुमुम । ७. गोवि.
विरण ।

दानवघटालवित्रे घातुविचित्रे जगच्चित्रे ।
 हृदयानन्दचरित्रे रतिरास्तां वल्लवीमित्रे ।
 रिङ्गदुश्भृङ्ग-तुङ्गगिरिशृङ्ग-
 शृङ्गस्तमङ्ग-सङ्गधृतरङ्ग
 वीर !

स्वमत्र चण्डामुरमण्डलीनां रण्डावशिष्टानि गृहाणि कृत्वा ।
 पूर्णान्यकार्पायैर्जसुन्दरीभिवृन्दाटवीपुण्ड्रकमण्डपानि ॥
 सविस्वं धम्पकमिदम् ॥२७॥

२८. अथ पञ्जुलञ्चण्डवृत्तम्

—पञ्जुलं नजला यदि ।

पञ्चमो मधुरस्तत्र पद मुनिमित्तं मतम् ॥ ३२ ॥

[ध्या०] अयमर्थः—यदि नजलाः—भगणजगलपवः स्युः । किञ्च, तत्र पदे पञ्चमो वर्णा
 मधुरः—परसवर्णो भवति । पदमपि मुनिभिः—सप्तभिर्वर्णमितं—परिमितं यत्र तत् पञ्जुलं—
 पञ्जुलाक्षयमतिमञ्जुलं चण्डवृत्तं मतं—सम्मतमित्यर्थः । पदरूपं तु पूर्ववत् । मया—

जय जय सुन्दर-विहसित मन्दर-
 विजितपुरन्दर निजगिरिकन्दर-
 रतिरसशङ्कर मणिमुक्तकण्ठर
 गुणमणिमन्दिर हृदि वलविन्दिर
 गतिजितसिन्धुर परिजनबन्धुर
 पशुपतिनन्दन तिलकितचन्दन
 विधिकृतचन्दन पृथ्वरिचन्दन-
 परिवृतनन्दन^१-मधुरिमनिन्दन^२-
 मधुवन वन्दित-कुसुमसुगन्धित-
 वनवररञ्जित रतिरभसरञ्जित^३
 शिखिदलकुण्डल-सहकृतमण्डल
 नवसिततण्डुल-जगिरदमण्डल
 रतिरणपण्डित वरतनुमण्डित
 नखपदमण्डित दशनविखण्डित
 वीर !

निनिन्द निजमिन्दिरा वपुरवेक्ष्य यासा श्रिय,
 मिचार्य गुणचातुरीमचलजा च लज्जा गता ।
 लसत्पशुपनन्दिनीततिभिराभिरानन्दित,
 भवन्तमत्तिसुन्दर व्रजकुलेन्द्र वन्दामहे ।
 रसपरिपाटी स्फुटतरुवाटी
 मनसिजघाटी प्रियनतशाटी^१-
 हर जय वीर ।

सम्भ्रान्तौ सपङ्कपातमभितो वेदैर्मुदा वन्दिता,
 सीमन्तोपरि गौरवादुपनिषद्देवीभिरप्यपिता ।
 भ्रान्तं प्रणयेन च प्रणयतो तुष्टामना^२ विवृता^३,
 मृद्वी ते मुरलीरतिमु^४ररिपो क्षमाणि निर्मातु न ।
 तविदद वञ्जुलमिदम् । २८।

२९. अथ कुन्दकण्ठवृत्तम्

द्वितीयपट्ठी भधुरो विलप्यो वा क्वापि तो यदि ।

स्याताम् भजो तदा कुन्दम्—

[व्या०] एतदुक्तं भवति । यदि द्वितीयपट्ठी धर्षो^१ मधुरी-परसवर्णौ^२ क्वापि पदे विलप्यो
 या, तो धर्षो^३ स्याताम् । अथ च भजो-भगवजगणी भवत, तदा कुन्द इति नाम कण्ठवृत्त
 भवति । पदक्षरमिदं पदम् । पदविन्यासस्तु पूर्ववत् । यथा—

नन्दकुलचन्द्रं तुप्तभवतन्द्र
 कुन्दजयिदन्तं दुष्टकुलहन्त
 रिष्टसुवसन्तं मिष्टसदुदन्त
 सदलितमल्लि-कन्दलितवल्लि-
 गुञ्जदलिपुञ्ज-मञ्जुतरकुञ्ज-
 लब्धरतिरङ्ग हृद्यजनसङ्ग-
 शर्मलसदङ्ग हर्षकृदनङ्ग
 भक्तपरपुष्ट-रम्यकलघुष्ट
 गन्धमरजुष्ट पुष्पवनतुष्ट
 कृत्तखलक्ष^४ युद्धनयदक्ष

१. गोवि. प्रियनवशाटी- । २. गोवि. हृष्टात्मना । ३. गोवि. मिष्टता । ४. गोवि.
 यक्ष ।

वल्गुकचपक्ष-[वद्धशिखिपक्ष] १

पिष्टनततृष्ण तिष्ठ हृदि कृष्ण

धीर ।

तय कृष्ण केलिमुखी हितमहित च स्फुट विमोहयति ।

एव सुधोमिसुहृदा विपविपमेणापर ध्वनिना ।

सन्तोतदैतेयनिस्तार कल्याणकारुण्यविस्तार

पुष्पेपुकोदण्डटङ्कार-विस्फारमञ्जरीभङ्कार

धीर ।

रङ्गस्थले ताण्डवमण्डनेन २ निरस्य मल्लोत्तमपुण्डरीकान् ।

कसद्विष चण्डमलण्डयद यो हृत्पुण्डरीके स हरिस्तवास्तु ।

सविन्द कुन्दमिदम् । ३१

३०. अथ बकुलभासुरञ्चण्डवृक्षम्

—अयो ३ बकुलभासुरम् ॥ ३३ ॥

चतुर्भिस्तुरगं निर्जे पद यनातिसुन्दरम् ।

रसेन्दुमात्र सोल्लाल—

[श्या०] अस्यायं —अयं-कुन्दान्तर बकुलभासुर इति नामक चण्डवृक्ष कथ्यत इति शेष ।

यत्र चतुर्भि-चतु सहायकै निर्जे-अगणविरहितं चतुर्विधस्तुरगं-चतुष्कलं द्विजगण-कर्ण भगण-^४
सगर्जेवातिसुन्दर-प्रतिरमणीयं रसेन्दुमात्र-षोडशमात्र पद भवति । तच्च पद उत्तमसिद्ध
षोडश विंशकावधिबाणाधिक विधेयमित्युपदेश । किञ्च, रसे-साल-उल्ललनमेव उल्लाल
परायत्नं तेन सहितं शृङ्खलावद्ध-यायेन घटितमित्यर्थ । तदीदृश बकुलभासुर चण्डवृक्ष
सविन्द भवतीति वाक्याय । श्या-

जय जय वशीवाद्यविशारद

शारदसरसीरुहपरिभावक-

भावकलितलोचनसञ्चारण

चारणसिद्धवधूघृतिहारक

हारकलापरुचाश्रितकुण्डल^५

कुण्डलसित^१ गोवर्द्धनभूषित

भूषितभूषणविच्छन्न^७ विग्रह

विग्रहखण्डितसलवृषभासुर

१ [-] क ख नाति पाठ । २ गोवि मण्डलेन । ३ ख अय । ४ ख

तमणसगणे- । ५ गोवि रुचाञ्चितकुण्डल । ६ गोवि कुण्डलसद् । ७ गोवि विद्यन- ।

भासुरकुटिलकचापितचन्द्रक
 चन्द्रकदम्ब^१रुचाभ्यधिकानन
 काननकुञ्जगृहस्मरसङ्गर
 सङ्गरसोद्घुखाहृभुजङ्गम
 जङ्गमनवतापिच्छनगोपम
 गोपमनीपितसिद्धिपु दक्षिण
 दक्षिणपाणिगदण्डसभाजित
 भाजितकोटिशशाङ्कविरोचन
 रोचनया कृतचाहविशेषक
 शेषकमलभवसनकसनन्दन-
 नन्दनगुण मा नन्दय सुन्दर
^१सुन्दर मामव भीतिविनाशन^२
 वीर ।

भवत प्रतापतरणावुदेतुमिह लोहितायति स्फीते ।
 दनुजाग्धकरनिकराः शरण भोजुगुं हाकुहरम् ॥

पुलिनघृतरङ्ग-ध्रुवतिकृतसङ्ग
 मदनरसभङ्ग-गरिमलसदङ्ग
 धीर ।

पशुपु कृपा तव दृष्ट्वा दुष्ट^३महारिष्टवत्सकेशिमुखा ।
 दर्पं विमुच्य भीता पशुमाव भेजिरे दनुजा ॥

सविश्व बहुलभासुरमिदम् । ३० ।

३१. अथ बहुलमङ्गलञ्चञ्चलवृत्तम्

—अन्तो वकुलमङ्गलम् ॥ ३४ ॥

चतुर्भिर्भगणैरेव हयैर्यत्र पद भवेत् ।

रसेन्दुकलक तत्र तृतीये शृङ्खलास्थिता ॥ ३५ ॥

[व्या०] कोऽयं ? उच्यते । अन्त-बहुलभासुरानन्तर बहुलमङ्गल-बहुलमङ्गलाख्य
 चण्डवृत्तमुच्यते इति शेषः ॥ ३४ ॥

पत्र चतुर्भि-चतु सहायकं केवलैरादिगुरुकं-भगणैरेव हयै-चतुष्कलं रसेन्दुकलक-
 षोडशमात्र पद भवेत् । किञ्च, तत्र-तस्मिन्पदे तृतीये अर्थात् तृतीये भगणे शृङ्खलास्थिता चेद्-

भवति, तदा वकुलमङ्गलाभिधानं खण्डवृत्तं सविस्तरं भवतीति वाक्यार्थः । पदविन्यासोपदेशस्तु पूर्ववदेव । षोडशमात्रत्वमुभयत्र समानं । परं च चतुर्थभगणघटनमध्यभृङ्गलाघन्यनमात्रमेव वकुलभासुराद् भेदं बोधयतीत्यवधेयं सुधीभिरिति शिवम् ॥३५॥

प्रया-

त्वं जय केशव केशवलस्तुत
वीर्यविलक्षण लक्षणबोधित
केलिपु नागर नागरणोद्धत
गोकुलनन्दन नन्दनतिव्रत-
सान्द्रमुदप्यंक दप्यंकमोहन
हे सुप्रमानवमानवतीगण-
माननिरासक रासकलाश्रित
सस्तनगौरवगौरवधूवृत^१
कुञ्जशतोपित तोपितयीवत
रूपभराधिकराधिकयाचित
भीरुविलम्बित लम्बितशेखर
केलिकलालस^२लालसलोचन
शेषमदारणदारुणदानव-
मुक्तिदलोकन लोकनमस्कृत-
गोपसभावक भावकशमंद
हन्त कृपालय पालय मामपि
देव !^३

पलायन^४ फेनिलवक्त्रता च बन्धं च भीतिं च मूर्तिं च कृत्वा ।
पवर्गदातापि शिखण्डमौले त्वं शाश्वदाणामपवर्गदोऽसि ॥

प्रणयभरित - मधुरचरित
भजनसहित - पशुपमहित
देव !

अनुभूय विप्रम ते युधि लब्धाः कादिशीकृत्वम् ।

हित्वा^५ किल जगदण्ड प्रपलायाचकिरे दनुजाः ।

सविस्तरं वकुलमङ्गलमिदम् ॥३६॥

१ क कृत । २ गोवि. केलिकुलालस- । ३. गोवि. वीर । ४. गोवि. पराभव ।
५. गोवि. भित्त्वा ।

३२ अथ मञ्जरी कोरकश्चण्डवृत्तम्

मञ्जरी चात्र पूर्वं श्लोको लेखस्तदनन्तरम् ।

कोरकाख्य चण्डवृत्त पदसंस्थानखेयंदि ॥ ३६ ॥

[ध्या०] अस्यायं — अभिधीयत इत्यर्थः । प्रथमतो मञ्जरी तत कलिका भवतीति लौकिकानां प्रसिद्धे । तत्र चतुर्भि भगणे शुद्धेराद्यन्तयमकाङ्कितं कोरकाख्य चण्डवृत्त । यदि पदस्य आद्यन्तयोयमकाङ्कितं — यमकेन अङ्कितं सयमकैरिति यावत्, शुद्धं — शृङ्गलारहितं चतुर्भि भगणै — आदिगुरुकैर्गणै पदम् । अथ च पदसंस्था यदि नखै — विंशत्या भवति, तदा कोरकाख्य चण्डवृत्त भवति । शृङ्गलाराहित्यमेवात्र पूर्वस्माद् भेद गमयतीति ॥ ३६ ॥

तत्र प्रथम मञ्जरी, यथा—

नवशिखिशिखण्डशिखरा^१ प्रसूनकोदण्डचित्रशस्त्रोव ।

क्षोभयति कृष्ण वेषो श्रेणीरेणीदृशा भवत् ॥

कोरकम्, यथा—

मानवतीमदहारिविलोचन
दानवसञ्चयधूकविरोचन
डिण्डिमवादिमुरालिसमाजित
चण्डिमशालिभुजार्गलराजित
दीक्षितदीवतचित्तविलोभन
वीक्षित सुस्मितमार्दवशोभन
पर्वतसम्भृति^२ निघुं तपीवर-
गवंतम् परिमुग्धशचीवर^३
रञ्जितमञ्जुपरिस्फुरदम्बर
गञ्जितकेशिपराक्रमडम्बर
कोमलताङ्कितवागवतारक
सोमललाममहोत्सवकारक
हसरयस्तुतिशसितवक्षक
कसवधूतुतिनुभवतसक
रङ्गतरङ्गितचारुदृगञ्चल
सङ्गतपञ्चशरोदयचञ्चल
सुञ्चितगोपसुताभणशाटक
सञ्चितरङ्गमहोत्सवनाटक
तारय मामुरुससृतिशातन

१ क शिखण्डशिखरा । २ गोवि. पर्वतसम्भृति- । ३ ख शचीवर ।

धारय लोचनमत्र सनातन
धीर !

तुरगदनुसुताङ्गग्रावभेदे दधानः,
कुलिशघटितटङ्कोद्दण्डविस्फूर्जितानि ।
तदुरुविकटदष्ट्रोन्मु (मृ) प्टकेयूरमुद्रः,
प्रथयतु पटुता यः कैशवो वामबाहु ।
भाधव विस्फुर दानवनिष्ठुर
यौवतरज्जित सौरभसज्जित
धीर !

पलितकरणी दशा प्रभो मुहुरन्धकरणी च मा गता ।
सुभगकरणी कृपा शुभेन तवाढ्यं करणी च मय्यभूत् ॥
सविष्टः कोरकोऽयम् ॥ ३२ ॥

३३. अथ गुच्छकञ्चण्डवृत्तम्
नसौ जनो जलो ज्रमात् प्रयोजितो बुधा यदा ।
तदा तु चण्डवृत्तक विभावयन्तु गुच्छकम् ॥ ३७ ॥

[व्या०] अयमर्थ — हे बुधा ! यदा नसौ-नयनसगणौ, अथ च जनो-जगणनगणौ,
ततश्च जलो-जगणलघू कमात्-प्रतिपद प्रयोजितौ भवत, तदा तु गुच्छक नाम चण्डवृत्त
विभावयन्तु-कुर्वन्तु । अत्रोभयत्र स्थार्थे क ॥ ३७ ॥ किञ्च-

षोडशार्णं पद चात्र पदान्यपि च षोडश ।
सानुप्रासानि यमकैरङ्कितानि च गुच्छके ॥ ३८ ॥

[व्या०] शुभमम् । यथा-

जय जलदमण्डलीद्युतिनिवहसुन्दर
स्फुरदमलकोमुदीमृदुहसितबन्धुर
प्रजहरिणलोचनावदनशशिचुम्बक
प्रचलतर^१खञ्जनद्युतिविलसदम्बक
स्मरसमरचातुरोनिचयवरपण्डित
प्रणययुतराधिकापटिमभरभण्डित
ववणदतुलवशिका^२हृतपशुपमीवत
स्थिरसमरभाधुरोकुलरमितदेवत

प्रथितशिखिचन्द्रकस्फुटकुटिलकुन्तल
 ध्रुवणतट^१ सञ्चरन्मणिमकरकुण्डल
 प्रथित तव^२ ताण्डवप्रकटगतिमण्डल
 द्विजकिरणघोरणीविजितसिततण्डुल
 स्फुरित तव दाडिमौकुसुममुतकर्णक^३
 छदनवरकाकलीहृतचटुलतर्णक^४
 *प्रकटमिह मामके हृदि वससि माधव
 स्फुरसि ननु संततं सकलदिशि मामव^५
 धीर !

पुनागस्तवकनिबद्धकेसजूटः,
 कोटीरीकृतवरकेकिपक्षजूटः ।
 पाथान्मां मरकतमेदुरः स तन्वा,
 कासिन्दीतटविपिनप्रसूनधन्वा ।^६
 गगंप्रिय जय भगंस्तुत रस
 सगंस्थिरनिज-वर्गप्रवणित
 धीर !

दनुजवधूवैधव्यघ्नतदीक्षाशिक्षणाचार्यः ।
 स जयति विद्वरपाती मुकुन्द तव शृङ्गनिर्घोषः ।
 सचिरदं गुच्छारयं चण्डवृत्तम् ॥३३॥
 ३४. अयं कुसुमञ्चण्डवृत्तम्
 चतुर्भिर्नगर्णयत्र पदं यमकितं भवेत् ।
 अनन्तनेत्रप्रमितं कुसुमं तत्प्रकीर्तितम् ॥ ३६ ॥

[ध्या०] अनन्तं-शून्यं नेत्रं-द्वयं तान्म्यां प्रमितं-गणितं पदं यत्र तत्, विधातिपवमित्यर्थः ।

शैवं सुगमम् ॥३६॥

शर-
 -

कुसुमनिकरनिचितचिकुर^१
 नखरविज्जितमणिजमुकुर
 सुमटपटिमरमितमथुर
 विकटसमरनटनचतुर

१. गोवि. ध्रुवणतट- । २. गोवि. प्रथितनव- । ३. गोवि. स्फुरितवरदाडिमौकुसुममुग-
 कर्णकः । ४-४. गोवि. पंक्तिद्वयं नास्ति । ५. क. नत्वा । ६. गोवि. रचितचिकुर ।

समदभुजगदमनचरण
 निखिलपशुपतिचयशरण^१
^२अमलकमलविशदचरण
 सकलदनुजविलयकरण^३
 मुदितमदिरमधुरनयन
 शिखरिकुहररचितशयन
 रमितपशुपयुवसिपटल
 मदनकलहघटनचट्टल
 विषमदनुजनियहमयन
 भुवनरसदविशदकपन
 कृमुदमृदुलविलसदमल-
 हसितमधुरवदनकमल
 मधुपसदृशविचलदलक
 मसृणधुसृणकलिततिलक
 निभूतमुपितमयितकलश
 सततमजित मनसि विलस
 धीर !

सखि! चातकजीवातुर्माधव सुरकेकिमण्डलोल्लासि ।
 तव दैत्यहंसभयद शृङ्गाम्बुदगर्जितं जयति ॥
 पुरुषोत्तम वीरव्रत यमुनाद्भुतसौरस्थित
 मुरलिध्वनिपूरकिय सुरभीव्रजनादप्रिय !
 वीर !

जगतीसभावलम्बः स तव जयत्यम्बुजाक्ष दोस्तम्भः ।
 रभसाद्विभेद दनुजान् प्रतापनृहरियन्तोऽभ्युदितः ॥
 सविस्दं कुसुममिदम् । ३४।

एते महाकलिकारूपस्य चण्डवृत्तस्य नवभिर्मताः^४ प्रभेदाः । इत्येवं चतुस्त्रि-
 षातिः ३४ प्रभेदाः ।

^१इति श्रीवृत्तमौक्तिके विद्यावत्या महाकलिकारूप-पुरुषोत्तमाधिकुसुमान्तं^५
 सविस्दमवान्तरं चण्डवृत्तप्रकरणं द्वितीयम् । २।

१. क. चरण । २-२. गोवि. पंक्तिद्वयं नास्ति । ३. ख. नवगभिः । ४-४. पंक्तिरियं
 नास्ति क. प्रती ।

[विरुदावल्या तृतीय त्रिभङ्गी-कलिकाप्रकरणम्]

१. अथ दण्डकत्रिभङ्गी कलिका

अथ त्रिभङ्गीकलिकासु दण्डकत्रिभङ्गीकलिकागमित तद्गतं^१ तक्ष्यते । तद्भङ्गानां^२
बाहुल्यादेवास्या कलिकाया दण्डकत्रिभङ्गीति सज्ञा ।

अथाऽस्या लक्षण सम्यक् सोदाहरणमुच्यते ।
भङ्गबाहुल्यतश्चास्या सज्ञाप्या^३वर्धिका^४ भवेत् ॥१॥

यथा-

नगणयुगलादनन्तरमिह चेद् रगणा भवन्ति रङ्गमिता ।
विरुदावल्या कलिका कथितेय दण्डकत्रिभङ्गीति ॥ २ ॥

[व्या०] रङ्गानि-नय कविता इत्यत्र तद्विषयाहार । भङ्गबहुत्वाच्चास्या दण्डक-
त्रिभङ्गी सतीति फलितोऽर्थः । अत्र च पदरचनाया पदविन्यास स्वेच्छया भवतीति सिद्धान्त-
लोकनरीत्यावगन्तव्यम् । यथा-

चित्र मुरारे सुरवेरिपक्ष-
स्त्वया समन्तादनुबद्धयुद्ध ।
अमित्रमुच्चैरविभिद्य भेद,
मित्रस्य कुर्वन्नमित^५ प्रयाति ॥

श्रितमघजलधेर्वहिन चरित्र सुचित्र विचित्र
फणित्र समित्र पवित्र लवित्र रुजाम् ।
जगदपरिमितप्रतिष्ठ पटिष्ठ बलिष्ठ गरिष्ठ
१अदिष्ठ सुनिष्ठ लघिष्ठ दविष्ठ^२ धियाम् ।
निखिलविलसितेऽभिराम सराम भुदा मञ्जुदाम-
अभाम ललाम धृतामन्दधाम नये ।
भधुमथनहरे मुरारे पुरारेरपारे ससारे
विहारे सुरारेरुदारे च दारे प्रभुम् ।
स्फुरितमिनमुत्तातरङ्गे विहङ्गेशरङ्गेण गङ्गे-
ऽटभङ्गे भुजङ्गेन्दसङ्गे सदङ्गन गो ।

१. स अन्तर्गतं । २ क. तद्भङ्गानां । ३. ल. सज्ञाप्यावर्धिका । ४. गोवि
कुर्वन्नमित । ५-५. गोवि. वरिष्ठ अदिष्ठ सुनिष्ठ दविष्ठ ।

शिखरिवरदरीनिशान्तं प्रयान्तं सकान्तं विभान्तं
 नितान्तं च कान्तं प्रशान्तं कृतान्तं द्विषाम् ।
 दनुजहर भजाम्यनन्तं सुदन्तं नुदन्तं दृगन्तं
 हसन्तं 'भजन्तं चरन्तं' भवन्त सदा ।
 वीर !

पीत्वा बिन्दुकण मुकुन्द भवतः सौन्दर्यसिन्धोः सकृत्-
 कन्दर्पस्य वशं गता विमुमुहुः के वा न साध्वीगणाः ।
 दूरे राज्यमयन्त्रितस्मितकला भ्रूवल्लरीताण्डव-
 क्रीडापाङ्गतरङ्गितप्रभृतयः कुर्वन्तु ते विभ्रमाः ॥

चारुतट - रासमट
 गोपभट पीतपट
 पद्मकर दैत्यहर
 कूञ्जचर वीरवर
 नममय कृष्ण जय
 नाथ !

ससाराम्भसि दुस्तरोभिगहने गम्भीरतापन्नयी-
 कुम्भीरेण गृहीतमुग्रगतिना^१ क्रोशन्तमन्तर्भयात् ।
 दीप्रेणाद्य सुदर्शनेन विबुधवलाग्नित्विच्छिदाकारिणा,
 चिन्तासन्ततिरुद्धमुद्धर हरे मन्त्रितदन्तीश्वरम् ।

इति सविस्तरा दण्डकत्रिभङ्गी कलिका । १ ।

२. अयं सम्पूर्णा विदग्धत्रिभङ्गी कलिका

अथापरा सम्पूर्णा विदग्धत्रिभङ्गी कलिका लक्ष्यते । यथा—

युग्मे भङ्गस्तनौ श्रुक्नी भी चान्ते यत्र मिश्रितौ ।
 वसुसस्यं परे ह्यत्र^३ पदे सा स्यात् त्रिभङ्गिका ॥ ३ ॥
 विदग्धपूर्वा सम्पूर्णा कलिकाऽतिमनोहरा ।

आद्यान्ताशी.पद्ययुक्ता—

[व्या०] एतद् युक्तं भवति । यत्र पदे—यस्यां कलिकाया वा युग्मे—द्वितीयपादरे भङ्गो भवति ।
 तथा तनौ—तगणनपणौ स्तः । तौ च श्रुक्नी—वारत्रययुक्ता जेतु । अन्ते—तना त्रयान्ते^४ मिश्रितौ—

१. गोवि. वसन्तं भजन्तं. २. गोवि. मतिना । ३. ख. भवेद् यत्र । ४. ल
 तनत्रयान्ते ।

सलग्नी भो-भगणौ च यदि हत । यत्र चैवविध वसुसत्य पद भवेत्, सा विदग्धपूर्वा-विदाध-
शब्दपूर्वा सम्पूर्णा प्रथमलक्षितलक्षणविलक्षणा प्रतिमनोहरा विदग्धत्रिमङ्गीकलिका स्यात्
इत्यन्वयः । अष्टपदत्वमेव पूर्वोक्ताया सकाशात् ध्वनिलक्षणं स्फुटमेव लक्षयति । एतदेव चास्या
सम्पूर्णत्वमिति । किञ्च, आद्यन्तयो कलिकाया इति शेष, आशी पद्ययुक्ता-आशी पद्याभ्या
युक्ता आशीर्वादयुक्तपद्याभ्यां सयुक्ता इत्यर्थः । आद्यन्तपदसाहित्यं च तत्कलिकामुक्तेषु पूर्वो-
क्तेषु सर्वेषु चण्डयुक्तेषु शेष सुधीभिरित्युपदेशरहस्य, अप्रेषि तथैव वक्ष्यमाणत्वादिति । इयमेव
च क्षण्डावलीति स्पष्टदिश्यते, तथा चाग्रे तथैव लक्षयिष्यमाणत्वादिति । यथा-

उद्वेलेत्कुलजाभिमानविकचाम्भोजालिगुभ्राशव^१

केलीकोपकपायितालिललनामानाद्रिदम्भोलय ।

कन्दर्पञ्जरपोडितव्रजवधूसन्धोहजीवातवो,

जीयासुर्भंवतश्चिर यदुपते स्वच्छा कटाक्षच्छटा ॥^२

चण्डीप्रियन्त चण्डीकृतवलरण्डीकृतखलवल्लभ वल्लव
पट्टाम्बरधर भट्टारक वक्रकुट्टाक ललितपण्डितमण्डित
नन्दीश्वरपति-नन्दोहितभर सदीपितरससागर नागर
अङ्गीकृतनवसङ्गीतक वर-भङ्गीलवहृतजङ्गमलङ्गिम
गोत्राहितकर गोत्राहितदय गोत्राधिपधृतिशोभनसोभन
वन्द्यास्थितवहुक-यापटहर धन्याशयमणिचोर मनोरम
शम्भारुचिपट सम्पालितभव-कम्पाकुलजन फुल्ल समुल्लस
सर्वीप्रियकर स्वर्णीकृतखल दर्वीकरपतिगवितपर्वत
घोर ।

पिष्ट्वा सङ्ग्रामपट्टे पटलमकुटिले^३ दैत्यगोकण्टकाना,

क्रीडालोठीविधट्टे स्फुटमरतिकर नैचिकीचारकाणाम्^४ ।

वृन्दारण्य चकारखिलजगदगदङ्गारकारण्यकारो^५,

य सञ्चारोचित व सुखयतु स पट्ट कुञ्जपट्टाधिराज ।

पिच्छलसदधमनीलकेश

चन्दनचचितचारवेश

खण्डितदर्जनभूरिमाय,

मण्डितनिर्मलहारिकाय ।

घोर ।

१ क शुभ्राशन । २ गोवि पद्य नास्ति । ३ क पटलमकुलिते । ४ गोवि
चारकाणाम् । ५ गोवि करण्यधार ।

ग्रीवणि स्फुटमखिल विवर्द्धयन्त,
निर्वाणि दनुजघटासु सघटय्य ।
कुर्वाणि ब्रजनिलय निरन्तरोद्यत्-
पवणि मुरमथन स्तुवे भवन्तम् ॥

द्वितीय सम्पूर्णा सविरुदा विदाघत्रिमङ्गुली कलिका । २।

एते चण्डवृत्तस्य गभितान्तर्गताः प्रभेदा ।

अथ मिश्रिताः

तत्र—

१. मिश्रकलिका

—मिश्रिता चाथ कथ्यते ॥ ४ ॥

प्राद्यन्ताशी पद्ययुक्ता गद्याभ्या चापि समुता ।
मध्यत कलिका कार्या सदण्डैर्भनजैर्मणै ॥ ५ ॥
विरुदेनान्विता चापि रमणीयतरा मता ।
पट्पदा सापि विज्ञेया छन्द शास्त्रविशारदं ॥ ६ ॥

[ध्या०] अत्रार्थ — अथ—विदाघत्रिमङ्गुलीकलिकामन्तर मिश्रिता मिश्रकलिका कथ्यते—
उच्यत इत्यर्थ । ता विशिनष्टि—कलिकाया प्राद्यन्तयोराशी पद्याभ्या युक्ता, तथा प्राद्यन्तयोरेव
गद्याभ्या च समुता मध्यतस्तयोरित्यर्थ, कलिका कार्या । कलिको विशिनष्टि सदण्डै—दण्डो
लघुः । तत्सहितं भनजै—भगणनगणजगणर्जरन्विता समुक्ता इत्यर्थ ॥४५॥

तथा विरुदेन चाप्यन्विता । अतएयातिरमणीयतरा मता—सम्मता । सापि च छन्द-
शास्त्रविशारदं पट्पदा विज्ञेया इत्युपदिश्यत इति बाक्यार्थ । विरुदसाहित्य च विदाघ-
त्रिमङ्गुलीकलिकालक्षणकारिकायामप्यवधेय सुधीभिरिति शिवम् ॥६॥

अथ चादौ प्राशी पद्य, ततो गद्य, ततश्च पट्पदीकलिका, तदनन्तरमपि गद्य, ततो
विरुद, अनन्तरमपि गद्यमेव । ततोपि विरुद धीर सम्बोधनोपलक्षित, सर्वांगे प्राशी पद्यम्,
इति क्रमेणोक्तलक्षणोपलक्षिता मिश्रा कलिका कार्या, इति फलितोऽर्थः ।

अथा—

उदञ्चदतिमञ्जुलस्मितसुधोर्मिलीलास्पद,
तरङ्गितवराङ्गनास्फुरदनङ्गरङ्गाम्बुधि ।
दृगिन्दुमणिमण्डलोत्तलिलनिर्भरस्यन्दनो,
मुमुन्द मुखचन्द्रमास्तव तनोतु शम्भतिलम् ॥ १ ॥

दुष्टदुदंमगरिष्टकण्ठीरवकण्ठविषण्डनसेसदष्टापद नवीनाष्टापदविस्फिपदा-
म्बरपरीत गरिष्टगण्डशैलसपिण्डवक्षःपट्ट पाटव—

दण्डितचटुलगुजङ्गम
कन्दुकविलसितलङ्घिम
मण्डिल^१विचकिल^२मण्डित
सङ्गरविहरणपण्डित
दन्तुरदमुजविहम्बक
कुण्ठितकुटिलकदम्बक ।

खचिताखण्डलोपलविराजदण्डजराजमणिमय^३कुण्डलमण्डितमञ्जुलगण्डस्य-
लविशङ्कटभाण्डीरतटीताण्डवकलारञ्जितमुहूर्तमण्डल

नन्दविबुध्वित-कुन्दनिभस्मित
गन्धकरम्वित शन्दविवेष्टित
तुन्दपरिस्फुर-दण्डकडम्बर ।

^४दुर्जनभोजेन्द्रकण्टककण्ठकन्दोद्धरणो^५हामकुहाल विनम्रविपद्धारणध्वान्त-
विद्रावणमातण्डोपमकृपाकटाक्ष शारदचन्द्र^६मरीचिमाधुर्यविडम्बितुण्डमण्डल

लोष्ठीकृतमणि कोष्ठीकुलमूनि-
गोष्ठीश्वर मधुरोष्ठीप्रिय पर-
मेष्ठी^७हित परमेष्ठीकृतनर
धीर ।

उपहितपशुपालीनेत्रसारङ्गतुष्टि,
प्रसरदमृतधाराधोरणीधौतविश्वा ।
पिहितरविसुधागु प्रागुतापिञ्चरम्या,
रमयतु बकहन्तु^८कान्तिकादम्बिनी य ।

इति मिश्रकविका ॥३॥

अथ चण्डवृत्तस्य मिथित प्रभेद । एवमन्येपि ।

इति विष्ठावल्या चण्डवृत्तमेव दण्डकत्रिमङ्गलावधान्तर-

त्रिमङ्गीकलिका प्रकरण तृतीयम् ॥३॥

इति श्रीवृत्तभोक्तिके वार्तिके सलक्षण चण्डवृत्तप्रकरण समाप्तम् ॥१॥

१. ख तण्डिल । २ क. विचकिल । ३ गोवि मणिमय[य]नास्ति । ४ गोवि
दुर्जनभोजेन्द्रकण्टककदम्बोद्धरणो । ५. गोवि. शारदाचण्ड- । ६ [-] कोष्टगतोशो नास्ति
क प्रती । ७ क. ख. बहकतु ।

[विरदावल्यां साधारणमत चण्डवृत्त चतुर्थप्रकरणम्]

अथ साधारणं चण्डवृत्तम्

तत्र—

स्वेच्छया तु कलान्यासः साधारणमिदं मतम् ।

न च सप्तदशादूर्ध्वं न वर्णत्रितयादधः ॥ १ ॥

क्रियते यैर्गणैराद्यान्तैरेव सकलाः कलाः ।

प्रस्वादिवर्णसयोगेष्वत्र वर्णस्य लाघवम् ॥ २ ॥

[व्या०] अस्यार्थः—स्वेच्छया इत्यादि शुभम् । तत्राक्षरनियममाह—न चेति । न च सप्तदशवर्णादूर्ध्वं न वा वर्णत्रितयादधः कला कार्या इति शेषः । किञ्च नियमान्तरमाह—क्रियते इति । आद्यात्—५ इति यैरेव गणैः कलाप्रारम्भः क्रियते तैरेव सकला अपेक्षिताः कलाः कर्तव्या इति शेषः । अपि च 'प्रस्वादीति' प्रस्वेति आदिशब्देन-ङ्ग-प्र स्फु-स्मि-स्म-भवेत्यादीनां सप्तवृत्तानां वर्णानां सयोगेपि सति अत्र छन्दःशास्त्रे तत्प्रकरणस्थले वा पूर्वपूर्ववर्णस्य लाघवं—लघुत्वं अथगन्तव्यमित्युत्सर्गः ।

तत्र अक्षरे, यथा—

अङ्गण रिङ्गण ।

इत्यादि । संपुञ्जे, यथा—

प्रणयप्रवण ।

इत्यादि । एव गणान्तरेपि बोद्धव्यम् ।

चतुर्वर्णं सर्वलघौ यथा—

विधुमुख कृतमुख ।

इत्यादि । एव प्रस्तारान्तरेपि सर्वलघ्वादिस्यले स्वेच्छातः कलान्यासोद्विष्टव्यः ।

मानावृत्ते, यथा—

चतुष्कलद्वयेनापि कला जगणवर्जिताः ।

[व्या०] कर्तव्या इति शेषः । यथा—

तारापतिमुख सारायितमुख ।

इत्यादि ।

प्रस्तारद्वितयेष्वेव कलान्यासः स्वतः स्मृतः ॥३॥

[व्या०] स्वतः—स्वेच्छातो भवतीति स्मृत इत्यर्थः ॥३॥

साधारणमतं चेत्तद् दिङ्मात्रमिह दक्षितम् ।

विशेषस्तत्र तत्रापि नोक्तो विस्तारशङ्कया ॥ ४ ॥

[व्या०] तत्र तत्रापीति—तत्तत्प्रस्तारेषु इत्यर्थः ॥४॥

इति विरदावल्यामवसान्तरं साधारणमतं चण्डवृत्त-प्रकरणं चतुर्थम् ॥४॥

१ अथ साप्तविभक्तिकी कलिका

स्तुतिविधीयते विष्णो सप्तमिस्तु विभक्तिभि ।
 यत्र सा कलिका सद्भिर्ज्ञेया साप्तविभक्तिकी ॥ १ ॥
 अथोच्यते विभक्तीना लक्षण कविसम्मतम् ।
 तत्तद्गणोपनिहित यथाशास्त्रमतिस्फुटम् ॥ २ ॥
 भसो तु घटितो यत्र प्रथमा सा प्रकीर्तिता ।
 नयाभ्या तु द्वितीया स्यात् तृतीया ननसा लघु ॥ ३ ॥
 विभिस्तैस्तु चतुर्थी स्यात् यत्र यौ षष्ठ्यमी तु सा ।
 साभ्या तु षष्ठी विज्ञेया यत्र सौ सप्तमी तु सा ॥ ४ ॥
 विहाय प्रथमा ज्ञेया सर्वा साधारणे मते ।
 स्थितास्तु गणसाम्येन स्वेच्छयैव यत * कला ॥ ५ ॥
 उदाहरणमेतासा क्रमतो वृत्तमौक्तिके ।
 कथ्यते कविसन्तोषहेतवे* हरिकीर्तने ॥ ६ ॥

[व्या०] सुलभार्थास्तु कारिका इति न व्याख्यायन्ते । क्रमेणोदाहरणानि, यथा-

य स्थिरकरुण स्तर्जितवरुण ।
 तर्पितजनक सम्मदजनक ॥ १ ॥
 प्रणतविमाय जगुरनपायम् ।
 घनरुचिकाय सुकृतिजनायम ॥ २ ॥
 सुजनकलितकथनेन प्रबलदनुजमथनेन ।
 प्रणयियु रतमभयेन प्रकटरतिषु किल येन ॥ ३ ॥

यस्मै परिध्वस्तदुष्टाय चक्रुः स्फुहा माल्यदुष्टाय* ।
 दिव्या स्त्रिय केलितुष्टाय कन्दर्परङ्गण पुष्टाय ॥ ४ ॥

धृतोत्साहपूराद द्युतिक्षिप्तसूरात् ।
 यतोऽरिबिदूराद भय प्राप दूरात् ॥ ५ ॥
 यस्योज्वलाङ्गस्य सञ्चार्यपाङ्गस्थ ।
 वेणुर्बलामस्य हस्तेऽभिरामस्य ॥ ६ ॥
 स्मितविस्फुरित ज्जनि यत्र हित ।
 रतिरुल्लसित सदृशा ललिते ॥ ७ ॥

इति साप्तविभक्तय ।*

*.१. चिह्नान्तगतोयमशो नास्ति ख प्रती । १ ख यता । २ गोवि पुष्टाय ।

*अथ सम्बुद्धि

तनो [तु] घटितो यत्र तत्सम्बोधनभीरितम् ।
एव सम्बोधनान्तेय विभक्ति सप्तकीर्तिता ॥ ७ ॥

यथा—

स त्व जय ! जय ! दुष्टप्रतिभय !
भक्तस्थितदय ! सुप्तव्रजभय ! ॥ ८ ॥

वीर !

मित्रकुलोदित नमंसुमोदित
रञ्जितराधिक शर्मभराधिक ।

विरवमिदम्—

धीर !

हसोत्तमाभिलपिता सेवकचक्रेषु दर्शितोत्सेका ।
मुरजयिन कल्याणी करुणाकल्लोलिनी जयति ।

इति साप्तविभक्तिकी कलिका । १ ।

२ अक्ष अक्षमयी कलिका

अकारादि-क्षकारान्त-मातृकारूपधारिणी ।
विष्णो स्तुतिपरा सेय, कलिकाऽक्षमयी मता ॥ ८ ॥
अत्र स्युस्तु*रगा सर्वे गणा जगणवर्जिताः ।
मातृकावर्णघटिता क्रमात् भगवत स्तुतौ ॥ ९ ॥

[व्या०] अस्यायं — अत्राक्षमयी भगवत स्तुतौ सर्वे गुरगा — चतुष्कला कर्ण द्विजगण भगण-
सगणा, जगणवर्जिता गणा क्रमात् मातृकावर्णेषु यथायथ घटिताश्चेत स्युस्तवा पूर्वोक्तविशेषण-
विशिष्टा सेय अक्षमयी कलिका मता-सम्मता इति पूर्वोक्तोक्तेन ध्रुवय । मात्रावृत्ते तु 'चतुष्कल-
द्वयेनापि कलाजगणवर्जिता' इत्यत्रैव उक्तत्वाद् अक्षमयीमात्रावृत्तमेवेति सूचितं समुत्प-
श्याम । सर्वत्र च मात्रावृत्तौ चैव जगणस्य हेतुत्वेन निर्वशाच्च । यथा—

मधुरेण ! माधुरीमय माधव मुरलीमतल्लिकामुग्ध ।

मम मदनमोहन मुदा भदय मनसो महामोहम् ॥

अच्युत जय जय आर्त्तवृषामय ।

इन्द्रमस्ताहं ईतिविज्ञातन ॥ १ ॥

उज्ज्वलविभ्रम ऊर्ज-विभ्रम ।

ऋद्धिधुरोद्धुर* ऋभुदयापर ॥ २ ॥

सृदिवकृपेक्षित लू वदलक्षित ।

एधितवल्लव ऐन्दवकुलभव ॥ ३ ॥

ओज.स्फूर्जित ओग्र्यविवर्जित ।

अंसविशङ्कट अष्टापदपट ॥ ४ ॥

इति थोडसस्वरादयः ।

अथ कादयः पञ्चवर्गाः ।

कङ्कणयुतकर खण्डितखलवर^१ ।

गतिजितकुञ्जर घनधुसृणाकर^२ ॥ ५ ॥

हुतमुरसीरत चलचिल्लीलत ।

छलितसतीशत जलजोद्भवनक्ष^३ ॥ ६ ॥

मयवरकुण्डल ओङ्गुयितदल ।

टङ्कितभूधर ठसमाननवर^४ ॥ ७ ॥

डमरघटाहर डक्कितकरतल ।

णखरधूताक्षत सरलविलोचन ॥ ८ ॥

थूत्कृतखञ्जन धनुजविमर्दन ।

धवलावर्द्धन नन्दमुखास्पद ॥ ९ ॥

पङ्कजसमपद फणिनुतिमोदित ।

बन्धुविनोदित भङ्गुरितालक ॥ १० ॥

मञ्जुलमालक—

इति कादयः पञ्चवर्गाः ।

अथ यादयः

—यष्टिलसदृभुज

रभ्यमुखाम्बुज ललितविशारद ॥ ११ ॥

वत्सलवरङ्गद शार्मदचेष्टित ।

पटपदवेष्टित सरसीरुहधर ॥ १२ ॥

हलधरसोदर क्षणदगुणोत्कर ॥ १३ ॥

इति यादयः ।

वीर ।

१. क. खलपर । २. गोवि. घनधुसृणाम्बर । ३. गोवि. जलजोद्भवनुव । ४. गोवि. ठनिमाननवर ।

कर्णे कल्पितकर्णिकः कलिकया कामायितः कान्तिभिः,
कान्तानां किलकिञ्चितं किसलयं कीलालधिः कीर्त्तिभिः ।
कुर्वन् कूर्दैनकानि केशरितया केशोरवान् कोटिशः,
कोपोकीकुलकंसकुष्टकृतिकः^१ कृष्णः क्रियात् काक्षितम् ।

सोरीतटचर गौरीव्रतपर-

गौरीपटहर चोरीकृतकर ।

धीर !

प्रेमोरुहदृहिण्डक कवखटसुभटेन्द्रकण्ठकुट्टाक ।

कुरु कौकुमपट्टाम्बर भट्टारक साण्डवं हृदि^२ मे ॥

इति अक्षमयी कलिका ॥२॥

३. अथ सर्वलघुकलिका

अथ सर्वलघुकं कलिकाद्वयं युगपदेव लक्ष्यते । तत्र—

नगणैर्पञ्चभियंत्र लघ्वन्तैर्वापि तैः पुनः ।

त्रमेण पञ्चदशभिर्वर्णैः षोडशभिस्तथा ॥ १० ॥

प्रस्तारद्वयमन्त्यं स्यात्सलघुभिः सकलाक्षरैः ।

तत्सर्वलघुकं प्रोक्तं कलिकाद्वयमुत्तमम् ॥ ११ ॥

[ध्या०] अस्यायमर्थः—यत्र पञ्चभिः—पञ्चसंख्याकैर्नगणैः—असलघुकैर्नगणैः पदं यत्र, च—
पुनः लघ्वन्तैर्वापि तैरेव पञ्चभिर्नगणैः—क्रमेण पञ्चदशभिर्वर्णैः षोडशभिर्वा पदं भवति । वा
दाब्देन सप्तदशाक्षरमपि यत् कसंख्यम् । एतदूर्ध्वं तु न कसंख्यमेवेत्युपदेशः । न च सप्तदशा-
दूर्ध्वमित्यत्रैव निषेधस्य उक्तत्वात् । स्वेच्छया कलाभ्यासस्तु सप्तदशवर्णपर्यन्तमेव सामारण-
मते चमत्कारकारी नैतदूर्ध्वमिति, प्रस्तारद्वयेपि सर्वलघुभिस्तमस्तैर्वर्णैर्नगणैः प्रस्तारद्वयं भवति
तत् सर्वलघुकमुत्तमं कलिकाद्वयं भवतीत्यर्थः ।

तत्र पञ्चदशाक्षरी सर्वलघुका कलिका यथा—

गोपस्त्रीविद्युदालोवल्लयितवपुषं गन्दगोपादिकेकि-

ध्यूहानन्दैकहेतुं दनुजसप्तभमोद्दामदावाग्निराशुम् ।

ईपदास्याम्युधारावितरणभूतसद्वन्धुचेतस्तडागं,

चित्तं श्रीकृष्ण मेऽद्य त्रय दारणमहो दुःखदाहोपशान्त्यै^३ ।

चरणचसनहृतजठराकटक^४

रजवदसन वरागतपरकटक

१. गोवि. कोपीरौदुरवसकष्टकृतिकः । २. क. हृदि । ३. गोवि. पूर्णपदं नास्ति ।

४. गोवि. जरठ राकटक ।

नटनघटनलसदगवरकटक

सकनकमरवतमयनवकटक ॥ १ ॥

इति पञ्चदशाक्षरी सर्वलघुका कलिका ।

अथ षोडशाक्षरी सर्वलघुका कलिका

कपटरुदितनटदकठिनपदतट-

विघटितदधिघट निविडितसुशकट

रुचितुलितपुरटपटलरुचिरपट-

घटितविपुलकट^१ कुटिलचिबुरघट ।

रविदुहितुनिकटलुठदजठरजट-^२

विटपनिचितवटतटपटुतरनट-

निजविलसितहठविचटितसुविकट-

चटुसदनुजमट^३ जय युवतिपु शठ ।

धीर !

स्फुटनाटयकडम्बदण्डित-द्रुमिमोहामर^४दुष्टकुण्डली ।

जय गोष्ठकुटुम्बसवृतस्त्वमिडाडिम्बकदम्बदुम्बक ॥

रश्मनमुखर सुस्तरनखर

दशनशिखर-विजितशिखर ।

वीर !

विवृतविषबाधे भ्रान्तिवेगादगाधे,

धवसित^५भवपूरे भञ्जतो मेऽविदूरे ।

अशरणगणवन्धो हा^६ कृपाकौमुदीन्दो,

सकृद्वृतविलम्ब देहि हस्तावलम्बम् ॥

नामानि प्रणयेन ते सुकृतिना तन्वन्ति तुण्डोत्सव,

धामानि प्रपयन्ति हन्त जलदश्यामानि नेत्राञ्जनम् ।

सामानि श्रुतिशङ्कुली मुरलिकाजातान्यलकुर्वन्ते,

कामा निर्वृतचेतसामिह विभो^७ नाश्यापि न शोभते ॥

इति षोडशाक्षरी सर्वलघुका कलिका । ३।

१. गोवि विपुलघट । २. गोवि. जरठजट । ३. गोवि. चटुसदनुजघट । ४. क.
घटितोडामर । ५. गोवि बलवति । ६. गोवि. हे ।

अथ सर्वासु कलिकासु स्थितानां विरुदानां युगपदेव लक्षणमुच्यते—

वसुपट्पक्तिरविभिर्मानुभिश्चापि सर्वतः ।

कलिकासु कवि कुर्याद् विरुदानां तु कल्पनम् ॥ १२ ॥

[ध्या०] अस्यायं —सर्वासु कलिकासु वस्वादिभिः पञ्चभिः सस्यासकेतैश्चकारोक्तैरपि कविर्विरुदानां कल्पनं कुर्यात् । तथा हि—कस्याश्चित् कलिकायामष्टकलिक विरुद, कस्याश्चित् षट्कलिक विरुद, अपरस्या दशकलिक विरुद, अन्यस्याञ्च द्वादशकलिक विरुद, कस्याश्चित् कलिकायां चतुर्दशकलिक विरुदम् । कुत्रापि चकारोपविष्टं च विरुदत्रितयमिति क्रमेण सर्वत्र विरुदकल्पनं कविना कार्यमित्युपदिश्यते ॥१२॥

किञ्च—

धीर-वीरादिसबुद्ध्या कलिका विरुदादिकम् ।

देव-भूपतितत्त्ववर्णनेषु प्रयोजयेत् ॥ १३ ॥

संस्कृतप्राकृतश्रव्यं शौर्यवीर्यदयादिभिः ।

कीर्त्तिप्रतापप्राधान्यै कुर्यात् कलिकादिकम् ॥ १४ ॥

[ध्या०] युगमम् ॥१३, १४॥

अथ च—

गुणालङ्कारसहितं सरसं रीतिसयुतम् ।

मैयानुप्राससच्छब्दाडम्बरं जीवितं द्वयोः ॥ १५ ॥

[ध्या०] द्वयोः—कलिकाविरुदयोरित्यर्थः ॥१५॥

कलिकादलोकविरुदनिकं त्रिशत्त्रिकावधि ।

पञ्चत्रिकोर्ध्वं विरुदावली कविभिरिष्यते ॥ १६ ॥

[ध्या०] अस्यायं —अस्यां कारिकायां सम्पूर्णां विरुदावलीं लक्षयति—विरुदावलीं तावत् कलिकादलोकविरुदैस्त्रिभिः सम्पद्यते । तत्र कलिकादलोकविरुदमिति त्रिकं, पञ्चत्रिकोर्ध्वं—पञ्चत्रिकं, पञ्चदश तत्रोर्ध्वं एतदारभ्य इत्यर्थः । विषयवधौत्यपेक्षायामुच्यते—त्रिशत्त्रिकावधि—त्रयस्त्रिंशदधिकश्चेत् क्रियते तदा भ्रूलण्डा विरुदावली भवति । एतादृशी विरुदावली कविभिरिष्यते न च्छु यत्यत इत्यर्थः । यथा श्रुतव्याख्याने तु महती विरुदावली स्यात् । तथा च पञ्चदशादारभ्य त्रिशत्त्रिकं नवतिस्सम्पद्यते, तत्पर्यन्तं सति महती विरुदावली भवतीति । तत्रोक्तासमाध्याख्यातमस्माभिरेति सर्वं समञ्जसम् ॥१६॥

यद्यचित्तु कलिकास्थाने केवलं गद्यमिष्यते ।

पदमारुन्तयोराशी. प्रधानं सुमनोहरम् ॥ १७ ॥

त्रिचतुःपञ्चकलिका दलोकास्तावन्त एव हि ।

[ध्या०] इति, साष्टौन श्लोकेन विरुदावलीलक्षणे कस्यचिन्मत उपन्यस्यति । क्वचित्तु-
कस्मादिदं कलिकायां-कलिकास्थाने गद्यमेवोभयत्र केवल सचिद्वदं वा भवतीतीष्यते । किञ्च,
आद्यन्तयो-कलिकाविरुदयो, आशी प्रधान-आशीर्वादोपलक्षित पद्यमतिमुमनोहर भवतीति
च^१ ॥१७॥

[ध्या०] किमन्य कलिका, कियत्तश्च श्लोका कार्या इत्यपेक्षायामुच्यते त्रिचतु-
पञ्चकलिका स्वेच्छया वर्तन्त्या । श्लोका अपि तावन्त एव हि स्वेच्छयैव विधेया
इत्युपदेश^२ ।

एतत् सर्वं यथास्थानमस्माभि समुदाहृतम् ॥ १८ ॥

[ध्या०] सुगमम् ॥१८॥

विरुदावलीपाठफलमुपदिशति—

रम्यया विरुदावल्या प्रोक्तलक्षणयुक्तया ।

स्तूयमान प्रमुदित श्रीगोविन्द^३ प्रसीदति ॥ १९ ॥

श्री^४

इति श्रीवृक्षमौक्तिके वालिके विरुदावली-

प्रकरणं नवमम् ॥१९॥



१. ख 'च' नास्ति । २. ख इत्युपेक्षायामुच्यते । ३. गोवि. वामुदेव । ४. ख.
'श्री' नास्ति ।

दशमं खण्डावली-प्रकरणम्

अथ खण्डावली

आशीःपद्यं यदाद्यन्तयोः^१ स्यात् खण्डावली त्वसौ ।
विनेव विरुदं नानागणभेदैरनेकधा ॥ १ ॥

तत्र-

१. अथ तामरसं खण्डावली

पदे चेद् रगणः सौ च सधुद्वयनिवेशनम् ।
तदा तामरसं नाम साधारणमते भवेत् ॥ २ ॥

[व्या०] अनयोः कारिकयोरयमर्थः । यदा कलिकाया आद्यन्तयोः विरुदं विनेव आशीः-
पद्यं भवति तदा नानागणभेदैरनेकधा असौ खण्डावली स्यादित्यन्वयः । किञ्च, तत्र पदे चेत्
रगणौ भवति, अथ च सौ-सगणौ भवतः, ततो सधुद्वयनिवेशनं-सधुद्वयस्थापनं चेत्-स्यात्तदा
साधारणमते स्वेच्छाकक्षाविन्यासलक्षणे तामरस इति नाम खण्डावली भवतीति
वाक्यार्थः । १-२॥

यथा-

कलकयणितवंशिकाविकलनागरीसामरी-
भवद्विपमशायकद्विगुणवृद्धिगुभ्रद्युति ।
पतङ्गतनयातटी-वननटी-भवद्विग्रहं,
नवीनधनमण्डलीरुचिरमाविरास्तां महः ॥
देय !

जय यंशीरखोल्लास ! जय वृन्दावनप्रिय ! ।
जय कृष्ण ! कृपाशील ! जय सीतासुधाभ्युधे ! ॥
वीर !

छन्दसामपि दुर्गमसन्तत-
मिन्दुबिम्बसमानधुमानन !
मन्दहासविकस्वरमुन्दर !
शुन्दकोरफदन्तरुचिद्रज !

सुन्दरोजनमोहनमन्मथ
 चन्दनद्वरज्यदुरस्थल
 नन्दनालयशीलितसद्गुण-
 वृन्द कच्छपरूपसमुद्घृत-
 मन्दराचलबाहुभुजार्गल-
 कन्दलीकृतसारसमर्थ पु-
 रन्दरेण चिरं परिवेपितः^१
 नन्दिनायसमञ्चितदिव्यक-^२
 लिन्दशैलमुताजलजन्धर-
 विन्दकाननकोपकदम्बमि-
 लिन्दशावक निर्जन्नायक
 वृन्दया सह कल्पितकौतुक
 दन्दगूफणावलिगञ्जन
 चन्द्रिकोज्ज्वलनिर्गलितामृत-
 विन्दुदुद्धिनसूनृतसार मु-
 कुन्ददेव कृपाल^३दशि (दशि) त्वयि
 किं दुरापमिहास्ति ममेश्वर
 किं दयावरुणालय दुर्जन-
 निन्दयापि जगत्त्रयवत्सल !
 कन्दनीलिमदेहमह क्रुह-
 विन्दतण्डजपाकुसुमस्फुरद्
 इन्द्रगोपकबधुरिताघर
 चन्द्रकाद्भुतपिच्छशिरस्तद-
 रिन्दम स्वमतिं दयसे यदि
 विन्दते सुखमेन^४जनस्तव
 चन्दिवद्गुणगानकर ध्रुव-
 मिन्दयन् विदितो गृहध्वज
 नन्दयन्निजयासनयानय
 नन्दगोपकुमार जयीभव ।
 देव !

जय नीपावलीवास जय वेणुसुधाप्रिय ।

जय वल्लभसीमाग्य जय ब्रह्मरसायन ।

धीर ।

पशुपल्लनावल्लीवृन्दै श्रित करपल्लवै-

विपुलपुलकश्रेणि^१स्फीतस्फुरत्कुसुमोद्गम ।

तपनतनयातीरे तीरे तमालतरुप्रभ ,

कलयतु मम क्षेम कश्चिन्नव कमलेक्षणम्^२ ॥१॥

इति तामरस नाम खण्डावली ॥१॥

२. अथ मञ्जरी खण्डावली

मरेन्द्रवर्जिता यत्र रचिता स्युस्तुरङ्गमा ।

आद्यन्तपदसयुक्ता मञ्जरी सा निगद्यते ॥ ३ ॥

[ध्या०] अस्यार्थ — यत्र-यस्या मञ्जर्या मरेन्द्रेण-जगत्तेन वर्जिता-रहिता तुरङ्गमा चतुर्विधाश्चतुष्कला रचिता यदि स्यु । किञ्च, आद्यन्तयो पद्याभ्या सयुक्ता चेद् भवति तदा सा मञ्जरीति नाम्ना प्रसिद्धा खण्डावली निगद्यते आन्वसिकैरिति शेष ॥ ३॥

यथा-

पिशाङ्गसिन्धयाञ्चित चटुलनैचिकीचारक^३,

चमस्कृतदृगञ्चलैश्चलुकिता^४वलानिश्चयम् ।

चलद्गुचिरचन्द्रिकाभरणचुम्बिचूडाञ्चल,

तमालदलमेचक मुचिरमाविरास्ता मह ॥

देव ।

जय लीलामुधासिन्धो । जय शीलादिमन्दिरम्^५ ।

जय राधैकसौहार्द जय कन्दर्पविभ्रम ॥

धीर ।

जय जय जम्भारि भुजस्तम्भा-

कलितहम्भा-वाहितजम्भा-^६

मुदवष्टम्भा-महसररम्भा-^७

थय निर्दम्भा-सादितरम्भा-

लघुकुचकुम्भा दरपरिरम्भा-

निधुवनपुम्भा-वप्रारम्भा-

१. ल. धेनी । २. ल. कमलेक्षण । ३. ल. चारक । ४. ल. चुलुकिता । ५. ल. मन्दिर । ६. वाहितजम्भा । ७. ल. महसरमा ।

धिकसुखसम्भा वनविश्रम्भा-
भापणसम्भारैरिह सम्भा-
वय न सम्भावितमुज्जृम्भा-
म्बुजसदृशम्भापणमधुरम्भा-
रत्यालम्भाभ्यायतनम्भा-
कमुल सम्भासयत ' किम्भा-
लाक्षरसम्भावनया देव !

कुमारपद्मपिञ्छेन विराजतकुन्तलश्रियम् ।
सुकुमारमह वन्दे नन्दगोपकुमारकम् ॥
धीर !

नित्य यन्मधुमन्थरा मधुकरायन्ते सुधास्वादित-
स्तन्माधुर्यघुरीणतापरिणते प्राय परीक्षाविधिम् ।
कतु^१ स्वाघ्निसरोरुह करपुटे कृत्वा मुहु सलिहन्,
दोलान्दोलनदोलितालिलतनु पायाद् यशोदामर्क ॥

इति मञ्जरी खण्डावली ॥२॥

इत्य खण्डावलीना तु भेदा सन्ति सहस्रश ।
साकल्येन मया नोक्ता ग्रन्थविस्तरशङ्कया ॥४॥
सुकुमारमतोना च मार्गदर्शनतो भवेत् ।
विज्ञानमिति मत्सर्व मया मार्गं प्रदर्शित ॥५॥
सहस्रेण मुखेनैतद् वक्तु क्षेपोऽपि न क्षम ।
कथमेकमुखेनाहमशेष वाङ्मय ब्रुवे ॥६॥

श्री

इति श्रीवृत्तभोवितके वार्तिके खण्डावलीप्रकरण दशमम् ॥१०॥

श्री

एकादशं दोष-प्रकरणम्

अथ दोषाः

अथैतयोनिरूप्यन्ते दोषाः कविसुखावहाः ।

यान्विदित्वैव सुकविः काव्यं कर्तुं मिहार्हति ॥१॥

[व्या०] अथेति । विरुदावली-खण्डावली-कथनानन्तरमेतयोः-विरुदावली-खण्डावली-भेदयोर्दोषाः निरूप्यन्ते । शेषं सुगमम् ॥१॥

तान् आह-

अमैत्री निरनुप्रासो दौर्बल्यं च कलाहतिः ।

असाम्प्रत हतौचित्यं विपरीतयुतं पुनः ॥ २ ॥

विशृङ्खलं स्खलत्तालं नवदोषास्त वेत्ति यः ।

कुर्याच्चैतत् तमोलोके उलूकोऽसौ भवेन्नरः ॥ ३ ॥

[व्या०] अस्यार्थः-अमैत्री-अक्षरमैत्रीराहित्यं । निरनुप्रासः-अनुप्रासाभावः । दौर्बल्यं-हलपवर्णता इति निगदेनैव व्याख्यातं । कलाहतिः-अन्यपदे पूर्ववर्णस्थानेऽन्यवर्णपाठः । यथा-

कमलमदन सुविमलजल ।

रञ्जितरण सञ्जितगुण ।

अयुक्तवर्णनं-हतौचित्यं । स्पष्टमुदाहरणम् । श्लिष्टवर्णस्थाने मधुरवर्णस्थितिः, मधुरस्थाने वा श्लिष्टस्थापनं, विपरीतयुतं । विशृङ्खलं-भ्रूनाधिकश्लिष्टादिवर्णानां ग्रथनम् । स्खलत्तालं-प्रतिश्रष्टं लक्षणानुसाराद् ऊह्यानि उदाहरणानि । इत्येतावन्मवदोषान् यः कविः न वेत्ति-न जानाति अविद्वान्च यदि एतन्-पूर्वोक्तं विरुदावली-खण्डावलीलक्षणं यो नरः-कविः काव्यं कुर्यात् तदा तमोलोके-गाढाभ्यकाराज्ञानलक्षणे लोके असी उलूको-दिवान्धःपक्षी भवेदित्यर्थः । तस्माद् दोषज्ञाने महान् शुणः, तद्विपरीत्ये महद्विषट् इत्यन्वयस्यतिरेकसिद्धोऽग्रमर्थः । इति सर्वं निर्मल मङ्गलम् ।

लक्ष्मीनाथतमूजेन चन्द्रशेखरसूरिणा ।

छन्दःशास्त्रे विरचितं वार्तिकं वृत्तमौक्तिकम् ॥

इति दोषनिरूपण-प्रकरणमेकादशम् ॥११॥

द्वादशं अनुक्रमणी - प्रकरणम्

प्रथमखण्डानुक्रमणी -

रचिकर-पञ्चपति-पिङ्गल-शम्भुग्रन्थान् विलोक्य निर्वन्धान् ।
सद्वृत्तमौक्तिकमिदं चक्रे श्रीचन्द्रशेखरः सुकविः ॥ १ ॥

अथाऽभिधीयते चाऽत्राऽनुक्रमो वृत्तमौक्तिके ।
अत्र खण्डद्वयं प्रोक्तं मात्रा-वर्णात्मकं पृथक् ॥ २ ॥

तत्र मात्रावृत्तखण्डे प्रथमेऽनुक्रमः स्फुटम् ।
प्रोच्यते यत्र विज्ञाते समूहालम्बनात्मिकम् ॥ ३ ॥

ज्ञानं भवेदखण्डस्य^१ खण्डस्य^२ छन्दसोऽपि च ।
सङ्गलाचरणं पूर्वं ततो गुरुलघुस्थितिः ॥ ४ ॥

तयोर्दाहृतिं पश्चात् तद् विकल्पस्य कल्पनम् ।
काव्यलक्षणवैलक्ष्ये अनिष्टफलवेदनम् ॥ ५ ॥

गणव्यवस्थामात्राणां प्रस्तारद्वयलक्षणम् ।
मात्रागणानां नामानि कथितानि ततः स्फुटम् ॥ ६ ॥

वर्णवृत्तगणानां च लक्षणं स्यात् ततः परम् ।
तद्देवता च तन्मैत्री तत्फलं चाप्यनुक्रमात् ॥ ७ ॥

मात्रोद्दिष्टं च तत्पश्चात्तन्निष्ठस्याय कीर्तनम् ।
वर्णोद्दिष्टं ततो ज्ञेयं वर्णनन्तमतः परम् ॥ ८ ॥

वर्णमेवञ्च तत्पश्चात् तत्पताका प्रकीर्तिता ।
मात्रामेवञ्च तत्पश्चात् तत्पताका प्रकीर्तिता ॥ ९ ॥

ततो वृत्तद्वयस्थस्य गुरोर्ज्ञानं लघोरपि ।
वर्णस्य मर्कटी पश्चात् मात्रायाश्चापि मर्कटी ॥ १० ॥

तयोः फलं च कथितं पट्प्रकारं समासतः ।
ततस्त्वेकाक्षरादेश्च पट्बिंशत्यक्षरावधेः ॥ ११ ॥

प्रस्तारस्यापि संख्याऽत्र पिण्डीभूता प्रकीर्तिता ।
ततो गद्यादिभेदानां कलासंख्या प्रकीर्तिता ॥ १२ ॥

गायोदाहरणं पदचात् सप्रभेदं सलक्षणम् ।
 विगाथा च तथा ज्ञेया ततो गाहू प्रकीर्तिता ॥ १३ ॥
 अथोद्गाथा गाहिनी च सिहिनी च ततः परम् ।
 स्कन्धकं चापि कथितं सप्रभेदं सलक्षणम् ॥ १४ ॥
 इति गायप्रकरणं प्रथमं वृत्तमौक्तिके ।
 द्वितीयं षट्पदस्याथ द्विपद्या तत्र संस्थिता ॥ १५ ॥
 सलक्षणा सप्रभेदा रसिका स्यात् ततः परम् ।
 अथ रोला समाख्याता गन्धाणा स्यात् ततः परम् ॥ १६ ॥
 चौर्पया च ततः प्रोक्ता ततो घत्ता प्रकीर्तिता ।
 घत्तानन्दमतः काव्यं सोत्सालं सप्रभेदकम् ॥ १७ ॥
 पट्पदं च ततः प्रोक्तं सप्रभेदमतः परम् ।
 काव्यपट्पदयोश्चापि दोषाः सम्यङ् निरूपिताः ॥ १८ ॥
 प्राकृते संस्कृते चापि दोषाः कविमुखावहाः ।
 द्वितीयं पट्पदस्यैतत् प्रोक्तं प्रकरणं त्विह ॥ १९ ॥
 अथ रङ्गाप्रकरणं तृतीयं परिकीर्त्यते ।
 तत्र पञ्चटिकाछन्दोऽष्टिलाछन्दस्ततः परम् ॥ २० ॥
 ततस्तु पादाकुलकं चौबोला - छन्द एव च ।
 रङ्गाछन्दस्ततः प्रोक्तं भेदाः सप्तैव चास्य तु ॥ २१ ॥
 रङ्गाप्रकरणं चैव तृतीयमिह कीर्तितम् ।
 पद्यावतीप्रकरणं चतुर्थमप्य कथ्यते ॥ २२ ॥
 तत्र पद्यावती पूर्वं ततः कुण्डलिका भवेत् ।
 गगताङ्ग ततः प्रोक्तं द्विपदी च ततः परम् ॥ २३ ॥
 ततस्तु मुल्लणा-छन्दः खञ्जा-छन्दस्ततः परम् ।
 शिखाछन्दस्ततश्च स्यात् मासाछन्दस्ततो भवेत् ॥ २४ ॥
 ततस्तु पुलिभासा स्यात् सोरठा तदनन्तरम् ।
 हाकलीमंथुभारश्चाऽऽमीरश्च स्यादनन्तरम् ॥ २५ ॥
 अथ दण्डकसा प्रोक्ता ततः कामकला भवेत् ।
 दधिरास्य ततश्छन्दो दीपकश्च ततः स्मृतम् ॥ २६ ॥
 सिंहायसीकितं छन्दस्ततश्च स्यात् प्लवङ्गमः ।
 अथ सोसावतीछन्दो हरिगीत ततः स्मृतम् ॥ २७ ॥

हरिगीतं' ततः प्रोक्तं 'मनोहरमतः परम् ।
हरिगीता ततः प्रोक्ता यतिभेदेन या स्थिता ॥ २८ ॥
अथ त्रिमङ्गी छन्दः स्यात् ततो दुर्मिलका भवेत् ।
होरच्छन्दस्ततः प्रोक्तमथो जनहरं मतम् ॥ २९ ॥
ततः स्मरगृहं छन्दो मरुहटा ततः स्मृता ।
पद्यावतोप्रकरणं चतुर्थमिह कीर्तितम् ॥ ३० ॥
सर्वयास्य प्रकरण पञ्चमं परिकीर्त्यते ।
तत्र पूर्वं सर्वयास्यं छन्दः स्यादतिसुन्दरम् ॥ ३१ ॥
भेदास्तस्यापि कथिता रससंख्या मनोहराः ।
ततो घनाक्षरं वृत्तमतिसुन्दरमीरितम् ॥ ३२ ॥
पञ्चमं तु प्रकरणं सर्वयास्यमिहोदितम् ।
अथो गलितकाव्यं तु षष्ठं प्रकरणं भवेत् ॥ ३३ ॥
पूर्वं गलितकं तत्र ततो विगलितं मतम् ।
अथ सङ्गलित श्रेयमतः सुन्दर-पूर्वकम् ॥ ३४ ॥
भूपणोपपद तच्च मुखपूर्वं ततः स्मृतम् ।
विलम्बितागलितकं समपूर्वं ततो मतम् ॥ ३५ ॥
द्वितीयं समपूर्वं चापरं सङ्गलितं ततः ।
अथापरं गलितकं लम्बितापूर्वकं भवेत् ॥ ३६ ॥
विक्षिप्तिकागलितकं ललितापूर्वकं ततः ।
ततो विपमितापूर्वं मालागलितकं ततः ॥ ३७ ॥
मुग्धमालागलितकमथोद्गलितकं भवेत् ।
षष्ठं गलितकस्यैतत् प्रोक्तं प्रकरणं शिवम् ॥ ३८ ॥
रत्नसूयस्त्रिसंख्यात (७६) मात्रावृत्तमिहोदितम् ।
सप्तभेदं वसुद्वन्द्व-शतद्वय-(२८८) मुदीरितम् ॥ ३९ ॥
तथा प्रकरणं चात्र रससंख्या^१ प्रकीर्तितम् ।
मात्रावृत्तस्य खण्डोऽथ प्रथमः परिकीर्तितः ॥ ४० ॥

इति प्रथमखण्डानुक्रमणिका ।

द्वितीयखण्डानुक्रमणो

अथ द्वितीयखण्डस्य वर्णवृत्तस्य च क्रमात् ।
 वृत्तानुक्रमणी स्पष्टा क्रियते वृत्तमौक्तिके ॥ १ ॥
 प्रारम्भैकाक्षरं वृत्तं षड्विंशत्यक्षरावधि ।
 तत्तत्प्रस्तारगत्याऽत्र वृत्तानुक्रमणी स्थिता ॥ २ ॥
 तत्र श्रीनामकं वृत्तं प्रथमं परिकीर्तितम् ।
 तत इः कथितं वृत्तं द्वौ भेदावत्र कीर्तितौ ॥ ३ ॥
 एकाक्षरे, द्व्यक्षरे तु पूर्वं कामस्ततो मही ।
 ततः सारं मधुश्चेति भेदाश्चत्वार एव हि ॥ ४ ॥
 त्र्यक्षरे चात्र ताली स्यान्नारी चापि शशी ततः ।
 ततः प्रिया समाख्याता रमणः स्यादनन्तरम् ॥ ५ ॥
 पञ्चालश्च मृगेन्द्रश्च मन्दरश्च ततः स्मृतः ।
 कमलं चेति तत्रात्र स्युरष्टौ भेदाः प्रकीर्तिताः^१ ॥ ६ ॥
 अथातो द्विगुणा भेदाश्चतुर्वर्णादिषु स्थिताः ।
 यथासम्भवमेतेषामाद्यान्तानुक्रमात् स्फुटम् ॥ ७ ॥
 वृत्तानुक्रमणी सेयमङ्कसंकेततः कृता ।
 प्रतिप्रस्तारविस्तारं षड्विंशत्यक्षरावधि ॥ ८ ॥

तत्र—

चतुर्वर्णप्रभेदेषु तीर्णा कन्याऽपि चान्यतः ।
 धारी^२ ततस्तु विख्याता नगाणी च ततः परम् ॥ ९ ॥
 शुभं चेति समाख्यातामत्र भेदचतुष्टयम् ।
 शेषभेदा न संप्रोक्ता ग्रन्थविस्तरशङ्कया ॥ १० ॥
 प्रस्तारगत्या ते भेदाः षोडशैव व्यवस्थिताः ।
 सुषोमिरूह्याः प्रस्तायं यथाशास्त्रमशेषतः ॥ ११ ॥
 अथ पञ्चाक्षरे^३ पूर्वं सम्मोहा वृत्तमीरितम् ।
 हारी ततः समाख्याता ततो हंसः प्रकीर्तितः ॥ १२ ॥

प्रिया ततः समाख्याता यमकं तदनन्तरम् ।
 प्रस्तारगत्या चैवाऽत्र भेदा द्वात्रिंशदीरिताः (३२) ॥ १३ ॥
 षडक्षरेऽपि पूर्वं तु शेषाख्यं वृत्तमीरितम् ।
 ततः स्यात्तिलका वृत्तं विमोहं तदनन्तरम् ॥ १४ ॥
 विजोहे^१त्यन्यतः स्यात्तं चतुरस्रमतः परम् ।
 पिङ्गले चउरंसेति स्त्रीलिङ्गं परिकीर्तितम् ॥ १५ ॥
 मन्थान च ततः प्रोक्तं मन्यानेत्यन्यतो भवेत् ।
 दाह्वनारी ततः प्रोक्ता सोमराजीति चाप्यतः ॥ १६ ॥
 स्यात् सुमालतिका चान्न मालतीति च पिङ्गले ।
 तनुमध्या ततः प्रोक्ता ततो दमनकं भवेत् ॥ १७ ॥
 प्रस्तारगत्या चाप्यत्र भेदा वेदरसमंताः (६४) ।
 अथ सप्ताक्षरे पूर्वं क्षीपरिख्यं वृत्तमीरितम् ॥ १८ ॥
 ततः समानिका वृत्तं ततोऽपि च सुवासकम् ।
 करहन्चि ततः प्रोक्तं कुमारललिता ततः ॥ १९ ॥
 ततो मधुमती प्रोक्ता मदलेखा ततः स्मृता ।
 ततो वृत्तं तु कुसुमततिः स्यादतिसुन्दरम् ॥ २० ॥
 प्रस्तारगतिभेदेन वसुनेत्रात्मजेरिता^२ (१२८) ।
 भेदाः सप्ताक्षरस्यान्या कक्षाः प्रस्तायं पण्डितैः ॥ २१ ॥
 अथ षड्वक्षरे पूर्वं विष्णुन्माला विराजते ।
 ततः प्रमाणिका ज्ञेया मल्लिका तदनन्तरम् ॥ २२ ॥
 तुङ्गावृत्तं ततः प्रोक्तं कमलं तदनन्तरम् ।
 माणवकः प्रीडितकं ततश्चित्रपदा मता ॥ २३ ॥
 ततोऽनुष्टुप् समाख्याता जसद च ततः स्मृतम् ।
 अत्र प्रस्तारगत्यैव रसबाणयुगमंताः (२५६) ॥ २४ ॥
 भेदा षड्वक्षरे शेषाः सूचनीयाः सुबुद्धिभिः ।
 नवाक्षरेऽप्य पूर्वं स्याद् रुपामासा मनोरमा ॥ २५ ॥
 ततो महालक्ष्मिना स्यात् सारङ्गं तदनन्तरम् ।
 सारङ्गिका पिङ्गले तु पादन्न तदनन्तरम् ॥ २६ ॥

पाइन्ता पिङ्गलै तु स्यात् कमलं तदनन्तरम् ।
 [बिम्बवृत्तं ततः प्रोक्तं तोमरं तदनन्तरम्]¹ ॥ २७ ॥
 भुजगशिशुसूतावृत्तं भणिमध्यं ततः स्मृतम् ।
 भुजङ्गसङ्गता च स्यात् ततः सुललितं स्मृतम् ॥ २८ ॥
 प्रस्तारगत्या चात्रास्य नेत्रचन्द्रशरैरपि (५१२) ।
 भेदा नवाक्षरे शिष्टाः सूचनीयाः सुबुद्धिभिः ॥ २९ ॥
 अथ पञ्च्यर्णके पूर्वं गोपालः परिकीर्तितः ।
 संयुतं कथितं पश्चात् ततश्चम्पकमालिका ॥ ३० ॥
 क्वचिद् हवमवती चैयं क्वचिद् रूपवतीति च ।
 ततः सारवती च² स्यात् सुपमा तदनन्तरम् ॥ ३१ ॥
 ततोऽमृतगतिः प्रोक्ता मत्ता स्यात्तदनन्तरम् ।
 पूर्वमुक्ताऽमृतगतिः सा चेद् यमकिता भवेत् ॥ ३२ ॥
 प्रतिपादं तदोक्तैषा स्वरिताऽनन्तरं गतिः ।
 मनोरमं ततः प्रोक्तमन्यत्र च मनोरमा ॥ ३३ ॥
 ततो ललित-पूर्वं तु गतीति समुदीरितम् ।
 प्रस्तारान्त्यं सर्वलघुवृत्तमत्यन्तसुन्दरम् ॥ ३४ ॥
 प्रस्तारगत्या भेदाः स्युः तत्त्वाकाशात्मसंख्यकाः (१०२४) ।
 दशाक्षरेऽपरे भेदाः सूच्याः प्रस्तार्यं पण्डितैः ॥ ३५ ॥
 अथ रुद्राक्षरे³ पूर्वं मालतीवृत्तमीरितम् ।
 ततो वन्धुः समाख्यातो हान्यत्र दोषकं भवेत् ॥ ३६ ॥
 ततस्तु सुमुखीवृत्तं शालिनी स्यादनन्तरम् ।
 वातोर्मिं तदनु प्रोक्ता छन्दःशास्त्रविशारदैः ॥ ३७ ॥
 परस्परं चतयोश्चेत् पादा एकत्रयोजिताः ।
 तदोपजातिनामानो भेदास्ते च⁴ चतुर्दश ॥ ३८ ॥
 ततो दमनकं प्रोक्तं चण्डिका तदनन्तरम् ।
 सेनिका श्रेणिका चेति तथा नामान्तरं क्वचित् ॥ ३९ ॥
 नाममात्रे परं भेदः फलतो न तु किञ्चन ।
 इन्द्रवज्रा ततः प्रोक्ता ततश्चोपेन्द्रपूर्विका ॥ ४० ॥

१. [-] कोष्ठगतौ नो नास्ति क. ख. प्रती। २ ख. 'ततः सारवती च' नास्ति । ३. क.
 रुद्राक्षरैः । ४. ख, सु ।

उपजातिस्ततः प्रोक्ता पूर्वोक्तेनैव वर्त्मना ।
 भेदाश्चतुर्दशैतस्याः विज्ञेयाः पिण्डतो बहिः ॥ ४१ ॥
 ततो रथोद्धतावृत्तं स्वागतावृत्तस्तथा ।
 भ्रमरान्ते विलसिताञ्जुकूला च ततो भवेत् ॥ ४२ ॥
 ततो मोट्टनकं^१ वृत्तं सुकेशी च ततो भवेत् ।
 ततः सुमद्रिकावृत्तं बकुलं कथितं ततः ॥ ४३ ॥
 रुद्रसंस्थाक्षरे भेदा वसुधेदखनेत्रकैः (२०४८) ।
 प्रस्तारगत्या जायन्ते शिष्टान् प्रस्तार्य सूचयेत् ॥ ४४ ॥
 अथ रव्यक्षरे पूर्वमापीडः कथितोऽन्यतः ।
 विद्यापरस्ततश्च स्यात् प्रयातं भुजगादनु ॥ ४५ ॥
 ततो लक्ष्मीघरं वृत्तमन्यत्र स्रग्विणी ततः ।
 तोटकं स्यात् ततः सारङ्गकं मौक्तिकदामतः ॥ ४६ ॥
 मोदकं सुन्दरी चापि ततः स्यात् प्रमिताक्षरा ।
 चन्द्रवर्त्म ततो ज्ञेयमतो द्रुतविलम्बितम् ॥ ४७ ॥
 ततस्तु वंशस्थविला क्वचित् क्लीबमिदं भवेत् ।
 क्वचित् वंशस्तनितमिन्द्रवशा ततो भवेत् ॥ ४८ ॥
 अनयोरपि चैकत्रपादानां योजनं यदि ।
 तदोपजातयो नाम भेदाः स्युस्ते चतुर्दश ॥ ४९ ॥
 सर्वत्रैवं स्वल्पभेदे भवन्तीहोपजातयः ।
 वृत्ताभ्यामल्पभेदाभ्यामुपदेशः पितुर्मम ॥ ५० ॥
 ततो जलोद्धतगतिर्वैश्वदेवी ततो मत्ता ।
 मन्दाकिनी ततो ज्ञेया वतः कुसुमचित्रिता ॥ ५१ ॥
 ततस्तामरस वृत्तं ततो भवति मालती ।
 कुत्रचिद् यमुना चेति भणिमाला ततो भवेत् ॥ ५२ ॥
 ततो जलघरमाला स्यात् ततश्चापि प्रियवदा ।
 ततस्तु सलिता यैव सुपूर्वान्यत्र लक्षिता ॥ ५३ ॥

ततोऽपि ललितं वृत्तं ललनेत्यपि च क्वचित् ।
 कामदत्ता ततः प्रोक्ता ततो वसन्तचत्वरम् ॥ ५४ ॥
 प्रमुदितवदना-मन्दाकिन्योर्भेदो न वास्तवो घटितः ।
 नामान्तरेण भेदो गणतो यदितो न चोद्दिष्टः ॥ ५५ ॥^१
 प्रमुदिताद्बद्ध्वं^२ वदने^३ वदनाऽन्यत्र च प्रभा ।
 विख्याता कविमुख्येस्तु ततः स्यान्नवमालिनी ॥ ५६ ॥
 सर्वान्त्यं नयनात् पूर्वं तरलं वृत्तमीरितम् ।
 अत्र प्रस्ताररीत्या तु भेदा रव्यक्षरे स्थिताः ॥ ५७ ॥
 रसरन्ध्रखवेदंस्तु (४०६६) शेषाः सूच्याः^४ सुबुद्धिभिः ।
 प्रयोदशाक्षरे पूर्वं धाराहः कथितो मया ॥ ५८ ॥
 मायावृत्तं ततस्तु स्यात् क्वचिन्मतमयूरकम् ।
 ततस्तु तारकं वृत्तं कन्दं पङ्क्तावली तथा ॥ ५९ ॥
 ततः प्रहर्षिणीवृत्तं रुचिरा तदनन्तरम् ।
 चण्डीवृत्तं ततः प्रोक्तं ततः स्यान्मञ्जुभाषिणी ॥ ६० ॥
 शम्भौ सुनन्दिनी चैवं चन्द्रिका तदनन्तरम् ।
 क्वचिदुत्पलिनीवृत्तं चन्द्रिकेवोच्यते बुधैः ॥ ६१ ॥
 कलहंसस्ततश्च स्यात् सिंहनादोप्ययं क्वचित् ।
 ततो मृगेन्द्रवदनं क्षमा पश्चात् ततो लता ॥ ६२ ॥
 ततस्तु चन्द्रलेखाख्यं चन्द्रलेखेत्यपि क्वचित् ।
 ततश्च सुद्युतिः पश्चाल्लक्ष्मीवृत्तं मनोहरम् ॥ ६३ ॥
 ततो विमल-पूर्वं तु गतीतिरुचिरं भवेत् ।
 प्रस्तारगत्वं वृत्तमेतद् भावितं कविपुङ्गवैः ॥ ६४ ॥
 प्रस्तारगत्या विज्ञेया भेदाः कामाक्षरे बुधैः ।
 नेत्रप्रहेन्दुचसुभिः (८१६२) शेषान् प्रस्तार्यं सूचयेत् ॥ ६५ ॥
 अथ मन्वक्षरे पूर्वं सिंहास्यः कथितो बुधैः ।
 ततो वसन्ततिलका ततश्चक्रं प्रकीर्तितम् ॥ ६६ ॥
 भसम्बाधा ततश्च स्यात् ततः स्यादपराजिता ।
 कलिकान्तं प्रहरणं वासन्ती स्यादनन्तरम् ॥ ६७ ॥

१. एतं भाति क. प्रती । २. व. प्रमुदितशब्दस्यान्ते । ३. क. वान्ते । ४. छ. शेषान्नुहाः ।

लोला नान्दीमुखी तस्माद् वैदर्भी तदनन्तरम् ।
 प्रसिद्धमिन्दुवदन स्त्रीलिङ्गमिदमन्यत ॥ ६८ ॥
 ततस्तु शरभी प्रोक्ता ततश्चाहिधृतिः स्थिता ।
 ततोऽपि विमला ज्ञेया मल्लिका तदनन्तरम् ॥ ६९ ॥
 ततो मणिगण वृत्तमन्य मन्वक्षरे भवेत् ।
 प्रस्तारगत्या चात्रापि भेदा वेदाष्टतो गुणा ^१ ॥ ७० ॥
 रसेन्दुप्रमिताश्चापि (१६३८४) विज्ञेया कविशेखरैः ।
 यथासम्भवसम्प्रोक्ता शेषास्तूह्या स्वबुद्धित ॥ ७१ ॥
 लीलाखेलमथो वक्ष्ये वृत्त पञ्चदशाक्षरे ।
 सारङ्गिकेति यत्रापि पिङ्गले प्रोक्तमुत्तमम् ॥ ७२ ॥
 ततस्तु भासिनीवृत्त तत स्याच्चाष्ट चामरम् ।
 तृणक चान्यतरचापि भ्रमरावलिका तत ॥ ७३ ॥
 भ्रमरावली पिङ्गले स्यान् मनोहसस्ततस्तत ।
 शरभ वृत्तमन्यत्र मता दक्षिकलेति च ॥ ७४ ॥
 मणिगुणनिकर स्रगिति च भेदा द्वावस्य यतिवृत्तौ भवत ।
 तत्प्रागेवाभिहित वृत्तद्वयमस्य शरमतो न भिदा ॥ ७५ ॥
 ततस्तु निशिपासाख्य विपिनात्तिलक तत ।
 चन्द्रलेखा तत श्लोका चण्डलेखाऽपि चान्यत ॥ ७६ ॥^१
 ततश्चित्रा समाख्याता चित्र चान्यत्र कीर्तितम् ।
 ततस्तु पसर वृत्तमेला स्यात्तदनन्तरम् ॥ ७७ ॥
 तत प्रिया समाख्याता यतिभेदादसि पुन ।
 उत्सवस्तु तत प्रोक्तस्ततश्चोद्गुण मतम् ॥ ७८ ॥
 प्रस्तारगत्या सम्प्रोक्ता भेदा पञ्चदशाक्षरे ।
 यमुदासत्राश्वनेत्राग्निप्रमिता (३२७६८) कविपण्डितैः ॥ ७९ ॥
 प्रस्तार्य शेषभेदास्तु कृत्वा नामानि च स्यत ।
 अस्मदीयापदेशेन सूचनीया सुबुद्धिभिः ॥ ८० ॥
 अथ प्रथमतो राम प्रस्तारे षोडशाक्षरे ।
 ब्रह्मरूपकमित्यस्य नाम प्रोक्त च पिङ्गले ॥ ८१ ॥

नराचमिति यन्नाम ततः स्यात् पञ्चचामरम् ।
 ततो नीलं समाख्यातं ततः स्याच्चञ्चलाभिधम् ॥ ८२ ॥
 इदमेवान्यतश्चित्रसङ्गमित्येव भाषितम् ।
 ततस्तु मदनादूर्ध्वं ललिता स्यादनन्तरम् ॥ ८३ ॥
 वाणिनीवृत्तमाख्यातं प्रवराल्ललितं ततः ।
 अनन्तरं तु गरुडरुतं स्याच्चकिता ततः ॥ ८४ ॥
 चकितं व यतिविभेदात् क्वचिदपि गजतुरगविलसितं भवति ।
 क्वचिदिदमेव ऋपभगजविलसितमिति नाम संघटो ॥ ८५ ॥
 ततः शैलशिखावृत्तं ततस्तु ललितं मतम् ।
 ततः सुकेशरं वृत्तं ललना स्यादनन्तरम् ॥ ८६ ॥
 ततो गिरिधृतिः कुत्राप्यचलानन्तरं धृतिः ।
 प्रस्तारगल्यैवात्रापि भेदाः स्युः षोडशाक्षरे ॥ ८७ ॥
 रसाग्निपञ्चेपुरसं (६५५३६) मिताः प्रख्यातबुद्धिभिः ।
 प्रस्तार्यं सूच्याश्चान्येपि भेदा इत्युपदिश्यते ॥ ८८ ॥
 अथ सप्तदशे वर्णप्रस्तारे वृत्तमीर्यते ।
 लीलाधृष्टं प्रथमतस्ततः पृथ्वी प्रकीर्तिता ॥ ८९ ॥
 ततो मालावतीवृत्त मालाघर इति क्वचित् ।
 ततः शिखरिणीवृत्तं हरिणीवृत्ततस्तथा ॥ ९० ॥
 मन्दात्रान्ता वंशपत्रपतितं पतिता क्वचित् ।
 दाम्भौ तु वंशवदनमेतन्नाम प्रकीर्तितम् ॥ ९१ ॥
 ततो नट्टकं वृत्तं यतिभेदात् कोकिलम् ।
 ततस्तु हारिणीवृत्त भारान्ता ततो भवेत् ॥ ९२ ॥
 मतङ्गवाहिनीवृत्तं ततः स्यात् पद्मकं तथा ।
 दशशब्दान्मुखहरमिति वृत्तं समीरितम् ॥ ९३ ॥
 प्रस्तारगत्या भेदाः स्युरत्र सप्तदशाक्षरे ।
 नेत्राश्वय्योमचन्द्राग्निचन्द्रैः (१३१०७२) परिमिताः परे ॥ ९४ ॥
 भेदाः सुबुद्धिभिस्तूह्याः प्रस्तार्यं स्वमनीषया ।
 अथाष्टादशवर्णानां प्रस्तारे प्रथमं भवेत् ॥ ९५ ॥

लोलाचन्द्रस्ततश्च स्यान्मञ्जीरा चर्चरी तत ।
 क्रीडाचन्द्रस्ततश्च स्यात् तत कुसुमिताल्लता ॥ ६६ ॥
 ततस्तु नन्दन वृत्त नाराच स्यादनन्तरम् ।
 मञ्जुलेत्यन्यत प्रोक्ता चित्रलेखा ततो भवेत् ॥ ६७ ॥
 ततस्तु भ्रमराच्चापि पदमित्यतिगुन्दरम् ।
 शार्ङ्गललित पश्चात् ततः सुललित भवेत् ॥ ६८ ॥
 अनन्तर चोपवनकुसुम वृत्तमीरितम् ।
 अत्र प्रस्तारगतिर्यो भेदा ह्यष्टादशाक्षरे ॥ ६९ ॥
 वेदश्रुत्यवनीनेत्ररसयुग्मं (२६२१४४)मिता मता ।
 दोषा स्वबुद्ध्या प्रस्तार्य विज्ञेया स्वगुरुस्तिता ॥ १०० ॥
 अथ प्रथमतो नागानन्दश्चैकोनविंशके ।
 शार्ङ्गलानन्तरं विक्रीडित वृत्त तत स्मृतम् ॥ १०१ ॥
 ततश्चन्द्र समाख्यात चन्द्रमालेति च क्वचित् ।
 ततस्तु धवल वृत्त धवलेति च पिङ्गले ॥ १०२ ॥
 तत शम्भु समाख्यातो मेघविस्फूर्जिता तत ।
 छायावृत्त ततश्च स्यात् सुरसा तदनन्तरम् ॥ १०३ ॥
 फुल्लदाम ततश्च स्यान्मुदुलात् कुसुम तत ।
 प्रस्तारगत्या भेदाश्चैकोनविंशाक्षरे कृता ॥ १०४ ॥
 यस्वष्टनेत्रश्रुतिदूग्भूतै (५२४२८८) परिमिता परे ।
 भेदा प्रस्तार्य बोद्धव्या स्वबुद्ध्या शुद्धबुद्धिभि ॥ १०५ ॥
 अथ विंशाक्षरे पूर्वं योगानन्द^१ समीरित ।
 ततस्तु गीतिकावृत्त गण्डका तदनन्तरम् ॥ १०६ ॥
 गण्डकैव क्वच्चित्रवृत्तमन्यत्र वृत्तकम् ।
 शोभावृत्त तत प्रोक्त तत सुवदना भवेत् ॥ १०७ ॥
 प्लवङ्गभङ्गाच्च पुनर्मङ्गल वृत्तमुच्यते ।
 तत शशाङ्कचलित ततो भवति भद्रकम् ॥ १०८ ॥
 ततो गुणगण वृत्तमन्य स्यादतिसुन्दरम् ।
 प्रस्तारगत्या चात्रत्या भेदा रसमुनीपुभि ॥ १०९ ॥

वसुवेदखचन्द्रैश्च (१०४८५७६) मिता स्युष्मापरे^१ बुधे ।
 प्रस्तार्यं बुद्ध्या ससूच्या छन्दशास्त्रविशारदै ॥ ११० ॥
 अथैकविंशत्यक्षरेऽस्मिन् ब्रह्मानन्दादनन्तरम् ।
 स्रग्धरा मञ्जरी च स्यान्नरेन्द्रस्तदनन्तरम् ॥ १११ ॥
 ततस्तु सरसीवृत्तं क्वचित् सुरतरुर्भवेत् ।
 सिद्धकचान्यतः प्रोक्तं रुचिरा तदनन्तरम् ॥ ११२ ॥
 ततश्च स्यान्निरुपमतिलकवृत्तमन्यगम् ।
 प्रस्तारगत्या चात्रापि भेदा नैनेपुचन्द्रकं ॥ ११३ ॥
 मुनिरन्ध्रखनेत्रैश्च (२०६७१५२) विज्ञेया कविशेखरैः ।
 प्रस्तार्यान्त्यत्समुन्नेय भेदजात सुबुद्धिभिः ॥ ११४ ॥
 अथ प्रथमतो विद्यानन्दवृत्तमुदीरितम् ।
 द्वाविंशत्यक्षरे हसीवृत्तं स्यात्तदनन्तरम् ।
 ततस्तु मदिरावृत्तं मन्द्रकं तदनन्तरम् ॥ ११५ ॥
 तदेव यतिभेदेन शिखरं परिकीर्तितम् ।
 ततः स्यादच्युतवृत्तं मङ्गलसमनन्तरम् ॥ ११६ ॥
 ततस्तद्वरं वृत्तमन्यं भवति सुन्दरम् ।
 प्रस्तारगत्यैवात्रापि भेदा वेदखर्वह्निभिः ॥ ११७ ॥
 वेदग्रहेन्दुवेदैश्च (४१६४३०४) भवन्तीति विनिश्चितम् ।
 तथैवाप्येपि ये भेदास्ते प्रस्तार्यं स्वबुद्धितः ॥ ११८ ॥
 सूचनीया कविवरैः छन्दशास्त्रविशारदैः ।
 अत्रापि त्र्यधिके विंशत्यक्षरे पूर्वंमुच्यते ॥ ११९ ॥
 दिव्यानन्दसर्वगुरुस्ततः सुन्दरिका भवेत् ।
 ततस्तु यतिभेदेन सैव पद्मावती भवेत् ॥ १२० ॥
 ततोऽद्वितयया प्रोक्ता सैवश्वललितं वदन्ति ।
 ततस्तु मालतीवृत्तं मल्लिका स्यादनन्तरम् ॥ १२१ ॥
 मत्ताक्रीड ततः प्रोक्तं कनकाद्वयं ततः ।
 प्रस्तारगतिर्यो भेदास्त्रयोविंशत्यक्षरे स्थिता ॥ १२२ ॥
 वसुधोमरसकमामृदवस्वग्निरवसुभिर्मिता (८३८८६०८) ।
 शेषभेदा सुधीभिस्तु सूच्या प्रस्तार्यं शास्त्रतः ॥ १२३ ॥

अथ तत्त्वाक्षरे पूर्व रामानन्दोऽयं दुर्मिला ।
 किरीटं तु तत् प्रोक्तं ततस्तन्वी प्रकीर्तिता ॥ १२४ ॥
 ततस्तु माधवीवृत्तं तरलान्नयनं ततः ।
 अथ प्रस्तारभेदेन भेदा षड्भूमियुग्मकं ॥ १२५ ॥
 सप्तपिमुनिशास्त्रेन्दुः (१६७७७२१६) मिता स्फुरपरे पुनः ।
 गुरुपदेशमार्गेण सूचनीया मनीषिभिः ॥ १२६ ॥
 अथ षड्वाधिके विशत्यक्षरे पूर्वमुच्यते ।
 कामानन्दस्तत्र कौञ्चपदा मल्ली ततो भवेत् ॥ १२७ ॥
 ततो मणिगण वृत्तमिति वृत्तचतुष्टयम् ।
 प्रस्तारगत्या चात्रापि भेदा ज्ञेयान्नित्येषुभिः ॥ १२८ ॥
 वेदषड्वैपुर्वह्निभ्यामपि (३३५५४४३२) स्फुरपरेपि च ।
 छन्दशास्त्रोक्तमार्गेण सूचनीया स्वबुद्धितः ॥ १२९ ॥
 षड्भिरभ्यधिके विशत्यक्षरेऽप्ययं गद्यते ।
 श्रीगोविन्दानन्दसज्ञं वृत्तमल्पन्तसुन्दरम् ॥ १३० ॥
 ततो भुजङ्गपूर्वं तु विजृम्भितमिति स्मृतम् ।
 मपवाहस्ततो वृत्तं मागधी तदनन्तरम् ॥ १३१ ॥
 ततश्चान्यं भवेद् वृत्तं कमलाजनन्तरं दसम् ।
 प्रस्तारगत्या चात्रापि भेदा सम्यग् विभाविता ॥ १३२ ॥
 वेदशास्त्रयसुद्वन्द्वस्तेन्द्रद्वयससूचिताः । (६७१०८८६४) ।
 प्रस्तार्यं शास्त्रमार्गेणापरे सूच्या स्वबुद्धितः ॥ १३३ ॥
 एकाक्षरादिषड्विशत्यक्षरावधि कीर्तितम् ।
 यथालाभं वर्णवृत्तमन्यद्वह्ना महात्मभिः ॥ १३४ ॥
 रसलोचनमुन्यद्वचन्द्रेनेत्रान्धिवह्निभिः ।
 दाशना योजितैरष्टैः (१३४२१७७२६) पिण्डसम्या भवेदिह ॥ १३५ ॥
 भेदेष्वेतेषु चाद्यन्तसहितं भेदकल्पनं ।
 षड्वचष्टमधिकं नेत्रगतञ्च (२६५) वृत्तमीरितम् ॥ १३६ ॥
 द्वितीये एण्डके वर्णवृत्ते सप्तमोक्तिरे ।
 यत्तानुक्रमणी रूपमाद्य प्रकरणं त्विदम् ॥ १३७ ॥
 प्रतीर्णकप्रकरणं द्वितीयमयं कथ्यते ।
 प्रस्तारोत्तीर्णवृत्तानि कानिचित्तत्र चतुर्दश ॥ १३८ ॥

भादौ पिपीडिका तत्र ततस्तु करभ. स्मृत. ।
 अनन्तर च पणव माला स्यात्तदनन्तरम् ॥ १३६ ॥
 द्वितीयाऽथ त्रिभङ्गी स्यात् शालूर तदनन्तरम् ।
 इति प्रकीर्णक नाम द्वितीय वृत्तमौक्तिके ॥ १४० ॥
 प्रोक्तं प्रकरण चाथ तृतीयमिदमुच्यते ।
 दण्डकाना प्रकरण क्रमप्राप्त मनोरमम् ॥ १४१ ॥

तत्र—

चण्डवृष्टिप्रयातस्तु प्रथम परिकीर्तित ।
 सत. प्रचितकश्चाथ ततोऽप्यर्णदियो मताः ॥ १४२ ॥
 ततस्तु सर्वतोभद्रस्ततश्चाऽशोकमञ्जरी ।
 कुसुमस्तवकश्चाथ भक्तमातङ्ग एव च ॥ १४३ ॥
 अनङ्गशेखरश्चेति तृतीय परिकीर्तितम् ।
 अयाद्धंसमक नाम चतुर्थं परिकीर्त्यते ॥ १४४ ॥
 पुष्पिताग्रा भवेत्तत्र प्रथम वृत्तमुत्तमम् ।
 ततश्चैवोपचित्र स्यादथ वेगवती भवेत् ॥ १४५ ॥
 हरिणाऽनन्तर चापि प्लुता सपरिकीर्तिता ।
 ततश्चापरवक्त्र स्यात् सुन्दरी च ततो मता ॥ १४६ ॥
 अथ भद्रविराट् वृत्त तत केतुमती स्थिता ।
 ततस्तु बाह्मतीवृत्तमथ स्यात् षट्पदावली ॥ १४७ ॥
 इत्पद्धंसमक नाम तुर्यं प्रकरण मतम् ।
 अथोच्यते प्रकरण विषय वृत्तमौक्तिके ॥ १४८ ॥
 पञ्चम यत्र पूर्वं स्याद् उद्गता वृत्तमुत्तमम् ।
 ततस्तु सौरभ वृत्त ललित तदनन्तरम् ॥ १४९ ॥
 अथ भावस्ततो वक्त्र पथ्यावृत्तमत स्मृतम् ।
 ततस्त्वानुष्टुभ वृत्तमष्टाक्षरतया कृतम् ॥ १५० ॥
 इत्थं विषयवृत्ताना प्रोक्त प्रकरण त्विह ।
 अथ षष्ठ प्रकरण वैतालीय प्रकीर्त्यते ॥ १५१ ॥
 वैतालीय प्रथमतस्तत्र वृत्त निगद्यते ।
 ततश्चौपच्छन्दसिकमापातलिकमेव च ॥ १५२ ॥

द्विविध नलिनाख्य च ततः स्याद् दक्षिणान्तिका ।
 अथोत्तरान्तिका पश्चात् [प्राच्यवृत्तिरुदीरिता ॥ १५३ ॥
 उदीच्यवृत्तिस्तत्पश्चात् प्रवृत्तकमतः परम् ।
 अथापरान्तिका पश्चात्^१ च्चारुहासिन्युदीरिता ॥ १५४ ॥
 वैतालीय प्रकरण षष्ठमेतदुदीरितम् ।
 यतिप्रकरण चाथ सप्तमं परिकीर्त्यते ॥ १५५ ॥
 यतीना घटन यत्र सोदाहरणमीरितम् ।
 अथ गद्यप्रकरणमष्टमं वृत्तमौचितके ॥ १५६ ॥
 नानाविधानि गद्यानि गद्यन्ते यत्र लक्षणं ।
 तत्र तु प्रथमं शुद्धं चूर्णकं गद्यमुच्यते ॥ १५७ ॥
 अथाऽऽविद्धं चूर्णकं तु सलितं चूर्णकं ततः ।
 ततस्तूत्कलिकाप्रायं वृत्तगन्धिं ततः स्मृतम् ॥ १५८ ॥
 ग्रन्थान्तरमतं चात्र लक्षितं गद्यलक्षणे ।
 इति गद्यप्रकरणमष्टमं परिकीर्तितम् ॥ १५९ ॥
 विरुदावल्लोप्रकरणं नवमं चाथ कथ्यते ।

तत्र-

द्विगद्या च त्रिभङ्ग्यन्ता कलिका नवमा पुरा ॥ १६० ॥
 ततस्त्रिभङ्गी कलिका 'नोघा साऽपि' प्रकीर्तिता ।
 विदधाद् या द्विपाद्यन्ता सापि षोढा ततः स्मृता ॥ १६१ ॥
 मुग्धादिका तरुण्यन्ता मध्ये मध्या चतुर्विधा ।
 अवान्तरप्रकरणं कलिकायां प्रकीर्तितम् ॥ १६२ ॥
 अथातो व्यापकं चण्डवृत्तं विरुदमीरितम् ।
 सलक्षणं तथा साधारणं चेति द्विधैव तत् ॥ १६३ ॥
 ततोऽयं परिभाषा स्यात् तद्भेदानां व्यवस्थितिः ।

तत्र-

पुरुषोत्तमाख्यं प्रथमं ततस्तु तिलकं भवेत् ॥ १६४ ॥
 अच्युतस्तु ततः प्रोक्तो वद्वितस्तदनन्तरम् ।
 ततो रणः समाख्यातस्ततः स्याद् वीरचण्डकम् ॥ १६५ ॥

अन्यत्र वीरमद्रः स्यात् ततः शाकः प्रकीर्तितः ।
 मातङ्गसेलितं पश्चादयोत्पलमुदीरितम् ॥ १६६ ॥
 ततो गुणरतिः प्रोक्ता ततः कल्पद्रुमो भवेत् ।
 कन्दलश्चाथ कथितस्ततः स्यादपराजितम् ॥ १६७ ॥
 नत्तंन तु ततः प्रोक्तं तरत्पूर्वं समस्तकम् ।
 वेष्टनाख्यं चण्डवृत्तं ततश्चास्पलितं मतम् ॥ १६८ ॥
 अथ पल्लवितं पश्चात् समग्रं तुरगस्तथा ।
 पङ्केरुहं ततः प्रोक्तं सितकञ्जमतः परम् ॥ १६९ ॥
 पाण्डूत्पलं ततश्च स्यादिन्दीवरमतः परम् ।
 अरुणाम्भोरुहं पश्चादथ फुल्लाम्बुजं मतम् ॥ १७० ॥
 चम्पकं तु ततः प्रोक्तं वज्जुलं सदनन्तरम् ।
 ततः कुन्द समाख्यातमथो बकुलभासुरम् ॥ १७१ ॥
 अनन्तरं तु बकुलमङ्गलं परिकीर्तितम् ।
 मञ्जरीं कोरकश्चाथ गुच्छः कुसुममेव च ॥ १७२ ॥
 अवान्तरमिदं चापि प्रोक्तं प्रकरणं त्विह ।
 अथ त्रिभङ्गी कलिका दण्डकाख्या प्रकीर्तिता ॥ १७३ ॥
 विदग्धपूर्वा सम्पूर्णा त्रिभङ्गी कलिका ततः ।
 ततस्तु मिश्रकलिका कथिता धृत्तमौक्तिके ॥ १७४ ॥
 अवान्तरं प्रकरणं तृतीयमतिमुन्दरम् ।
 इत्थं सलक्षणं चण्डवृत्तप्रकरणं कृतम् ॥ १७५ ॥
 ततः साधारणमतं चण्डवृत्तमिहोदितम् ।
 साधारणमतं चैकदेशतः प्रोक्तमत्र हि ॥ १७६ ॥
 अवान्तरप्रकरणं साधारणमते स्थितम् ।
 चतुर्थं विरुदावल्यां^१ विज्ञेयं कविपण्डितैः ॥ १७७ ॥
 ततस्त्वत्रैव कलिका ज्ञेया सप्तविभक्तिकी ।
 अनन्तरं चाक्षमयीकलिका^२ कथिता त्विह ॥ १७८ ॥
 ततस्तु सर्वलघुकं कलिकाद्वयमीरितम् ।
 ततश्च विरुदानां तु युगपत्सलक्षणं कृतम् ॥ १७९ ॥

ततस्तु विरुदावल्या. सम्पूर्णं लक्षणं कृतम् ।
 विरुदावलीप्रकरणं नवमं वृत्तमौक्तिके ॥ १८० ॥
 अथ खण्डावली तत्र पूर्वं तामरसं भवेत् ।
 ततस्तु मञ्जरी नाम भवेत् खण्डावली त्विह ॥ १८१ ॥
 खण्डावलीप्रकरणं दशमं परिकीर्तितम् ।
 अथानयोस्तु दोषाणां निरूपणमुदीरितम् ॥ १८२ ॥
 एकादशं प्रकरणमिदमुक्तमतिस्फुटम् ।
 ततः खण्डद्वयस्यापि प्रोक्तानुक्रमणी क्रमात् ॥ १८३ ॥
 एतत् प्रकरणं चात्र द्वादशं परिकीर्तितम् ।
 वृत्तानि यत्र गण्यन्ते तथा प्रकरणानि च ॥ १८४ ॥
 पूर्वखण्डे पठेवात्र प्रोक्तं प्रकरणं स्फुटम् ।
 द्वितीयखण्डे चाप्यत्र रविसह्यमुदीरितम् ॥ १८५ ॥
 अथान्तरं प्रकरणं चतुस्रस्य प्रकीर्तितम् ।
 सम्भूय चात्र गदितं रसेन्दुमितमुत्तमम् ॥ १८६ ॥
 उभयोः खण्डयोश्चापि सम्भूर्यैव प्रकाशितम् ।
 द्वाविंशति^१प्रकरणं रुचिरं वृत्तमौक्तिके ॥ १८७ ॥
 मात्सर्यमुत्सार्य मुदा सदा सहृदयैरिदम् ।
 अन्तर्मुखं प्रकरणं विज्ञैरालोक्यतां मम ॥ १८८ ॥

इति खण्डद्वयानुक्रमणीप्रकरणं द्वादशम् ॥१२॥

ग्रन्थकृत-प्रशस्तिः

दुस्थीभूतमिम जलाशयमधिस्थित्वा नयान्त क्वचि-

भोहान्धीकृतगोव्रज मनसिजस्फूर्जद्विपज्वालया ।

गर्वाग्नि पदपद्मयुग्मवलनैर्निर्वाप्य सर्वात्मना,

एव निर्वासय मग्मनोहृदगत दुर्वासनाकालियम् ॥ १ ॥

यद्दोर्मण्डलचण्डमन्दरतटीनिप्येषणालोडिता,

दैत्याभोनिधयो विनाशमगमन्निस्सारभूता भुवि ।

कालिन्दीतटगन्धसिन्धुरममु लीलाशतैर्वन्धुरै'-

राभीरोनिकुम्भवभोतिशमन' वन्दे गभीराशयम् ॥ २ ॥

नि कामतुच्छीकृतकामधाम-

श्रव्यस्फुरन्नाम जगत्प्रलाम ।

उद्दामचिन्ताशतदामबद्ध,

श्रीराम मामुद्धर वामबुद्धिम् ॥ ३ ॥

श्रीचन्द्रशेखरकृते रुचिरतरे वृत्तमौक्तिकेऽमुष्मिन् ।

अक्षरवृत्तविधायकखण्डस्सम्पूर्णतामगमत् ॥ ४ ॥

लक्ष्मीनाथसुभट्टवय्यं इति यो वासिष्ठवशोद्भव-

स्तत्सूनु कविचन्द्रशेखर इति प्रख्यातकीर्तिर्भुवि ।

बालानां सुखबोधहेतुमतुल सन्ध्यादसा मन्दिर,

स्पष्टार्थं वरवृत्तामौक्तिकमिति ग्रन्थं मुदा निर्ममे ॥ ५ ॥

रसमुनिरसचन्द्रैर्भाविते (१६७६) वैश्वमेऽब्दे,

सितदलकलितेऽस्मिन्कार्तिके पीर्णमास्याम् ।

अतिविमलमति श्रीचन्द्रमौलिवितेने,

रुचिरतरमपूर्वं मौक्तिकं वृत्तपूर्वम् ॥ ६ ॥

अथ दशास्त्रपयोनिधिलोपामुद्रार्पति पितरम्' ।

श्रीमहलक्ष्मीनाथ सकलागमपारगं वन्दे ॥ ७ ॥

याते दिवं सुतनये विनयोपपन्ने,
 श्रीचन्द्रशेखरकवी किल सत्प्रबन्धः ।
 विच्छेदमाप भुवि तद्वचसैव सार्द्धं,
 पूर्णकृतश्च स हि जीवनहेतवेऽस्य ॥ ८ ॥

श्रीवृत्तमौक्तिकमिदं लक्ष्मीनाथेन पूरितं यत्नात् ।
 जीयादाचन्द्राकं जीवातुर्जीवलोकस्य ॥ ९ ॥

श्रीः

इत्यालङ्कारिकचक्रचूडामणि-छन्दःशास्त्र^१ परमाचार्य-सकलोपनिषद्ब्रह्मस्यार्णव-
 कर्णधार-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टात्मज-कवि^२-चन्द्रशेखरभट्टविरचिते
 श्रीवृत्तमौक्तिके पिङ्गलवार्तिके वर्णवृत्ताख्यो
 द्वितीयः परिच्छेदः । २।

श्रीः

समाप्तद्वितीयं वार्तिके द्वितीयः खण्डः^३ ।

श्रीकृष्णायानन्तशतये नमः । श्रीरस्तु ।

समाप्तमिदं श्रीवृत्तमौक्तिकं नाम पिङ्गलवार्तिकम् ।

शुभमस्तु ।

संवत् १६६० समये श्रावणवदि ११ रवौ शुभदिने लिखितं शुभस्थाने भ्रगलपुरनगरे
 लालमनिनिधेन । शुभम् । इदं ग्रन्थसख्या ३८५०॥

वृत्तमौक्तिक-वार्त्तिक-दुष्करोद्धारः

प्रथमो विश्रामः

श्रीगणेशाय नमः

प्रणम्य जगदाधारं विश्वरूपिणमीश्वरम् ।

श्रीचन्द्रशेखरकृते वार्त्तिके वृत्तमौक्तिके ॥ १ ॥

अन्तःसारं समालोच्य नष्टोद्दिष्टादिदुष्करम् ।

श्रीलक्ष्मीनाथभट्टेन सुकरीश्रियतेतराम् ॥ २ ॥

अथानन्तरं छान्दसिकपरीक्षार्थं कौतुकार्थञ्च मात्राणामुद्दिष्टमुच्यते । तत्र त्रयोदशविभेदभिधेषु पट्कलप्रस्तारगणेषु इदं कातिम रूपम् इति लिखित्वा पृष्ठं रूपमुद्दिष्टं प्रथमप्रत्ययस्वरूप, तन्प्रकारमाह साद्वेन श्लोकेन ।

दद्यात् पूर्वयुगाङ्कान् लघोरुपरि गण्य तूभयतः ।

अन्त्याङ्के गुरुशीर्षस्थितान् विलुम्पेदथाङ्काश्च ॥ ५१ ॥

उर्वरितैश्च तथाङ्कं मात्रोद्दिष्टं विजानीयात् ।

दद्यादिति । तस्मिन् लिखिते रूपे पूर्वयुगाङ्कान् दद्यात् । तत्र च लघोरुपर्येव गुरोस्तु उभयतः—उपर्यधश्चेत्यर्थः । अथ पश्चादन्त्याङ्के—शेषाङ्के गुरुशीर्षस्थितान् अङ्कान् विलुम्पेत् । तथा कृते सति उर्वरितैश्च अङ्कैः मात्राणामुद्दिष्टं जानीयात् । एतदुक्तं भवति । पट्कलप्रस्तारे तावदेको गुरु, द्वौ लघू, एको गुरुश्च एवरूपो गणः ॥ ५ ॥ कुत्र स्थानेऽस्तीति प्रश्ने कृते, तदाकारं गणं लिखित्वा पूर्वयुगेन समानां क्रमादङ्का दातव्याः २ तः १३ [त]त्रादिकलाया प्रथमोऽङ्को देयः, ततः पूर्वयुगाङ्कामावादुत्सर्गसिद्धो द्वितीयोऽङ्कस्तदधः । तदनन्तरं पूर्वाङ्कद्वयमेकीकृत्य तत्सह्यकोऽङ्कोऽग्रे देयः । एवं च पूर्वयुगसमानाङ्कास्त्रिपञ्चादिर्देय इति पूर्वयुगक्रमार्थः । अत्र गुरोरुपर्यधश्चाङ्को देयो द्विकलत्वात् । एतच्च गुरुशीर्षपदालभ्यते । एवं तेषु अङ्केषु अन्त्याङ्के—चरमाङ्के त्रयोदशरूपे १३ यावन्तो गुरुशीर्षस्थितान् अङ्कास्तान् विलुम्पेत् । ते च नव तथा च त्रयोदशात्मनि चरमेऽङ्के नवाङ्के लुप्ते सति उर्वरितैरङ्कैश्चतुर्भिश्चतुर्थं स्थानं लिखित्वा तत्समानाङ्कस्थानको यद्गण इति जानीयात् । तदेतन्मात्राणामुद्दिष्टम् । उद्दिष्टस्य गणस्य स्थानमात्रानयनादिति भावः ।

एवं चाष्टभेदविभिन्नो पञ्चकलप्रस्तारे—द्वौ लघू, एको गुरुः, एको लघुश्च इत्येवंरूपो गणः ।।५। कुत्र स्थानेऽस्तीति प्रश्ने, प्रथमलघोरपरि प्रथमाङ्कस्तदनु द्वितीयलघोरपरि द्वितीयाङ्कस्ततो गुरोरपरि तृतीयाङ्कस्तदधः पञ्चमाङ्कस्तदनु लघोरपरि अष्टमाङ्कश्च देयः । अतोऽन्त्याङ्के-अष्टमाङ्के ८ गुरुशिरोऽङ्कस्तृतीयो-ऽङ्को ३ लोप्योऽवशिष्टः पञ्चमाङ्को भवति । तस्मात् पञ्चमो गणस्तादृशो भवतीति एव जानीयादिति ।

तथा च पञ्चभेदे चतुष्कलप्रस्तारे जगणः ।।५। कुत्रास्तीति प्रश्ने, प्रथमलघोरपरि प्रथमाङ्कस्तदनु गुरोरपरि द्वितीयाङ्कस्तदधस्तृतीयाङ्कः शेषो लघोरपरि पञ्चमाङ्को देयः । अतः शेषे पञ्चमाङ्के ५ गुरुशिरोऽङ्को द्वितीयो लोप्यः । अवशिष्टस्तृतीयाऽङ्को भवति । तस्मात् तृतीयस्थाने जगणो वर्तत इति जानीयादिति ।

एवञ्च सप्ताष्टकलादिकेषु समस्तेषु प्रस्तारेषु प्रथमे शेषे च गणे शङ्कं व नावतरीतर्त्तिति । द्वितीयस्थानादारभ्य उपान्त्यस्थानपर्यन्तं प्रश्ने कृते प्रोक्त-प्रकारेण उद्दिष्टं बोद्धव्यमतिविशुद्धबुद्धिभिरित्यास्ता विस्तारेण इत्युपरम्यते । इति शिवम् ।

श्रीनाराजाय नमः

प्रस्तारविस्तारणकौतुकेन प्रस्तारयन्तं पतगाधिराजम् ।

मध्येसमुद्रं प्रविशन्तमन्तर्भोजामि हेतुं भुजगाधिराजम् ॥

अथ मात्रा-वर्णोद्दिष्टौ वक्तव्ये तत्र प्रस्तारमन्तरेणोद्दिष्टादीनामक्षय-कथनत्वात् समस्तप्रस्तारस्य वसुधावलयेऽप्यसमावेशात् केचन प्रस्ताराः प्रस्तुतो-पयोगिनो लिख्यन्ते । एवं अन्येपि पञ्चविंशत्यक्षरपर्यन्तं प्रस्ताराः बोद्धव्याः सुबुद्धिभिः ।

द्विकलप्रस्तारो यथा—

■	१
II	२
त्रिकलप्रस्तारो यथा—	
I S	१
S I	२
II I	३

चतुष्कलप्रस्तारो यथा—

S S	१
I I S	२
I S I	३
S I I	४
I I I I	५

पञ्चकलप्रस्तारो यथा—

१ ५ ५	१
५ १ ५	२
१ १ १ ५	३
५ ५ १	४
१ १ ५ १	५
१ ५ १ १	६
५ १ १ १	७
१ १ १ १ १	८

षट्कलप्रस्तारो यथा—

५ ५ ५	१
१ १ ५ ५	२
१ ५ १ ५	३
५ १ १ ५	४
१ १ १ ५	५
१ ५ ५ १	६
५ १ ५ १	७
१ १ १ ५ १	८
५ ५ १ १	९
१ १ ५ १ १	१०
१ ५ १ १ १	११
५ १ १ १ १	१२
१ १ १ १ १	१३

मात्राणामुद्दिष्टं द्विलोप्यः

१	३
१	५
३	

मात्राणामुद्दिष्टं प्रथमप्रत्ययः

१	३	५	८
५	१	१	५
२			१३

लोपो नवाङ्कः ६

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दमकरन्यास्वादभोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिकचक्र-
 चुडामणि-साहित्याणवकण्ठधार-ध्वन्वःशास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टारक-
 विरचिते श्रीवृत्तमोक्तिके धार्तिके दुष्करोद्दारे मात्राप्रस्तारो-
 द्दिष्टगणसमुद्धारो नाम प्रथमो विधामः ॥ १ ॥

द्वितीयो विश्रामः

अथ मात्राणामदृष्ट रूप नष्ट द्वितीयप्रत्ययस्वरूपम् । तच्च पदकलप्रस्तारे प्रस्तारान्तरे वा अमुकस्थाने कीदृश इति प्रश्नोत्तरमध्यद्वेन श्लोकद्वयेनाह—

अथ मात्राणां नष्ट यददृष्ट पृच्छयते रूपम् ॥ ५२ ॥

पदकलप्रस्तारो लघवः कार्याश्च तावन्त ।

दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कान् पृष्ठाङ्कं लोपयेदन्त्ये ॥ ५३ ॥

उर्वरितोर्वरितानामङ्काना यत्र लभ्यन्ते भाग ।

परमात्रा च गृहीत्वा स एव गुरुतामुपागच्छेत् ॥ ५४ ॥

अथेति । पूर्वार्द्धं अवतारिकयैव व्याख्यातप्रायम् ॥ ५२ ॥

यत्कलकप्रस्तार कृत तत्कलकप्रस्तारकृते तावन्त एव लघव कार्या । अकारोऽवधारणार्थं । तत्र च दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कान् एक-द्वि-त्रि पञ्चाष्ट-त्रयोदश-दीन् । यथा— । । । । । ततः पृष्ठाङ्कं अन्त्ये-शेषे लोपयेत् ॥ ५३ ॥

एव चोर्वरितोर्वरिताना अवशिष्टानामङ्काना यत्र यत्राङ्के भागो लभ्यते स स एवाङ्कः शेषाङ्के लोपयितुं शक्यते । स पुनस्तद्वत् स्थितकल परमात्रा च गृहीत्वा गुरुतामुपागच्छेत्—गुरुर्भवतीत्यर्थः । गुरुत्वे चाऽथ स्थितकलाया अपि सप्रहोऽर्थाद् भवतीति । अन्यथा लघुगुरुत्वेव द्रव्यादिति ॥ ५४ ॥

अनेन व्याख्यानेनाभ्युत्पन्नतमं शिष्यो बोधयितुं न शक्यत इति स्फुटीकृत्य सोदाहरणं विलिख्यते । यथा—

पदकलप्रस्तारे द्वितीयस्थाने कीदृशो गण ? इति प्रश्ने, पूर्वोक्ताङ्कसहिता लघुरूपा पदकला स्थापनीया । पूर्वयुगलसदृशा अङ्का देया । ततः शेषाङ्के त्रयोदशे १३ पृष्ठाङ्कलोपे द्वितीयाङ्कः २ लोपे सति एकादशावशिष्टा ११ भवन्ति । तत्राध्यवहिताष्टलोपे शेषकलाद्वयेन एको गुरुर्भवति । अवशिष्टाङ्कः त्रयः भवति । तत्र च पञ्चलोपाशक्यत्वात् परमात्रा गृहीत्वा गुरुर्भवतीत्युक्तत्वाच्च त्रिलोपे ३ तृतीयचतुर्थाभ्यामपरो गुरुर्भवति । शेषाङ्को नावशिष्यत इति । प्रथमं लघुद्वयमेव । तथा चादौ लघुद्वयमनन्तरं गुरुद्वयमित्येतादृशो । । s s द्वितीयो गणो भवतीत्यर्थः । एवमन्यत्रापि ।

यद्यप्याद्यन्तयोस्सन्देहाभावस्तथापि प्रथमे कीदृशो गण ? इति प्रश्ने, गुरु-त्रयात्मकं प्रथमं गणं लिखित्वा तत्रोपर्यधं क्रमेण पूर्वयुगाङ्का एक-द्वि-त्रि-पञ्चाष्ट-

त्रयोदशाकारा देयाः । यथा— ५ ॥ ५ तत्र शेषाङ्के त्रयोदशात्मनि १३ गुरुशीर्षस्था ये अङ्का एकव्यष्टरूपास्तैर्जातो द्वादशाङ्को लोप्यस्तथा च लुप्ते तस्मिन् प्रथमो गणस्तादृशो भवतीति वेदितव्यम् ।

अथ च त्रयोदशस्थाने कीदृशो गणः ? इति प्रश्ने, पूर्व[व]देव लघूनामुपर्यङ्कान् दत्त्वा शेषाङ्के त्रयोदशात्मनि पूष्ठाङ्कलोपे अवशिष्टाङ्काभावात्त गुरुकल्पना । अतो लघव एवावशिष्यन्ते इति । । । । । ।

चतुर्दशादिप्रश्ने चाङ्कलोपासम्भवादसत्यत्वमात्रं वाच्यम् । तदधिकप्रस्तारा-भावादित्यं च मात्राप्रस्तारे सर्वत्रैव शेषाङ्कसमसंख्यागणा भवन्तीत्यपि निश्ची-यते । इति गुरुमुखादवगतार्यो लिखित इति शिवम् ।

मात्राणां नष्टम्

१	२	३	५	८	१३
।	।	।	।	।	।
		।	।	५	५

द्वितीयः प्रत्ययः

इति श्रीमन्नन्दनस्य नखरणारविन्दमकरन्दस्वादभोदमानमानसवञ्चरीकालङ्कारिक-
चक्रबूडामणि-साहित्यार्णवकर्मधार-खण्डःशास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथ-
भट्टारकरविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्तिकदुष्करोद्दारे मात्रा-
प्रस्तारनष्टगणसमुद्धारो नाम द्वितीयो विधामः ॥ २ ॥

तृतीयो विश्रामः

अथ तथैव नमःप्राप्तं वर्णानामुद्दिष्टमाह—द्विगुणानिति श्लोकेन ।

द्विगुणानङ्कान् दत्त्वा वर्णोपरि सधुशिर स्थितानङ्कान् ।

एवेन पूरयित्वा वर्णोद्दिष्टं विजानीत ॥ ५५ ॥

वर्णानामुपरिप्रगुतानां इति अघ्याहार्यम् । तथा च तेषामुपरि द्विगुणानङ्कान् दत्त्वा ततो सधुशिर स्थितानङ्कान् सयाज्येति शेषः । तथा च त-समुत्तं अङ्क एवेनाधिषेत् अङ्केन पूरयित्वा-एकीरुस्य वर्णोद्दिष्टं विजानीत शिष्या इति शेषः ॥ ५५ ॥

एवमुक्तं भवति । एकाक्षरादिषट्पञ्चाक्षरावधिप्रस्तारेषु प्रतिप्रस्तारमाद्य-भेदे सध्यामायादुद्देशं सर्वथा नास्त्येव । अतो द्वितीयभेदादारभ्य उपात्यभेद-पर्यन्तं उद्देशो भवतीति तत्प्रकारव्योपनयनं शिष्यानाभिमुखीकृत्य प्रस्तारा निर्धार-पूर्वकं वर्णोद्दिष्टमुच्यते । तथा च—

एकाक्षरप्रस्तारे भेदद्वयं भवति । तत्र प्रथमभेदस्य उद्देशमस्मत्वात् । द्वितीय भेदे च एकलपुष्पे द्वितीयाक्षराभावादेकमेवाङ्कः सस्मिन् दत्त्वा तदुपरि एव मङ्कमधिकं दत्त्वा द्वितीयभेदमुद्दिशेत् । इत्येकाक्षरप्रस्तारः ।

द्व्यक्षरप्रस्तारे भेदचतुष्टयं ४ भवति । तत्र द्वितीये एको लघुरेको गुरुरित्येव भेदे । ५, प्रथमे लघावेकोऽङ्को, द्वितीये गुरो द्वितीयोऽङ्को दातव्यः तदनु लघोरुपरि एवमधिकं दत्त्वा द्वितीयभेदं उद्दिशेत् । एव तृतीये एको गुरुरेको लघुरित्येव भेदे ५ । प्रथमे गुरावेकोऽङ्को, द्वितीये लघो द्वितीयोऽङ्को-त्यस्ततो लघोरुपरि स्थिते द्वितीयेऽङ्के एकमधिनं दत्त्वा तृतीयं भेदमुद्दिशेत् । एवमेव सधुद्वयात्मके ॥ चतुर्थे भेदे प्रथमे लघो प्रथमाऽङ्कः दत्त्वा, द्वितीयेऽपि लघो द्वितीयमङ्कं विधाय तयोरुपरिस्थितौ प्रथमद्वितीयाङ्कयोर्मेलने वृत्तं जातं त्रिवे एकाङ्कं अधिकं दत्त्वा तस्य चतुष्टयं सम्पाद्य चतुर्थं भेदमुद्दिशेदिति । इति द्व्यक्षरप्रस्तारः ।

*यक्षरप्रस्तारे तु भेदाष्टकं ८ भवति । तत्र एको लघु द्वौ गुरू चेति गणं वृत्तास्तीति प्रश्ने कृते पृष्ठं गणः । ५५ लिखित्वा तत्र प्रथमे लघो प्रथमाङ्को दातव्यः, द्वितीये गुरो तद्द्विगुणो द्वितीयोऽङ्को दातव्यः, तृतीये गुरो तद्द्विगुणं चतुर्थाऽङ्को दातव्यः । अत्र सर्वत्र प्रथमादिपदेन वर्णो लक्ष्यते, ततो लघोरुपरि योऽङ्कस्तस्मिन्नेकमधिकं दत्त्वा तेन सह एकीकृत्य द्व्यङ्को भवति तस्मात् द्वितीयो यगगाध्याक्षरप्रस्तारे गणो भवतीत्येव वेदितव्यम् ।

एवं चात्रैव प्रथमं लघुद्वयं ततो गुरुरित्येवं गणः ।। ५ कस्मिन् स्थानेऽस्तीति प्रश्ने कृते तदाकार गण १, २ लिखित्वा प्रथमे लघावेकाङ्क दत्त्वा १, द्वितीयेऽपि तद्विगुणं द्व्यङ्क २ विधाय, तृतीये गुरौ तद्विगुणं चतुर्थमङ्कं कृत्वा ४, ततो लघोरुपरिस्थयोः प्रथमद्वितीयाङ्कयोः सयोगकृतत्रयं भवति ३, तस्मिन्नेकेऽधिके दत्ते सति चतुरङ्को भवति ४ । अतश्चतुर्थस्सगणाख्यस्थ्यक्षरप्रस्तारे गणो भवतीति ज्ञेयम् । एवमन्यत्र । इति त्र्यक्षरप्रस्तारः ।

अथ चतुरक्षरप्रस्तारे षोडश भेदा १६ भवन्ति । तत्र द्वौ गुरु, एको लघुरेको गुरुश्चेत्येवरूपो गणः कुत्रास्तीति प्रश्ने कृते, त पूष्ठं गणं लिखित्वा ५ ५ । ५ तत्र प्रथमगुरोरुपरि प्रथमाङ्को १ देयः, ततो द्विगुणान् द्विगुणान् अङ्कान् दत्त्वा, ततश्च द्वितीयगुरोरुपरि द्वितीयोऽङ्को देयः, तृतीयो लघौ चतुरङ्कः, चतुर्थो गुरावष्टमाङ्को देयः ८ । इति द्वैगुण्यम् । ततो लघोरुपरिश्चतुर्थोऽङ्कस्त एकेन पूरयित्वा तस्य पञ्चत्व विधाय तत्समानाङ्कस्थाने स गणोऽस्तीति विज्ञातव्यम् । इत्युद्दिष्ट वर्णप्रस्तारे प्रथमप्रत्ययस्वरूपं विजानीत शिष्या इति ।

अत्र सर्वत्र गणशब्देन तत्तद्भेदो लक्ष्यते । तथा चात्रैव प्रथमं लघुत्रयमनन्तर एको गुरुरित्येवमाकारको गणः कुत्र स्थानेऽस्तीति प्रश्ने कृते तदाकार गण लिखित्वा ।। ५ तत्र प्रथमलघोरुपरि प्रथमाङ्क दत्त्वा, ततोऽपि द्विगुणान् द्विगुणान् अङ्कान् दत्त्वा, तदनु द्वितीयलघोरुपरि तद्विगुणं द्वितीयमङ्कं विलिख्य, तृतीये लघौ तद्विगुणं चतुरङ्कं विधाय, चतुर्थे गुरावष्टमाङ्कं तद्विगुणं दत्त्वा, एव द्विगुणत्वं सम्पाद्यते । लघुशिरःस्थितान् एक-द्वि-चतुरङ्कान् एकीकृत्य जात सप्ताङ्कं ७, एकेन ग्रन्थिस्थेन पूरयित्वा तस्याष्टत्वं विधाय तत्समानाङ्कस्थाने स गणोऽस्तीति ज्ञेयम् । इत्युद्दिष्टं विस्पष्टं विजानीत विज्ञातः । इति चतुरक्षरप्रस्तारः ।

किञ्च—

विपरीतप्रस्तारोद्दिष्टे क्रियमाणे लघुशिरस्थितान् अङ्कान् इत्यत्र गुरुशिरस्थितान् इति पाठस्तत्रोद्दिष्टप्रकारः सुलभः । एवञ्च सर्वप्रत्ययेषु पाठविपर्ययः कार्य इत्युपदिश्यते । एवञ्च ते सर्वेऽपि प्रत्यया विपरीता भवन्तीति रहस्यान्तरम् । एवमन्येष्वपि प्रस्तारेषु तत्तद्गणस्थानावस्थान बोद्धव्यमिति विशदबुद्धिभिः । इति संक्षेपः । इति सर्वमवदातम् ।

एकाक्षरप्रस्तारो यथा—

४	१
।	२

द्वयक्षरप्रस्तारो यथा—

५ ५	१
१ ५	२
५ १	३
१ १	४

त्र्यक्षरप्रस्तारो यथा—

५ ५ ५	१
१ ५ ५	२
५ १ ५	३
१ १ ५	४
५ ५ १	५
१ ५ १	६
५ १ १	७
१ १ १	८

चतुरक्षरप्रस्तारो यथा—

५ ५ ५ ५	१
१ ५ ५ ५	२
५ १ ५ ५	३
१ १ ५ ५	४
५ ५ १ ५	५
१ ५ १ ५	६
५ १ १ ५	७
१ १ १ ५	८
५ ५ ५ १	९
१ ५ ५ १	१०
५ १ ५ १	११
१ १ ५ १	१२
५ ५ १ १	१३
१ ५ १ १	१४
५ १ १ १	१५
१ १ १ १	१६

वर्णानां उद्दिष्टं तथैव प्रथमः ।

[इति] श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धारप्रस्तारे विस्तारप्रकारः ।

इति श्रीमद्वन्दनम्बनचरणारविन्दमकरम्बास्वात्मोदमानमानसचञ्चरीकासङ्कारिक-
 चक्रचूडामणि-साहिरमाण्डकणधार-सुन्दःशास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मी-
 नाथभट्टारकविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिक-वार्त्तिकदुष्करो-
 द्धारे वर्णप्रस्तारोद्दिष्टगणसमुद्धारो नाम
 तृतीयो विभागः ॥ ३ ॥

चतुर्थो विभ्रामः

अथ क्रमप्राप्तं तथैवं वर्णानां नष्टमाह—‘नष्टे पृष्ठे’ इति श्लोकेन ।

नष्टे पृष्ठे भागः कर्तव्यः पृष्ठसंख्यायाः ।

समेभागे लं कुर्याद् विपमे दत्तव्यमानयेद् गुरुकम् ॥ ५६ ॥

नष्टे—अदृष्टरूपे पृष्ठे सति पृष्ठसंख्यायाः—पृष्ठायाः संख्यायाः भागः कर्तव्यः—
विधेयः । तत्र समभागे सति-ल-लघुं कुर्यात्, विपमेऽवशिष्टे सतीति शेषः । एक
दत्त्वा तस्यापि भागं कृत्वा गुरुकमानयेत्—गुरुं लिखेदित्यर्थः । एवं कृते सति
प्रकृतप्रस्तारस्थितादृष्टरूपगणस्थानसिद्धिर्भवतीति भावः ॥ ५६ ॥

इदमत्रानुसन्धेयम्—

अत्र तावद् भागो नाम नष्टाङ्कस्य यावत्संख्यापूरणम् । तथाहि सोदाह-
रणमुच्यते । यथा—

चतुरक्षरप्रस्तारे षष्ठो गणः किमाकारः ? इति प्रश्ने, षडङ्गभागं कृत्वा
तद्वद् अयं ३ स्थापनीयम् । अयं च समो भागः, उभयकोटिसंख्यात् । अथ एको
१ गुरुल्लेख्यः । अनन्तरं अवशिष्टस्य त्रयस्य विपमत्वात् एकं १ दत्त्वा चतुष्टयं
सम्पाद्य तस्य भागं कृत्वा द्वयं २ स्थापनीयम् । तदा एको गुरुल्लेख्यः, ततो
द्वयोर्भागं कृत्वा एकं १ स्थापनीयम् । तदा एको १ लघुल्लेख्यः । ततोऽवशिष्टे
विपमे एकं १ दत्त्वा द्वित्वं सम्पाद्य तस्यापि भागं कृत्वा एकमेव स्थापनीयम् । तदा
एको गुरुल्लेख्यः । एवञ्च प्रथमे लघुरनन्तरं गुरुस्ततो लघुरन्तरे गुरुरेवमाकार-
श्चतुरक्षरप्रस्तारे षष्ठो । ५ । ३ गण इति वेदितव्यम् ।

तथा चात्रैव सप्तमस्थाने किमाकारको गणः ? इति प्रश्ने, सप्तमस्य
विपमत्वात् पूर्वमेको गुरुल्लेख्यः । ततः सप्तसु एकं दत्त्वा अष्टौ कृत्वा विभागः
कार्यस्तेन अवशिष्टाश्चत्वारः । अयं च समो भागस्तत एको १ लघुल्लेख्यः ।
पुनश्चतुष्टयस्यावशिष्टस्य भागं कृत्वा द्वयं समं स्थापनीयम् । अत एको लघुरेव
लेख्यः । अनन्तरं अवशिष्टस्य एकाङ्कस्य विपमीभूतत्वाद् गुरुरेव लेख्यः । एवञ्च
प्रथमं गुरुरनन्तरं लघुस्ततोऽपि लघुरेव चरमे च गुरुरेवं ५ । १ । ५ आकारश्चतुरक्षर-
प्रस्तारे सप्तमो गण इति च विज्ञेयम् । एवं पुनः पुनर्भागि समे विभजनीये लघु-
र्जातव्यः । विपमे एकं दत्त्वा भागे कृते गुरुर्जातव्यः । एकते च लघावधिको गण

आयातीति षड्विंशतिवर्णप्रस्तारपयन्तं विपमस्थलेषु एकैकं दत्त्वा गुरुल्लेख्य
इति सक्षेपः । सर्वमिदमतिमञ्जुलवञ्जुलवर्णनष्टमिति शिवम् ।

वर्णानां नष्टम्

1	5	1	5	6
5	1	1	5	6

तथैव द्वितीयप्रत्ययः ।

इति श्रीमद्भनन्दनचरणारविन्दमकरम्बास्वादिभोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिकचक्रवृद्धा-
मणिसाहित्यार्णवकण्ठधार-छन्दःशास्त्रपरमाचार्यधीलक्ष्मीनारायणभट्टारक-
विरचिते भोवृत्तभोवित्तकवार्त्तिकबुष्करोद्धारवर्णप्रस्तार-
नष्टगणसमुद्धारो नाम चतुर्थो विधामः ॥ ४ ॥

पञ्चमो विश्रामः

अथ तृतीयप्रत्ययस्वरूपवर्णभेदमाह—श्लोकद्वयेन कोष्ठानिति ।

कोष्ठानेकाधिकान् वर्णं कुर्यादाद्यन्तयोः पुन ।

एकाङ्कमुपरिस्थान् द्वयैरन्यान् प्रपूरयेत् ॥ ५७ ॥

वर्णभेदस्य सर्वगुर्वादिगणवेदकम् ।

प्रस्तारसंख्याज्ञानञ्च फल तस्मोच्यते बुधे ॥ ५८ ॥

तत्र च क्रमाद् एकाधिकान् कोष्ठान् वर्णैरक्षरैरुपलक्षितान्, पुनराद्यन्तयो-
रेकाङ्कं च कुर्याद् विलिख्य रचयेत् । ततश्च मध्यस्थकोष्ठकस्योपरि स्थिताङ्क-
द्वयैरेकीकृतैरित्यर्थः । अन्यान् शून्यान् कोष्ठान् प्रपूरयेत् ॥ ५७ ॥

एव कृते सत्यय वर्णभेदभेदरिव भवतीति शेषः । तत्सर्वप्रकारेण विरचि-
तस्य भेदोद्बुधं—अधीतछन्दशास्त्रे भाष्यवाचित्कतात्पर्याभिज्ञैरिति यावत् । सर्व-
गुरुरादौ येषामेवविधाना गणानां वेदक-ज्ञापकं भवबोधकमिति, यावत् प्रस्तार
संख्याज्ञानं च यतो भवतीति उभयमपि फलविशेषणम् । तथा च तत्तत्पक्षितस्थ-
कोष्ठगतं तत्तद्वर्णप्रस्तारसंख्याव्यापकं फल उच्यते—प्रकाशयत इत्यर्थः ॥ ५८ ॥

अस्य निर्गमितार्थस्त्वेव समुल्लसति—

एकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षरपर्यन्तं स्वस्वप्रस्तारे कति सर्वगुरवः, कत्येकादि-
गुरवः, कति सर्वलघवः, कति वा प्रस्तारसरयेति प्रश्ने कृते वर्णभेदप्रस्तार
देयम् । तत्र एकाक्षरादिक्रमेण यावदिष्टं कोष्ठकान् विरचय्य, आदावन्ते च कोष्ठके
प्रथमाङ्को दातव्यः । ततो मध्यस्थकोष्ठके च तदीयशिरकोष्ठकद्वयाङ्कं शृङ्खला-
बन्धन्यायेन एकीकृत्य परं शून्यं कोष्ठकं एकीकृताङ्के पूरयेत् । एवमन्यत्रापि
पूरणीये कोष्ठके कोष्ठानामुपरिस्थितकोष्ठद्वयाङ्कमुक्तबन्धन्यायेन पूरणं विधेयं
इति संक्षेपः । एव पूरितेषु कोष्ठेषु एकाक्षरप्रस्तारे आदावेकगुर्वात्मकस्तदन्ते च
एकलघ्वात्मकं संकेत इति ।

द्वयक्षरप्रस्तारे तु सर्वगुरुरादौ त्रिगुरु-द्विगुरुर्वाभिभावात् स्थानद्वयेप्येक-
गुरुरन्ते च सर्वलघुरिति ।

यक्षरप्रस्तारे चादौ सर्वगुरुस्त्रिगुरोरन्यत्रासम्भवात्, स्थानत्रये द्विगुरुः, स्थान-
त्रये च एकगुरुरन्ते च सर्वलघुरिति ।

चतुरक्षरप्रस्तारेपि सर्वगुरुरादौ च चतुर्गुरोरन्यत्राभावात्, स्थानचतुष्टये
त्रिगुरुः, स्थानषट्के द्विगुरुः, स्थानचतुष्टये च एकगुरुरन्ते च सर्वलघुरिति ।

पष्ठो विश्रामः

अथ मेरुगर्भा चतुर्थप्रत्ययस्वरूपां वर्णानां पताकामाह—श्लोकत्रयेण
दत्त्वेत्यादि ।

दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कान् पूर्वाङ्के योजयेदपरान् ।
अङ्कः पूर्वं यो वै भूतस्ततः पङ्क्तिसञ्चारः ॥५६॥
अङ्काः पूर्वं भूता येन तमङ्कभरणं त्यजेत् ।
अङ्कश्च पूर्वं यः सिद्धस्तमङ्कं नैव साधयेत् ॥६०॥
प्रस्तारसंख्यया चैवमङ्कविस्तारकल्पना ।
पताका सर्वगुर्वादिवेदिकेयं विशिष्य तु ॥ ६१ ॥

तत्र पूर्वयुगाङ्कान् एक-द्वि-चतुरष्टादीन् अङ्कान् प्रथमं दत्त्वा पूर्वाङ्कैरेकद्वया-
दिभिरपरान् त्र्यादीन् अङ्कान् योजयेत् बिभृयात् भरणं कुर्यादिति यावत् । किञ्च,
य एवाङ्कः पूर्वं भूतः—पूरितः, ततस्तस्मादेव अङ्कात् वै-नियमेन पङ्क्तिसञ्चारः
विधेय इति शेषः ॥ ५६ ॥

अङ्का इति । नियमान्तरं च, येन-अङ्केन पूर्वमङ्का भूताः—पूरिताः तमङ्कं
पुनर्भरणं त्यजेत्, प्रयोजनाभावात् । किञ्च, अङ्कश्च पूर्वं यः सिद्धस्तमङ्कं पुनर्न
साधयेत्—न स्थापयेदित्यर्थः ॥ ६० ॥

पताकाप्रयोजनमाह—

प्रस्तारेति । एवं प्रस्तारसंख्यया अत्राङ्कविस्तारकल्पना भवतीति शेषः ।
एतादृशी चेयं पताका विशिष्य-विशिष्टां कृत्वा, तु-अवधारणे, सर्वगुर्वादिसर्व-
लघ्वन्तवेदिका-ज्ञापिका विज्ञातव्येति वाक्यार्थः ॥ ६१ ॥

एवमुक्तं भवति—

भो शिष्याः ! उद्दिष्टसदृशा अङ्का देयाः । पूर्वाङ्कैः परभरणं कुर्यात्,
पूरयितव्यः । पङ्क्तेः प्रधानाङ्कस्य पश्चात् स्थिताः पूर्वाङ्का भरणं पूरणम् ।
एकत्राधिकस्य अङ्कस्य प्राप्ती सा पङ्क्तिरेव तदङ्कभरणे त्यज्यत इत्यवधेयम् ।

एवञ्च मेरुक्तप्रस्तारसंख्यया पताकाङ्का वर्द्धयितव्याः । तथाहि—

चतुर्वर्णप्रस्तारे एक-द्वि-चतुरष्टाङ्का देयाः । यथा—१ । २ । ४ । ८ ।
अत्रकाङ्कस्य पूर्वाङ्कासम्भवात् द्वितीयाङ्कादारभ्य पङ्क्तिः पूर्यते । तत्र

पूर्वाङ्का एकाङ्क एव प्रस्तारादिभूतः सर्वगुरुरूपः, तस्य परे द्वितीयादयः ते च अव्यवहितानतिक्रमेण पूर्यन्ते । तथा च एकेन द्वाभ्यां मिलित्वा त्र्यङ्को भवति सः द्वितीयाङ्काधस्तात् स्थापनीयः । तत एकेन षष्ठमिदं मिलित्वा नवाङ्को भवति स पञ्चमाङ्काधस्तात् स्थापनीयः । ततः पंक्तिपरित्यागः । मेरो त्रिगुणां रूपाणां चतुःसंख्यादर्शनादिति भावः । एतेन चतुर्वर्णप्रस्तारे प्रथमं रूपं सर्वगुरु भूयात् । द्वि-त्रि-पञ्च-नवस्थानस्थानि चतुरूपानि त्रिगुणि जानीयादिति । एवमङ्कचतुष्टयं साधयित्वा, ततश्चतुरङ्कस्य अधस्तात् पूरित-पंक्तिस्थाः पराङ्कमिलिताः षडङ्का देयाः । तत्र प्रथमः पूरित एवेति त्यज्यते । ततो द्वाभ्यां चतुर्भिमिलित्वा षष्ठोऽङ्को ६ भवति, स चतुरङ्काधस्तात् स्थापनीयः । ततः त्रिभिः चतुर्भिः सम्भूय सप्तमोऽङ्को भवति, स च षडङ्काधस्तात् स्थापनीयः । एवं च पञ्चमिदं चतुर्भिमिलित्वा जायमानो नवाङ्को न स्थापनीयः । 'अङ्कश्च पूर्व यः सिद्धस्तमङ्कं नैव साधयेत्' इत्युक्त्वात् सिद्धस्य साधनायोगादिति युक्ति-सिद्धत्वाच्च इति । ततो द्वाभ्यां षष्ठमिमिलित्वा दशाङ्को भवति, स च सप्ताङ्का-धस्तात् स्थापनीयः । ततश्च त्रिभिरष्टमिमिलित्वा एकादशाङ्को भवति, स च दशाङ्काधस्तात् स्थापनीयः । ततः पञ्चभिरष्टमिमिलित्वा त्रयोदशाङ्को भवति, स चांश एकादशाङ्काधस्तात् स्थापनीय इति । ततः षड्भिरष्टमि । मेरु-मंस्थानपरिमाणदर्शनादिति पूर्ववद् हेतुरिति भावः । एतेन च चतुर्वर्णप्रस्तारे चतु-षट्-मन्-एकादश-त्रयोदशस्थानस्थानि षड्-रूपाणि द्विगुणि जानीयादिति । एवमङ्कषट्कं पूर्ववदेव साधयित्वा, ततोऽष्टाङ्काधस्तात् पूरितपंक्तिस्थाः पराङ्क-मिलिताश्चत्वारोऽङ्का देयाः तथा च चतुर्भिरष्टमि सम्भूय द्वादशाङ्को भवति, स चाष्टमाङ्काधस्तात् स्थापनीयः । ततः षड्भिरष्टमिश्च सम्भूय चतुर्दशाङ्को भवति, स तु द्वादशाङ्काधस्तात् स्थापनीयः । ततः सप्तभिरष्टमिश्च सम्भूय पञ्चदशाङ्को भवति, सोऽपि चतुर्दशाङ्काधस्तात् स्थापनीयः । ततोऽपि त्रिभिरष्टमि । मेरावेकगुणां चतुःसंख्यादर्शनादिति भावः । एतेन चतुर्वर्णप्रस्तारे षष्टमद्वादश-चतुर्दश-पञ्चदशस्थानस्थानि रूपाणि एकगुणि भूयादिति । एव षट्पञ्चुष्टय साधयित्वा, ततो दशभिरष्टमिस्तु प्रस्तारादिषाङ्कमवाप्त्याष्टादशाङ्कपञ्चाष्ट । तर्हि षोडशाङ्कः सर्वसमुच्चयः १६ अवाप्तामित्यपेक्षायामष्टमाष्टादशे दीयतां सर्व-समुच्चयार्थमिति सूत्रप्रदायः । तथा च प्रथमाष्टपञ्चाष्टयाः मद्दशान्यादेन व्यवस्थानं भवतीति शेषम् ।

पताकाप्रयोगं तु मेरो चतुर्वर्णप्रस्तारस्य एव रूपं चतुर्भिरष्टमि । सर्वगुरुरात्मकं चत्वारि त्रिगुणि रूपाणि, षट् द्विगुणि रूपाणि, पञ्चवारि एक-गुणि रूपाणि, एक सर्वसंज्ञात्मकं रूपमस्ति ।

तत्र षोडशभेदाभिन्ने चतुर्वर्णप्रस्तारे कतमस्याने सर्वगुर्वात्मकं, कतमस्याने च त्रिगुर्वात्मकं, कतमस्याने द्विगुर्वात्मकं, कतमस्याने च एकगुर्वात्मकं, कुत्र वा सर्वलघ्वात्मक रूपमस्ति, कति वा प्रस्तारसंख्येति प्रश्ने कृते पताकया उत्तरं दातव्यमिति ।

पताकाज्ञानफलमिति श्रीगुरुमुखादवगतो वर्णपताकालिखनप्रकारः प्रकाशित इति दिगुपदर्शनम् । उत्तरत्र च षड्विंशतिवर्णपर्यन्तं पताकाविरचनप्रकारः समुन्नेयः सुधीभिः, ग्रन्थविस्तरभयाग्नेहास्माभिः प्रपञ्च्यत इति शिवम् ।

अत्र चतुर्वर्णपताकायां तु सिद्धाङ्कान् पिङ्गलोद्योताख्यायां प्राकृतपिङ्गलसूत्रवृत्तौ श्रीचन्द्रशेखरः श्लोकाभ्यां संजग्राह । यथा—

एक-द्वि-त्रि-शराङ्काश्च वेदतु-मुनि-दिक्-शिवाः ।

कामाष्ट-सूर्य-मनवस्त्रिय-क्षोणीशसम्मिताः ॥ १ ॥

सिद्धाङ्काः स्युश्चतुर्वर्णपताकानुक्रमे स्फुटम् ।

पञ्चकोष्ठे लिखेदङ्कान् शेषानेवं लिखेदिति ॥ २ ॥

शेषान् प्रस्तारान्तरपताकाङ्कान् एवं क्रमात् कोष्ठवर्द्धनपूर्वकक्रमात् लिखेत्-विन्यसेदित्यर्थः ।

अत्र अङ्कविन्यासक्रमस्तु श्रीगुरुमुखादेवावगन्तव्य इति सर्वं मङ्गलम् ।

चतुर्वर्णपताका यथा प्रत्ययकाख्यः—

१	२	४	८	१६
	३	६	१२	
	५	७	१४	
	९	१०	१५	
		११		
		१३		

इति श्रीमन्नन्दनन्दनचरणारविन्दभकरन्दात्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिकचक्रचूडा-

भणि-साहित्यार्णवकर्णधार-छन्दःशास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टारकविरचिते

श्रीशुद्धमौक्तिकवार्तिकद्वयोद्धारो वर्णपताकाङ्कोद्धारो

नाम षष्ठो विधामः ॥ ६ ॥

सप्तमो विश्रामः

अथ तृतीयप्रत्ययस्वरूपमेवात्र [मात्रा]मेवमाह—एकाधिककोष्ठानामित्या-
दिना साद्धेन हलोकचतुष्टयेन—

एकाधिककोष्ठानां द्वे द्वे पक्ती समे कार्ये ।
तासामन्तिमकोष्ठेऽप्येकाङ्क पूर्वभागे तु ॥६२॥
एकाङ्कमयुक्पक्तेः समपक्ते पूर्वयुग्माङ्कम् ।
दद्यादादिमकोष्ठे यावत् पक्षितप्रपूर्तिः स्यात् ॥६३॥
आद्याङ्केन तदीयैः शीर्षाङ्कैर्वामभागस्थं ।
उपरिस्थितेन कोष्ठ विपमाया पूरयेत् पक्ती ॥६४॥
समपक्ती कोष्ठाना पूरणमाद्याङ्कमपह्राय ।
उपरिस्थाङ्कंस्तदुपरिस्थितैर्वामस्थितैरङ्कैः ॥६५॥
मात्रामेवरय प्रोक्तः पूर्वोक्तफलभागिति ।

तत्र क्रमादेकैकेनाधिकेन कोष्ठेनोपसक्षिताना कोष्ठाना मध्ये द्वे द्वे पक्ती समे-
समाने कार्ये—लिखनीये इत्यर्थं । तासां—सर्वासा पक्तीना अन्तिमकोष्ठेषु एकाङ्क-
प्रथमाङ्क यावदित्य दद्यात् इत्यन्वयः । अथ च सर्वासा पक्तीना पूर्वभागे तु
अङ्कविन्यास उच्यते इति शेषः ॥ ६२ ॥

एकाङ्कमिति । तत्रायुक्पक्ते—विपमपक्तेरादिमकोष्ठे—प्रथमकोष्ठे एकाङ्क-
प्रथमाङ्क समपक्तेरादिमकोष्ठे—प्रथमकोष्ठे पूर्वयुग्माङ्क एकान्तरित प्रथमाङ्क
यावत् पक्षितप्रपूर्ति—पूरण स्यात्—भवति तावद् दद्यात्—विन्यसेद् इत्यर्थः ॥ ६३ ॥

तदेवाह—

आद्याङ्केनेति । ततश्च सर्वत्र विपमाया पङ्क्ती उपरिस्थितेन आद्याङ्केन-
प्रथमाङ्केन वामभागस्थं तदीयैः शीर्षाङ्कैश्च कोष्ठग्रन्थमिति शेषः प्रपूरयेत-
साङ्कं कुर्यादित्यर्थः ॥ ६४ ॥

किञ्च—

समपङ्क्ताविति । समपङ्क्ती चाद्याङ्क अपह्राय—त्यक्त्वा उपरिस्थिताङ्क-
तदुपरिस्थितैः वामभागस्थितैरङ्कैश्च ग्रन्थाना कोष्ठाना पूरण विधेयमिति
शेषः ॥ ६५ ॥

उक्तं मात्रामेरुपसंहरति—मात्रामेरुरयमित्यङ्गेन ।

भो शिष्याः ! पूर्वोक्तफलभाग्यं मात्रामेरुरिति प्रकारेणोक्तः । यथा, वर्णमेरोः फलं तथा मात्रामेरोरपीत्यर्थः ।

अत्रैतदुक्तं भवति । द्विमात्रादि-निरवधिकमात्रापङ्क्तिपर्यन्तं स्वस्वप्रस्तारे कति सर्वगुरवः, कत्येकादिगुरवः, कति सर्वलघवः, कति वा प्रस्तारसंख्येति प्रश्ने कृते मात्रामेरुणा प्रत्युत्तरं देयम् ।

तत्र च क्रमेणैव एकैकेनाधिके कोष्ठेनोपलक्षितानां कोष्ठकानां मध्ये द्वे द्वे कोष्ठे अर्थात् षड्ङ्क्ती समे-सदृशे लिखनीये । तत्र प्रथमे कोष्ठद्वयं । तथा द्वितीयेऽपि कोष्ठद्वयमेव । तृतीये कोष्ठत्रयं । चतुर्थेऽपि कोष्ठत्रयमेव । पञ्चमे चत्वारि । षष्ठेऽपि चत्वार्येव । अत्र कोष्ठपदेन कोष्ठाङ्कः पङ्क्तिश्च लक्ष्यते, उपचारात् एककलायाः प्रस्तारो नास्तीति प्रथमं न कोष्ठगणनाकल्पना । अतः कोष्ठद्वयात्मिकैव आदौ पङ्क्तिरिति प्रथमं इत्युक्तिरिति समञ्जसम् ।

एवञ्च कोष्ठपङ्क्तिषु अधोः क्रमेणाङ्कान् लिखेत् । सर्वत्र च शेषकोष्ठे प्रथमाङ्को देयः । तत्र तत्र च कोष्ठद्वयमध्ये आदावुपरिकोष्ठे च एकलपोऽङ्को देयः । उपरिस्थितस्योपरिस्थिताङ्काभावाद् उत्सर्गसिद्धैकलपाङ्केन सहितं कृत्वा द्वितीयकोष्ठे द्वितीयाङ्को देयः इति । तृतीयकोष्ठे तु उपरिस्थिताङ्कसहितं कृत्वा अर्थात् शिरस्थेनाङ्कद्वयेन मिलितं कृत्वा, अतस्त्रिरूपोऽङ्कस्समायाति । तथा चार्थात् शिरस्थेनाङ्केन सह प्रथमो द्वितीयेऽवस्थे मेलनीयः ।

यद्वा, आद्यद्वयमधो मिलतीयं तु प्रक्रिया । तथा च प्रथमकोष्ठद्वयस्य पूरितत्वात् द्वितीयादारभ्याङ्का दातव्याः । तत्र द्वितीये द्वयं, तृतीये पुनरेक, चतुर्थे त्रयम्, पञ्चमे पुनरेकं, षष्ठे चत्वारि, सप्तमे पुनरेक, अष्टमे षड्च, नवमे पुनरेकं, दशमे षट्, एकादशे पुनरेकं, द्वादशे सप्तमेति प्रक्रिया अङ्का देयाः । एवमाद्ये । सदद्य कोष्ठेऽन्तकोष्ठे च पूर्णं मध्यस्थशून्यकोष्ठे चैषा प्रक्रिया पूरणीया । कोष्ठशिरः-कोष्ठस्याङ्कः परकोष्ठस्याङ्को द्वावङ्को चैकीकृत्य मध्यकोष्ठे-शून्यकोष्ठे मेलितोऽङ्को देयः । एवं सर्वत्र निरवधिकत्वात् यावदित्यं कोष्ठकं विरच्य मात्रामेरुः पूर्वोक्तरूपः कर्तव्य इति ।

अयं त्रयोदशमात्रामेरुलिखनक्रमप्रकारः श्रीगुरुमुखादवगतः प्रकाशित इत्युपरम्यते ।

अत्रेदं अनुसन्धेयम् । समविपरमरूपा द्वि-द्विमात्रादिप्रस्तारमारभ्य निरवधिकमात्राप्रस्तारपर्यन्तं स्वस्वप्रस्तारे कति समकले लघवः, कति च गुरवः, कति

विषमकले सधव , ऋति च गुरव , ऋति शोभयत्र प्रस्तारसख्येति प्रदने कृते मात्रा-
मेरुणा प्रत्युत्तर देयम् ।

तत्र द्विकले समप्रस्तारे एव सर्वगुरु , द्वितीयो द्विकलात्मक सर्वसधुरिति
द्विभेद प्रस्तारसखेत ।

त्रिकले विषमप्रस्तारे द्वावेककलवावेकगुरुको चान्ते त्रिकलात्मक सर्वसधु-
रिति द्विभेद प्रस्तारसखेत ।

समकले चतुष्कलप्रस्तारे चादौ द्विगुरु स्थानत्रये च एवगुरुद्विकलश्चान्ते
चतुष्कलात्मक सर्वसधुरिति पञ्चभेद प्रस्तारसखेत ।

विषमकले पञ्चकलप्रस्तारे त्रयो गणा एकसधव , चत्वारो गणास्त्रिसधव ,
स्थानत्रये द्विगुरु , स्थानचतुष्टये चैकगुरुरन्ते च पञ्चकलात्मक सर्वसधु-
रित्यष्टभेद प्रस्तारसखेत ।

समकले षट्कलप्रस्तारे आदौ सर्वगुरु , षड्गणा द्विकला , पञ्चगणाश्चतु-
ष्कला , स्थानषट्के द्विगुरु , स्थानपञ्चके चैकगुरुरन्ते च षट्कलात्मक
सर्वसधुरिति त्रयोदशभेद प्रस्तारसखेत इति ।

एवमनेन प्रकारश्रमेण यावदित्य मात्रामेवंमीष्टमात्राप्रस्तारे सधुगुर्वादि-
प्रकारप्रक्रिया भवगन्तव्या ।

अथवा पूर्वरूपप्रदने यावदित्य यावतकलकप्रस्तारमात्रामह कोष्ठकैर्विरच्य
समकलप्रस्तारे धामत क्रमेण द्वौ चत्वार षडष्टावनेन प्रकारेण गुरुज्ञानम् ।
विषमकलप्रस्तारे तु एक त्रि पञ्च-सप्तानेन प्रकारश्रमेण सधुज्ञानम् । अत
च सर्वत्र सधुरिति । उभयत्रापि एक द्वौ त्रय पञ्चेत्याद्यनया सारण्या दक्षिणतो
व्युत्क्रमेण शृङ्खलाबन्ध गायन तत्तत्प्रवेदज्ञानम् ।

किञ्चात्र वामभागे सर्वत्रैकैकाङ्कस्थले सर्वगुरुज्ञान भवतीति विज्ञातव्य-
मित्युपदेशरहस्यम् । इति शिवम् । सर्वत्राऽत्र च दक्षिणभागे शृङ्खलाबन्ध-यायेन
अग्निमाङ्कपिण्डोत्पत्तिर्भवतीति रहस्यान्तरमिति च ।

श्रीसङ्गीतायभट्टेन रायभट्टात्मजन्मना ।

कृतो मरुत्य मात्राप्रस्तारस्यातिदुर्गम ॥

अस्य स्वरूपमुदाहरणमत्र द्रष्टव्यम् ।

अष्टमो विश्रामः

अथ मरुगर्भां चतुर्थप्रत्ययस्वरूपामेव मात्राणां पताकाभाह—अथेत्यादि अर्द्धेन
श्लोकद्वयेन—

अथ मात्रापताकापि कथ्यते कवितुष्टये ॥६६॥

दत्त्वोद्दिष्टदङ्कान् वामावर्त्तेन लोपयेदन्त्ये ।

अवशिष्टो वै योऽङ्कुस्ततोऽभवत् पक्षितसञ्चार ॥६७॥

एकैकाङ्कुस्य लोपे तु ज्ञानमेकगुरोर्भवेत् ।

द्वित्र्यादीनां विलोपे तु पक्षितद्वित्र्यादिबोधिनी ॥६८॥

अथेति । मात्रामेककथनानन्तरं मात्राणां पताकापि कवितुष्टये—कवीनां
सन्तोषार्थं कथ्यते—उच्यत इत्यर्थं ॥ ६६ ॥

तत्प्रकारमाह—

दत्त्वेति । तत्र उद्दिष्टवत्—उद्देशक्रमवत् अङ्कान्—एक-द्वि-त्रि-पञ्चाष्ट-त्रयो-
दशादीन् दत्त्वा—लिखित्वा, ततो वामावर्त्तेन—वामभागतः अन्त्ये—त्रयोदशाङ्के लोप-
येत् पूर्वमङ्कमिति शेषः । अवशिष्टो वै योऽङ्कु लोपे सतीति शेषः । ततोऽङ्कात्
पक्षितसञ्चारो भवेदिति—जानीयादित्यर्थः ॥६७॥

अपराङ्कुलोपेन प्रकारमाह—

एकैकाङ्कुस्येति । एकैकाङ्कुस्य लोपे तु अन्त्य इति शेषः । एकगुरोर्ज्ञानं
भवेत् । द्वित्र्यादीनां अङ्कानां विलोपे तु पक्षित द्वित्र्यादिगुरुबोधिनी भवतीति
शेषः ॥ ६८ ॥

अथमर्थं —उद्दिष्टसदृशा अङ्काः स्थाप्याः । ते यथा—१, २, ३, ५, ८, १३ ।
एकः द्वित्रिपञ्चाष्टत्रयोदशाद्याः । ततो वामावर्त्तेन परं लोपयेत्—सर्वान्तिमं
अङ्कं तत्पूर्वेणाङ्केन लोपयेदित्यर्थः । तत एकेनाङ्केन अन्तिमाङ्कुलोपे कृते सति
एकगुरुरूपज्ञानं भवति । द्वाभ्यां अतिमाङ्के लोपे सति द्विगुरुरूपज्ञानं भवति । त्रिभि-
रन्तिमाङ्कुलोपे सति त्रिगुरुरूपज्ञानं भवतीत्यादि ज्ञेयम् । एव कृते मात्रापताका
सिद्धयति ।

तत्र पटफलप्रस्तारे यथा—उद्दिष्टसमाना अङ्काः एकद्वित्रिपञ्चाष्टत्रयोदश-
रूपा स्थापनीयाः । ततः सवपेक्षया परस्त्रयोदशाङ्कं तत्पूर्वाष्टमाङ्कं, तेनाष्ट-
माङ्केन त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति अवशिष्टा पञ्च । तस्य पञ्चमाङ्कस्य

तत्पूर्वं त्रिविद्यमानत्वात् अष्टमाङ्गलोपात् परकलया सह गुरुभावाच्च पञ्चमाङ्गाद् एकगुरुपङ्क्तिक्रमो विधेय इति । तत्र च पञ्चमस्थाने आदौ चतुर्लघुकमन्ते चैक-
गुरुकमेवं । । । । ५ आकार रूपमस्तीति ज्ञानपताकाफलम् । एवमन्यत्रापि गुरुभावो
जातव्यः ।

तथा पञ्चभिस्त्रयोदशाङ्गावयवे लुप्ते सति अष्टावशिष्यन्ते, ते तु पञ्चाधो
लेख्याः । तथा त्रिभिस्त्रयोदशाङ्गावयवे लुप्ते सति दशावशिष्यन्ते ते च अष्टाधो
लेख्याः । तथा द्वाभ्यां द्वाभ्यां त्रयोदशाङ्गावयवे लुप्ते सति एकादशावशिष्यन्ते
तेऽपि दशाधो लेख्याः । तथा एकेन त्रयोदशाङ्गावयवे लुप्ते सति द्वादशावशिष्यन्ते
त एकादशाधो लेख्याः । अत्र सर्वत्र पूर्वं एव हेतुरुन्नेयः ।

अतश्च मेरावेकगुरुकचतुर्लघुकरूपगुरुस्थानानि प्रस्तारगत्या पञ्चैव
भवन्तीति नाग्रे पङ्क्तिसञ्चारः । एतेन षट्कलप्रस्तारे पञ्चमाष्टमदशमैकादश-
द्वादशस्थानस्थानि रूपाणि एकगुरुकानि वृत्तादिति । एवं अष्टपञ्चमके एक-
गुरुकमुक्तम् ।

अथ द्विगुरुणि रूपाणि उच्यन्ते—तत्र द्वाभ्यामङ्गाभ्यां अष्टिमाङ्गलोपे कृते
सति द्विगुरुक रूपमिति । पञ्चाष्टभिस्त्रयोदशाङ्गावयवे लुप्ते सति भागाभावात्
तद्वाभावसंस्यस्त्रिभिस्तदप्रस्यैरष्टभिश्च जातैरेकादशभिस्त्रयोदशाङ्गावयवे लुप्ते
सति द्वावशिष्येते, द्वयोस्तत्पूर्वत्र स्थितमानत्वात् । तत्रैकादशाङ्गलोपात् पर-
कलया सह गुरुभावाच्च द्वितीया भारभ्य द्विगुरुकपङ्क्तिसचारो भवतीति ।
तथा च द्वितीयस्थाने प्रथम द्विलघुक ततो द्विगुरुक । । ५ ५ एवमाकारकं रूप-
मस्तीति पूर्ववदेव पताकाफलमुदेतीति ।

एवमन्यत्रापि प्रस्तारान्तरे गुरुभावोऽवगन्तव्यः । तथा च द्वाभ्या अष्ट-
भिश्च जातैर्दशभिः त्रयोदशाङ्गावयवे लुप्ते सति त्रयोऽवशिष्यन्ते, ते द्व्यधो
लेख्याः । तत एकेन अष्टभिश्च जातैर्नवभिः त्रयोदशाङ्गावयवे लुप्ते सति चत्वारो-
ऽवशिष्यन्ते, ते च अघो लेख्याः । ततः पञ्चभिस्त्रिभिश्च जातैरष्टभिस्त्रयोदशाङ्गा-
वयवलोपाद् अवशिष्टः पञ्चमाङ्गो वृत्त एवेति न स्थाप्यते । 'अङ्कश्च पूर्वं यः
सिद्धस्तमङ्कं नैव साधयेदिति ।' वर्णपताकातो अनुवृत्तित्वादिति । ततः पञ्चभि-
द्वाभ्यां च जातो सप्तभिस्त्रयोदशाङ्गावयवे लुप्ते सति सप्तावशिष्यन्ते, ते तु षडधो
लेख्याः । द्वित्रिलोपः पञ्चमात्मको वृत्त एवेति न स्थापनीय, अनुवृत्तिसिद्ध्यादि-
निषिद्धत्वादिति । तत एकेन त्रिभिश्च जातैश्चतुर्भिस्त्रयोदशाङ्गावयवे लुप्ते सति
नवावशिष्यन्ते, तेऽपि सप्ताधो लेख्याः । एषु च पूर्ववद् हेतुरुन्नेयः । अतश्च मेरी
द्विगुरुक-द्विलघुकरूपस्थानानि प्रस्तारगत्या षडेव भवतीति नाग्रे पङ्क्तिसञ्चारः ।

तेन पट्कलप्रस्तारे द्वितीय-तृतीय-चतुर्थ-पञ्च-सप्तम-नवमस्थातस्थानि रूपाणि द्विगुरुणि त्रयादिति ।

तथा च त्रिलोपे त्रिगुरुक रूप भवतीति, त्रिपञ्चाष्टलोपे भागो नास्तीति, द्वि-त्रि-पञ्चलोपोऽप्यष्टात्मको वृत्त एवेति, पञ्च-द्वयोऽलोपोऽप्यष्टलोपात्मको वृत्त एवेति । एक-द्वि-त्रिलोपोपि वृत्त इति प्रकारेण जायमाना श्रद्धा न स्थापनीया प्रकृतप्रस्तारसमाप्तेरिति भावः ।

ननु प्रथम रूप सर्वं गुर्वात्मकं कुत्रास्तीत्यपेक्षाया एक-त्र्यष्टभिर्मिलित्वा जातैर्द्वादशभिस्त्रयोदशाङ्कावयवे लुप्ते सति एकोऽवशिष्टः, स आद्ये स्थाने त्रिगुर्वात्मक रूप भवतीति विज्ञातव्यमिति । चरम रूप तु अष्टमाङ्काग्रे उद्दिष्टा-ङ्काऽकारत्वेन स्थापितमेवास्ति । तथा चात्रापि प्रथमाङ्कचरमाङ्कयोर्पूर्वोक्तन्यायेना-श्वस्थान भवतीति वेदितव्यम् ।

पताकाप्रयोजनं तु मेरी पट्कलप्रस्तारस्यैकं प्रथम रूपं त्रिगुरुपलक्षितं सर्वगुर्वात्मकं, पट्द्विगुरुणि रूपाणि, पञ्चैकगुरुणि रूपाणि, एक सर्वलघ्वात्मक रूपमस्ति ।

तत्र त्रयोदशभेदभिन्ने पट्कलप्रस्तारे कुत्र स्थाने सर्वगुर्वात्मक, कतमस्थाने द्विगुर्वात्मक, कतमस्थाने चैकगुर्वात्मक, कुत्र वा सर्वलघ्वात्मक, कति वा प्रस्तार-सह्येति प्रश्ने कृते पताकयोत्तरं दातव्यमिति पताकाज्ञानफलमिति । श्रीगुरुमुखाद-वगतो मात्रापताकालिखनप्रकारः प्रकाशितः । एवमन्यत्रापि निरवधिकमाना-प्रस्तारेषु पञ्चसप्ताष्टकलानां यथाक्रमं मात्रापताकाविरचनप्रकारं समुनेयं सुधीभिः, अन्यविस्तारभयान्नेहास्माभिः प्रपञ्चित इति शिबम् ।

अत्रापि पिङ्गलोद्योताख्याया सूत्रवृत्तौ सार्द्धेन दलोकेन पञ्चात्रापताकाया सिद्धाङ्काः संगृहीताः । यथा—

एक-द्वि-त्रि समुद्राङ्ग-मुन्यङ्काश्च त्रयस्तथा ।

पञ्चाष्ट-दिक् शिवेना स्युः तथाष्टौ च त्रयोदश ॥

पञ्चात्रिकापताकायामङ्कानुक्रमणी स्मृता ।

इति । इहापि च पक्त्या विन्यासक्रमो गुरुमुखादवगन्तव्यः ।

किञ्च—

एक-द्वि-त्रि-समुद्राङ्ग-मुनि-वह्नि-शरस्तथा ।

वसु-दिग्-रुद्र-सूर्याष्टक्रमादङ्कान् समालिखेत् ॥

पञ्चमात्रापताकायामङ्कानुक्रमणी भता ।

इति सार्द्धेन श्लोकेन सूत्रवृत्तौ पञ्चमात्रापताकायां सिद्धाङ्कानुक्रमणिका सगृहीता इति ।

अत्राप्यङ्कविन्यासक्रमः पूर्ववदेव । इत्थं सप्ताष्टनवसु कलासु अङ्कान् समुग्रयेत् । दिङ् मात्रमुक्तमस्माभिः ग्रन्थविस्तरशङ्कया इति सर्वमनवद्यम् ।

पञ्चमात्रापताका यथा—

१	२	३	५	८
	३		८	
	४		१०	
	६		११	
	७		१२	

षण्मात्रापताका यथा—

१	२	३	५	८	११
	३		८		
	४		१०		
	६		११		
	७		१२		
	९				

इति श्रीमन्नन्वनन्दनचरणारविन्दमकरस्वास्थारमोरमानमानसचम्परीकालङ्कारिक-
चक्रचूडामणि-साहित्यार्णवकर्णधार-सुन्दःशास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथ-
भट्टारकविरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्तिकदुष्करोद्धारे मात्रा-
पताकोद्धारो नामाष्टमो विधामः ॥ ८ ॥

नवमो विश्रामः

अथ वृत्तजातिसमाद्वैसमवियमपद्यस्थगुरुलघुसंख्याज्ञानप्रकारमाह 'पृष्ठे' इति श्लोकेन ।

पृष्ठे षण्चन्द्रसि कृत्वा वर्णास्तथा मानाः ।

वर्णाङ्केन कलाया लोपे गुरवोऽवशिष्यन्ते ॥ ६६ ॥

तत्राऽमुक्तस्याक्षरप्रस्तारेऽमुके छन्दसि कति गुरवः, कति च लघव इति प्रश्ने कृते गुरुलघुसंख्याज्ञानप्रकारप्रक्रिया प्रकाशयते ।

तत्रोद्भावितधनुष्यदे वर्णप्रस्तारच्छन्दसि समवृत्ते पृष्ठे सति वर्णान्-तत्रस्य वर्णान् गुरुलघुरूपतया समुदायमापन्नान् माना-कलाः कृत्वा, तथा गुरुलघुरूपसमुदायतयैव कलारूपतामापद्यत्यर्थः । ततः कलाया इति जात्या एकवचन । अतः कलाना मध्यत इत्यवधेयम् । वर्णाङ्केन पृष्ठस्य वृत्तस्य वर्णसंख्याङ्केन लोपे लोपावशिष्टकलासंख्यया गुरवोऽवशिष्यन्ते, तत्तद्वृत्तगतगुरुन् जानीयादित्यर्थः । गुरुज्ञाने सति परिशेषादवशिष्टवृत्ताक्षरसंख्यया लघून्पि जानीयादित्यर्थः ॥ ६६ ॥

अत्र समवृत्तस्यैकपादज्ञानेनैव चतुर्णामपि पादानामुद्घट्टवर्णिका विधाय सिलनेन गुरुलघुज्ञानं भवतीत्यनुसन्धेयं सुधीभिः । यथा-

समवृत्ते एकादशाक्षरप्रस्तारे षोडशमात्रात्मके षोडशतावृत्तपादे 'रात्परैर्घर-लर्गैरयोद्धता' इत्यत्र ११, ११, ११, ११, ११ वर्णा ११, माना १६ षोडशकलासु पिण्डरूपासु संख्यातासु वृत्तस्यैकादशवर्णसंख्याया लुप्ताया सत्यामवशिष्ट-पञ्चगुरवः पङ्कलघवः परिशेषाद् विज्ञेया । इति समवृत्तस्यगुरुलघुज्ञानप्रकारः । एव पादचतुष्टयेऽपि पादसाम्यात् विंशतिगुरवः चतुर्विंशतिलघवश्च भवन्तीति ज्ञेयम् । एव प्रस्तारान्तरेऽपि समवृत्तेषु गुरुलघुज्ञानमूला सुधीभिरित्युपदिश्यते ।

एवञ्च पङ्क्तिशदक्षरायाम्—

गोत्रुलनारी मानसहारी वृन्दावनान्तसञ्चारी ।

यमुनाकुञ्जविहारी गिरिवरधारी हरि पायाद् ॥

इत्यस्या देहीसमाख्याया गाथाजाती सप्तपञ्चाशत् संख्यातासु पिण्डरूपासु कलासु पङ्क्तिशदक्षरलोपे कृते सति एकविंशतिगुरवोऽवशिष्यन्ते । पारिशोष्यात् पञ्चदश लघवोऽस्तीति च ज्ञेयम् । इति गाथाजातिषु गुरुलघुज्ञानप्रकारः ।

उट्टवणिका यथा—

SIH SSS IIS SSS III SSS

IIIS III SSI III SSI SSS

पूर्वाद्धे ३० मात्रा, उत्तराद्धे २७ मात्रा । मात्रा ५७, अक्षर ३६ ।

एवमेवापरास्वपि जातिषु गुरुलघुज्ञानप्रकार उद्धनीय इत्युपदेशः ।

एवमेव अर्द्धसमवृत्तेषु प्रथम-तृतीयविपमपादे द्वितीयचतुर्थसमपादे च—

सहचरि कययामि ते रहस्यं,
न खलु कदाचन तद्गृह व्रजेयाः ।
इह विप-विपमागिरः सखीनां,
सकपटचाटुतराः पुरस्सरन्ति ॥

इति पुष्पिताग्राभिधाने छन्दस्य[ष्ट]पष्टिकलात्मके ६८ पिण्डे छन्दोक्षर-
संख्यां पञ्चाशदात्मकां ५० लुप्तेत् । एवं जोपे सति अष्टादश १८ गुरवोऽव-
शिष्यन्ते, परिक्षेपाद् द्वात्रिंशल्लघवोऽपि ३२ तत्र वर्तन्ते इत्यर्द्धसमवृत्तस्य-
गुरुलघुज्ञानप्रकारः ।

उट्टवणिका यथा—

III	III	SI S	ISS	[१२]
III	ISI	ISI	SI S	[१३]
III	III	SI S	ISS	[१२]
III	ISI	ISI	SI S	[१३]

१८ गुरु, ३२ लघु, अक्षर ५० ।

एवमन्येष्वप्यर्द्धसमवृत्तस्यगुरुलघुज्ञानप्रकारः । एवमन्येष्वप्यर्द्धसमवृत्तेषूदा-
हरणमूल्यां इत्युपदिश्यते ।

तथा च भिन्नचिह्नचतुष्पादे विपमवृत्तेऽपि-

विललास गोपरमणीषु
तरणितनयातटे हरिः ।
वंशमधरदले कलयन्
वनिताजनेन निभृतं निरीक्षितः ।

इत्युद्गताभिधाने छन्दसि सप्तपञ्चाशत् ५७ कलात्मके पिण्डे छन्दोक्षर-
संख्या त्रयदचत्वारिंशदात्मिकां ४३ लुप्तेत् । एवमक्षरसंख्यायां लुप्ताया सत्या
चतुर्दशगुरवोऽवशिष्यन्ते । परिक्षेपाद् ऊनत्रिंशल्लघवोऽपि २६ विज्ञेया । इति
विपमवृत्तस्यगुरुलघुज्ञानप्रकारः ।

उट्टवणिका यथा—

115	151	115	1	[१०]
111	115	151	5	[१०]
511	111	511	5	[१०]
115	151	115	111	5 [१३]

मात्रा ५७. अक्षर ४३ ।

एवमन्येष्वपि विषमवृत्तेषु गुरुलघुज्ञानप्रकार ऊहनीयः सुबुद्धिमिश्रंगववि-
स्तरमयाग्नेहास्माभिः प्रपञ्च्यत इति सर्वं चतुरस्रम् ।

वृत्तस्थगुरुलघूनां युगपज्ज्ञानं न जायते येषाम् ।

तेषां तदवगमार्थे सुकरोपायो मया रचितः ॥ १ ॥

इति धीमन्ध्वनन्दनचरणारविन्दमकरवास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालङ्कारिकचक्र-

ब्रह्मणि-साहित्यार्णवकर्णधार-छन्दःशास्त्रपरमाचार्य-धीलक्ष्मीनाथभट्टारक-

विरचिते धीवृत्तमोक्तिकवार्तिकदुष्करोद्धारे वृत्तगणितमार्त-

समविषमसप्तस्तप्रस्तारेषु तत्तद्वृत्तस्थगुरुलघुसंज्ञाज्ञान-

प्रकारतमुद्धारो नाम नवमो विधामः ॥ ६ ॥

दशमो विधामः

अथ पञ्चमप्रत्ययस्वरूपां वर्णमकंटीमाह—‘मकंटी लिख्यते’ इत्यादिना
श्लोकपदकेन—

मकंटी लिख्यते वर्णप्रस्तारस्मातिर्गुणम् ।

कोष्ठमक्षरसंख्यातं पङ्क्तौ रचय पट् तथा ॥ ७० ॥

प्रथमायामाद्यादीन् दद्यादङ्कुंश्च सर्वकोष्ठेषु ।

अपरार्थां तु द्विगुणानक्षरसंख्येषु सेष्वेव ॥ ७१ ॥

आदिपक्षितस्थितरङ्गविभाव्य परपक्षितान् ।

अङ्कुंश्चतुर्थपक्षितस्यकोष्ठकानपि पूरयेत् ॥ ७२ ॥

पूरयेत् पष्ठपञ्चम्यावट् स्तुर्पाङ्कुसम्भवेः ।

एकीकृत्य चतुर्थस्य-पञ्चमस्याङ्कान् गुणीः ॥ ७३ ॥

कुर्यात् तृतीयपक्षितस्यकोष्ठकानपि पूरितान् ।

वर्णानां मर्कटी सेयं पिङ्गलेन प्रकाशिता ॥ ७४ ॥

वृत्तं भेदो मात्रा वर्णा गुरवस्तथा च लघवोपि ।

प्रस्तारस्य पठेते ज्ञायन्ते पक्षितः क्रमतः ॥ ७५ ॥

तत्र एकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षरावधिवर्णवृत्तप्रस्तारेषु तत्तद्वर्णवृत्तप्रस्तारे कति कति प्रभेदाः, कियन्त्यः कियन्त्यो मात्रा, कियन्तः कियन्तो वर्णाः, कति कति गुरवः, कति कति च लघवः ? इति महाप्रश्ने कृते, वर्णमर्कटिकया वक्ष्यमाण-स्वरूपया प्रत्युत्तरं देयमिति ।

वर्णमर्कटीविरचनप्रकारो लिख्यते—

मर्कटीति । भो शिष्य ! वर्णप्रस्तारस्य एकाक्षरादिषड्विंशत्यक्षरावधि कृतस्येति शेषः । अतिदुर्गमा-अतिदुष्करा मर्कटीव मर्कटी-तन्तुजालैरिव विरचिता अङ्गुजालपक्षिस्तावलिख्यते-विरच्यत इति प्रतिज्ञा । तत्र वा स्वेच्छया अक्षर-सत्यात-कोष्ठं रचय तथा पदसत्याविशिष्टा पक्षीश्च रचय-कुरु इत्यर्थः ॥७०॥

अथ प्रथमा वृत्तपक्षि साधयति—

प्रथमायामिति । तत्र प्रथमाया-पथमपक्षी वृत्तपक्षाविति यावत् सर्वकोष्ठेषु पूर्वविरचितेषु आद्यादीन्-प्रथमादीन् एकद्वित्र्यादीन् अङ्कान् १ २ ३ यावदित्य दद्यात्-विन्यसेत । एव कृते प्रथमवृत्तपक्षि सिद्धयति ।

अथ द्वितीया प्रभेदपक्षि साधयति—

अपरायामिति । चकार-आनन्तर्यार्थः । तत् अपराया तु द्वितीयाया प्रभेद-पक्षावित्यर्थः । अक्षरसंख्येषु-तत्प्रस्ताराक्षरसंख्येषु तेष्वेव विन्यस्तेषु कोष्ठेषु द्विगुणान्-द्विचतुरष्टादिक्रमेण द्विगुणानङ्कान् २ ४ ८ यावदित्यमित्यस्य सर्व-ज्ञानवृत्तिः, दद्यात् इति पूर्वणैव अन्वयः ॥ ७१ ॥ एव कृते द्वितीयाप्रभेदपक्षि सिद्धयति ।

अथ क्रमप्राप्तामपि तृतीया मात्रापक्षिमुल्लिख्य तन्मूलभूता चतुर्थी वर्ण-पक्षि साधयति—

आदिपक्षिस्थितैरिति । आदिपक्षिस्थिते-प्रथमपक्षिस्थिते वृत्तपक्षिस्थिते रेकद्वित्र्यादिभिरङ्कैः परपक्षिगान्-द्वितीयपक्षिस्थितान् द्विचतुरष्टादिक्रमेण स्थितानङ्कान् विभाव्य-गुणयित्वा, ततस्तदगुणिते-द्विचष्टचतुर्विंशत्यादिभिरङ्कैः २ ८ २४ चतुर्व्यपक्षितस्यकोष्ठकान् पूरयेदित्यन्वयः । अपि एवार्थः । अवि-चारित पूरयेदेवेत्यर्थः । ७२ ॥ एव कृते चतुर्थी वर्णपक्षि सिद्धयति ।

अथ पष्ठ-पञ्चमपक्त्यो पूरणोपायमुपदिशति—

पूरयेदिति । पष्ठपञ्चम्यो पङ्क्ती कर्मभूते तुर्याङ्कसम्भवे-चतुर्यां पक्ति स्थिताङ्कोत्पन्नैरङ्गैरेकचतुर्द्वादशादिभिरङ्कं १ ४ १२ पूरयेत् । एव कृते पष्ठपञ्चम्यो गुरुलघुपक्ती सिद्धयतः । अत्र पक्त्योर्व्यत्यय छन्दोऽनुरोधेन कृतः, फलतस्तु न कश्चिद् विशेषोऽङ्कसाम्यादिति पक्तिद्वय सिद्धम् ।

अथोर्वरिता तृतीया मात्रापक्ति साधयति—

एकीकृत्येति उत्तराद्वर्णाभिधायि । तत्र सुधी-अङ्कमेलनकुशलो गणक चतुर्यपक्तिस्थितान् द्व्यष्टचतुर्विंशत्यादिकान् अङ्कान् पञ्चमपक्तिस्थितान् एकचतुर्द्वादशादिकान् कृत्वा, अत्र चकारोऽध्याहार्यं, एकीकृत्य-मेलयित्वा त्रि-द्वादश-पट्त्रिंशदादिरूपतामापद्यति यावत् उर्वरितान्-तृतीयपक्तिस्थितकोष्ठकानपि त्रि-द्वादश-पट्त्रिंशदादिरूपं मेलितैरङ्कं ३ १२ ३६ पूरितान् कुर्यादित्यन्वयः । अत्राप्यपि एवार्थः । अविचारित पूरितान् कुर्यादित्यर्थः । एव कृते तृतीयामात्रापक्ति सिद्धयति ।

फलितार्थमाह—परमाद्धेन 'वर्णानां' इति ।

सोऽय पूर्वोक्तप्रकारेण घटिता वर्णानां मकंटीव मकंटी-अङ्कजालरूपिणी पिङ्गलेन-श्रीनागराजेन प्रकाशिता-प्रकटीकृता ॥ ७४ ॥

एव विरचनप्रकारेण पक्तिपदक साधयित्वा वर्णमर्वटीफलमाह—

वृत्तमिति । वृत्त वृत्तानि-एकाक्षरादीनि 'एकवचनं तु जात्यभिप्रायेण' भेद-प्रभेद वृत्तानां प्रभेदा इत्यर्थः । पूर्ववदत्राप्येकवचननिर्देशः । मात्रा-तत्तद्-वृत्तमात्रा, वर्णा-तत्तद्वृत्तवर्णा, गुरु-तत्तद्वृत्तगुरु, तथा च सप्तवोऽपि-तत्तद्वृत्तसप्तव इत्यर्थः । प्रस्तारत्येति सम्बन्धे पठ्ठी । एते वृत्तादयः पट्-पट्-सख्याविशिष्टा पक्तित-पट्पक्तित त्रमत-त्रमाद् ज्ञायते-हृदयङ्गमतां आपद्यन्त इत्यर्थः ॥ ७५ ॥

श्रीलक्ष्मीनामहृतो मर्वटिजाया प्रकाशोऽयम् ।

तिष्ठतु बुधजनकण्ठे वरमुक्ताहारभूषणप्रसू ॥

प्रस्या. स्वरूपमुदाहरणमत्र द्रष्टव्यम् । इत्यल पत्तवेनेति ।

वर्णमंकटी यथा—

वृत्त	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३
प्रभेद		४	८	१६	३२	६४	१२८	२५६	५१२	१०२४	२०४८	४०९६	८१९२
मात्रा	३	१२	३६	८६	२४०	५७६	१३४४	३०७२	६८१२	१५३६०	३३७८२	७३७२८	१५६७४४
वर्णाः	२	८	२४	६४	१६०	३८४	८६६	२०४८	४६०८	१०२४०	२२५२८	४८१५२	१०६४६४
गुरुवः	१	४	१२	३२	८०	१६२	४४८	१०२४	२३०४	५१२०	११२६४	२४५७६	५३२४८
सवयः	१	४	१२	३२	८०	१६२	४४८	१०२४	२३०४	५१२०	११२६४	२४५७६	५३२४८

इति त्रयोदशवर्णा मंकटी । एवमन्यापि वर्णमंकटी समुत्प्रेया । पञ्चमः प्रत्ययो वर्णमंकटिकात्प्राप्तः ।

इति श्रीमन्नन्दनचरणारविन्दमकरन्द्यादामोदयानमानसञ्चरीकालङ्कारिकचक्रबुद्धा-

मणि-ध्वज-आश्वपरमाचार्य-साहित्याणवर्णधार-श्रीलक्ष्मीनानन्दारक-

विरचिते श्रीवृत्तमौक्तिक-वार्तिक-मुष्करोद्दारे एकाक्षरादि-

पदविशालसराविधिवर्णप्रस्तारेषु वर्णमंकटीप्रस्तारोद्दारे

नाम दशमो विधायः ॥ १० ॥

एकादशो विश्रामः

थीनागराजमानस्य सम्प्रदायानुमानत ।
 श्रीचन्द्रशेखरकृते वार्तिके वृत्तमीवित्के ॥ १ ॥
 धर्णमर्कटिकामुक्त्वा मात्रामर्कटिकामपि ।
 दुष्करा दुष्करोद्धारे सुकरा रचयाम्यहम् ॥ २ ॥

अथ पञ्चमप्रत्ययस्वरूपामेव मात्रामर्कटीमाह — 'कोष्ठान्' इत्यादिना 'नष्टोद्दिष्ट'
 इत्यन्ते एकादशश्लोकेन —

कोष्ठान् मात्रासम्मितान् पश्चित्पदक,
 कुर्यान्मात्रामर्कटीतिद्विहेतो ।
 तेषु द्विधादीनादिपञ्चतावयाङ्का
 स्थक्त्वाऽऽद्याङ्कं सर्वकोष्ठेषु दद्यात् ॥ ७६ ॥
 दद्यादङ्कान् पूर्वयुग्माङ्कतुल्यान्,
 त्यक्त्वाऽऽद्याङ्कं पञ्चपञ्चतावयाऽपि ।
 पूर्वस्याङ्कं भावयित्वा ततस्तान्
 कुर्यात् पूर्वाग्नेत्रपश्चित्स्थकोष्ठान् ॥ ७७ ॥
 प्रथमे द्वितीयमङ्कं द्वितीयकोष्ठे च पञ्चमाङ्कमपि ।
 दत्त्वा बाणद्विगुणं तद्विगुणं नत्रयुग्मयोर्वद्यात् ॥ ७८ ॥
 एकीकृत्य तयाऽङ्कान् पञ्चमपश्चित्स्थितान् पूर्वान् ।
 दत्त्वा तयैकमङ्कं कुर्यात्तेनैव पञ्चमं पूर्णम् ॥ ७९ ॥
 दत्त्वा पञ्चममङ्कं पूर्वाङ्कानेकभावमापाद्य ।
 दत्त्वा तयैकमङ्कं षष्ठं कोष्ठं प्रपूरयेद् विद्वान् ॥ ८० ॥
 कृत्वंक्य चाङ्कानां पञ्चमपश्चित्स्थितानां च ।
 त्यक्त्वा पञ्चदशाङ्कं हित्वैकं प्रपूरयेन् भुने कोष्ठम् ॥ ८१ ॥
 एव निरवधिमात्राप्रस्तारेष्वङ्कबाहुल्यम् ।
 प्रकृतानुपयोगवशान् न कृतोऽङ्कानां च विस्तारः ॥ ८२ ॥
 एव पञ्चमपश्चित् कृत्वा पूर्णं प्रथममेकाङ्कम् ।
 दत्त्वा पञ्चमपश्चित्स्थितैरयाङ्कं प्रपूरयेत् षष्ठीम् ॥ ८३ ॥

एकोकृत्य तथाऽङ्कान् पञ्चमपष्ठस्थितान् विद्वान् ।

कुर्याच्चतुर्थपक्ति पूर्णा नागाज्ञया तूर्णम् ॥ ८४ ॥

वृत्त प्रभेदो मात्राश्च वर्णा लघुगुरु तथा ।

एते पट्पक्तितः पूर्णप्रस्तारस्य विभान्ति वै ॥ ८५ ॥

नष्टोद्दिष्ट यद्वन् मेरुद्वितय तथा पताका च ।

मर्कटिकापि च तद्वत् कौतुकहेतोर्निबद्धघते तज्जः ॥ ८६ ॥

तत्र च एकमात्रादिनिरवधिकमात्राप्रस्तारेषु च तत्तज्जातिप्रस्तारे कति कति प्रभेदाः, कियन्त्यः कियन्त्यो मात्राः, कियन्तः कियन्तो वर्णाः, कति कति पञ्चव, कति कति गुरवः ? इति महाप्रश्ने कृते मात्रामर्कटिकया वक्ष्यमाणस्वरूपया प्रत्युत्तरं दातव्यमिति मात्रामर्कटोविरचनप्रकारो लिख्यते—

कोष्ठानिति । तत्र—तावन्मात्रामर्कटीसिद्धिहेतोः—मात्रामर्कटीसिद्धघर्थं पक्ति-पटक यथा स्यात्तथा मात्रासम्भितान्—मात्राभिः परिमितान् मात्राणां सख्यया समुक्तानिति यावत् कोष्ठान् कुर्यात्—विरचयेदित्यर्थः । तेषु—कोष्ठेषु प्रादिपङ्क्तौ—प्रथमपङ्क्तौ वृत्तपङ्क्तौ इति यावत् द्वयादीन्—द्वितीयादीन् द्वितीय—तृतीय—चतुर्थ—पञ्चम—पष्ठादीन्—२ ३ ४. ५. ६ इत्यादीन् क्रमेण मावदित्य प्रथम दद्यात्—विन्यसेत् । किं कृत्वा ? अथ चेत्यर्थः । सर्वकोष्ठेषु—पट्स्वपि कोष्ठेषु प्राद्याङ्क—प्रथमाङ्कं त्यक्त्वा—परित्यज्य । अत्र सर्वकोष्ठेषु प्रथमाङ्कत्यागो न सर्वथा सर्व-कोष्ठत्यागपरः, किन्तु पष्ठगुरुप्रथमपक्तिकोष्ठत्यागपर इति प्रतिभाति । तत्र गुरोरभावादेवेति ब्रूमः । अतश्च सम्प्रदायात् पञ्चसु कोष्ठेषु प्रथमाङ्कविन्यासः कर्त्तव्यः । अन्यथा वक्ष्यमाणाङ्कविन्यासभङ्गापत्तेरिति भावः ॥ ७६ ॥

एव अङ्कविन्यासे कृते सति प्रथमा वृत्तपक्तिः सिद्धयति ॥ १ ॥

अथ द्वितीया प्रभेदपक्ति साधयति—

दद्यादिति । अयेति—प्रथम पक्तिसिद्धघनन्तर पक्षपङ्क्तावपि—द्वितीय-पङ्क्तावपि प्राद्याङ्क—प्रथमाङ्कं त्यक्त्वा—परित्यज्य, प्रथमाङ्कस्य पूर्वाङ्काभावात् द्वितीयकोष्ठादारभ्य प्रथमाङ्कशिरस्थ प्रथमाङ्क गृहीत्वा पूर्वयुग्माङ्कतुल्यान् उद्देशक्रमानुसारेण एक-द्वि-त्रि-पञ्चाष्ट-त्रयोदशादीन् अङ्कान् १, २, ३, ४, ८, १३ शृङ्खलावन्धन्यायेन क्रमतो यावदित्य दद्यात्—विन्यसेदित्यर्थः ।

एव अङ्कविन्यासे कृते सति द्वितीयाप्रभेदपक्तिः सिद्धयति ॥ २ ॥

अथ तृतीया मात्रापक्ति साधयति—

पूर्वस्थाङ्कैरिति । पूर्वस्थाङ्कैः—प्रथमपक्तिस्थिताङ्कैः ततो द्वितीयपक्ति-पूरणानन्तरं तां द्वितीयं—प्रत्येकं—प्रतिकोष्ठं भावयित्वा—गुणयित्वा इत्यर्थः । नेत्र-

पंक्तिस्थकोष्ठान्-तृतीयपंक्तिस्थितकोष्ठान् पूर्णान् कुर्यात् । अतश्चात्रैकचतुर्नव-
विंशति-चत्वारिंशदष्टसप्तत्यादिभिरङ्कैः १, ४, ९, २०, ४०, ७८ तृतीय
पंक्तिस्थितकोष्ठान् पूरितान् कुर्यादित्यर्थः । अत्र नेत्रमस्या रौद्रीति विज्ञातव्या ।
पाठान्तरे—अग्निपर्यायत्वात् स एवाङ्ग्यः । एवमन्यत्रापि । शालिनीयन्दसि ॥७७॥

एवमङ्कविन्यासे कृते सति तृतीया मात्रापंक्तिः सिद्धयति ॥३॥

अथ त्रयमप्राप्तां चतुर्थीं वर्णपंक्तिमुत्लंघ्य चतुर्थ-पष्ठपंक्तयो युगपदेव
साधनार्थं तन्मूलभूतां प्रथमं तावत् पञ्चमपंक्तिं साधयति-

प्रथमे इति । तत्र षट्स्वपि प्रथमपंक्तिषु प्रथमकोष्ठस्य त्यक्तत्वात्, द्वितीय-
कोष्ठकमेवात्र प्रथमं कोष्ठकम् । अतः तस्मिन् प्रथमे कोष्ठके द्वितीयमङ्कं, तद-
पेक्षायाः द्वितीयकोष्ठके च पञ्चमाङ्कं च दत्त्वा, ततो वाणद्विगुणं-पञ्चद्विगुण
दश १०, तद्विगुणं-दशद्विगुणं विंशतिश्च २०, तौ-द्वावङ्कौ नेत्रतुर्ययोः तदपेक्षयैव
तृतीयचतुर्थयोः कोष्ठकयोः दद्यात्-विन्यसेदित्यर्थः ॥७८॥

तथा चात्र पञ्चमपंक्ती प्रथमकोष्ठं विहाय द्वि-पञ्च-दश-विंशतिभिरङ्कैः
२, ५, १०, २० कोष्ठचतुष्टयं पूरयित्वा अग्रिमैतत्पञ्चमकोष्ठपूरणार्थं उपाया-
न्तरमाह-

एकीकृत्येति । तथा च-इति आनन्तर्यार्थं । ततः पञ्चमपंक्तिस्थितान् पूर्णान्
पूर्वाङ्कान्-द्वयादीन् चतुष्कोष्ठस्थान् एकीकृत्य-मेलयित्वा, तथा ततोऽपीत्यर्थः ।
तस्मिन्नेकीकृताङ्के एकमधिकं दत्त्वा निष्पन्ने एतेनाङ्केन अष्टविंशता ३८ अङ्केनैव
पञ्चमं पूर्वपेक्षायां पञ्चमं कोष्ठकं पूर्णं कुर्यात् ॥७९॥

अत्रत्य पष्ठकोष्ठपूरणोपायमाह-

त्यक्त्वेति । विद्वान्-अङ्कमेलनकुशलो गणकः पूर्वाङ्कान्-द्वितीयादीन् एक-
मावमापाद्य-एकीकृत्य सयोज्येति यावत् । ततः पिण्डीकृतेषु एतेषु अङ्केषु पञ्चमाङ्क
प्रथमाङ्कवत् त्यक्त्वा । तथा पुनरित्यर्थः । एकमङ्कमधिकं दत्त्वा पूर्ववज्जालेन तेन
एकसप्तत्या ७१ पष्ठ कोष्ठं प्रपूरयेदिति ॥८०॥

अथ तथैवात्रसप्तमकोष्ठपूरणोपायमाह-

कृत्वेति । पञ्चमपंक्तिस्थितानां द्वयादीनां एकसप्तत्यन्तानां षण्णामङ्का-
नामैक्य-पिण्डीभाव कृत्वा तेषु पूर्ववत् पञ्चदशाङ्कं त्यक्त्वा । ततस्तेष्वपि चैकं
हित्वा मुनेः कोष्ठं-सप्तम कोष्ठं त्रिंशदधिकेन शताङ्केन १३० पूरयेत् । इति
सप्तमकोष्ठकपूरणप्रकारः ॥ ८१ ॥

एवमङ्कुसप्तकेन द्वि-पञ्च-दश-विंशत्यष्टत्रिंशदेकसप्तति-त्रिंशदधिकैकशतक-
रूपेण २, ५, १०, २०, ३८, ७१, १३० पञ्चमपङ्क्तौ कोष्ठसप्तकं पूरयेदिति ।
एव चात्रत्ये पूरणीये तत्तत्कोष्ठे अत्रत्यानां द्वयादीनामङ्कानां एकीभावं कृत्वा,
यथासम्भवं तत्तदङ्कं त्यक्त्वा, तेष्वपि यथासम्भवं एकादिकं हित्वा तत्तत्कोष्ठक
पूरयेदिति संक्षेपः ।

एवं अङ्कुविन्यासे कृते सति चतुर्थपष्ठपंक्तिगर्भाः पञ्चमी सधुपक्तिः
सिद्धयति । ननु अस्यां पङ्क्तावधिमकोष्ठाऽङ्कुसञ्चारः क्रियतां इत्याकाशाय
प्रकृतानुपयोगादङ्कबाहुल्याद् ग्रन्थविस्तरशङ्कया न क्रियत इत्याह—

एवमिति । सुगमम् ॥ ८२ ॥

अथ पञ्चमपक्तिपूरणमुपसंहरन् पष्ठगुरुपंक्तिपूरणप्रकारमुपदिशति—

एवमिति । एव पूर्वोक्तप्रकारेण पञ्चमपंक्ति पूर्णा कृत्वा सत्र गुरुस्थानीय प्रथमं
कोष्ठ विहाय अग्रिमकोष्ठं—प्रथम प्रथमस एवाङ्कु दत्त्वा पूरणीयम् । अथ-अनन्तर
पञ्चमपक्तिस्थितः द्वितीयादिभिरङ्कैः पूर्वस्थापितैरेव प्रतिकोष्ठं पष्ठी प्रपूरये-
दिति । तथा च पष्ठपङ्क्तौ ०, १, २, ५, १०, २०, ३८, ७१, १३० शून्यैक-
द्वि-पञ्च-दश-विंशति-अष्टत्रिंशदेकसप्तति-त्रिंशदधिकैकशताङ्कुविन्यस्ता दृश्यन्त
इति ॥ ८३ ॥

एवमङ्कुविन्यासे कृते सति पष्ठी गुरुपक्तिः सिद्धयति ॥ ६ ॥

अथोर्वरितचतुर्थवर्णपक्तिपूरणप्रकारमुपदिशति—

एकीकृत्येति । विद्वान्-अङ्कुमेलनकुशलो गणकः तथा पूर्वोक्तप्रकारेण पञ्चम-
पष्ठपक्तिस्थितान् द्वयेकादीन् अङ्कान् प्रतिकोष्ठ एकीकृत्य-संयोज्य नागाज्ञया-
श्रीपिङ्गलनागोक्तमार्गेण चतुर्थपक्तितत्पक्तिस्थकोष्ठकरूपां तूर्ण-अविचारितमेव
पूर्णं कुर्यादिति । अत्रत्यप्रथमकोष्ठे असंयुक्तः पञ्चमकोष्ठस्थप्रथमांकः सम्प्रदाय-
सम्भो देय इति रहस्यम् ॥ ८४ ॥

तथा चतुर्थपङ्क्तौ १, ३, ७, १५, ३०, ५८, १०६, २०१ एक-त्रि-सप्त-
पञ्चदश-त्रिंशद्-अष्टपञ्चाशन्-नवाधिकशतैकोत्तरद्विशताङ्का विन्यस्ता दृश्यन्त
इति ।

एव अङ्कुविन्यासे कृते सति चतुर्थी वर्णपंक्तिः सिद्धयतीति ॥ ४ ॥

एवं विरचनप्रकारेण पक्तिपट्कं साधयित्वा मात्रामर्कटीफलमाह—

वृत्तमिति । वृत्तं-वृत्तानि एकमात्रादिनिरवधिकमात्राजातयः । एकवचनं]
जात्यभिप्रायेण । प्रभेदजातीनां प्रभेदा इत्यर्थः । पूर्ववदत्राप्येकवचननिर्देशः ।

मात्रा.—तत्तज्जातिमात्रा, वर्णाः—तत्तज्जातिवर्णाः तथा—तत इत्यर्थः । लघुगुरु—तत्तज्जातिलघवस्तत्तज्जातिगुरवश्चेत्यर्थः । एते वृत्तादयः षट्प्रकाराः पूर्णप्रस्ता-
रस्य समुदिताः षट्पक्षितो निश्चित विमान्ति—प्रकाशन्त इत्यर्थः ॥ ८५ ॥

ननु एतत्करण आवश्यकमनावश्यक वा ? इति परामर्शो छान्दसिकपरीक्षा-
रूपत्वात् केवल कौतुकमात्राधायकत्वाच्च अस्य करण अनावश्यकमेवेत्याहु-

नष्टोद्दिष्टमिति । यथा नष्टोद्दिष्टादिकं कौतुकावह तथैव तद्विरचनमपीत्यर्थं
इति सर्वमवदातम् ॥ ८६ ॥

मात्रामर्कटी यथा—

कृणम्	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११
प्रमेदाः	१	२	३	४	५	१३	२१	३४	५५	८६	१४४
मात्राः	१	४	६	२०	४०	७८	१४७	२७२	४६५	८६०	१५८४
वर्णा	१	३	७	१५	३०	५८	१०६	२०१	३९५		
लघव	१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०	२३५		
गुरव	०	१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०		

इति एकादशमात्रामर्कटी । एव अन्येऽपि मात्रामर्कटी समुक्षेया । तथैव मात्रा-
मर्कटिकाश्च पञ्चम प्रत्यय ।

[वृत्तिकृत्प्रशस्तिः]

श्रीमत्पिङ्गलनागेन प्रोक्तो यो मर्कटीक्रमः ।
 विविच्य स मया प्रोक्तः शिष्यानुग्रहेतवे ॥ १ ॥
 मुनीभभूपतिमिते १६८७ वैक्रमेऽब्दे प्रभायिनि ।
 कार्तिकेऽसितपञ्चम्यां लक्ष्मीनाथो व्यरीरचत् ॥ २ ॥
 वार्त्तिके दुष्करोद्धारमुदारं छान्दसप्रियम् ।
 अन्तःसारं स्फुटार्यं च कवीनां कौतुकावहम् ॥ ३ ॥

इति श्रीमत्तन्त्रमन्त्रमन्त्रधारविम्बमकरम्बास्वादमोदमानमानसचञ्चरीकालद्वारिकचक्र-
 ब्रह्ममणि-साहित्याणवकणंपार-छन्द-शास्त्रपरमाचार्य-श्रीलक्ष्मीनाथभट्टारक-
 विरचिते श्रीवृत्तमौक्तिकवार्त्तिकदुष्करोद्धारे एकमात्राशिनिरवधिक-
 मात्राप्रस्तारेषु तत्ताज्जातिमात्रामर्कटीप्रस्तारोद्धारो
 नामंकावसो विधामः ॥ ११ ॥

समाप्त्यचार्य वृत्तमौक्तिकवार्त्तिके दुष्करोद्धारः ।

शुभमस्तु । श्रीनागराजाय नमः ।

संवत् १९६० समये भाद्रपदशुक्लि ३ भीमे शुभदिने अर्घ्यसपुरस्थाने लिखितं लालमनि-
 मिषेण । शुभं भूयात् । श्रीविष्णवे नमः ।

महोपाध्यायश्रीमेघविजयगणितसन्दृष्ट

वृत्तमौक्तिकदुर्गमबोधः

[उद्दिष्टादिप्रकरणव्याख्या]

[मङ्गलाचरणम्]

प्रणम्य फणिना मम्य सम्यक् श्रीपाश्वर्मोश्वरम् ।

उद्दिष्टादिषु सूत्रार्थं कुर्वे श्रीवृत्तमौक्तिके ॥ १ ॥

अथ वृत्तमौक्तिके उद्दिष्ट नष्ट वर्णतो भात्रातो वा विव्रियते—

वत्या पूर्वयुगाङ्कान् लघोरुपरि गत्य तृभयत ।

अन्त्याङ्के गुरुश्रीपंस्यितान् विलुम्पयेदयाङ्काश्च ॥ ५१ ॥

उद्धरितंश्च तयाङ्कमात्रोद्दिष्ट विजानीयात् ।

पङ्क्ति पदे सूत्र तदव्याख्या—

केनापि नरेण लिखित्वा दत्त । १।१। इदं कतमत् रूपम् ? इति प्रश्ने उद्दिष्टं शेषम् । तत्र पूर्वयुगलाङ्का प्रत्येक धार्या । पूर्वयुगलाङ्का इति सज्ञा अङ्कानाम् । तत्कथम् ? इति चेत्, मात्रोद्दिष्टे १।२।३।५।८।१३।२१।३४।५५।८६ इति । अत्र १ मध्ये २ योजने ३ । पुन ३ मध्ये पूर्वाङ्क २ मेलने ५ । पुन ५ मध्ये स्वपूर्वाङ्क ३ मेलने ८ । तत्रापि स्वपूर्वाङ्क ५ मेलने १३ । तत्रापि स्वपूर्वाङ्क ८ क्षेपण २१ । तस्मिन्नपि स्वपूर्वाङ्क १३ एकीकरणे ३४ । तन्मध्ये स्वपूर्वाङ्क २१ क्षेपे ५५ । अत्रापि स्वपूर्वाङ्क ३४ योगे ८६ इत्येव योजनारीति । पूर्वं पूर्वमेलनाज्जातत्वात् पूर्वयुगाङ्का इति सज्ञाभाज । तद्वरणरीति —

१	२	५	८	२१
१	५	१	५	१
३			१३	

एव लघोरुपरि एक अङ्कन्यास गत्य-गुरोस्तु त्रभयत-उपरि अधश्च पाश्वर्-द्वयेऽपि अङ्कधरणम् । एतत् कृत्वा अन्त्याङ्के २१ रूपे गुरोरुपरिस्था अङ्का २।८ मेलने १०, एते २१ मध्यात् विलुम्पयेत्-पराकुर्यात्, उद्धरितोऽङ्क ११ एव निश्चित ज्ञात सप्तमात्रे मात्रान्छन्दसि एकादश रूपमिदम् । ईदृश १।१। अथवापि ।

त्रिकले छन्दसि ऽ ऽ इदं कतमं रूपम् ? इति पृच्छायां पूर्वयुगाङ्गधरणं १ २

। ५

३

तत्रान्त्याङ्कः ३ तन्मध्यात् गुरुशीर्षस्याङ्क २ विलोपने शेषं १ इति प्रथमं रूपम् । ऽ ईदृशम् । परत्राऽपि ऽ । इदं कतमत् ? इति प्रश्ने १ ३ अन्त्याङ्के ३

। ५

२

गुरुशीर्षस्य १ विलोपे शेषं २ इति द्वितीयं रूपं त्रिकले ऽ । ईदृशम् ।

चतुःकले छन्दसि ऽ ऽ इदं कतमत् ? इति पृच्छायां १ ३ अङ्केषु घृतेषु

। ५ ५

२ ५

अन्त्याङ्कः ५ तन्मध्याद् गुरुशीर्षस्य अङ्कद्वयं १।३ एतयोर्मेलने ४ तद्विलोपने शेषं १ प्रथमं रूपम् ऽऽ; द्वितीयेऽपि १ २ ३ अङ्केषु न्यस्तेषु अन्त्याङ्कः ५

। १ ५

५

तन्मध्यात् २ गुरुशिरःस्याङ्कः ३ तल्लोपे शेषं २ इति द्वितीयं रूपम् । तृतीये । ऽ ।

ईदृशेऽङ्काः १ २ ५ अन्त्याङ्कः ५ ततः गुरुशिरःस्यः २ लोपे शेषं ३ तृतीयं

। ५ ।

३

रूपम् । तुर्ये ऽ । । ईदृशेऽङ्काः १ ३ ५ अन्त्याङ्कः ५ ततः गुरुशिरःस्य १

५ । १ ।

२

लोपे शेषं तुर्यं रूपं ऽ । ।; पञ्चमं सर्वलघुकम् ।

पञ्चकले । ऽ ऽ ईदृशेऽङ्काः १ २ ५ अत्रान्त्याङ्कः ८ ततः गुरुशिरःस्य

। ५ ५

३ ८

२।५ एवं ७ लोपे प्रथमं रूपम्; ऽ । ऽ ईदृशेऽङ्काः १ ३ ५ अन्त्यः

५ । ५

२ ८

८ तन्मध्यात् १।५ एवं ६ तल्लोपे शेषं २ द्वितीयं रूपम् । तृतीयं । । । ऽ

ईदृशेऽङ्काः १ २ ३ ५ अत्र प्राग्वत् ८ मध्यात् गुरुशीर्षस्य ५ लोपे शेषं

। १ । ५

८

३ तृतीयम् । तुर्येपि १ ३ ८ प्राग्वत् ८ मध्यात् १ । ३ गुरुशीर्षस्थ ४
५ ५ ।

२ ५

लोपे शेष ४ तुर्य रूपम् । पञ्चमेऽपि १ २ ३ ८ इत्यत्र गुरुशीर्षस्थ
। । ५ ।

५

३ लोपे अन्त्याङ्क ८ मध्ये शेष ५ इति [पञ्चम रूपम्] । पठे १ २ ५ ८
। ५ । ।

३

अन्त्याङ्क ८ मध्यत गुरुशिरःस्थ २ लोपे शेष ६ [इति पठ रूपम्] । सप्तमेऽपि
१ ३ ५ ८ तत्र अन्त्याङ्क ८ मध्यात् गुरुशीर्षस्थ १ लोपे शेष ७ इति
५ । । ।

२

सप्तम रूपम् ।

एव पटकले मात्राच्छन्दसि १ ३ ८ अत्रान्त्याङ्क १३ तत गुरुशीर्ष-
५ ५ ५

२ ५ १३

स्थिताङ्क १।३।८ एषा लोपे शेष १ प्रथम रूपम्, १ २ ३ ८ अत्रापि
। । ५ ५

५ १३

प्राग्वत् ३।८ एव ११ तेषां १३ मध्यात्लोपे शेष २ द्वितीय रूपम् । तृतीये
१ २ ५ ८ अन्त्याङ्क १३ तत २।८ एव १० गुरुशीर्षस्थ लोपे शेष ३ ।
। ५ । ५

३ १३

१ २ ५ १३ २१ ५५ अत्र गुरुशीर्षस्थाङ्क सर्वमेलने ८३ तत्सुलप
। ५ ५ । ५ ५

३ ८ ३४ ८६

८६ मध्ये शेष ६ रूपमिद दसकले छन्दसि ।

पुष्प जुयल सरि अका दिज्जसु, गुरु सिर अक सेस मेटिज्जसु ।

उवरिल अक लेखि बहुआण, ते परि धुम उद्दिवा जाण ॥

[प्राकृतपञ्चम, परि १, पद्य ३६]

दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कं गुरुशीर्षाङ्कं विलुप्य शेषाङ्के ।

अङ्कंरितोऽध्वशिष्टैः शिष्टैरुद्दिष्टमुद्दिष्टम् ॥

[वालीमूपखम् परि. १, पद्य ३१]

मत्त मत्त घुम अंक, सधु सिर गुरुतर हूं धरो ।

जोर अंक सरवंक, सव्वहि घाट उद्दिष्ट कहु ॥

सधोः शीर्षं एवाङ्कः धार्यः गुरोः शीर्षं तथा 'तर' इति भाषाविशेषात् तले
अधोऽपि अङ्कः धार्यः । यथा—पञ्चकले प्रस्तारे १ २ ५ अत्रान्त्याङ्के =

१ ५ ५

३ =

ततः गुरुशीर्षस्थाङ्काः २, ५.....७ सप्तमं रूपम् ।

१ २ ५ = २१ गुरु सिर अंकेयोजने १० ते २१ मध्ये ऊन शेषं ११

१ ५ १ ५ १

३ १३

संख्या प्राप्ता इति एकादशमिदं रूपमिति छन्दोरत्नावलीग्रन्थे ।

१ २ ३ ५ = १३ २१ अत्र प्रश्नः—सप्तकलप्रस्तारे एकादशं

१ १ १ १ १ १ १ ११

१ ५ १ ५ १

रूपं कीदृशम् ? इति, तदा प्राप्तं १५१५ इदम् ।

इति मात्रोद्दिष्टसुत्रव्याख्या पूर्णा ।

मात्रानष्ट-प्रकरणम्

अथ मात्रानष्ट यथा—

यत्कलकः प्रस्तारो लघवः कार्याश्च तावन्त ।

दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कान् पृष्ठाङ्कं तोपयेदन्त्ये ॥ ॥ ५३ ॥

उत्तरितोत्तरितानामङ्कानां यत्र सम्मते भागः ।

परमात्राञ्च गृह्येत्वा स एव गुरुतामुपागच्छेत् ॥ ॥ ५४ ॥

अस्यार्थः—यावत्स्य कला, प्रस्तारे एककलस्य एक एव लघु । ईदृश द्वि-
कलस्य द्वे रूपे, त्रयो एक एव गुरु ५ ईदृश, द्वितीयरूपे लघुद्वयम् ॥ ईदृशम् ।
अत्र पुष्पानवकाशात् न इष्टरूपलाभः, असम्भवात् । त्रिकले मात्राच्छन्दसि त्रीणि
रूपाणि । चतु कले पञ्चरूपाणि १।२।३।४ इति पूर्वयुगाङ्कात् । पञ्चकले अष्ट-
रूपाणि १।२।३।४।५ इति पूर्वयुगाङ्कात् । षट्कले १३ रूपाणि तावत् एव पूर्व-
युगाङ्कात् । सप्तकले २१ रूपाणि तथैव ।

एव कलाप्रमाणा लघवो लेख्या, यथा—सप्तकले मात्राच्छन्दसि इष्ट एकादश
रूप कीदृश ? इति, मुखेन केनचित् पृष्टम्, तदा सन्तैव लघवः । । । । । । ।
अनया रीत्या लेख्या । तेषामुपरि १।२।३।४।५।६।७।८।९।१०।११।१२।१३।१४।१५।१६।१७।१८।१९।२०।२१।२२।२३।२४।२५।२६।२७।२८।२९।३०।३१।३२।३३।३४।३५।३६।३७।३८।३९।४०।४१।४२।४३।४४।४५।४६।४७।४८।४९।५०।५१।५२।५३।५४।५५।५६।५७।५८।५९।६०।६१।६२।६३।६४।६५।६६।६७।६८।६९।७०।७१।७२।७३।७४।७५।७६।७७।७८।७९।८०।८१।८२।८३।८४।८५।८६।८७।८८।८९।९०।९१।९२।९३।९४।९५।९६।९७।९८।९९।१००। इति । तदा दश-
मध्ये त्रयोदश न पतन्तीति भागाभावः, तदा ८ अङ्कः १३ मध्ये पाठ्यः, एव
अष्टाध कलामाकृत्य त्रयोदशाधो गुरु स्थाप्य, दशाध एका कलाऽवशिष्टा,
अष्टकस्य लोपः परमात्राग्रहेण गुरुभावात् । अथ त्रिकस्य कला पञ्चके न गृह्यते,
मुख्यकस्य द्विवेन गृह्यते तदा ५५५ । ईदृश नवमरूपतापत्तेः । यद्वा त्रिकस्य
कला पञ्चके न गृह्यते १।२ अनयो कलाद्वयं लघुरूपमेव ध्रियते तदा दशम रूप
ईदृश स्मात् । । ५५, तेन पञ्चकाध कला एका भिन्नैव रक्ष्या, अग्रे द्वितीयाङ्कस्य
त्रिके कलाग्रहेण त्रिकाधो गुरु, मुख्यककलशेषात्, एव । ५ । ५ । ५ । ईदृश एकादश
रूप व्यवस्थितम् । द्विकाष्टकयोर्लोपः 'उत्तरितल अकलोपके लेख' इति वचनात् ।
यदुक्तं छन्दोरत्नावल्याम्—

सर्वं लघु सिरं ध्रुवः अकः, प्रश्नहीनः शेषाङ्कः धरि ।

परं लघु लेखि वङ्कः उत्तरि भागः जहं जहं परः ॥

यद्वा, दशानां भागस्त्रयोदशे प्राप्यते 'दश एके दश' शेषः ३ विपत्तत्वात्
परस्य-प्रत्यस्य त्रयोदशात् पूर्वस्य अष्टकस्य कलाग्रहेण त्रयोदशस्थानजातत्रिकाधो

गः, श्र्यष्टकलोपः, दशाधो लः, पञ्चके त्रिकस्य भागे शेषं २ इति समत्वात् पञ्चाधो लः ऽ।, द्विकस्य त्रिके भागापत्ती शेषं १ इति विषमाङ्कत्वाद् गुरुः, द्विकस्य कलाग्रहात् द्विकलोपः, मुख्यैकाधो यथास्थितो लघुरेव, एवं । ऽ। ऽ। इत्येकादशं व्यवस्थितं सप्तकले ।

अथ बालबोधाय इयमेव व्याख्या विस्तरतः—

प्रथमं त्रिकले मात्राच्छन्दसि त्रिलघुकरणं तस्य न्यासः १ २ ३ तदुपरि
। । ।

पूर्वयुगाङ्कदानम् । तत्र पृष्ठं प्रथमरूपं त्रिकले कीदृग् ? इति, एवं इष्टं एकरूपं तत् त्रिकात् अन्त्याङ्कात् पराकृतं—मुप्तमिति यावत् शेषं १ । २ । २ 'उद्धरितोद्धरितानां अङ्कानां यत्र लभ्यते भागः' इति वचनात् द्विकस्य द्विकेन भागे परद्विकाधो गः, पूर्वस्य द्विकस्य कलाग्रहात् तस्य लोपः, शेषं । ऽ इति प्रथमं रूपम् । पृष्ठे द्वितीये, अन्त्यत्रिकात् २ लोपे शेषं १ । २ । १, अत्र अन्त्यैककस्य भागलभो द्विके तदधो गः, मुख्यैककलाग्रहात् तस्य लोपः, अन्त्यैकाधो लः ऽ। इति द्वितीयं रूपम् । तृतीयं सर्वलघुकमेव ।

अथ चतुःकले १ २ ३ ४ अत्र पृष्ठे १ लोपे शेषं १ । २ । ३ । ४,
। । । ।

त्रिकस्य भागः चतुष्के प्राप्यः तदधो गः, त्रिकस्य कलाग्रहात् त्रिकलोपः, द्विकेऽपि मुख्यैकस्य भागः तेन द्विकाधो गः, एककस्य लोपः, जातं ऽ ऽ प्रथमम् । पृष्ठे २ लोपे शेषं १ । २ । ३ । ३, त्रिके—त्रिकस्य भागे परत्रिकाधो गः, पूर्वत्रिकलोपः कलाग्रहात्, शेषे द्विके एकस्य भागापत्ती कलाङ्कसाम्यादपि पूर्वरूपापत्तिः, तेन नैकस्यापि लोपः, लघुद्वयं । । ऽ द्वितीयम् । पृष्ठे ३ लोपे शेषं १ । २ । ३ । २, एवं द्विकस्य अन्त्यस्य भागस्त्रिके तदधो गः, पूर्वद्विकस्य कलाग्रहात् लोपः, एवं । ऽ । तृतीयम् । पृष्ठे ४ लोपे शेषं १ । २ । ३ । १ एकस्य भागोऽत्र त्रिके, एवमन्त्यैकाधो लः, त्रिकेऽपि शेषाभावादधो लः, 'त्रिण एकुं ३' लघु १ तस्य भागः द्विके तदधो गः, एकलोपः, अत्र मुख्यैकस्य भागो द्विके तदधो गः, कलापूर्तः त्रिके चान्त्यैकके च प्रत्येक कला मुख्यैककलोपः, ऽ। । तुर्यम् । पञ्चमं लघुसकलरूपम् ।

पञ्चकले १ २ ३ ४ ५ अत्र पृष्ठे १ लोपे शेषं १, २, ३, ४, ७,
। । । । ।

अत्र सप्तके पञ्चकस्य भागः, तेन सप्ताधो गः, पञ्चकस्य लोपः, द्विकस्य त्रिके भागः तदधो गः, द्विकलोपः, मुख्यैकाधः कला स्थितैव । ऽ ऽ प्रथमम् । पृष्ठे २ लोपे शेषं १, २, ३, ४, ६, षट्के पञ्चकस्य भागे

पडधो ग, पञ्चकलोप, त्रिके-त्रिकलस्य द्वितीयरूपस्य भुवधिकत्वे तादृस्यात् द्विकस्य भाग पूर्वरूपे कृत तेनात्र द्विके एकस्य भागे द्विकाधो ग, मुख्यकलोप, त्रिकाध कला, द्वितीय ऽ। ऽ रूपम् । पृष्ठे ३ लोपे शेष १, २, ३, ५, ५, पञ्चकेन पञ्चकस्य भागे परपञ्चकाधो ग, पूर्वपञ्चकलोप, शेष कलानयमङ्कनय चेति साम्यात् ५, ५ इति समभागाच्च प्रत्येक लघवस्त्रय, एव । । । ऽ तृतीयम् । पृष्ठे ४ लोपे शेष १, २, ३, ५, ४, अत्र चतुष्के पञ्चकभागो न प्राप्य, पञ्चके चतु कस्य भागात् पञ्चकाधो ग, त्रिकस्य कलाग्रहात्लोप, चतु काध कला, एव कलात्रये सिद्धे शेषमङ्कद्वय कलाद्वय चेति साम्यात्लघुद्वय कार्यमिति न विचार्य द्वाभ्या कलाभ्या गुरुसिद्धेर्गुंर स्थाप्य । पञ्चकलेऽष्टरूपारमके तुयंरूपे लघ्वन्ते गुरुद्वयेनापि कलापूर्ते इति एकस्य द्विके भागात् द्विकाधो ग, मुख्यकलोप, एव ऽ ऽ । तुयंम् । पृष्ठे ५ लोपे शेष १, २, ३, ५, ३, अत्र त्रिकस्यान्त्यस्य पञ्चके भागात् पञ्चकाधो ग, अन्त्यत्रिकाधो ल, पूर्वत्रिकलोप, अत्रापि समकलाङ्कत्वे गुरुरिति न कार्य पूर्वरूपापत्ते, अर्द्धोपरि लघूनामेव वृद्ध । तेन लघुद्वय । । । ऽ पञ्चमम् । पृष्ठे ६ लोपे शेष १, २, ३, ५, २, अत्र पञ्चकस्य त्रिके भागो नेति द्विकस्य त्रिके भागात् त्रिकाधो ग, द्विकलोप, पञ्चाधो ल, अन्त्यद्विकाधो ल, मुख्यकाधोऽपि ल, तेन । ऽ । । ऽ षष्ठम् । पृष्ठे ७ लोपे शेष १, २, ३, ५, १, अत्र पूर्वरूपे द्विकस्य त्रिके भागलाभात् त्रिकाधो ग, उक्त सप्तमे पुनारूपे द्विके एकस्य भागात् द्विकाधो ग, मुख्यकलोप त्रि-पञ्च अन्त्यकानामध प्रत्येक लघुद्वय, ऽ । । । सप्तमम् । पर सर्वलमष्टमम् ।

पटकले १, २, ३, ५, ८, १३, इह पृष्ठे १ लोपे शेष १, २, ३, ५, ८, १२,
। । । । । । । ।

अत्र १२ मध्ये ८ भागे द्वादशाधो ग, अष्टकलोप, एव पञ्चके त्रिकस्य भागात् पञ्चकाधो ग, त्रिकलोप, द्विके मुख्यकस्य भागात् द्विकाधो ग, मुख्यकलोप सर्वत्रकलाग्रहात् ऽ ऽ ऽ प्रथमम् । पृष्ठे २ लोपे शेष १, २, ३, ५, ८, ११, अत्रापि ११ मध्येऽष्टभागात् तत्कलाग्रहे ११ अधो ग, ८ लोप, पञ्चके त्रिकस्य भागात् पञ्चाधो ग, त्रिकलोप शेषाङ्ककलासाम्यात् । । ऽ ऽ द्वितीयम् । पुन पृष्ठे ३ लोपेऽत्यदशाधो ग, अष्टाना भागे तत्कलाग्रहात् त्रिकाधो ग, द्विकस्य कलाग्रहात् पञ्चाधो ल, मुख्यकाधो ल, एव । ऽ । ऽ तृतीयम् । पुन पृष्ठे ४ लोपे शेष ६, अन्ते तत्राप्यष्टकलाग्रहादधो ग, द्विके एकस्य भागात् कलाग्रहे द्विकाधो ग, त्रिकाधो ल, परस्य अष्टकस्य लोपात् पञ्चाधो ल, भागासम्मवात्, एव ऽ । । ऽ चतुर्थम् । पृष्ठे ५ तस्य १३ मध्यात् लोपे शेष १, २, ३, ५, ८, ८, पूर्वाष्टककलाग्रहात् पराष्टकाधो ग, पूर्वाष्टकलोप, शेषे कलाङ्कसाम्यात्

चतस्र कला एव । यद्यत्र पञ्चके त्रिकभागात् द्विके एकस्य भागात् कलाग्रहणादि क्रियते तदा पूर्वरूपापत्तिः, सा तु सर्वत्रापि निषिद्धा 'उवरिल अक लोपिके लेख' इति वचनात्, । । । । । पञ्चमम् । षष्ठे पृष्ठे १३ मध्यात् ६ लोपे अन्ते ७, तदष्टाना भागो नाप्य, किन्तु सप्ताना भागोऽष्टके, तेनाष्टाधो ग, सप्ताधो ल, पञ्चकस्य लोपोऽष्टकेन कलाग्रहात् द्विकस्य त्रिके भागात् त्रिकाधो ग, द्विकलोप, मुख्यैकाधो ल, एव । ५५ । षष्ठम् । पृष्ठे ७ तल्लोपेऽन्ते ६, तदधो ल, अष्टके षट्कस्य भागात् अष्टाधो ग, पञ्चके लोपात् द्विके एकस्य भागात् द्विकाधो ग, एकस्य कलाग्रहात् एकस्य लोप, त्रिकाधो ल, एव ४ । ५ । सप्तमम् । पृष्ठे ८ तल्लोपेऽन्ते ५ तदधो ल, पञ्चकस्य अष्टके कलाग्रहात् अष्टाधो ग, पञ्चकस्य अस्त्यस्य भागलाभाच्च शेषे कलाङ्कुसाम्यात् त्रय प्रत्येक लघव, । । । । । अष्टमम् । पृष्ठे ९ लोपे शेष १, २, ३, ५, ८, ४, चतुष्कस्य अष्टसु भागात् चतु काधो ल, अष्टाधोऽपि ल, पञ्चके त्रिकभागात् तत्कलाग्रहेण पञ्चाधो ग, त्रिकलोप, द्विके एकस्य भागात् तत्कलाग्रहे द्विकाधो ग, एकस्य लोप, एव ५५ । । नवमम् । अत्र पञ्चकस्य कला नाष्टके क्षेप्या पूर्वरूपापत्तिः, गुरुणा रूपाद्यभागसञ्चारात् पश्चिमभागे लघूनामाधिव्याच्च । पृष्ठे १० लोपे, शेष १, २, ३, ५, ८, ३, तदा त्रिकस्यास्त्यस्य अधो ल, अष्टाधोऽपि ल, त्रिकस्य पञ्चके भागात् पञ्चाधो ग, त्रिकलोप, शेष १ । २ कलाङ्कुसाम्यात्लघुद्वय । ५ । । दशमम् । पृष्ठे ११ लोपे प्राग्ते २, तदधो ल, द्विकस्य त्रिके भागात् कलाग्रहे त्रिकाधो ग, द्विकलोप, शेष १, ५, ८, एषु प्रत्येक ल, एव । ५ । । । एकादशम् । पृष्ठे द्वादशे १२ लोपे, शेष १, २, ३, ५, ८, १, अत्र द्विकेन मुख्यैकाध, कलाग्रहात् द्विकाधो ग, मुख्यैकलोप, शेष ३, ५, ८, १, एषामधो लघव, एव ५ । । । । द्वादशम् । पर सर्वलघुकम् ।

सप्तकले १ २ ३ ५ ८ १३ २१ अत्र पृष्ठे १ लोपे शेष १, २, ३, ५,
। । । । । । । । ।

८, १३, २०, अत्र विंशतो १३ भागप्राप्तिः तेन विंशाधो ग, १३ लोप, अष्टाधो ग, पञ्चलोप, त्रिकाधो ग, द्विकलोप मुख्यैककला स्थितैव, एव । ५५५ प्रथमम् । पृष्ठे २ लोपे, शेष १६, तदधो ग, १३ लोपात् अष्टाधो ग, पञ्चलोपात् त्रिके द्विकलाग्रह प्रथमरूपे, अत्र द्विके मुख्यैककलाग्रहात् द्विकाधो ग, एकलोप, त्रिके कला, एव ५ । ५५ द्वितीयम् । पृष्ठे ३ लोपे अन्ते १८, तदधो ग, १३ भागात् १३ लोप, अष्टाधो ग, पञ्चकलाग्रहात् तल्लोप शेष समकलाङ्कत्वात् ३ लघव । । । ५५ तृतीयम् । पृष्ठे ४ लोपे शेष १७, तदधो ग, १३ लोप पञ्चाधो ग, त्रिककलाग्रहात् अष्टाधो ल, द्विकाधो ग, मुख्यस्य कला स्थिता ५५ । ५ तुर्यम् ।

पृष्टे पञ्चलोपे शेषमन्ते १६, तदधो ग, १३ कलाग्रहात् लोप, अष्टाधो ल, पञ्चकेऽधो ग, त्रिके कलाग्रहाल्लोप, शेषे समकलाङ्कत्वाल्लघुद्वय ।। ५। ५ पञ्चमम । पृष्टे ६ तल्लोपे शेषमन्ते १५, तदधो ग, अष्टाधो ल, पञ्चाधो ल, त्रिकाधो ग, द्विकस्य कलाग्रहात् मुख्याध कला एव, एव । ५। ५ पष्ठम् । पृष्टे ७ तल्लोपेऽन्ते १४, तदधो ग, १३ न्यूनत्वात् लोप ८। ५। ३ अधो ल, द्विकाधो ग, मुख्यकलाग्रहात् लोप ५। ५। ५ सप्तमम् । पृष्टे ८ लोपे शेषमन्ते १३, पूर्वं १३ अधो ग, समभागबलात् पूर्वं १३ लोप, एव कलाद्वय, शेषपञ्चाङ्का पञ्चकला चेति साम्यात् पञ्च सध्व एव ।। ५। ५ अष्टमम् । पृष्टे ९ लोपे शेषमन्ते १२, तेन भाग पूर्वं १३ मध्ये, यदुक्त बाणीभूषणे—

नष्टे कृत्वा कला सर्वा पूर्वयुग्माङ्कयोजिता ।

पृष्ठाङ्कहीनशेषाङ्क येन येनैव लुप्यते ॥

परा कलामुपादाय तत्र तत्र गुरुर्भवेत् ।

मात्राया नष्टमेतत्तु फणिराजेन भाषितम् ॥

(बाणीभूषणम् परि १, पद्य ३२-३३)

तत्र १३ अधो ग, १० अधो ल, अष्टकस्य लोप कलाग्रहात् एव पञ्चाधो ग, त्रिकभागेन कलाग्रहात् द्विकाधो ग, मुख्यलोपात्, एव ५५५। नवमम् । पृष्टे सप्तकले छदसि दशम रूप कीदृग् ? इति, तदा १ २ ३ ५ ८ ११ २१ एव

। । । । । । । ।

कला कृत्वा पूर्वयुग्माङ्कयोजिता पृष्ठाङ्क १०, ते २१ मध्यात् अपकृष्टा शेष ११, तदा १३ मध्ये भागात् तदधो ग, ११ अधो ल, अष्टकलोप, पञ्चाधो ग, त्रिककलाग्रहात्, षड कलाङ्कयो साम्याल्लघुद्वय ।। ५५। दशम रूपम् । पृष्टे ११ तस्य लोपे १०, तत १३ मध्ये भागात् १३ अधो ग, अष्टलोप, त्रिके द्विकभागात् त्रिकाधो ग द्विकलोप, एव रूप । ५। ५। एकादशम् । पृष्टे १२ तल्लोपे शेष ९ तस्य १३ मध्ये भागात् १३ अधो ग, ९ अधो ल, अष्टलोप, द्विके मुख्यकस्य भागात् द्विकाधो ग, मुख्यलोप त्रिकपञ्चकयो अधो ल प्रत्येक, एव ५। ५। द्वादशम् । पृष्टे १३ तल्लोपे षड ८ तस्य १३ मध्ये भागात् १३ अधो ग, ८ अधो ल, पूर्वाष्टकलोप, शेष समाङ्कबलाभावात् १, २, ३, ५ एयामधो लघव प्रत्येक, ।। ५। त्रयोदशम् । पृष्टे १४ तस्य २१ मध्याल्लोपे षड ७, तस्य १३ मध्ये भागे शेष ६ इति परात्-सप्तमात् न्यूनता इति हेतो १३ अधो ल, सप्ताधोऽपि ल, अष्टके पञ्चकभागात् अष्टाधो ग, पञ्चकलोप, त्रिके द्विकभागात् त्रिकाधो ग, द्विकलोप, मुख्यकाध बला, । ५५। चतुर्दशम् । पृष्टे १५ लोपे

शेष ६ तदधो ल , १३ अधोऽपि प्रागुसिद्धत्वात् स एव, अष्टके पञ्चकभागादष्टाधो ग , पञ्चकलोप , द्विके एकस्य भागात् द्विकाधो ग , त्रिकाधो ल , एव ५।५।। पञ्चदशम् । पृष्ठे १६ तल्लोपे शेष ५ तस्य १३ मध्ये भागे शेष = तदधो ल , पञ्चाधो ल , अष्टके पञ्चकभागात् अष्टाधो ग , पूर्वपञ्चलोप , शेषे समकलाङ्कत्वात् त्रयोपि लघव , ।।।५।। षोडशम् । पृष्ठे १७ तल्लोपे शेष ४ तदधो ल , तस्य १३ मध्ये भागे शेष ६, अथ परोङ्क पूर्वस्याष्टकादधिक इति हेतो तस्याप्यधो ल पञ्चके त्रिकस्य भागात् पञ्चाधो ग , त्रिकलोप , द्विके मुख्यकभागाद् द्विकाधो ग , मुख्यकलोप , ५५।।। सप्तदशम् । पृष्ठे १८ तल्लोपे शेष ३ तदधो ल तस्य १३ मध्ये भागे शेष १० तदधो ल , अष्टकादधिका १० इति अष्टकाधो ल , पञ्चके त्रिकभागात् पञ्चाधो ग , त्रिकलोप , शेषे समकलाङ्कत्वात् लघुद्वय , ।।५।।। अष्टादशम् । पृष्ठे १९ तल्लोपे शेष २ तस्य १३ मध्ये भागे शेष ११ तस्य अष्टमध्ये भागाभावात्, अष्टकस्य पञ्चके भागाभावात् सर्वत्र ५, ८, ११, २ एषु लघव , द्विकस्य त्रिकेभावात् त्रिकाधो ग , द्विकलोप , मुख्याधो ल , एव ।५।।।। एकोनविंशम् । अथ पृष्ठे २० तस्य २१ मध्यात्लोपे शेष १ तत्र १३ मध्यात् भागे शेष १२ तस्य नाष्टसु भाग , अष्टाना न पञ्चके भाग , पञ्चकस्य न त्रिके इति सर्वत्र लघव पञ्चस्वङ्केषु द्विके मुख्यकभागात् द्विकाधो ग , एकस्य लोप , एव ५।।।।। विंशतितम रूपम् । परत सर्वलघुकम् इति भाव्यम् । एव सर्वत्र मात्राच्छन्दसि इष्टज्ञानम् ।

एककले—

।	१
---	---

द्विकले द्वे—

५	१
---	---

।।	२
----	---

त्रिकले त्रीणि—

। ५	१
-----	---

५ ।	२
-----	---

। । ।	३
-------	---

चतुष्कले पञ्च—

५ ५	१
-----	---

। । ५	२
-------	---

। ५ ।	३
-------	---

५ । ।	४
-------	---

। । । ।	५
---------	---

पञ्चकले अष्ट—

। ५ ५	१
-------	---

५ । ५	२
-------	---

। । । ५	३
---------	---

५ ५ ।	४
-------	---

। । ५ ।	५
---------	---

। ५ । ।	६
---------	---

५ । । ।	७
---------	---

। । । । ।	८
-----------	---

पदकले श्रष्ट—

५ ५ ५	१
१ १ ५ ५	२
१ ५ १ ५	३
५ १ १ ५	४
१ १ १ १ ५	५
१ ५ ५ १	६
५ १ ५	७
१ १ ५ १	८
५ ५ १ १	९
१ १ ५ १ १	१०
१ ५ १ १ १	११
५ १ १ १ १	१२
१ १ १ १ १ १	१३

पदकले पूर्णम् ।

सप्तकले एकविंशति—

१ ५ ५ ५	१
५ १ ५ ५	२
१ १ १ ५ ५	३
५ ५ १ ५	४
१ १ ५ १ ५	५
१ १ १ १ ५	६
५ १ १ १ ५	७
१ १ १ १ १ ५	८
५ ५ ५ १	९
१ १ ५ ५ १	१०
१ ५ १ ५ १	११
५ १ १ ५ १	१२
१ १ १ ५ १	१३
१ ५ ५ १ १	१४
५ १ ५ १ १	१५
१ १ ५ १ १	१६
५ ५ १ १ १	१७
१ १ ५ १ १	१८

१ ५ १ १ १ १ १ १ १६

५ १ १ १ १ १ १ २०

१ १ १ १ १ १ १ २१

सप्तकले पूर्णम् ।

श्रष्टकले चतुर्विंशति—

५ ५ ५ ५	१
१ १ ५ ५ ५	२
१ ५ १ ५ ५	३
५ १ १ ५ ५	४
१ १ १ १ ५ ५	५
१ ५ ५ १ ५	६
५ १ ५ १ ५	७
१ १ ५ १ ५	८
५ ५ १ १ ५	९
१ १ ५ १ १ ५	१०
१ ५ १ १ १ ५	११
५ १ १ १ १ ५	१२
१ १ १ १ १ १ ५	१३
१ ५ ५ ५ १	१४
५ १ ५ ५ १	१५
१ १ ५ ५ १	१६
५ ५ १ ५ १	१७
१ १ ५ १ ५ १	१८
१ ५ १ १ ५ १	१९
५ १ १ १ ५ १	२०
१ १ १ १ १ ५ १	२१
५ ५ ५ १ १	२२
१ १ ५ ५ १ १	२३
१ ५ १ ५ १ १	२४
५ १ १ ५ १ १	२५
१ १ १ १ ५ १ १	२६
१ ५ ५ १ १ १	२७
५ १ ५ १ १ १	२८
१ १ १ ५ १ १ १	२९

५५	१	१	१	१	३०
१	१	५	१	१	३१
१	५	१	१	१	३२
५	१	१	१	१	३३
१	१	१	१	१	३४

अष्टकलं पूर्णम् ।

नवकले पञ्चपञ्चाशत्—

१	५	५	५	५	१
५	१	५	५	५	२
१	१	५	५	५	३
५	५	१	५	५	४
१	५	१	५	५	५
१	५	१	५	५	६
५	१	१	५	५	७
१	१	१	५	५	८
५	५	५	१	५	९
१	१	५	५	१	१०
१	५	१	५	१	११
५	१	५	१	५	१२
१	१	१	५	१	१३
१	५	५	१	१	१४
५	५	१	१	५	१५
१	१	५	१	१	१६
५	५	१	१	१	१७
१	१	५	१	१	१८
१	५	१	१	१	१९
५	१	१	१	१	२०
१	१	१	१	१	२१
५	५	५	५	१	२२
१	१	५	५	५	२३
१	५	१	५	५	२४
५	१	५	५	१	२५
१	१	१	५	५	२६
१	५	५	१	५	२७

५	१	५	१	५	२८
१	१	१	५	५	२९
५	५	१	५	५	३०
१	५	१	५	५	३१
१	५	१	५	५	३२
५	१	१	५	५	३३
१	१	१	५	५	३४
१	५	५	५	१	३५
५	५	५	१	५	३६
१	१	५	५	१	३७
५	५	१	५	५	३८
१	५	१	५	५	३९
५	१	५	५	१	४०
१	५	१	५	५	४१
१	१	१	५	५	४२
५	५	५	१	५	४३
१	५	५	१	५	४४
१	५	५	१	५	४५
५	१	५	५	५	४६
१	१	५	५	५	४७
१	५	५	५	५	४८
५	५	५	५	५	४९
५	५	५	५	५	५०
५	५	५	५	५	५१
५	५	५	५	५	५२
५	५	५	५	५	५३
५	५	५	५	५	५४
५	५	५	५	५	५५

नवकलं पूर्णम् ।

दशकले नवाशीति—

५	५	५	५	५	१
१	५	५	५	५	२
१	५	५	५	५	३
५	५	५	५	५	४

1111555	५
155155	६
515155	७
1115155	८
551155	९
1151155	१०
1511155	११
5111155	१२
1111155	१३
155515	१४
511515	१५
1115515	१६
551515	१७
1151515	१८
1511515	१९
5111515	२०
11111515	२१
555115	२२
1155115	२३
1515115	२४
5115115	२५
11115115	२६
1551115	२७
5151115	२८
11151115	२९
5511115	३०
11511115	३१
15111115	३२
51111115	३३
11111115	३४
155551	३५
515551	३६
1115551	३७
551551	३८
1151551	३९
1511551	४०

5111551	४१
11111551	४२
555151	४३
1155151	४४
1515151	४५
5115151	४६
1111151	४७
1551151	४८
5151151	४९
11151151	५०
5511151	५१
11511151	५२
15111151	५३
51111151	५४
111111151	५५
555511	५६
1155511	५७
1515511	५८
5115511	५९
11115511	६०
1551511	६१
5151511	६२
11151511	६३
5511511	६४
11511511	६५
15111511	६६
51111511	६७
111111511	६८
1555111	६९
5155111	७०
11155111	७१
5515111	७२
11515111	७३
15115111	७४
51115111	७५
111115111	७६

५ ५ ५ । । । ।	७७
। । ५ । । । ।	७८
। ५ । ५ । । । ।	७९
५ । । ५ । । । ।	८०
। । । । ५ । । । ।	८१
। ५ ५ । । । । ।	८२
५ । ५ । । । । ।	८३

। । । ५ । । । । ।	८४
५ ५ । । । । । ।	८५
। । ५ । । । । । ।	८६
। ५ । । । । । । ।	८७
५ । । । । । । । ।	८८
। । । । । । । । ।	८९
दशकसं सम्पूर्णम् ।	

इष्टशब्देन चित्तेष्ट पृष्टरूपमिहोच्यते ।

प्राचा वाचा नष्टमिहममाङ्गल्य न चोदितम् ॥ १ ॥

उपात्त्यतोऽत्येभ्यधिके ह्यधो ग ,

साम्येपि गो सस्तु ततोऽन्त्यहानो ।

पश्चाद्गुरोर्लोपनमङ्ककस्य,

कलाङ्कसाम्ये लघवो निधेया ॥ २ ॥

शेषाङ्कपूर्वापरयोरधो ग,,

स्थाप्योऽत्र वृद्धस्य ल एकशये ।

न पूर्वरूप पुनरेव कार्यं,

यो यत्र लुप्येदिति तद्विचार्यम् ॥ ३ ॥

पृष्ट पञ्चकले पञ्चम १ २ ३ ४ ५ ६, तदा पृष्ट पञ्चम तस्य अन्त्येष्टके
। । । । ।

लोपे शेषमन्ते ३ तस्याधो ल, उपात्त्यात् हीनत्वात् शेषाङ्का १, २, ३, ४, अत्र
त्रिकस्य पञ्चके भाग वृद्धत्वात् तदधो ग, पश्चात् त्रिकस्य लोप, शेष १।२
कलाना अङ्काना च साम्यात् प्रत्येक लघव, इति ।। ५। पञ्चम रूपम् । यद्यत्र
एकात् द्विकस्य वृद्धस्याथ गुरुदीयते तदा तु पञ्चकले तुर्यरूपापत्ति । अत्र हि
प्रथमरूपत्रये त्रिकलवत् न्यस्ते प्रान्तगुरुत्वम् । पञ्चकत्वाच्छन्दस त्रिकले पूर्व-
पूर्वत्वात् प्रश्ने तदतिक्रमे चतु कल स्वत पूर्वस्य द्वितीयरूपप्राप्तिस्तदभगश्च
दोपश्च । अथ यो नर पूर्वरूप न जानाति तस्य का गति ? इति चेत्, तेन पुसा
विचार्यं यत् पञ्चकले सर्वरूपाण्यष्ट, तर्हि त्रिरूपव्यतिक्रान्ते गुर्वधिकता न युक्ता ।
यस्य यावत् कलच्छन्दस स्वपूर्वच्छन्दस ५१ परस्य यावद् रूपाधिक्य तावति रूपे
अर्द्धं प्रान्तगुरुता च । यथा— अत्र पञ्चकले स्वपूर्वचतु कलात् पञ्चरूपात्मकात्
रूपत्रयमधिकमिति त्रिरूपी यावदर्थेऽन्तगुरुता च ।

पूर्व-पूर्वत्रिकलरूपतापि । तत्र गुर्वाधिक्य पराद्धे लघूनामाधिक्य प्रान्तलघुता च । यथा, त्रिकलत्त चतु कले रूपद्वयाधिक्य तेन प्रथमरूपद्वये न गुरुत्व, शेषद्वये चान्तलघुत्व, पञ्चम तु चतुर्लम् । पञ्चकलेपि प्रथमत्रिरूपोत्रिकलस्य पश्चात् पञ्चरूपी चतु कलस्य तत्रापि प्रान्तलघुता । पञ्चसु रूपेष्वपि द्विकलाद् रूपद्वय प्रान्तगुरुक तस्याप्यग्रे एक लघु । ततोऽपि रूपद्वय त्रिकलवत् प्रान्तलघुद्वय चतु - कलापेक्षया पञ्चम, पञ्चकलापेक्षयाऽष्टम सर्वलघुकम् ।

पञ्चकलात् षट्कले पञ्चरूपाधिक्य, पञ्चापि रूपाणि चतु कलवत् प्रान्ते एकगुरोरधिकस्य दानात् कलापूर्ति, पञ्चमे रूपे एको गुरुरन्ते शेष लघुचतुष्टयम् ।

परतोऽष्टरूपाणि पञ्चकलवत् प्रान्ते एकलघुनाऽधिकानि । तत्राप्यष्टमे प्रान्ते एकगुरु शेष लघुपञ्चक, अष्टाप्यपि रूपत्रय त्रिकलवत् प्रान्ते गुरुलघुभ्यामधिक षट्सप्तमाष्टरूप, पर रूपपञ्चक चतु कलवत् प्रान्ते लघुद्वयाधिक इत्यादौ विचार एव बलवान् ।

एव पृष्टे पञ्चकले षष्ठरूपे तदा प्रान्त्याष्टमध्ये ६ लोपे शेष १, २, ३, ४, २, अन्त्यद्विकाधो ल, तस्य पञ्चके भागात् उपा-न्त्यादूनत्वाच्च पञ्चकेपि द्विकस्य भागे लब्ध २ शेष १ तेन पञ्चकाधोपि ल, त्रिकाधो ग, द्विकलोप, तुर्ये पञ्चमे च रूपे पञ्चकाधो ग, त्रिकलोप । पञ्चकले हि त्रिकलवत् त्रिरूपी गुरुणान्तेऽधिका इद पृष्ट षष्ठ रूप इति विचारात् लब्धस्य द्विकस्य त्रिके भागाच्च, मुख्यकाध कला । ५ । । इति षष्ठ रूपम् । यथा उपा-न्त्ये-अ त्यस्य भागे उपा-न्त्याधो ग, अन्त्याधो ल, उपा-न्त्यपूर्वस्य लोप, तथा द्विकस्य पञ्चके शेष १ तस्य त्रिके भागेपि सम्भवति त्रिकाधो ग, पञ्चकस्थानीयद्विकाधो ल, पूर्वद्विकलोप, मुख्यकाधो ल । इति रूपनिर्णय ।

पञ्चकले सप्तमेपि अन्त्याष्टके सप्तलोपे शेष १ तदधो ल शेषैकरयापि पञ्चके भागे शेष पूर्णम् । अग्र त्रिकस्य द्विके भागाभाव वृद्धत्वात् मुख्यकस्य द्विके भागात् द्विकाधो ग, मुख्यकलोप, त्रिकाधो ल, इति ५ । । । सप्तमम् ।

यो यस्मात् पूर्वपूर्वोऽङ्गस्तावद्रूपेषु चान्त्यग ।

तत्पर प्रान्त-लान्येव स्वत पूर्वाङ्गसंख्यया ॥ ४ ॥

एव सप्तकले पृष्टे एकादशे रूपे अन्त्याङ्ग २१ मध्ये ११ पाते शेष १० तस्य उपा-न्त्याङ्गे १३ मध्ये भाग प्राप्त, तत्र अष्टकस्य कलाग्रहात् १३ स्थानीयत्रिकाधो ग अष्टकलोप, दशाधो ल, द्विकस्य त्रिके भाग, तेन त्रिकाधो ग, द्विकलोप, मुख्यकाधो ल, पञ्चकाधो ल, एव । ५ । ५ । इत्येकादशरूपसिद्धि ।

ननु अत्र पञ्चके त्रयोदशस्थानीयत्रिकस्य भागात् पञ्चवाघो ग, पूर्वत्रिक-
लोप, अत्रे १,२ अनयोरध कलाद्वयमिति कथं न त्रियते ? इति चेत्, न, दशम-
रूपापत्ते । परस्य १० अक्षस्य पूर्वस्मिन् १३ अक्षे भागाधिकारात् पूर्वत्रिके
भागश्चेत् सम्भवति तदाऽप्य विधियुक्तं । यद्यपि त्रयोदशस्थानीयत्रिकस्य परस्य
पूर्वस्मिन् पञ्चके भागसम्भव, पर मध्येष्टकलोपेन व्यवधानाध्याय विधिर्घटते ।

यद्यपि सप्तकले दशमे रूपे अयमेव विधिर्दृश्यते, तथापि सप्तकले पूर्वपूर्वं
पञ्चकल तस्याष्टरूपाणि प्रथमतो गतिक्रान्तानि शेष ६।१०।११ इति पटकलस्य
तृतीय रूप प्रश्ने प्राप्त, तच्च । ५।५ ईदृशमिति, तद्भङ्गापत्तेरानीयमध्वाप्रध्वर ।

पटकलेपि तादृग् रूप चतु कले स्वपूर्वपूर्वं तृतीयरूपे । ५। ईदृशे प्रान्ते गुरु-
दानात् सिद्धम् । चतु कलेपि द्विकलवत् रूपद्वये प्रान्ते गुरुणाधिकेप्यतीते त्रिकलस्य
प्रथम रूप प्राप्त, चतु कलापेक्षया तृतीय, तत्रान्ते लघोरधिकारात् प्रश्ने । ५।
ईदृशस्यैव सिद्धे ।

स्वपूर्वपूर्वस्य कलाप्रमाणे, गोऽन्त स्वपूर्वस्य कलाप्रमाणे ।

लोऽन्तो विचिन्त्येति निवेद्यमेव, छन्दोविदा पृष्टमिहेऽष्टरूपम् ॥

नट्टे सव्व कला कारिज्जसु, पुव्व जुयल सरि अका दिज्जसु ।

पुच्छिल अक भेटावहु सेख, उवरिल अक लोपि के सेख ॥

जत्थ जत्थ पाविज्जह भाग, एह कहे फुर पिंगलनाग ।

परमत्ता लेह गुरुताइ, जत लेवेहु तत लेवेहु आइ ॥

नष्टाङ्के कल्पयेद् भाग समभागे लघुर्भवेत् ।

दत्तवंक विपमे भागे कार्यस्तत्र गुरुर्भवेत् ॥

[वाणीभूषणम्, परि० १, पद्य ३५]

अथ सिलमिली [शात्मली] प्रस्तार

गुरु पढम हिट्ट ठाण, लहुया परि ठवहु अप्पबुद्धेण ।

सरिस्ता सरिस्ता पत्तो, उच्चरिप्पा गुरु-लहु देहु ॥

इति भागानष्ट न्यास ।

वर्णोद्दिष्ट-नष्ट-प्रकरणम्

अथ वर्णोऽ? दि।ष्टरूपज्ञानमाह—

द्विगुणानङ्कान् दत्त्वा वर्णोपरि सधुशिरःस्थितानङ्कान् ।

अङ्केन पूरयित्वा वर्णोद्दिष्ट विजानीयात् ॥ ५५ ॥

अस्यार्थः सोदाहरणः । यथा, । ५ । ५ इव चतुरसरे छन्दसि क्तम् रूपम् ?
इति, उद्दिष्टे द्विगुणा अङ्का उपरि देयाः १ २ ४ ८ इति न्यासे लघूपरि १, ४
। ५ । ५

मेलने ५, तत्र संककरणे पठ्य रूप इत्युद्देश्यम् ।

उद्दिष्टे वर्णोपरि दत्त्वा द्विगुणनमेणाङ्कम् ।

एक लघुवर्णाङ्के दत्त्वोद्दिष्ट विजानीयात् ॥

[वाणीभूषणम्. परि० १. पृष्ठ १४]

इ[? न]ष्टज्ञानमपि आह—

नष्टे पृष्टे भागः कर्त्तव्य पृष्टसख्यायाः ।

समभागे ल कुर्याद् वियमे दत्त्वकमानयेद् गुरुकम् ॥ ५६ ॥

यथा चतुरसरे छन्दसि षष्ठ रूप कीदृशम् ? इति पृष्टे पण्णा भागोऽर्थं त्रय
एव समभागात् लघुः प्राप्तः, पुनस्त्रयाणामर्द्धकरणाभावात् संककरणे ४, तदर्थं
२ एव गुरुः प्राप्तः, द्वयस्यार्द्धं १ एव सधु प्राप्तः, तस्याप्यर्द्धांशमभावात् संक-
करणे २ तदर्थं १ एव गुरुप्राप्ति । जात । ५ । ५ एव इ[? न]ष्टरूपज्ञानम् ।

इति वर्णोद्दिष्टनष्टप्रकरणम् ।

वर्णमेरु-प्रकरणम्

वर्णमेरुमाह—

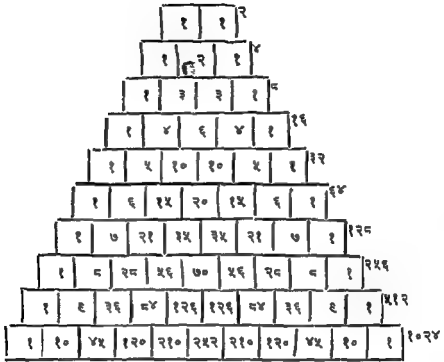
कोष्ठानेकाधिकान् वर्णं कुर्यादाद्यन्तयोः पुन ।

एकाङ्कुमुपरिस्थाङ्कु - द्वयैरग्यान् प्रपूरयेत् ॥ ५७ ॥

		१		१								
		१		२		१						
		१		३		३		१				
		१		४		६		४		१		
		१		५		१०		१०		५		१

यस्य छन्दसो यावन्तो वर्णास्तावन्त कोष्ठा एकेनाधिकाः कर्तव्याः । तत्रापि
भाष्यन्तकोशद्वये एकाङ्कन्यासः, ततः पुनः उपरिस्थाङ्कयोः कोशयोर्मेलनेन विचाल-
स्यकोशपूरणं कार्यम् । यथा—द्विकवर्णच्छन्दसो द्वे रूपे—एक गुरुक १, एक लघुक
च २, एव कोशद्वयम् । द्विवर्णच्छन्दसोपि चत्वारि रूपाणि—५५, १५, ५१, ११,
इति । एक सर्वगुरुक, द्वे रूपे एकगुरुके, एक सर्वलघुक, एव उपरितनकोशद्वयाङ्कौ
१११ तयोर्मेलने द्वाविति मध्यकोशे द्विकन्यासः । त्रिवर्णच्छन्दसोऽष्टरूपाणि—एक
सर्वगुरु ५५५, त्रीणि द्विगुरुणि २, ३, ५, त्रीणि एकगुरुणि ४, ६, ७, एक सर्व-
लघु मध्ये कोशद्वये ३३ न्यासः, उपरिस्थ ११२ मेलने जातः । चतुर्वर्णच्छन्दसि
षोडशरूपाणि—एक सर्वगुरु आद्यः, चत्वारि एक गुरुणि ८, १२, १४, १५,
षट् द्विगुरुणि ४, ६, ७, १०, ११, १३, चत्वारि त्रिगुरुणि २, ३, ५, ६, एक
सर्वलघु, एव षोडशरूपाणि । विचालकोशत्रये ११३ मेलने ४ प्रथम-मध्य-
कोशपूरणं, उपरितन ३३ मेलने ६ द्वितीयमध्यकोशे, तृतीयेपि ११३ मेलने ४
इति, एवमग्रेपि ।

‘वर्णमेरुरय’ इत्यादि स्पष्टम् ॥ ५८ ॥



इति वर्णमेरु ।

द्व्यक्षरे छन्दसि ४ रूपाणि—एक सर्वगुरुरूप, द्वे रूपे एक गुरुके, एक सर्वलघुः ।
 त्र्यक्षरे छन्दसि ८ रूपाणि—१ सर्वगुरु, त्रीणि एकगुरुणि, त्रीणि द्विगुरुणि, एक
 सर्वलघुः । चतुर्वर्णे छन्दसि १६ रूपाणि—४ एकगुरु, द्विगुरु ६, त्रिगुरु ४, एक
 सर्वगुरु, एक सर्वलघुः । पञ्चवर्णे छन्दसि ३२ रूपाणि । षड्वर्णे ६४ रूपाणि ।
 सप्ताक्षरे १२८ रूपाणि । अष्टाक्षरे २५६ रूपाणि । ९ वर्णे ५१२ रूपाणि ।
 दशाक्षरे छन्दसि १०२४ रूपाणि ।

इति वर्णमेरु-प्रकरणम् ।

वर्णपताका-प्रकरणम्

वर्णपताकामाह—

दत्त्वा पूर्वयुगाङ्कान् पूर्वाङ्कयोजयेदपरान् ।

अङ्कः पूर्वं यो यं धृतस्ततः पङ्क्तिसञ्चारः ॥ [॥ ५६ ॥]

अङ्काः पूर्वं भूता येन तमङ्कं भरणे त्यजेत् ।

अङ्कश्च पूर्वं यः सिद्धस्तमङ्कं नैव साधयेत् ॥ [॥ ६० ॥]

प्रस्तारसह्यया चञ्चमङ्कविस्तारकल्पना ।

पताका सवर्गुर्वादिवेदिकेय विशिष्यतु ॥ [॥ ६१ ॥]

पूर्वयुगाङ्काः वर्णच्छन्दसि १।२।४।८।१६।३२।६४ इत्यादयः, तद्वरण
न्यासवेद्यम् ।

१	२
१	२

१	२	४
१	२	४
	३	

अथ तान् यथायोगं पूर्वाङ्कयोजयेत् तदा अधोऽधस्तनी अङ्कश्रेणिर्जायते ।
प्रथम एकवर्णच्छन्दसि रूपद्वयमेव, तत्र २ पङ्क्तिस्त्यापना । द्विवर्णे मध्यस्था एका-
पङ्क्तिः । त्रिवर्णे मध्यस्थ पङ्क्तिद्वय । चतुर्वर्णे मध्यस्थ पङ्क्तित्रयम् । पञ्चवर्णे
मध्यस्थ पङ्क्तिचतुष्टयम् ।

आदौ एक वर्णे ५ गुरु । लघुश्चेति रूपद्वयम् । द्विवर्णे १।२ इत्यनयोर्योजने ३
द्विकाधः । अत्र पूर्वं अङ्कं धृतः ततः पङ्क्तिसञ्चारः, एकैव द्विकाद्यापङ्क्ति
परतः सिद्धोऽङ्कस्तस्य साधना नास्तीति । तत्र एक रूपं सर्वग प्रथम,
द्वे रूपे द्वितीय-तृतीयरूपे एकगुरुके, तुर्यं सर्वसम् । एव द्विवर्णच्छन्दस चत्वार्येव
रूपाणि भवन्ति ।

१	२	४	८
१	२	४	८
	३	६	
	५	७	

त्रिवर्णं छन्दसि १।२ योजने ३ द्विकाधः, पुनः २।४ मेलने ६ परतः सिद्धोऽङ्कः, पुनः २।३ योजने ५, पुनः ४।३ योजने ७, पुनः ४।३ योगे ७ शेषाङ्काभावात् । एवं एक रूपं सर्वेगं, द्वितीय-तृतीय-पञ्चमानि रूपाणि एकेन गुरुणा ऊनानि त्रीणि रूपाणि द्विगुरुणि, ४, ६, ७ रूपाणि गुरुद्वयोनानि एक गुरुणि त्रीणि, एकं अष्टमं सर्वलघुकमिति अग्रेपि मन्तव्यम् ।

सुखेन अग्रेपि करणज्ञानाय विधिः—

१	२	४	८	१६
१	२	४	८	१६
	३	६	१२	
	५	१०	१५	
	७	१४		
	११			
	१३			

१।२ योजने ३, पुनः ४।२ योजने ६, पुनः ८।४ योजने १२, द्वितीया कोश-श्रेणिः, १६ त्याग. सिद्धाङ्कत्वात् । अस्याः श्रेणेरप्यधः २।३ योजने ५, पुनः ४।३ योजने ७, पुनः ८।६ योजने १४ तृतीया श्रेणिः । तस्या अधः ४।५ योजने ९, पुनः ४।६ योजने १०, पुनः ८।७ योजने १५ तुर्याश्रेणि । ६।५ योजने ११, पुनः ६।७ योजने १३, एव श्रेणिद्वय एककोशम् । एव एक रूपं सर्वेगं प्रथमपङ्क्तौ । द्वितीयपङ्क्तौ २।३।५।९ चत्वारि रूपाणि एक गुरुणा ऊनानि त्रिगुरुणि । [तृतीयपङ्क्तौ] ४।६।७।१०।११।१३ इति पङ्क्तिरूपाणि द्विगुरुणि । [चतुर्थपङ्क्तौ] ८।१२।१४।१५ एतानि एकगुरुणि । [पञ्चमपङ्क्तौ] षोडश सर्वलघु, एव षोडशरूपाणि ।

१	२	४	८	१६	३२
	३	६	१२	२४	
	५	७	१४	२८	
	९	१०	१५	३०	
	१७	११	२०	३१	
		१३	२२		
		१८	२३		
		१९	२६		
		२१	२७		
		२५	२९		

पञ्चवर्षे द्वादसि १।२ योजने ३ द्विकाष, २।४ योजने ६ चतु काष, ८।४ योजने १२, अष्टाघ, १६।८ योजने २४ द्वितीयश्रेणि । तदघ २।३ योजने ५, पुनः ४।३ योजने ७, पुन ८।६ योजने १४, पुन १६।१२ योजने २८ तृतीय-श्रेणि । ४।५ योजने ९, पुन ४।६ योजने १०, पुन ८।७ योजने १५, पुन १६।१४ योगे ३० तुर्याश्रेणि । ८।९ योजने १७, ४।७ योजने १, पुन ८।१२ योजने २०, पुन १६।१५ योजने ३१ पञ्चमश्रेणि । ६।७ योजने १३, पुन ७।११ योजने १८, पुन ९।१० योजने १९, पुनः १०।११ योजने २१, पुन १०।१५ योजने २५, पुन ८।१४ योजने २२, पुन ८।१५ योजने २३, पुन १२।१४ योजने २६ पुन १२।१५ योजने २७, पुन १४।१५ योजने २९ एव पताकया सर्वगुर्वादिज्ञापनम् ।

एक सर्वगुरुरूप । २।३।५।९।१७ पचरूपाणि चतुर्गुरुणि । ४।६।७।१०।११।१३।१८।१९।२१।२५ एतानि त्रिगुरुणि । ८।१२।१४।१५।२०।२२।२३।२६।२७।२९ एतानि द्विगुरुणि । १६।२४।२८।३०।३१ एतानि एकगुरुणि । ३२ एक सर्वलघुरूपम् ।

पूर्वाङ्के उपरितनैः पार्श्वस्थैर्वा पङ्क्त्यन्तरेष्वुपरिस्थैरङ्कानां योजना स्यात्
१।२ इत्यादयः, साम्ये योज्याः २।३ इत्यादयः, उपरितनैः ३।४ इत्यादयः,
पक्ष्यन्तरस्थैर्योषो भाव्यः । येन येन अङ्केन मीलितेन य अङ्कः रूपस्य पताकायां
भूतस्तमङ्क पुनर्जायमानं न पूरयेत्, यावद्वर्णैः प्रस्तारस्तावद्वर्णैः कोपभरणमिति
जेयम् ।

उद्दिष्टा सरि अंका दिज्जसु, पुव्व अंक परभरण करिज्जमु ।

पाउल अंक मढ परित्तिज्जसु, पत्थर संख पताका किज्जसु ॥

एकवर्णपताका

१	२	
१	२	५

द्विवर्णपताका

१	२	४		
१	२	४	५५	(१)
			१५	(२)
	१		५१	(३)
			११	(४)

द्विवर्णो एकं सर्वगुरु, द्वे रूपे एकगुरुके द्वितीय-तृतीये, तुर्ये सर्वलघुकम् ।

त्रिवर्णपताका

	१	२	४	८		
५ ५ ५	१	२	४	८	५ ५ १	(५)
१ ५ ५					१ ५ १	(६)
५ १ ५		१	६		५ १ १	(७)
१ १ ५			५	७	१ १ १	(८)

एकं सर्वगुरु, द्विगुरु २।३।५, एकगुरु ४, ६, ७ रूपाणि, अष्टमं सर्वलम् ।

चतुर्वर्णपताका

५ ५ ५ ५	(१)
१ ५ ५ ५	(२)
५ १ ५ ५	(३)
१ १ ५ ५	(४)
५ ५ १ ५	(५)
१ ५ १ ५	(६)
५ १ १ ५	(७)
१ १ १ ५	(८)

१	२	४	८	१६
३	६	१२		
५	७	१४		
९	१०	१५		
	११			
	१३			

५ ५ ५ १	(९)
१ ५ ५ १	(१०)
५ १ ५ १	(११)
१ १ ५ १	(१२)
५ ५ १ १	(१३)
१ ५ १ १	(१४)
५ १ १ १	(१५)
१ १ १ १	(१६)

षोडशके प्रस्तारे एक सर्वगुरुरूपम्, २।३।५।९ एतानि त्रि-गुरुणि,
४,६,७,१०,११,१३ एतानि द्वि-गुरुणि, ८।१२।१४।१५ एतानि एक-गुरुणि, १६
एक सर्वलघुरूपम् ।

पञ्चवर्णपताका

१	२	४	८	१६	३२
३	६	१२	२४		
५	७	१४	२८		
९	१०	१५	३०		
१७	११	२०	३१		
	१३	२२			
	१८	२३			
	१९	२६			
	२१	२७			
	२५	२९			

पञ्चवर्णपताका

श्री		ग		पञ्चवर्णपताका											
१		१													
५		२		३	५	६	१७								
१०		४		६	७	१०	११	१३	१८	१९	२१	२५	३२		
१०		८		१२	१४	१५	२०	२२	२३	२६	२७	२८			
५		१६		२४	२८	३०	३१								
१		३२													
ये		वा													

एकद्वयोयोगे ३, द्वित्रितुरोयोगे ६, चतुरष्टयोयोगे १२, अष्टपौडशयोगे २४ । ऊर्ध्वाध २१३ योगे ५, चतुस्त्रियोगे वक्रत्वे ७, ना६ योगे १४, १६।१२ योगे २८। १।३।५ योगे ६, ४।६ योगे १०, ना७ योगे १५, १६।१४ योगे ३० ।; ४।६।७ योगे १७, १।३।७ योगे ११, ना१२ योगे २०, [११।२० योगे ३१; ६।७ योगे १३, ७।११ योगे १८, ८।१० योगे १९, १०।११ योगे २१; १०।१५ योगे २५।] ना१४ योगे २२, १५।८ योगे २३, १२।१४ योगे २६, १५।१२ योगे २७, १५।१४ योगे २८ ।

५ ५ ५ ५ ५	(१)
१ ५ ५ ५ ५	(२)
५ १ ५ ५ ५	(३)
१ १ ५ ५ ५	(४)
५ ५ १ ५ ५	(५)
१ ५ १ ५ ५	(६)
५ १ १ ५ ५	(७)
१ १ १ ५ ५	(८)
५ ५ ५ १ ५	(९)
१ ५ ५ १ ५	(१०)
५ १ ५ १ ५	(११)
१ १ ५ १ ५	(१२)
५ ५ १ १ ५	(१३)
१ ५ १ १ ५	(१४)
५ १ १ १ ५	(१५)
१ १ १ १ ५	(१६)

५ ५ ५ ५ १	(१७)
१ ५ ५ ५ १	(१८)
५ १ ५ ५ १	(१९)
१ १ ५ ५ १	(२०)
५ ५ १ ५ १	(२१)
१ ५ १ ५ १	(२२)
५ १ १ ५ १	(२३)
१ १ १ ५ १	(२४)
५ ५ ५ १ १	(२५)
१ ५ ५ १ १	(२६)
५ १ ५ १ १	(२७)
१ १ ५ १ १	(२८)
५ ५ १ १ १	(२९)
१ ५ १ १ १	(३०)
५ १ १ १ १	(३१)
१ १ १ १ १	(३२)

मात्रामेरु-प्रकरणम्

अथ मात्राछन्दो मेरुमाह—

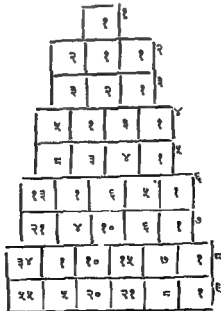
एकाधिककोष्ठानां द्वे द्वे पङ्क्ती समे कार्ये ।

तासामन्तिमकोष्ठेकाङ्कं पूर्वभागे तु ॥६२॥

एककलच्छन्दसः ५१ अधिककोष्ठानां द्विकल-त्रिकलादीनां द्वे द्वे समे पङ्क्ती कार्ये । कोऽयं ? द्विकल-त्रिकलयोः समे पङ्क्ती द्वयोरपि चतुःकोशात्मिके कार्ये । एव चतुःकलाष्टकलयोः पट्कोशरूपे । त्रयोदशकल-एकविंशतिकलयोः अष्टकोशात्मिके कृत्वा अन्त्यकोशे एकाङ्क एव धार्यः । पूर्वभागे तु पुनः अयुग्मपङ्क्तेः १ । ३ । ५ । ७ इत्यादिकायाः प्रथमकोशेषु सर्वत्र एककः स्थाप्य, समपङ्क्तेः २ । ४ । ६ । ८ इत्यादिकायाः पूर्वभागे प्रथमकोशे पूर्वयुग्माङ्काः । इह मात्रा छन्दसि १ । २ । ३ । ५ । ८ । १३ । २१ इत्याद्या योज्याः । एतत्तु दुर्बोधम् । सर्वपङ्क्तिषु भादो पूर्वयुग्माङ्का देयाः । द्विकलाद्यपेक्षया अयुग्मपङ्क्तीनां द्वितीयकोशे एककः, समपङ्क्तीनां द्वितीयकोशे २ । ३ । ४ । ५ । ६ । ७ । ८ इत्यादयः स्थाप्याः यावता पङ्क्तिः पूर्यते । आद्य एककललपुकोशापेक्षया २ । ४ । ६ । ८ इत्यादु पङ्क्तिषु एकक इति ।

आद्याङ्केन तदीयैः शीर्षाङ्कैर्विमभागस्थं ।

उपरिस्थितेन कोष्ठे विद्यमाणां पूरयेत् पङ्क्ती ॥६३॥



यथा द्वाभ्यां एकाभ्यां मेलने जात २ । अग्रे अन्तकोष्ठे एक सिद्ध एव इति द्वितीया पवित । अस्या प्रथमकोश त्रिकस्त विहाय कोशभरण एव तृतीय पङ्क्ति । विषयामा द्वितीयपङ्क्तिगत द्विक तदुपरि वामस्थित एक, एव १।२ मीलने जाता ३ मध्यकोशे, अन्तकोशे पुन एक सिद्ध एव । प्रथमकोशे तु 'एकाङ्कमयुगपङ्क्ते ।' इति सूत्रणात् एकाङ्क स्थाप्य एव, तस्याप्यादौ पूर्व-युग्माङ्क पञ्चक सकोशभरणेन ग्राह्य । एव प्राप्त चतु कले पञ्चरूपाणि एक सर्वग, त्रीणि एकगुरुणि, एक अन्ते सर्वलघुरूपम् ।

एव पञ्चकलमेरुकोशेषु द्विकलेन समकोशत्वात् चतु कलस्य १।३ एतौ संयोज्य उपान्त्ये ४ अन्ते एक सिद्ध एव । तत द्विकलपक्षिग द्विक त्रिकलपक्षिग एकञ्च संयोज्य त्रिक स्थाप्य, तस्याप्यग्रेऽष्टक पूर्वयुग्माङ्क । एव च त्रीणि रूपाणि द्विगुरुणि, चत्वारि एक गुरुणि । कानि कानि ? इत्याशङ्का पताकया निरस्या । अत्र मेरी लग त्रियावत् रूपसंख्यैव ।

पट्कले तु चतु कलस्यैक, पञ्चकलस्य चतु क च संयोज्य उपा त्ये पञ्चक, अन्त्ये तु एक सिद्ध एव चतु कलगतत्रिक तथा पञ्चकलगतत्रिक संयोज्य जाता ६ । ततोप्याद्यकोशे एकक पटकलत्वात् आदौ सर्वगुरवैकरूपज्ञानाय ततोप्यादौ १३ युग्माङ्क । एवञ्च एक रूप त्रिगुरुक, पट्कलाणि द्विगुरुकाणि, पञ्चकलाणि एकगुरुकाणि एकमन्त्य सर्वलघुकम् । एव सर्वाणि १३ रूपाणि ।

सप्तकलके पञ्चकलस्य त्रिक पटकलस्यैक संयोज्य आदौ ४, तस्याप्यादौ २१ युग्माङ्क । चतु कात् परकोशे पञ्चकलगत चतु क पटकलगत पटक संयोज्य १०, तत पर पञ्चकलगत एक पटकलगत पञ्चक संयोज्य पट ततोऽ ते एक सिद्ध एव । एव च चत्वारि रूपाणि त्रिगुरुणि, दशरूपाणि द्विगुरुणि पट्कलाणि एकगुरुणि, एक सर्वलघु एव २१ सर्वरूपाणि ।

अष्टकलके समपङ्क्तितात् एक सर्वगुरुरूप तदङ्क १, तस्यादौ ३४ युग्माङ्क, एकस्य कोशादग्रतनकोशे पटकलपवितगत पटव, सप्तकलपवितगत चतु व संयोज्य १०, तदग्र पट्कलगत पञ्चक सप्तकलगतदशक १० योगे १५ घरण, तदग्रे पट्कलगत एक सप्तकलगत पटव संयोज्य ७, अन्त चैव । एव च एक सर्वगुर, दशरूपाणि त्रिगुरुक णि, १५ रूपाणि द्विगुरुणि, सप्त एकगुरुणि, एक सर्वल, इति ३४ रूपाणि ।

एव नवकले उपरितनपवितगत ४।१ योगे ५, पुन १०।१० योग २०, पुन ६।१५ योगे २१, पुन १।७ योगे ८ इति ५५ रूपाणि । इति मात्रामेह ।

मात्रामेरु-कर्तव्यता—

सिर अके तसु सिर पर अके, उवरल कोट्ट पुरुहु निस्तके ।

मत्तामेरु अक सचारि, वुज्झइ वुज्झइ जन दुइ चारि ॥

[प्राकृतपैङ्गलम् परि० १, पद्य ४७]

दुई दुई कोठा सरि लिहहु, पढम अक तसु अत ।

तसु आईहि पुणु एककु सउ, पढमे बे बि मिलत ॥

२ ५	१	१	२						
३ १ ५	२	१	३						
४ ५ ५	१	३	१	४					
५ १ ५ ५	३	४	१	५					
६ ५ ५ ५	१	६	५	१	६				
७ १ ५ ५ ५	४	१०	६	१	७				
८ ५ ५ ५ ५	१	१०	१५	७	१	८			
९ १ ५ ५ ५ ५	५	२०	२१	८	१	९			
१० ५ ५ ५ ५ ५	१	१५	३५	२८	९	१	१०		
११ १ ५ ५ ५ ५ ५	६	३५	५६	३६	१०	१	११		
१२ ५ ५ ५ ५ ५ ५	१	२१	७०	८४	४५	११	१	१२	
१३ १ ५ ५ ५ ५ ५ ५	७	५६	१२६	१२०	५५	१२	१	१३	
१४ ५ ५ ५ ५ ५ ५ ५	१	२८	१२६	२१०	१६५	६६	१३	१	१४
१५ १ ५ ५ ५ ५ ५ ५ ५	८	८४	२५२	३३०	२२०	७८	१४	१	१५

अयुगपद्वक्ते पूर्वभागे एकाङ्क दद्यात्, समकोष्ठकपद्वक्तिद्वयमध्ये प्रथम-
पक्ते आदिमकोष्ठे इत्यर्थः । समकोष्ठकपद्वक्तिद्वयमध्ये द्वितीयपद्वक्तेराद्यकोष्ठे
पार्श्वगमाङ्क दद्यात् ।

मात्रासूचीमेर सेसनागगरसवादे जानीयात् ३०००२७७० ।

एककलस्य एक रूप-सर्वलघु तदेव । द्विकलस्य द्वे रूपे-एक गुरु ॥ रूप, द्वितीय ल-द्वयम् । त्रिकलस्य रूपाणि ३, द्वे एकगुरुके, एक त्रिलघुकम् । चतुःकले-एक सर्वगुरु, त्रीणि द्विगुरुणि, एक सर्वल एव ५ । पञ्चकले च त्रीणि द्विगुरुणि, चत्वारि एकगुरुणि, एक सर्वल एव ८ । षट्कले-एक सर्वगुरुरूप, षट् रूपाणि द्विगुरुणि, पञ्चरूपाणि एकगुरुणि, एक सर्वल, एव १३ । सप्तकले-चत्वारि त्रि-गुरुणि, दश द्विगुरुणि, षट् एकगुरुणि, एक सर्वल, एव सर्वाणि २१ । अष्टकले-एक सर्वगुरु, दश त्रिगुरुणि, १५ द्विगुरुणि, सप्त एकगुरुणि, एक सर्व ल, एव सर्वाणि ३४ ।

१०	६	८	७	६	५	४	३	२	१
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१

अत्र '१० एक दश' इति । ततः पुनर्वंशाना नवतिर्गुणने ६०, तत्र द्वाभ्या भागे ४५, ततः ४५ अष्टगुणे ३६०, तत्र ३ भागे लब्ध १२०, तेषां सप्तगुणत्वे ८४०, तत्र ४ भागे लब्ध २१०, तेषां षड्गुणत्वे १२६०, तत्र पञ्चभिर्भागि लब्ध २५२, तेषां पञ्चगुणत्वे १२६० लब्ध, तत्र षड्भिर्भागि २१०, तेषां चतुर्गुणत्वे ८४०, सप्त-भिर्भागि लब्ध १२०, तेषां त्रिगुणत्वे ३६०, तत्र ८ भागे लब्ध ४५, तेषां द्विगुणत्वे ९०, तत्र ९ भागे लब्ध १०, तत्राप्येकगुणने तदेव १०, तत्र एकेन भागे लब्ध १। एव मेवंद्धा सिद्धा १।१०।४५।१२०।२१०।२५२।२१०।१२०।४५।१०।१ इति । ॥

इति मात्रामेर-प्रकरणम् ।

मात्रापताका-प्रकरणम्

प्रथम मात्रापताका—

दत्तयोद्दिष्टवदङ्गान् धामावर्तेन लोपयेदन्त्ये ।

अवशिष्टो वै योऽङ्गस्ततोऽभवत् पङ्क्तिस्तच्चारः [॥६७॥]

अत्र उद्दिष्टाङ्काः १।२।३।५।८ इत्यादयः प्रागुक्तास्तेषु द्विकापेक्षया वामस्थ एकः तयोयोगे ३ इति त्रिके पङ्क्तित्यागः, द्विकाधरित्रिकः तदधः ४, तदधः ६, तदधः ७, तदधः ९ । पुनः, उद्दिष्टाङ्कः ५ द्विकत्रिकयोयोगे जातः, तदधः ८ उद्दिष्टाङ्क-स्तस्य पङ्क्तित्यागः । पञ्चकाधःस्थितेः तदधोऽधः १०।११।१२; पुनः पङ्क्तौ १३, एवं पट्कलस्य पताका । तस्यां त्रिक-पञ्चकयो एकस्य चतुःकस्य उद्दिष्टे लोपात्—अदशनात् त्रिषु गुरुषु प्रथमरूपस्येषु एकस्यैव लोपः । एतावता २।३।४।६।७।९ रूपाणि द्विगुरूणि, पञ्चकादनन्तर उद्दिष्टे ६।७ अङ्कयोर्लोपात् द्विगुल्लोपेन जातानि ५।८।१०।११।१२ रूपाणि एकगुरूणि इत्यर्थः, एकं १३ सर्वलघुरूपम् । एवं सर्वत्र पताका प्रागेव न्यासेन दाहिता—उदाहृता दशमात्रिकस्य ९८ पूर्णरूपैः ।

चतुःकले न्यासः

१	२	५
	३	
	४	

पञ्चकलपताका

१	२	५	८
	४	३	
		६	
		७	

विषमकले पञ्चकलस्य अष्टरूपाणि । तत्र १।२।४ रूपाणि द्विगुरुणि, ५।३।६।७ रूपाणि त्रिकस्य एकस्य लोपात् एकगुरुलोपेन एकगुरुकानि ।

चतुःकले एक सर्वगुरुकं, २।३।४ रूपाणि एकलोपात् एकगुरुणि, पञ्चमं सर्वलम् । इति पताकाकरणम् ।

समाद्धमात्रायां, विषमे तु लोपं प्राप्तोऽङ्कः परोद्दिष्टाङ्काधः स्थाप्य एकलोपे । सप्तकले तत एव लुप्तस्त्रिकः पञ्चकाधः त्रिकाधः, परेपि षडाद्याः सप्तदशान्ता अष्टकपोडशवर्जा उद्दिष्टद्विकाधः ४।६ इत्यङ्कद्वयमेव त्रिगुरुक-एकलघुरूपज्ञापकम् । उद्दिष्टपञ्चकाधः ३।६।७।१० इत्यादीनि रूपाणि द्विगुरुक-त्रिलघुरूपाणि । पुनः त्रयोदशोद्दिष्टाङ्काधः ८।१६।१८।१९।२० एकगुरु-पञ्चलघुरूपाणि । एकं २१ रूपं सर्वलघुकम् ।

पञ्चकलेपि १।२।४ द्विगुरु-एकलघूनि, ५।३।६।७ एकगुरु-त्रिलघूनि, ८ सर्वलम् ।

मात्रापताका

उद्दिष्टा सरि अंका थिप्पहु, वामावत्ते परलइ लुप्पहु ।
एक लोपे इक गुरु जाण, दुइ तिणि लोपे दुइ तिणि जाण ।
मत्तपताका पिगल गाव, जे पाइअ तापर हि मेलाव ॥

[प्राकृतपैङ्गलम् परि. १, पद्य ४८]

चतुःकले ५ भेद

१	२	५
	३	
	४	

द्वि-त्रि-चतुर्यानि एकगुरुणि

१।२।४, रूपद्वयं द्विगुरु

५।३।६।७ एकगुरु

अष्टमं सर्वलघु

पञ्चकले ८ भेद

१	२	५	८
	४	३	
		६	
		७	

षट्कले पताका

१	२	५	१३
	३	८	
	४	१०	
	६	११	
	७	१२	
	९		

षट्कले १ एकं सर्वगुरु

२।३।४।६।७।९, द्विगुरुणि

पञ्चाष्टदशादीनि ५।८।१०।११।१२। एकगुरुणि

त्रयोदशं सर्वलघु

सप्तकलपताका

१	२	५	१३	२१
	४	९	८	
	६	१६		
	७	१८		
	१०	१९		
	११	२०		
	१२			
	१४			
	१५			
	१७			

सप्तकले १।२।४।९ रूपाणि त्रिगुरुणि ।

५।३।६।७।१०।११।१२।१४।१५।१७, रूपाणि द्विगुरुणि ।

१३।८।१६।१८।१९।२० रूपाणि एक-गुरुणि ।

२१ एकं सर्वलघुरूपम् ।

१, २, ३, ५, ८, १३, २१, ३४, ५५, ८६

१	२	५	१३	३४	८६
---	---	---	----	----	----

३	८	२१	५५
४	१०	२६	६८
६	११	२६	७४
७	१२	३१	८१
८	१६	३२	८४
१४	१८	३३	८६
१५	१९	४२	८७
१७	२०	४७	८८
२२	२३	५०	
३५	२४	५२	
३६	२५	५३	
३८	२७	५४	
४३	२८	६०	
५६	३०	६३	
	३७	६५	
	३८	६६	
	४०	६७	
	४१	७१	
	४४	७३	
	४५	७४	
	४६	७५	
	४८	७८	
	४९	७९	
	१	८०	
	५७	८२	
	५८	८३	
	५९	८५	
	६१		
	६२		
	६४		
	६९		
	७०		

दशमात्रिकस्य पताका

उद्दिष्टवदङ्का देयाः । १।२।३।५।८।
१३।२१।५५।८६; अथ १।२ मेलने ३
इति त्रिकस्य लोपोऽस्ति, ३।५ मेलने ८
तस्य लोपः । ८।१३ मेलने २१
तल्लोपः, २१।३४ मेलने ५५ तल्लोपः ।
ते लुप्ताङ्का द्वितीयपङ्क्तौ प्रथम-
पङ्क्तेरघः स्याप्याः ।

२।३।४।६ इत्यादि चतुर्गुणकाणि
रूपाणि ।

५।८।१०।११।१२ इत्यादीनि त्रिगुण-
काणि रूपाणि ।

१३।२१।२६।२९ इत्यादीनि द्विगुण-
काणि रूपाणि, ३४।५५।६८।७४ इत्यादि एकगुण-
काणि सर्वे लम् ।

वर्णमर्कटी-प्रकरणम्

अथ वर्णमर्कटीकरणं यथा—

प्रथमायामाद्यादीन् दद्यादङ्काश्च सर्वकोष्ठेषु ।

अपरस्या तु द्विगुणान् अक्षरसंख्येषु तेष्वेव [॥ ७१ ॥]

प्रथमाया पङ्क्तौ १।२।३।४।५।६।७ इत्याद्यान् लिखेत् । अपरस्या द्वितीय-
पङ्क्तौ द्विगुणान् २।४।८।१६।३२।६४।१२८ इत्यादीन् लिखेत् । ऊर्ध्वाध पङ्-
क्तयः कार्याः । प्रथमपङ्क्तिस्थैरङ्कैर्द्वितीयपङ्क्तिमान् अङ्कान् विभावयेत्—गुण-
येत्, जातैरङ्कैश्चतुर्थपङ्क्तिकोशान् पूरयेत् । २।८।२४।६४।१६०।३८४।८६६
इत्यादि । ततः पञ्चमी पङ्क्ति पठ्ठी च पङ्क्ति चतुर्थपङ्क्तिकोशाङ्काद्धेन १।४।१२।
३२।८०।१६२।४४८ ईदृशाङ्करूपेण पूरयेत् । ततः तुयंपङ्क्तिस्थै पञ्चमपङ्क्ति-
स्थान् अङ्कान् सम्मील्य तृतीयपङ्क्तिस्थकोशान् [३।१२।३६।६६।२४०।५७६।
१३४४।] पूरितान् कुर्यात् ।

एवमनया मर्कट्या वर्णवृत्त १, तद्भेदाः २, सेपा माना ३, वर्णा ४, गुरव ५,
लघव ६ पदपि पदार्था ज्ञायन्ते । प्रस्तारस्यैते प्रकारा बोध्याः । यन्त्रन्यास
प्रागुक्तः ।^१

एष एकाक्षरवृत्त तस्य भेदद्वय, मात्रास्तिस्रः, वर्णद्वय, एको गुरु, एको लघु ।
द्व्यक्षरे वृत्ते चत्वारो भेदाः, द्वादशमात्रा, अष्टौ वर्णा, चत्वारो गुरवस्तावत् एव
लघव । एष सर्वत्र ज्ञेयम् ।

आदीति । पूरयेदिति । कुर्यादिति । वृत्तमिति । सूत्रचतुष्टयं गतार्थम् ।

[॥ ७२-७५ ॥]

अक्षरसले कीठा किज्जसु, छह पती सहि अका दिज्जसु ।
एक्कहि आइहि पढमा पती, दूसरि ठूणा वेवि णिमती ॥
आइ वेवि गुण चौढ ठविज्जसु, ता अद्धे पचमि छट्ठमि किज्जसु ।
चौथो पचइ द्दुह मेलिज्जसु, तीसरि पती अका दिज्जसु ॥
वित्त पअ भेअ मत्त अरु वण्णह, पचमि छट्ठमि लह गुरु गण्हह ।

गुरु लहु माला जुयलं, वेय वेय ठाविज्जे गुरु-लहुयं ।
तिस पिच्छे इम ठाविज्जइ, अद्ध गुरु अद्ध लहुयाइं ॥

वर्णमर्कटी

वृत्त	१	२	३	४	५	६	७
भेद	२	४	८	१६	३२	६४	१२८
मात्रा	३	१२	३६	८६	२४०	५७६	१३४४
वर्ण	२	८	२४	६४	१६०	३८४	८९६
लघु+	१	४	१२	३२	८०	१९२	४४८
गुरु	१	४	१२	३२	८०	१९२	४४८

+ अत्र लघुसंख्या वृत्तमौक्तिके पठ्यतावृत्ता युक्ता च ।

आदिपंक्तिस्थित एकः तेन द्वितीयपंक्तिगः द्विकः गुणितः जातं २, एवं
तुर्यपंक्तिगः द्विकः सिद्धः । आदिपंक्तिगद्विकेन तदधः ४ गुण्यते जातं ८, एवं
त्रिकेन अष्टगुणने २४, चतुष्केन षोडशगुणने ६४, पञ्चकेन ३२ गुणने १६०,
षट्केन ६४ गुणने ३८४, सप्तकेन १२८ गुणने ८९६, जातं तुर्यपंक्तिभरणम् ।
तुर्यपंक्तिस्थाङ्कानां अर्द्धेन पञ्चमी पष्ठी च पंक्ति पूरयेत् । तुर्यपंक्तिस्थं अर्द्धं
पञ्चमपंक्तिस्थाङ्केन योज्यते तदा तृतीयपंक्तिस्था अङ्का जायन्ते ।

इति वर्णमर्कटीकरणम् ।

मात्रामर्कटी-प्रकरणम्

अथ मात्रामर्कटीमाह—

कोष्ठान् मात्रासम्मितान् पवितपट्क,

कुर्यान्मात्रामर्कटीसिद्धिहेतो ।

तेषु द्वघादीनादिपङ्क्तावयाङ्क-

स्यक्त्वाऽऽद्याङ्क सर्वकोशेषु दद्यात् ॥ ७६ ॥

दद्यादङ्कान् पूर्वयुग्माङ्कतुल्यान्,

त्यक्त्वाऽऽद्याङ्क पक्षपक्तावयापि ।

पूर्वस्याङ्कैर्भावयित्वा ततस्ता,

कुर्यात् पूर्णान्निप्रपक्तिस्त्यकोष्ठान् ॥ ७७ ॥

वृत्त	१	२	३	४	५	६	७	८	९
मिष्टा	१	२	३	५	८	१३	२१	३४	५५
मात्रा	१	४	९	२०	४०	७८	१४७	२७२	४९५
वर्णा	१	३	७	१५	३०	५८	१०९	२०१	३६५
संघव	१	२	३	१०	२०	३८	७१	१३०	२३५
गुरव	०	१	२	५	१०	२०	३८	७१	१३०

आद्याङ्क एकक मुक्त्वा द्वितीयपङ्क्ती द्वघादीन्-द्वघादिमिरेव भावयित्वा-
गुणयित्वा, नेत्रशब्देन अत्र हरनेत्राणि त्रीणीति तृतीया पवित पूरयेन्, तदङ्का
४१६।२०।४०।७८।१४७।२७२।४९५ इय तृतीया पक्ति ।

तुर्मा पक्ति विमुच्य पञ्चमी पक्ति वक्ति—प्रथमे द्वितीयमङ्क, द्वितीयकोष्ठे
च पञ्चमाङ्कमपि दत्त्वा बाणद्विगुण तद्द्विगुण नेत्र (३) तुयं (४) यो दद्यात् ।
द्विकस्य द्विकेन गुणकारकरणापेक्षया प्रथमकोश, द्विकाघस्तन वर्णाङ्कापेक्षया
त्रिकाघस्तन कोश, तत्र द्विक ततोऽग्रे द्वितीयकोष्ठे पञ्चमाङ्क दत्त्वा तत नेत्र-
(३) तुयं (४) कोशयो बाणा -पञ्च, तद्द्विगुण-दशक, पुन तद्द्विगुण-विंशति
२० दद्यात् ।

एकीकृत्येति । २।५।१०।२० एतान् अङ्कान् सम्मोत्य जाते ३७ अङ्के एकं अङ्कं दत्त्वा ३८ गुणकारापेक्षया पञ्चमपङ्क्तेः पञ्चमं कोशं पूर्णं कुर्यात् [॥७६॥]

त्यक्त्वा पञ्चममिति । २।१०।२०।३८ एव ७० एकं तत्रापि दत्त्वा ७१ पञ्चमपङ्क्तेः पष्ठं कोशं पूरयेत् [॥ ८० ॥]

कृत्वैक्यमिति । २।५।१०।२०।३८।७१ एषां ऐक्ये-मेलने जातं १४६ तत्र पञ्चदशाङ्कं १५ एकं च हित्वा षोडशोन्तवे १३० पञ्चमपङ्क्तेः सप्तमकोशं मुनि-
(७) प्रमितं पूरयेत् [॥८१॥]

एवमिति । स्पष्टार्थम् [॥८२॥]

एवमिति । अनया रीत्या पञ्चमपङ्क्तिं पूरयित्वा प्रथमं गुणकारापेक्षया प्रथमकोशे द्विकाधस्तने एकाङ्कं दत्त्वा पञ्चमपङ्क्तिस्थैरङ्कैः षष्ठी पङ्क्तिं पूरयेत् [॥८३॥]

एकीकृत्येति । पञ्चमपङ्क्तिस्थैरङ्कैः षष्ठपङ्क्तिस्थाङ्कानां मीलनेन चतुर्थ-पङ्क्तिं पूर्णं कुर्यात् । यथा—१।२ योगे ३, पुनः ५।२ योगे ७, पुनः ५।१० मीलने १५, पुनः २०।१० मीलने ३० इत्यादि ज्ञेयम् [॥८४॥]

अथ मात्रामकंटी

छह छह कोठा पंती पार, एकक कला लिखि लेहु विचार ।
बीए आइहि पढमा पंती, दोसरि पुब्ब जुम्ल तिब्बंती ॥
पढम बेवि गुणि अका लिज्जसु, छट्ठइ पंती तिहि भरि दिज्जसु ।
चौथी अका पुब्ब हि देय्यहु, तीसरि तिर पर तहि करि लेखहु ॥
तीसरि सम छह माले अंका, वाचे पंचमि भरहु निसंका ।
पच इकठ्ठहु ताहि समानहि, चौथी लिखहु लिखाग्रहु आनहि ॥

सोरठा

लिहि साग्रर परजन्त, इहि विहि कइ पिगल ठिग्रउ ।
अक भरण यह मत्त, पढम भेग्र भणि भणि भरहु ॥

दोहा

वित्त भेग्र गुरु सधु सहित, अक्खर कला कहन्त ।
पिगलक इम ककरि कहिअ, जिह गइंद सरब्भंत ॥

मात्रामर्कटी

१	२	३	४	५	६	७	८	९	शु.
१	२	३	४	५	६	७	८	९	शु.
०	१	२	३	४	५	६	७	८	शु.
१	२	३	४	५	६	७	८	९	शु.
१	२	३	४	५	६	७	८	९	शु.
१	२	३	४	५	६	७	८	९	शु.
१	२	३	४	५	६	७	८	९	शु.

१ एक तृतीयपक्षितस्य, द्विक तुर्यपक्षितस्य एकीकृत्य पञ्चमपक्षी त्रिक ।
एव २।५ ऐक्ये ७, तथा ५।१० ऐक्ये १५, १०।२० ऐक्ये ३०, पुन ३०।२०
ऐक्ये ५०, पुन ३०।७१ ऐक्ये १०८, पुन. ७१।१३० ऐक्ये २०१, पुन
तृतीयपक्षितस्य १३० तत्र तुर्यपक्षितस्य २३५ ऐक्ये ३६५; एव पञ्चमीपक्षित
पूरणीया ।

द्वयोद्विगुणत्वे ४, त्रिकस्य त्रिगुणत्वे १, चतुष्कस्य पञ्चगुणत्वे २०, पञ्चाना
अष्टगुणत्वे ४०, षोडशाना पङ्गुणत्वे ७८, सप्ताना २१ गुणे १४७, अष्टाना
३४ गुणे २७२, नवाना ५५ गुणने ४६५ इति पष्ठी पक्षित । प्रथमद्वितीय-
पक्षितभ्या निष्पन्ना ।

चतुर्थीपक्षितस्तृतीयपक्षिसमा पर पूर्णाध एक, तत २ । ५।१०।२०।३०।
७१।१३०। अथ तृतीयपक्षितस्य १३० तस्याध तुर्यपक्षितो २३५ ।

घृत प्रमेदो मात्रा च, वर्णा लघुगुरू तथा ।

एते षट् पक्षितः पूर्ण—प्रस्तारस्य विभान्ति वं [॥ ८५ ॥]

अत एव लघूना वर्णाना सख्याङ्काः पञ्चम्या षट्कतो न्यस्ता । गुरव-
पष्ठधाम् । वर्णमर्कट्या लघुन्यास षष्ठपक्षितो, गुरुन्यास पञ्चमपक्षितो वर्णपु
गुर्वादित्वात् । मात्रामर्कट्या लघुसख्या पञ्चम्या युक्ता लघ्वादित्वात् । तथापि
अष्टमकोष्ठे २३५ भरण, अनुवर्तमपि २।५।१०।२०।३०।७१।१३० एषा ऐक्ये
२७६, तत्र ४० हीनकरण, न्यासे ५ अङ्कादुपरि तिर्यक् १५ ततोऽप्युपरि षट्कतो
तिर्यक्कोशे ४० सङ्ग्राह्यात् । एव शेष २३६ ततोऽपि सप्तमकोशभरणवत् एकीनत्वे
२३५ लघवो नवकलच्छन्दसि ।

अथ उद्दिष्टादिवत् सर्वे प्रत्ययाः चतुर्विंशतिर्ज्ञेयाः । प्रस्तार १, नष्ट २, उद्दिष्ट ३, लग्नक्रिया ४, संख्या ५, अध्वा ६, मेरुः ७, पताका ८, मर्कटी ९, समपाद १०, अर्धसमपाद ११, विषमपादता १२ । एते वर्णमात्राभ्यां चतुर्विंशतिः ।
कीतुकहेतुः—

वृत्तभेदाः

१. [एकाक्षरे]	२
२. [द्व्यक्षरे]	४
३. [त्र्यक्षरे]	८
४. [चतुक्षरे]	१६
५. [पञ्चाक्षरे]	३२
६. [षडक्षरे]	६४
७ [सप्ताक्षरे]	१२८
८. [अष्टाक्षरे]	२५६
९. [नवाक्षरे]	५१२
१०. [दशाक्षरे]	१,०२४
११. [एकादशाक्षरे]	२,०४८
१२. [द्वादशाक्षरे]	४,०९६
१३. [त्रयोदशाक्षरे]	८,१९२

वृत्तभेदाः

१४. [चतुर्दशाक्षरे]	१६,३८४
१५. [पञ्चदशाक्षरे]	३२,७६८
१६. [षोडशाक्षरे]	६५,५३६
१७. [सप्तदशाक्षरे]	१,३१,०७२
१८. [अष्टादशाक्षरे]	२,६२,१४४
१९. [एकोनविंशाक्षरे]	५,२४,२८८
२०. [विंशाक्षरे]	१०,४८,५७६
२१. [एकविंशाक्षरे]	२०,९७,१५२
२२. [द्वाविंशाक्षरे]	४१,९४,३०४
२३. [त्रयोविंशाक्षरे]	८३,८८,६०८
२४. [चतुर्विंशाक्षरे]	१,६७,७७,२१६
२५. [पञ्चविंशाक्षरे]	३,३५,५४,४३२
२६. [षड्विंशाक्षरे]	६,७१,०८,८६४

[वृत्तिकृतप्रशस्तिः]

कोट्यस्त्रयोदश-द्वाचत्वारिंशलक्षकाः नगाः ।

भूः सहस्राणि षड्विंशत्यथा सप्तशती पुनः ॥ १ ॥

प्रस्तारपिण्डसंख्येय विधृता वृत्तमौक्तिके ।

बोधनात् साधनाल्लभ्या येषां नालस्यवश्यता ॥ २ ॥

उद्दिष्टादिषु वृत्तमौक्तिकमिति व्याख्यातवान् श्वेतसिक्,

श्रीमेघाद्विजयाख्यवाचकवरः प्रौढया तपाम्नायिकः ।

यत्सम्यग्विवृत्तं न बाधनवगमान्मिथ्याघृतं सज्जनै-

स्तत्संशोध्य शुभं विधेयमिति मे विज्ञप्तिमुक्तालता ॥ ३ ॥

समित्ययद्विभू १७५५ वर्षे, प्रौढिरेपाऽभवत्स्थिते ।

भान्वाविजयाध्यायहेतुतः सिद्धिमाश्रिता ॥ ४ ॥

इति श्रीवृत्तमौक्तिकतुर्गमबोध

श्रीरस्तु । वाचकपाठकानाम् ।

प्रथम परिशिष्ट

टगणादि कला-वृत्तभेद-पारिभाषिक शब्द सङ्केत

१. टगण^१ ६ मात्रा, भेद १३—

१. ३३३	हर ^२
२. ११३३	शक्ति
३. १३३१	सूर्य ^३
४. ३११३	शक्र ^४
५. १११३	शेष
६. १३१३	अहि
७. ३१३१	कमल ^५
८. १११३१	धातु ^६
९. ३३११	शलि
१०. ११३११	शङ्ख
११. १३१११	ध्रुव
१२. ३११११	धर्म
१३. ११११११	शालि ^७

१ ट ठ ड. ढ. ण गणों की जत्तायें, प्रस्तार-भेद, नाम तथा पर्याय प्राकृतपैगल, बाणी-भूषण और वाग्वत्सल में वृत्तमीनितक के अनुसार ही हैं किन्तु प्राकृतपैगल में ट ठ ड ढ. ण के स्थान पर छ प, च, त, द गण नाम भी स्वीकृत हैं। स्वयम्भूषण और कविदर्पण में टादि के स्थान पर छ प, च, त, द और प त, ट, च क, स्वीकृत है। इन दोनों ग्रंथों में केवल छ पांच, चार आदि जत्ताविधान ही दिए हैं किन्तु इनके प्रस्तार-भेद, नाम तथा पर्याय की सूची नहीं है। हेमचन्द्रोय छन्दोनुत्तासन में प प च त द गण और प्रस्तार भेद दिये हैं किन्तु नामादि की सूची नहीं है।

२ बाणीभूषण और वाग्वत्सल में हर के स्थान पर शिव है।

३ सूर्य के स्थान पर प्राकृतपैगल में सूर, बाणीभूषण में दिनपति, और वाग्वत्सल में दिनेश्वर है।

४. शक्र के स्थान पर बाणीभूषण में सुरपति और वाग्वत्सल में सुरेश है।

५ कमल के स्थान पर बाणीभूषण और वाग्वत्सल में सरोज है।

६. धातु के स्थान पर प्राकृतपैगल में ब्रह्मा और वाग्वत्सल में धाता है।

७ शालि के स्थान पर प्राकृतपैगल, बाणीभूषण और वाग्वत्सल में शालिकर है।

२. ठगण ५. मात्रा, भेद —

१. १५५ इन्द्रासन, सुनरेन्द्र, अधिप, कुञ्जर पर्याय^१, रदन, मेघ, ऐरावत^२, तारापति^३।
२. ५१५ सूर्य^४, वीणा, विराट^५, भृगेन्द्र, अमृत, विहग, गरुड पर्याय^६, जोहल, यल, भुजंगम^७, पत्नी
३. १११५ घाप
४. ५५१ हीर
५. ११५१ दोसर
६. १५११ कुसुम
७. ५१११ अहिगण
८. १११११ पापण

तथा प्रहरण^८ (घायुष) के विविध नाम पञ्चकल के वाचक हैं ।

१. कुञ्जर के पर्यायवाची शब्दों में वृक्षमौक्तिक के मतानुसार 'गज' शब्द सम्मिलित नहीं है । 'गज' को चतुर्मात्रिक स्वीकार किया है ।
 २. वृक्षजातिसमुच्चय के अनुसार पञ्चमात्रिक १५५ ऐरावत के निम्न पर्याय और स्वीकृत हैं—सुरगज, सुरवारण, सुरहस्तिन् ।
 ३. प्राकृतपैगल के अनुसार पञ्चमात्रिक १५५ में गगन, ऋष्य और सस्य तथा वाग्वत्सल में दन्नावल पयोददन्त भी स्वीकृत हैं ।
 ४. सूर के स्थान पर प्राकृतपैगल, वालीभूषण और वाग्वत्सल में 'सूर' है ।
 ५. विराट के स्थान पर प्राकृतपैगल और वालीभूषण में बिहाल है ।
 ६. वृक्षजातिसमुच्चय में गरुडपर्यायों में निम्न शब्द और स्वीकृत हैं—पक्षिनाथ, विहगनाथ, विहगाधिपति, विहगपति, सुपर्ण ।
 ७. प्राकृतपैगल वालीभूषण और वृक्षमौक्तिक में 'भुजंगम' को १५५ पञ्चमात्रिक स्वीकार किया है जब कि वृक्षजातिसमुच्चय में 'भुजगेन्द्र, भोगिन्, विषधर' को १११५ पञ्चमात्रिक माना है ।
 ८. वृक्षमौक्तिककार ने प्रहरण (घायुषों) के विविध नाम पञ्चकल के वाचक माने हैं, ऐसा मानते हुए भी 'प्रहरण' और 'वय्य' को ११५ चतुष्पल से, 'पञ्चसर' को ११ चतुष्पलवाची, 'तोमर' को १५ निमात्रिक और 'बाण' को १११ चतुष्पलवाची और एकमात्रिक भी स्वीकार किया है । वृक्षजातिसमुच्चयकार ने तोमर, प्रहरण और बाण को पञ्चकलवाची ही माना है । साथ ही प्रहरण के नामों की निम्नलिखित टालिका भी दी है—अरानि, अरि, घायुष, बल्लभ, बरबाल, सुर्य, घाप, तोमर, धनुस्, पट्टि, प्रातम्ब, बाण, बाणायन, मुद्गर, रपाशु, यन्त्रिदण्ड, सर, धारासन, तिलीमुख ।
- वृक्षजातिसमुच्चय में पुरोहित, पुरोषत् और मन्त्रिन्^९ शब्दों को चतुष्पल एक पञ्चकलवाची स्वीकार किया है । वृक्षमौक्तिक, प्राकृतपैगल और वालीभूषण में इनका कोई भी उल्लेख नहीं है ।

३ डगण ४. मात्रा, ५ भेद—

१. ५५ (गुरुगुप्त)^१ कर्ण, गुरतलता गुरुगुप्त, कर्णसमान, रसिक, रसलान, सुमतिलम्बित, मनोहर^२, सहस्रहित^३
२. ११५ (गुर्वन्त) करतल, कर^४, पाणि, कमल, हस्त, ग्रहरण, भुजवण्ड, बाहु, रत्न, दक्ष गजाभरण, भुजाभरण
३. १५१ (गुरुमध्य) पयोधर^५, भूपति^६, नायक, गजपति, नरेन्द्र, कुच बाचक शब्द, गोपाल, रञ्जु, पवन
४. ५११ (आविशुद) वसुचरण, वहन, पितामह, सात, पद्म-पर्याय, गण्ड, बलभद्र, जङ्घायुगल, रति^७
५. ११११ (सर्वलघु) विप्र, द्विज, जाति, शिलर, पञ्चशर, बाण, द्विजवर

तथा गज, रत्न, तुरगम् और पदाति ये सब चतुष्कल के बाचक हैं ।

- १ चतुर्मात्रिक ५५ के और ११११ के पर्याय वाणीभूषण में प्राप्त नहीं है ।
- २ मनोहर के स्थान पर प्राकृतपैगल में 'मनहरण' है ।
- ३ प्राकृतपैगल में ५५ चतुर्मात्रिक में सुवर्ण अधिक है ।
४. 'करपल्लव' को भी ११५ चतुर्मात्रिक, वृत्तजातिसमुच्चयकार में माना है । वाग्वल्लभ-कार में अलकृति भी स्वीकार किया है ।
- ५ वृत्तजातिसमुच्चय में पयोधर के बाची 'स्तन, स्तनभार' भी स्वीकृत है, जब कि स्तनादि का प्रयोग वृत्तमोक्तिककार ने कुचवाची शब्दों में किया है । वाग्वल्लभ में पयोधत्, पयोद, जलद, जलधर, वारिद भी स्वीकृत हैं ।
- ६ भूपति के पर्यायों में वृत्तजातिसमुच्चय में नराधिप, पाण्डि, भूमिनाथ, राजन् और सामन्त भी स्वीकृत हैं । प्राकृतपैगल में नरपति, उद्गतनायक अधिक है । वाणी-भूषण में मनुजपति अधिक है । प्रा० पं० और वाणीभूषण में भद्रवपति और चक्रवर्ती अधिक है, जब कि प्रा. पं० वृत्तजातिसमुच्चय और वाणीभूषण द्वारा समर्पित वसु-धाधिप अधिक है । वाग्वल्लभ में मनुजपति, चक्राधीश, तुरगपति और वर्य अधिक हैं ।
- ७ प्राकृतपैगल में चतुर्मात्रिक ५११ में मूपुर भी स्वीकृत है; जब कि प्राकृतपैगल, वृत्त-मोक्तिकादि में द्विमात्रिक ५ में स्वीकृत एवं प्रयुक्त है । वाग्वल्लभ में वहन, बलभद्र, जङ्घायुगल और रति शब्द है एवं पिता, हतायुध और पावक अधिक है ।
- ८ वृत्तजातिसमुच्चय में चतुष्कलवाची गजादि के निम्नपर्याय स्वीकृत हैं—करि, कुञ्जर, गज, मातग, वारण, वारण्डेन्द्र, हस्तिन् तुरग, हरि, योष, स्यन्दन । जब कि वृत्त-मोक्तिककार ने गजातिरिक्त कुञ्जर पर्यायों को १५५ पञ्चमात्रिक स्वीकार किया है ।

४. ढगण ३ मात्रा भेद, ३—

१. । ऽ ध्वज^१, चिह्न, चिर, चिरालय, तोमर, पत्र, चूतमाला^२, रस, वास, पवन, वलय, तुम्बुल,
२. ऽ । करताल, पटह^३, ताल सुरपति आनन्द, तूर्य निर्वाण सागर^४
३. । । । भाव^५, रस, ताण्डव और मामिनी के पर्यायवाची शब्द

५. णगण २ मात्रा, भेद २—

१. ऽ मृपूर, रसना, चामर, फणि, मुग्धाभरण कनक, कुण्डल, वक्त्र, मानस, वलय, वक्त्रण, हारावली, ताटक, हार, केयूर^६
२. । । सुप्रिय, परम^७

एक लघु के नाम निम्न प्रकार हैं—

हार, मेढ, इण्ड, कनक, शब्द, रूप, रस, गन्ध, काहल, पुष्प, शल, तथा धाण^८ ।

१. वृत्तजातिसमुच्चय मे । ऽ त्रिकलवाची निम्न शब्द और अधिक हैं—बदलिका, ध्वज-पट, ध्वजपताका, ध्वजाग्र, पताका, वैजयन्ती । वाग्वत्सल मे पटच्छदन अधिक है ।
२. बाणीभूषण मे चूतमाला के स्थान पर चूतमाला है । वाग्वत्सल मे चूतभवा, स्रग्, आभ्रमाला है ।
३. वृत्तमौक्तिककार मे तूर्य और पटह को ऽ । त्रिकलवाची माना है, जब कि वृत्तजाति-समुच्चयकार ने तूर्य और पटह को । । । त्रिकलवाची माना है ।
४. प्राकृतपैंगल मे 'छन्द' ऽ । त्रिकलवाची अधिक है । वाग्वत्सलकार ने सला, अय, आय' अधिक स्वीकार किये हैं और सुरपति के स्थान पर स्वपति तथा आनन्द के स्थान पर नन्द पर्याय स्वीकार किये हैं ।
५. वृत्तमौक्तिक मे भाव और रस । । । त्रिकलवाची स्वीकृत हैं, और रस । एकल-वाची भी । जब कि वृत्तजातिसमुच्चय मे । । भाव और रस । । द्विमात्रिक स्वीकृत हैं । वाग्वत्सल मे । । मे मुत्तमाविनी भी स्वीकृत है ।
६. वृत्तजातिसमुच्चय मे ऽ द्विमात्रिक मे निम्न शब्द भी स्वीकृत हैं—कटक, पप्पराय, भूषण, मणि, मरकठ, मुक्ता, मोक्तिक, रत्न, विभूषण, हारसला । बाणीभूषण मे 'मञ्जरी' भी स्वीकृत है । वाग्वत्सल मे मञ्जरी, मञ्जीर, कटक भी स्वीकृत हैं ।
७. प्राकृतपैंगल मे सुप्रिय, परम के स्थान पर निजप्रिय, परमप्रिय हैं ।
८. सपुवाचक । शब्दों मे प्राकृतपैंगल मे 'सला' और बाणीभूषण एव वाग्वत्सल मे स्परां भी स्वीकृत है ।

इस पद्धति से भगणादि ८ गणों के पर्याय निम्नलिखित होते हैं—

१. भगण — हर
२. यगण — इन्द्रासन, मुनरेन्द्र, अधिप, कुञ्जरपर्याय, रवन, मेघ, ऐरावत, तारापति ।
३. रगण — सूर्य, घोषा, विराट्, मृगेन्द्र, समृत, विहग, गण्ड-पर्याय, जोहल, यक्ष, भुजंगम् ।
४. तगण — करतल, कर, पाणि, कमल, हस्त, अरुण, भुजवण्ड, बाहु, रत्न, वज्र, गजामरण, भुजामरण
५. लगण — हीर ।
६. जगण — पयोधर, भूपति, नायक, गजपति, नरेन्द्र, कुच धाधक शब्द, गोपाल, रत्न, पवन ।
७. भगण — वसुचरण, बहून, पितामह, तात, पद-पर्याय, गण्ड, ब्रह्मभट्ट, जंघा-पुगल, रति ।
८. भगण — भाव, रस, ताण्डव और भाभिनी के पर्यायवाची शब्द ।



द्वितीय परिशिष्ट

(क) मात्रिक-छन्दों का अकारानुक्रम

वृत्तनाम	पृष्ठ संख्या	वृत्तनाम	पृष्ठ संख्या
अ		कानकम् ^८	२३
अजयः ^८	२३	कमलाकरः ^८	२३
अतिभुल्लनम् (टि.)	३३	कमलम् (रोला) ^८	१७
अग्न्यः ^८	२१	" (पट्पद) ^८	२३
अनुहरिगीतम् (टि.)	४०	कम्पिनी ^८	१६
अरिल्ला	२७	करतल ^८	१७
अहिधरः ^८	१४	करतलम् ^८	२३
आ		करभः ^८	१४
आभीरः	३६	करभी (रह्वा)	२६
इ		कर्णः ^८	२३
इन्दुः (रोला) ^८	१७	कलवत्राणी ^८	१६
इन्दुः (पट्पद) ^८	२३	कलशः ^८	१२
उ		कान्तिः ^८	६
उत्तोजाः ^८	२१	कामकला	३७
उद्गलितकम्	५५	काली ^८	१६
उद्गाथा	११	काव्यम्	१६
उद्गम्भः ^८	२१	कोत्तिः ^८	६
उत्तुरः ^८	१४	कुञ्जरः ^८	२३
उपभुल्लनम् (टि.)	३३	कुण्डलिका	३१
उल्लासम्	२०	कुम्भः (रोला) ^८	१७
ऋ		कुम्भः (पट्पद) ^८	२३
ऋद्धिः ^८	६	कुम्भ ^८	१२
ए		कुररो ^८	६
क		कुमुदाकरः ^८	२४
कच्छपः ^८	१४	कूर्मः ^८	२३
कण्ठः ^८	२१		

■ विहित छन्द भाषा, स्वगन्ध, दोहा, रोला, रसिवा, काव्य और पट्पद के भेद हैं।

(टि.)—टिप्पणी में उद्धृत छन्द ।

वृत्तनाम	पृष्ठ संख्या	वृत्तनाम	पृष्ठ संख्या
कृष्ण ८	२३	चारसेना (रङ्गा)	३०
कोविल (रोला) ८	१७	घूर्णा ८	६
" (पदपद) ८	२३	घुलिघाला	३५
क्षमा ८	६	घोबोला	२८
क्षीरम् ८	१२	घोषया	१८
ख		छ	
खञ्जा	३४	छाया ८	६
खर ८	२३	ज	
ग		जङ्गम ८	२३
गगनम् (स्कन्धक) ८	१२	जनहरणम्	४४
" (पदपद) ८	२४	झ	
गगनाङ्गणम्	३२	भुत्तण (टि)	३३
गण्ड ८	२१	भुत्तणा	३२
गणेश ८	१७	त	
गन्धानकम्	१७	तालझुनी (रङ्गा)	३०
गम्भीरा ८	१६	तालाङ्ग (स्कन्धक) ८	१२
गरुड ८	२३	तालाङ्ग (रोला) ८	१७
गलितकम्	५०	" (काव्य) ८	२१
गाया	६	" (पदपद) ८	२३
ग्राहिनी	११	तालाङ्गा ८	१६
" (टि)	१०	गुरण ८	२१
गाहू	११	त्रिकला ८	१४
ग्रोष्म ८	२३	त्रिभङ्गी	४२
गीरी ८	६	व	
घ		दण्ड ८	२१
घत्ता	१६	दण्डकला	३७
घत्तानन्द	१६	दम्भ ८	२१
घनाक्षरम्	४६	दधं ८	२१
च		दाता ८	२३
चक्री ८	६	दिवस ८	२१
चन्दनम् ८	२३	दीप ८	२४
चमर ८	१७	दीपकम्	३८
चल ८	१४	दुमिलका	४२
		दृप्ता ८	२१

वृत्तनाम	पृष्ठ संख्या	वृत्तनाम	पृष्ठ संख्या
वेही ^८	६	बिडाल ^८	१४
बोहा	१४	बुद्धि (माया) ^८	६
द्युतिपदम् ^८	२३	" (पटपद) ^८	२३
द्विपदी	३२	बृहन्नर ^८	२३
		ब्रह्मा ^८	१२
			भ
धवल ^८	२३	भद्र ^८	१२
धात्री ^८	६	भद्रा (रहा)	१०
ध्रुव ^८	२३	भूपाल ^८	१२
		भूपपणितकम्	५१
	न	भृङ्ग ^८	२१
नगरम् ^८	१२	भ्रमर (बोहा) ^८	१४
मन्द ^८	१२	" (काव्य) ^८	२१
मन्दा (रहा)	२६	" (पटपद) ^८	२४
नर (बोहा) ^८	१४	भ्रामर ^८	१४
" (स्वगम्य) ^८	१२		म
" (पटपद) ^८	२४	भण्डूक ^८	१४
नवरत्न ^८	२४	मत्स्य (बोहा) ^८	१४
मील ^८	१२	" (पटपद) ^८	२३
	प	मद ^८	२३
परभटिका	२७	मदकर ^८	२३
पद्मावली	३१	मदकल (स्वगम्य) ^८	१२
पयोधर (बोहा) ^८	१४	" (बोहा) ^८	१४
" (पटपद) ^८	२३	मदन (स्वगम्य) ^८	१२
परिपमं ^८	२१	" (काव्य) ^८	२१
परिवृत्ताहीरवम् (टि)	४४	" (पटपद) ^८	२३
पादावुल्लवम्	२७	मदनगुहम्	४५
प्लवङ्गम	३६	मदिरा सवया	४७
प्रतिपदा ^८	२१	मधुमार	३६
	न	मन्त्रहरिणीतम् (टि)	४०
ब-प ^८	२१	म-यान ^८	२१
बलभद्र ^८	२१	मनोहर ^८	२४
बलि ^८	२३	मनोहरहरिणीतम्	४१
बली ^८	२१	मयूर ^८	२१
बाल ^८	२१		

वृत्तनाम	पृष्ठ सख्या	वृत्तनाम	पृष्ठ सख्या
मरहट्टा	४६	राम	२१
गराल (दोहा) ^८	१४	रामा ^८	६
" (काव्य) ^८	२१	रुचिरा	३७
मकंटः (दोहा) ^८	१४	रुद्र ^८	१७
" (काव्य) ^८	२१	रेखा ^८	१६
" (पदपद) ^८	२३	रोसा	१५
मल्लिका सवया	४८	स	
मल्ली सवया	४८	सम्भी ^८	६
महामाया ^८	६	सधुहरिणीतम् (टि.)	४०
महाराष्ट्र ^८	२१	सधु हीरकम् (टि.)	४४
" अपर. ^८	२१	सज्जा ^८	६
मागधी सवया	४८	सम्बितागलितकमपरम्	५३
माधवी सवया	४८	सलितागलितकम्	५४
मानस ^८	२३	सीतावती	३६
मानी ^८	६	ख	
मालती सवया	४७	खण. ^८	१२
माला	३४	खलित ^८	२१
मालागलितकम्	५५	खलिताङ्ग ^८	२१
मुखगलितकम्	१५	खसन्त ^८	२१
मुखमालागलितकम्	५५	खसु ^८	२४
मृगेन्द्र ^८	२१	खानर ^८	१४
मेघ ^८	१७	खारण. (स्कन्धक) ^८	१२
मेघकर ^८	२३	" (पदपद) ^८	२३
मेघ ^८	२३	खसिता ^८	६
मोह ^८	२१	खलिप्तागलितकम्	५३
मोहिनी (रङ्गा)	३०	खगलितकम्	५०
र		खगाया	१०
रञ्जनम् ^८	२३	खजय. (काव्य) ^८	२१
रङ्गा	२६	" (पदपद) ^८	२३
रत्नम् ^८	२४	खद्या ^८	६
रसिका	१५	खिधि ^८	२३
" (टि.)	१६	खिमति ^८	१२
राजसेना (रङ्गा)	३०	खिलम्बितगलितकम्	५२
राजा ^८	२१	खिन्वा ^८	६

वृत्तानाम	पृष्ठ संख्या	वृत्तानाम	पृष्ठ संख्या
विषमितागतितकम्	५४	श्येन. ॥	१४
वीर. ॥	२३	श्या ॥	२३
वंताल. ॥	२३		
श्याघ्र. ॥	१४	प	
श		षट्पदम्	२३
शक्र. ॥	२१	स	
शङ्खः ॥	२४	सङ्गलितकम्	५२
शब्द. ॥	२४	" अपरम्	५३
शान्भुः (रोता) ॥	१७	समगलितकम्	५२
" (काव्य) ॥	२१	समगलितकमपरम्	५३
शरः (स्वग्यक) ॥	१२	समर (काव्य) ॥	२१
" (षट्पद) ॥	२३	" (षट्पद) ॥	२३
शरभः (बोहा) ॥	१४	सरित् ॥	१२
" (स्वग्यक) ॥	१२	सर्प. ॥	१४
" (काव्य) ॥	२१	सहस्रनेत्र. ॥	२१
शरभः (षट्पद) ॥	२३	सहस्राक्ष ॥	१७
शल्य ॥	२४	सारंग (स्वग्यक) ॥	१२
शशी (स्वग्यक) ॥	१२	" (षट्पद) ॥	२३
" (षट्पद) ॥	२३	सारस ॥	२३
शारद ॥	२३	सारसी ॥	२
शार्ङ्गलः (बोहा) ॥	१४	सिद्धि (गाया) ॥	२
" (षट्पद) ॥	२३	" (षट्पद) ॥	२३
शिपा	३४	सिंह (काव्य) ॥	२१
शिव ॥	१२	" (षट्पद) ॥	२३
शुद्ध ॥	१२	सिंहवित्तोक्त	३८
शुनक ॥	१४	सिंहिनी	१२
शुभङ्गुर. ॥	२३	सिंहो (टि.)	१०
शेखर (स्वग्यक) ॥	१२	शुभुत्तन (टि.)	३३
" (षट्पद) ॥	२४	शुन्दरगतितकम्	५१
शेषः (रोता) ॥	१७	शुन्दर. ॥	२३
" (स्वग्यक) ॥	१२	शुरीरम् (टि.)	४३
" (काव्य) ॥	२१	शूर्य (काव्य) ॥	२१
" (षट्पद) ॥	२३	" (षट्पद) ॥	२३
शोभा ॥	२	शोरदा	३५

वृत्तनाम	पृष्ठ संख्या	वृत्तनाम	पृष्ठ संख्या
स्काय. ॥	२१	हरिणीता	४१
स्कन्धकम्	१२	हरिणीता अपरा	४१
स्तिाय. ॥	१२	हरिणः ॥	२१
स्नेह. ॥	१२	हरिणी ॥	६
		हाकसि	३५
ह		होरम् (पदपद) ॥	२४
हरः ॥	२३	"	४३
हरिः ॥	२३	" (टि.)	४३
हरिणीतम्	३६	हंसी (गाया) ॥	६
हरिणीतकम्	४०	" (रसिका) ॥	१६

(ख) वर्णिक-छन्दों का अकारानुक्रम

संकेत- () वृत्तमौक्तिक मे दिया हुआ नाम-भेद, अ=अष्टसम छन्द, द=दण्डक छन्द, प्र=प्रकीर्णक छन्द, वि=विषमवृत्त, वं=वंतालीय वृत्त, टि=टिप्पणी मे उद्धृत छन्द ।

वृत्तानाम	पृष्ठ सख्या	वृत्तानाम	पृष्ठ सख्या
अ		इ	
अचलधृति. (गिरिवरधृति)	१३४	इः	५७
अच्युतम्	१६६	इन्द्रवज्रा	८०
अद्वितनया (अश्वत्थसितम्)	१६६	इन्द्रवंशा	६३
अनङ्गशेखरः (द.)	१८७	इन्दुमा (टि.)	६४
अनवाधिगुणगणम्	१५६	इन्दुववनम् (इन्दुववना)	११७
अनुकूला	८६	इन्दुववना (इन्दुववनम्)	११८
अनुष्टुप्	६६	उ	
"	१६४	उकुमणम्	१२८
अपरवक्त्रम् (अ.)	१८६	उत्तराग्निका (वं)	१६७
अपराजिता	११५	उत्पत्तिनी (चन्द्रिका)	१०६
अपराग्निका (वं.)	१६६	उत्ताव	१२७
अपवाह	१७७	उद्धृता (वि.)	१६२
अमृतगति	७४	उद्धृताभेदः (वि.)	१६२
अमृतपारा (टि. वि.)	१६५	उदीच्यवृत्ति (वं.)	१६८
अर्णविय (द.)	१८५	उपचित्रम् (अ.)	१८६
अलि (प्रिया)	१२७	उपजाति.	८१
अशोकसुसुममञ्जरी (द.)	१८६	उपमेया (टि.)	६४
अश्वत्थसितम् (अद्वितनया)	१६६	उपवनसुसुमम्	१४६
असम्बाधा	११४	उपस्थितप्रचुपितम् (टि. वि.)	१६३
अहिधृति	११८	उपेन्द्रवज्रा	८०
आ		ए	
आश्यानिद्री (टि. भद्रा)	८३	एद्धि (टि.)	८१
आपातसिद्धा (वं.)	१६६	एध्मगजद्वितितम् (गङ्गुरगविल- सितम्)	११२
आपोढ. (विद्याधरः)	८८	ए	
आपोढः (टि. वि.)	१६५	एता	१२६
आर्द्रा (टि.)	८१		

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या	वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
प्रत्यापीड टि. (वि.)	१६५	भुजगशिखुसुता (भुजगशिखुभृता)	७२
" " "	१६५	भुजङ्गप्रयातम्	८८
प्रबोधिता (मञ्जुभाषिणी)	१०६	भुजङ्गविजृम्भितम्	१७७
प्रभा (मन्दार्किकी)	६८	भुजङ्गविजृम्भितस्य चत्वारो भेदा (प्र.)	१८१
" (प्रमुदितवदना)	१०३	भुजङ्गसङ्गता	७२
प्रमाणिका	६८	भ्रमरपदम्	१४८
प्रमिताक्षरा	६१	भ्रमरयिलसिता	८५
प्रमुदितवदना (प्रभा)	१०३	भ्रमरावलिका (भ्रमरावली)	१२२
प्रवरललितम्	१३१	भ	
प्रवृत्तकम् (वै.)	१६८	मञ्जरी	१६१
प्रहरणकलिका	११५	" टि. (वि.)	१६५
प्रहृषिणी	१०७	मञ्जरीरा	१४३
प्राच्यवृत्ति (वै.)	१६७	मञ्जुभाषिणी (सुनदिनी प्रबोधिता)	१०६
प्रियम्बदा	१०१	मञ्जुला (नाराच)	१४७
प्रिया	५६	मणिगणम्	११६
प्रिया	६२	"	१७६
" (अलि)	१२७	मणिगुणनिकर (शरभम्)	१२३
प्रेमा टि.	८१	मणिमध्यम्	७२
फ		मणिमाला	१००
फुल्लदाम	१५४	मतङ्गवाहिनी	१४१
ख		मत्तमयूरम् (भाया)	१०५
बकुलम्	८७	मत्तमातङ्ग (व)	१८६
बम्बु (बोधकम्)	७६	मत्ता	७४
बहुरूपकम् (राम)	१२८	मत्ताक्रीडम्	१७१
ब्रह्मानन्द	१६०	मदनललिता	१३०
बाला टि	८१	मदलेखा	६७
बिम्बम्	७१	मदालसम्	१६६
बुद्धि टि	८१	मदिरा	१६५
भ		मधु	५८
भद्रकम्	१५६	मधुमती	६६
भद्रविराट (प्र.)	१६०	मन्यानम् (मयाना)	६४
भद्रा टि. (आल्यानिकी)	८१	मन्दर	६०
भाराक्रान्ता	१४१	मन्दकम्	१६५
भाव (त्रि)	१६३		

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या	वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
मन्दहासा टि	६४	र	
मन्दाकिनी (प्रभा)	६८	रताख्यानिकी (टि.)	८४
मन्दायाम्ता	१३८	रथोद्धता	६४
मनोरमम (मनोरमा)	७५	रमण	५६
मनोहस	१२३	रमणा (टि)	६४
मल्लिकार्जुन	६८	राम (ब्रह्मरूपकम्)	१२८
"	११६	रामा (टि)	८१
"	१७०	रामानन्द	१७२
मल्ली	१७५	रक्मवती (चम्पकमाला)	७३
महालक्ष्मिका	७०	रुचिरा	१०८
मही	५८	"	१६३
भाग्यी	१७८	रूपामाला	७०
भागवत्कीर्तिकम्	६६	रूपवती (चम्पकमाला)	७३
भाष्यी	१७४	ल	
भाया टि	८१	सदमी	११२
भाया (भरामपुरम्)	१०४	सदमीधरम् (सन्निवर्णो)	८८
माला टि	८१	सता	१११
मालती	७६	सलना	११४
मालती (मुमालक्षिका)	६५	सलितम् (सलना)	१०१
" (यमुना)	६६	सलितम् (वि)	१३३
"	१७०	"	१६३
मालावती (मालाधर)	१३६	सलितगति	७५
मालिनी	१२०	सलित्ता (गुप्तसिता)	१०१
मृगेन्द्र	६०	सवती टि (वि)	१६५
मृगेन्द्रमुलम्	११०	सीताखेल (सारङ्गिका)	१२०
मृदुलकुमुदम्	१५५	सीताचन्द्र	१४३
मेघकिरणिका	१५३	सीताधृष्टम्	१३५
मोटनम्	८६	सीता	११६
मोदकम्	६०	य	
मोक्षिणदाम	६०	यशत्रम् (वि)	१६३
य		यशमानम् (वि)	१६५
यमकम्	६३	यशस्तधत्वरम्	१०२
यमुना (मालिनी)	१००	यशस्ततिपरा	११३
योगानन्द	१५५	यादुमनी (य)	१६१

वृत्तानाम	पृष्ठ संख्या
श्री	
श्रीपञ्चदशक (पं.)	१६६
क	
कनकयलयम्	१७१
कन्दम्	१०६
कन्या (तीर्णा)	६१
कमलम्	६०
"	६८
"	७१
कमलदलम्	१७६
करहञ्चि	६६
कलहस (सिंहनाद, कुटजम्)	११०
क्षमा	११०
काम	५८
कामवत्ता	१०२
कामानन्द	१७४
किरीटम्	१७३
कीडाचक्र	१४५
कीर्ति (दि.)	८१
कुटज (कलहस)	११०
कुमारललिता	६६
कुमारी (दि.)	६४
कुसुमलति	६७
कुसुमविचित्रा	६८
कुसुमस्तवक (द.)	१८६
कुसुमितलता	१४६
केतुमतो (भ.)	१६१
केसरम्	१२६
कोकिलकम्	१४०
कौञ्चपदा	१७५
ग	
गजतुरगविलसितम् (शृङ्गभगज- विलसितम्)	१३२

वृत्तानाम	पृष्ठ संख्या
गण्डका (गण्डक, चित्रवृत्तम् वृत्तम्)	१५६
गण्डदत्तम्	१३१
गिरियरधृति (धवलधृति)	१३४
गीतिका	१५६
गोपाल	७३
गोविन्दानन्द	१७६
च	
चउरसा (चतुरसम्)	६४
चक्रम्	११४
चकिता	१३२
चञ्चला (चित्रसङ्गम्)	१३०
चण्डलेखा (चन्द्रलेखा)	१२५
चण्डवृष्टिप्रपातः (द.)	१८४
चण्डिका (सेनिका)	७६
चण्डी	१०८
चतुरसम् (चउरसा)	६४
चन्द्रम् (चन्द्रमाला)	१५१
चन्द्रलेखम् (चन्द्रलेखा)	१११
चन्द्रलेखा (चण्डलेखा)	१२५
चन्द्रवत्स	६१
चन्द्रिका (उत्पत्तिनी)	१०६
चम्पकमाला (रुक्मवती, हयवती)	७३
चर्चरी	१४४
चामरम् (तृणकम्)	१२१
चाकहासिनी (पं.)	१६६
चित्रवृत्तम् (गण्डका)	१५७
चित्रम् (चित्रा)	१२६
चित्रपदा	६६
चित्रसङ्गम् (चञ्चला)	१३०
चित्रलेखा	१४८
चित्रा (चित्रम्)	१२६
छ	
छाया	१५३

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या	वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
ज		न	
जलदम्	६६	नगाणिका	६१
जलधरमाला	१००	नन्दनम्	१४६
जसोद्धतगति	६७	नर्दटकम् (कोकिलकम्)	१३६
जाया टि.	८१	नराचम् (पञ्चवामरम्)	१२६
त .		नरेन्द्र	१६१
तन्वी	१७३	मलिनम् (व.)	१६६
तनुमध्या	६५	मलिनमपरम् (व.)	१६७
तरलतपनम्	१०३	नवमालिनी	१०३
"	१७४	नागानन्द	१५०
तरवरम्	१६७	नान्दीमुखी	११७
स्वरितगतिः	७४	नाराच (मञ्जुला)	१४७
तामरसम्	६६	नारी (ताली)	५६
तारकम्	१०६	निष्पमतिलकम्	१६३
ताली (नारी)	५६	निशिपालकम्	१२४
तिलका	६३	नीलम्	१२६
तीर्था (बन्धा)	६१	प	
तुङ्गा	६८	पञ्चावली	१०७
तूणकम् (चामरम्)	१२२	पञ्चवामरम् (नराचम्)	१२६
तोटकम्	८६	पञ्चालम्	६०
तोमरम्	७१	पद्मावधम् (वि.)	१६४
द		पदचतुष्टयम् टि. (वि.)	१६५
दक्षिणान्तिका (व.)	१६७	पद्मम्	१४२
दमनकम्	६५	पद्मावतिका	१६८
"	७८	पद्मभङ्गमङ्गलम्	१५८
दाम्पत्यम्	१४२	पादन्तम् (पादन्ता)	७१
दिप्यानन्द	१६८	पिपीटिका टि. (प्र.)	१८१
द्वितपिलम्बितम्	६२	पिपीटिकावरम् टि. (प्र.)	१८१
दुमिलरा	१७२	पिपीटिकापणव टि. (प्र.)	१८२
द्वितीयत्रिभङ्गी (प्र.)	१८२	पिपीटिकामाला टि. (प्र.)	१८२
दोषम् (धनुः)	७६	पुष्टिवा टि.	६४
ध		पुष्टिताप (ध.)	१८८
धवलम् (धवला)	११२	पुष्पी	१३५
धारो	६१	प्रचितक (व.)	१८४, १८५

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या	वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
वाणिनी	१३१	वाशिफला (शरभम्)	१२३
वाणी (टि.)	८१	वासी	५६
वातोर्मो	७७	शाङ्खसललितम्	१४८
वाराहः	१०४	शाङ्खसविश्रीदितम्	१५०
वासग्निका (टि.)	६४	शास्त्रा टि.	८१
वासन्ती	११६	शालिनी	७७
विज्जोहा (विमोहम्)	६४	शास्त्रिनी-वातोर्म्युपजातिः	७८
विद्याघरः (भाषीटः)	८८	शालूरः (प्र.)	१८३
विद्यानन्दः	१६४	शिलरम्	१६५
विद्युग्माला	६७	शिलरिणी	१३६
विपरीतास्थानिकी टि. (हंसी)	८२	शितिरा टि.	६४
विपिनतिलकम्	१२५	शीर्षा	६५
विमलगतिः	११२	शीलातुरा टि.	६४
विमला	११८	शुद्धविराट्बुधमः टि. (वि.)	१६५
विमोहम् (विज्जोहा)	६४	शुभम्	६१
युक्तम् (गण्डका)	१५७	शोषा	६३
वेगवती (प्र.)	१८६	शैलशिखा	१३३
वैतावलीयम् (वै)	१६६	शोभा	१५७
वैदर्भी	११७		
वैधात्री (टि.)	६४	श्रीः	५७
वैरासिकी (टि.)	६४	श्रेणी	७६
वैश्वदेवी	६७		
वशापत्रपतितम् (वशापत्रपतिता, वंश- वदनम्)	१३६	य	
वशास्थविला (वशास्थविलम्, वंशस्त- नितम्)	६३	यदपवावली (प्र.)	१६१
वशास्थविलेन्द्रवशोपजातिः	६४	स	
श		समानिका	६६
शङ्खचूडा टि.	६४	सम्मोहा	६२
शङ्खनारी (सोमरानी)	६४	सर्वतोभद्रः (द.)	१८५
शम्भुः	१५२	खण्डरा	१६०
शरभम् (शशिकला)	१२३	सरसी (सुरतः, सिद्धकम्)	१६२
शरभी	११८	सारम्	५८
शशाङ्कचलितम्	१५८	सारङ्गम् (सारङ्गिका)	७०
		सारङ्गकम्	८६
		सारङ्गिका (सारङ्गम्)	७०

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या	वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
सारङ्गिका (तीताखेतः)	१२०	सुवदना	१५७
सारवती	७३	सुवासकम्	६६
सिद्धकम् (सरसी)	१६२	सुपमा	७४
सिहनावः (कलहंसः)	११०	सेनिका (चण्डिका)	७६
सिहास्यः	११३	सेनिका	७६
सुकेशी	८६	सोमराजी (दाह्वनारी)	६४
सुकेसरम्	१३३	सौरभम् (वि.)	१६२
सुष्टुतिः	११२	सौरभेयी टि.	६४
सुग्यरिका	१६८	समुतम् (समुता)	७३
सुन्दरी	६०	खम् (सरभम्)	१२३
" (प्र.)	१६०	खन्विणी (लक्ष्मीधरम्)	८६
सुनन्दिनी (मञ्जुभाषिणी)	१०६	स्वायता	८४
सुभद्रिका	८७		
सुमालतिका (भालती)	६५	हृ	
सुमुषी	७६	हरिणप्सुता (प्र.)	१८६
सुरतव (सरसी)	१६२	हरिणी	१६७
सुरसा	१५४	हारिणी	१४०
सुससितम्	७२	हारी	६२
"	१४६	हस्तः	६२
सुललिता (ललिता)	१०१	हंसी	१६४
		हसी टि. (विपरीतास्थानिका)	८१

(ग.) विरुदावली छन्दों का अकारानुक्रम

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या	वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
अ		त्रिषता त्रिभङ्गी कलिका	२१५
अक्षमयीकलिका	२६२	त्रिभङ्गी कलिका	२१३
अघ्युतं चण्डवृत्तम्	२२१	व	
अपरजितं चण्डवृत्तम्	२३१	दण्डकत्रिभङ्गी कलिका	२५५
अरुणाम्भोरुहचण्डवृत्तम्	२४९	द्विगा कलिका	२११
अस्त्रलितचण्डवृत्तम्	२३२	द्विपादिका युग्मभंगा कलिका	२१६
इ		द्विभङ्गी कलिका	२१३
इन्दीवरं चण्डवृत्तम्	२४०	न	
उ		नसंकत्रिभङ्गी कलिका	२१४
उत्पलं चण्डवृत्तम्	२२८	नसंनं चण्डवृत्तम्	२३१
फ		नाविकलिका	२१२
कन्दलचण्डवृत्तम्	२३१	प	
कल्पद्रुमचण्डवृत्तम्	२३०	पङ्कजं चण्डवृत्तम्	२३५
कुम्भचण्डवृत्तम्	२४७	पद्यत्रिभङ्गी कलिका	२१४
कुमुदचण्डवृत्तम्	२५३	पल्लवितं चण्डवृत्तम्	२३२
ग		पाण्डूत्पलचण्डवृत्तम्	२३६
गलादिकलिका	२१२	पुरुषोत्तमचण्डवृत्तम्	२२०
गुण्यकचण्डवृत्तम्	२५२	प्रगल्भा द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका	२१६
गुणरतिचण्डवृत्तम्	२२६	फ	
ज		कुल्लाम्बुजचण्डवृत्तम्	२४३
चण्डवृत्तम् साधारणम्	२६०	ख	
चम्पकचण्डवृत्तम्	२४५	वकुलभासुरम्	२४८
त		वकुलमङ्गलम्	२४६
तरत्समस्तं चण्डवृत्तम्	२३१	भ	
तदणी द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका	२१८	भुजङ्गा त्रिभङ्गी कलिका	२१४
तामरतं खण्डावली	२६८	म	
तिलकं चण्डवृत्तम्	२२०	मञ्जरी खण्डावली	२७२
तुरगचण्डवृत्तम्	२३४	मञ्जरी कोरकचण्डवृत्तम्	२५१
तुरगत्रिभङ्गी कलिका	२१५		

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या	वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
मध्या कलिका	२१२	विदग्ध त्रिभङ्गी कलिका	२१३
मध्या द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका	२१७	विदग्ध त्रिभङ्गी कलिका सम्पूर्णा	२५६
मधुरा द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका	२१८	धीरद्वन्द्ववृत्तम् (धीरभद्रम्)	२२५
मातङ्गखेसित चण्डवृत्तम्	२२६	धीरभद्र चण्डवृत्तम् (धीर)	२२५
मादिकलिका	२१२	खेष्टन चण्डवृत्तम्	२३२
मिथकलिका	२१२	श	
मिथकलिका	२५८	दाक्षद्वन्द्ववृत्तम्	२२६
मुग्धा द्विपादिका द्विभङ्गी कलिका	२१६	शिथिला द्विपादिका द्विभङ्गी	
र		कलिका	२१८
रणचण्डवृत्तम् (समप्रम्)	२२४	स	
रादिकलिका	२११	समप्र (रण)	२२४
ल		समप्र चण्डवृत्तम्	२३३
सलिता त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका	२१५	सर्वलघुकलिका	२६४
व		साप्तविभक्तिकी कलिका	२६१
बञ्जुलचण्डवृत्तम्	२४६	सितकञ्ज चण्डवृत्तम्	२३८
बरतनु-त्रिभङ्गी कलिका	२१५	ह	
बद्धितरचण्डवृत्तम्	२२२	हरिणप्लुत-त्रिभङ्गी कलिका	२१४
बन्धिता त्रिगता त्रिभङ्गी कलिका	२१५		

तृतीय परिशिष्ट

(क.) पद्यानुक्रम

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
अ	
अकारादिअकारान्त-	२६२
अङ्कः पूर्व भूता	६
अच्युतस्तु ततः	२८७
अतनुरचित-	८७
अत श्रीकालिदास-	१६४
अत्र लघुपुग-	१६
अत्र स्युस्तुरगः	२६२
अथ खण्डावली	२८६
अथ सत्वाक्षरे	२८५
अथ त्रिभङ्गी-	२७५
अथ वण्डकला	२७४
अथ द्वितीयखण्डस्थ	२७६
अथ पञ्चमर्णके	२७८
अथ पञ्चाक्षरे	२७६
अथ पञ्चाधिके	२८५
अथ पल्लवित्त	२८८
अथ प्रथमतो	२८१, २८३, २८४
अथ भद्रविराट्	२८६
अथ भावस्ततो	२८६
अथ मन्वक्षरे	२८०
अथ रङ्गाप्रकरणं	२७४
अथ रथ्यक्षरे	२७६
अथ रुद्राक्षरे	२७८
अथ लघुपुगम-	२१
अथ वस्त्वक्षरे	२७७

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
अथ विशालरे	२८३
अथ षट्पद-	१६
अथ सप्तदशे	२८२
अथातो द्विगुणा	२७६
अथातो व्यापकं	२८७
अथात्र विहवावस्था-	२११
अथानिधीयते	२०१, २१६, २७३
अथाविद्धं चूर्णकं	२८७
अथास्या लक्षणं	२५५
अथैकविंशत्यक्षरे	२८४
अथैतयोनिरूप्यन्ते	२७२
अथैतस्याः सप्त-	२६
अथोच्यते विभक्तीना	२६१
अथोद्गाथा	२७४
अनङ्गवैलरश्चेति	२८६
अनन्तरं चोपवन-	२८३
अनन्तरं तु बकुल-	२८८
अनयोरपि चैकत्र	२७६
अन्ते जगणमवेहि	३६
अन्ते यदि गुरु-	४०
अन्योऽन्वङ्कार-	२५
अन्यत्र धीरभद्रः	२८८
अन्यदिदं मुनि-	४७
अनुत्वारविसर्गो	२१६
अपरान्ते लघु-	२६
अमुष्मिन् मे दर्वी	१

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या	वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
अमंत्रो निरनुशासो	२७२	आदौ म ओक्तं	६२
अपुक्कृता	१६६	आदौ म तदनु	१७७
अयुजि पदे नव-	३०	आदौ म सततं	१४८
अर्लसाः प्राकृते	१	आदौ मो यत्र	१५७
अयान्तरं प्रकरण	२८८, २८९	आदौ मो यत्र	१६०
अयान्तरमिदं	२८८	आदौ यस्मिन् वृत्ते	१७७
अवेहि जगण	६७	आदौ विदधाना	१००
अश्वानां सख्याका	१५०	आदौ षट्क्षत-	१६
अश्वैः सख्याता	१४३	आदौ षट्क्षतं	५२
आष्टभिः षट्क्षते	२१२	आद्याङ्गेन तदीयैः	६
असमपदे	३०	आद्यन्ताशी पद्य-	२५८
असम्बन्धाया ततश्च	२८०	आद्यन्ते वृत्त-	६७
असवर्णं सवर्णं	२०७	आद्यं समाप्त-	२१०
अस्य पुनरुचिता	१६६	आद्यवर्णास्तु	२२५
अहिपतिविज्ञान-	१६	आपाततिका	१६६
आ		आरभ्यैवाश्वरं वृत्त	२७६
आदाय गुरु-	२१	आशी पद्यं यदा-	२६८
आदावादिगुर्वं	३६		
आदिगापुनवेद-	४३	इति गायत्रि प्रकरण	२७४
आदिगुदभरणो	४	इति गायत्र्या	६
आदिगुर्वं वृत्त	१६५	इति पिप्लेन	५
आदिगुदर्वं गुरु-	३	इति प्रदीर्घक-	१८३
आदिर्य सख्याता	१७२	इति भेदाभिधाः	१०, २४
आदिपक्षितस्थितं.	७	इत्यं सप्तशतस्रोतं	२७१
आदिभचार	७२	इत्य विषय-	२८६
आदिभचारो	७३	इत्यद्वैतसमकं	२८६
आदिदधान्तः	६२	इत्यद्वैतसमवृत्तानि	१६१
आदिरेकादश-	२२४	इदमेव हि यदि	१२३, १२७
आदिरेपदोभि	७६	इदमेवान्यतः	२८२
आदौ कुर्यान्मगण-	७४, १४१	इन्द्रास्तनयव	३
आदौ टगणसमु-	३२	इयमेव यदि	४१
आदौ तगण.	७४	इयमेव वेदचन्द्रः	४१
आदौ प्रयानुरक्षा	२०	इयमेव सप्त-	१७०
आदौ पिरोक्षि	२८६	इह यदि मयल-	६८

वृत्त नाम	पृष्ठ सख्या	वृत्त नाम	पृष्ठ सख्या
उ		क	
उक्तलक्षण-	२१६	एव पञ्चमपवित	८
उक्तानि सवया-	४८	एव माधुर्यं-	२०४
उक्ता मभौ समौ	२१७		
उदाहरणमञ्जरी	१६	कञ्जुण कुण्ड	१६१
उदाहरणमेतासा	२६१	कदाचिद्वत्समक	१६३
उदाहरणमेतेषा	३०	कनकमुला-	२
उबीचमवृत्ति-	१६८, २८७	करतालपट्ट-	३
उपजातिस्ततः	२७८	करपाणिकमल-	३
उपेन्द्रवज्रा	८१	करमुखतमुपुष्प-	१६८
उभयो कण्डयो-	२८६	करसङ्गिपुष्प-	१०६
उर्ध्वरित्तद्वय	५	कर्णद्वन्द्व ताटजू-	१२६
उर्ध्वरित्तोच्चरिताना	५	कर्णद्वन्द्व विराजत्	१५४
ए		कर्णद्विजवर-	१८३
एकस्मात् कुलीना	६	कर्णपर्यायिन	३
एकाक्षरादि षड्-	८, २८५	कर्णा जायन्ते	६७
एकाक्षरे द्वयक्षरे	२७६	कर्णाभ्यां सुललित-	१०७
एकाङ्गमयुषपवते	६	कर्णे कुण्डलयुक्ता	११६
एकादशकल-	२०	कर्णे कृत्वा कनक-	११७
एकादश प्रकरण	२८६	कर्णे ताटजू-	१२५
एकाधिककोष्ठाना	६	कर्णे विराजि	११२
एकीकृत्य तया	७, ८	कर्णी कृत्वा कुण्डल-	११६
एकंकगुहविशोभाद्	६	कर्णी ताटजू-	१४६
एकंकस्य गुरो	१४, १७	कर्णी पुण्यद्वितीय-	१३८
एकंकाङ्गस्य	६	कर्णी स्वर्णादिघो	१५४
एतत्पल्लवित	२३२	कर्णे कुण्डल-	१५०
एतत्प्रकरण	२८६	कर्णे कृत्वा कनक-	१३० १४०, १४८
एतावेवगणी	२३७	कर्णे जकार-	१६६
एते दोषा समु-	२६	कर्णे सुरुप	६३
एव गलितका-	५६	कर्णे स्वर्णोज्ज्वल-	११८
एव तु विषम	१६४	कर्णे पयोधर-	१५८
एव निरवधि-	८	कलय नकार-	६६
एव पञ्चपदाना	२६	कलय नगण	१११
		कलय नयुगल	१०८
		कलय नयुगल	१४६

दृष्ट नाम	पृष्ठ संख्या	दृष्ट नाम	पृष्ठ संख्या
कलहसस्ततश्च	२८०	व्यचित्तु पद-	२०१
कल्पद्रुमे तजौ	२३०	व्यचिद् स्वभावती	२७८
कलिकाभिस्तु	२११	ख	
कलिका इलोक-	२६६	खण्डावती प्रकरण	२८६
कारय भ ततो १३३, १३६, १४८, १६५		ग	
कारय भ त	१७३	गगनविधुयति-	४४
कारय भ न	१७५	गगन शरभो	१२
काव्यपटुपदयो	२५	गणध्यवस्था-	२७३
कीर्ति सिद्धिर्नामी	६	गणोद्वयनिका	२४
कुण्डलकलित-	११४	गण्डर्व व्यचित्	२८३
कुण्डलवस्त्ररजु-	१६१	गद्यपद्यमयी	२११
कुण्डल द्यति	१४४	गायोदाहरण	२७४
कुन्तीपुत्रा यस्मिन्	१६८	गाहिनी स्यात्	८
कुन्द करतल-	१७	गुणालङ्कार-	२६६
कुव गन्धमुग्ध	११६	गुरुमुग्ध किल	३
कुव धरणे	७६	गुस्त्युक्त-	२७
कुव नकारमयो	८२	गुरो भूवस्थानो	२
कुव नगण-	६६	गो चेत् कामो	४८
कुव नगण ११० १२६, १३१, १६३		ग्रन्थान्तरमत	२८७
कुव नगण तत	१३६	घ	
कुव नगणमुग	१०६, १२७	वर्कितव यति-	२८२
कुव नसगणौ	१११ ११२	वर्कवृष्टिप्रयात	२८६
कुव हस्तसगि	१५६	वतुरयिका इह	२०
कुव हस्त स्वर्ण-	१५२	वतुभिर्नगर्ण-	२५३
कुर्पात् पवित-	७	वतुभिर्भगर्ण-	२४६
कुमुभरूप-	६०	वतुर्वर्णप्रभेदेषु	२७६
कुमुमतङ्गतकरा	१०१	वतुभिस्तुरगं	२११, २४८
कृत्वा पादे भूपुरी	७७	वतुज्जलद्वये-	२६०
कृत्वंश चाङ्गामा	८	वतुज्जल भवेद	१८८
कोष्ठानेकाधिकान्	६	वतु सप्तमकी	२३१
कोष्ठान् मात्रा	७	घम्पक वण्डवृत्त	२४५
क्रियते वर्गण-	२६०	घम्पक तु तत	२८८
क्रियते सगण	५६	धरणे प्रथम	३६
व्यचित्तु कलिका-	२६६		

वृत्त नाम	पृष्ठ सख्या	वृत्त नाम	पृष्ठ सख्या
घरणे विनिधेहि	१२२	डगणाश्चतुर	२७
घूर्णकोत्कलिका-	२०७	त	
घेद् वातोर्मौ	७८	तगण शुभ्य	५
घोपंया ख तत	२७४	तत एव हि ते	१८५
घोपंया ध्रुव	१८	ततश्चन्द्र सम्रा	२८३
छ		ततश्च स्यान्निरुपम-	२८४
छन्द शास्त्रपयो-	२६०	ततश्चान्य भवेद्	२८५
ज		ततश्चिन्ना समा-	२८६
जकारपुगेन	६५	ततस्तस्यर	२८७
जकारमुत	६६	ततस्त्रिभङ्गी	२८८
जगणरगण-	१८७	ततस्त्वर्ध्व	२८९
जलधिनगणमिह	१०३	ततस्तामरस	२९०
जलधिमित	११२, ११६	ततस्तु च ब्रलेखा	२९१
जलनिधिकल-	३४	ततस्तु बुलिमासा	२९२
जलनिधिकृत	१२३	ततस्तु भुल्लणा	२९३
जलनिधिपरि	१४२	ततस्तु नन्वन	२९४
जलराशिबिरा-	१०६	ततस्तु निशिपाला-	२९५
जायैक हारद्वये	८६	ततस्तु पावाकुलक	२९६
ज्ञान भवेदक्षणास्य	२७३	ततस्तु भ्रमरा	२९७
ट		ततस्तु माधवी	२९८
डगणडगण-	१४	ततस्तु मातिनी	२९९
ट त्रयोदशभेवा	२	ततस्तु बिरुदावल्मा	३००
डगणमिहावी	२०, ३२	ततस्तु वज्रस्थविला	३०१
ठ		ततस्तु शरभी	३०२
ठगणद्वय	५०	ततस्तु सरसी	३०३
ठगणद्वयेन	५१	ततस्तु सर्वतोभद्र-	३०४
ठगणद्वितय	५२	ततस्तु सर्वलघुक	३०५
ड		ततो गिरिधृति	३०६
डगणद्वयेन	५०	ततो गुणगण	३०७
डगणमयधेहि	३६	ततो गुणरति	३०८
डगणत्रिसूय	५२	ततो जलधरमाला	३०९
डगण कुरु विचित्र	३८	ततो जलोद्धतपति-	३१०
		ततो दम्भक	३११

दृश नाम	पृष्ठ संख्या	दृश नाम	पृष्ठ संख्या
ततोऽद्वितनया	२८४	तयोश्चदाहति	२७३
ततो नईदक	२८२	तस्यास्तु लक्षणं	२०१
ततोऽनुपुपु	२७७	ताटकहार-	४
ततोऽपि ललितं	२८०	तालजिह्वीति	३०
ततो भुजङ्गपूर्वं	२८५	तिलतन्दुलवनं	२१२
ततो मणिगणं	२८१, २८५	तुङ्गा वृत्तं तत.	२७७
ततो मधुमती	२७७	तुरगेकमुपघाय	३८
ततो महालक्ष्मिका	२७७	तुरगो हरिणी	२१
ततो मालावती	२८२	तुर्यस्य तु शेष-	१६७
ततोऽमृतगतिः	२७८	तृतीये कृतभङ्गा	२१५
ततो मोहक	२७६	त्यक्त्वा पंचम-	८
ततो रयोद्धता	२७६	त्रयोदशगुह-	१७
ततो लक्ष्मीधरं	२७६	त्रयोदशैव भवानां	१७
ततो ललित-	२७८	त्रिषुतु.पञ्च-	२६६
ततो विमलपूर्वं	२८०	त्रिदशकला	१४
ततो बुराद्वयस्य-	२७३	त्रिभिस्तंस्तु	२६१
ततोऽस्य परिभाषा	२८७	त्रिभिर्भङ्गं त्रिभङ्गी	२१३
ततः प्रहृषिणी	८०	त्रिष्वगुरवो	१२
ततः प्रिया समा-	२८१	त्रिष्वर्णां लक्ष्मीं	६
ततः शम्भु समा-	२८३	त्र्यक्षरे चात्र	२७६
ततः शैलशिखा	२८२	त्र्यावृत्ता ममला	२१४
ततः समानिका	२७७		
ततः साधारणमतं	२८८		
ततः स्मरपुङ्खं	२७५	दहनपणनिग्रम-	२३
तत्र वधावती	२७४	दहननमिह	७२, ७५
तत्र भात्रावृत्त-	२७३	दहनपितामह-	४
तत्र श्रीनामकं	२७६	दहनमित	७८
तत्रैवान्तेऽधिके	१६६	दत्त्वा पूर्वपुगाङ्गान्	६
तत्त्वाक्षरवृत्त-	१७४	दत्त्वोद्दिष्टवद्	६
तथा नानापुराणेषु	१६४	दद्यात् पूर्वं	५
तथा प्रकरणं चात्र	२७५	दद्यादङ्गान् पूर्वं	७
तदेव यतिभेदेन	२८४	दिव्यामन्द सर्व-	२८४
तद्धि वंदभं-	२०७	दीर्घवृत्तिकठोरा-	२०७
ततो तु घटितौ	२६२	दीर्घः संपुस्तपः	१
तपोः फलं च	२७३	दुस्त्योमृतमिमं	२६०

श्रुत नाम	पृष्ठ संख्या	श्रुत नाम	पृष्ठ संख्या
वेहि भमिह	१३२	धीरधीरादितं बुद्ध्या	२६६
योहाचरणचतुष्टयं	३१	धेहि भकारं	१०१
योपानिमान-	२६	धेहि भकारमत्र	१३३
द्वादशादं कला	२११	धेहि भगणं	११७, १२४
द्विकलपुदशक-	१८३	ध्यजचिह्नचिर-	३
द्विगारादिद्वच	२११	न	
द्विगुणानङ्कान्	५	नलमुनिपरिमित-	६
द्विजकरवलया-	१२०	नगणकृता	७४
द्विजजातिशिर-	४	नगणनरेन्द्र-	७४
द्विजपरिकसिता	११५, ११७	नगणपक्षि-	७५
द्विजमनुकलय	६७	नगणमिह	६६
द्विजमिह धारय	६६	नगणयकार-	७०
द्विजरसयुता	१३७	नगणयुग-	६६
द्विजवरगण-	६८, ८७	नगणयुगल-	७१, ७२
द्विजवरगणमिह	१५२	नगणयुगला	१८४, २५५
द्विजवरनरेन्द्र-	७१	नगणयुगलं	६५
द्विजवरमत्र	१३१	नगणसवणा-	६८
द्विजवरमिह	६१	नगणसगण-	१३३
द्विजवरयुगल-	१५	नगणे पञ्चभि-	२६४
द्विजवरसगणी	१०२, ११०	नन्दो भद्रः शिवः	१२
द्विजविलसिता	१३६	नमनुकलय	६०
द्वितीयलक्ष्यामय-	१६७	नमिह कुष	६३
द्वितीयषण्ठी	२४७	नयुधं च हस्त-	१६३
द्वितीयाऽथ त्रिभङ्गी	२८६	नराचमिति	२८२
द्वितीये खण्डके	२८५	नरेन्द्रवर्जिता	२७०
द्वितीयो मधुरः	२२६	नरेन्द्रविराजि	६०
द्वितीयो मधुरो	२४५	नर्तनं तु ततः	२८८
द्वितीयं समपूर्वं	२७५	नवजलधिकस-	३४
द्वितीयो मधुरि-	२१३	नष्टे पृष्ठे भागः	६
द्विपादिका च	२१६	नष्टोद्दिष्टं यद्वन्	८
द्विलकृति	५८	नसौ जनी जलौ	२५२
द्विविधं नलिना-	२८७	नागाधीशप्रोक्तं	६३
घ		नानाविधानि गद्यानि	२८७
घारय रोहिणेय-	१३२	नाममात्रे परं	२७८

वृत्त नाम	पृष्ठ सख्या	वृत्त नाम	पृष्ठ सख्या
नित्यं प्रावपद-	२०१	पिङ्गले जयदेवश्च	२०४
निष्कामतुच्छीकृत-	२६०	पितृचरणोरिह	१८५
नूपुरमुच्चैः	८६	पुनरेन्द्राधिप-	४
नूपुररसना-	३	पुष्पिताया भवेत्	२८९
मेघोक्ताः भाः	७०	पूरयेत् पृष्ठ-	७
प		पुत्रंलण्डे पडेवात्र	२८६
पक्षिभाति	६१	पूर्ववदेव हि	३०
पक्षिराजद्वय	६४	पूर्वन्तिबत्	२०१
पक्षिराजनगणौ	१२७	पूर्वाद्धि च पराद्धि	११
पक्षिराजभूर्वाति-	१२१	पूर्वं कयिता	५४
पक्षिराजभासिता	६६	पूर्वं कर्णत्रितय	१४३
पक्षिराजमयम	६१	पूर्वं गमितकं	२७५
पञ्चम तु प्रकरण	२७३	पूर्वं द्वितीयचरणे	५४
पञ्चम तु यत्र	२८६	पूर्वं पादे मगणेन	७७
पञ्चम लघु	१६४	पूर्वं न स्यात्	८५
पञ्चपञ्चपधिक	१७६	पृथिवीमल-	४
पञ्चालश्च मृगेन्द्रश्च	२७६	पृष्ठे वर्णव्यन्दति	७
पद्मचतुर्ध्वं	१६४	प्रकीर्णकप्रकरण	२८५
पद्मदुष्टौ भवेत्	२५	प्रतिपक्ष परिचर्मा	२१
पदे स्वेद् रगणः	२६८	प्रतिपदमिह	१५१
पयोधरविरा-	१३५	प्रतिपाद तयो-	२७८
पयोधरे कुसुमित-	१०८	प्रथमत इह	१८२
पयोधर कुण्डल-	८०	प्रथमद्वितीय-	३५
पयोधरं हार-	६३	प्रथमनकार	६४
पयोनिधिभूपति-	६०	प्रथममिह दशसु	३२
परस्पर चेतयो-	२७८	प्रथमा करभौ	२६
पाङ्गता पिङ्गले	२७८	प्रथमायाभाषादीन्	७
पाण्डूपल ततश्च	२८८	प्रथमे द्वादशमात्रा	६
पादयुग कुव	१७३	प्रथमे द्वितीय-	७
पादे द्वित्ये देहि	६४	प्रथम कर	१२६
पादे यत्पनुरोपात्	२१	प्रथम कसय	१३४
पादे या म प्रोक्ता	५६	प्रथम कुव टगर्ण	४६
पादेपु तो	६०	प्रथम दशसु	१६, ४२
पिङ्गलकविकपिता	१६	प्रथम द्विजसहितं	४५

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या	वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
प्रथमं द्वितीय-	१६२	भद्रितयाचित-	७३
प्रथम विधेहि	१२३	भद्रितयाचित-	६६
प्रमुदितवदना	२५०	भरतादिमुनी-	२०४
प्रमुदितादूष्यं	२५०	भसो तु घटितो	२६१
प्रयोगे प्रायिक	१६४	भानुसह्यामिर्त-	८८
प्रवृत्तकं पद्भि-	१६८	भिक्षविह्वलपुरुषाव-	१६२
प्रस्तारगतिभेदेन	२७७	भुजगप्रियते	२१३
प्रस्तारगत्या चात्र	२७८	भुजगप्रिमुत्ता	२७८
प्रस्तारगत्या चाप्यत्र	२७७	भुवमविरचित-	१२८
प्रस्तारगत्या ते	२७६	भूपतिनायक-	४
प्रस्तारगत्या भेदाः	२७८, २८२	भूपणोपपर्व	२७५
प्रस्तारगत्या वित्तया	२८०	भृगोदासीनाभ्यां	५
प्रस्तारगत्या सम्प्रोक्ताः	२८१	भेदा वरवधारे	२७७
प्रस्तारद्वय-	२६४	भेदाश्चतुर्दश-	८१
प्रस्तारस्तु द्विधा	२०	भेदास्तस्यापि कविता	२७५
प्रस्तारसह्यया	६	भेदाः सुनुदिभिः	२८२
प्रस्तारस्यापि	२७३	भेदा. स्युः भूमि-	२३
प्रस्तार्यशेष-	२८१	भेदेष्वेतेषु	२८५
प्राकृते सस्कृते	२७४	भेन वृत् तेन	६६
प्रिया तत. समा-	२७७	भो यदि सुम्बरि	६०
प्रोक्त प्रकरण	२८६	भ कुट तदनु	१०७
प्लवङ्गभङ्गाच्च	२८३	भ्रमरभ्रामर-	१४
फ		भ्रमरावली पिङ्गले	२८१
फुल्लदाभ ततश्च	२८३	म	
ब		मगणो अद्विकार्यं	४
बन्धो भ्रमरोऽपि	२१	मगणस्त्रिसष्टौ	४
बाणमुनितकं-	५६	मञ्जरी चात्र	२५१
बाणो भङ्गश्च	२२६	मणिगुणनिकरो	१२४
विभ्राणा कणौ	११४	मणिगुणनिकरः	२८१
विभ्राणा घलपौ	८६	मत्तङ्ग वाहिनीवृत्त	२८२
भ		मत्तला मत्तला-	२१६
मगणाष्टक-	१७८	मत्ताकोट ततः	२८४
भद्रितयप्रदिक-	७६	मदिरा मालती	४७
		मधुराश्लिष्ट-	२१६

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या	वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
मधुरा भद्रये	२१८	यकारः प्रागस्ते	१५७
मधुरो वशमो	२२०	यति सर्वत्र-	२०१
मधुरो युग्म-	२३४	यतीना घटन	२८७
मन्यान घ तत	२७७	यत्कलप्रस्तारो	५
मन्त्रकमेव हि	१६५	यत्र स्वेच्छा	१८६
मन्दाकागता वश-	२८२	यत्राष्टो ङगणा	४२
मकटो लिख्यते	७	ययामतिर्यया	१७६
मस्त्रिगुरुसहि-	४	यया ययास्मिन्	२०
मात्राकृता भवे-	१८८	यदा लघुर्गुं ह	१०२, १५५
मात्राप्रस्तादे	३	यदा स्तो यकारो	६४
मात्रामेहरय	६	यदि दोहावसविरति-	३५
मात्रावृत्तान्धुवत-	५७	यदि योगद्वयण-	३१
मात्रोद्दिष्ट च	२७३	यदि रत्नलघु-	१८८
मातमयमुसार्थ	२८६	यदि रत्नविधु-	३७
मायावत्ता ततस्तु	२८०	यदि वं लघु-	८६
मालाभित्यमेव	५५	यदि स द्वितया-	६३
मित्रद्वयेन	५	यदि ह मद्रयान्तर	१८४
मित्रारिभ्या	५	यदीन्द्रवशा	६४
मुग्धपूवकमेव	३५	यहोमवदलचण्ड-	२६०
मुग्धमालागलितक	२७५	यद्यपि दीर्घं	२
मुग्धादिका लक्ष्यगता	२८७	यद्ययुग्मयो	१६१
मुग्धा प्रगल्भा	२१६	यस्मिन् कर्णो	६१
मुग्धाया भद्रये	२१८	यस्मिन् तकार	६२
मुग्ध मुद्रसरं	२०७	यस्मिन्नाष्टो पाद	१२८
मुनिपक्षाभ्या	६	यस्मिन्नाष्टी पूर्व	१७१
मुनिबाणकला	८	यस्मिन्निर्ग्रेः सख्याता	११३
मुनिरग्रजनप्रं-	२८४	यस्मिन् पादे दृश्यन्ते	१०४
मुनिरसवेदे-	१४०	यस्मिन् विधये	१६०
मोदक सुन्दरो	२७६	यस्मिन् वेदानां	८८
मोहो वसो तत.	२१	यस्मिन् वृत्ते विकृ	१५५, १७६
य		यस्मिन् वृत्ते पवित	१६०
यकार पूर्वस्मिन्	१२१	यस्मिन् वृत्ते रक्ष्यन्ते	१२०
यकार रसेनोदित	१४५	यस्मिन् वृत्ते हट-	१६४
यकार सदेही	१५३	यस्मिन् वृत्ते सावित्राः	१७४

सूक्त नाम	पृष्ठ संख्या
यस्य पादघृतु-	१८८
यस्य स्वात् प्रथमः	१८८
यस्या द्वितीयचरणे	१०, ११, १२
यस्यादित्ये मगण-	७१
यस्यामष्टौ पूर्व	१६४
यस्यामाशौ पद-	१००
यस्याइच्छतुल्य-	१६
यस्यां शरधुःश	६५
यस्या पादे हारा	७६
यस्या प्रथमतृतीये	१४
या चरणे कलाना	१६
याते द्विच सुतनये	२६१
या विशरमधिक-	१८
युग्म्यां चक्षत्र	१६३
युग्मे भङ्गस्तनी	२५६
युक्तोश्चतुर्थतो	१६४
युत्मान् पातु	१
योगः सा थी	५७
यो नानाविधमात्रा	१

र

रगणनगण-	१८६
रगणनगण-	१६१
रचयत नगण-	११५
रचय नकार-	१४६
रचय नगणमिह-	१५५
रचय नगणं	१२५, १४२
रचय नभूवती	११८
रचय नमृगल	११८, १६७
रचय प्रथम पद	१७
रङ्गाप्रकरण चंद	२७४
रङ्गसुगंधिच-	५६, २७५
रङ्गं मूर्तिनिभ-	४१
रन्ध्रया विरुदावत्या	२६७
रविकरपञ्चपति-	२७३

सूक्त नाम	पृष्ठ संख्या
रत्नजसविकस-	३४
रत्नपदावर्ण-	१४
रत्नपरिमित-	१४६, १८५
रत्नबाणवेद-	२
रत्नभूमिवर्ण-	४६
रत्नमुनिरसवर्गः	२६०
रत्नरङ्गध्वजवेदः	२८०
रत्नलोचनमुपयव-	२८५
रत्नलोचनसप्ताश्व-	१८०
रत्नविद्युत्कलक-	२८
रत्नाग्निपञ्चेषु	२८२
रत्निका हसी रेखा	१६
रत्नेगुप्रमिता-	२८१
राजसेना तु पत्नी	२६
रत्नसंख्याक्षरे	२७६
रेफहकार-	२

ल

ल इरिति	५७
लक्षणविकलं	२
लक्ष्मीनायतनूजेन	२७२
लक्ष्मीनायमुभट्ट-	२६०
लक्ष्मीर्द्विष्टं द्विः	६
लक्ष्यलक्षण-	१७६
लग्नो महीम्	५८
लग्नपुरुषवर्ण-	३६
लग्नः पूर्वमन्त्रे	८८
लोलाखिलमथो	२८१
लोलाचन्द्रस्ततश्च	२८३
लोला नान्दीमुखी	२८१

व

वक्र लो व	५८
वन्दे वलयद्वय-	८६
वर्णमेकरय	६

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या	वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
वर्णभेदश्च	२७३	विषमपदैः	१६६
वर्णवृत्तगणानां	२७३	विषमे पदेषु	३०
वर्णादीर्घा यस्मिन्	६४	विषमे यदि	१८६
वहलकी राजते	५६	विषमे यदि सौ	१८६, १६०
वस्तुपक्षपरि-	१३	विषमे रसमात्राः	१६६
वस्तुवेदकसङ्ग्रह-	२८४	विषमे रससङ्ख्याः	१६६
वस्तुव्योमरस-	२८४	विषमेषु यञ्जकदश-	३०
वस्तुमित लघु-	१७४	विषमेषु वेद-	२६
वस्तुपदपचित-	२६६	विषमे सञ्ज्ञी	१६१
वस्त्वष्टमेप्रभृति-	२८३	विषमोऽग्निविष्णु-	२६
वह्निं सव्याका वा	७३	विषम चेति	१८८
वाङ्मत्सेव हि	१६१	विषम शरविष्णु-	२८
वाङ्मथ द्विविध	२०७	विहाय प्रथमा	२६१
वागिनीकृत्मा-	२८२	वीणाविराट्-	४
वाग्मरकच्छी	१४	वृत्तसङ्घोऽभिमत	२१०
वाग्मज्जलमशरभः	२३	वृत्तानुक्रमणी	२७६
विलिप्तितागलितक	२७५	वृत्ते यस्मिन्पठौ	१३५
विजयबलिकर्ण-	२३	वृत्त प्रभेदो	८
विजोहेरपद्मसः	२७७	वृत्तां भेदो मात्रा	७
विदाघपूर्वा	२५६	वृत्त्यंकेदेश-	२०७
विदाघपूर्वा सम्पूर्णा	२८८	वेदप्रेक्षुवेद-	२८४
विदाघे सुरगे	२१३	वेदङ्गणविरचित-	३७
विधिप्रहरण-	४	वेदपञ्चेषु वह्नि-	२८५
विधेहि ज	६१	वेदभकार-	१५६
विनिषाय करं	१७२	वेदसुग्मगुरुन्	२३
विपरीतस्थित-	५३	वेदविभाषित	६०
विरक्षय विप्र	६८	वेदसामप्रवसु-	२८५
विदवावली प्रकरण	२८७	वेदसुग्मवनी-	२८३
विद्येन सम	२३७	वेद्यने सप्तमः	२३२
विद्येनाग्निता	२५८	वेदसुसम्मित-	१५६
वितोक्तनीमा	८१	वेदः पिपीडिका	१८१
विभृद्भुल स्रजसत्ता	२७२	वेतालीय प्रकरण	२८७
विषम इह पदे	१८६	वेतालीय प्रथम-	२८६
विषमचरणेषु	२८	वेनतेयो यदा	७०

वृत्त नाम	पृष्ठ सख्या	वृत्त नाम	पृष्ठ सख्या
श			
शक्र शम्भु	२१	घटपदवृत्त कसय	२३
शम्भुदासीनाम्ना	५	घटपदवृत्त द्वाभ्यां	२०
शम्भुरूपरस-	४	घटपद च तत	२७४
शम्भो मुनन्दिनी	२५०	घटसप्त्याता हारा	१६३
शरकल पञ्च-	५०	घष्ठभङ्गा	२१४
शरपरिमित-	१३४	घष्ठभङ्गा वरतनु-	२१५
शरमितङ्गणं	५३	घष्ठे भङ्गश्च	२४३
शरधेदमिता	२१	घटशरेणिवि पूर्व	२७७
शरेण कुण्डलेन	७६	घट्टदशमा दीर्घा	२३१
शरेण नूपुरेण	१२६	घटभिरप्यधिके	२८५
शरैस्तथा च	६८	घटविंशति सप्त-	८, १८०
शरोदितकलो	२३	घोडशाणं पद	२५२
शर हारमुग्ध	१०६	स	
शल्पो नवरङ्ग-	२४	सखि नवमासिनी	१०३
शशीति सशका	१२	सखि यत्र रग्ध्र	१८६
शशिवृत्त-	५६	सगणाद्विजयण-	३८
शङ्खलकुर्मकोकिल-	२३	सगणाष्टक-	१७५
शिरो दीपयद् गङ्गा	५७	सगणाहिता	६२
मुडवर्ततासीपस्य	१६७	सगणभंगण-	३५
शुभ धेति समा-	२७६	सगण मुदा	७१
श्रीचाद्रशेखरकृते	५६, २६०	सगण विधाय	७३
श्रीमत्पिङ्गलनागोक्त-	१	सगण विधेहि	७२, ११०
श्रीलक्ष्मीनाय भट्टस्य	१	सजसा सधु	१६२
श्रीवृत्तमौक्तिक-	२६१	सप्तधनुष्कल-	३७
श्लिष्टसद्विलष्ट-	२१६	सप्तजगथा-	१७०
श्लिष्टा शरेफ-	२१६	सप्तभकार-	४७
श्लिष्टी तुषाष्टमी	२२०	सप्तपिमुनि-	२८५
श्लिष्टी द्विपञ्चमी	२२८	सप्तहरय	६
		समगलितक	५३
घ		समचरण-	१६७
घटकलविरचित	५५	समपवती	६
घटकल प्रथम-	५१	समुद्देश-द्वय-	२०१
घटत्रिपञ्चमका	२३२	सम तत्र भया	१८८
		सम्यगसम्यग्	५

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या	वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
संक्षिप्त-दीर्घ-	२३२	सुन्दरिकाव	१६८
संस्कृत-प्राकृत-	२६६	सुप्रियपरमो	३
सरसकविजना-	१०३	सुरतमिता	३
सरससुख्य-	६६	सुरूप स्वर्णाद्वय	१३६
सर्वगुण्यदि-	१७६	सुरूपद्वय कर्ण	१५३
सर्वत्र पञ्चमं	६६	सुसुगन्धपुष्प-	६१
सर्वत्रैवं स्वल्प-	२७६	सुखनीयाः कवि-	२८४
सर्वदोषे	२२१	सोदाहरणमेतावद्	५६
सर्वस्या गाथायाः	६	सोरड्वाह्य तत्	३५
सर्वार्थं नयनात्	२८०	स्तुतिविधीयते	२६१
सर्वे ङगणा प्ररिता	२७	स्फुटतरमेते	१४
सर्वे धर्मा दीर्घा	६७	स्यात् सुभासिका	२७७
सर्वे रङ्गः सम-	२६	स्वरोपस्थापिता	२४३
सलक्षणा सप्रभेदा	२७४	स्वर्गशब्दबलप	८४
सलघुगमिगम-	१६६	स्वेच्छया तु कला	२६०
सल्लिनिधि-	१४६		
सर्वपाद्य प्रकारण	२७५	हठात्कृष्टाक्षरं.	२६
सहचरि चैत्रजी	१६६	हरिनासिपुर्गः	३
सहचरि नो यदा	१६२	हरिनामन्तर	२८६
सहचरि रविहृय-	१६७	हरिणीत ततः	२७५
सहचरि विकच-	१७६	हलापधे	१६४
सहचरेण मुक्तिर्नतद्	२७१	ह शोभरा.	२१६
सा चेत कवर्ग-	२३५	हारद्वय मेर-	८०
सार्विकभावा	३	हारद्वय स्फुरद्	११३
साधारणमत	२६०	हारद्वयाचित-	१०१
सितकञ्ज सभा	२३७	हारपुष्पसुन्दर	१५६
सिद्धिबुद्धिः करतल-	२३	हारभूषितकुशा	८४
सिद्धावलोकित	२७४	हारमेरु-	१३०, १४१
सुमुमारमतीना	२७१	हारमेरुमत्र	६८
सुजातिप्रतिभा-	१७६	हारा कृत्वा स्वर्ण-	१०४
सुगन्ध सुवति	१६३, १७१, १७६	हाप्ययोभ्यं-	२१६
सुवति विधेहि	१६६		

(ख.) उदाहरण-पद्यानुक्रम

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या	वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
अ		अभ्याजतोभ्यागत- (टि.)	६६
अकुण्ठधार	१२६	अभ्रमुपतिमद-	२२३
अङ्गण-रिङ्गण	२६०	अमलकमल-	२२०
अभ्युत कय कय	२६२	अम्बरगतसुर-	२४१
अजर्जरपतिशता	२२६	अम्बाविनिहत	२२२
अग्निसविसुमरणि (ग.)	२१०	अम्बुजकिरण-	२४३
अतिषट्पलचन्द्रिका-	११	अम्बुजकुटुम्ब-	२४२
अतिमत्तदेवा-	२१४	अयममृतमरीचि-	१२१
अतिभारतरं	१०६	अयमिह पुरः	१४२
अतिदिविशर्नः	११५	अयि मानिनि	१६०
अतिशयमञ्चति	२१७	अयि मुञ्च मान-	१५६
अतिशयमधि-	२१७	अयि विजहीहि (टि.)	१००
अतिपुरभि-	६८	अयि सहचरि	१२४, १५५
अथ तस्य विबाह-	१६०	अरिगणमभि-	१६
अथ वासवस्य	१६२	अरे रे कथय	२
अथ स विषय-	१३८	अलमीशपावक-	१५६
अथ सालताल-	१५९	अलिमालित-	८६
अमङ्गवर्जन	२३४	अवञ्चकमनिन्दितं	१६८
अनन्तरत्न- (टि.)	८३	अवतसितमञ्जु-	२१७
अनवरतं	१३१	अवनतमुनिगण	१६७
अनिष्टलण्डन	२२४	अवाचकमनू-	१६८
अनुदिनमनुरक्तः	२२५	अविकलतारा-	२१५
अनुपमगुण-	१५६	अशुभमपहरतु	६१
अनुपमयमुना-	७२	अक्षितवस्तन-	१४६
अनुपहतं	१५१	असुरयम	६३
अनुभूयविश्रमं	२५०	असुलभा शर-	६१
अनुलवमूर्ध्या	१४०	अस्त्युत्तरस्यां (टि.)	८३
अनेन नयता	१३५	अस्या वक्त्राब्ज-	२०३
अभजद् भयादिय	६१	अहिपयलय	६०
अभिनवजलधर-	२०	अहत धनेश्वर- (टि.)	१४७
अभिनवसजल-	११३	अ	
		आनन्दकारी	६२

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या	वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
भावद्वन्द्व-	२३२	एतस्या राजति	२०२
आलि पाहि मञ्जु-	१३०	एव यया ययो-	२०४
आलि रासजात-	१३०	क	
आलोच्य वेदस्य	८०	कठोरठाकृति-	१२६
इ		कण्ठे राजद्	६७
इन्द्राय वैवेन्द्रं	१२८	कति सन्ति भ	१७२, १६८
इह कलयालि	१०३	कनकबलय-	१७१
इह लसु विषम	१८६	कन्दर्पकोदण्ड-	२४०
इह दुरधिगमं.	१०६	कपटवदितनटव-	२६५
इह हि भवति	१८४	कपोलवण्डू (टि.)	८२
उ		कमनीयवपु	६३
उचितं पशुपत्य-	२२६	कमलमिवचन्द्र (ग.)	२०८
उत्तुङ्गोदयभृङ्ग-	२३७	कमलवदन-	२७२
उत्फुल्लाम्भोज- (टि.)	१८२	कमलाकरसाक्षित-	३७
उदञ्चत्कावेरी	१५३	कमलापति	५४
उदञ्चदतिमञ्जु-	२५८	कमलेषु ससुलि-	७१
उदयदण्डं विवाकर-	६०	कमल ललिता-	६६
उद्गीर्णतावप्य	२२६	कम्पायमाना	६४
उद्यद्विद्युत्पुलि-	२२५	कसकाल	५८
उद्भिन्नतर-	२३०	कसादीनां बाल	६३
उद्भवेनयत्यगुलि- (टि.)	८२	करकलितवपाल	४५
उद्भेलत्कुलजा	२५७	करपुगधृतवश-	३२
उन्मिदतद्दमेगु-	२३५	करपुगधृतवशी	३१
उन्मीलम्भकर-	१५१	कणिवारकृत	२३६
उन्मीलम्रील-	२०२	कर्णं कल्पितकणिक	२६४
उपगत इह	१५२	कलकोविल-	१२२
उपयनमम्भा-	११	कलवपणितवशिक	२६८
उपहितपशुपाली-	२५६	कलपरिमल	१०२
उरसि कृतमाल	३६	कलयत हृदये	१०६, ११०
उरसि विलसिता	४०, ४१	कलपति चेतसि	६६
ए		करुण दगमुत्तारि	१२७
एवस्यरोप-	२०६	कलय भाव	७५
एतस्या गण्डमण्डल-	२०२	कलय सलि	१०३
		कलय हृदये	१११

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या	वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
कलशोगतदधि-	११	कृष्ण प्रणौमि	१५८
कलापिनं निज-	१०८	केल रङ्गा	२१८
कलिततलित-	७२	केपिहो विप्रमुञ्च	१६१
कलुषशमन	१७६	कोकिलकलरव-	११४
कलुषहर	६३	कोकिलाकल-	१४४
कल्पपादप-	१४४	कोमलमुललित-	१०७
कल्पान्तप्रोद्धब्	१०४	कोण्डीकृत्य	२०५
कल्प तनुर्भुजस्य	३७	कवचिच्छन्दस्यास्ते	२०६
काञ्चनाभ-	१६१	क्षणमात्रमति-	३८
काननारव्य-	२२६	क्षणमुपविश	३५
कानने भाति	७०	क्षितिर्विजिति-	७५
कामिनि मुघने	१३२	क्षीरनीरविवेक-	२१२
कामिनीकलित	२११		
कालक्रमेणाय (टि.)	८२	ख	
कालिन्दीकूले	१२६	खाविताखण्डतो (ग.)	२५६
कालीन्दीये तट-	१३०	खञ्जनवर- (टि.)	४३
कालिपकुल-	५५	खरकेशिनिधूदन	३७
काशीक्षेत्रे गंगा-	१६४	खलिनीदुग्धक	२२५
कासकंलास- (टि.)	३३	ग	
किं ब्रूय रे (टि.)	६७	गञ्जितपरबीर	२३१
कुकुमपुण्ड्रक	२२१	गतोऽहमवलोकिता (ग.)	२०६
कुञ्चितकेशी	१६७	गर्भप्रिय जय	२५३
कुञ्चितधञ्जल-	३६	गर्जति जलधर	१८
कुन्दवशन	२२७	गर्वावलिभासुर	४६
कुन्दमुन्दर-	१४५	गलकृतमस्तक-	३५
कुन्पतिभाति	१६७	गाङ्गा वन्द्य परि-	२७
कुमारपञ्चविलेन	२७१	गिरितटीकुनटी-	२३५
कुमुदवतीपु	११०	गिरिराजमुता	४८, १७२, १७६
कुसुमजिकर-	१७४, २५३	गोर्वाणं स्फुट-	२५८
कूजत्कोपटि-	२०२	गुञ्जाकृतमूषण	३६
कूर्मो निरय मां	८८	गुणरत्नसागर (ग.)	२१०
कूर्मः शमय्यान्	६३	गुहर्वचसि	२१०
कृष्णपदारविन्द-	१६६		
कृष्णं कलये	८६		

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या	वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
गोब्रुलमारी	६, ८६	चन्दनर्चाचित	२३०
गो गोपालानां	७३	चन्द्रकचित-	५४
गोपतरुणी-	१२४	चन्द्रकचार-	४७, १७०
गोपवधूमयूर-	१३३	चन्द्रमुखि	१२४
गोपवधूमुला-	१३३	चन्द्रमुखीसुन्दर-	१७३
गोपस्थोविद्युदा-	२६४	चन्द्रवदनकुन्द-	४३
गोपालानां रचित-	७१	चन्द्रवर्त्मपिहितं	६२
गोपालं कलये	८६, ११६	चन्द्राकौं ते राम	७७
गोपालं कृतरासं	६७	चमूप्रभुं मन्यय (दि)	६५
गोपालं कैलिलोलं	१५४	चरणचलनहृत-	२६४
गोपिकामानसे	६४	चरणं शरणं भवतु	३१
गोपिके तय	८४	चलत्कुन्तलं	८८
गोपिकोद्गसंध-	६१	चादयो न	२०५
गोपीचिन्ताकयं	६१	चाङ्कुण्डल-	१६६
गोपीजनविशो	७४	चास्तट	२५६
गोपीजनवल-	१८३	चित्रं मुरारे	२५५
गोपीयु कैलिरस-	१०१	धिरमिह धानसे	१२६
गोपीः संभूतचापल-	२४४	चूतनवपल्लव- (दि.)	३३
गोपं यदे गोपिका-	७८	चेतसि कृष्ण	१०२
गोबुन्दे सञ्चारी	५८	चेतसि पादपुर्ण	१५६
गोडं पिष्टाग्रं (दि.)	१४६	चेत स्मरमहितं	१८
गौरीदृढदेहं	१००	छ	
गौरीधर भस्म-	२	छदसामपि	२६८
गौरीधिरचित-	१४	ज	
प्रथम कमल-	८७	जगतीसभाव-	२५४
प्रह्लिहृदयो	१३८	जनकुत्सपानं (दि.)	५६
घ		जनितेन मित्र-	१०६
घूर्णप्रभ्रान्ते	१४६	जम्भाराति-	२१५
च		जम्भारातीमकुम्भो-	२०३
चञ्चलकुन्तल	६०	जय कचवञ्चद्	२३८
चण्डमुगदण्ड- (दि.)	३३	जय गतगञ्जु	२३६
चण्डीपतिप्रयण-	२१४	जय चाददाम	२३५
चण्डीप्रियमत	२५७	जय चादहास	२३३
चतुरिमचञ्चद्	२१६	जय जय जगदीश	१८५

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या	वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
दानवघटालविभ्रं	२४६	न	
दिवपालाशन-	२०३	न कस्य चेतः	२००
दितिभार्दन	२२०	नक्षगलदसुजा	११७
दितिमुत्तकदन	६७	न जामदग्न्याः (टि.)	६६
दितिमुत्तितवहः	१६	नन्दकुमार.	६२, ६०
दिवाकराद् (टि.)	८३	नन्दकुलचन्द्र	२४७
दिविषद्वन्द-	२०५	नन्दनन्दनमेव	५५
दिष्ट्यमुगीतिभिः	१६५	नन्दयिचुम्बित-	२५६
दिष्ट्ये दण्डपरस्थसु-	२४२	नभसि समुद-	१२३
दिशि दिशि परि-	१८८	नमत सतत	१११
दिशि दिशि विलसति	२८	नमत सदा जनत	१६२
दिशि स्फारीभूतैः	१६६	नमस्तुङ्गशिरो-	२०२
दीप्यद् देवानां	१५४	नमस्यानि	२०१
दुकूलं बिभ्राणी	१३७	नमामि पञ्चजननं	५२
दुःखं मे प्रक्षिपति	२०४	नमोऽस्तु ते	१६७
दुर्जनभोजेन्द्रकण्ट- (ग.)	२५६	नयनमनोरम	१६६
दुर्जयपरबल-	२२२	नयनमनोहर	१६३
दुष्टदुर्दमारिष्ट- (ग.)	२५६	नरकरिपु-	१२४
दुरालुडः प्रमोद	२०४	नरपतिसमूह-	१३३
दुशा द्राघी यस्या	१३७	नरवरपते	१२५
दुष्टमस्ति धामुदेव	१५७	नस्ति तप्तवर्कर-	२२८
दुष्टधा ॥ पवनस्य	२२२	नवकोकिला- (टि.)	४०
देवकूमिनि	६२	नवजलद-	६६
देव देव धामुदेव	१५६	नवनीतकरं	१८६
देवाधीना-	२१६	नवनीतचोर	११०
देवयन्त्रं प्रलोभया-	१२०	नवनोरद-	१८६
		नवयजुस्तवन-	२५१
		नवमञ्जुलवञ्जुल-	१२३
पुनोति मनो भम	४८, १७०	नवदिलिदिलिपण्ड-	१५१
पूतामुरापीड	६४	नवसन्ध्यावह्नि-	१५२
पूतपोषर्दन	२२३	नवीननतिनो-	६७
पूतिमवधारय	५१	नवीनमेघमुन्दरं	१५८
पूतोन्माहपुराद्	२६१	नव्ये शान्तिन्दीये	१७१
प्यानंकाया	१७७	न स्याद् विमवित-	२०५

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या	वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
नाकाधिप-	२१५	पलायनं फेनिल-	२५०
नाथ हे नन्द-	२२७	पलितंकरणी	२५२
नामानि प्रणयेन	२६५	पवनविधूत-	१७०
निखिलसुरगण-	५२	पशुपल्लना-	२७०
निगमविरहित	१७६	पशुषु कृपां तथ	२४६
निजतनुवधि-	३४	पातालतालुतल- (ग.)	२०६
नितान्तमुत्तुङ्ग- (टि.)	६५	पातुं न पारयति	११४
नित्यं नृत्यं कलयति	२१७	पाहि जननि	४३
नित्यं यगमधु-	२७१	पिकरुतमिदमनु-	२६
नित्यं लक्ष्मणध्याया (टि.)	१८१	पिङ्गलकेशी	१६६
नित्यं धन्वे महेशं	१२५	पिण्डलसदृघन-	२५७
निनिन्द निजमिन्दिरा	२४७	पिशाङ्गसिचया	२७०
निम्नाः प्रवेशाः- (टि.)	६६	पिण्ड्या संग्रामपट्टे	२५७
निरवधिबिन्-	१२१	पीत्वा बिन्दुकर्णं	२५६
निरस्तचण्ड-	२३२	पुंनरागस्तबक-	२५३
निवार्यमाणै- (टि.)	६६	पुरुषोत्तम बीर	२५४
निविडतरतुलाया-	२२३	पुलिनधृतरण-	२४६
निष्प्रत्यूहं पुण्यां (टि.)	१८१	प्रकटोक्तगुण	२२६
नीलतमः पदा-	१४८	प्रगल्भसिक्कन	२२४
नृषु विलक्षण-	६२	प्रचुरपरमहंसैः	२२६
नौमि गोपकामिनी	१२१	प्रणतविमार्यं	२६१
नौमि धनिता-	११७	प्रणमत भवबन्ध-	२०२
नौम्यहं विदेहजा-	१४१	प्रणमत सर्वा-	७०
प		प्रणयप्रवण	२६०
पङ्कजकोपपान-	१६२	प्रणयभरित-	२५०
पङ्कजलोचन-	१६७	प्रणिपातप्रवण- (ग.)	२०६
पण्डितगुणगण-	२३४	प्रत्यादेशादपि च	२०४
पण्डितवर्द्धन	२३१	प्रथमकथित-	१८४
पद तुषार- (टि.)	८२	प्रपन्नजनतातमः	२२७
पद्मं रत्नवीत- (टि.)	६५	प्रयान्ति भर्त्रः (टि.)	६६
परममंनिरी-	१६६	प्रसरति पुरतः	१८८
पराम्बुधाबा-	६०	प्रसरदुवार-	२२१
पर्याप्त तप्तचामी-	२०२	प्रसन्नदिक्- (टि.)	८४
पर्वतधारिणि	१२६	प्रसीद विश्राम्यतु (टि.)	८२

श्लोक नाम	पृष्ठ संख्या	श्लोक नाम	पृष्ठ संख्या
प्रिय प्रतिस्फुरत	२०४	मन इव रमणीना	१२१
प्रेमोद्देवस्ति तवत्पु-	२४३	मनमानसपति	३२
प्रेमोद्देवदृष्टिपङ्क	२६४	मनसिजल्लषा-	२१४
प्रोदध्यान्ते	१४३ १६४	मनाकप्रसूत	२००
फ		मन्दाकिनीपुलिन	१६७
फुल्लपङ्कजानन	६६	मन्दायते व सत्तु	२०४
ब		मन्वहाणविरा-	१४४
धन्वमीति ह्रदय	१२७	मम बह्यते	७२
धनी धनाराति (दि)	६७	मम सधुमपन	११५
धाणालीहृत	२१५	मलयजसारा-	२३२
धुडीना परिमोहन	२२८	मल्लिकानव (दि)	४०
महाभवादिष-	५२	मल्लिमातली	५०
महा महापञ्चभाण्डे	२२२	मल्लिकते मलिन	१७३
भ		महाचमूना (दि)	६५
भयपुतचित्तो	६६	मा कान्ते पक्ष (दि)	१२०
भवच्छेदे इक्ष	१५४	मा कुप मा	१७५
भवजलधितारिणि	५०	मा कुद मानिनि	१६५
भवत प्रताप	२४६	मागयविष्णुद्वि	४८
भवन्निष	१२१	माधयमाति	७४
भवबाधहरण	१६	माधयविष्णुद्वि	१७८
भव्याभि कैकाभि	७०	माधयविष्णुद्वि	२५२
भालधिराजित-	४७	मानवतीमरहादि-	२५१
मिबुरमानस-	६२	मानसमिह मम	३२
भुजगपदिवारित	४१	मानिनि धान-	१६२
भुजगपदिवारित	२२३	मागामीनोन्वतु	७७
भुजगपुगल	११६	मिश्रपुत्तोदित	२६२
भुवनत्रय	२३१	मुकुटविराजित-	२०
भूमोभानो	२१२	मुखन्तवेणाक्षि-	८१
भ्रमन्ती धनु-	१४५	मुखाभोज	१६३
भ्रमण्डलताण्डवित	२३६	मुष्टानां माता-	६५
म		मुदा किलोत्तमौलि-	१०२
मतिभव	५८	मुदे नोज्जु	५६
मदनरसगत	२३६	मुनीन्द्रा यतन्ति	१४५
मधुरेण मापुरी	२६२	मृगयणसाहके	१३२

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या	वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
य		रतिमनुबध्य	२३०
यक्षश्चक्रे जनक-	२०२	रत्नसानुशरासनं	१४५
यतिभङ्गो नाम	२०५	रमाकान्तं बन्दे	१५७
यतिजिह्वेष्ट-	२०६	रमापते	५८
यत्र ध नायिकानां (प.)	२०८	रसनमुखर	२६५
यत्राश्रुकाक्षेप- (टि.)	८४	रसपरिपाटी	२४७
यदा कंसादीनां	१३६	राकाचन्द्रावधिक-	२०३
यहन्ते विलसति-	१०७	राजति वंशीस्त-	५३
यव्वेणुविराज-	१६०	राधामाधार्यनां	१६३
यमुनाजलकेलिषु	३६	राधामुलाम्रतरणिः	१२
यमुनातटे	१६३	राधामुलकारी	६५
यमुनारविहार-	१६१	राधिकारागिण	५६
यश्चाप्सरो (टि.)	८३	राधिके विलोक-	१८६
यस्मै परिध्वस्त-	२६१	रामातरणिमोहामा-	२०३
यस्योज्ज्वलाङ्गस्य	२६१	रावणादिमानपूर-	४६
या कपिलाक्षी	१७५	रासकेलिरसो-	१४४
या तरलाक्षी	१७५	रासकेलिसतुष्ण-	१६४
या पीनाङ्गोष्-	१५८	रासक्रीडासक्त-	१०५
यामिनीमधि-	८४	रासललितलास (टि.)	४४
यामुने संकते	१८६	रासलास्ययोप-	१२२
मुञ्चकुट-	२२५	रासोल्लासे	१७२
यैः मष्टद्वानेक-	१७७	रिङ्गदुष्भृङ्ग	२४६
यो बैत्यानामिन्द्र	११३	रश्मिरवेणु-	५१
यं सर्वशीलाः (टि.)	८३	रन्दोऽमन्दः (टि.)	१८२
यः पूरयन् (टि.)	८२	रूपविनिर्जितमार	३५
यः स्थिरकण्ठः	२६१	रु	
र		लक्ष्मण दिशि दिशि	१८
रगरक्त-	२१३	ललितललित-	७५
रङ्गस्यले ताण्डव-	२४८	लसदरुणेशण	१४०
रघुपतिरपि (टि.)	१४७	लीलानृत्यन्मत्त-	१०५
रचय कदलोदल-	४०	लीलारव्य- (टि.)	१०५
रञ्जितनारी-	२३३	लुलितनलिना-	७१
रणति हरे तव	२२१	लोके त्वदीय यशसा	११४
रणभुवि भञ्जति	२१७	लोष्ठीकृतमणि-	२५६

वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या	वृत्त नाम	पृष्ठ संख्या
वेदरन्ध्रं म्ती	१०५	थीमद् राजन्	१४८
वेरिञ्चाना तयो-	२०२	थीमभारायण	१५७
व्यपगतघन- (ग.)	२१०	थीममिध्यात्	५७
व्यालकातमालिका-	७६	युत्येति याचं (टि.)	६५
व्रजजननागरी	११६	थेयांसि बहुविघ्नानि	२०४
व्रजजनपुत	६५	स	
व्रजनायिका	७३	सफलतनुभृतां	११८
व्रजपृथुवल्ली	२४३	सखि गोकुले	६२
व्रजभुवि रचित-	३६	सखि सोपवेश-	७३
व्रजभुविबिलास	६६	सखि चातकजीवानुः	२५४
व्रजपुवतिभिः	११६	सखि भन्दकुमारं	१६८
व्रजवधुजन-	१०१	सखि नन्दमुतं	१८६, १८६
व्रजविहरण-	६८	सखि नन्दसूनु-	११६
व्रजमुदरी	१६३	सखि पञ्चजनेश	१६८
व्रजाधिपकिशोरं	६६	सखि बन्धमीति	४२
व्रजाधिपबाल	६५	सखि मनसो मम	७४
वजे रासकारी	६४	सखि मम पुरतो	६८
दा		सखि मे भविता	५६
शम कुह	५७	सखि सम्प्रति कं	१२२
शम्भो जय प्रण-	१६६	सखि हरिरायरति	७०
शिरसि निवसिता	५३	सघनतिमिर-	१६६
शीतं पुष्परंभिनन्द-	१००	सङ्गेन वो (टि.)	६५
शूल शूल तु गाढ	२०३	राट् प्रामसोभरुणूत- (ग.)	२०८
शोषपतगेश (टि.)	३३	राट् प्रामारण्यवारी	१६०
शोषविरचितहार-	३८	स जयति मुरली-	१२
श देहि गोपेश	६०	स जयति हर	१८६
श्यामललोच-	७६	सञ्जलदरण-	२४५
श्रितमघजलधे	२५५	सञ्चितचक्र	२२६
श्रीकण्ठ त्रिपुर-	१७८	सत्य सद्बसु-	१०८
श्रीकृष्णेन कीडन्तीना	१६४	स त्व जय जय	२६२
श्रीकृष्ण भवभय-	१७८	सदाभिराम- (ग.)	२०८
श्रीगोविन्दपदार-	१४६	सन्तुष्टे तिसृणां (टि.)	२०५
श्रीगोविद	१७७	सदीपितशर-	२१३
श्रीनन्दसूनी-	८६	समीतदेतेष-	२४८

चतुर्थ परिशिष्ट

क मात्रिक छन्दों के लक्षण एवं नाम-भेद

सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची—

ग्रन्थ नाम	ग्रन्थकार
१ वृत्तमौक्तिक	चन्द्रशेखर भट्ट
२ छन्द सूत्र	पिङ्गल
३ नाट्यशास्त्र	आचार्य भरत
४ बृहत्संहिता	बराहमिहिर
५ स्वयम्भूछन्द	स्वयम्भू
६ कविदर्पण	भज्ञात
७ वृत्तजातिसमुच्चय	कवि विरहाङ्क
८ सुवृत्ततिलक	शेमेन्द्र
९ प्राकृतपञ्जल	हरिहर (?)
१० छन्दोनुशासन	हेमचन्द्राचार्य
११ छन्दोनुशासन-स्वोपज्ञटीका	"
१२ बाणोद्घरण	दामोदर
१३ वृत्तरत्नाकर	केदारभट्ट
१४ वृत्तरत्नाकर-नारायणीटीका	नारायणभट्ट
१५ छन्दोमञ्जरी	गंगादास
१६ वृत्तमुक्तावली	श्रीकृष्णभट्ट
१७ वाग्वल्लभ	दुःखभञ्जन
१८ जयदेवच्छन्द	जयदेव
१९ छन्दोनुशासन	जयकीर्ति
२० रत्नमञ्जूषा	भज्ञात जैन कवि
२१ गाथासूक्त	नन्दितादय
२२ छन्दोविवर्ति	जनाश्रय

संकेत— छन्दनाम = वृत्तमौक्तिक के क्रमानुसार है। मात्रासंख्या = छन्द के प्रत्येक चरण की मात्राएँ। लक्षण = ट = ६ मात्रा, ठ = ५ मात्रा, ड = ४ मात्रा, ढ = ३ मात्रा, ए = २ मात्रा, ग = दो मात्रा, ल = १ मात्रा। सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची का क्रम-सूचक सख्या है। छन्द नाम एवं लक्षण के प्रागे के अंक यह सूचित करते हैं कि इन-इन अंकों के ग्रन्थों में भी यह छन्द इसी नाम से स्वीकृत है और नाम भेद के प्रागे क अंक यह सूचित करते हैं कि इन इन ग्रन्थों में इसी लक्षण का छन्द इस नाम से प्रचलित है। जिन छन्दों का इन ग्रन्थों में उल्लेख नहीं है उनके अंक यहाँ नहीं दिए गए हैं।

छन्द नाम	मात्रा संख्या एवं वंश	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्कलनाद्
गाथा	[१२ १८ १२ १५, ड ७ य, इसमें छठा 'ड' जगण होता है या चार लघु होते हैं। इसके विषम गणों में अर्थात् १ ३ ५ ७ ड म जगण निषिद्ध है। चतुर्थ चरण में छठा 'ड' केवल एक लघु होता है।]	१ ५ ६ ७, ६, १०, १२, १४ १६ १७ २१ आर्या- १० १४, १७ १८ १६ २०, २२
विगाथा	[१२ १४ १२ १८]	१ ६ १२ १४ १६, १७ २१, जङ्गीति- ५ ६ १०, १४ १७, १८ १६, २१
गाहू	[१२ १४ १२, १४]	१ ६ १४, गाधिक्का- १६, गाहू- २१ जङ्गीति- ५ ६ ७, १०, १२, १४, १७, १८ १६ २१
उदगाथा	[१२ १८, १२ १८]	१, ६, १४ १६ १७ २१, गीति- ५, ६ ७ १० १२ १४, १७, १८ १६ २० २१ २२
गाहिनी	[१२ १८ १२ १०]	१, ६ १२ १४ २१, गाधिनी- १६, १७ ललितावल्लुगीति- १४
सिंहिनी	[१२ २० १२ १८]	१ ६ १२ १४ १६ १७ ललितावल्लु- गीति- १४
स्वयम्भ	[१२ २० १२ २०]	१ ५ ६ ७ ६ १० १२ १४ १६ १७ २१, आर्यागीति- १४ १७ १८ १६ २०
बोहा	[१३ ११ १३, ११ प्रथम और तृतीय चरण में ड ड ड द्विपदा- १६ द्विपदा- १७ द्विपदा- ७, और द्वितीय तथा चतुर्थ चरण में ड ड ल, अष्टसम]	१, ६ १० १२ १४, १७ बोहक- ६ एव ५ २१ के अनुसार मात्राएँ- १४ १२, १४ १२ ह।
रसिका	[११ षट्पदी ड ड ड]	१ ६ १७, रसिक- १६ उत्कृष्टा- १४, सुललित- १७ सुललितमति १२
रोला	[२४, चतुष्पदी]	१ ६ १२ १४ १६ १७
गन्धानक	[१७ १८ १७ १८ वण अष्टसम]	१ ६, १२ १६ मन्धा- १४ १७ के अनु- सार १७ वण २० मात्रा १८ वण २४ मात्राएँ होती हैं।
चौपदा	[३० चतुष्पदी षोडशपदी समग्रमात्रा ४८० ड-७ ग]	१, ६ १२ १७, चतुष्पदा- १४ चतुष्पदी- १६

छन्द-नाम	मात्रा-संख्या एवं लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताक्ष
पता	[३१; द्विपदी; ड-७, ढ; 'ढ' मिलघुक होता है।]	१, ६, ८, १२, १४, १६, १७; ६ के अनुसार षट्पदी है, लक्षण भिन्न-भिन्न हैं— १२, ८, १३। ८, ८, ११। १०, ८, ११। १२, ८, ११। १२, ८, १२। १०, ८, १२। १०, ८, १३। १०, ८, १४। १०, ८, २२। ५ के अनुसार चतुष्पदी, लक्षण— ६, १४, ८, १४। १२, १२, १२, १२। १६, १६, १६, १६ है।
घसानग्व	[३१; ट. ड. ड. ड. ठ. ड. ड.]	१, ६, १२, १४, १७.
काव्यम्	[२४; चतुष्पदी; ट. ड. ड. ड. ढ; तीसरा 'ढ' जगण हो या चार सधु हों।]	१, ६, १२, १४, १६; वस्तुवदन— ६.
जलालम्	[२८; चतुष्पदी; ड. ड. ड. ड. ट ड. ड.]	१, ६, १२, १४, १६; कपूर्व— १०.
षट्पद	[२४, २४, २४, २४, २८, २८, मिश्रित षट्पदी; ट. ड. ड. ड. ड. ण; दो चरण जलाल के लक्षणानुसार]	१, ६, ६, १२, १४, १६, १७; वस्तुक— २१
पञ्चटिका	[१६; चतुष्पदी; ड-४; चौथा 'ढ' जगण होता है।]	१, ६, १२, १४, १६, १७; पञ्चटिका— ५, १०, २१; षट्ठिका— ६.
अष्टिली	[१६; चतुष्पदी; ड-४; इसमें जगण वर्जित है और चरण के अन्त में दो सधु होने चाहिए]	१, ५, ६, ७, ८, १०; अष्टिली— १२; अष्टिलम्— १६, १७; अष्टिला— १७; अष्टिलिह— १४.
पादाकुलकम्	[१६; चतुष्पदी; गणनिग्रम-रहित]	१, ५, ६, ८, १२, १४, १६, १७, १८, १९, २२; १० के अनुसार १२ मात्रा चतुष्पदी होती है।
चीबोला रड्डा	[१६, १४, १६ १४ अ०स०] [१५, १२, १५, ११, १५, दोहा के चार चरण; नवपदी; प्रथम चरण में 'ढ. ड. ड. ड.' अन्तिम 'ढ' जगण हो या चार	१, ६, चतुर्वचन— १६. १, ५, ६, ७, ८, १०, १४, १७; नवपद— ६, १२, १४, १७.

छंद नाम	मात्रा सख्या एवं लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्केताक्ष
	लघु हों, द्वितीय चरण मे 'ड ड ड' तीसरा 'ड' चार लघुरूप मे हो, ततीय और पञ्चम चरण मे 'ड ड ड ड' अन्त मे दो लघु आवश्यक हैं, चतुर्थे चरण मे 'ड ड ड' और अन्तिम चार चरण दोहा संज्ञानुसार होते हैं ।]	
करभी रङ्गा	[१३ ११, १३, ११ १३ बोहा]	१, ७ ६, करभी- १४
मन्दा रङ्गा	[१४, ११, १४, ११, १४, बोहा]	१, ६ १४, मोदनिका- ७
मोहिनी रङ्गा	[१६, ११, १६, ११, १६, बोहा]	१, ६ १४
चावसेना रङ्गा	[१५, ११, १५ ११, १५, बोहा]	१, ६, १४, चावनेना- ७
भद्रा रङ्गा	[१५, १२, १५ १२, १५, बोहा]	१, ६, १४
राजसेना रङ्गा	[१५, १२, १५ ११, १५ बोहा]	१, ६, १४
तालकिनी रङ्गा	[१६ १२ १६ ११, १६, बोहा]	१, ६ १४, राहुसेनिका- ७
पद्मावती	[३२, चतुष्पदी, ड- ८, ये ड' ५५ ११५ ५११ ११११ रूप मे होने चाहिये । जयण का नियेष है ।]	१ ६ १२ १४ १६, पद्मावतिका- १७
कुण्डलिका	[बोहा-काव्य मिश्रित]	१ ६, १२ १४, १६, १७, प्राकृतपिङ्गला- नुसार बोहा उल्लास-मिश्रित
शतनाङ्गणम	[२५ मात्रा, २० वर्ण, चतुष्पदी ड ड ड ड ड ल ग]	१ १२ १७, शतनाङ्ग-६, १६ शतनाङ्ग- १४
द्विपदी	[२८, ड ड ड ड ड ग]	१, ६, १२ १४, १६, ५ के अनुसार २६ मात्रा द्विपदी, एष ६ १०, १६, २१ के अनुसार २८ मात्रा चतुष्पदी, द्विपदा- १७ माण्डीरजोदनस्तोत्र की टीका मे १२ मात्रा, चतुष्पदी माना है ।
भुलणा	[३७ द्विपदी, गणनियमरहित]	१ कुल्लन- ६, १६
खञ्जा	[४१, द्विपदी, ड- ६ रगण, ड' चार लघ्यात्मक हों]	१, ६, १२, १४, १६, खञ्जिका- १७ खजक- ५ ६, १० के अनुसार २३ मात्रा चतुष्पदी है ।

छन्द-नाम	माप-सख्या एवं लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्केताद्ध
शिला	[विषम द्विपदी; प्रथम पद में २८ मात्रा, २७ वर्ण; ड- ६, जगण, द्वितीय पद में ३२ मात्रा, ३१ वर्ण; ड- ७, जगण; दोनों पदों में 'ड' चार लघु-रूप में हों।	१, ६, १२, १४, १६, १७.
माला	[विषम द्विपदी; प्रथम पद में ४५ मात्रा, ४१ वर्ण; ड- ६, जगण, गुरुद्वय; द्वितीय पद में गाथा छन्द का तृतीय और चतुर्थ चरण अर्थात् २७ मात्रा]	१, ६, १२, १४, १६, १७.
चुलिमाला	[१३, १६, १३, १६; अर्द्धसम]	१, ६, १२, १६, १७; चुलिका-१४.
सोरठा	[११, १३, ११, १३ अर्द्धसम]	१, ६, १२, १७; सौराष्ट्र- १६, १७; सौराष्ट्री- १४; सौराष्ट्री- १७.
हाकलि	[१४; चतुष्पदी; प्रथम-द्वितीय चरण में ११-११ वर्ण और तृतीय-चतुर्थ चरण में १०-१० वर्ण, समण या भगण दो गण हो और नगण तथा लघु गुरु हों]	१, ६, १२, १६, १७; काहलि- १४.
मधुभार	[८; चतुष्पदी; ड, जगण]	१, ६, १२, १६; मधुभारतम्- १४; वसुकला- १७; तालवनचरित की टीका में 'कलगीत'
आभीर	[११; चतुष्पदी; चरण के अन्त में जगण अपेक्षित है।]	१, ६, १२, १४, १६, १७; यमलाजुन- भञ्जनस्तोत्र की टीका में 'अनुकूला'
दण्डकला	[३२; चतुष्पदी; ड. ड. ड. ड. ड. ड. ड. गुरु]	१, ६, १६; दण्डकाहल- १४.
कामकला	[३२; चतुष्पदी; यतिभेद- दण्डकला में १०, ८, १४ पर यति होती है और इसमें १६, १६ पर यति होती है]	१,
रुचिरा	[३०, द्विपदी; ड- ७, गुरु; जगण	१, १२, १७; निर्दिष्ट है।

छन्द नाम	मात्रा संख्या एवं लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ सङ्केताङ्क
दीपक	[१० चतुष्पदी, ड लघु २, जगण]	१, ६ १२, १४, १६, १७
सिंहवलोकित	[१६, चतुष्पदी, सगण श्रीर ४ लघु का यथेच्छ प्रयोग]	१ १२, १६, १७, सिंहावलोक- ६, १४.
प्लवङ्गम	[२१, चतुष्पदी, ट ठ ड जगण, गुरु]	१, ६ १२, १६, १७
लीलावती	[३२, चतुष्पदी, लघु गुरु वण- नियम रहित, ड ङ, ड' में सगण, ४ लघु जगण भगण, गुरुद्वय का प्रयोग अपेक्षित है]	१, ६, १२, १६, लीलावतिका- १७
हरिगीतम्	[२८, चतुष्पदी, ठ ट ठ ठ ठ, गुरु]	१, १२, १६, हरिगीतक- १७
हरिगीतकम्	[३०, चतुष्पदी, ठ ट ठ ठ ठ गुरुद्वय]	१
भनोहर- हरि गीतम्	२८, चतुष्पदी ठ ट ठ ठ ठ गुरु, विराम पर ठ' गुर्वंत अपेक्षित है, यति १६ १२ पर है]	१
हरिगीता	[२८, चतुष्पदी, ठ ट ठ ठ ठ गुरु विराम ६ ७ १२ पर अपेक्षित है]	१, ६
अपरा हरि गीता	[२८ चतुष्पदी, ठ ट ठ ठ ठ गुरु, विराम १४-१४ पर अपेक्षित है]	१,
त्रिभंगी	[३२ चतुष्पदी, ङ- ङ, जगण निषिद्ध है]	१ ६, १२ १६, १७
दुमिलका हीरम	[३२, चतुष्पदी, ड ङ,] [२३, चतुष्पदी, ट ट ट रगण ट' एक गुरु श्रीर ४ लघु- रूप होगा चाहिए।]	१ १२ दुमिला- ६, १६, १७, १ ६ १६, हीरक- १२, १७
जनहरणम्	[३२, चतुष्पदी, ड ङ, जिसमें २८ लघु श्रीर अन्त में सगण हो]	१, १६ जलहरण- ६, १२, १७

छन्द नाम	भाषा सख्या एवं लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
अपरं लम्बिता- गलितकम्	[२२; चतुष्पदी, ट. ड. ड. ड. १; प्रथम और तृतीय चरण में अगण नहीं;] ड. गुरु; प्रथम और तृतीय चरण में अगण नहीं;]	१; लम्बितागलितकम्-७, १०.
विसिप्तिका- गलितकम्	[२५; चतुष्पदी; प्रथम और तृतीय चरण में ठ. ठ. ठ. ठ ठ, द्वितीय और चतुर्थचरण में ड ठ. ठ ठ. ठ ग होता है।]	१; विसिप्तिर्गलितकम्-१०.
सलिता- गलितकम्	[२४; चतुष्पदी; ड-६,]	१ ७, १०
विषमिता- गलितकम्	[२५, चतुष्पदी; प्रथम और द्वितीय चरण में ठ. ड. ड ड. ड. ड, तृतीय एवं चतुर्थ चरण में ड ड ड ड ड. ड. ग होता है।]	१; विषमागलितकम्-१०;
भासागलितकम्	[४६; चतुष्पदी; ट. ड-१०, १, १०- अर्थात् १ ३, ५, ७, ९ या 'ड' अगण, २, ४, ६, ८ या 'ड' चार लघ्यात्मक, और १० या 'ड' सगण होना चाहिये]	१, १०.
मुग्धामासा- गलितकम्	[३५; चतुष्पदी, ट. ड-८]	१, मुग्धागलितकम्-५, १०
उद्गातकम्	[३०, चतुष्पदी, ट. ड-६;]	१. उद्गाता- ७, उद्गातकम्-५, १०

क (२) गाथादि छन्द-भेदों के लक्षण एवं नाम-भेद

गाथा, स्वन्धरु, दोहा, रोला, रसिका, वाय्य एव षट्पद नामक छन्दों के प्रस्तार-क्रम से भेद, लक्षण एव नाम-भेद निम्नलिखित ग्रन्थों में ही प्राप्त हैं—

गाथा-प्रस्तार-भेद

प्रस्तार- क्रम	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौलिक	प्राकृत- पैगल	वृत्तरत्ना- कर-	वाग्वल्लभ नारायणी-टीका	गाथालक्षण और कवि- दर्पण
१	२७	३	३०	लक्ष्मी.	लक्ष्मी	लक्ष्मी	लक्ष्मी.	कमला
२	२६	५	३१	ऋद्धि	ऋद्धि	ऋद्धि	ऋद्धि:	लसिता
३	२५	७	३२	बुद्धि	बुद्धि	बुद्धि	बुद्धि.	लोला
४	२४	९	३३	सज्जा	सज्जा	सज्जा	सज्जा	ज्योत्स्ना
५	२३	११	३४	विद्या	विद्या	विद्या	विद्या	रम्भा
६	२२	१३	३५	क्षमा	क्षमा	क्षमा	क्षमा	मागधी
७	२१	१५	३६	देही	देही	गोरी	देही	लक्ष्मी
८	२०	१७	३७	गोरी	गोरी	देही	गोरी	विष्णु
९	१९	१९	३८	घात्री	घात्री	रात्री	घात्री (रात्री)	माला
१०	१८	२१	३९	चूर्ण	चूर्ण	पूर्ण	चूर्ण	हसी
११	१७	२३	४०	छाया	छाया	छाया	छाया	शशिलेखा
१२	१६	२५	४१	कान्ति	कान्ति	कान्ति	कान्ति	जाह्नवी
१३	१५	२७	४२	महामाया	महामाया	महामाया	महामाया	शुद्धि
१४	१४	२९	४३	कीर्ति	कीर्ति	कीर्ति	कीर्ति	काली
१५	१३	३१	४४	सिद्धि	सिद्धि	सिद्धा	सिद्धा	कुमारी
१६	१२	३३	४५	मानी	मानिनी	मानी	मानिनी (मनोरमा)	मेधा
१७	११	३५	४६	रामा	रामा	रामा	रामा	सिद्धि
१८	१०	३७	४७	विश्व	गाहिनी	गाहिनी	गाहिनी	ऋद्धि
१९	९	३९	४८	वासिता	विश्व	विश्व	विश्व	कुमुदिनी
२०	८	४१	४९	शोभा	वासिता	वासिता	वासिता	धरणी
२१	७	४३	५०	हरिणी	शोभा	शोभा	शोभा	यक्षिणी
२२	६	४५	५१	चक्री	हरिणी	हरिणी	हरिणी	घोषा
२३	५	४७	५२	कुररी	चक्री	चक्री	चक्री	ब्राह्मी (वाणी)
२४	४	४९	५३	हसी	सारसी	सारसी	सुरसी	गान्धर्वी
२५	३	५१	५४	सारसी	कुररी	कुररी	कुररी	मञ्जरी
२६	२	५३	५५	×	सिही	सिही	सिही	गोरी
२७	१	५५	५६	×	हसी	हसी	हसी	×

(हसपदवी)

स्कन्धक प्रस्तार-भेद

प्रस्तार- क्रम	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तयोक्तिक	प्रावृत्तपङ्क्तिल	वृत्तरत्नाकर- नारायणी टीका	वाग्वत्लभ
१	३०	४	३४	मन्द	मन्द	×	×
२	२६	६	३५	भद्र	भद्र	×	×
३	२८	८	३६	शिव	शेष	मन्द	मन्द
४	२७	१०	३७	शेष	सारङ्ग	भद्र	भद्र
५	२६	१२	३८	सारङ्ग	शिव	शेष	शेष
६	२५	१४	३९	ब्रह्मा	ब्रह्मा	सारङ्ग	सारङ्ग
७	२४	१६	४०	धारण	धारण	शिव	शिव
८	२३	१८	४१	वहण	वहण	ब्रह्मा	ब्रह्मा
९	२२	२०	४२	मदन	नील	धारण	धारण
१०	२१	२२	४३	नील	मदन	वहण	वहण
११	२०	२४	४४	तालशङ्कु	तालशङ्कु	नील	नील
१२	१९	२६	४५	शेखर	शेखर	मदन	निशङ्कु
१३	१८	२८	४६	शर	शर	तालशङ्कु	मदन
१४	१७	३०	४७	गगनम्	गगनम्	शेखर	ताल
१५	१६	३२	४८	शरभ	शरभ	शर	शेखर
१६	१५	३४	४९	विमति	विमति	गगनम्	शर
१७	१४	३६	५०	क्षीरम्	क्षीरम्	शरभ	गगनम्
१८	१३	३८	५१	नगरम्	नगरम्	विमति	शरभ
१९	१२	४०	५२	नर	नर	क्षीरम्	विमति
२०	११	४२	५३	स्निग्ध	स्निग्ध	नगरम्	क्षीरम्
२१	१०	४४	५४	स्नेहसु	स्नेह	नर	गगनम्
२२	९	४६	५५	मदकल	मदकल	स्निग्ध	नर
२३	८	४८	५६	भूप	भूपाल	स्नेहसु	स्निग्धम्
२४	७	५०	५७	शुद्ध	शुद्ध	मदकल	स्नेह
२५	६	५२	५८	कुम्भ	सरित	सोभ	मदकल
२६	५	५४	५९	सरि	कुम्भ	शुद्ध	भूपाल
२७	४	५६	६०	कलश	कलश	सरित	शुद्ध
२८	३	५८	६१	शशी	शशी	कुम्भ	सरित
२९	२	६०	६२	+	+	कलश	कुम्भ
३०	१	६२	६३	+	+	शशधर	शशी

दोहा प्रस्तार-भेद

प्रस्तार क्रम	गुरु	सधु	वर्ण	वृत्तमीषितक	प्राकृत पैङ्गल	वृत्तरत्ना वर नारा यणी टीका	व्यामदत्तभ	गाथा संक्षेप
१	२३	२	२५	+	+	+	भ्रमर	+
२	२२	४	२६	भ्रमर	भ्रमर	भ्रमर	भ्रमर	भ्रमर
३	२१	६	२७	भ्रमर	भ्रमर	भ्रमर	शरभ	भ्रमर
४	२०	८	२८	शरभ	शरभ	शरभ	इयेन	समर
५	१९	१०	२९	इयेन	इयेन	इयेन	मण्डूक	सञ्चार
६	१८	१२	३०	मण्डूक	मण्डूक	मण्डूक	मर्कट	मकरन्द
७	१७	१४	३१	मर्कट	मर्कट	मर्कट	करभ	मर्कटक
८	१६	१६	३२	करभ	करभ	करभ	नर	नर
९	१५	१८	३३	मदकल	नर	नर	भराल	भराल
१०	१४	२०	३४	पयोधर	भराल	भराल	मदकल	मदकल
११	१३	२२	३५	चल	मदकल	मदकल	पयोधर	पयोधर
१२	१२	२४	३६	नर	पयोधर	पयोधर	चल	+
१३	११	२६	३७	भराल	चल	चल	धानर	+
१४	१०	२८	३८	त्रिकल	धानर	धानर	त्रिकल	+
१५	९	३०	३९	धानर	त्रिकल	त्रिकल	कच्छप	+
१६	८	३२	४०	कच्छप	कच्छप	कच्छप	मरय	+
१७	७	३४	४१	मत्स्य	मत्स्य	मत्स्य	गाङ्गूल	+
१८	६	३६	४२	गाङ्गूल	गाङ्गूल	गाङ्गूल	अहिबर	+
१९	५	३८	४३	अहिबर	अहिबर	अहिबर	व्याघ्र	+
२०	४	४०	४४	व्याघ्र	व्याघ्र	व्याघ्र	विडाल	+
२१	३	४२	४५	उन्दुर	विडाल	विडाल	इवा	+
२२	२	४४	४६	शुनक	शुनक	इवा	उदुम्बर (उदुम्बर)	+
२३	१	४६	४७	विडाल	उन्दुर	उन्दुर	सप	+
२४	०	४८	४८	सर्प	सप	सर्प	शशपर	+

रोला-प्रस्तार-भेद

प्र. क्र.	सधु	गुरु	मात्रा	वृत्तमौलिक	प्राकृत- पंजल	सधु	गुरु	मात्रा	वृत्तरत्नाकर नारायणी-टीका	वाग्बल्लभ
१	६६	=	६६	रसिका	रसिका	६६	०	६६	सौहाज्जिनी	सौहाज्जिनी
२	६४	१	६६	हंसी	हंसी	५८	४	६६	हंसी	हंसीनी
३	६२	२	६६	रेखा	रेखा	५०	८	६६	रेखा	रेखा
४	६०	३	६६	तालाङ्क	तालाङ्कनी	४२	१२	६६	तालाङ्कनी	तालाङ्की
५	५८	४	६६	कम्पिनी	कम्पिनी	३४	१६	६६	कम्पी	कम्पी
६	५६	५	६६	गम्भीरा	गम्भीरा	२६	२०	६६	गम्भीरा	गम्भीरा
७	५४	६	६६	काली	काली	१८	२४	६६	काली	काली
८	५२	७	६६	कलवराणी	कलवराणी	१०	२८	६६	कलवराणी	कलवराणी

रसिका-प्रस्तार-भेद

प्र. क्र.	गुरु	सधु	मात्रा	वृत्तमौलिक	प्राकृत- पंजल	प्रथम-चरणे गुरु सधु मात्रा	वृत्तरत्नाकर नारायणी-टीका	वाग्बल्लभ
१	१३	७०	६६	कुन्द	कुन्द	११ २ २४	कुन्द	कुन्द.
२	१२	७२	६६	करताल	करताल	१० ४ २४	करताल	कर्णसिल:
३	११	७४	६६	मेघ	मेघ:	९ ६ २४	मेघ:	मेघ:
४	१०	७६	६६	तालाङ्क	तालाङ्क	८ ८ २४	तालाङ्क	तालाङ्क:
५	९	७८	६६	वद	कालवद:	७ १० २४	काल:	कालवद:
६	८	८०	६६	कोकिल	कोकिल:	६ १२ २४	वद:	कोकिल:
७	७	८२	६६	कमलम्	कमलम्	५ १४ २४	कोकिल.	कमल:
८	६	८४	६६	इन्दु:	इन्दु:	४ १६ २४	कमल:	वद:
९	५	८६	६६	शम्भु	शम्भु	३ १८ २४	इन्द्र	शम्भु
१०	४	८८	६६	चमर.	चामर:	२ २० २४	शम्भु	चामर.
११	३	९०	६६	गणेश	गणेशवर:	१ २२ २४	चामर:	गणेशवर:
१२	२	९२	६६	शेघ	सहस्राक्ष.	० २४ २४	गणेशवर.	+
१३	१	९४	६६	सहस्राक्ष.	शेघ			

रसिका छन्द के केवल प्रथम चरण के ही वाग्बल्लभ के मतानुसार ११ भेद होते हैं और वृत्तरत्नाकर के टीकाकार नारायणभट्ट के मतानुसार १२ भेद होते हैं। वाग्बल्लभ और नारायणी टीका के अनुसार भवविशेष द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ चरण २४ मात्रा सहित षोडश गुरु, सधु निर्मित होते हैं।

काव्य-प्रस्तार-भेद

प्र. क्र.	गुरु	लघु	वण	वृत्तमोक्तिक	प्राकृत- पञ्जल	वृत्तरत्नाकर- नारायणी-टीका
१	०	६६	६६	शक्र	शक्र	शक्र
२	१	६४	६५	शम्भु	शम्भु	शम्भु
३	२	६२	६४	सूर्य	सूर्य	शूर
४	३	६०	६३	गण्ड	गण्ड	गण्ड
५	४	५८	६२	स्कन्ध	स्कन्ध	स्कन्ध
६	५	५६	६१	विजय	विजय	विजय
७	६	५४	६०	तान्त्रिक	दपं	दपं
८	७	५२	५९	दपं	तान्त्रिक	तान्त्रिक
९	८	५०	५८	समर	समर	समर
१०	९	४८	५७	सिंह	सिंह	सिंह
११	१०	४६	५६	शेष	शेष	शेष
१२	११	४४	५५	उत्तेजा	उत्तेजा	उत्तेज
१३	१२	४२	५४	प्रतिपक्ष	प्रतिपक्ष	फणि
१४	१३	४०	५३	परिधर्म	परिधर्म	रक्ष
१५	१४	३८	५२	भराल	भराल	प्रतिधम
१६	१५	३६	५१	गण्ड	भृगेन्द्र	भराल
१७	१६	३४	५०	भृगेन्द्र	गण्ड	भृगेन्द्र
१८	१७	३२	४९	मकट	मकट	गण्ड
१९	१८	३०	४८	मदन	मदन	मकट
२०	१९	२८	४७	राष्ट्र	महाराष्ट्र	अनुबन्ध
२१	२०	२६	४६	वसन्त	वसन्त	वासन्त
२२	२१	२४	४५	कण्ठ	कण्ठ	कण्ठ
२३	२२	२२	४४	मयूर	मयूर	मयूर
२४	२३	२०	४३	बन्ध	बन्ध	बन्ध
२५	२४	१८	४२	अमर	अमर	अमर
२६	२५	१६	४१	भिन्नमहाराष्ट्र	द्वितीयो महाराष्ट्र	भिन्नमहाराष्ट्र
२७	२६	१४	४०	बलभद्र	बलभद्र	बलभद्र
२८	२७	१२	३९	राजा	राजा	राजा
२९	२८	१०	३८	वर्जित	वर्जित	वर्जित
३०	२९	८	३७	राम	राम	मयूर
३१	३०	६	३६	मथान	मथान	मथान

प्र. क्र.	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तभौतिक	प्राकृत- पङ्क्ति	वृत्तरत्नाकर- नारायणी टीका
३२	३१	३४	६५	मोह	बली	बली
३३	३२	३२	६४	बली	मोह	मोह
३४	३३	३०	६३	सहस्रनेत्र	सहस्राक्ष	सहस्राक्ष.
३५	३४	२८	६२	बाल	बाल	बाल
३६	३५	२६	६१	वृत्त	वृत्त	वृत्त
३७	३६	२४	६०	शरभ	शरभ	शरभ
३८	३७	२२	५९	दम्भ	दम्भ	दम्भ.
३९	३८	२०	५८	विषम	अह	उद्गम
४०	३९	१८	५७	उद्गम	उद्गम	वलिताकः
४१	४०	१६	५६	वलिताक	वलिताक	शुरग
४२	४१	१४	५५	शुरग	शुरग	हार
४३	४२	१२	५४	हरिण	हरिण	हरिण
४४	४३	१०	५३	अथ	अथ	अथ
४५	४४	=	५२	भुज	भुज	भुज

पद-प्रस्तार-भेद

प्र. क्र.	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तभौतिक	प्राकृत- पङ्क्ति	वृत्तरत्नाकर- नारायणी टीका
१	७०	१२	८२	अजय	अजय	अजय
२	६९	१४	८३	विजय	विजय	विजय
३	६८	१६	८४	बलि	बलि	बलि
४	६७	१८	८५	कर्ण	कर्ण	वर्ण
५	६६	२०	८६	वीर	वीर	वीर
६	६५	२२	८७	वेताल	वेताल	वेताल
७	६४	२४	८८	बृहन्नल	बृहन्नल	बृहन्नल
८	६३	२६	८९	भक्त	भक्त	भक्त
९	६२	२८	९०	हरि	हरि	हरि
१०	६१	३०	९१	हर	हर	हर
११	६०	३२	९२	विधि	अह्या	अह्या
१२	५९	३४	९३	इन्दु	इन्दु	इन्दु
१३	५८	३६	९४	चन्दनम्	चन्दनम्	चन्दनम्
१४	५७	३८	९५	शुभङ्कर	शुभङ्कर	शुभङ्कर

प्र क्र	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमौक्तिक	प्राकृत- पञ्चल	वृत्तरत्नाकर- नारायणी-टीका
१५	५६	४०	६६	शवा	शवा	शालः
१६	५५	४२	६७	सिहः	सिहः	सिह
१७	५४	४४	६८	शादूँल	शादूँल	शादूँल
१८	५३	४६	६९	कूर्म	कूर्मः	कूर्म
१९	५२	४८	१००	कोकिल	कोकिल	कोकिल
२०	५१	५०	१०१	खर.	खर	खर
२१	५०	५२	१०२	कुञ्जर	कुञ्जर.	कुञ्जर
२२	४९	५४	१०३	मदनः	मदन	मदन
२३	४८	५६	१०४	मत्स्य	मत्स्य.	मत्स्य
२४	४७	५८	१०५	तालाङ्ग	तालाङ्ग	सारङ्गः
२५	४६	६०	१०६	शेषः	शेष	शेष
२६	४५	६२	१०७	सारङ्ग	सारङ्ग	सारस
२७	४४	६४	१०८	पयोधरः	पयोधर	पयोधरः
२८	४३	६६	१०९	कुम्भ	कुम्भ	कुम्भ
२९	४२	६८	११०	कमलम्	कमलम्	कमलम्
३०	४१	७०	१११	धारण	धारणः	कुम्भ
३१	४०	७२	११२	जङ्गम	शरभ	धारणः
३२	३९	७४	११३	शरभ	जङ्गमः	शरभ.
३३	३८	७६	११४	धृतीष्टम्	धृतीष्टम्	जङ्गम
३४	३७	७८	११५	दाता	दाता	शरः
३५	३६	८०	११६	शर	शर	सुशरः
३६	३५	८२	११७	सुशर	सुशर	ससर
३७	३४	८४	११८	समर	समर	सारसः
३८	३३	८६	११९	सारस	सारस	सरसः
३९	३२	८८	१२०	शारव	शारव	मेघः
४०	३१	९०	१२१	मघ	मेघः	सकल
४१	३०	९२	१२२	मदकर	मदकर.	मृग
४२	२९	९४	१२३	मेघ	मघ	सिद्ध
४३	२८	९६	१२४	सिद्धि	सिद्धिः	धुडि
४४	२७	९८	१२५	धुडि	धुडि	वत्सपत्त
४५	२६	१००	१२६	करतलम्	करतलम्	बमलाकर
४६	२५	१०२	१२७	कमलाकर	कमलाकर	धवलः
४७	२४	१०४	१२८	धवल	धवल	मत्तक

प्र. नं.	गुरु	लघु	वर्ण	वृत्तमीमांसक	प्राकृत- पैङ्गल	वृत्तरत्नाकर- नारायणी टीका
४८	२३	१०६	१२६	मानस	मन	ध्रुव
४९	२२	१०८	१३०	ध्रुवक	ध्रुव	यलय
५०	२१	११०	१३१	कनकम्	कनकम्	किन्नर
५१	२०	११२	१३२	कृष्ण	कृष्ण	शक्र
५२	१९	११४	१३३	रञ्जनम्	रञ्जनम्	जन
५३	१८	११६	१३४	मेघकर	मेघकर	मेघाकर
५४	१७	११८	१३५	घोष्म	घोष्म	घोष्म
५५	१६	१२०	१३६	गरुड	गरुड	गरुड
५६	१५	१२२	१३७	शशी	शशी	शशी
५७	१४	१२४	१३८	सूर्य	सूर्य	सूर्य
५८	१३	१२६	१३९	शल्प	शय	शल्प
५९	१२	१२८	१४०	नवरङ्ग	नवरङ्ग	नर
६०	११	१३०	१४१	मनोहर	मनोहर	सुरग
६१	१०	१३२	१४२	गगनम्	गगनम्	मनोहर
६२	९	१३४	१४३	रत्नम्	रत्नम्	गगनम्
६३	८	१३६	१४४	नर	नर	रत्नम्
६४	७	१३८	१४५	हीर	हीर	नव
६५	६	१४०	१४६	भ्रमर	भ्रमर	हीर
६६	५	१४२	१४७	शेखर	शेखर	भ्रमर
६७	४	१४४	१४८	कुसुमाक्षर	कुसुमाक्षर	शेखर
६८	३	१४६	१४९	वीथ	वीथ	कुसुमाक्षरवीथ
६९	२	१४८	१५०	गह्व	गह्व	गह्व
७०	१	१५०	१५१	वसु	वसु	वसु
७१	०	१५२	१५२	शब्द	शब्द	शब्द

ख. वर्णिक छन्दों के लक्षण एवं नाम-भेद

सङ्केत—कमाङ्क एवं छन्द-नाम=वृत्तमोक्तिक के अनुसार हैं। सक्षण=छन्द सक्षण में प्रयुक्त ग=गुरु, ङ=लघु, म=भगण, य=यगण, र=रगण. स=सगण त=तगण, ज=जगण, भ=भगण और न=नगण के सूचक है। सन्दर्भ-ग्रन्थ संकेताङ्क=सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची एवं तदनुसार क्रमसूचक सस्या चतुर्थ परिशिष्ट क. पृ. ४१४ के अनुसार है।

एकाक्षर छन्द

कमाक	छन्द-नाम	सक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-संकेताङ्क
१.	धीः	[ग.]	१, ६, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १९, २२; उद्यत्-५; गी-६; गौ-७.
२.	इः	[ल.]	१, १६; स्तु-१७.

द्व्यक्षर छन्द

३.	कामः	[ग. ग.]	१, ६, १२, १६; अत्युद्यत्-५; गी-७; स्त्री-६, १०, १२, १३, १५; पद्यम्-११, १६; आशीः-२२.
४.	मही	[ल. ग.]	१, ६, १२, १६, १७; सुख-१०, १६.
५.	सारः	[ग. ल.]	१, १६; साव-६, १२; दुख-१०; चाव-१७, जय-१६;
६.	मधु.	[ल. ल.]	१, ६, १२, १६, १७; मव-१०; पुष्पम्-११; बलि-१६.

त्र्यक्षर छन्द

७.	ताली	[म]	१, ६, १६; नारी-१, ६, ७, १०, १३, १५, १७; श्यामाङ्गी-१६.
८.	शली	[य.]	१, ६, १२, १६; मध्यम-५; केसा-१०; पू-११; बलाका-१७; खनम्-१६.
९.	प्रिया	[र.]	१, ६, १२, १६; मध्यम-५; मृगी-६, १०, १३, १५, १७; तडित्-११; सुखी-१६, अञ्चला-२२.
१०.	रमण	[स.]	१, ६, १२, १६, १७; मध्यम-५; मदन-१०; रजनी-११; प्रवर-१६.
११.	पञ्चाक्षम्	[त.]	१, ६, १२, १६, १७; सेता-१६.
१२.	भुगेन्द्रः	[ज]	१, ६, १२, १६; भुगेन्दु-१७, सुवस्तु-१६.

क्रमांक	छंद नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ सङ्केताङ्क
२८	मयानम्	[स त]	१, ६, १२ १६, मयाना-१
२९	शखनारी	[म य]	१, ६, १६, सोमरात्री-१ ६ १०, १५ १७, शखनारी-१५; द्रुतम्-१६
३०	सुमालतिका	[अ ज]	१ १२, मालती-१, ६, मालतिका-१७, मनोहर-१६
३१	तनुमध्या	[त य]	१, २, ३ ६ ७ ८, १०, १३, १५ १८, १९ २० २२
३२	वमनकम्	[म न]	१, ६ १२ १६, उपवलि-१७

सप्ताक्षर छन्द

३३	शीर्षा	[म म ग]	१ १२, शीर्षरूपक ६, गान्धर्वी-१०, १६, मुवतागुम्फ-१६, शिप्रा-१७
३४	समानिका	[र ज ग]	१, ६, १२, १६, उष्णिक-१०, शिखा-११, आमरम-१७, गोभिनी-१६,
३५	सुवासकम्	[न ज ल]	१, ६, १२, १६ वासकि-१७, सवासनि-१७,
३६	करहञ्ज	[न स ल]	१, १२, करहञ्ज-६, करहस-१६, अहरि- १७, करहन्तु-१७, गोपिकागीते मुक्तदेवम ।
३७	कुमारललिता	[अ स ग]	१, २, ८, १०, १४, १५, १८, १९, २०, २२.
३८	मधुमती	[म न य]	१ १४, १५, हरिविलसित-१०, हरिविलसिनक- ७, चपला-११, द्रुतगति-११, लटह-१६
३९	मदलेखा	[म स ग]	१, ६ ७, १०, १३, १५, १६ में लक्षण 'अ स ग' है ।
४०	कुसुमतति	[म न ल]	१, अचट्ट-१७

अष्टाक्षर छन्द

४१	विद्युन्माल	[म य ग ग]	१, २, ३, ६, ७ ८, १० १२ १३, १५, १६, १८ १९
४२	प्रमाणिका	[अ र स ग.]	१, ६, ८, ९, १२, १३, १५, १६, १९, प्रमाणी-१०, १८, स्थिर-४, मत्त- लेखितम्-३, ११, मातृपरिणी २२
४३.	मल्लिक	[र ज म ल]	१, ६, १२ १६, समानिका-१, ५, ६,

क्रमांक	छन्द-नाम	सक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
			१०, १३, १५, १७; समानी-१८, १९; समानं-२२.
४४.	सुज्ञा	[न.न.ग.ग.]	१; सुज्ञ-६, १२; रतिमाला-१०; सुरज्ञा-१२.
४५.	कमलम्	[न.स.स.ग.]	१, ६, १२, १६; लसदनु-१७.
४६.	माणवककीडितकम्	[भ.त.स.ग.]	१, २, ७, १२, २०, २२; माणवककीडा-१६; माणवकम्-५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९.
४७.	चित्रपदा	[भ.भ.ग.ग.]	१, २, ५, ६, १०, १३, १५, १८, १९; चितानं-७, १८, १९; चित्रपदम्-२०; हंसस्तम्-२२
४८.	धनुष्टुप्		१, १२; श्लोक-७, ८, १६.
४९.	जलवम्	[न.भ.स.स.]	१; कृतयु-१७; कृतयु-१७.

नयाक्षर छन्द

५०.	रूपामाला	[म.म.म.]	१, ६; रूपामाली-१२, १५, १६, १७.
५१.	महालक्ष्मिका	[र.र.र.]	१, ६, १२, १७; महालक्ष्मी-१६.
५२.	सारङ्गम्	[न.म.स.]	१; सारङ्गिणी-१, ६, १२, १६, १७; मुखला-१७.
५३.	पाईलम्	[म.भ.स.]	१, पाइला-१, ६, १२, १६; पापिला-१७; तिहाकान्ता-१०; बोरा-१७; अबोरा-१७.
५४.	कमलम्	[न.म.स.]	१, ६, १२; कमला-१५, १६; लघुमणि- गुणनिकर-१०; मदनकं-१७; रतिपदम्-१७.
५५.	विम्बम्	[न.स.य.]	१, ६, १२, १६, १७; गुर्वी-७, १८; विद्याला-६, १०.
५६.	सोमरम्	[स.ज.ज.]	१, ६, १२, १६, १७
५७.	भुजगशिमुक्ता	[न.म.म.]	१, २, ५, १०, १३, १८, २०, २२. भुजगशिमुक्ता-१६; भुजगशिमुक्ता-१, ८, १३, १५, १७, भुजगशिमुक्ता-१७, मधुकरी-३; मधुकरिका-११.

क्रमांक	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ सङ्केताङ्क
५८	मणिमध्यम्	[भ म स]	१, १५, १७ १८, २२, मणिबन्धम्-१६, १७.
५९	भुजङ्गसङ्गता	[स ज र]	१, १५, १७.
६०	मुललितम्	[न न न]	१, चुलकम्-१७

दशाक्षर छन्द

६१	गोपाल	[भ म म ग]	१, पद्मावर्त -१७
६२	सयुतम	[स ज ज ग]	१, १६, सयुता-१, ६, १७; सयुगा-१७, सगतिका-१२; सहतिका-१७
६३	चम्पकमाला	[भ म स ग]	१, २, ६, ७, ८, ११, १२, १६, १७, १८, श्वमवती-१, ८, १०, १३, १५ १७, १८, १९, २०, रमवती-२२, रूपवती-५, १७, सुभावा-११, पुष्पसमृद्धि-११
६४	सारवती	[भ भ म ग]	१, ६, १६, १७, हारवती-१२, चित्रगति-१०, १६, विश्वमुखी-१७,
६५	मुषमा	[स य भ ग]	१ ५, ६, १२, १६, १७
६६	अमृतगति	[न ज न ग]	१, ६, १६, १७, मृगलतिता-१७
६७	मत्ता	[भ म स ग]	१ १० १३, १५, १७, १८, १९ २०, हत्ती-१६, विलासिता-२२
६८	त्वरितगति	[न ज न ग]	१ ७ १० १५, १० १६.
६९	मनोरमम	[म र ज ग]	१, मनोरमा-१, ६, १०, १३, १५ १७
७०	ललितगति	[न न न ल]	१, कृतकवलि-१७

एकादशाक्षर छन्द

७१	मालती	[भ म म ग ग]	१, ६ १२, माला-१६, सारती-१७, भारती-१७
७२	बन्धु	[भ भ म ग ग]	१, ६, १२, १७; दोषकम्-१, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १०, १२ १३, १५, १७ १८, १९, २०, २२. उपवित्रा-११, सरोरुह-१६,
७३	कुमुदी	[न ज न स ग.]	१, ६, ६, १० १२, १३, १५, १६, १७, द्रुतपदगति-११

क्रमांक	छन्द-नाम	सक्षण	छन्दसं-ग्रन्थ-सङ्केतानु
७४.	शास्तिनी	[म.त.त.ग.ग.]	१, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२.
७५.	घातोर्मी	[म.भ.त.ग.ग.]	१, ३, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९; उर्मिला-४; घातोर्मीमाला-२०, २२. १० एवं १९ में [म.भ.म.ग.ग.] सक्षण भी माना है।
७६.	उपजातिः	[शास्तिनी-घातोर्मीमिथ्या]	१.
७७.	हमनकम्	[न.म.न.स.ग.]	१, ९, १२, १६, १७.
७८.	वण्डिका	[र.ज.र.स.ग.]	१; धेनिका-१; धेनिः-१९; ह्येनी-२, १०, १५, १७, १८, २०, २२; ह्येनिका-५, १७, १७; सेनिका-१२, १७; नि.धेनिका-५; नि.धेनिकम्-११; ताल-१६.
७९.	सेनिका	[ज.र.ज.ग.स.]	१, ९; सेनिकम्-१७;
८०.	इन्द्रवज्रा	[स.स.ज.ग.ग.]	१, २, ३, ४, ६, ७, ८, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२; उप-स्थिता-६, ११.
८१.	उपेन्द्रवज्रा	[ज.स.ज.ग.ग.]	१, २, ३, ४, ६, ७, ८, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२.
८२.	उपजातिः	[इन्द्रवज्रीउपेन्द्रवज्रामिथ्या]	१, २, ४, ७, ८, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९; इन्द्रमाला-१९, २०, २२.
८३.	रघोदृता	[र.न.र.स.ग.]	१, २, ३, ४, ५, ६, ८, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२.
८४.	स्वागता	[र.न.म.ग.ग.]	१, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२.
८५.	धमरविलसिता	[म.न.न.स.ग.]	१, ४, ५, १५, १७, १८, २०, २२; धमरविलसितम्-२, ७, १०, १३, १९; धानवासिका-११.
८६.	धनुकृता	[भ.त.न.ग.ग.]	१, १२, १७; कुहमलवन्ती-७, १०; धीः-१०, १३, १७, १८; साग्नपरम्-११, १९; रुधिरा-११; मोविनकमाला-१७
८७.	मोटनकम्	[त.ज.ज.स.ग.]	१, ३, १०, १२, १७; मोटनम्-१९.

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
८८.	मुक्देशी	[म.स.ज.म.म.]	१, एकरूपम्-५. १०, १६; विश्वविराट्-१७; मणि-१६.
८९.	सुभद्रिका	[न.न.र.स.ग.]	१, ५, १२, १७, २०; मद्रिका-६, १०, १३, १५, १८, १९; प्रसभम्-४; छपर-घवनम्-११; उत्तरास्तिका-११; समुद्रिका-१७.
९०.	मकुलम्	[न.म.म.ल.ल.]	१, अग्रलि-१७.

द्वादशाक्षर छन्द

९१.	आपीडः	[म.म.म.म.]	१, विद्याधरः-६; विद्याधार-१२, १५, १७; विद्याहारः-१६; कल्याण-१०; काञ्चनम्-११.
९२.	भुजंगप्रयातम्	[य.य.य.य.]	१, २, ४, ६, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२; अग्रमेमा-३, ११.
९३.	लक्ष्मीधरम्	[र.र.र.र.]	१, ६, ९, १०, १२, १६, १७; लक्ष्मिणी-१, २, १३, १५, १७, १८, १९; पद्मिनी-३, ११; भृङ्गारिणी-१७.
९४.	सोढकम्	[स.स.स.स.]	१, २, ३, ४, ६, ७, ८, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२.
९५.	सारङ्गकम्	[स.स.स.स.]	१, सारङ्ग-१२, १५, १७; सारङ्गलपम्-१६; सारङ्गलपकम्-६; कामावतारः-१०, १६, मेनावती-१७; रगक्रीडास्तोत्र में 'भृङ्गारः'.
९६.	मीवितकदाम	[ज.ज.ज.ज.]	१, ६, २०, २२, २३, २५, १७, १९; मुक्तादाम-१६.
९७.	मोदकम्	[म.म.म.म.]	१, ६, १२, १६, १७; मोदक-१५.
९८.	सुन्दरी	[न.म.म.र.]	१, ६, १२, १६; हरिणप्लुता-३; मत्त-कोकिलकम्-१६.
९९.	प्रमिताक्षरा	[स.ज.स.स.]	१, २, ३, ४, ६, १०, १२, १३, १५, १७, १८, १९, २०; प्रमिताक्षरा-२२.
१००.	चन्द्रधर्म	[र.न.म.स.]	१, १०, ११, १५, १७, १८, १९.

क्रमक	छन्द-नाम	लक्षण	छन्द-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१०१.	दुतदिलम्बितम् [न भ भ.र.]		१, २, ६, ७, ८, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२; हरिणप्लुतम्-३, ११-
१०२.	वंशस्थविला [ज.स.भ.र.]		१; वंशस्थविलम्-१, १५, १७; वंशस्त- नितम्-१; वंशस्थम्-३, ६, ७, ८, १०, १३, १६, १७, १८, १९, २२; वंशस्था- २, २०; वसन्तमञ्जरी-७, ११; मध्र- वंशा-११.
१०३.	इन्द्रवंशा [स.त.भ.र.]		१, २, ४, ६, १०, १३, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२; इन्द्रवंशा-१७, धीरा- सिका-१७.
१०४.	उपजाति [वंशस्थविला-इन्द्रवंशा मिथा]		१, १७; करम्बजाति-१९; कुलालधनम्- १९; वंशमासिका-१९; वंशमाला-२०.
१०५.	जलौद्धतगति: [ज.स.भ.स.]		१, २, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२.
१०६.	वंशवदेयी [म.भ.य.य.]		१, २, ४, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२; चन्द्रलेखा-३.
१०७.	मन्वाकिनी [न.भ.र.र.]		१, १५, १७; गौरी-२; प्रभा-१, १७.
१०८.	कुसुमविधिना [न.य.न.य.]		१, २, १०, १३, १५, १७, २२; मदन- विकारा-११; गजलुलितम्-११; गजल- सिता-१९.
१०९.	तामरसम् [न.ज.ज.य.]		१, ६, १०, १३, १५, १७; सलितपदा- ४, १९; कमलविलासिनी-११.
११०.	मालती [न.ज.ज.र.]		१, ४, ६, १०, १३, १५, १७, धरतनु-२, ११, १४, १९; यमुना-१-
१११.	मणिमाला [त.य.त.य.]		१, ६, ११, १३, १५, १७, १९; अरज- विचित्रा-१९, पुष्पविचित्रा-१०, १८.
११२.	जलपरमाला [म.भ.स.म.]		१, २, १०, १३, १५, १५, १७, १८, १९; कान्तोत्पीडा-२, ११, सौवामिनी-२२
११३.	प्रियम्बदा [न.भ.ज.र.]		१, ६, १०, १३, १५; प्रियम्बद-१७; मत्तकोविला-११.
११४.	सलिला [त.भ.ज.र.]		१, १०, १३, १५, १७, मुलसिता-१.
११५.	सलितम् [म.त.न.स.]		१; सलना-१, २, १०; धीरणमाला-१७; रति-१९

क्रमांक	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ सङ्केताङ्क
११६	कामदत्ता	[न न र य]	१, ३, १०, १६, परिमितविजया-१७
११७.	वसन्तचतुष्टयम्	[ज र ज र.]	१, ६, ११, विभावरी-१०, पञ्चचामरम्-१३, १५, ललामल्लसिताधरा-१७,
११८	प्रमुदितवदना	[न न र र]	१, ६, १०, १३, १७, १९, २२, प्रभा-१, ११, १३, १७, चञ्चलाक्षी-२, ११, मन्दाकिनो-१७, गौरी-१४.
११९	नवमालिनी	[न ज भ य]	१, २, १०, १४, १८, १९, २० २२; नवमालिका-१३, १५, नवमालिनी-१७, वनमालिका-१७
१२०	तरलनयनम्	[न.न न न]	१, १२, १५, १७, तरलनयना-१६, तरलनयनी-९

त्रयोवशाक्षर छन्द

१२१	वाराह	[म म म म ग]	१, सव्याली-१७
१२२	माया	[म त य स ग]	१, ९, १२, १६, मत्तमपूरम्-१, २, ३, ४, ६, ९, १०, १३, १५, १७ १८, १९, २२, मत्तमपूर-२०
१२३	तारकम्	[स स स स ग]	१, ९, १२, १६, १७
१२४	कन्दम्	[य य य य स]	१, ९, १२, १६, कन्द-१७, कानुकम्-१५
१२५	पङ्खावलि	[भ न ज ज स]	१, ९, १२, पङ्खावती-१७, कमलावली-१६
१२६	प्रहृषिणी	[म न ज य ग]	१ २, ३ ४, ६ ८, १०, १३, १५ १६ १७, १८, १९ २०, २२, मपूरपिण्डम्-७
१२७	रुचिरा	[ज भ स ज ग]	१ २, ४, ५, ६ १०, १३, १५ १७, १८, १९, २०, २२, प्रभावती-३, सदावति-७, अतिरुचिरा-१४ १७
१२८	घण्टी	[न न स स य]	१, १५, १७, कमलाक्षी-१०, हाकलिका-१७; कलावती-१६
१२९	मञ्जुभाषिणी	[स ज स ज ग]	१, १३, १५, १७ शुनन्दिनी-१, मन्दिनी-५, १०, १९ २२, प्रबोधिता-१ १५, कनकप्रभा-२, १४, मनोवती-११, १९ मे 'न ज स ज ग' और १० मे 'ज त ज स. य' लक्षण भी माना है।

क्रमाङ्क	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ-मन्त्रे तादृक्
१३०	चन्द्रिका	[न न त त ग.]	१, १३, १५, १७, उत्पलितो-१, १७; कुटिलमति-२; कुटिलगति-१०; ६ मे चन्द्रिका का लक्षण 'न न त र ग' है और १६ मे 'य म र र ग' है।
१३१	बलहस	[स ज स स ग.]	१, १५, १७; सिंहनाद-१, १७, कुटज- १, २०, १६, कुटजा-१७, भ्रमर-११, भ्रमरी-१६; क्षमा-१७
१३२	भृगोद्गुणम्	[न ज ज र ग]	१, १५, १७; सुवक्त्रा-१०, १६, प्रघला ११
१३३	क्षमा	[म न त र ग]	१, १३; १० में 'न त र ग' लक्षण है।
१३४	सता	[म स ज ज ग]	१; सय-१०; उपगतशिला-१७,
१३५	चन्द्रलेखम्	[म स र र ग]	१, १४, चन्द्रलेखा-१, १०; चन्द्ररेखा-१५
१३६	सुघृति.	[न स त त ग]	१; विद्युन्मालिका-१०
१३७	लक्ष्मी	[त भ स ज ग]	१, ४, १०, १६, प्रभावती-१५, १६, १७ वचि-१६.
१३८.	द्विमलगति	[न न न न ल.]	१; अदमल-१७

चतुर्दशाक्षर छन्द

१३९	सिंहास्य	[म म म म ग ग]	१, सकल्पासारि-१७, सकल्पाधार-१७.
१४०.	वसन्ततिलका	[त भ ज ज ग ग]	१, २, ३, ४, ५, ६, ६, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १६; काश्यपमते सिंहोपता-२, ७, ११, १३, १७, २२, सैतव- मते उद्धविणी-२, १०, १३, १७, राम- मते भृगुमाथकी १७; भरतमते सुवरी- १७, वसन्ततिलकम्-८, २०, २२; सैतव- मते शृङ्गुली-२२.
१४१	चक्रम्	[म न न न ल ग]	१, १२, १७; चक्रपदम-६, १६
१४२	असम्बाधा	[म त न स ग ग.]	१, २, ३, ४, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १६, २०, २२
१४३.	अपराजिता	[न म र स ल ग]	१, २, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १६, २०, २२
१४४.	प्रहरणकलिका	[न न भ न स ग]	१, ५, ६, १५, १७, १६, २०, प्रहरण- कलिता-२, १०, १३, १८, प्रहरणगलिता- २२.

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताद्
१४५.	यासन्ती	[म त न म ग ग.]	१, १५, १७.
१४६.	सोला	[म स म भ ग.ग.]	१, १३, १५, १७; अलोला-१०, १७.
१४७	नान्दीमुखी	[न न त त ग ग.]	१, ५, १५, १७; नन्दीमुखी-११; वसन्त-१०, १६.
१४८.	श्रैवर्णी	[म भ.न.म ग.ग.]	१, १४; कुटिला-२, १४; कुटिल-१०, १४; हस्तप्रैनी-११; हंसश्यामा-१६; मध्यश्यामा-१४; चूडापीठम्-१७.
१४९.	इन्दुवदनम्	[भ.अ स न.ग ग.]	१; इन्दुवदना-१, १३, १७; वरसुन्दरी-२; स्थलितम्-१०; वनमपूर-११, १६; इन्द्रवदना-१७; विलासिनी-२२; १० से 'भ.अ.स न.स ग.' लक्षण है।
१५०.	शरभी	[म भ म स ग ग.]	१; शरभा-३.
१५१.	अहिघृति	[न,न भ.अ.ल ग.]	१
१५२	विमला	[न ज भ.अ स ग.]	१; घृति-१०; मणिकटकम्-११, १६; प्रमदा-१४
१५३	मल्लिका	[स.ज स ज.ल ग.]	१, मञ्जरी-१४; कुररीवता-१७.
१५४	मणिगणम्	[न न न न स ल.]	१, अकहुरि-१७, अकुहुरि-१७

पञ्चदशाक्षर छन्द

१५५	लीलालेख	[म म म.म म.]	१, १५; सारविका-१, ६; सारंगी-१२, १६, १७; कामकोडा-१०, १४, १७; लीलालेख-१७, व्योति-१६, मिश्रम्-१६.
१५६	मालिनी	[न न म य य.]	१, २, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२, नान्दीमुखी-३, ११,
१५७	वामरम्	[र ज र.ज र.]	१, ६, १२, १६, लूणकम्-१, १०, १५, १७; लूणकम्-५; लोटक-७, पञ्चया-मल-१७; महोत्सव-१६.
१५८	भ्रमरावलिका	[स.स.स स स.]	१, १७; भ्रमरावली-१, ६, १२, १६.
१५९.	मनोहस	[स.ज.ज भ र.]	१, ६, १२, मणिहस-१७; पवहंस-कम्-१६.
१६०.	शरभम्	[न.ल.न न स.]	१, ६, १२, १६, १७, शद्रिकला-१, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९; मणि-गुणनिकर-१, २, ४, ५, ११, १३, १५, १७

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताद्ध
			१८. १६, २०, २२; खक्-१, ११, १३, १५, १७, १८, १९; चन्द्रावर्ता-२, ११, २२; माला-२, ११, २०, २२; मणिनिकर-१७; रुचिरा-१९; चन्द्रवर्त्ता-२०.
१६१.	निशिपालकम्	[भ.ज.स.न.र.]	१. ६, १२, १६, १७.
१६२.	विपिनतिलकम्	[न.स.न.र.र.]	१, १५, १७.
१६३.	चन्द्रलेखा	[भ.र.म.य.य.]	१. ६, १०, १३, १५, १७; चण्डलेखा-१; ७, १०, १४ में 'र.र.म.य.य' और १६ में 'र.र.त.त.म' लक्षण है।
१६४.	चित्रा	[भ.म.म.य.य.]	१, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८; चित्रम्-१, मण्डुकी-११, १८, १९; चञ्चला-११.
१६५.	केसरम्	[न.ज.न.ज.र.]	१; प्रभाकरम्-६, १०, १३, १७; सुकेसरम्-१४, १६.
१६६.	एला	[स.ज.न.न.य.]	१, १०, १३, १७, १९.
१६७.	प्रिया	[न.न.त.भ.र.]	१; उपमातिनी-६, १०; रूपमातिनी-१४
१६८.	उत्सव.	[र.न.भ.भ.र.]	१; सुन्दरम्-१०; मणिमूर्धन-११, १६; रमणीय-११, १६; नूतन-१७; लृषकर्ण-१७.
१६९.	उज्ज्वलम्	[न.न.म.म.न.]	१, शारहति-१७.

षोडशाक्षर छन्द

१७०.	रामः	[म.म.म.म.म.ग.]	१, ब्रह्मरूपकम्-१, ६, १६; ब्रह्मरूपम्-१५; ब्रह्म-१२, १७; वानुकी-१०; चन्द्रापीडम्-१७.
१७१.	पञ्चवामरम्	[ज.र.ज.र.ज.ग.]	१, ५, ६, १०, १४, १५, १६; नराजम्-१, ६, १२, १४, १५, १६, १७.
१७२.	नीतम्	[भ.म.म.म.म.ग.]	१, ६, १२, १६, १७; अश्वगति-६, १४, १५; सङ्गतम्-१०, पद्ममुखी-११, १६; सुरता-११, सद्यमुद्धरण-११; सोपानक-११; रपाति-१७; विनोयिका-१७
१७३.	चञ्चला	[र.ज.र.ज.र.ज.]	१, ६, १२, १६, १७; चित्रसंज्ञ-१, १४, १५; चित्र-५, ६, १७; चित्रशोभा-५;
१७४.	मदनतल्लिता	[म.म.न.म.न.य.]	१, १०, १५, १७, मदनतल्लित-५.

क्रमांक	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ सङ्केताङ्क
१७५	याणिनी	[न ज भ ज र ग]	१, ६, १०, १३, १५, १७, १६; १० मे याणिनी का 'न ज भ ज र ग' लक्षण भी स्वीकार किया है।
१७६	प्रवरललितम्	[य म न स र ग]	१, ३, १५, १७, जयानन्दम्-१०, १६
१७७	गरुडकृतम्	[न ज भ ज स ग]	१, १५, १७, चन्द्रलेखा-२२
१७८	चकिता	[भ स भ त न ग]	१, १५, १७
१७९	गजगुरा- विलसितम्	[भ र न न न ग]	१, ऋषभगजविलसितम्-१, २, ३, १०, १३, १५, १७, १८, १९, गजवरविलसितम्-५, मत्तधजविलसितम्-११, वृषभ गजविलसिता-२०; ऋषभगजविलसिता-२२
१८०	शैलशिला	[भ र न भ भ ग]	१, २, १०, १४, भामिनी-१६
१८१	ललितम्	[भ र न र न ग]	१, ४, धीरललितम्-१४, १५, महिषी-१०.
१८२	मुकेतरम्	[न स ज स ज ग]	१
१८३	ललना	[स न न ज भ ग]	१,
१८४	गिरिवरपुति	[न न न न न ल]	१, अथलपुति-१, ५, ६, १०, १५, १७, १८

सप्तदशशेखर छन्द

१८५	लीलाधृष्टम्	[म म म म म ग य]	१, भावाकाता १७
१८६	पृथ्वी	[ज स ज स म स ग]	१ २ ५ ६, ७, ८, ९ १०, १२, १३, १५, १६, १७, १८, १९ २०, २२, विलम्बितगति ३, ११
१८७	भालावती	[न स ज स य ल ग]	१, भालावर-१, ६, १२ १६, १७
१८८	शिखरिणी	[म भ न स भ स ग]	१, २, ३, ४, ५, ६ ७, ८ १०, १२ १३, १५, १६, १७, १८, १९, २० २२,
१८९	हरिणी	[न स म र स ल ग]	१, २, ३, ५, ६, ७, ८ १०, १२, १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२, वृषभवरितम्-४, वृषभललितम् ११
१९०	मन्दाकाता	[स भ न स स ग य]	१, २, ४, ५, ६, ७ ८, १०, १२, १३, १५ १६, १७, १८, १९, २०, २२ श्रीधरा-३, ११

क्रमांक छन्द-नाम लक्षण

सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क

१६१ वशपत्रपतितम् [म र न म न ल ग]

१, २, ३, ४, ६, १० १३, १५, १७, १८, १९, २२, वशपत्रपतिता-१, २०, वशदलम्-१, ११, वशतल-५, वशपत्रललितम्-५, वशपत्रम्-१७

१६२. महँटकम् [म ज भ ज ज ल ण]

१ १७; नकुँट-८, नकुँटकम्-४, ७, ११, १३, १५, १८, १९, अक्षितयम्-२ १०, १४ १, २, १०, १३, १४, १५, १७, १९

कोकिकलम् [म ज भ ज ज ल ण]

१६३. हारिणी [म भ म म य ल ग]

१, ५, १०, १५, १७ में 'म भ न य म ल ग' लक्षण है।

१६४. भाराकान्ता [म भ म र स ल ग]

१, ५, १०, १५, १७,

१६५. मतगवाहिनी [र ज र ज र ल ग]

१,

१६६. पद्यकम् [न स म त त य ण]

१, १०; पद्यम्-५

१६७. वशमुलहरम् [न न न न न ल.]

१, अक्षतनयनम्-१७

अष्टादशाक्षर छन्द

१६८. लीलाचन्द्र [म म म म म म]

१, ९

१६९. मञ्जीरा [म म भ म स म.]

१, ९, १२ १६ १७

२००. चर्चरी [र स ज ज भ र]

१, ९, १२, १६, १७; विद्युपत्रिया-२, १४, उज्ज्वलम्- १०, भालिकोत्तरमालिका- ११, १९, भक्तकोकिलम्-१७, कूर्पर-१७; चञ्चरी १७, रूपगोस्वामी कृत मुकुन्दमुक्ता-वली में 'रविणी' और 'गोवर्धनोदरण' में 'मुग्धसौरभम्' नाम दिए हैं।

२०१. कीडाचन्द्र [य य य य य य]

१, १२. १७, कीडाचक्रम्-१६; चार-बाणा-१७, कीडगा-१७, चन्द्रिका-१७

२०२. कुमुमितलता [म त न य य य]

१, २, ५, १०, १३ १५, २२, चित्रलेखा- ३, चन्द्रलेखा-७, कुमुमिततावेल्लिता-१७, १८, कुमुमितलतावेल्लिता-१९, २०

२०३. मन्दनम् [न ज भ ञ र र.]

१, १५, १७.

२०४. नाराच [न न र र र र.]

१, १५, १७ नाराचकम्-२, मञ्जुला- १, महामालिका-१७, तारका-६, वरदा- १९, निशा-१९

२०५. चित्रलेखा [म भ न य य य]

१, ५, १०, १४, १५. १७, चन्द्रलेखा- १७, महाराणा कुम्भकर्ण रचित पाठधरल-

लक्षण 'नहुँटकम्' का है परन्तु यतिभेद के कारण अपर नाम 'कोकिलकम्' दिया है।

प्रमाण

संज्ञा

सदर्थ ग्रन्थ-सङ्केताङ्क

कोप के अनुसार य त न य य स'
संज्ञा है ।

२०६ भ्रमरपदम् [भ र म न न स]

१, ५, ६, १० १४, १५.

२०७ शाङ्गललितम् [म स ज स त स]

१, ५, १०, १४, १५, १७

२०८ सुललितम् [न न म त भ र]

१, ५, १०

२०९ उपवनकुसुमम् [न न न न न न]

१, सुसुल्लभ-१७

एकोनविंशतिशत छन्द

२१० भागानन्द [म म म म म म म]

१,

२११ शाङ्गललितम् [म स ज स त स य]
द्वितम१, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १०, १२,
१३, १४, १६, १७ १८, १९, २०, २२,
शाङ्गललितम्-९

२१२ चन्द्रम [म न म ज न न ल]

१, १२, १६, चन्द्रमाता-१, ९

२१३ धवलम् [न न म न म म म]

१, १२, १६, १७; धवला-१, ३

२१४ शम्भु [स स य भ म म म]

१ ९, १२ १६, १७

२१५ मेघविस्फूर्जिता [य म न स र र य]

१, १०, १४, १५, १८, १९, विस्मिता-
२, सुवृत्ता-४, रम्भा-४, ११, १९,
चन्द्रमाता-७

२१६ ध्याया [य म न स त त य]

१, ५, १० १४ १५, १७

२१७ सुरसा [म र भ न य न य]

१, १५, १७

२१८ कुल्लवाम [भ त न स र र य]

१, १५, १७, पुष्पवाम-५, १०, १४

२१९ मृदुलकुसुमम् [न न न न न न ल]

१,

विंशतिशत छन्द

२२० योगानन्द [म म म म म म म]

१

२२१ गीतिका [स ज ज भ र स स य]

१, १२, १५, १७, गीता-९, हरिगीतम्
१६.

२२२ गण्डका [र ज र ज र ज य स]

१, ९, १२ १७, चित्तवृत्तम्-१, चित्र-६,
वृत्तम्-१ २ १० १४, १५ १८, १९,
२२, मुण्डक-१६, ईदृश-१७, भावना-
१७

२२३ शोभा [य म न न त त य य]

१ ५, १०, १४, १५ १७

२२४ सुवदना [म र भ न य भ ल य]

१, २, ३, ४ ५, ६, १०, १२, १५ १७,
१८, १९, २०, युक्तम्-७, २२ के अनुसार
'म र भ न य भ ल य' संज्ञा है ।

प्रमाण छन्द नाम लक्षण सन्दर्भ ग्रन्थ-सङ्केताङ्क

- २२५ प्लवङ्गभङ्ग- [ज र ज र ज.र स ग] १,
मङ्गलम्
२२६ शशाङ्कचलितम् [स भ ज भ.ज भ स ग] १, शशाङ्कचरितम्-७, शशाङ्करचितम्-१०.
२२७. भद्रकम् [भ.भ भ भ र स ल ग] १, मन्दकम्-१०, नागुरम्-१६.
२२८ घनवर्षागुणगणम् [न न न न न न ल ल.] १,

एकविंशत्क्षर छन्द

- २२९ ब्रह्मानन्द [म म म म म म म] १,
२३० लङ्घरा [भ र भ म य य य] १, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १०, १२,
१३ १५, १६, १७, १८, १९, २०, २२
२३१. मञ्जरी [र न र.न र न र.] १; तरंग-१०, तरंगमातिका-१६,
कनकमातिका-१७.
२३२ मरेन्द्र [भ र न न ज ज ज] १, ६, १२, १६.
२३३. सरसी [न ज भ.ज ज न र] १, १५ १७, मुरतक-१, सिद्धकम्-१;
सिद्धि-५, १०; सिद्धिका-६, शशि-
धवला-२, ११, चित्रलता-११, चिम-
लतिका-१६, सलिलम्-१५, श्री-१५,
धम्पकमालिका-१७, १९; धम्पकावली-
१७, पञ्चकावली-१७
२३४. रुचिरा [न ज भ ज ज न र] १, ११.
२३५ निवपम- [न न न न न न न] १,
तिलकम्

द्वाविंशत्क्षर छन्द

२३६. विद्यानन्द [म म म म म म म ग.] १,
२३७ हसी [म म म न न न स ग] १, ६, १२, १५, १६, १७, रजतहसी-
१७.
२३८ मदिरा [भ म म म भ भ म ग] १, २, १०, १५, १६, १७, सताकुसुमम्-६,
११, १६, सर्वया-१६, भागिनी-१७
२३९. मन्द्रकम् [भ.र न र न र न ग.] १, मद्रकम्-२, ३, ५, १०, १८ १६,
२२, मद्रकम्-६, १३, १५ २०, विगुद्ध-
चरितम्-७, १७ ये 'भ र न स न र न ग'
लक्षण हैं। मद्रक-१७, मद्रिका-१७,
२४० शिखरम् [भ र न र न र न ग] १

क्रमांक	छन्द-नाम	संख्या	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२४१.	अच्युतम् [न न न न स ज ज ग]	१,	
२४२	मवाससम् [त भ य ज.स र.न ग]	१,	सितस्तवक-१७; परित्तवक-१७
२४३	तदवरदुत्तम् [न न न न न न स]	१,	

त्रयोविंशत्तर छन्द

२४४.	विष्यानन्द [म म म म म म ग ग]	१,	
२४५	सुन्दरिका [स स भ स त ज ज स ग]	१, ६, १२;	सुन्दरी-१६.
	पद्मावतिका [स स भ स त ज ज स.ग]	१, १२	
२४६	अद्वितनया [न ज भ ज भ.ज भ स ग]	१, १५, १७;	अश्वललितम्-१ २, ३, १३, १७, १८, १९, २०, २२, ससित-५, १०, हयसीलाङ्गी-७
२४७	मालती [भ भ भ भ भ भ ग ग]	१;	सर्वया १६; सतगजेन्द्र-१७
२४८.	मल्लिका [ज ज ज ज ज ज स ग]	१,	मानवती-१७; मानिनी-१७.
२४९	मत्ताफीडम् [म म स न न न न ल ग]	१, १५, १८, १९;	मत्ताफीडा-२, ५, ६, १०, १३, १७, २०, २२.
२५०	कनकवलयम् [म न न न न न न ल स]	१,	

चतुर्विंशत्तर छन्द

२५१	रामानन्द [म म म म म म म म]	१	
२५२	दुर्मिलका [स स स स स स स स]	१ १२, दुर्मिला-२, १६, द्विमिला-१७;	सर्वया-१६,
२५३.	किरीटम् [अ भ.भ भ भ भ भ भ]	१ ६, १२, १७, सुभद्र-१०, सुभद्रकम्-६, सर्वया-१६, मेदुरवन्त-१७; मेदुरव-१७	
२५४	सन्धी [भ त न स भ भ न य]	१, २, ५, ७, १०, १३, १५, १७, १८ १९, २०, २२	
२५५	माधवी [ज ज ज ज ज ज ज ज]	१, अनामय-१७	
२५६	तरलनयनम् [न न न न न न न न]	१	

पञ्चविंशत्तर छन्द

२५७	कामानन्द [म म म म म म म म ग.]	१	
२५८	कोञ्चपदा [म म स, भ न न न न ग]	१, २, ३, ५, ६, १०, १३, १५, १८, १९, २०, कोञ्चपदी-७, कोञ्चपदा-१७, कोञ्चपदा-२२	

क्रमक छन्द-नाम लक्षण सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क

२५९. मत्तो [स स स स स स स स ग.] १; मुविरम्-१७

२६०. घणितुणम् [न न न न न न न स.] १.

षड्विंशाक्षर छन्द

२६१. गोविन्दानन्दः [म.म.म.म.म.म.म म ग ग.] १; जीमूताधानम्-१७.

२६२. भुजङ्गवि- [म.म.स.न.न.न.र.स.स.ग.] १, २, ३, ४, ५, ६, ७, १०, १३, १५,
जुम्मितम् १७, १८, १९, २०, २२.

२६३. अपवाहः [म.न.न.न.न.न.स.ग.ग.] १, ५, १०, १३, १५, १७, १८, १९,
२०; अपवाहकः-२; २२; अपवापम्-६;

२६४. मगधी [म.म.म.म.म.म.म.ग.स.] १; प्रियजोवितम्-१७.

२६५. कमलवत्तम् [न.न.न.न.न.न.म.स.स.] १.

प्रकीर्णक छन्द

१. विपीडिका [म.म.स.न.न.म.न.ज.भ.र.] १, ५, १०; जलद वण्डक-२२

२. विपीडिकाकरभः [म.म.स.न.न.न.न.स-५, न.भ.र.] १, ५, १०.

३. विपीडिकापणवः [म.म.स.न.म.न.स-१०, ज.भ.र.] १, ५, १०.

४. विपीडिकामाला [म.म.स.न.म.न.स-१५, ज.भ.र.] १, ५, १०.

५. द्वितीयत्रिभङ्गी [स-२०, म.ग.ग.स.ग.स.स.ग.ग.] १, १६.

६. शालूर. [ग.ग. स-२४, स.] १, १६.

दण्डक छन्द

१. चण्डवृष्टिप्रपातः [न.न.र-७] १, १०, १३, १५, १७, मेघमाला-३;
चण्डवृष्टिः-५, १०, १६; चण्डवृष्टि-
प्रपात-२, ६, १८, १९, २०, २२.

२. प्रचितकः [न.न.र-८] १, २

३. अर्णः [न.न.र-८] १, ५, ६, १०, १३, १५, १६, १७, १८,
१९; अर्णवः-२२.

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्केताद्
४.	सर्वतोभद्र.	[न न य य य य य य य.]	१; प्रचितक-६, १०, १३, १५, १६, १७, १८, १९.
५.	अशोककुसुम- मञ्जरी	[र ज र ज र. ज र ज र ल.]	१; अशोकपुष्पमञ्जरी-५, ६, १०, १५ १७; अशोकमञ्जरी-१६
६	कुसुमस्तम्बक	[स स स स स स स स स]	१, १५, १६, १७, कुसुमस्तम्-५, कुसुमस्तम्भ-१०.
७.	मत्तमातङ्ग	[र. र. र र र र. र र र]	१, १०; मत्तमातङ्गलीलाकर-५, १५, १७, मत्तमातङ्गलेखित-१६.
८	अनगशीलर	[ज र ज र ज र ज र ज ग]	१, ५, ६, १०, १५, १६, १७

अष्टसमवृत्त

१	पुष्पिताग्रा १३ *	[न न र य.]	२, ४ *	[न ज ज. र ग]	१, २, ३, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२.
२	उपधिन्नम्	„	[स स स ल ग.]	„ [भ भ भ ग ग]	१, ६, १०, १३, १५; उपधिन्ना- १७, उपधिन्नकम्-२, ५, १८, १९, २०, २२.
३	वेपथ्वी	„	[स स स ग]	„ [भ भ भ ग ग.]	१, २, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२.
४	हरिणप्सुता	„	[ल स स ल ग]	„ [न न भ र]	१, २, १०, १३, १५, १६, १७, १८, २२; हरिणोप्सुता-१९, २०, हरिणपद्म-५, हरिणोद्धता-६
५	अपरवक्त्रम्	„	[न न र ल ग]	„ [न ज ज र]	१, २, ३, ४, ५, ६, १०, १३ १५, १७, १८, १९, २०, २२
६	सुन्दरी	„	[स स ज ग]	„ [स भ र ल ग]	१, १५, १७; प्रबोधिता-१०, विबोधिता-१९; सुरमालिका-१७, विद्योयिनी-१७
७	भद्रविराट	„	[त ज र ग]	„ [म स ज न ग]	१, २, १०, १३, १७, १८, १९, २०, २२; भद्रविराटिका-५

*-१, ३. अर्थात् प्रथम और तृतीय चरण का लक्षण ।

*-२, ४. अर्थात् द्वितीय और चतुर्थ चरण का लक्षण ।

क्र.	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
८.	केतुमती १,३ [सजसग]	२,४. [भ.र.न.ग.ग.]	१, २, ३, ५, ६, १०, १३, १७, १८, १९, २०, २२.
९.	वाङ्मती ॥ [रज.र.ज.]	॥ [ज.र.ज.र.ग.]	१; यममती-२, ५, ६, १०, १३, १८; यमरावती-१७; यमवती-१७, २०, २२. यमध्वनि-१९; २० के अनुसार 'र.ज.र.ज.ग.' 'ज.र.ज.र.ग.' लक्षण हैं।
१०.	धट्पदावली ॥ [ज.र.ज.र.]	॥ [रज.रज.ग.]	१, ५, १०, १४.

विषमवृत्त

१. उद्वृता	[*१. सजसस. *२. नसज.ग. *३. भ.न.भ.ग. *४. सजसय.]	१, २, ४, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९; उद्वृत्तः २०,
२. उद्वृताभेदः	[१. सजसस. २. न.स.ज.ग. ३. भ.न.ज.स.ग. ४. स.ज.स.ग.]	१, १५, २२
३. सौरभम्	[- ससस. २. न.स.ज.ग. ३. र.न.भ.ग. ४. स.ज.स.ज.ग.]	१, १७; सौरभकम्-२, ५, ६, १०, १३, १५, १८, १९; सौरभक-२०; सौरभवर्त-२२.
४. ललितम्	[१. सजसस. २. न.स.ज.ग. ३. भ.न.स.स. ४. स.ज.स.ज.ग.]	१, २, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २२, ललित-२०
५. भाव	[१. न.न. २. न.न. ३. न.न. ४. भ.भ.भ.ग.]	१.
६. वध्वत्रम्	[लक्षण अनुष्टुप् के समान है किन्तु द्वितीय और चतुर्थं चरण में 'न ग य य.' होता है]	१, २, ३, ४, ५, ६, १०, १३, १५, १७, १८, १९, २०, २२
७. पद्म्यावध्वत्रम्	[लक्षण अनुष्टुप् के समान है किन्तु द्वितीय एवं चतुर्थं चरण का पाचवां छठा और सातवां अक्षर 'जगण' होता है]	१, २, ६, १०, १३, १५, १७, १८; पद्म्या-५, १९, २०, २२.

*-१-प्रथम चरण का लक्षण, २-द्वितीय चरण का लक्षण, ३-तृतीय चरण का लक्षण, ४-चतुर्थं चरण का लक्षण।

वैतालीय-छन्द

क्रमानुसृत्य छन्दनाम	लक्षण	सदम ग्रन्थ सङ्केताङ्क
१ वैतालीयम्	*१,३ [१४ मात्रा-कला ६, रत्न ग]	१, २ ४ ६, ७ १० १३ १५
	*२,४ [१६ मात्रा-कला ८ रत्न ग]	१७, १८, १९ २०, २२
२ श्रीपञ्चन्दसकम्	१,३ [१६ मात्रा-कला ६, रत्न ग ग]	१, २ ४ ६ ७ १० १३
	२,४ [१८ मात्रा-कला ८, रत्न ग]	१५ १७, १८, १९ २० २२
३ आपातलिका	१,३ [१४ मात्रा-कला ६, भग ग]	१ २ ६ ७ १० १३, १७
	२,४ [१६ मात्रा-कला ८ भग ग]	१८ १९ २० २२
४ नलिनम्	[१४ मात्रा-कला ६, भग ग]	१,
५ अपर नलिनम्	[१६ मात्रा-कला ८ भग ग]	१,
६ वशिष्ठातिका वैतालीयम्	[१४ मात्रा-ल ग, कला ३ रत्न ग]	१, ६, १०, १३ १७, २२
७ उत्तरान्तिका वैतालीयम्	[१६ मात्रा-कला ८ रत्न ग]	१, १३
८ प्राच्यवृत्ति	१,३ [१४ मात्रा-कला ६ रत्न ग.]	१ २, ६ १० १३, १७,
	२,४ [१६ मात्रा-कला ३ ग, कला ३ रत्न ग.]	१८, १९ २० २२
९ उदीच्यवृत्ति	१,३ [१४ मात्रा-ल ग कला ३ रत्न ग]	१, २ ६, १३, १७ १८, १९ २०, २२
	२,४ [१६ मात्रा-कला ८, रत्न ग]	
१० प्रवृत्तकम्	१,३ [१४ मात्रा-ल ग कला ३ रत्न ग]	१, २ ६, १०, १३, १७ १८, १९, २०, प्रवृत्तकम्-
	२,४ [१६ मात्रा-कला ३, ग कला ३ रत्न ग]	२२
११ अपरान्तिका	[१६ मात्रा-कला ३, ग कला ३, रत्न ग]	१, २ ६ १०, १३, १७, १८, २२, अपरान्तिकम्-१९
१२ आरुहातिका	[१४ मात्रा-ल ग कला ३, रत्न ग]	१, २ ६, १०, १३, १७, १८, १९

*१,३, भर्मात् प्रथम धीरे तृतीय चरण का लक्षण ।

*२,४ भर्मात् द्वितीय धीरे चतुर्थ चरण का लक्षण ।

(ग.) छन्दों के लक्षण एवं प्रस्तारसंख्या^३

क्रमांक	छन्द नाम	लक्षण	प्रस्तार संख्या
एकाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद २			
१	धी	५	१
२	इ	।	२
द्व्यक्षर छन्द-प्रस्तारभेद ४			
३	काम	५५	१
४.	मही	।५	२
५	सार	५।	३
६	मधु	।।	४
त्र्यक्षर छन्द-प्रस्तारभेद ८			
७	ताली	५५५	१
८	झासी	।५५	२
९	प्रिया	५।५	३
१०	रमण	।।५	४
११	पाञ्चालम	५५।	५
१२	मृगेन्द्र	।५।	६
१३.	मन्दर	५।।	७
१४	कमलम	।।।	८
चतुरक्षर छन्द-प्रस्तारभेद १६			
१५.	तीर्णा	५५५५	१
१६	धारी	५।५।	११
१७	मगणिका	।५।५	६
१८	शुभम्	।।।।	१६
पञ्चाक्षरछन्द-प्रस्तारभेद ३२			
१९	सम्मोहा	५५५५५	१
२०	हारो	५५।५५	२
२१	हस	५।।५५	७
२२.	प्रिया	।।५।५	१२
२३	यमकम	।।।।।	३२

^३ यहाँ क्रमांक और छन्द नाम वृत्तभौतिक के अनुसार दिए गए हैं। ५ बिन्दु, गुरु अक्षर का सूचक है और । लघु का। अंतिम कोष्ठक में प्रस्तार भेदों की संख्या दी गई है।

क्रमांक छन्द-नाम

संख्या

सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क

षडक्षर छन्द-प्रस्तारभेद ६४

२४.	क्षेपा	५५५ ५५५	१
२५.	तिलका	११५ ११५	२८
२६.	विमोहम्	५१५ ५१५	१६
२७.	चतुरस्रम्	१११ १५५	१६
२८.	मन्यामम्	५५१ ५५१	३७
२९.	हांलतारी	१५५ १५५	१०
३०.	सुमालतिका	१५१ १५१	४६
३१.	तनुमध्या	५५१ १५५	१३
३२.	दमनकम्	१११ १११	६४

सप्ताक्षर छन्द-प्रस्तारभेद १२८

३३.	शीर्षा	५५५ ५५५ ५	१
३४.	समानिका	५१५ १५१ ॥	४३
३५.	सुधासकम्	१११ १५१ १	११२
३६.	करहृष्टिच	१११ ११५ १	६६
३७.	कुमारललिता	१५१ ११५ ५	३०
३८.	मधुमती	१११ १११ ५	६४
३९.	मदलेला	५५५ ११५ ५	२५
४०.	कुसुमततिः	१११ १११ १	१२८

अष्टाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद २५६

४१.	विद्युग्माला	५५५ ५५५ ५५	१
४२.	प्रमाणिका	१५१ ५१५ १५	८६
४३.	मत्तिका	५१५ १५१ ५१	१७१
४४.	तुङ्गा	१११ १११ ५५	६४
४५.	कमतम्	१११ ११५ १५	६६
४६.	माणवक्रक्रीडितकम्	५११ ५५१ १५	१०३
४७.	चित्रपदा	५११ ५११ ५५	५५
४८.	धनुष्टुप्		
४९.	जलदम्	१११ १११ ११	२५६

नवाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद ५१२

५०.	कृपामाला	५५५ ५५५ ५५५	१
५१.	महातद्विषया	५१५ ५१५ ५१५	१४७

क्रमांक	छन्द-नाम	संख्या				प्रस्तारसंख्या
५२.	सारङ्गम्	१११	१५५	११५		२०८
५३.	पादंत्तम्	५५५	५११	११५		२४१
५४.	कमलम्	१११	१११	११५		२४६
५५.	बिम्बम्	१११	११५	१५५		६६
५६.	सोमरम्	११५	१५१	१५१		३६४
५७.	भुजगशिखुसुता	१११	१११	५५५		६४
५८.	मणिमध्यम्	५११	५५५	११५		१६६
५९.	भुजङ्गसङ्गता	११५	१५१	५१५		१७२
६०.	कुललितम्	१११	१११	१११		५१२

दशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद १०२४

६१.	गोपातः	५५५	५५५	५५५	५	१
६२.	सद्युतम्	११५	१५१	१५१	५	३६४
६३.	चम्पकमाला	५११	५५५	११५	५	१६६
६४.	सारथी	५११	५११	५११	५	४३६
६५.	सुपमा	५५१	१५५	५११	५	३६७
६६.	भ्रमृतगति	१११	१५१	१११	५	४६६
६७.	मर्या	५५५	५११	११५	११	२४१
६८.	स्वरितगति	१११	१५१	१११	५	४६६
६९.	मनोरमम्	१११	५१५	१५१	५	३४४
७०.	स्लितगति.	१११	१११	१११	१	१०२४

एकादशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद २०४८

७१.	मालती	५५५	५५५	५५५	५५	१
७२.	बन्धु	५११	५११	५११	५५	४३६
७३.	सुमुखी	१११	१५१	१५१	१५	४८०
७४.	शालिनी	५५५	५५१	५५१	५५	२८६
७५.	वातोर्मी	५५५	५११	५५१	५५	३०५
७६.	उपजाति	[शालिनी वातोर्मी मिश्रित]				
७७.	दमनकम्	१११	१११	१११	१५	२०२४
७८.	चण्डिका	५१५	१५१	५१५	१५	६८३
७९.	सैनिका	१५१	५१५	१५१	५१	१३६६
८०.	इन्द्रवज्रा	५५१	५५१	१५१	५०	३४७
८१.	उपेन्द्रवज्रा	१५१	५५१	१५१	५५	३४८
८२.	उपजाति	[इन्द्रवज्रोपेन्द्रवज्रा मिश्रित]				

क्रम क	छन्द नाम	लक्षण				प्रस्तारसंख्या
८३	रघोद्धता	५१५	१११	५१५	१५	६६६
८४	स्वागता	५१५	१११	५११	५५	४४३
८५.	भ्रमरविलसिता	५५५	५११	१११	१५	१००६
८६	अनुकूला	५११	५५१	१११	५५	४८७
८७	मोटनकम्	५५१	१५१	१५१	१५	८७७
८८.	सुकेशी	५५५	११५	१५१	५५	३४५
८९	सुभद्रिका	१११	१११	५१५	१५	७०४
९०	बकुलम्	१११	१११	१११	११	२०४८

द्वादशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद ४०६६

९१	प्रापीड	५५५	५५५	५५५	५५५	१
९२.	भुजङ्गप्रयातम्	१५५	१५५	१५५	१५५	५८६
९३	लक्ष्मीपद्म	५१५	५१५	५१५	५१५	११७१
९४	तोटकम्	११५	११५	११५	११५	१७५६
९५	सारङ्गकम्	५५१	५५१	५५१	५५१	२३४१
९६	भौषतिकदाम	१५१	१५१	१५१	१५१	२६२६
९७	मोदकम्	५११	५११	५११	५११	३४११
९८	धुन्दरी	१११	५११	५११	५१५	१४६४
९९	प्रमिताक्षरा	११५	१५१	११५	११५	१७७२
१००	चन्द्रवर्ध	५१५	१११	५११	११५	१६७६
१०१	द्रुतधिसम्मितम्	१११	५११	५११	५१५	१४६४
१०२	वशास्यविला	१५१	५५१	१५१	५१५	१३८२
१०३	द्वन्द्ववशा	५५१	५५१	१५१	५१५	१३८१
१०४	उपजाति	[वशास्यविलेन्द्रवशा मिथित]				
१०५	जलोदलपति	१५१	१०५	१५१	११५	१८८६
१०६	ध्वजदेवी	५५५	५५५	१५५	१५५	५७७
१०७	मग्दाकिनी	१११	१११	५१५	५१५	१२१६
१०८	कुसुमविजिम्ब	१११	५५	१११	१५५	६७६
१०९	तामरसम्	१११	१५१	१५१	१५५	८८०
११०	मालती	१११	१५१	१५१	५१५	१३६२
१११.	मणिमाला	५५१	१५५	५५१	१५५	७८१
११२	अक्षयमासा	५५५	५११	११५	५५५	२४१
११३.	प्रियम्बदा	१११	५११	१५१	५१५	१४००
११४	सलिला	५५१	५११	१५१	५१५	१३६७

क्रमांक	छन्द नाम	सङ्ख्या	प्रस्तारसङ्ख्या
११५.	सलितम्	५११ ५५१ १११ ११५	२०२३
११६.	कामदत्ता	१११ १११ ५१५ १५५	७०४
११७	यसन्तघस्वरम	१५१ ५१५ १५१ ५१५	१३६६
११८	प्रमुदितयदना	१११ १११ ५१५ ५१५	१२१६
११९	नक्षमालिनी	१११ १५१ ५११ १५५	६४४
१२०	तारसतयनम	१११ १११ १११ १११	४०६६

त्रयोदशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद ८१६२

१२१	बाराह	५५५ ५५५ ५५५ ५५५ ५	१
१२२	माया	५५५ ५५१ १५५ ११५ ५	१६३३
१२३	तारकम	११५ ११५ ११५ ११५ ५	१७५६
१२४	कन्दम	१५५ १५५ १५५ १५५ १	४६८२
१२५	पञ्चावलि	५११ १११ १५१ १५१ १	७०३६
१२६	प्रहृषिणी	५५५ १११ १५१ ५१५ ५	१४०१
१२७	वविरा	१५१ ५११ ११५ १५१ ५	२८०६
१२८	वण्डी	१११ १११ ११५ ११५ ५	१७६२
१२९	मञ्जुभरिणी	११५ १५१ ११५ १५१ ५	२७६६
१३०	चन्द्रिका	१११ १११ ५५१ ५५१ ५	२३६८
१३१	कलहस	११५ १५१ ११५ ११५ ५	१७७२
१३२	मृगीप्रमुलम	१११ १५१ १५१ ५१५ ५	१३६२
१३३	क्षमा	१११ १११ ५५१ ५१५ ५	
१३४	सता	१११ ११५ १५१ १५१ १	२६१२
१३५	चम्रलेखम्	१११ ११५ ५१५ ५१५ ५	११८४
१३६	पुष्टुति	१११ ११५ ५५१ ५५१ ५	२३६६
१३७	लक्ष्मी	५५१ ५११ ११५ १५१ ५	२८०५
१३८	विमलवति	१११ १११ १११ १११ १	८१६२

चतुर्दशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद १६३८४

१३९.	सिंहास्य	५५५ ५५५ ५५५ ५५५ ५ ५	१
१४०.	यसन्ततिलका	५५१ ५११ १५१ १५१ ५ ५	२६३३
१४१.	धक्कम्	५११ १११ १११ १११ १ ५	८१६१
१४२	असम्बाधा	५५५ ५५१ १११ ११५ ५ ५	२०१७
१४३	अपराजिता	१११ १११ ५१५ ११५ १ १	४८२४
१४४	प्रहरणकलिका	१११ १११ ५११ १११ १ ५	८१२८
१४५	वासन्ती	५५५ ५५१ १११ ५५५ ५ ५	४८१

क्रमांक	छन्द-नाम	लक्षण							प्रस्तारसंख्या
१४६	सोला	५५५	११५	५५५	५११	५	५		३०६७
१४७	नागदीमुखी	१११	१११	५५१	५५१	५	५		२३६८
१४८	धैवर्भी	५५५	५११	१११	१५५	५	५		१००६
१४९	इन्दुवदनम्	५११	१५१	११५	१११	५	५		३८२३
१५०.	शरभी	५५५	५११	१११	५५१	५	५		
१५१	अहिपृति	१११	१११	५११	१५१	१	॥		७०६६
१५२	बिमला	१११	१५१	५११	१५१	१	५		७०८८
१५३	मल्लिका	११५	१५१	११५	१५१	१	५		
१५४	मणिगणम्	१११	१११	१११	१११	१	१		१६३८४

षष्ठदशाक्षर छन्द प्रस्तारभेद ३२७६८

१५५	लीलाखेल	५५५	५५५	५५५	५५५	५५५		१
१५६.	मालिनी	१११	१११	५५५	१५५	१५५		४६७२
१५७.	चामरम्	५१५	१५१	५१५	१५१	५१५		१०६२३
१५८	भ्रमरावलिका	११५	११५	११५	११५	११५		१४०४४
१५९	वनोहस	११५	१५१	१५१	५११	५१५		११६२८
१६०	क्षारभम्	१११	१११	१११	१११	११५		१६३८४
१६१	निशिपालकम्	५११	१५१	११५	१११	५१॥		१२०१५
१६२	विपिनतिलकम्	१११	११५	१११	५१५	५१५		६६६६
१६३	चन्द्रलेखा	५५५	५१५	५५५	१५५	१५५		४६२५
१६४.	चित्रा	५५५	५५५	५५५	१५५	१५५		४६०६
१६५.	केसरम्	१११	१५१	५११	१५१	५१५		११०८४
१६६	एला	११५	१५१	१११	१११	१५५		८१७२
१६७.	प्रिया	१११	१११	५५१	५११	५१५		११५८४
१६८	उत्सव	५१५	१११	५११	५११	५१५		११७०७
१६९	वद्धगणम्	१११	१११	१११	१११	१११		३२७६८

षोडशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद ६५५३६

१७०	राम	५५५	५५५	५५५	५५५	५५५	५	१
१७१	षष्ठचामरम्	१५१	५१५	१५१	५१५	१५१	५	२१८४६
१७२	नीलम	५११	५११	५११	५११	५११	५	२८०८७
१७३	षष्ठला	५१५	१५१	५१५	१५१	५१५	१	४३६६१
१७४	भदनललिता	५५५	५११	१११	५५५	१११	५	२६१६६
१७५	वाणिनी	१११	१५१	५११	१५१	५१५	५	१११८४

क्रमांक	छन्द नाम	लक्षण	प्रस्तारसख्या
१७६.	प्रवरत्नलितम्	१५५ ५५५ १११ ११५ ५१५ ५	१०,१७८
१७७	गरुडरत्नम्	१११ १५१ ५११ १५१ ५५१ ५	१६,३७६
१७८	चक्रिता	५११ ११५ ५५५ ५५१ १११ ५	३०,७५१
१७९	गजतुरगविलसितम्	५११ ५१५ १११ १११ १११ ५	३२,७२७
१८०	शीलशिखा	५११ ५१५ १११ ५११ ५११ ५	
१८१.	सलितम्	५११ ५१५ १११ ५१५ १११ ५	३०,१५१
१८२	सुकेशरम्	१११ ११५ १५१ ११५ १५१ ५	
१८३	ललना	११५ १११ १११ १५१ ५११ ५	
१८४	गिरिवरपति	१११ १११ १११ १११ १११ १	६५,५३६

सप्तदशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद १,३१,०७२

१८५	लीलापुष्पम्	५५५ ५५५ ५५५ ५५५ ५५५ ५५	१
१८६	पुष्पी	१५१ ११५ १५१ ११५ १५५ १५	३८,७५०
१८७	मालावती	१११ ११५ १५१ ११५ १५५ १५	३८,७५२
१८८	शिलरिणी	१५५ ५५५ १११ ११५ ५११ १५	५६,३३०
१८९	हरिणी	१११ ११५ ५५५ ५१५ ११५ १५	४६,११२
१९०.	मन्दाक्रान्ता	५५५ ५११ १११ ५५१ ५५१ ५५	१८,६२६
१९१	वशपत्रपतितम्	५११ ५१५ १११ ५११ १११ १५	६४,६८३
१९२	मर्दङ्कम्	१११ १५१ ५११ १५१ १५१ १५	५६,२४०
	कोकिलकम्	१११ १५१ ५११ १५१ १५१ १५	५६,२४०
१९३	हारिणी	५५५ ५११ १११ ५५५ १५५ १५	३७,८७३
१९४	नाराक्रान्ता	५५५ ५११ १११ ५१५ ११५ १५	४६,५७७
१९५.	मत्तङ्गवाहिनी	५१५ १५१ ५१५ १५१ ५१५ १५	
१९६	पद्मकम्	१११ ११५ ५५५ ५५१ ५५१ ५५	
१९७	वशमुलहरम्	१११ १११ १११ १११ १११ ११	१,३१,०७२

अष्टदशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद २,६२,१४४

१९८	सीलाचन्द्रः	५५५ ५५५ ५५५ ५५५ ५५५ ५५५	१
१९९	मञ्जीरा	५५५ ५५५ ५११ ५५५ ११५ ५५५	१२,६७२
२००	चर्चरी	५१५ ११५ १५१ १५१ ५११ ५१५	६३,०१६
२०१	श्रीडाचन्द्रः	१५५ १५५ १५५ १५५ १५५ १५५	३७,४५०
२०२	कुमुदितलता	५५५ ५५१ १११ १५५ १५५ १५५	३७,८५७
२०३	नन्दनम्	१११ १५१ ५११ १५१ ५१५ ५१५	७६,७२०
२०४	नाराच	१११ १११ ५१५ ५१५ ५१५ ५१५	७४,६४४
२०५.	वित्रलेखा	५५५ ५११ १११ १५५ १५५ १५५	३७,८७३

क्रमांक	छन्द नाम	संक्षेप	प्रस्तारसंख्या
२०६	भ्रमरपदम्	५११ ५१५ १११ १११ १११ ११५	१,३०,६७१
२०७	शाबूँलसलितम्	५५५ ११५ १५१ ११५ ५५१ ११५	१,१६,५६६
२०८	मुलसितम्	१११ १११ ५५५ ५५१ ५११ ५१५	
२०९	उपवनकुसुमम्	१११ १११ १११ १११ १११ १११	२,६२ ४४

एकीनविंशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद ५,२४,२८८

२१०	नागानन्द	५५५ ५५५ ५५५ ५५५ ५५५ ५५५ ५	१
२११	शाबूँलसलितम्	५५५ ११५ १५१ ११५ ५५१ ५५१ ५	१,४६,३३७
२१२	धन्वम्	१११ १११ १११ १५१ १११ १११ १	५,२३,२६४
२१३	धवलम्	१११ १११ १११ १११ १११ १११ ५	२,६२,१४४
२१४	शम्भु	११५ ५५१ १५५ ५११ ५५५ ५५५ ५	३,१७२
२१५	मेघविष्कृजिता	१५५ ५५५ १११ ११५ ५१५ ५१५ ५	७५,७१४
२१६	छाया	१५५ ५५५ १११ ११५ ५५१ ५५१ ५	१ ४६,४४२
२१७	सुरसा	५५५ ५१५ ५११ १११ १५५ १११ ५	२,३७,४५७
२१८	कुल्लदाम	५५५ ५५१ १११ ११५ ५१५ ५१५ ५	८५,७४५
२१९	मुद्गलकुसुमम्	१११ १११ १११ १११ १११ १११ १	५,२४,२८८

विंशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद १०,४८,५७६

२२०	योगानन्द	५५५ ५५५ ५५५ ५५५ ५५५ ५५५ ५५	१
२२१	गीतिका	११५ १५१ १५१ ५११ ५१५ १५१ १५	३ ७२,०७६
२२२	राष्ट्रका	५१५ १५१ ५१५ १५१ ५१५ १५१ ५१	६ ६६,०५१
२२३	शोभा	१५५ ५५५ १११ १११ ५५१ ५५१ ५५	१ ५१,४६०
२२४	सुवदना	५५५ ५१५ ५११ १११ १५५ ५११ १५	४,६६ ८३३
२२५	प्लवङ्गमङ्गलम्	१५१ ५१५ १५१ ५१५ १५१ ५१५ १५	
२२६	शशाङ्कसलितम्	५५१ ५११ १५१ ५११ १५१ ५११ १५	
२२७	भद्रकम	५११ ५११ ५११ ५११ ५१५ ११५ १५	
२२८	अनन्तपुष्पम्	१११ १११ १११ १११ १११ १११ ११	१०,४८,५७६

एकविंशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद २०,६७,१५२

२२९	ब्रह्मानन्द	५५५ ५५५ ५५५ ५५५ ५५५ ५५५ ५५५	१
२३०	लाघरा	५५५ ५१५ ५११ १११ १५५ १५५ १५५	३,०२ ६६३
२३१	मञ्जरी	५१५ १११ ५१५ १११ ५१५ १११ ५१५	७ ६५,६२७
२३२	नरेन्द्र	५११ ५१५ १११ १११ ५१५ १५१ ५१५	४,५०,५१६
२३३	सरसी	१११ १५१ ५११ १५१ ५१५ १५१ ५१५	७,११ ६००
२३४	रुचिरा	१११ १५१ ५११ १५१ ५१५ ५१५ ५१५	७,११,६००
२३५	निदपमतिलकम्	१११ १११ १११ १११ १११ १११ १११	२० ६७ १५२

प्रमाण छन्द-नाम

लक्षण

प्रस्तारसंख्या

द्वाविंशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद ४१,६४,३०४

२३६. विद्यानन्द	५५५ ५५५ ५५५ ५५५ ५५५ ५५५ ५५५ ५	१
२३७. हसी	५५५ ५५५ ५५५ ॥१ ॥१ ॥१ ॥१५ ॥	१०,४८,३२१
२३८. मदिरा	५॥ ५॥ ५॥ ५॥ ५॥ ५॥ ५॥ ५॥ ५	१७,६७,५५६
२३९. मग्नकम्	५॥ ५॥ ॥१ ५॥ ५॥ ५॥ ५॥ ५	१६,३१,२२३
२४०. शिखरम्	५॥ ५॥ ॥१ ५॥ ५॥ ५॥ ५॥ ५	१६,३१,१२३
२४१. अच्युतम्	॥१ ॥१ ॥१ ॥१ ॥१ ॥१ ॥१ ५	
२४२. मवात्तम्	५५॥ ५॥ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५	१६,१५,५०६
२४३. तद्वरवत्तम्	॥१ ॥१ ॥१ ॥१ ॥१ ॥१ ॥१ ५	४१,६४,३०४

त्रयोविंशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद ८३,८८,६०८

२४४. दिव्यानन्दः	५५५ ५५५ ५५५ ५५५ ५५५ ५५५ ५५५ ५५	१
२४५. सुन्दरिका	॥१ ॥१ ५॥ ॥१ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५	३५,६०,०४४
पद्यावतिका	॥१ ॥१ ५॥ ॥१ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५	३५,६०,०४४
२४६. अश्रितनया	॥१ ५५ ५॥ ५५ ५॥ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५	३८,६१,४२४
२४७. मालती	५॥ ५॥ ५॥ ५॥ ५॥ ५॥ ५॥ ५॥ ५५	१७,६७,५५६
२४८. मल्लिका	५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५	३५,६५,११८
२४९. मलाफीडम	५५५ ५५५ ५५५ ॥१ ॥१ ॥१ ॥१ ५५	४१,६४,०४६
२५०. कनकवलयम्	॥१ ॥१ ॥१ ॥१ ॥१ ॥१ ॥१ ॥१ ५५	८३,८८,६०८

चतुर्विंशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद १,६७,७७,२१६

२५१. रामानन्दः	५५५ ५५५ ५५५ ५५५ ५५५ ५५५ ५५५ ५५५	१
२५२. दुर्मलिका	॥१ ॥१ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५	७१,६०,२३६
२५३. विरीटम्	५॥ ५॥ ५॥ ५॥ ५॥ ५॥ ५॥ ५॥ ५॥ ५॥ ५॥ ५॥	५३,८०,४७१
२५४. तग्वी	५॥ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५	३६,५५,३६७
२५५. मायवी	५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५	१,१६,८३,७२६
२५६. तरलनयनम्	॥१ ॥१ ॥१ ॥१ ॥१ ॥१ ॥१ ॥१ ॥१ ५५	१,६७,७७,२१६

पञ्चविंशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद ३,३५,५४,४३२

२५७. रामानन्दः	५५५ ५५५ ५५५ ५५५ ५५५ ५५५ ५५५ ५५५	१
२५८. क्रीडपदा	५॥ ५५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५	५१,६७,७६ ३८१
२५९. मन्ती	५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५ ५५	७१ ६०,२३६
२६०. मणिगुप्तम्	॥१ ॥१ ॥१ ॥१ ॥१ ॥१ ॥१ ॥१ ॥१ ५५	३,३५,५४,४३२

क्रमांक छन्द-नाम

संख्या

प्रस्तारसंख्या

षड्विंशाक्षर छन्द-प्रस्तारभेद ६,७१,०८,८६४

२६१. गोविन्दा- नन्द	SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS SSS	१
२६२. भुजङ्ग- विगुम्भितम्	SSS SSS SS S S S S २,३८,५४,८४६	
२६३. अपवाह	SSS S S ८३,८८,६०१	
२६४. मागधी	S S S S S S S S १,४३,८०,४७१	
२६५. कमलदलम्	६,७१,०८,८६४	

प्रकीर्णक-छन्द

१. पिपीहिका	SSS SSS SS S S S S	
२. पिपीहिकाकरभः	SSS SSS SS S S	
३. पिपीहिकापणव.	SSS SSS SS	
४. पिपीहिकामाला	SSS SSS SS	
५. द्वितीयत्रिभंगी	S S S S S	
६. शास्त्ररः	SS S	

वण्डक-छन्द

१. वण्डकट्टिप्रपात	S S S S S S S S S	
२. प्रचितक	S S S S S S S S S	
३. अर्ण	S S S S S S S S S	
४. सर्वतोभद्र	S S S S S S S S S S S S	
५. अशोककुसुम- सञ्जरी	S S S S S S S S S S	
६. कुसुमस्तवक	S S S S S S S	
७. मत्तमातङ्ग	S S S S S S S S S S	
८. अन्नङ्गोत्तर	S S S S S S S S S S	

अर्धसम-वृत्त

क्रमक छन्द-नाम	प्रथम और तृतीय चरण का लक्षण	द्वितीय और चतुर्थ चरण का लक्षण
१. पुष्पिताग्रा	111 111 515 155	111 151 151 515 5
२. उपचित्रम्	115 115 115 15	511 511 511 55
३. वेगवती	115 115 115 5	511 511 511 55
४. हरिणस्तुता	515 115 115 15	111 511 511 515
५. अपरवक्त्रम्	111 111 515 55	111 151 151 515
६. सुन्दरी	115 115 151 5	115 511 515 15
७. भद्रधिराद्	551 151 515 5	555 155 151 55
८. केतुमती	115 151 115 5	511 515 111 55
९. वाङ्मती	515 151 515 151	151 515 151 515 5
१०. पदपदावली	151 515 151 515	515 151 515 151 5

विषमवृत्त

१. उद्गता	[प्र.च.] ^८ 115 151 115 1	[द्वि.च.] ^८ 111 115 151 5
	[तृ.च.] ^८ 511 111 511 5	[च.च.] ^८ 115 151 115 5
२ उद्गताभिः	[प्र.च.] 115 151 115 1	[द्वि.च.] 111 115 151 5
	[तृ.च.] 511 111 151 15	[च.च.] 115 151 115 5
३. सौरभम्	[प्र.च.] 115 151 115 1	[द्वि.च.] 111 115 151 5
	[तृ.च.] 515 111 511 5	[च.च.] 115 151 115
		151 5
४ सलितम्	[प्र.च.] 115 151 115 1	[द्वि.च.] 111 115 151 5
	[तृ.च.] 111 111 115 115	[च.च.] 115 151 115
		151 5
५ भाव	[प्र.च.] 555 555	[द्वि.च.] 555 555
	[तृ.च.] 555 555	[च.च.] 511 511 511 5
६ वक्त्रम्		[समचरणे] 555, 5 155 5
७. पद्मावक्त्रम्		[समचरणे] 151 (५ ६ ७ ८ वर्यं)

(घ.) विरुदावली छन्दों के लक्षण^३

छन्द-नाम	वर्णसंख्या या मात्रासंख्या	लक्षण	विशेष
द्विगा कलिका	१६ मा०च०	४-चतुष्कल	चतुष्कल की मंत्री
रादिकलिका	२० मा०च०	४-पञ्चकल	१-२ और ३-४ पञ्चकलों की मंत्री
मादिकलिका	४८ मा०च०	मात्रा, षट्कल-७	
भादिकलिका	२४ मा०च०	त्रिकल-८, अर्धत्वि मण्ड ८, धनुर्मासपुवत	
गलादिकलिका	२० मा०च०	४-पञ्चकल, प्रत्येक पञ्चकल के भावि में गुह	
मिथ्या कलिका	२७ व०च०	गुह-सप्त-मिथ	तिल-संदुल के समान गुह और सप्त मिथित हों ।
(१) मध्या कलिका		भावि और अन्त में कलिका और मध्य में गद्य	
(२) मध्या कलिका		भावि और अन्त में मंत्री-रहित गद्य और मध्य में कलिका ।	
द्विभङ्गी कलिका	२८ व०च०	गुरु-सप्त-क्रम से २४ वर्ण, अन्त में ४ गुरु	६ भंग होते हैं इनमें भंग होने पर भी मंत्री होती है । द्वितीय और चतुर्थ मधुर एवं श्लिष्ट होते हैं ।
विदग्धत्रिभङ्गी कलिका	२४ व०च०	स न, त न, त न, भ. व.	युगमार्ण-भग और दोनों भगणों की मंत्री

^३कलिका में प्रत्येक के चार चरण होते हैं । चण्डवृत्तों में प्रत्येक में ६, ८, १०, १२, १४ तक कलिका विरुद होते हैं । विरुद तीन होते हैं । घोर, घीर, देव आदि सम्बोधन होते हैं । यहाँ केवल चण्डवृत्त छन्दों के लक्षण मात्र दिये गये हैं, कलिका विरुदादि के नहीं दिये गये हैं क्योंकि ये ऐच्छिक होते हैं ।

सकेत—म = मगण, य = यगण, र = रगण, स = सगण, त = तगण, ज = जगण, भ = भगण, न = नगण, ग = गुरु, ल = लघु, षट्कल = ६ मात्रा, पञ्चकल = ५ मात्रा, चतुष्कल = ४ मात्रा, त्रिकल = ३ मात्रा, ञ = चतुष्पदी, व = वर्ण, मा = मात्रा

छन्द-नाम	वर्णसंख्या या मात्रासंख्या	लक्षण	विशेष
तुरगत्रिभंगी कलिका	२२ व० व०	त भ ल, त भ ल, त भ ल	
पद्य " "	३२ मा० व०		देखें, प्रथम छंद के चतुर्थ प्रकरण में पद्यावली, त्रिभङ्गी, वण्डकसादिछन्द
हरिणप्लुत " "	३३ व० व०	न य भ, न य भ, न य भ, भ, भ.	६ भग हों और दोनों भगणों की मंत्री हो ।
मत्तक " "	३४ व० व०	न.य.भ, न.य.भ, न.य.भ, न.ल	
भुनङ्ग " "	३० व० व०	म भ ल ल, म भ ल ल, म भ ल.ल, भ भ.	दूसरे और चौथे में भग, अर्थात् चौथे में भग न भी हो, दोनों भगणों की मंत्री हो ।
वलिगतात्रिगता " "	३३ व० व०	म न न, म न.न, म न न, भ भ	तृतीय वर्ण में भग हो ।
सलिता " "	३० व० व०	त म, भ, त.न भ त न भ, भ.	द्वितीय वर्ण में भग हो ।
चरतनु " "	३६ व० व०	न.य.म ल, न य न ल, न य न ल. भ भ	६ भग होते हैं ।
सुगंध द्विपादिका सुगम-भसा कलिका	२० व० व०	म ल.ल म ल ल, भ.भ.	सुगमभग
मगलभा " "	१८ व० व०	म ल ल, म ल ल, ग.ग.ग.ग.	
मध्या(१) " "	१८ व० व०	म भ ल म भ भ	
" (२) " "	१४ व० व०	न ल भ न ल ल.	
" (३) " "	११ व० व०	न न ल ल ल	
" (४) " "	११ व० व०	न न न ल ल.	
शिचिता, " "	१८ व० व०	म ल ल, म ल ल, ल ल ल ल	
मधुरा " "	२२ व० व०	म भ ल ल, म भ ल ल भ, भ	
तरुणी " "	२० व० व०	म भ ल ल, म भ ल ल, ग.ग.ग.ग.	
		प्रति चरण-वर्ण	
पुदपोत्तम घण्डवृत्त	६	त भ.भ.	४, ८ वर्ण श्लिष्ट; ३, ६ वर्ण दोष;
तिलक " "	१५	न न ल न.न	१०वां वर्ण मधुर;
मधुत " "	२४	म य न य.न य.न.य.	दृढा वर्ण श्लिष्टपर; ४ या = पर होते हैं ।
वदित " "	१३	म.म.ल ल ल.	२, ६, १२वां वर्ण श्लिष्ट

छन्द-नाम	प्रति चरण-वर्ण	संख्या	विशेष
रण	१२ (१४)	ज. र. ज. र. अन्तिम चरण में-ज. भ. ल. ज. भ. ल.	१, ३, ५, ७, ९, ११ वां वर्ण द्रिष्ट; पद - संख्या ऐच्छिक होती है।
वीर	१२	भ. भ. न. न.	१, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १०, ११, १२ वां वर्ण द्रिष्ट; पद-संख्या १२
शाक	१०	भ. भ. र. ल.	१, ३, ५, ७, ९ वां वर्ण द्रिष्ट; ७, ९ वां वर्ण दीर्घ; दूसरा वर्ण मधुर;
मातङ्गयेति	१०	र. र. य. ल.	१, ३, ५, ७, ९ वां वर्ण द्रिष्ट या मधुर; ५, ७ वां वर्ण पर भंग श्रीर मंत्री; १, ३, ५, ७, ९ वां वर्ण दीर्घ; पद - संख्या ऐच्छिक;
चत्पल	६ (१२)	भ. भ. मत्तान्तरे-भ. भ. भ. भ.	२, ५ वां वर्ण द्रिष्ट; पद- संख्या ऐच्छिक;
गुणरति	७ (१४)	ल. ल. ल. मत्तान्तरे-ल. न. ल. ल. ल. ल.	३, ४ वां वर्ण दीर्घ; पद-संख्या ऐच्छिक;
कल्पद्रुम	६	ल. ज. य.	२, ३, ५, ६ वां वर्ण द्रिष्ट; ६ वां वर्ण द्रिष्टपर; पद- संख्या ऐच्छिक;
कवच	६	भ. भ.	२, ४ वां वर्ण मधुर, ५ वां वर्ण द्रिष्ट;
अपराजित	११	भ. ल. ज. य. ल.	२, ४ वां वर्ण मधुर; ५, ६, ७, ८, ९, १०, ११ वां वर्ण दीर्घ;
नत्तन	११	ल. ल. र. ल. ल.	४, ७ वां वर्ण द्रिष्ट; ८ वां वर्ण मधुर;
सरन्तमस्त	११	ल. भ. ल. ल. ल.	३, ५, ६, ७, ८, ९, १०, ११ वां वर्ण द्रिष्ट, संद्रिष्ट- ष्ट एवं मधुर,
वेष्टन	१०	न. भ. ल. ल. ल. ल.	७ वां वर्ण द्रिष्ट; ५, ६, ७, ८, ९, १० वां वर्ण दीर्घ
अस्त्रलित	१०	ल. र. भ. ल.	३, ५, ७, ८, ९ वां वर्ण संद्रिष्ट; प्रथम वर्ण दीर्घ;
पल्लवित	१३	भ. ल. न. ल. ल. ल. ल.	२, ४ वां वर्ण श्रित या मधुर, ५, ६ वां वर्ण दीर्घ;

छन्द-नाम	प्रति चरणवर्ण	संज्ञा	विशेष
समप्रभ् ,	१० (१३) ज र ज र.	अन्तिम चरण मे-ज र ज र ल	३ रा वर्ण मधुर; ५वां वर्ण द्विष्ट; पद-संख्या ऐच्छिक.
तुरग ,	१०	भ न ज ल.	२, ६वां वर्ण मधुर, पद- संख्या ऐच्छिक;
पञ्चैरह् ,	६	न य	छठा वर्ण ववर्ग रचित छठा वर्ण मधुर और इसी वर्ण पर भग और मंत्री भी । इकारादि स्वरभेद होने पर इसी छन्द के भेद धनते हैं । पद-संख्या ऐच्छिक ।
सितवञ्ज ,	६	न य.	छठा वर्ण ववर्गीय, दोष पञ्चैरह के अनुसार ।
पाण्डूत्पल ,	६	न य	छठा वर्ण टवर्गीय, दोष पञ्चैरह के समान ।
इन्दीवर ,	६	न य	छठा वर्ण तवर्गीय, दोष पञ्चैरहवत् ।
अशनाम्भोरह् ,	६	न य	छठा वर्ण पवर्गीय; दोष पञ्चैरहवत् ।
फुलाम्भुज ,	६	न य	छठे वर्ण का भग और मंत्री ववर्गीय सकार से होती है ।
धम्पक ,	६	भ न	२ रा वर्ण मधुर एक वचन द्विष्ट, पद संख्या ऐच्छिक ।
वञ्जुल ,	७	न ज ल	५वां वर्ण मधुर, पद संख्या ऐच्छिक ।
कुन्द ,	६	भ.ज	२, ६ वर्ण मधुर एक वचन द्विष्ट; पद संख्या ऐच्छिक
बहुतभासुर ,	१६मा०	४ घतुक्ल, जगण रहित	शृङ्खलावद्ध;
बहुतमङ्गल =	१२व०	भ म.म.म.	तृतीय भगण शृङ्खलावद्ध, पद-संख्या ऐच्छिक;
मञ्जरी कोरक	१२व०	भ.भ.भ.भ	अथवा मञ्जरी पदवात् कोरक, मञ्जरी का सदाय नहीं, छाद्यन्त यवर्गहित शृङ्खला रहित; २० पद;

छन्द-नाम	प्रतिचरण वर्ण	संक्षेप	विशेष
गुच्छक	१६	न स ज न ज. ल.	सानुप्रास एवं यमकाक्षित; १६ पद,
कुसुम	१२	न न न न	२० पद, पादान्तयमक;
दण्डविभङ्गी- कलिका	३३	न न. र-६.	पद-सख्या ऐच्छिक
सम्पूर्णविहाय- विभङ्गी कलिका	२४	त न त न त. न. भ भ	८ पद; आशी पद्ययुक्त;
मिश्रकलिका		कलिका संक्षेप-भ. न. ज. ल.	द्वितीयाक्षर में भग, ६ कलिका, आद्यन्त में आशी पद्य, मध्य में कलिका विवक्षित.
साधारण षण्डवृत्त	सामान्यसंक्षेप—कला-यास ऐच्छिक; वर्ण संख्या ३ से कम नहीं और १७ वर्ण से अधिक नहीं । जिस गण से प्रारम्भ हो वही गण अन्त तक रहना चाहिये । प्र, झ, प्र, झ, स्मि, स्म, व व इत्यादि सयुक्त वर्णों के संयोग होने पर भी इस प्रकरण में पूर्व-पूर्व वर्ण का सयुक्त होता है । मात्रिक में चतुष्कलद्वय होने पर जगण का प्रयोग निषिद्ध है । इसके अनेक भेद होते हैं ।		
साप्तविभक्तिकीकलिका	(प्रथमा विभक्ति) भ. त; (द्वितीया०) न. य; (तृतीया०) न. न. स. ल.; (चतुर्थी०) त. त. ल., (पंचमी०) य. य; (षष्ठी०) त. त., (सप्तमी०) स. स., (सम्बोधन) त. न, सब विभक्तियों के चार-चार चरण होते हैं ।		
अक्षमयी कलिका	अ से ल पर्यन्त प्रत्येक अक्षर के दो चतुष्कल होते हैं । चतुष्कल में ऽ ऽ, । । । ।, ऽ । ।, । । ऽ का योग्य प्रयोग, जगण का प्रयोग निषिद्ध है ।		
सर्वलघुकलिका	१५, १६ या १७	सर्व लघु	कलिका सहित

षण्डावली

तामरस षण्डावली	११	र. स. स. ल. ल.	कलिका के आद्यन्त में विरह- रहित आशी पद्य
मञ्जरी षण्डावली	१६भा०	चार चतुष्कल जगण रहित	आद्यन्त में आशी पद्य

पञ्चम परिशिष्ट

सन्दर्भ-ग्रन्थों में प्राप्त वर्णिक-वृत्त*

प्रस्ताव- सहाय	छन्द-नाम	संख्या	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
चतुरक्षर-छन्द			
२.	बीडा	य ग	१०, ६; श्रीराम-१७; वृद्धि-१६
१.	समृद्धि:	र ग	१०; पुष्प-११; नन्द-१७; वृद्धि १६
४.	सुमति:	स ग	१०, १६; भ्रमरी-११; दोता-१७; रामा-१७,
५.	सोमप्रिया	त ग	१७; घटा-१७; तारा-१६.
७	सुमुष्मी	भ ग	१०, १६; सलिला-११, घटा-१७.
८	मृगवधू	न ग	७, १०, १५; सती-१७; मधु-१६; कुसुमिता- २२; तरणिगा-१७
६	सुधम्	स ल	१७; गोपाल-१७, यत्नी-१६.
१०	धारि	य ल	१७; वृत्-१७, सध-१६
१२	काव	स ल	१७; बीध-१७; बदली-१६
१३	साधुरि	त ल	१७; वृष्ण-१७; मधु-१६
१४.	ऋजु	ज ल	१७, जया-१६.
१५	भनूजु	भ ल	१७; निद्रि-१७; जतु-१६.
पञ्चाक्षर-छन्द			
२	माली	य ग ग	१७;
३	प्रीति.	र ग ग	१०, १६, सूरिणी-१७.
४	घनपकि	स ग ग	१०; प्रगुर्ण-१७, चतुर्वेदा-१७; सुरती-१६
६.	सती	ज ग ग	१०, १६, शिला-११, वण्टी-१७
८	वसन्ति	न ग ग	१७;

* जिन छन्दों का वृत्तमोक्षित में समावेश नहीं हुआ है और जो ग्रन्थ सन्दर्भ ग्रन्थों में प्राप्त होते हैं वे प्रयोजित छन्द प्रस्ताव-क्रम से इस परिशिष्ट में दिए गए हैं। प्रारम्भ में प्रस्तावनाक्रम से उस छन्द की प्रस्ताव-सहाय दी है, तत्पश्चात् छन्द का नाम और उसके संख्या दिए हैं। तदनन्तर सन्दर्भ-ग्रन्थ का संकेत और छन्द का नाम-भेद एवं सन्दर्भ-क्रम का संके-
तार दिया है। सन्दर्भ-ग्रन्थ-सूची और संकेतार पृष्ठ ४१४ के अनुसार है।

प्रस्तार- सूच्या	छन्द-नाम	संक्षेप	सन्दर्भ-ग्रन्थ-पङ्क्तौतादृ
६.	सावित्री	म स ग	१०; हासिका-१७
१०.	जया	य स ग	६, १०; नरी-१७.
११.	विदग्धकः	र स ग	१०; बागुरा-११; वैनस-१७; शामिनी- २२; धृति-१६
१३	नन्दा	त स ग	६, १०, १६; कणिका-१७
१४	शिला	ज स ग	१७.
१५.	रतिः	भ स ग	१०; मण्डलम्-१७; शर्म-१६
१६.	मभिमुखी	न स ग	१०; भृगुचपला-११; कनकमुखी-११; धृति-१६; सुख-१७
१७.	कुम्भारि	म ग ल	१७.
१८.	भ्रूः	घ ग ल	१७.
१९.	ह्रीः	र ग ल	१७.
२०.	पालि	स ग ल	१७.
२१.	किञ्जल्कि	त ग ल	१७
२२.	वाद्धि	ज ग ल	१७
२३.	विट्	भ ग ल	१७
२४.	पाशु	न ग ल	१७
२५	मालीनम्	म ल ल	१७.
२६	बरीय	घ ल ल	१७.
२७	कल्किः	र ल ल	१७
२८	जतु	स ल ल	१७.
२९	छिद्रम्	त ल ल	१७
३०.	क्षुपम्	ज ल ल	१७; हरम-१७
३१	क्षुत्	भ ल ल	१७; विष्णु-१७.

यडसर-छन्द

	शिलाण्डिनी	य म	१०, २०; पन्था-१७
३	मालिनी	र म	३, १०; करेणु-१७.
४	सूचीमुखी	स म	१०, २०, अभिरुष्या-१७.
५	यध्नू	त म	१७.
६	कञ्जा	ज म	१७
७.	विक्रान्ता	भ म	१०, सिन्धुरया-१७
८.	गुणवती	न म	१७
९	मुनन्दा	म म	१०, तन्त्री-१७; तटी-१६
११.	पिकाली	र म	१७

प्रस्ताव- संख्या	धृन्द् नाम	संख्या	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१२	विमला	स य	१०, कमनी-१७
१४.	धरजस्वा	ज य	१७
१५.	कामलतिका	म य	१०; ईति-१७; कामललिता-१६
१७.	तटी	म र	१०; भवोद्गा-१७
१८	कच्छपी	य र	१७.
२०	मृदुकीला	स र	१७.
२१	जला	स र	१०; स्वाती-१७.
२२.	बन्नीमुखी	ज र	१७
२३.	लघुमातिनी	भ र	१०, शुनकम्-१७
२४	निरसिका	न र	१७, मणिवचि-१६
२५.	मुकुलम	म स	१०, १६; धीधी-११, निस्का-१७
२६	भरागा	य स	१७
२७	कर्मदा	र स	१७.
२८	यमुमती	त स	१०, १७
३०	धुही	ज स	१७
३१.	सौरभि	भ स	१७.
३२	सरि	न स	१७.
३३	साहूति	म त	१७
३४	विन्दू	य त	१७
३५	मन्त्रिका	र त	१७
३६.	दुण्डि	स त	१७
३८.	समापाति	ज त	१७
३९.	राठि	भ त	१७
४०	अनिभृतम्	न त	१७
४१	मह कुरम्	म ज	१७.
४२	वृत्तहारि	य ज	१७
४३	आर्भवंम	र ज	१७
४४.	मधुमारकम	स ज	१७.
४५	हाटकशालि	त ज	१७
४७.	पाकलि	भ ज	१७.
४८	पुटमदि	न ज	१७.
४९	कसरि	म भ	१७
५०	सोमश्रुति	य भ	१७.
५१	सोपधि	र भ	१७

प्रस्तार- सख्या	छन्दनाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्केताङ्क
५२	धुरुमध्या	स भ	१०, दासछुति-१७
५३.	इन्धा	त भ	१७
५४	सावदु	ज भ	१७
५५.	मन्दि	भ भ	१७
५६	अयमितम	भ भ	१७.
५७.	प्रोया	म न	१७
५८	अस्ति	य न	१७
५९	कच्छपी	र न	१०, प्रतरि-१७.
६०	विससि	स न	१७
६१	अतिकलि	त न	१०.
६२.	मुबामि	ज न	१७
६३	अनति	भ न	१७

सप्ताक्षर-छन्द

९.	प्रहाण	य म ग	१७.
३	संरथी	र म ग	१७
४	शम्भूक	स म ग	१७
५	निम्नाशया	त म ग	१७.
६.	सुमोहिता	ज म ग	१७.
७	अधीरा	भ म ग	१७
८	होला	न म ग	१७
९	इभभ्रान्ता	म म ग	१७
१०	अभीक	य म ग	१७
११.	अहिता	र य म	१७
१२	रसधारि	स म ग	१७
१३	वेधा	त य म	१७.
१४.	पद्या	ज य म	१७
१५	किणपा	भ य म	१७
१६	कुमुदवती	न य म	१०, सुरि-१७
१७	किर्मारम	म र ग	१७
१८	वयस्य	य र ग	१७
१९.	हसमाता	र र ग	६, १०, भूरिधाम-१७
२०	दीप्ता	स र ग	१०, हसमाला-१७ १४.
२१	भीमार्जनम	त र ग	१७.

प्रस्ताव संख्या	छंद नाम	संक्षेप	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्केताङ्क
२२.	सुभद्रा	ज र ग	१०, पुरोहिता-१७
२३	होडपदा	भ र ग	१७
२४	मनोज्ञा	न र ग	१०; खरकरा-१७
२६.	मुद्रिता	य स ग	१०, महनीया-१७
२७	उद्धता	र स ग	१०, ३, शरणीति-१७, उद्धता-२२
२८	करभित	स स ग	१७
२९	भ्रमरमाला	त स ग	१०, ३, १९, स्यूता-१७ वयक-२०.
३१	विधुषणा	भ स ग	१०, चचिर-१७, मयलेखा-१९
३२	द्विति	न स ग	१७
३३	हिन्वीर	भ त ग	१७
३४	अपिकम्	य त ग	१७
३५	मृष्टपादा	र त ग	१७
३६	मायाविनी	स त ग	१७
३७	राजरागी	त त ग	१७
३८	कुठारिका	ज त ग	१७
३९	कल्पमुखी	भ त ग	१७
४०	परभूतम	न त ग	१७
४१	महोन्मुखी	भ ज ग	१७
४२	महोद्धता	य ज ग	१७
४४	विमला	स ज ग	१०, कठोद्गता-१७
४५	पूर्णा	त ज ग	१७
४६	बहिबलि	ज ज ग	१७
४७	शारदी	भ ख ग	१०, जगदि-१७, धुनी-१९
४८	पुरादि	न ज ग	१७
४९	सरलम	ग भ ग	१०, १९, वररिता-१७
५०	वैश्वती	य भ ग	१७
५१	सौरवाता	र भ ग	१७
५२	अधिकारी	स भ ग	१७
५३	छुडामणि	त भ ग	१४, निर्वाधिका-१७
५४	महोधिकार	ज भ ग	१७
५५	मौरलिकम	भ भ ग	१७, कलिका-१० १९, सोपान-११ २२, भोगवती-११
५६	स्वनकरी	न भ ग	१७
५७	नयसरा	म न ग	१७

प्रस्ताव- संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
५८.	चिररुचिः	य न ग	१७.
५९.	बहुलया	र न ग	१७.
६०.	यमनकम्	स न ग	१७.
६१.	होरम्	स न ग	१७; मधुकरिका-१०; वज्रम्-११.
६२.	स्विदा	ज न ग	१७;
६३.	चित्रम्	भ न ग	१०, १६; उलपा-१७
६४.	नीहारी	भ भ स	१७
६५.	कंसासारि	य भ स	१७.
६७.	लबिणी	र भ स	१७.
६८.	गृहिणी	स भ स	१७.
६९.	वर्धिष्णु	त भ ल	१७; गूर-१७.
७०.	धोणी	ज भ ल	१७;
७१.	व्याहारी	भ भ स	१७.
७२.	किशलयं	न भ स	१७
७३.	देवलम्	भ य ल	१७.
७४.	नर्दि	य य ल	१७.
७५.	अनासावि	र य ल	१७.
७६.	अलासापि	स य ल	१७.
७७.	गुञ्जा	त य ल	१७.
७८.	शृङ्गा	ज य ल	१७.
७९.	नन्दपु	भ य ल	१७.
८०.	अनु	न य ल	१७.
८१.	अग्नेयी	म र ल	१७.
८२.	मयूरी	म र ल	१७.
८३.	सामिका	र र ल	१७.
८४.	प्रोज्झिता	स र ल	१७.
८५.	वृन्दा	त र ल	१७.
८६.	प्रतदि	ज र ल	१७.
८७.	भीनपदी	भ र ल	१७.
८८.	भणिमुखी	म र ल	१७.
८९.	मौलिस्त्रक्	भ स ल	१७.
९०.	परभानु	य स ल	१७.
९१.	मेयिका	र स ल	१७.
९२.	गोधि	स स ल	१७.

प्रसार- संख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ-संकेतानु
६३	सरलाघ्रि	त स ल	१७
६४	विरोही	ज स ल	१७
६५	वरजापि	भ स ल	१७.
६७	सम्पाक	म स ल	१७.
६८	पट्टरि	य स ल	१७
६९.	भूषिका	र स ल	१७
१००	कात्री	स स ल	१७
१०१	कामोद्धता	त स ल	१७
१०२.	खर्परि	ज स ल	१७
१०३	शान्तनु	भ स ल	१७; सीता-१७
१०४	मुरजिका	म स ल	१७
१०५	कालम्बी	म ज ल	१७
१०६	उपोहा	य ज ल	१७
१०७	कापिका	र ज ल	१७.
१०८	मुट्टरा	स ज ल	१७
१०९	बोधा	त ज ल	१७
११०	उपोदरि	ज ज ल	१७
१११	जातरि	भ ज ल	१७
११३.	भूरिमधु	म भ ल	१७
११४	मूरिबनु	य भ ल	१७
११५	हृषिणी	र भ ल	१७,
११६	लोततनु	स भ ल	१७
११७	क्रोशान्तिकम्	त भ ल	१७
११८	स्तरधि	ज भ ल	१७
११९	घोरस्तरि	भ भ ल	१७
१२०	बीरवट्ट	म भ ल	१७
१२१	अमति	म न ल	१७
१२२	अहति	य न ल	१७
१२३	घट्टाशि	र न ल	१७
१२४	घनघरि	स न ल	१७
१२५	मुशकि	त न ल	१७
१२६	कुरदि	ज न ल	१७
१२७	कोद्रि	भ न ल	१७

प्रस्तार- छन्द नाम लक्षण सन्दर्भ ग्रन्थ-सङ्केताङ्क

अष्टाक्षर-छन्द

२.	अनिभरि	य म ग ग	१७
७	इन्द्रफला	भ म ग ग	१७, इन्द्रवला-१७.
८.	गोपावेदी	न म ग ग	१७.
१०	धूमधारी	य य ग ग	१७
११	मौलिमासिका	र य ग ग	१७
१२	युगधारि	स य ग ग	१७
१४	विराजिकरा	ज य ग ग	१७
१५	वात्या	भ य ग ग	१७
१६.	पाञ्चालाग्नि	न य ग ग	१७.
१८.	कुलाधारी	य र ग ग	१७; शुद्धग-१७
१९	पद्मिनी	र र ग ग	२२
२०.	परिधारा	स र ग ग	१७
२१	विभा	त र ग ग	१०.
२२	यवात्करी	ज र ग ग	१७.
२४	कुररिका	न र ग ग	१७
२६	मनोला	य स ग ग	१७
२८	पञ्चशिला	स स ग ग	१७, रमणीयशिला-१७.
३०	भाङ्गी	ज स ग ग	१७
३२	गुणलयनी	न स ग ग	१०, चन्द्राली-१७
३४	पाराम्तचारी	य त ग ग	१७.
३६	कौधमार	स त ग ग	१७
३७	कराली	त त ग ग	१७; केतुमाला-१९
३८	वारिशाला	ज त ग ग	१७, वितान-१७
४०	युत्तभार	न त ग ग	१७
४३	सिंहलेखा	र ज ग ग	३, १०, १७, मालिनी-७
४४	दिगीश	स ज ग ग	१७
४५	सारावनदा	त ज ग ग	१७
४७	कृष्णगतिका	भ ज ग ग	१७
४८	चित्रविलसितम्	न ज ग ग	३
४९	प्रतिसीरा	म भ ग ग	१७
५२	अतिमोहा	स भ ग ग	१७, वितानम्-१०, १३; वितान के १३ और ११ के अनुसार 'त र ल ग.' एव 'त य ल ल' लक्षण भी है।

प्रसार- मन्त्र	छन्द नाम	संक्षेप	सन्दर्भ-ग्रन्थ-संकेतादि
५४.	धतुरीहा	अ भ ग ग	१७.
५६	वृत्तमुक्ती	न भ ग ग	१७.
५७	हसदत्तम्	अ न ग ग	२, १०, १४, १७.
६१.	सङ्घ्या	त न ग ग	१७.
७४.	विहावा	अ य स ग	१७.
७५.	अनुष्टुप्	र य स ग	१०.
८१.	क्षमा	अ र स ग	१६.
८३	हेमकपम्	र र स ग	१७.
८४.	शाल्वकम्भुतम्	स र स ग	१७.
८५	नाराचिका	त र स ग	१४, १७; नाराचपु-५, १०; नाराचक- ६, १६
८८.	मुमासतो	अ र स ग	१०, १६, उपसिनी-१७, वृत्तवनी-१७
९२	मही	स स स ग	१०; कतिता-१७; करिता-१७
९३	इयामा	त स स ग	७
१००	सरधा	अ त स ग	१७
१०४	भाण्डवकम्	अ त स ग	१७
१०५	हाटनी	अ ज स ग	१७
१०७	अद्वरा	र ज स ग	१७; उद्वरा-१७
१०६.	विद्या	त ज स ग	१७; उद्वरा-१७; आनुष्टुप्-१६.
११०	अराति	अ ज स ग	१७
११२.	सलितगणि	अ ज स ग	१०; अराति-१७.
११५	कुटुम्बरी	र भ स ग	१७
१२०	गजगणि	अ भ स ग	१५, १७
१२१	गिलितिलिना	अ भ स ग	१७.
१२५	ईडा	त भ स ग	१७, ईडा-१७.
१२७.	अरि	अ भ स ग	१७
१२८.	कुमुमम्	अ भ स ग	७; अरि-१७, अरि-१७.
१४०	नागारि	स य स ग	१७
१४७	सामीः	र र य स	१७
१४८	बमीरेण्डु	अ र य स	१७
१५०	अपानिका	अ र य स	१७
१५२	मत्तगदा	अ र य स	१७
१६०	हृत्ति	अ स ग स	१७
१६२.	ईडा	त स ग स	१७

प्रसार- संख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ सङ्केताङ्क
१८०	अनूतनमं	स भ ग ल	१७; नूतनमं-१७
१८१	अमरन्दि	त भ ग ल	१७
१८२.	कुलचारि	ज भ ग ल	१७
१८०	करञ्जि	ज न ग ल	१७
१८६	बुभुत्तम्	स म स ल	१७
१८७	शास्त्रोदकि	ज म ल ल	१७
१८६	पञ्जरि	भ म ल ल	१७
२००	अप्रीता	न म ल ल	१७; प्रीता-१७, अतिप्रीता-१७, अलिप्रीता-१७
२०१	मन्थरि	म य ल ल	१७.
२०२	वातुलि	य य ल ल	१७
२०४.	सकुल्लकम्	त य ल ल	रूपयोस्त्वामिकुल नन्दाहरणस्तोत्र
२१०.	भाषा	य र ल ल	१७, सभाषा-१७; सभासा-१७
२१६.	पाकलि	न र ल ल	१७
२२०.	अमना	स स ल ल	१७
२३०	आकतनु	ज त ल ल	१७
२३५	आखेटम्	र ज ल ल	१७
२४१.	अतिजनि	म भ ल ल	१७.
२४४	सुतमधु	स भ ल ल	१७
२४६.	अद	ज भ ल ल	१७
२५०	अयनम्	य न ल ल	१७
२५१	कुशकम्	र न ल ल	१७
२५२	निरुद्धम्	स न ल ल	१७.
२५३.	सिन्धुक्	त न ल ल	१७
२५४.	क्षरम्	ज न ल ल	१७; क्षुर-१७
२५५	वेदि	भ न ल ल	१७; वेदि-१७

नवाक्षर-छन्द

२	मेघालोक	य म म	१७
७.	ववत्रम्	म म म	१०
१६-	भाषासारी	न य म	१७
२५	खेलाडघम्	म स म	१७.
२८	सारम्	स स म	१०, उदरश्चि-१७, उदरलक्ष-१७, उदरलक्ष- ७

प्रस्तार- सख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२६.	वैसार	त स म	१७; वैसारम्-१७
३०	निर्विन्द्या	ज स म	१७, निर्विन्द्या-१७.
३१	किमिष्ठा	भ स म	१७, किमिष्ठा-१७.
४६	पुतहाता	म म म	१७
५२	कलहम्	स भ म	१७.
५७	अयनपताका	म न म	१७
६१	मकरसता	त न म	१०; रम्भा-१७; ६ के अनुसार- 'म न य' लक्षण है
७४	विश्लयम्	य य य	१७; बृहत्-१६
८७	अर्घ्यसामा	म त य	१७, सुन्दरसेना-१६
१००	सम्बुद्धि	स त य	१७.
१०३	शम्बरधारी	भ त य	१७
११२	शशिलेखा	न ज य	१०; शरलीदा-१७.
११७	चचिरा	त भ य	१०
१२१.	कालीकम	म न य	१७
१२४	सुगन्धि	स न य	१७
१२५.	कामा	त न य	१७.
१५२	बृहत्तिका	न र र	५, १०.
१६४	निभामिता	स त र	१७
१६६	चाट्हासिनी	ज त र	१६
१७१	कामिनी	र ज र	१०, तरणवती-११, २०.
१७३	रयोन्मुखी	त ज र	१७
१७४	अवनिजा	ज ज र	१७.
१७५	प्रवह लिका	भ ज र	१७
१७६	हृलोदगता	न ज र	१७
१८०	मधुमल्ली	म भ र	१७
१८२	सहेलिका	ज भ र	१७
१८३	मदनोद्गरा	भ भ र	१७; जलमुक्तम्-१०, १६
१८४	करदाया	न भ र	१७
१८७	मद्रिका	र म र	१०, १४, १७, १६.
१९२.	उपच्युतम्	न न र	१०, १६
२१५.	निपथम्	म र स	१७.

प्रसार- सङ्ख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२१७.	कनकम्	म स स	१०; गाय-१६.
२२०.	सौम्या	स स स	१०; अर्घकला-१७.
२२३.	रञ्जकम्	भ स स	१७.
२३६.	अक्षि	स ज स	१०, १६.
२३६.	उदयम्	भ ऋ स	१०; विद्युत्-१६.
२४४.	अनधीरा	स भ स	१७.
२४७.	प्रियतिलका	भ भ स	१७.
२५१.	हलमुली	र न स	२, ५, ६, १०, १३, १७, १८, १९,
२५३.	आकेकरम्	त न स	१७.
२५५.	धौनिकम्	भ न स	१७.
२६३.	बल्गा	त त त	१७.
३००.	कीटमाता	स ज स	१७.
३२०.	मसृणकम्	न न स	१७.
३३६.	सीला	न य ज	१७.
३५६.	वारिधियानम्	भ त ज	१७.
३६६.	ऊह	ज ज ज	१७.
३८३.	कठितास्थि	भ न ज	१७; अहीरी-१७.
४००.	विक्रमवती	न य भ	१७.
४०६.	धन्वदः	म स भ	१७.
४३६.	हधि	भ भ भ	१७; उदधि-१७.
४६४.	ह्रुटघटिता	न य न	१७.

वशाक्षर-छन्द

२.	शीफाली	य भ य य	१७.
१०.	धूझाली	य य य य	१७.
२०.	मीरोहा	स र म य	१७.
३०.	धोरान्ता	ज स म य	१७.
४०.	निर्मोघा	न त म य	१७.
४६.	मय्याघारः	म भ य य	१७.
५०.	यशारोपी	य भ य य	१७.
५५.	अन्धूकः	म भ य य	१६.
६१.	कूतम्	त न य य	१७.
६३.	अन्धूकम्	म न य य	१०.
६६.	बोधतुरा	य भ य य	१७; सङ्कटबोधा-१७.

प्रस्तार- सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
३०३.	खेटकम्	भ ज त ग	१७.
३०६.	बर्हावुरा	त भ त ग	१७.
३१७.	नीराञ्जलि	त न त ग	१७.
३२७.	बीपकमाला	भ म ज ग	१५.
३३१.	पंवितका	र य ज ग	५, १०; कर्णपालिका-१७; मौक्तिकम्-१६.
३४२.	सराधिका	ज र ज ग	१७.
३४५.	शुद्धविराट्	म स ज ग	२, ५, ६, १०, १७, १८, १९, २०, २२; विराट्-१७.
३४७.	अक्षरावली	र स ज ग	१७.
३४८.	सहजा	स स ज ग	१७.
३४९.	ग्रहिला	त स ज ग	१७.
३५१.	कृष्यम्	भ स ज ग	१७.
३५२.	अनुचयिता	न स ज ग	१७.
३६३.	यमिता	र ज ज ग	१७.
३६५.	उपस्थिता	त ज ज ग	२, ५, १०, १३, १७, १८, २०, २२.
३६६.	उयिता	ज ज ज ग	१०; जरा-१७.
३७५.	भिन्नपदम्	भ भ ज ग	१७.
३७६.	वडिदाभेदिनी	न भ ज ग	१७.
३७७.	पणवः	म न ज ग	१३, १७
३८४.	चित्तिभूतम्	न न ज ग	१७.
४००.	फलिनी	न य भ ग	१७.
४१२.	सुरयानवती	स स भ ग	१७.
४१५.	विरलम्	भ स भ ग	१७; कटिका-१७.
४२४.	क्षुत्तितकम्	न त भ ग	१७.
४२८.	प्रवादपदा	स ज भ ग	१७.
४३३.	हंसक्रीडा	म भ भ ग	१६.
४३६.	वारवती	स भ भ ग	१७.
४३७.	परिचारवती	त भ भ ग	१७.
४३८.	काण्डमुखी	ज भ भ ग	१७.
४४०.	दारत्	न भ भ ग	१७.
४४७.	गहना	भ न भ ग	१७.
४४८.	फलधरम्	न न भ ग	१७.

प्रसार- संख्या	छन्द-नाम	संक्षेप	सन्दर्भ-ग्रन्थ संक्षेप-तात्त्व
३६	संक्षेपलीला	भ त म ग ग	१७
४३	कूलचारिणी	र ज भ ज श	१७; कूलिका-१७
४८	विलुप्तितमञ्जरी	न ज म ग ग	१७
५७	भूरिघटकम्	भ न म ग ग	१७.
६४.	कलितकमलमाला	न न भ म म	१७
७५	घटलघीविलास	र य य ग ग	१७
८०	विकसितपद्मावली	न य य ग ग	१७
८६	प्रमोघमालिका	ज र य ग ग	१७
९२	सलितानमनम	स स य ग ग	१७.
१००	ससूतशोभासार	स त य ग ग	१७.
१०८	सलितालवलयम्	स ज य ग ग	१७
११२	वार्ताहारी	न ज य ग ग	१७.
१२२	कडारम्	य म य ग ग	१७
१२४.	उदितदिनेश	स न म म श	१७.
१३२	जालपाद	स म र ग ग	१७.
१४७	धारवेहा	र र र ग ग	१७; धारवेहा-१७
१८४	रोचकम्	भ भ र य ग	१०
१८७	सुधाधारा	र न र ग ग	१७
१९२.	कुपुरुषजनिता	भ न र ग ग	१४.
१९६	कन्दविनोद	भ भ स ग ग	१७
२१७	विलम्बितमध्या	म स स ग ग	१७
२२०	विष्टम्भा	स स स ग ग	१७
२२३	क्रोशितकुशला	भ स स ग ग	१७
२४४	उपहितचण्डी	स भ स ग ग	१७
२४७	धितकमला	भ भ स ग ग	१७
२५६	वृन्ता	न न स ग ग	२, १०, १३, १८, १९, २०, रघ- पद-१७; वृन्ता-१७; मुकृति-१७
२८६	उपस्थितम्	ज स त ग ग	६, १०, १३, १७, १८; शिलपिबत- १५ टी० ^८
२९३	प्राकारबन्ध	त त त ग ग	१७; लयप्राहि-१०, १९, विप्ल- कमाला-१५ टी०
३००	विहारिणी	स ज त ग ग	१७, भासिनी-१७

प्रस्ता- छन्द नाम सख्या	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
७०१.	नीला	त न र स ग १७
७२०	सौरभवर्द्धिनी	न य स ल ग १७.
७२८	भुजसाहारिणी	न र स ल ग १७
७३१	अच्युतम	र स स स ग १७, १६
७३२	विदुषी	स स स ल ग १०, उपचित्रम्-१७, १४; सुचित्र- १७; नरेश-१७.
७३६	सम्भवमालिका	म स स ल ग १७.
७४२	कनककामिनी	ज त स ल ग १७.
७४७.	द्रुता	र ज स ल ग १५ टी०, उपवारिका-१७
७४८	वारिका	स ज स ल ग १७.
७४९	मालविका	त ज स ल ग १७.
७५०.	नाभसम्	ज ज स ल ग १७
७५१	सौभगकला	भ ज स ल ग १७
७५२.	वीथ	म ज स ल ग १७
७५३	आशापाव	म भ स ल ग १७.
८००.	भुजसता	म स ल ल ग १७
८२०.	हरिकागता	स भ त ल ग १७
८२३.	कलस्वनधरा	भ भ त ल ग १७.
८३२.	मदनया	न न त ल ग १७.
८७८	खटका	ज ज ज ल ग १७.
८७९.	शल्कशकलम्	भ ज ज ल ग १७.
८८५	उत्थापनी	त भ ज ल ग १०, जिह्वाशया-१७
८८९.	कुशलकसावतिका	म भ ज ल ग १७
८९५	अर्धशिला	भ न ज ल ग १७
९२८	निरवधिगति	न स भ ल ग १७
९६०	दामघटिता	न न म स ग १७
९६४.	विमला	स म न ल ग १०
९७६	कमलदेलाक्षरी	न य न ल ग १०, रुचिरमुखी-११, समित-१७
९८५.	सामपदा	म स न ल ग १७.
१०२१	मुखचपला	त न न ल ग १०
११७१.	गम्भारि	र र र य स १७
१२१३	कामुकलेखा	म म स ग ल १७
१३१७.	सद्यधरी	स त त ग म १७

प्रसार- संख्या	छंद नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्केताक्ष.
१३७२.	पिवुलम्	स स ज ग ल	१७.
१४००.	कालवर्ग	न म ज ग ल	१७
१५११	सान्द्रपदम्	भ त न ग ल	१७; १५ टी०
१७७७.	दोषापीडम्	म म स ल ल	१७
२०००.	केलिचरम्	न य न ल ल	१७.

द्वादशाक्षर-छन्द

३१	भाषितभरणम्	भ स न म	१७.
३२	विषमव्याली	न स न म	१७
६१	शम्पा	त न म म	१७
६४	मिथुनमाली	न न म म	१७
६१	विद्युतास्तरणम्	र स य न	१७.
६२	रत्नलीला	स स य म	१७.
६३.	विशालाम्भोजाली	त स य न	१७; दम्भाजाली-१७
६४.	वीणादण्डम्	ज स य न	१७
६७.	मत्ताली	म स य न	१७.
१२८	यत्नविद्याला	न न य म	१७
१६३	लीलास्नम्	म म स म	१७
२५३.	विषरविलसितम्	त न स म	१७
२५६.	धुवान्तम्	न न स म	१७
३४८.	साक्षी	स स ज म	१७
३६४.	स्वरर्षिणी	स ज ज म	१७.
४४८	धवलशरी	न न म म	१७
४७६.	सुम्बाक्षी	स स न म	१७; सुम्बाक्षी-१७
५०५.	मलयमुरभि	म न न म	१७
५२५.	वाहिनी	त य म य	२०
५७६.	गुट	न न म य	२. ३, ४, ६, १०, ११, १७, १८, १९, २२, गुट-२०
२७८.	धादिदंवी	म म य य	१७.
६०४.	समयमहिता	स स य य	१७
६०८.	मिहिरा	न स य य	१७
६१४	कामवल्लीविहङ्ग	ज स य य	१७.
६१२.	धनुषारा	ज र र य	१७; धनुषारा-१७.
६८८	कमोजिता	न म र य	१७, १९; धनुषवर्षिका-१७.

प्रस्तार- सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ- सङ्केताङ्क
६८६.	पुण्डरीकम्	म म र य	१७.
६८२.	वधिरा	स भ र य	१७
६८५.	घलभी	म भ र य	१७.
७१६	केकीरयम्	स य स य	१०; महेन्द्रवज्रा-१६; शिविका-१६.
७३३	कोल	व स स य	१०.
७३७	लीडालकं.	म त स य	१७.
७४१	वनिताविलोक.	त त स य	१७.
७४२.	कुमुदिनीविकाश	ज त स य	१७.
७५३.	वसन्तहासः	म भ स य	१७.
७५७	ध्रुतिः	त भ स य	१६.
७५८.	स्मृतिः	ज भ स य	१६.
७८३.	सिद्धतमणिमाला	भ य त य	१७; इवेतमणिमाला-१७. "
७८४.	विद्रुमदोला	न य त य	१७.
८१७.	सुखशैलम्	म भ त य	१७
८२०.	करमाला	स भ त य	१७.
८३२.	विजयपरिषया	न न त य	१७.
८६५	कासारका-ता	म त ज य	१७.
८७७.	मापा	त ज ज य	१७.
८७८.	परिलेखः	ज ज ज य	१७, धारी-१७.
८७९	वरप्रा	भ ज ज य	१७.
८८१	कुम्भोष्णी	म भ ज य	१७.
८८४.	शरमेया	स भ ज य	१७.
८८५.	मीरागतिकम्	त भ ज य	१७.
८८८.	कसहसा	म भ ज य	१०, १६; द्रुतपदम्-१७; द्रुतपदा-४, ११, १६; मुत्तरम्-११.
८९१.	अदितपादम्	र न ज य	१७.
८९२	परितोषा	स न ज य	१७
८९३.	छलितकपदम्	त न ज य	१७.
८९४.	उपधानम्	ज न ज य	१७.
८९५.	पयिकान्ता	भ न ज य	१७.
९०१.	कुमुदिनी	र य न य	१०; कुमुदविभा-३; तथा ३ के अनुसार 'न य र य' लक्षण भी हैं ।
९९१.	अपितमदना	भ स न य	१७.

प्रस्ताव- संख्या	छन्द-नाम	संज्ञा	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१०१६.	द्रुतपदम्	न भ न य	१४.
१०२१.	विरतिमहती	त न न य	१७.
१०८०.	ततम्	न न म र	२, १०, १८; तलितम्-१७, १४; गौरी-१७.
११४२.	गलितमाला	ज भ य र	१७.
११६२.	सरोजावली	य य र र	१७.
११७६.	मेघावली	न र र र	१०; वसन्तः-११.
११६६.	विप्लुतशिखा	भ ज र र	१७.
१२००.	विशितसता	न ज र र	१७
१२३६.	सुतलम्	स र स र	१७
१३६५.	अन्तर्विकासवासक.	त र ज र	१७
१३७१.	परिपुष्टिता	र त ज र	१७.
१३७६.	प्रसुमरमरालिका	न स ज र	१७.
१३६०.	विधारिता	ज ङ ज र	१७
१३६१.	विधालिका	भ ज ज र	१७; पिपायिनी-१७.
१४०४.	विरला	स न ज र	१७; वीरला-१७.
१४०७.	अविरलरतिवा	भ न ज र	१७.
१४६०.	रापिवा	त भ भ र	१७.
१४७२.	उज्ज्वला	भ न भ र	१०, १३, १७; अपतनेत्रा-११; वसनेत्रिका १८
१५१५.	विपुलपातिवा	र न म र	१७
१५२४.	उपलेला	स भ म र	१७
१५२६.	भसतविनीविता	ज भ म र	१७.
१५२७.	विरतप्रभा	भ भ म र	१७.
१५३१.	मुकुलितचमिवावनि	र न म र	१७.
१६३६.	अतिवामिता	त ध र स	१७
१६६१.	भुजङ्गजुपी	र त र स	१७.
१६६५.	अङ्कितपतिवा	भ स र स	१७.
१७०३.	तमना	भ त न स	१४.
१७२८.	रुदी	न न न ग	१०.
१७३५.	तमना	भ म स स	१७; १३ टी०
१७३८.	पुराणाभार	य य स स	१७.
१७७४.	विहरयनम्	ज ज न स	१७.
१७७५.	मीनगिरिका	भ ज स न	१७.

प्रस्तार- रूपा	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ सङ्केताद्
१७८३.	यनिताभरणम्	भ भ स स	१७
१८२५	सुभद्रावतरणि	म त स स	१७.
१८८१	विरलोद्धता	म स ज स	१७
१८८२	सुविहिता	य स ज स	१७
१८८४	उदकरचिता	स स ज स	१७
१८८५,	मुदतमालिका	त स ज स	१७, उपवनमालिका-१७
१९७२	नगमहिता	स भ भ स	१७; कमुकवती-१७
१९७५	सम्पदवदना	भ भ भ स	१७.
१९८२.	कुमारगति	ज न भ स	१७
२०१६	उदयनमुखी	न स न स	१७
२०२०	रसिकपरिचिता	स ल न स	१७
२०२६	व्यायोगधती	त ज न स	१७
२०३०	विद्योगधती	ज ज न स	१७
२०३१	सगमवती	भ ज न स	१७.
२०४४	ज्वलिता	स न न स	१७
२०४५	रूपावलि	त म न स	१७.
२०४६	अग्नीधकम	ज न न स	१७
२०४७	भासितसरणि	भ न न स	१७.
२०४८.	कृतकृतिका	न न न स	१७, कृतिका-१७
२३६८	विकलबकुलवल्ली	न न त त	१७
२४०६.	निम्गनकीला	ज त ज स	१७
३२६५	वासरमणिका	म स स भ	१७
३५०८	अरिसा	स भ भ भ	१७

त्रयोदशाक्षर-छन्द

२२५	उल्काभास	म स स म ग	१७
२४१	लीलालोल	म भ स म ग	१७
३७५	कलाधाम	म भ ज म ग	१७
४३६	वासविलासवती	भ भ म म ग	१७
४७२	विपन्नकदनम्	न र न म ग	१७, विपन्नकदन-१७, विपन्नकवलम-१७
७८४	विभा	न य त य ग	१७
६७५	रसधारा	न य न य ग	१७
१००६.	प्रज्ञामूलम्	म भ न य ग	१७, भद्रा-२२

प्रस्ताव- सह्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताद्ध
	धमा	न न म र ग	१०.
१,१५४.	चञ्चरीकावलि	य म र र ग	१७, १४; चन्द्रणी-१०; चन्द्रिका-१६.
१,१६२.	दपंमाला	य य र र म	१७; दपंमाला-१७.
१,१६५	भाजनशीला	त य र र ग	१७.
१,१७१.	श्रद्धारान्ता	र र र र ग	१७.
१,२०६	ध्यानता	म म र र ग	१७.
१,२१६.	प्रमोदः	न म र र ग	१७; चन्द्रिका-१०.
	कोटुम्भ	म त स र ग	१०.
१,३६८	सुकर्णपूरम्	न र ज र ग	१७
१,३७२	जगत्समानिका	स स ज र ग	१७.
१,३६०.	प्रतिरहः	ज ज ज र ग	१७
१,४६१	माणविकाविकाश	त भ म र ग	१७.
१,४६६	कीरलेखा	म र न र ग	१७.
१,६३६	आननमूलम्	भ त य स ग	१७.
१,७५३	लोप्रशिला	म स स स ग	१७
	उपस्थितम्	ज स त स ग	१३.
	गौरी	न न त स ग	१०; २ के अनुसार 'न न न स ग' लक्षण है ।
१,८६६	शसभलोला	य य ज स ग	१७
१,८८१	पकजपाहिणी	म स ज स ग	१७.
१,८८४	कुबेरकटिका	स स ज स ग	१७.
१,८८६	हविर्वर्णा	ज स ज स ग	१७, साला-१७
१,८८७	मयूलसरणि	भ स ज स ग	१७
१,९८४.	विधुरवितानम्	न न भ स ग	१७.
	मदललिता	म ज न स ग	१०, १६.
२,३६१	पाररवत.	त त स त ग	१७
२,३४२.	प्रवाहिका	ज त स त ग	१७.
२,३४३.	स्विप्रगरीरम्	भ त स त ग	१७.
२,३४४.	उवंशी	न त स त ग	१०, परिवृट्-१७, कोयुरी-१६
२,३४९.	वामवदना	भ ज त त ग	१७.
२,३४२.	किरात.	न ज त त ग	१७
	विष्णुः	न न त स ग	१४, कृत्तिलपति-१४
२,३६६	भतसमदम्	म स ज त ग	१७, भमतपदम्-१७.
२,४००.	कठिनी	म स ज त ग	१७.

प्रस्तार- सख्या	छन्द नाम	लक्षण	सदभ य य सङ्क ताङ्क
२४०५	वृद्धयामा	त त ज त ग	१७
२४२१	ममस्फुरम	त भ ज त ग	१७
२७०६	पयदवती	त र र ज ग	१७, निस्तुपा-१७,
२,७१०	अस्वभ्रमण्डनम	ज र र ज ग	१७
२,७३१	कलापतिप्रभा	र ज र ज ग	१७
२,७५२	अशोकपुष्पकम	न न र ज ग	१७, अशोकम-१७
२,७६२	करपल्लवोदयता	य य स ज ग	१७
२,७६३	साङ्गं पवा	र य स ज ग	१७
२ ७६४	सुदन्तम	स य स ज ग	१०, अम्बुवावली-१७ मणि कुण्डसम-१६
२ ७६०	मञ्जुभाषिणी	ज त स ज ग	१० मञ्जुहासिनी-१४
२,७६५	मञ्जुमालती	र ज स ज ग	१७, मञ्जुभाषिणी-१६
२ ८०८	विरोधिनी	न भ स ज ग	१७
२ ८१६	नलिनम	न न स ज ग	१६
२,६०७	अद्भुतसकरा	र स ज ज ग	१७
२ ६०८	द्रुतलम्बिनी	स स ज ज ग	१७
२ ६०६	कनककेतकी	त स ज ज ग	१७
२ ६१०	गङ्गद्वारिता	ज स ज ज ग	१७
२ ६११	अमितनगानिका	भ स ज ज ग	१७
२ ६१८	आपणिका	ज त ज ज ग	१७
२,६२६	गुणसारिका	ज ज ज ज ग	१७ गणसारिका-१७
२ ६३३	प्रमोदतिलका	त भ ज ज ग	१७, अभ्रकम-१०
२ ६३६	सारसनायलि	न भ ज ज ग	१७
२ ६४३	उपचितरतिका	भ न ज ज ग	१७
२ ६८२	उदात्तहास	ज त भ ज ग	१७
३ ०४६	कलनायिका	ज त न ज ग	१७
३ २७७	अभ्रभ्रमशीला	त य स भ ग	१७
३ ३६०	विदला	न स त भ ग	१७
३,४२३	प्रपातलिका	भ स ज भ ग	१७
३ ५११	कर्मठ	भ भ भ भ ग	१७, अङ्गद्वि-१६
३ ५४३	सवलीलता	भ र न भ ग	१७
३ ७३६	अनिलोद्गतमुखी	न र र न ग	१७
३ ७७१	प्रमोदकसिता	र न र न ग	१७
३ ७८८	कोमलकल्पकसिवा	स य स न ग	१७

प्रस्तार संख्या	छंद नाम	महाण	संदर्भ ग्रंथ-सङ्केताङ्क
३,८३५	परगति	र न स न ग	१७
३,८६२	अभिरामा	स भ त न ग	१७
३,८६४	उपसरसी	स न ज न ग	१७
४,०४८	सदनजवनिका	न य न न ग	१७
४,०६०	वरिवसिता	स स न न ग	१७, परिवसिता-१७
४,०६३	अयंकुमुमिता	भ स न न ग	१७
४,०८४	विनताक्षी	स भ न न ग	१७, विनताक्षी-१७
४,०८५	निरावलि	त भ न न ग	१७, निरावलि-१७
४,०८६	अभीष्टका	ज भ न न ग	१७
४,०८७	कनकिता	भ भ न न ग	१७
४,०८६	स्वरितपति	न न न न ग	१०, हरविनता-१७, उपमिता-१७
४,४६०	सुखकारिका	त ज ज न ल	१७
५,८१३	अट्टहासिमी	त भ र स ल	१७
	अङ्गवधि	भ भ भ भ ल	१०
७,८०७	पङ्कवालि	भ भ य न ल	१७
८,०००	असनि	न न त न ल	१७

चतुर्दशाक्षर छन्द

२,०५	वशोत्तता	त य स भ त ग	१७
६६१	कालध्वानम	भ भ न य त ग	१७, कालध्वान्तम्-१७
१,०२१	पारावार	त न न य ग ग	१७
१,२६३	अपन्नपानीयम	त य त र य ग	१७
१,२६६	अनिदगुविदु	न य त र ग ग	१७, गुविदु-१७, पुर्वं दु-१७
१,५३७	धीरध्वानम	भ भ भ स त ग	१७
१,७४४	सलितपताका	भ य स त ग ग	१७
२,०२२	सम्बोधा	ज त न त ग ग	१७
२,०६५	विध्यावृद्धम्	भ र भ त ग ग	१७ विध्यावृद्धम्-१७
२,३२१	सशमी	भ र त त ग ग	५, १०, अश्रमा-१६ विम्बासन्धम-१७
२,३२२	वृत्तदेहा	य र त त ग ग	१७
२,३२३	अश्रुसशमी	र र त त ग ग	१७
२,३३२	शरमासरणि	स स त त ग ग	१७
२,३३५	मुष्णवृद्धिका	भ स त त ग ग	१६, सशमी-१६
२,३३७	नियत्पारावार	भ त त त ग ग	१७

प्रस्तार सख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ सङ्केताङ्क
२,३३६.	कल्पकान्ता	र त त त ग ग	१७
२,३४४	परीवाह	न त त त ग ग	१७
	शरभललितम्	न भ न त ग ग	१०, शरभा-११
२,६८७	वाटिकाविकाश	भ न य छ ग ग	१७, वाटिकाविलास-१७, वाटिका-
२ ७३१	अकरोपा	र ज र ज ग ग	१७
२ ७४०	मदावदाता	स भ र ज ग ग	१७
२ ८०४	वशमूलम्	स भ स ज ग ग	१७, सुनन्दा-१६
२,८०५	वैलाञ्छलम्	त भ स ज ग ग	१७, वैलाञ्छलम्-१७ वैलातरम्
			१७
२,८०६	कुसुम्भिनी	ज भ स ज ग ग	१७
२,८०८	विलम्बनीया	न भ स छ ग ग	१७
२ ८१६	अनन्तदामा	ग म स ज ग ग	१७
	नवी	न न त ज ग ग	१४
	कुमारी	न छ न ज ग ग	१४
	कृतमालम्	त छ य झ ग ग	१७
३ २८७	शारवच्छत्र	त य स भ ग ग	१७
३,३१३	परिणाही	ग भ स भ ग ग	१७
३,४६६	रतिरेखा	त य भ भ ग ग	१७
३ ४८४	मम्मथ	स स भ भ ग ग	१७
४,५११	जाह्नमुखी	भ भ भ भ ग ग	१७
३ ५१५	वसन्ता	र न भ भ ग ग	१०, सता-११, वसन्ता-१६
३,८६२	प्रतिभादर्शनम्	स भ स न ग ग	१७
	राजरमणीय	छ स र न ग ग	१०, २०, रूपगोस्वामिकृत वत्सघार
			णाविस्तोत्र मे 'प्रफुल्ल कुसुमाली' है ।
	वरसुन्दरी	भ ज स न ग ग	१४
	सुपवित्रम्	त र न न ग ग	१४
४ ००६	उपचित्रम्	न न न न न ग	१० १६, अलिपदम्-१७
	ज्योत्स्ना	स र म य स ग	५, १०, ज्योत्स्निका-५
४ ६७२	करिमकरभुजा	न न म य स ग	१०, कापला-१८
४,६८२	प्रपात	य य य य स ग	१७
४ ७०४	जलदरसिता	न स य य स ग	१७
४ ८४४	पद्म्या	स ज स य स ग	१७, प्रयिता-१६
५ २६७	वल्गुमीलिता	र र र र स ग	१७
५ ४१६	सुधाधरा	र ज त र स ग	१७

प्रस्ताव- संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ संकेतार्थ
५,४५६	कलापर	र र ज र ल य	१७
५,४६२	कुडझिका	ज र ज र ल य	१७
	सुकेसरम्	न र न र ल य	१०, १४.
	सुदर्शना	स ज न र ल य	१६.
५,६६२	वितानिता	न न न र ल य	१७
	सिंह	न भ र स ल य	१०
	जया	म र र स ल य	५, १०
५,८१३	भलकालिका	स भ र स ल य	१७, भलकालिका-१७
५,८१५.	वर्धुरक	भ भ र स ल य	१०, १६
५,८१६	गगनोदगता	र न र स ल य	१७
५,८५२	विनन्दिनी	स स स स ल य	१७
६,१७२	भूरितिखा	स स स ल ल य	१७.
६,३६४	श्रीढायतनम्	स स स ल ल य	१७, श्रीढायतनम्-१७
६,५४१.	नासाभरणम्	स य भ स ल य	१७
६,५८३	कणिशर	भ स भ स ल य	१७
७,०३२	विपाकवती	न भ ज ल ल य	१७
७,०८६	काकिणिका	ज ज भ ज ल य	१७.
७,०८७	कारविणी	भ ज भ ज ल य	१७.
७,३१५.	कूर्चललितम्	र र र भ ल य	१७
७,४३२	कलहेतिका	स ज भ ल य	१७
७,४३५	प्रञ्चलवती	भ ज ज भ ल य	१७.
८,०२७	गगनगतिका	र स ज न ल य	१७
,०८१	निर्मुक्तमाला	म र भ न ल य	१७
९,१६३	कामशाला	र र र र य ल	१७
९,१७५	उन्नम	भ भ स स य ल	१७
११,१२८	उपकारिका	स ज ज भ य ल	१७
११,६३१	हेममहिका	भ ज ज भ य ल	१७
११,६३२	हेति	न ज ज भ य ल	१७
१४,०४४.	मयुपाति	स स स स ल ल	१७
१६,०००.	वैशम्भरि	न न य न ल ल	१७

पञ्चदशाक्षर-छन्द

१३.	घञ्जाली	स य म य म	१७.
१६	रफोटकीडम्	न य म य म	१७

प्रस्तार- सख्या	छन्द नाम	संज्ञा	सन्दर्भ ग्रन्थ सङ्केताद्
२२३	श्रीडितकटका	भ स स म म	१७.
४३३.	चारुटकम्	म भ म म म	१७
२२६६.	आनन्दम्	र न स त भ	१७
	चन्द्रलेखा	र र त त म	१६
३,३१६.	बहुलाश्रम्	स भ स भ म	१७
३,८८१	बाणीभूषा	म म त म म	१७
४,६८२	सिंहपुच्छम्	य य य य य	१७
५,५२५	कुमारलोला	म न र य य	१७.
५,५३२.	भोगिनी	न न र य य	१०
	केतनम्	भ य स स य	१०
	शिथु	त ज स स य	१०
	पृथग्भ	स ज स स य	१०, १६
६,९३१	वीपकम्	भ त न त य	१७
७ १२०	परिमलम्	न घ न ज य	१७
	मयूरसलितम्	ज स न भ य	१६.
७ ६३६	शारकस्या	न न स म य	१७
	चन्द्रोद्योत	न म म र र	१०
८,३६३	सास्थकारी	र र र र र	१७.
८,६६८.	मदनमालिका	म र न र र	१७
	मृदङ्ग	त भ ज ज र	१०.
११ ५७५	प्लवगम	भ भ त भ र	१७
११,६३१.	मयूखदना	भ ज ज भ र	१७
११,६३२	कलभापिणी	न ज ज भ र	१० १६, अरविन्द-११, १६
११,७१२	गौ	न न भ भ र	१०
११,८६३.	सारिणी	र न र न र	१७
११,८६८	धमरीचरम्	न न र न र	१७
१२,४६६.	जननिधिवेला	म य स म स	१७
१३,०५७	लीलाचन्द्रम्	म म त य स	१७
१३,५०२	धोरितम्	भ न र र स	१७
१४,०१५	घाग्तसुरभि	भ न र स स	१७
१४,२६०	कर्णलता	स भ भ स स	१७
१५,६०१	विशक्मिता	म भ स म स	१७
१५,७५७	शीर्षविरहिता	त य भ भ स	१७.
१६,०५३	शङ्खावली	त भ र न स	१७

प्रस्तार- संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्केतादि
२३, १३१	कहिनी	र स य ज ज	१७.
२३, २६४	मितग द्विय	म स स ज ज	१७.
षोडशाक्षर-छन्द			
१, ०२४	माल्योपह्वम्	म न न य म य	१७.
४, ०६६.	कल्पाहारी	न म म न म य	१७.
	येत्सिता	स स स म म य	१०, २०.
५, ५३६.	प्रतीपवल्ली	स स म र य य	१७
७, १५६	आरभटी	भ भ न ज य य	१७
६, २८०	वक्रावसोक	म म म र र य	१७
	सुरतलसिता	म म स स र य	१०.
	चित्रम्	र ज र ज र य	१०.
१० १६२	अभिधात्री	स स स ज र य	१७.
१३, १०८	अनिलोहा	स भ त य स य	१७.
	कान्तम्	म य न म स य	१८.
१३ ३०६	भोगावलि	त न न य स य	१७
१४, ०४४.	कामुकी	स स स स स य	१०, सोमटकम्-११; कलघीत- यदम्-१७
	सलितपदम्	म म म ज स य	१०, कमलदलम्-१६.
१५, १७९	वलिबदनम्	म य म भ स य	१७
१५, ५६५	सुलशिक्षा	त य स भ स य	१७
१६, ५८०.	परिज्ञायतनम्	स स स भ स य	१७, परिज्ञापतन-१७
१५, ६०१	मालावल्लयम्	म भ स भ स य	१७
	दारमाला	भ भ भ भ स य	१०, स्मरसरमाला-१६
१६, ३६६	भीमावर्त्त	म भ न म स य	१७
१६, ३८४	दिगुभरणम्	म न न म स य	१७.
	कोमललता	म त स त स य	१०, २०
२३, २६४.	तरवारिका	न स स ज ज य	१७
	मङ्गलमङ्गना	न भ ज ज ज य	१०, १६
२४, ५५२.	कमलपरम	न य न य भ य	१७
२७, ८२४	अणिकल्पलता	न ज र भ य य	६, १०, १४; चोटकम्-१७; चिन्तामणि-१६; इन्दुमुखी-१६
२८, ६७२	कलहकरम्	न न न न म य	१७
	प्रमुदिला	अ र न र न य	१०.

प्रस्ता- सख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ-सङ्केताद्वा
३०, ५८४	मरशिखी	न भ ज स न ग	१७
३१, २०७	सारखरोहा	भ त न त न ग	१७
	घरयुवतिः	भ र य न न ग	२, १०, १४
	सलना	र न न न न ग	१०, २०, २२.
३२, ७६८	धस्तधृति	न न भ न न ग	१०
३६, ६६७.	दन्तालिका	त म र म य ल	१७
४३, ६६७	कल्पधारि	र र र ज र ल	१७; चारि-१७.
५२, ४१७	कुल्यावर्त्तम्	म म स भ त ल	१७; कुल्यावृत्त-१७

सप्तदशाक्षर-छन्द

११, ६६८	धीरविधाम	न म र न र ग ग	१७
१६, १८३	वल्गनम्	भ भ त न स ग ग	१७, वल्गुजय-१७
१६, १८६	कूराशनम्	त न त न स ग भ	१७, कूराशनम्-१७, कूरतिर्न-१७; कूरासन १७,
२०, ३६८.	कामरूपम्	म र भ न त ग ग	१७.
२३, ६००	अतिशायिनी	स स ज भ ज ग ग	२, १०, १४, १७, १६; यादवी-११, चित्रलेखा-१४
२३, ६०४	शायिनी	म स ज भ ज ग ग	१७
	षायिनी	न ज भ ज ज ग ग	१० १८.
३२, ३२०	सलेखा	न न भ न न ग ग	१७
३२, ३८३.	तितिक्षा	भ न य न न ग ग	१७
३२, ७६८	धनुधारा	न न न न न ग ग	१०, १६
	रोहिणी	न स म म य ल ग	१०.
३८, ७५१.	आलविक्रीडितम्	भ स ज स य स ग	१७
३८, ७५८	कालसारोद्धत	ज त ज स य स ग	१७
	कान्ता	य भ न र स ल ग	१४.
	हरि.	न न भ र स ल ग	१४.
५२, ४६५	विरुदकृतम्	म म स भ त ल ग	१७
५२, ६६३	कासारम्	म म त न ल स ग	१७.
५६, १६७	धशल	भ त ज ज ज ल ग	१७.
	विलासिनी	न ज भ ज भ ल ग	४,
६४, ६१२.	विधुरविरहिता	स ल य भ न ल ग	१७
६४, ६२४.	द्युक्वनिता	स स भ भ न स ग	१७; शिशुकवनिता-१७
६४, ६४७.	बाहान्तरितम्	त न भ भ न ल ग	१७

प्रसार- संख्या	छन्द-नाम	संख्या	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
६६,३६२.	कर्णस्फोटम्	न य त न म ग ल	१७
७४,८६६	प्रतीहारः	र र र र र ग ल	१७.
७५,७१४.	वान्तरम्	य म न स र ग ल	१७.
८१,१४०.	फल्गु	स म स म स य ल	१७
	ललितभृङ्ग	भ स न ज न ग ल	रूपगोस्वामिद्वृत शतकीमास्तोत्र

अष्टादशाक्षर-द्वन्द्व

३१,४५०.	परामोद.	य स स ज न म	१७
३२,२३०.	विलुलितवनमाला	न म म न न म	१७.
	अनङ्गलेला	न स म म य य	५, १०
	अङ्गमाला	न न म म य य	५, १०
३७,४४०.	नीलमार्दूलम्	न न म य य य	१७; नीलमाला-१७; नील- माला-१७
	मन्दारमाला	स स म य य य	१६
४४,०२५	सत्वेतु	म न न ज र य	१७.
	पञ्चजवचना	न न स स स य	१०, पञ्चनमुचना-१६.
	मङ्गि	म म भ म न य	१०; विच्छिन्ति -११.
	काञ्ची	भ र म य र र	१०; वाचासकाञ्ची-११, २०.
	वेसरम्	म न न य र र	५, १०, १४
७४,८६६	सिन्धुसौवीरम्	र र र र र र	१७
	निद्रा	म न र र र र	१०, तारका-११, मङ्गा- मातिका-१४
७७,५०४	पविणी	न न र न न र	१७
७७,८०६	क्रीडक्रीडम्	म न न न र र	१७
	पुष्पपुरम्	स ज स ज स र	१०
८६,००८	समुपदमञ्जरी	न य म ज ज र	१७
	हरिणोपवम्	न स म स म र	५, १०
९३,०१७	हरिणान्तुतम्	म स ज ज म र	१४, १७.
	कुरङ्गिका	म स न ज म र	५, १०
	धलम्	म य न ज म र	१०, १४, धपतम्-५.
९५,७०४	षट्पदेतिम्	म र न र म र	१७
९६,०६४	पायिषम्	ज स ज स न र	१७
	शुद्ध-भेद	म म न न न र	रूपगोस्वामिद्वृत-परिचयपरतोत्र

प्रस्तार- सख्या	छन्द-नाम	संक्षेप	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
१, १२, ३४८	परिपोषकम् क्रीडा	स स स स स स य म न स त स	१७ १०; सुधा-१४; मुवतामाला- १४, १७.
	सुरभि	स न ज न भ स	१०, १६.
	मणिमाला	भ भ भ म भ स	१०, १६
१, २६, ३६१.	अद्वयगति	भ भ भ भ म स	१६
१, ४६, ७६७	अर्धान्तरालापि	त त त त त त	१७; अष्टान्तरालापि-१७
१, ४६, ७६८	पतङ्गपादः	ज त त त त त	१७
२, २४, ६६५	हीरकहारधरम्	भ भ भ भ भ भ	१७.
२, ४६, ६६१.	वण्डी	त न त न त न	१७.

एकोनविंशति-छन्द

२०, ४६६.	भिल्लीलीला	न य म म ज म म	१७
३१, २२५.	विधुनिधुवनम्	म न न त न भ य	१७
४८, १८६.	माराभितरणम्	त न म भ स य ग	१७
७४, ८६६.	लोललोलम्बलीलम्	र र र र र ग	१७
	विस्मिता	य म न स र र ग	१४
	मुग्धकम	य म न न र र ग	१०.
	माधवीलता	म र न स स ज ग	१०, २०
	रतिलीला	ज स ज स ज स य	१०, १६
	सहणीवदनेन्दु	स स स स स स य	६, १०.
१, ३०, ३४६.	किरणकीर्ति	त ज त भ न स य	१७.
	वञ्चितम्	म त न स त त ग	१०, चन्द्रबिम्बम्-५; बिम्ब- १४, विधितम्-१४.
१, ५५, ४८१.	शिलीमुखोज्ज्वलित	म स ज न ज त ग	१७
१, ७४, ७६३	कलापवीपकम्	र ज र ज र ज त	१७.
१, ७४, ७८४	प्रपञ्चखरमरम्	न म र ज र ज य	१७; प्रपञ्चम्-१७
	पञ्चचामर	न न स ज र ज ग	१४
१, ७८, १३६	कल्पलतापताकिनी	म न न स स ज ग	१७
	मकरन्दिका	य म न स ज ज ग	५, १०, १४.
	मणिमञ्जरी	य भ न य ज ज ग	१४
	सरलम्	न भ र स ज ज य	१०, १६
	ऊर्जितम्	र स स त ज ज ग	१०, शार्ङ्ग-१६.
१, ६२, १६२	निर्गलितमेखला	न न र न म ज ग	१७.
	यामुवेगा	म स ज स न ज ग	१०, २२.

प्रस्तार- संख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सं दर्भ ग्रन्थ सङ्केताद्
४७, ६३ ४६१	गङ्गोदकम्	र र र र र र र र	१७
	मेघमाला	न न र र र र र र	३, १० २२
४८, ४८, ३०१.	उत्कटपट्टिका	त ज र ज न स र र	१७
	महामदनसायक	न भ ज भ ज भ ज र	१६.
	विभ्रमगति	म स ज स त त भ र	१०, २०
५६, ६३ ६१२	शम्बरम्	न भ भ र न भ भ र	१७
८३, ६८, ५६७	वेस्तितवेल्म्	भ भ भ म स न न स	१७
	द्रुतलघुपदगति	भ भ भ त न न न स	१०
	सम्प्रान्ता	न य भ त न न न स	१०.
८३, ८८, ६०८	अतुलपुलकम्	न न न न न न स	१७

पञ्चविंशत्तर-छन्द

	मन्तेभ	म म म म म त य म य	१६.
२६, ७६, ६०३	शरभूरिणी	र स ज ज भ र स य स	१७
४७, ६३, ४६१	ह्रीणहृयङ्गवीनम्	र र र र र र र र	१७
७२, ०२, ८१५.	नीपवनीयकम्	भ न न स भ स स स	१७
७५, ७६, ८०८	कुमुदमाला	न त स भ य न त स ग	१७
८२, ८३, ६०४	रसिकरसाला	न न स स भ त न स ग	१७
८३, ६२, ४८६	विरहविरहस्यम	न न न त य न न स ग	१७
८३, ८१, ३११	भास्करम्	भ न ज य भ न न स य	१७
६५, ६२, ४६७.	विश्वविस्तारमणि	र र र न ज त त त य	१७
१, १३, ८५, ६७३	ध्यायीश्रीशस्तम	त य भ भ स स स ज य	१७.
	हस्तय	न न न न स भ भ भ य	१०, १६
१, ४३ ८०, ४७१	शिविका	भ भ भ भ भ भ भ य	१७
१, ५४, ४५, ६६१.	भाविनीविल- सितम्	र न र न र न र न य	१७
१, ६१, ७५, १६८	विशेषकवक्तितम	न न म म ज ज न न य	१७, विशेषित-१७.
	अपलम्	न ज ज य न न न न य	१०
१, ६७, ७४, ७१७	अभ्रभ्रमणम्	त न म स न न न न य	१७
	हस्तपदा	त य भ भ न न न न य	६ १०, २०
१ ६७, ७७, २१६	अलका	न न न न न न न न य	१७; अलिका-१७
१ ६१, ७३ ६६२	मत्स्यपल्ली-	य य य य य य य य	१७
	प्रकाशम्		
२, ३५, २५, ०८४	सौदामनदाम	स स स स न ज य स स	१७

प्रस्तार सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ सङ्केताङ्क
पठविशाक्षर-छन्द			
३३, ६६, १६६	तनुविलि- चित्तम	म म म न य न त य म म	१७
३६, ६४, ५७६	विनयविलास.	न य न य न य न य म म	१७
६५, ११, ४६७	विश्वविज्ञास	म य य य र र त त य य	१७
६५, ३४, ६६१	प्रशोकानोपहृम	म म म भ न र त त य म	१७
६५, ८७, ०६१	भ्राभासमानम्	य य य य त त त त य म	१७.
६५, ८७, ०६५	धौरविज्ञान्तः	म न ज त त त त त न य	१७
१, ११, ८४, ८११.	विकुण्डकण्ठ	र ज र ज र ज र ज म म	१७
१, ११, ०२, ८१६	चारवृत्ति	न न स म न ज र ज म म	१७
१, ५७, ६०, ३२१.	भमनशलाका	म म स म म य त न य म	१७
१, ६७, ६७, ८७१	उद्भिन्नकदनम्	म न स ज ज न न न य य	१७
	मकरन्द	न य न य न न न न य य	१७.
	वनलतिका	न न न न न न न न य य	१६
१, ६१, ३२, ६६२	कुहककुहरम	म न म य न न म य ल य	१७
१, ६२, ४८, २८५	सुरसूचक	म स ज त त स य य ल य	१७
१, ६८, १५, ६१०.	विषाणाश्रितम्	य न र म ज त स य ल य	१७.
२, २३, ६६, ४९७	पिनिद्रसिन्धुर	र र र र ज र ज र ल य	१७
२, २३, ८०, १७७	दाहृतकुतल	म र र न न र ज र स य	१७
२, ८१, ४२, ४९७	बाबलीवल- कोकित	र स य ज म र स ज ल य	१७
	सुधावल्लभा	न ज म ज ज ज म ज ल य	१०, १६.
२, ६३, ३०, ६४३	शृङ्खलवल्लित	म न म म म न न ज ल य	१७
३, २१, ७५, ७६२.	विरामवाटिका	न ज र स न ज र न ल य	१७
३, ३५, ६२, ८२१	वर्णाटकम्	त म ज म ज म न ल य	१७.
	भाषीट	म न य स म य न न ल य	१०,
	वेगवती	न य न स म म न न ल य	१०
३, ८३, ४७, ६६८.	कुम्भकम	न न र र र र र य ल	१७
५, ७५, २१, ८८४	वज्रवट	स स स स स स स स ल	१७

प्रवीणर-छन्द

२७	मातापुत्र	म त त त न न य य य	५, ६, मातापुत्र-१०
२७.	विषातितुमुचम्	म म न न न न न स	१६, मातापुत्रम्-१६.
२७	मातापुत्रम्	म म त म म म म म म	१६.

वर्णसंख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
२७.	त्रिपदललितम्	न न न न भ न भ न स	१६.
२८.	त्रिभङ्गी	न स भ न त ज त स य	१६.
२९.	प्रमोदमहोदयः	म त य त न न न र स ल ग	१०.
२९.	कला	न न न न न न न न ल य	१६.
२९.	मणिकिरण	न न भ न ज न न न न ल ग	१६;
३०.	नृत्तललितम्	भ ज स न भ ज स न भ य	१०; वृत्तललितम्-१६.
३१.	लहरिका	न न न न न न न न न ग	१६.
३१.	विशालं	३१ धर्णं	१६.
३१.	सञ्जविशालं	३१ धर्णं	१६.
३२.	उपविशालं	३२ धर्णं	१६.
३२.	सञ्जोपविशालं	३२ धर्णं	१६.
३३.	क्षत्र	भ न न भ न न भ न भ य	१६.
३४.	क्षिप्रलय	भ न न भ न न भ न न भ य	१६.
३४.	मृत्तिच्छन्दः	म म त न न न न म स ज ज ग	२०; मेघदण्डक-२२
३८.	ललितलता	म-१२, ल ग	१०, १६.
३८.	पिपीलिकादण्डकः	म म त न न न न म न र स ल ग	२२.
४२.	पणवदण्डकः	म म त न न भ न न न न भ ज भ र	२२.
४६.	करभदण्डकः	म म त न न न न न न न न न स ज ज ग	२२.
५०.	ललितदण्डकः	म म त न न न न न न न न न न न र स ल ग	२२.
	धारी	४६ मात्रा	१६.
	उपधारी	४२ मात्रा	१६.

दण्डक-छन्दः

३३.	धर्णवः	[न न २-६]	५, ६, १०, १३, १५, १६, १७, १८, १९; धर्ण-२२.
३६.	ध्यातः	[न न २-१०]	५, ६, १०, १३, १५, १६, १७, १८, १९; प्लवः-२२.
३६.	जीमूतः	[न न २-११]	५, ६, १०, १३, १५, १६, १७, १८, १९; ध्यातः-२२.
४२.	सोलाकरः	[न न २-१२]	५, ६, १०, १३, १५, १६, १७, १८, १९; जीमूत-२२.

वर्ण- संख्या	छन्द नाम	लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ-सङ्केताङ्क
४५	उद्दाम	[न न २-१३]	५, ६, १०, १३, १५, १६, १७, १८, १९, लीलाकर-२२
४८.	शङ्ख	[न न २-१४]	५, ६, १०, १३, १५, १६, १७, १८, १९; उद्दाम-२२
५१.	विश्वयाट्	[न न २-१५]	१७, समुद्र-६, १०; धर्क-१६, आराम- १४, माता-५, सिंह-२२
५४.	कालदण्ड	[न न २-१६]	१७, सग्राम-१४, १७; भुजग-६, १०, चन्द्रेय-१६, माता-५, समुद्र-२२
५७	पीण्डक	[न न २-१७]	१७, सुराम-१४, भोगीन्द्र-१६, माता-५, भुजग-२२
६०.	उदारपाद	[न न २-१८]	१७, वैकुण्ठ-१४, वीमूय-१६, माता-५, प्रचितक-२२.
६१.	सोत्कण्ठ	[न न. २-१९]	१४, १७, वाराह-१६, माता-५ प्रचितक-२२
६६.	सार	[न न २-२०]	१४, १७, वात-१६, माता-५, ..
६६	कासार	[न न २-२१]	१४, १७, माता-५, महापण्डवृष्टि-१६, ..
७२	विस्तार	[न न २-२२]	१४, १७, माता-५, महापण्डवृष्टि-१६, ..
७५	सहार	[न न २-२३]	१४, १७,
७८	नीहार	[न न २-२४]	१४, १७,
८१	मवार	[न न २-२५]	१४, १७,
८४	वेदार	[न न २-२६]	१४, १७,
८७	साधार	[न न २-२७]	१४, १७,
९०	साधार	[न न २-२८]	१४, १७,
९३	साधार	[न न २-२९]	१४, १७,
९६	विमर्ष	[न न २-३०]	१७, मावद-१४, माता-५, ..
९९	दीपगाली	[न न २-३१]	१७, गोविन्द-१४, ..
१०२	सानद	[न न २-३२]	५, १४,
१०५	सावोह	[न न २-३३]	१४,
१०८	मग्न	[न न २-३४]	१४,
२८	पत्रग	[न न २-३५]	१०, १६
३१	हम्भोति	[न न २-३६]	१०, १६,
३४	हेलावली	[न न २-३७]	१०, १६,
३७	मामती	[न न २-३८]	१०, १६,

वर्ण- सख्या	छन्द-नाम	लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताद्
४०.	केलि	[न ग र-१२]	१०, १६;
४३.	ककेलि.	[न ग र-१३]	१०, १६,
४६	लीलाधिसातः	[न.ग र-१४]	१०, १६,
२८.	शकापतनम्	[म-६, ग]	१७.
२९	भुजगविलासः	[म-६, ग ग]	५, १०, १६.
२८.	लावण्यलीला-	[न. य-८, ल]	१७.
	प्लुतम्		
२८	आलानिकम्	[न न र य-६, ल]	१७.
२९.	स्मारमाला-	[स, य-८, ल ग]	१७
	कुल		
३१.	आर्द्रस्तवक	[न य न य न य न य न य ल]	१७.
४८.	विदाघसुभगी	[त न त न त न भ भ त न त न त न भ भ]	१७.
५७	विशेषस्तवकम्	[न य न य न य न य भ स भ स भ स भ भ स भ स]	१७
२९.	घण्डपाल	[स ५, र-८]	५, घण्डकील -१६; घण्डकाल -१०.
३५	,,	[स ५, र-१०]	५.
३२.	सिंहविक्रान्त	[स ५, य-६]	५, १०, १४, १७.
३०.	मेघमाला	[न न म म, य-६]	५, १६ [न म यथेष्ट भगण] १६, [न म यथेष्ट भगण १०]
३६.	घण्डदेग	[न न. य-१०]	५, १०, १६.
३२	सिंहक्रीडः	[य-१०, ग ग]	५, १७
३०.	कामबाण	[त-१०]	५, १०; वाम-१६, [यथेष्ट त, ग २; स, ग २; ज, ग २; य, ग २।] १६.
२९	सिंहविक्रान्त	[स-५, य-८]	१६.
३६.	उद्दालकः	[म-१२]	१६
४८	सिंहविक्रीड	[य-१६]	१०, १६; सिंहविक्रान्त -१४.
३६.	वितानम्	[म-१२]	१६.
३६.	धनुंस	[म-१२]	१६.

वर्ण- संख्या	छन्द-नाम	संक्षेप	सन्दर्भ-ग्रन्थ-सङ्केताद्
३६.	अचलः	[न-१२]	१६.
३८.	चर्यकः	[न न. म-७, ग.]	४.
३५.	समुद्रः	[न न. र ज र ज र ज र ज र ल.ग]	४.
	उत्कलिका	[न न, पञ्चमात्रिकगण ययेष्ट]	१०.
३०.	घातलीलातुरः	[१० गण ऐन्द्रिक]	१७.
३२.	मनोहरणकविता	[१० गण ऐन्द्रिक, स-२]	१७.
८६	कुसुमितकायः	[म म ल न त य ज ल र भ स स भ स भ स भ स भ त य स भ स य स भ न न ध ग]	१७.
	भकरालयः	[न ग र, सप्ताक्षरगण ययेष्ट]	१६.
	तिह.	[ल ३, ययेष्ट गण]	१६.
	अष्टदः	[ल. ४, ययेष्ट गण]	१६.
	अष्ट	[ल. ५, ययेष्ट गण]	१६.
	घात	[ल. ७, ययेष्ट गण]	१६.
६६६.	महावृद्धक.	[म म, ८-३३३]	समयगुन्वरहृत्न वित्तपिपत्री

अष्टसमवृत्त

वर्ण- संख्या	वृत्तनाम	विषमवरणों वा संक्षेप	समवरणों वा संक्षेप	सन्दर्भ-ग्रन्थ-गनेता
(३, ८)	कामिनी	[र]	[ज र ल ग]	१०.
(३, १२)	शिली	[र]	[ज र ज र]	१०.
(३, १६)	नितम्बिनी	[र]	[ज र ज र ज ग]	१०.
(३, २०)	वारणी	[र]	[ज र ज र ज र ल ग]	१०.
(३, २४)	वतसिनी	[र]	[ज र ज र ज र ज र]	१०.

टि-० वर्णसंख्या के बावजूद ये प्रमुख वृत्तों की प्रथम और द्वितीय वर्णों का और दूसरा और द्वितीय वर्ण अनुपम वर्ण के वर्णों का जोड़ है।

* विषम वर्णों की प्रथम और द्वितीय वर्णों का संक्षेप।

* सम वर्णों की प्रथम और द्वितीय वर्णों का अनुपम वर्ण का संक्षेप।

वर्ण सख्या	युक्तनाम	विषयचरणो का लक्षण	समचरणो का लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ-संकेतांक
(५, ११)	द्वता	[स स ग]	[स स स ल ग]	१०
(५, २४)	मुगाङ्गमुली	[स ल ग]	[स स स स स स स स]	१०
(८, ३)	जानरी	[ज र स ग]	[र]	१०
(८, ८)	प्रवर्तकम्	[र ज ग ग]	[ज र ल ग]	१६
(६, १०)	वैसारी	[त ज र]	[म स ज ग]	१७
(१०, १०)	अतिलम्	[ज ल स ग]	[त ल स ग]	१७ अतिलम्-१७
(१०, १३)	शुकावली	[त ज र ग]	[म न ज र ग]	१७.
(१०, १२)	समुद्रकाता	[त ज र ग]	[म स स ग]	१७.
(१०, १४)	विलासवापी	[त ज र ग]	[स भ र ज ग ग]	१७
(१०, १०)	विश्वप्रभा	[त ल स ग]	[ज ल स ग]	१७
(१०, १२)	सम्पातशीला	[त म र ग]	[स न म ग]	१७
(१०, १०)	घटिका	[त स ज ग]	[स स ज ग]	१७
(१०, १३)	जार्णि	[न ल स ग]	[र र न ल ग]	१७
(१०, ६)	वासववन्दिता	[म स ज ग]	[त ज र]	१७,
(१०, ११)	करघा	[म स ज ग]	[न न र ल ग]	१७.
(१०, ११)	सुया	[म स ज ग]	[स भ र ल ग]	१७
(१०, १०)	प्रभासिता	[म स ज ग]	[स स ज ग]	१७
(१०, १२)	मकवावली	[म स स ग]	[स भ म स]	१०
(१०, १०)	आलोतघटिका	[स स ज ग]	[त स ज ग]	१७.
(१०, १२)	अरन्तुद	[स स ज ग]	[न ज ज र]	१७.
(१०, १०)	प्रभासिता	[स स ज ग]	[म स ज ग]	१७.
(१०, १२)	नवनीलता	[स स ज ग]	[स भ ज र]	१७, अवनीलता-१७ अवनीलता-१७
(११, ११)	विषयीतास्थानिकी	[ज ल ज ग ग]	[त ल ज ग ग]	२, ५, १० १३, १७, १८, १६, २२
(११, ११)	आस्थानिकी	[त ल ज ग ग]	[ज ल ज ग ग]	२, ५, १० १३, १७ १६, आस्थानिका-१८ २०, २२
(११, १२)	किप्रटक	[त ज ज ल ग]	[स स स स]	१७
(११, ११)	समयवती	[त न ल ल ग]	[स म न ल ग]	१७
(११, १२)	शिशिराशिखा	[न न र ल ग]	[न ज ज र]	१७
(११, १०)	वैपाली	[न न र ल ग]	[म स ज ग]	१७.
(११, ११)	पाटलिका	[न य न ग ग]	[भ भ भ ग ग]	१७
(११, १२)	साचीकृतवदना	[न य भ ग ग]	[त न भ स]	१७

वर्ण-संख्या	वृत्तनाम	विषमचरणो का लक्षण	समचरणो का लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ संकेतांक
(११, ११)	श्रीपगवम्	[न र र ग ग]	[भ र र ल ग]	१७
(११, १२)	उपादधम्	[न स ज ग ग]	[भ भ र य]	१७.
(११, ११)	करभोद्धता	[भ स र ल ग]	[स न र ल ग]	१७
(११, १२)	विलसितलोला	[भ भ स स ग]	[न ज न स ग]	१०, १६.
(११, १२)	द्रुतमध्या	[भ भ भ ग य]	[न ज ज य]	२, ६, १०, १३, १७ १८, १६ २०, २२; चतुर्थमध्या-५.
(११, ११)	शेरकित्ता	[भ भ भ ग ग]	[न य न ग य]	१७.
(११, १२)	शमलाकरा	[भ भ भ ग य]	[भ भ ज य]	१७
(११, १०)	वर्गवती	[भ भ भ ग य]	[स स स ग]	१७
(११, ११)	अमहिषा	[भ भ भ ग य]	[स स स ल ग]	१७
(११, १०)	वेतु	[भ र न ग ग]	[स ज स ग]	१७.
(११, ११)	श्रीपगवीनम्	[भ र र ल ग]	[न र र ग य]	१७
(११, १२)	वट्टास्यम्	[भ भ न स ग]	[स स न ग य]	१७
(११, १०)	पुढविराट्	[भ स ज ग य]	[स ज र य]	१७
(११, १२)	अमुराड्ढा	[भ स ज ग य]	[भ न र य]	१७
(११, ११)	वर्णिनी	[र न भ ग य]	[र न र स य]	१७
(११, १२)	कितकित्ता	[र न र ल ग]	[न भ ज र]	१७
(११, ११)	सारिका	[र न र स य]	[र न भ ग य]	१७
(११, १०)	सलिला	[र स स स ग]	[स ज ज य]	१५.
(११, ११)	शातभञ्जिका	[स न र ल ग]	[भ त र ल य]	१७
(११, १२)	विमानिनि	[स भ र स य]	[भ भ ज र]	१७.
(११, १०)	अमुषा	[स भ र स य]	[भ स ज य]	१७
(११, १०)	मुन्दरी	[स भ र ल ग]	[स स ज ग]	१७, गुरमासिका- १७, विपोगिनी-१७
(११, ११)	अमरती	[स भ न स य]	[स न स ल य]	१७,
(११, १२)	मातभारिणी	[भ स ज ग य]	[स भ र य]	१०, २०, निगन्धिनी- ११, उपोद्गता-१७ वर्गमासिका-१७. परिधृता-१७, गुर्वो- पिता-१६, शिवा-१६
(११, १०)	हरिमुप्ता	[भ न स स य]	[भ भ भ र]	१७.
(१२, १२)	दासनिधि-	[ज स ज र]	[न न ज र]	१६; गुनन्धिनी-१६
(१२, १२)	विपरीतप्रामा	[ज भ ग य]	[न भ ग य]	१६
(१२, ३)	नित्यपिड	[ज र ज र]	[र.]	१०

वर्ण-संख्या	वृत्तनाम	विपमचरणो का लक्षण	समचरणो का लक्षण	सन्दर्भ-ग्रन्थ- संकेतांक
(१२, १३)	पद्यावती	[त भ ज य]	[स ज स स य]	१७.
(१२, १२)	सरसीकम्	[त भ ज य]	[स भ ज य]	१७
(१२, १२)	पद्यानिधिः	[त त ज र]	[ज त ज र]	१६; नन्दिनी-१६
(१२, ११)	श्रवाचीकृतवदना	[त न भ स]	[न य भ ग य]	१७.
(१२, १२)	भामा	[त भ स य]	[ज भ स य]	१६
(१२, १२)	सिंहप्लुतम्	[त भ स य]	[ज भ स य]	१६; (श्रुति-स्मृति- उपजाति)
(१२, ११)	ईहा	[न ज ज य]	[भ म भ ग य]	१७.
(१२, ११)	धपरवक्त्रम्	[न ज ज र]	[न न र स य]	१७; मृदुमालती-१७.
(१२, १०)	अनूपकम्	[न ज ज र]	[स स ज य]	१७.
(१२, १४)	मञ्जुसौरभम्	[न ज ज र]	[स ज य ज य]	१४
(१२, ७)	क्षान्ति.	[न न न य]	[म म ग]	१६; चूडा-१६.
(१२, १२)	कौमुदी	[न न भ भ]	[म म र र]	१४.
(१२, ११)	सुराडया	[न न र य]	[म स ज ग य]	१७.
(१२, १४)	शरावती	[न न र य]	[स भ म ज र]	१७
(१२, ११)	किलिकिती	[न भ ज र]	[र न र स य]	१७.
(१२, ११)	अकुसुमचरम्	[भ न ज य]	[म भ भ ग य]	१७.
(१२, ११)	आमलकी	[भ भ भ भ]	[भ भ भ ग य]	१६; चुडा-१६.
(१२, ११)	उषाडघम्	[भ भ र य]	[न स ज ग य]	१७.
(१२, १२)	उलपीहा	[भ भ र य]	[स भ र ज]	१७.
(१२, ११)	विमानिनी	[भ न ज र]	[स भ र स य]	१७
(१२, १६)	अहीनताली	[म न ज र]	[स भ स ज र ग]	१७.
(१२, १३)	विमदवाणी	[म स ज य]	[स भ र य य]	१७.
(१२, १०)	कान्ता	[म स स य]	[त ज र य]	१७.
(१२, १३)	मृगीयवानी	[र ज र ज]	[ज र ज र य]	१४, १८.
(१२, १३)	चमूवभीष्टः	[र न ज र]	[स न ज र य]	१७.
(१२, १०)	पातशीला	[स न म य]	[स म र य]	१७.
(१२, १२)	उपसरभीकम्	[स भ ज य]	[त भ ज य]	१७
(१२, १०)	करीरीता	[स भ ज र]	[स स ज य]	१७.
(१२, ११)	लुप्ता	[स भ भ र]	[स स स स य]	१७.
(१२, १२)	अभक्षपक्ति	[स भ र ज]	[भ भ र य]	१७.
(१२, १३)	अप्रमायिनी	[स भ र य]	[न ज ज र य]	१७
(१२, ११)	प्रमातिका	[स भ र य]	[स स ज ग य]	१७; उपोद्गता-१७ सौरभसचितम्-१७.

वर्ण-संख्या	वृत्तनाम	विधमचरणो का लक्षण	समचरणो का लक्षण	सन्दर्भ ग्रन्थ- संकेतांक
(१२, ११)	नटक	[स स स स]	[त ज ज ल ग]	१७
(१३, १३)	प्रकीर्णकम्	[ज भ स ज ग]	[त भ स ज ग]	१६; (रवि-रविर- उपजाति)
(१३, १३)	निर्मधुवारि	[त भ र स ल]	[स ज स ज ग]	१७.
(१३, १४)	लास्यलीलातय	[त य र र ग]	[भ स त त ग ग]	१७.
(१३, १२)	अञ्जिताया	[न ज ज र ग]	[न न र य]	१७
(१३, १२)	प्रमापिनी	[न ज ज र ग]	[स भ र य]	१७
(१३, १४)	प्रात्तेपनम्	[न त त त य]	[न भ य य ल ग]	१७
(१३, १६)	परप्रोणिता	[न न त त य]	[न न स त त य]	१७
(१३, १३)	विमुखी	[न न भ स ल]	[न न स स ग]	१७.
(१३, १४)	प्रमोदपरिणीता	[न न र ज ग]	[न ज ज भ य]	१७
(१३, १३)	सुरहिता	[न न स स ग]	[स न न न ग]	१७
(१३, १३)	रविमुखी	[न न स स ग]	[न न भ स ल]	१७
(१३, १३)	शिशुमुखी	[न भ ज ज ग]	[न भ स ज ग]	१७.
(१३, १३)	अनिरया	[न भ स ज ग]	[न भ ज ज ग]	१७
(१३, १४)	प्रतिविनीता	[न य ज र ग]	[स भ र न ग ग]	१७
(१३, १३)	अल्पस्तम्	[भ न ज ज ग]	[भ न य न ल]	१७
(१३, १३)	अर्धस्तम्	[भ न य न ल]	[भ न ज ज ग]	१७
(१३, १३)	अनङ्गपदम्	[भ भ भ भ ग]	[स स स स ग]	१७
(१३, १३)	धीरावर्त्त	[म त य स ग]	[म भ स म ग]	१७.
(१३, १३)	धीरावर्त्त.	[म भ स म ग]	[म त य स ग]	१७.
(१३, १०)	हिनुकावती	[म न ज र ग]	[स ज र ग]	१७
(१३, १३)	अलिपदम्	[र र न त ग]	[न त त त ग]	१७
(१३, १३)	मधुवारि	[स ज स ज ग]	[त भ र स ल]	१७
(१३, १३)	कलनावती	[स ज स ज ग]	[स ज स स ग]	१७.
(१३, १२)	पद्मावती	[स ज स स ग]	[त भ ज य]	१७
(१३, १३)	कलना	[स ज स स ग]	[स ज स ज ग]	१७
(१३, १२)	चमूकः	[स न ज र ग]	[र न ज र]	१७.
(१३, १२)	विषद्वानी	[स भ र य ग]	[म स ज म]	१७.
(१३, १४)	भन्दाकान्ता	[स स ज र ग]	[म स ज र ग य]	१७
(१३, ११)	कामाती	[स स न न ग]	[म भ न स ग]	१७
(१३, १३)	मुजङ्गमता	[स स स स ग]	[म भ भ भ ग]	१७.
(१४, १४)	अवरोपवनिता	[न न भ र ल ग]	[स स ज य य]	१७.
(१४, १३)	अनालेपनम्	[न भ य य ल ग]	[न त त त ग]	१७.

षष्ठ परिशिष्ट

गाथा एवं दोहा भेदों के उदाहरण^८

गाथा-भेदों के उदाहरण

१. लक्ष्मी:

यत्रार्यायां वर्णास्त्रिंशत्संख्या सधुत्रयं तत्र ।
दीर्घास्तारातुल्याश्चेत्स्युः प्रोक्ता तदा लक्ष्मीः ॥१॥

२. ऋद्धिः

यत्रार्यायां वर्णा एकत्रिंशन्मिता यदा पञ्च ।
सधवः षड्विंशत्या दीर्घा ऋद्धिः समा नाम्ना ॥२॥

३. बुद्धिः

यत्रार्यायां वर्णा दन्तंस्तुल्या भवन्ति चेद् दीर्घाः ।
तत्त्वैस्सप्तत्यूनां नाम्ना बुद्धिस्तदा भवति ॥३॥

४. सज्जा

यत्रार्यायां वर्णा देवस्तुल्या जिनोन्मिता गुरवः ।
तदलघवश्चेत्तत्र प्रोक्ता नाम्ना तदा सज्जा ॥४॥

५. विद्या

वर्णा वेदान्निमिता गुरवो रामादिवन्मिता यत्र ।
रुद्रमिता लघवश्चेन्नाम्ना विद्या तदा आर्या ॥५॥

६. क्षमा

याणान्निमिता वर्णा प्राकृतितुल्यास्तु यत्र गुरवस्स्युः ।
ह्रस्वा विश्वानियमिता प्रोक्ता नाम्ना क्षमा सार्या ॥६॥

७. देही

पट्त्रिंशन्मितवर्णाः प्रकृतिमिताः सम्भवन्ति चेद् दीर्घाः ।
बाणेन्दुमिता सधवः कथिता सार्या तदा देही ॥७॥

^८ वृत्तान्तिक में गाथा और दोहा छन्द के प्रसार-भेद से नाम एक सधेप में सधण प्राप्त है किन्तु इन भेदों के उदाहरण प्राप्त नहीं हैं अतः बाबूतलम-ग्रन्थ से इनके उदाहरण यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं ।

वर्ण-संख्या	वृत्तनाम	विषमचरणो का लक्षण	समचरणो का लक्षण	सदर्थ-प्रथ- संकेतांक
(१४, १३)	सास्यलीला	[भ स त त ग ग]	[त य र र ग] १७.	
(१४, १३)	सम्मदाफांता	[भ स ज र ग ग]	[स स ज र ग] १७.	
(१४, १८)	मार्दङ्गी	[स न स न ग ग]	[म न ज न ग ग] १७, मार्दङ्गी-१७.	
(१४, १०)	अकोशकृष्ठा	[स भ र ज ग ग]	[त ज र ग] १७.	
(१४, १३)	अतिप्रतिविनीता	[स भ र न ग ग]	[न य ज र ग] १७.	
(१४, १४)	उहनी	[न भ न न स]	[न भ भ न ल ग] १६.	
(१४, १५)	देवगीति	[र ज र ज र]	[ज र ज र य] २२.	
(१४, १३)	प्रमोदपदम्	[न ज ज भ य]	[न न र ज ग] १७.	
(१४, १६)	आसववासिता	[न भ ज र य]	[स भ र ज स ग] १७.	
(१४, १२)	बृहच्छरायती	[स भ न ज र]	[न भ र य] १७.	
(१४, १४)	अवरोधयनिता	[स स ज भ य]	[न भ भ र ल ग] १७.	
(१६, ३)	सारसी	[ज र ज र ल य]	[र] १०.	
(१६, १६)	वासिनी	[त ज भ ज ज ग]	[न ज भ ज ज ग] १७.	
(१६, १६)	वासववासिनी	[न ज भ ज ज ग]	[त ज भ ज ज ग] १७.	
(१६, १३)	अपरप्रीणिता	[न न स त त ग]	[न न त त ग] १७.	
(१६, १५)	धनासववासिता	[स भ र ज स ग]	[न भ ज र य] १७.	
(१६, १२)	हीनताली	[स भ स ज र ग]	[म न ज र] १७.	
(१७, १८)	मानिनी	[भ र न ज न ल ग]	[न ज भ स न स] १०.	
(१७, १८)	मानिनी	[भ र न भ र ल ग]	[न ज भ स न स] १६.	
(१८, १४)	मार्दङ्गी	[म न ज न न य]	[स न स न ग ग] १६.	
(२०, ३)	अपरा	[ज र ज र ज र स ग]	[र] १०.	
(२४, ३)	हंती	[ज र ज र ज र ज र]	[र] १०.	
(२६, ३१)	शिखा	[न न न न न न न न न ल ग]	[म न न न न न २, ४, १०, १३, १८, न न न न ग] १६, २०, २२.	
(३१, २६)	खड्गा	[न न न न न न न न न न ग]	[न न न न न न २, ४, १०, १३, १८, न न न ल ग] १६, २२.	

१८. गाहिनी

नवयुगपरिमितवर्णा यदि दश गुरवो भवन्ति नियत चेत् ।
नगगुणपरिमितलघवस्तदनु भवति गाहिनी किल सा ॥१८॥

१९. विश्वा

वसुयुगपरिमितवर्णा यदि नव गुरवो भवन्ति लघवश्चेत् ।
इह नवहुतभुगभिमिताः प्रभवति फणिपतिभणितविश्वा ॥१९॥

२०. वासिता

नवयुगपरिमितवर्णा यदि वसुगुरवः शशियुगमितलघवः ।
फणिगणपतिपरिभणिता भवति तदनु वासिता किल सा ॥२०॥

२१. शोभा

इह यदि मुनिमितगुरवो हुतभुगजलनिधिमितास्तथा लघवः ।
फणिगणपतिरिति निगदति भवति सनियममियमिति शोभा ॥२१॥

२२. हरिणी

यदि रसपरिमितगुरवः शरयुगपरिमितलघव इह तदनु चेत् ।
फणिपतिपरिभणिततनुः प्रभवति नियत तदा हरिणी ॥२२॥

२३. चक्री

नगयुगमितलघुगण इह शरमितगुरवो भवन्ति यदि नियतम् ।
फणिगणपतिरिति निगदति भवति ननु सनियममिह चक्री ॥२३॥

२४. सरसी

जलनिधिपरिमितगुरवो यदि नवजलधिपरिमितलघव इह चेत् ।
भुजगाधिप इति कथयति भवति नियतविहिततनु सरसी ॥२४॥

२५. कुररी

स्युरथ गुणमितगुरव इह यदि दशधरधरपरिमितलघव इति च ।
फणिगणपतिरिति निगदति भवति लसद्यतिरियं कुररी ॥२५॥

२६. सिंही

द्विकगुरुगुणशरपरिमितलघुविरचिततनुरिह यदि च भवति किल ।
अहिगणपतिरिति कथयति नियतजनितविरतिरथ सिंही ॥२६॥

२७. हंसी, हंसपदवी

शशिमितगुधरशरमितलघुविरचिततनुरियमिह यदि विलसति ।
फणिगणपतिभणितविरतिहंसपदविरथ नियतवृत्तयति ॥२७॥

८. गौरी

सप्ताग्निमिता वर्णा नखमितगुरवो धनोन्मिता लघवः ।
यत्र स्युः किल सार्या तर्हि भवेन्नामतो गौरी ॥८॥

९. धात्री, रात्री च

वसुगुणतुल्या वर्णा गुरवो लघवो यदातिघृतितुल्याः ।
फणिपप्रोक्ता सार्या भवति तदा नामतो धात्री ॥९॥

१०. चूर्णा

नवगुणपरिमितवर्णा घृतिमितदीर्घा भवन्ति चेद्ध्रस्वाः ।
प्रकृतिमिता यदि सार्या प्रोक्ता नाम्ना तदा चूर्णा ॥१०॥

११. छाया

द्विगुणितनखमितवर्णा घनमितदीर्घा भवन्ति चेद्ध्रस्वाः ।
विकृतिमिता यदि सार्या कथिता नाम्ना तदा छाया ॥११॥

१२. कान्तिः

शशियुगपरिमितवर्णा अष्टिप्रमिता भवन्ति चेद्गुरवः ।
शरकृतिपरिमितलघवो नाम्ना सार्या भवेत् कान्तिः ॥१२॥

१३. महामाया

यमयुगपरिमितवर्णास्तिथिमितगुरवश्च भोन्मिता लघवः ।
सार्या भवति तदानीं फणिना कथिता महामाया ॥१३॥

१४. कीर्तिः

गुणयुगपरिमितवर्णा मनुमितगुरवो नवाश्वमितलघवः ।
स्युर्यदि यत्र च सार्या फणिना कथिता तदा कीर्तिः ॥१४॥

१५. सिद्धा

भ्रुतिगुणपरिमितवर्णा अतिरवितुल्या भवन्ति चेद्गुरवः ।
शशधरगुणमितलघवः प्रभवति सा नामतस्सिद्धा ॥१५॥

१६. मानिनी, मनोरमा च

शरयुगपरिमितवर्णा रविमितगुरवश्च देवमितलघवः ।
यदि फणिगणपतिभणिता सार्या खलु मानिनी ज्ञेया ॥१६॥

१७. रामा

रसगुणपरिमितवर्णाः शिवमितगुरवो भवन्ति यदि नियतम् ।
शरगुणपरिमितलघवो यत्र भवति सोदिता रामा ॥१७॥

१८. गाहिनी

नवयुगपरिमितवर्णा यदि दश गुरवो भवन्ति नियतं चेत् ।
नगयुगपरिमितलघवस्तदनु भवति गाहिनी किल सा ॥१८॥

१९. विद्वा

वसुयुगपरिमितवर्णा यदि नव गुरवो भवन्ति लघवश्चेत् ।
इह नवहुतभुगभिनिताः प्रभवति फणिपतिभणितविद्वा ॥१९॥

२०. वासिता

नवयुगपरिमितवर्णा यदि वसुगुरवः दशियुगमितलघवः ।
फणिगणपतिपरिभणिता भवति तदनु वासिता किल सा ॥२०॥

२१. शोभा

इह यदि मुनिमितगुरवो हुतभुगजलनिधिनितास्तया लघवः ।
फणिगणपतिरिति निगदति भवति सनियममियमिति शोभा ॥२१॥

२२. हरिणी

यदि रसपरिमितगुरवः शरयुगपरिमितलघव इह तदनु चेत् ।
फणिपतिपरिभणिततनुः प्रभवति नियतं तदा हरिणी ॥२२॥

२३. चक्री

नगयुगमितलघुगण इह शरमितगुरवो भवन्ति यदि नियतम् ।
फणिगणपतिरिति निगदति भवति ननु सनियममिह चक्री ॥२३॥

२४. सरसी

जलनिधिपरिमितगुरवो यदि नवजलधिपरिमितलघव इह चेत् ।
भुजगाधिप इति कथयति भवति नियतविहिततनु सरसी ॥२४॥

२५. कुररी

स्युरथ गुणमितगुरव इह यदि दशधरशरपरिमितलघव इति च ।
फणिगणपतिरिति निगदति भवति सप्तद्वयतिरियं कुररी ॥२५॥

२६. सिंही

द्विकगुरुगुणशरपरिमितलघुविरचिततनुरिह यदि च भवति किल ।
अहिगणपतिरिति कथयति नियतजनितविरतिरय सिंही ॥२६॥

२७. हंसी, हंसपदवी च

दशमितगुरुशरशरमितलघुविरचिततनुरियमिह यदि विलसति ।
फणिगणपतिभणितविरतिहंसपदविरथ नियतवृत्तयति ॥२७॥

दीर्घा-भेदों के उदाहरण

१. भ्रमरः

यत्र स्युर्दीर्घास्त्रयोविंशत्या तुल्याश्च ।
द्वौ ह्रस्वौ स्याता यदा पूर्वःस्यान्नाम्ना च ॥१॥

२. घामरः

द्वाविंशत्या सम्मिता दीर्घा ह्रस्वा यत्र ।
चत्वारः स्युर्भ्रामरो नाम्नाऽसौ स्यादत्र ॥२॥

३. सरभः

चेत्स्युर्भूदस्रोन्मिता दीर्घा ह्रस्वा यहि ।
पण्णागेनोदितो नाम्ना सरभस्तर्हि ॥३॥

४. श्येनः

दीर्घा विंशत्या मिता अष्टौ लघवो यत्र ।
पिङ्गलनागप्रोदितः श्येनः स्यादित्यत्र ॥४॥

५. मण्डूकः

दीर्घा अतिघृत्युन्मिता ह्रस्वाः स्युर्दश यहि ।
ब्रूतेऽनन्तो नामतो मण्डूके किल तर्हि ॥५॥

६. मर्कटः

दीर्घाः स्युर्घृतिसम्मिता ह्रस्वा द्वादश यत्र ।
पिङ्गलनागेनोदितो मर्कटनामा तत्र ॥६॥

७. करभः

दीर्घाः स्युर्घनसम्मिता इन्द्रमिता, लघवश्च ।
ब्रूते शेषो यदि तदा नाम्नाऽसौ करमश्च ॥७॥

८. नरः

षोडश गुरवः सन्ति चेत्लघवो यत्र किलापि ।
पिङ्गलनागेनाऽसकौ नाम्ना नर आलापि ॥८॥

९. मरालः

अष्टादश लघवो यदा गुरवः पञ्चदशैव ।
मरालनामेत्यद्विपत्तिः शेषो वसित तदैव ॥९॥

१०. मदकलः

मनुमितगुरवो विशतिर्लघवः सन्ति यदा च ।
मदकलनामाऽसौ भवेदित्य शेष उवाच ॥१०॥

११. पयोधरः

नाम पयोधर इति भवेदतिरविगुरवस्सन्ति ।
न्यस्ता आकृतिसम्मिता लघवो यत्र भवन्ति ॥११॥

१२. चलः

लघवश्च चतुर्विंशतिगुरवो द्वादश यत्र ।
स्युः फणिगणपसिरिति वदति चलनामाऽसावत्र ॥१२॥

१३. वानरः

एकादश गुरवो यदा रसयममितलघवश्च ।
नाम्ना वानर इह तदा फणिनायकमणितश्च ॥१३॥

१४. त्रिकलः

वसुयममितलघवो यदा दश गुरवश्च भवन्ति ।
तदा विशिष्य त्रिकल इति नाम बुधा निगदन्ति ॥१४॥

१५. कच्छपः

लघवो द्विगुणिततिषिमिता गुरवो नव यदि सन्ति ।
नाम्ना कच्छप इति भवति सुधियो नियतमुशन्ति ॥१५॥

१६. मत्स्यः

रदपरिमितलघवो यदा वसुमितगुरवस्सन्ति ।
भवति मत्स्य इह खलु तदा विबुधा इति कथयन्ति ॥१६॥

१७. शार्दूलः

श्रुतिगणपरिमितलघव इह नममितगुरवो यत्र ।
फणिगणपतिपरिभणित इति शार्दूलः स्यात्तत्र ॥१७॥

१८. महिवरः

रसगुणपरिमितलघव इह रसमितगुरवो यद्भि ।
महिवर इति खलु नामतः फणिपतिभणितस्तद्भि ॥१८॥

१९. व्याघ्रः

वसुगुणपरिमितलघव इह - धारमितगुरवश्चापि ।
व्याघ्रक इति भवति सनियममहिगणपतिनाऽपि ॥१९॥

२० विडाल

गगनजलधिमितलघव इह जलनिधिमितगुरवश्च ।
प्रभवति यदि फणिपतिभणित इति नाम विडालश्च ॥२०॥

२१ श्वा

यदि यमयुगमितलघव इह गुणपरिमितगुरुकाणि ।
एवा फणिपतिगुरुमतिभिरिति भवति सनियममभाणि ॥२१॥

२२ उद्गुम्बर, उद्गुम्बरश्च

द्विगुरुजलधियुगलघुभिरिह नियमिततनुरनुभवति ।
फणिपतिरिति तत उद्गुरु सुनियतकृतयति भवति ॥२२॥

२३ सर्प

शशिगुरुरसयुगमितलघुभिरथ कृततनुरिह ससति ।
फणिगणपतिरधिकृतविरति सर्प इति समभिलपति ॥२३॥

२४ शशधरम्

वसुजलनिधिपरिमितलघुभिरभिनियमिततनु भवति ।
शशधरमिदमिति नियतयति फणिगणपतिरनुभवति ॥२४॥



सप्तम परिशिष्ट

ग्रन्थोद्धृत ग्रन्थ-तालिका

नाम	ग्रन्थकार	पृष्ठांक
अथ व		१८६.
अथवा		३८.
अनर्घराघवम्	मुरारि	२०५.
अग्नेऽपि		२०५.
अष्टाध्यायी	पाणिनिः	२०३.
इति वा		१८८.
उवाहरणमञ्जरी	सत्समीनाथभट्टः	१०, १३, १६, १७, २१, २४, ४१.
कविकल्पलता	देवेश्वर	२०५.
कादम्बरी	बाणः	२०६.
काव्यावर्ण	हर्षदी	७५.
किरातार्जुनीयम्	भारविः	६८, १००, १०६, १३६, १६२.
कुण्डकुतूहलमहाकाव्यम्	रामचन्द्रभट्टः	१०५, १०७, ११४, ११६, १२१, १३५, १३७, १३८, १३९, १४१, १६१.
कण्ठाभरणम्		१२०.
सङ्क्षेपवर्णने	सत्समीनाथभट्टः	१६०.
गौरीवशकस्तोत्रम्	सङ्कराचार्य	१०५.
गोविन्दविदवावली	श्रीहृषयोत्तमाजी	२२२, २२४, २२८.
गीतगोविन्दम्	जयदेवः	२०५.
अग्रदोसराष्टवम्	मार्कण्डेय	१४५.
अन्व सूत्रम्	चिङ्गलः	१८४, २०४.
अन्व.सूत्रवृत्ति	हतायुध	१५८, १७३, १७५, १७७, १७८, १६४, १६८, १६९, २००.
अन्वोरत्नावली	अमरचन्द्रः (?)	३३०, ३३१.
अन्वदण्डामणि ?	अम्बु	१०६, १३६, १६७, २७२, २८०, २८२, २८३.
अन्वोमञ्जरी	वज्रादासः	६२, ६३, १०५, १२४, १४०, १४७, २०९.

नाम	ग्रन्थकार	पृष्ठांक
जयदेवचन्द्रसू	जयदेवः	२०४.
वक्षिणानिलयर्णे	राससकविः	१५३.
दशावतारस्तोत्रम्	रामचन्द्रभट्टः	१२६.
देवीस्तुतिः	लक्ष्मीनाथभट्टः	४३.
मन्दनमन्दनाष्टकम्	लक्ष्मीनाथभट्टः	१४४.
मदररनमालिका	शङ्कराचार्यः	१४५, १६१.
नारायणाष्टकम्	रामचन्द्रभट्टः	१६७.
नैयधकाव्यम्	श्रीहर्षः	१६६.
पवनवृत्तम् (खण्डकाव्यम्)	चन्द्रशेखरभट्टः	१३६.
पाण्डयचरित-महाकाव्यम् (प्राकृत) पिङ्गलम्	चन्द्रशेखरभट्टः	६२, १२१, १५१, १६०. ३, ६४, ६५, ७०, ७१, ७३, ७६, १२२, १३६, १५१, १५२, २७२, २७७, २८१, २८३, ३२६, ३५४, ३५५, ३५८.
प्राकृतपैंगल-टीका	यशुपति.	२७३.
„ „	रविकरः	२७३.
„ पिङ्गलप्रदीपः	लक्ष्मीनाथभट्टः	४१, १८०, १८५, १८६.
„ पिङ्गलोद्योतः	चन्द्रशेखरभट्टः	३०६, ३१३.
भट्टिकाव्यम्	भट्टिः	१४७, १६६.
भागवतपुराण	वेदव्यासः	१४०.
मालतीमाधवम्	भवभूतिः	२०६. ११, १८, ३५, ३६, ६३, ७०, ७३, ७५, ८४, ८२, ८४, १२३, १२४, १२५, १५६, १६२, १६४, १६७, १८८, २०२, २०६, २१०.
यथा वा-		१६७, १६८, १६९, २००.
यथा वा मम-	कालिदास	१०६, १३८, १४७, १६०, १६४.
रघुवशम्	यामभट्टः	१४६.
यामभट्टः (अष्टांगहृदयसंहिता)	वामोदर	७६, ८१, १०६, ११४, १२२, १२४, १३०, १४३, १४४, १४५, १४६, १४७, १४८, १७२, ३३०, ३३५, ३४२, ३४३.
याणीभूषणम्		
वृत्तरत्नाकर-टीका	मुल्हणः	१६८, १६९, २००.
वृत्तसारः		१०१.

नाम	ग्रन्थकार	पृष्ठांक
शृङ्गारकस्तोत्रम् (सङ्कटाव्यम्)	रायभट्टः	१२१.
शिको-काव्यम् (?)		१५६.
शिवस्तुतिः	सहस्रीनाथभट्टः	४५.
शिशुपालवधम्	माधः	६८, १६२, १६२.
सुन्दरीध्यानाष्टकम्	सहस्रीनाथभट्टः	१४४.
सौन्दर्यसहस्रोत्तमम्	शंकराचार्यः	१३७.
हर्षचरितम्	बाण.	१६०.
हरिसहस्री स्तोत्रम्	दाक्षुराचार्यः	१०५.
हंसद्वयम्	श्रीरूपगोस्वामी	१३७.



अष्टम परिशिष्ट

छन्दःशास्त्र के ग्रन्थ और उनकी टीकायें



नाम	कर्ता एव टीकाकार	उल्लेख*
१ अभिनववृत्तरत्नाकर	भास्कर	सी. सी,
२ " टिप्पण	" श्रीनिवास	"
३ एकावली	फतेहशाह धर्मन् ?	मिथिला केटलॉग
४ कर्णतोष	मुद्गल	अनूप; सी.सी. ने इसका नाम 'कर्णसंतोष' है।
५ कर्णानन्द	कृष्णदास	हि. एस,
६ कविदर्पण		प्रकाशित
७ कविशिक्षा	जयमंगलाधाय	हि एस,
८ काव्यजीवन	प्रीतिकर भवस्थी	हि. एस, सी. सी,
९ काव्यलक्ष्मीप्रकाश	शिवराम S/o कृष्णराम	सी. सी.
१० काव्यावलोकन [कल्लभभाषीय]	नागवर्म	कल्लभप्रान्तीय साङ्गपत्रीय ग्रन्थसूची
११ कीर्तिच्छन्दोमाला	रामाभारायण S/o विष्णुदास	मुनियसॉटी लायब्रेरी मन्बई केटलॉग
१२ " टीका	" "	"
१३ शेषक विग्रहाह्ला		जैन-ग्रन्थावली

* सचेत—सी.सी. = वेटलॉग केटलॉगरम्; मिथिला केटलॉग = ए हिस्त्रिप्टिव केटलॉग
 ऑफ मेन्सुस्त्रिप्टस् इन मिथिला; अनूप = वेटलॉग ऑफ दी अनूप संस्कृत सायब्रेरी
 बीकानेर; हि.एस = ए हिस्ट्री ऑफ कलाशिवस संस्कृत लिटरेचर, एम. वृष्णमाधारी;
 मुनियसॉटी लायब्रेरी मन्बई केटलॉग = ए हिस्त्रिप्टिव केटलॉग ऑफ दी संस्कृत एण्ड
 प्राकृत मेन्सुस्त्रिप्टस् इन दी सायब्रेरी ऑफ दी मुनियसॉटी ऑफ बॉम्बे; रामस एगिणा-
 टिक सोलापटी मन्बई केटलॉग = एन हिस्त्रिप्टिव केटलॉग ऑफ संस्कृत एण्ड प्राकृत
 मेन्सुस्त्रिप्टस् इन दी सायब्रेरी ऑफ दी बॉम्बे ट्राय ऑफ दी रायल एगिनाटिक सोला-
 पटी; बड़ोदा केटलॉग = एन वर्सावेटिकल लिस्ट ऑफ मेन्सुस्त्रिप्टस् इन दी योरियन्टल
 इन्स्टीट्यूट बरोडा; रा.प्रा.प्र. जोधपुर = राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर;
 रा.प्रा.प्र. विलीङ्ग = राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, दाता कार्यालय पिलोद;
 रा.प्रा.प्र. बीकानेर = राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, दाता कार्यालय बीकानेर;
 रा.प्रा.प्र. जयपुर = राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, दाता कार्यालय जयपुर।

नाम	वर्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
१४ गायारत्नकोष		जैन-ग्रन्थावली
१५ गायारत्नाकर		"
१६ गायारत्नक्षण	नन्दितरङ्ग	प्रकाशित
१७ "	रत्नचन्द्र ?	रॉयल एशियाटिक सोसा- यटी बम्बई केटलॉग
१८ छन्द कन्दली		उल्लेख: कविदर्पण
१९ छन्द कल्पतरु	रायच भ्रा	मियिता केटलॉग, हि. एस
२० छन्द कल्पलता	मयुरानाय	हि एस
२१ छन्द कोष	रत्नशेखरसूरि	प्रकाशित
२२ " टीका	" चन्द्रकीर्ति	सी सी
२३ छन्द कौमुदी	नारायणशास्त्री सिस्ते	प्रकाशित
२४ छन्द कौस्तुभ	दामोदर	बडोदा केटलॉग
२५ "	राधादामोदर	सी सी, हि एस
२६ " टीका	" विलाभूषण	सी सी
२७ " "	" कृष्णराम	,
२८ छन्दस्तत्त्वसूत्रम्	धर्मनन्दन वाचक	रा प्रा प्र जोधपुर
२९ छन्द पयोनिधि		प्रकाशित
३० छन्द पीपूष	जगन्नाथ S/O राम	रा प्रा प्र जोधपुर, सी सी
३१ छन्द प्रकाश	दीपचिन्तामणि	बडोदा केटलॉग, हि एस,
३२ " टीका	" सोमनाथ	सी सी
३३ छन्द प्रशस्ति	धीहर्ष	सी सी [उल्लेख-नंदाय १७/२१६]
३४ छन्द प्रस्तारत्तरणि	कृष्णदेव	बडोदा केटलॉग
३५ छन्दःशास्त्र	जयदेव	प्रकाशित
३६ "	" हर्षट	सी सी
३७ छन्द मिला	परमेश्वरानन्द शास्त्री	प्रकाशित
३८ छन्द दीप्तर	जयशेखर	जैन ग्रन्थावली
३९ "	राजशेखर	प्रकाशित
४० छन्दचन्द्रिका		प्रकाशित
४१ छन्दचिह्नम्		"
४२ छन्दचिह्नप्रदानम्	ध्यात्मस्वरूप उदासीन P/O गणाराम उदासीन	"
४३ छन्दचूडामणि	दाम्भु	उल्लेख बृत्तरत्नाकर-नारायण भट्टी टीका
४४ छन्दचूडामण्डन	कृष्णराम [जोधपुर]	हि एस,

नाम	कर्त्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
४५ छन्द श्लोक		सी सी.
४६ छन्द सार	चिन्तामणि	मुनिवर्सीदे लापबेरी बम्बई केटलॉग
४७ "	जगन्नाथ पाण्डेय	प्रकाशित
४८ छन्द सारसंग्रह	चन्द्रमोहन घोष	.
४९ छन्द सारावली		"
५० छन्द सिद्धान्तभास्कर	केशवजीनन्दS/O मुरजी	मिथिला केटलॉग
५१ छन्द सुधाकर	कृष्णराम	हि. एत
५२ छन्द सुधाचिन्तहरी	जानीमहापात्रS/O जयदेव याज्ञिक	अनूप, हि.एत.
५३ छन्द सुन्दर	नरहरि	सी सी.
५४ छन्द सख्या	?	"
५५ छन्द सग्रह		" [उल्लेख-संग्रहसार]
५६ " [वृत्तबोध.]		प्रकाशित
५७ छन्दोरूपक		जैनप्रपावली
५८ छन्दोऽङ्कुर	गंगासहाय	प्रकाशित
५९ छन्दोऽवतल	सालबन्धोपाध्याय	रा प्रा प्र. चित्तौड
६० छन्दोऽम्य		सी सी
६१ छन्दोगोविन्द*	गणादास	सी सी., [उल्लेख-वृत्तरत्ना- करावली और वृत्तमौक्तिक]
६२ छन्दोऽवतल	गोविन्द	सी सी.
६३ छन्दोऽविषा	शुमारमणि S/O हरिवल्लभ	"
६४ " टीका	" कृष्णराम	"
६५ छन्दोनिघण्टु		अनूप,
६६ " (विजयसारा- मण्डोद्दिष्टाक्षरम्)	हरिद्विज	रा प्रा प्र. बीकानेर
६७ छन्दोगुणामन	जयवीर	प्रकाशित
६८ "	जिनेश्वर	हि एत.
६९ .	बामदेव	सी सी [उल्लेख अमर- सिंह]
७० "	हेमचन्द्र	प्रकाशित
७१ " टीका	"	"

नाम	कर्त्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
७२ छन्दोऽम्बुधि		सी सी
७३ छन्दोमञ्जरी	भगवादास s/o गोपालदास	प्रकाशित
	बैद्य	
७४ " टीका	" कृष्णराम	सी सी.
७५ " "	" कृष्णवल्लभ	हि एस
७६ " "	" गोवर्धनदास	हि एस, सी सी
७७ " "	" चन्द्रशेखर भारती	" "
[छन्दोमञ्जरीजीवन]		
७८ छन्दोमञ्जरी टीका	" जगन्नाथ सेन s/o	हि एस, सी सी
	जटाधर बविराज	
७९ " "	" जीवानन्द	प्रकाशित
८० " "	" बाताराम	हि.एस, सी सी
८१ " "	" रामयन	प्रकाशित
८२ " "	" यशोधर	हि एस, सी सी
८३ " "	" हरिदत्तदास्त्री	प्रकाशित
	दाशरथसपाठक	
८४ छन्दोमञ्जरी	गोपाल*	तत्कृत बालेज घनारत
		रिपोर्ट सन १९०६-१७
८५ ,	गोपालदास*	हि एस
८६ "	गोपालधर*	सी सी.
८७ छन्दोमन्दारिनी	गुणप्रसाद दास्त्री	प्रकाशित
८८ छन्दोमहाभाष्य	बामोदरभट्ट s/o रघुनाथ	बडोदा केटलॉग
८९ छन्दोमातङ्ग		सी सी [उल्लेख-भूतारना- बारादा]
९० छन्दोमार्तण्ड	मणिमाल	बडोदा केटलॉग
९१ छंदोमाला	शाङ्गधर	हि एस.
९२ छंदोमुरतावली	प्यारेलाल	सी सी
९३ "	शम्भुराम s/o सीताराम	हि.एम सी सी
९४ छंदोरत्न	पद्मनाभभट्ट	सी सी
९५ छंदोरत्नहस्ताशुष	?	सी सी

* छन्दोमञ्जरी के कर्त्ता गोपालदास वैद्य के पुत्र गणदास हैं। इस सम्बन्ध में प्रतिनिधियों के भ्रम से गोपाल, गोपालदास, गोपालधर नाम से भिन्न ३ प्रणेतृ का भ्रम हो गया है।

नाम	कर्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
६६ छंदोरत्नाकर		सी सी. हि. एस. [उल्लेख- संगीतनारायण श्रोत्र सङ्गीत- नायभट्टकृत-पिंगलप्रदीप]
६७ छंदोरत्नायली	रामरत्न कवि	जैन - पंचायली [उल्लेख- मेघधिरुपकृत-युत्तमोक्तिक दुर्गमशोध]
६८ छंदोरहस्य	घनसागर p/o गुणवल्लभ उपाध्याय	रा प्रा प्र. जोधपुर
६९ छंदोलक्षण		सी सी.
१०० छंदोलघुविवेक		"
१०१ छंदोऽलङ्कारण	जगद्धर	सी.सी.
१०२ छंदोविचय		बडोदा केटलॉग, सी सी.
१०३ छंदोविचार	सुलदेव	"
१०४ छंदोविधिति	धतञ्जलि	सी सी.
१०५ "	दण्डी	„ [उल्लेख-काव्यादर्श १।१२]
१०६ „ भाष्य	? यादवप्रकाश	"
१०७ „ टीका	? शंकरभट्ट	हि.एस.
१०८ छंदोविमर्श	स्वामी चन्दनदास	प्रकाशित
१०९ छंदोविलास	श्रीकण्ठ	सी सी.
११० छंदोविवेक		"
१११ छंदोवृत्तरत्न		"
११२ छन्दोवृत्ति	श्रीनिवास	"
११३ छन्दोव्याख्या		अनूप
११४ छन्दश्शतक	हर्षकीर्ति	राजस्थान के जैन शास्त्र- भण्डार, जयपुर भा. ४
११५ छन्दोऽष्टादशक	रूपगोस्वामी	सी. सी. [उल्लेख-धैर्यव- तोयिणी]
११६ छन्दोहृदयप्रकाश		सी सी.
११७ जगद्विजयछन्दः		प्रकाशित
११८ जगन्मोहनवृत्तशतक	चामुदेवब्रह्मपण्डित	हि एस.
११९ जनाश्रयो	जनाश्रय	"
१२० पिङ्गलछन्द शास्त्रसंग्रह		मधुसूदन पुस्तकालय, लाहोर सूचीपत्र
१२१ पिङ्गलछन्द सूत्र	पिङ्गल	प्रकाशित

क्रमांक	नाम	कर्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
१२२	„ टीका [मिनाक्षरा]	„ जगन्नाथमिथ	रा प्रा प्र., जोधपुर
१२३	„ टीका	„ दामोदर	हि. एत.
१२४	„ टीका	„ पद्मप्रभमूर्ति	सी सी
१२५	„ „	पिगल, पञ्च कवि ?	सी सी
१२६	„ „	„ भास्कराचार्य	„
१२७	„ „	„ मधुरानाथ शुक्ल	„
१२८	„ „	„ मनोहरकृष्ण	„
१२९	„ „	„ यादवप्रकाश	हि. एत.
	[भाष्यराश]		
१३०	„ „	„ कामनाचार्य	सी सी.
१३१	„ „	„ वेदांगराज	„
१३२	„ „	„ धीरेंद्र शर्मा S/o मकरध्वज	हि. एत.
१३३	„ „	„ हुतायुध	प्रकाशित
	[मूलमञ्जीवनी]		
१३४	पिगलसारीठार		जैन-प्रपावली
१३५	प्रस्तारोचितमणि	चित्तामणि बंसन	मधुसूदन पुराणानन्द, तारोर

नाम	वर्तक एवं टीकाकार	उल्लेख
१४७	" "	" पद्मपति सी. सी
१४८	" "	" यादवेन्द्र बड़ोदा पेटलॉग
	[पिंगलद्वंद्वीयवृत्ति]	[दशावधान भट्टा- चार्य उपनाम]
१४९	" "	" रविकर S/o प्रकाशित
	[पिंगलसारविकाशिनी]	[धीपति, हरिहर उप नाम]
१५०	" "	" राजेन्द्रवशावधान सी. सी
	[पिंगलतत्त्वप्रकाशिका]	
१५१	" "	" लक्ष्मीनाथ भट्ट प्रकाशित
१५२	[पिंगलप्रदीप]	
	" " [विद्वग्मनोरमा]	" विद्यानन्दमिथ मिथिला केटलॉग
१५३	" "	" विद्वन्नाथ S/o डि. एस. सी. सी. मिथिला
	[पिंगल प्रकाश]	विद्यानिवासा केटलॉग,
१५४	" "	" बंशीधर S/o/कृष्ण सी. सी.
	[पिंगलप्रकाश]	
१५५	" "	" धीपति मिथिला केटलॉग
१५६	" "	" बाणीभाष हि. एस. सी. सी.
१५७	प्राकृत पिंगलसार	हरिप्रसाद अनूप, सी. सी.
१५८	" टीका	" "
१५९	अन्धकौमुदी	शोपीनाथ अनूप,
१६०	रत्नमञ्जुषा	प्रकाशित
१६१	" भाष्य	"
१६२	वाग्यद्वलज	कुलभञ्जन "
१६३	" टीका	" देवीप्रसाद "
	[वरवर्णिनी]	
१६४	बाणीभूषण	दामोदर "
१६५	युक्ताकल्पद्रुम	जयगोविन्द हि. एस
१६६	युक्ताकारिका	नारायण पुरोहित "
१६७	युक्ताकौमुद	विद्वन्नाथ " सी. सी.
१६८	युक्ताकौमुदी	जगद्गुरु " "
१६९	"	रामचरण " "
१७०	युक्ताकौस्तुभ-टीका	शिवराम S/o/कृष्णराम सी. सी.

क्रमांक	नाम	वर्त्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
१७१	वृत्तचन्द्रोदय	भास्कराध्वरिन्	हि. एस्, सी, सी,
१७२	वृत्तचन्द्रिका	रामदयालु	„ „, मधुसूदन०
१७३	वृत्तचिन्तामणि	गोपीनाथ बाधीच	रा. प्रा. प्र. लक्ष्मीनाथ- सग्रह ज्ञानपुर
१७४	वृत्तचिन्तारत्न	ज्ञानतराज पण्डित	हि. एस्,
१७५	वृत्ताभासिसमुच्चय	चिरहाक	प्रकाशित
१७६	„ टीका	„ गोपाल	„
१७७	वृत्तातरङ्गिणी	कृष्ण	हि. एस्,
१७८	वृत्तदर्पण	गंगाधर	सी सी.
१७९	„	जानकीनन्द कथीन्द्र S/o रामानन्द	विधिलत केंटलॉग
१८०	„	भीष्ममिश्र	„ हि. एस्, सी सी,
१८१	„	मणिमिश्र	सी सी,
१८२	„	मधुरानाथ	सी सी
१८३	„	बेकटाचार्य	सी सी,
१८४	„	सीताराम	हि. एस्,
१८५	वृत्तदीपिका	कृष्ण	„ सी. सी,
१८६	„	बेकटेश	„
१८७	वृत्तद्विभक्ति	महाबंश S/o गंगाधर	बडोदा के हि एस्, सी सी
१८८	„	गंगाधर	हि एस्,
१८९	वृत्तप्रत्यय	धकरदयालु	„ सी. सी,
१९०	वृत्तप्रत्ययकीमुदी		सी सी
१९१	वृत्तप्रदीप	जनार्दन	„ हि एस्,
१९२	„	बन्नीनाथ	हि एस्,
१९३	वृत्तमणिकोष	श्रीनिवास	प्रकाशित
१९४	वृत्तमणिमाला	गणपतिशास्त्री	हि. एस्
१९५	वृत्तमणिमालिका	श्रीनिवास	हि एस्,
१९६	वृत्तमहोदधि		बडोदा के टेलॉग
१९७	वृत्तमणिमाला	गुप्तेज	सी. सी
१९८	वृत्तमाला	वत्सभास्त्रि	„ हि एस्,
१९९	„	विद्यपाक्षपण्डित	हि एस्,
२००	वृत्तमुक्तावली	कृष्ण भट्ट	प्रकाशित
२०१	„	कृष्णराम	हि एस्, सी सी
२०२	„	गंगादास	„ „

क्रमांक	नाम	कर्त्ता एवं टीकाकार	चल्लेख
२०३	वृत्तमुक्तावली	दुर्गादत्त	मिथिला केटलॉग
२०४	"	मल्लारि	अनूप, रा प्रा प्र जोधपुर
२०५	" टीका [तरस]	"	" बडोदा केटलॉग
२०६	" "	शंकर शर्मा	सी सी, केटलॉग ऑफ संस्कृत मेग्युलिप्टस् इन अवध भा० २१, सन् १८६०
२०७	"	हरिध्यास मिश्र	हि एस, सी सी,
२०८	वृत्तमुक्तसारावली	भृगुराधार्य	हि एस
२०९	वृत्तमौक्तिक	चन्द्रशेखर भट्ट	अनूप सी सी, हि. एस
२१०	" टीका [कुत्तरोद्धार]	" लक्ष्मीनाथ भट्ट	अनूप
२११	" टीका [सुर्ममोष]	" मेघविजय	विनयसागर सप्रह, कोटा
२१२	वृत्तरत्नाकर	केदार भट्ट	प्रकाशित
२१३	" टीका 'नीका'	अयोध्याप्रसाद	हि एस सी सी,
२१४	"	" आत्माराम	हि एस, सी. सी,
"	"	" का भासल	रा प्रा प्र, जोधपुर
२१५	"	" वरुणाकरदास S/o कुसुपालिका	बडोदा केटलॉग
२१७	"	" कृष्णराम	सी सी
२१८	"	" कृष्णवर्मन	हि एस,
२१९	"	" कृष्णसार	हि एस,
२२०	"	" क्षेमहृत्	रा प्रा प्र. जोधपुर, सी सी,
२२१	"	" गोविन्द भट्ट	हि एस सी सी
२२२	"	" चिन्तामणि	सी सी
	[वृत्तपुष्पप्रकाशन]		
२२३	" " [मुष्पा]	" चिन्तामणि पण्डित	हि एस, सी सी
२२४	" "	" श्रीरामणि दीक्षित	" "
२२५	"	" जगन्नाथ S/o राम	सी सी
	[वृत्तरत्नाकरवार्तिक]		
२२६	" "	" जनार्दन विबुध	हि एस, सी सी, बडोदा केटलॉग

क्रमांक	नाम	कर्ता एव टीकाकार	उल्लेख
२५०	वृत्तरत्नाकर टीका [अथर्दोषिका]	केदारभट्ट, सदाशिव S/o भनूप विश्वनाथ	
२५१	" "	" सारस्वत सदाशिव मुनि	हि. एस. सी. सी.
२५२	" "	" सुल्हण S/o भास्कर	" " , भनूप
	[मुकविहृदयामन्दिनी]		
२५३	" "	" सोमपण्डित	" "
२५४	" "	" सोमचन्द्रयणि	" " , भनूप
	[मुग्धबोधकरी]		रा. प्रा. प्र. जोधपुर
२५५	" "	" हरिभास्कर S/o भापाजी भट्ट	" , भनूप
	[वृत्तरत्नाकरसेतु]		
२५६	वृत्तरत्नाकर, भवचूरि	" ?	भनूप,
२५७	" बालाबोध	" मेरुसुन्दर	रा. प्रा. प्र. जोधपुर
२५८	वृत्तरत्नाष्टय	नरसिंह भागवत P/o रामचन्द्र योगीन्द्र	हि एस,
२५९	वृत्तरत्नावली	कालिदास	"
२६०	"	कृष्णराम	"
२६१	"	विरजीव भट्टाचार्य	भनूप, मिथिला और बड़ोदा केटलॉग
२६२	"	यशवंतसिंह	हि. एस. सी. सी. रा. प्रा. प्र. जोधपुर
२६३	"	बुगदित	" "
२६४	"	नारायण	" "
२६५	"	मणिराम S/o वसंत	सी. सी.
२६६	" टीका [वदिका]	" कालिकाप्रसाद	"
२६७	" "	मिश्र सानन्द	हि एस, सी. सी.
२६८	" "	रविकर	" "
२६९	"	राजनूडामणि	" " [उल्लेख- काव्यपरंपरा]
२७०	"	रामदेव चिरंजीव	" "
२७१	"	रामास्वामी दास्यी	"
२७२	"	बेकटेश S/o सरस्वती	प्रकाशित
२७३	वृत्तरत्नाष्टय	शिव P/o रामानुजाचार्य	सी. सी.

क्रमांक	नाम	कर्ता एवं टीकाकार	उल्लेख
२६६	श्रुतबोध-टीका	कालिदास, नयविमल	हिमांशुविजयजी ना लेखी
३००	" "	नाताजी S/O हरजी	सी सी,
३०१	" "	" नेतृसिंह	रा. प्रा. प्र. जोधपुर
३०२	" "	" मनोहर शर्मा	हि. एस. सी. सी.
	[सुबोधिनी]		रा. प्रा. प्र. जोधपुर
३०३	" "	" भाषव S/O गोविंद	"
	[ज्योत्स्ना]		
३०४	" "	" मेघचन्द्र	हि. एस. [सी. सी. में कर्ता का नाम नहीं है और P.O के स्थान पर मेघचन्द्र का नाम है]
३०५	" "	" लक्ष्मीनारायण	हि. एस. सी. सी.
३०६	" "	" वज्ररत्न भट्टाचार्य	प्रकाशित
३०७	" "	" शरदचि: ?	सी. सी.
३०८	" "	" वासुदेव	हि. एस. सी. सी.
	[श्रुतबोधप्रबोधिनी]		
३०९	" "	" शुक्रदेव	" "
३१०	" "	" हंसराज	"
	[बालबोधिनी]		
३११	" "	" हर्यकीर्ति	" "
३१२	" [मानवबोधिनी]	"	प्रकाशित
३१३	समवृत्तसारः	नीलकण्ठाचार्य	हि. एस. सी. सी.
३१४	सुवृत्तलक्षणम्	क्षेमेश्वर	प्रकाशित
३१५	संगीतराज-पाठपरत्नकोष	महाराणा कुंभा	तृतीय उल्लास
३१६	संगीत सह विंगल		जैन ग्रन्थावली
३१७	स्वयम्भू छन्द	स्वयम्भू	प्रकाशित
पुराणादि ग्रंथ			
३१८	अग्निपुराण		अध्याय ३२८-३३५
३१९	गण्डपुराण पूर्वखण्ड		" २०७-२१२
३२०	नारदपुराण पूर्वखण्ड		" ५७ वां
३२१	विल्पुधर्मोत्तर तृतीयखण्ड		" ३ रा
३२२	मृहत्संहिता	धराहमिहिर	" १४वां
३२३	नाट्यशास्त्र	भरताचार्य	अध्याय १४-१५

सहायक-ग्रन्थ

१	अग्निपुराण	
२.	अथर्ववेदीय धृतसर्पानुक्रमणी	
३.	अनघंराघवनमाटक	मुरारि
४.	अरिष्टयधस्तोत्र	रूपगोस्वामी
५	अष्टागहृदय	वाभट
६.	उपनिषद् सूत्र	गार्ग्य
७.	श्रृग्यजुप् परिशिष्ट	
८	श्रृग्वेद के मन्त्रद्वय कवि	बन्नीप्रसाद पचोली
९	श्रृग्वेद में गीतस्व	"
१०.	ए हिन्दू ऑफ बलासिकल संस्कृत लिटरेचर	एम्. कृष्णभाचारी
११	ए हिन्दू ऑफ संस्कृत लिटरेचर	गार्ग्य ए. मेकडॉवल
१२.	ए हिन्दू ऑफ संस्कृत लिटरेचर	कीय
१३.	ऐतरेय ब्राह्मण	
१४.	कविकल्पलता	देवेश्वर
१५	कविदर्पण	स० एच. डी. वेल्हणकर
१६	कावरोली का इतिहास	प्री० कण्ठमणि शास्त्री
१७	काटक संहिता	
१८.	कामसूत्रम्	वात्स्यायन
१९.	काव्यादश	दण्डी
२०	किरातागुनीय काव्य	भारवि
२१.	कुमारसम्भव काव्य	कालिदास
२२	कीर्तिमति महाभ्राह्मण	
२३.	गोपालक्षण	स० एच डी वेल्हणकर
२४	गीतगोविन्द	जयदेव
२५	गोपाललीलामहाकाव्य	स० देवनराम शर्मा
२६.	गोवर्धनोद्धरण स्तोत्र	रूपगोस्वामी
२७.	गोविन्दविदवावली	"
२८.	गोरीदत्तस्तोत्र	शंकराचार्य
२९.	छन्द कोश	स० एच. डी वेल्हणकर
३०.	छन्द सूत्र-हृत्सायुध टीका सहित	पिंगल, हृत्सायुध
३१.	छन्द सूत्र-टिप्पणी	धनन्तराम शर्मा
३२.	छन्द सूत्रभाष्य	यादवप्रसाद

३३.	छन्दोमुद्रासन	जयकीर्ति, सं० एच. डी. घेल्हणकर
३४.	छन्दोमुद्रासन स्वोपज्ञटीकोपेत	हेमचन्द्राचार्य
३५.	छन्दोमञ्जरी टीकासहित	गंगादास
३६.	छन्दोमञ्जरी जीवन	चन्द्रशेखर भारती
३७.	छान्दोग्योपनिषद्	
३८.	जयदामन	एच. डी. घेल्हणकर
३९.	जयदेवच्छन्द	सं० " "
४०.	जनाधर्योछन्दोविधिति	जनाधर्य
४१.	जैन ग्रन्थवाचसो	
४२.	जैमिनीय ब्राह्मण	
४३.	ताण्ड्यमहाब्राह्मण	
४४.	सैत्तिरीय ब्राह्मण	
४५.	दिग्विजय महाकाव्य	महो० मेघविजय
४६.	देवानन्द-महाकाव्य	"
४७.	नन्दाहरणस्तोत्र	रूपगोस्वामी
४८.	नन्दीसर्वादिचरितस्तोत्र टीका	"
४९.	नाट्यशास्त्र	भरताचार्य
५०.	नारदपुराण	
५१.	निरुक्त-दुर्णवृत्तिसहित	यास्क, दुर्गासिंह
५२.	पाठधरत्नकोष	महाराणा कुम्भा
५३.	पाणिनीयशिक्षा	पाणिनि
५४.	पिंगलप्रदीप	सदमीनाथ भट्ट
५५.	प्राकृतपिंगलोद्योत	चन्द्रशेखरभट्ट
५६.	प्राकृतपिंगलम्	डा० भोलाशंकर घ्यास
५७.	प्राचीन भारत में गणतांत्रिक व्यवस्था	बद्रीप्रसाद पंढरी
५८.	पृहत्संहिता	बराहमिहिर
५९.	भट्टिकाव्य	भट्टि
६०.	भागवतपुराण १० मस्कन्ध	
६१.	भारतेन्दु ग्रन्थवाचसो भा० ३	सं० धनरत्नदास
६२.	महाभारत शान्तिपर्व	
६३.	मात्रिक-रुद्रर्षी का विकास	डा. शिवनन्दनप्रसाद
६४.	मालतीमाधव	भवभूति
६५.	मुकुन्दमुक्तावलीस्तोत्र	रूपगोस्वामी
६६.	मंत्रायणोत्तरिता	
६७.	मुक्तिप्रबोध	महो० मेघविजय
६८.	रघुवंश	बालिदास

६६.	रगश्रीडास्तोत्र	रूपगोस्वामी
७०.	रसिकरञ्जनम्	रामचन्द्र भट्ट
७१.	रासश्रीडास्तोत्र	रूपगोस्वामी
७२.	रोमावम्बोदतक	रामचन्द्र भट्ट
७३.	वत्सचारणादिस्तोत्र	रूपगोस्वामी
७४.	वर्षाशरद्विहारचरितस्तोत्र	"
७५.	वत्सलभवदशवृक्ष	स० पो० कञ्जमणि शास्त्री
७६.	वस्त्रहरणस्तोत्र	रूपगोस्वामी
७७.	वाग्वत्सलम्	हु खभञ्जन कवि
७८.	वाजसनेयी संहिता	
७९.	वाणीनूपण	वामोदर
८०.	वार्त्ता साहित्य एक ग्रन्थम्	डॉ० हरिहरनाथ टंडन
८१.	विजयदेवमाहारम्	श्रीवत्सभोपाध्याय
८२.	विज्ञप्तिपत्री	समयमुन्दरोपाध्याय
८३.	विज्ञप्तिपत्र-संग्रह प्रथम भाग	स० मुनि जिनविजय
८४.	वृत्तजातिसमुच्चय	स० हरिदामोदर वेल्हणकर
८५.	वृत्तमुक्तावली	देवयि कृष्णभट्ट
८६.	वृत्तरत्नाकर नारायणीटीकायुक्त	वेदारभट्ट, नारायणभट्ट
८७.	वेदविद्या	डॉ० वामुदेवशरण अप्पास
८८.	वैदिक छन्दोमीमासा	मुषिण्ठर श्रीमांसक
८९.	वैदिक दर्शन	डॉ० फतहसिंह
९०.	वैदिक-साहित्य	रामगोविन्द त्रिवेदी
९१.	शतपथ ब्राह्मण	
९२.	सिमुपालवध	मयकवि
९३.	श्रुतबोध	कालिदास
९४.	शृङ्गारकलोल	रायभट्ट
९५.	मुदर्शनादिमोचनस्तोत्र	रूपगोस्वामी
९६.	मुवृत्ततिलक	क्षोमेन्द्र
९७.	सौन्दर्यसहस्री	दाकराचार्य
९८.	स्वयमुद्भव	स० हरि वामोदर वेल्हणकर
९९.	सप्तसंग्रहानमहाकाव्य	महो० मेघविजय
१००.	सभाष्या रत्नमञ्जूषा	स० हरि वामोदर वेल्हणकर
१०१.	संस्कृत साहित्य का इतिहास	बीस
१०२.	"	वाचस्पति गीरोता
१०३.	सरस्वतीकण्ठाभरण-टीका	सहमीनाथ भट्ट
१०४.	हंसदूतम्	रूपगोस्वामी
१०५.	हरिमोडे-स्तोत्र	दाकराचार्य
१०६.	हिमांशुविजयजी मां लेखी	

सूची-पत्र

- 1 A descriptive Catalogue of Sanskrit and Prakrita Manuscripts in the Library of the Bombay Branch of the Royal Asiatic Society H D Velankar
- 2 An alphabetical list of manuscripts in the Oriental Institute, Baroda. Raghavan Nambiyar Shiromani
- 3 A descriptive catalogue of manuscripts in Mithila Kashi Prasad Jayaswal
- 4 A descriptive Catalogue of the Sanskrit and Prakrit Manuscripts the Library of the University of Bombay H D Velankar
- 5 कन्नड प्रांतीय साह्यग्रणीय ग्रन्थ सूची के मुजबली शास्त्री
- 6 Catalogue of Anupa Samskrita Library, Bikaner Dr C Kunhan Raja
- 7 Catalogue of Samskrita manuscripts in Avadha
Part-15, 1882
Part-21, 1890
8. Catalogus Catalogum T. Aufrecht
- 9 मधुसूदन पुस्तकालय, लाहौर, का सूचीपत्र
10. राजस्थान के जैन शास्त्रग्रन्थ डॉ कस्तूरचंद कारतलोवाल
11. राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर का सूचीपत्र
- 12 राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान शाखा कार्यालय, धितोड़, यति बालचन्द्रजी संग्रह का सूचीपत्र
- 13 राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान शाखा-कार्यालय, जयपुर, सशमीनाथ बाधीच संग्रह का सूचीपत्र
14. राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान शाखा-कार्यालय, बीकानेर का सूचीपत्र
- 15 सहाय्य बोर्डिंग बनारस, रिपोर्ट सन् १९०६-१९१७

राजस्थान पुरातन ग्रन्थमाला में प्रकाशित

(क) संस्कृत-प्राकृत-ग्रन्थ

१. प्रमाणमञ्जरी, (ग्रन्थाङ्क ४), तार्किक चूडामणि सर्वदेवाचार्य कृत; संपादक - बलमद्र, वामनमद्र कृत टीकाव्योपेत; संपादक - मोमासाय्यायकेमरी पं० पट्टाभिराम शास्त्री, विद्यासागर (७-१०६), १९५३ ई०। मू. ६.००
२. वाग्भटाज-रचना, (ग्रन्थाङ्क ५), महाराजा सवाई जयसिंह कारित; संपादक - स्व० पं० केदारनाथ ज्योतिषिद् (८-२८), १९५३ ई०। मू. १.७५
३. महविकृतवैभवम् भाग १, (ग्रन्थाङ्क ६), स्व० पं० मधुसूदन घोषा प्रणीत, म.म. पं० गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी द्वारा सम्पादित एवं हिन्दी व्याख्या सहित (५६-२६१), १९५६ ई०। मू. १०.७५
४. महविकृतवैभवम् (मूलभाषा), (ग्रन्थाङ्क ५६), स्व० पं० मधुसूदन घोषा प्रणीत, संपादक - पं० प्रद्युम्न घोषा (१६-१३७-१०), १९६१ ई०। मू. ४.००
५. तर्कसंग्रह, (प्र० ६), प्रभंमद्र कृत टीकाकार - दामाचन्द्राण गण्डि; संपादक - डा० जितेंद्र जेटली, (१७-७४), १९५६ ई०। मू. ३.००
६. कारकसव्योद्योत, (प्र० १८), पं० रमसनन्दी कृत, वातान्नव्याकरणपरक रचना; संपादक - डा० हरिप्रसाद शास्त्री (२२-३४), १९५६ ई०। मू. १.७५
७. वृत्तिवीथिका, (प्र० ७), मोनिकृष्णमद्र कृत; संपादक - स्व० पं० पुरुषोत्तम शर्मा चतुर्वेदी, साहित्याचार्य (६-४४-१२), १९५६ ई०। मू. २.००
८. कृष्णगीति, (प्र० १६), कवि सोमनाथ विरचित, राधाकृष्ण मन्त्राधी प्रेमकाव्य; संपादिका - डॉ० कु० प्रियकाशा घाट (२७-३२), १९५६ ई०। मू. १.७५
९. शब्दरत्नप्रदीप, (प्र० १६), प्रजातकतृक, बह्मर्षक-वाग्देवीदा; संपादक डॉ० हरिप्रसाद शास्त्री (१२-४४), १९५६ ई०। मू. २.००
१०. मुक्तसंग्रह, (प्र० १७), प्रजातकतृक; संपादिका - डॉ० कु० प्रियकाशा घाट (६-४५), १९५६ ई०। मू. १.७५
११. भृङ्गारहासवली, (प्र० १५), श्री हर्षवर्मा विरचित संस्कृत-गीतकाव्य; संपादिका - डॉ० कु० प्रियकाशा घाट (१०-८२) १९५६ ई०। मू. २.७५
१२. राजविमोक्ष महाकाव्य, (प्र० ८), महाकवि उदयराज प्रणीत, ब्रह्मदावाद के गुप्ततान महामुद्र वेण्वा का चरित्र-वर्णन; संपादक - श्री गोगामनारायण बहुरा (२८-४४) १९५६ ई०। मू. २.२५

- १३ सङ्गपाणिजिजय महाकाव्य, (प्र० २०), भट्ट लक्ष्मीधर विरचित; उपा-परिणाम सबधी भयावधि अज्ञात काव्य; संपादक - के. का. शास्त्री (७-११२), १९५६ ई० ।
मू. ३.५०
- १४ नृत्यरत्नकोश (प्रथम भाग), (प्र० २५), महाराणा कृष्णकर्ण कृत, संगीतराज-रत्न-कोषा-संगत; संपादक - प्रो० रसिकलाल छो० परीख एव डॉ० कु० प्रियवाला शाह (७-१४४), १९५७ ई० ।
मू. ३.७५
- १५ उक्तिरत्नाकर, (प्र० १२), साधुसुन्दर गणि विरचित, संस्कृत एव देशी शब्दकोष; संपादक - मुनि जिनविजय पुरातत्त्वाचार्य (१०-११८), १९५७ ।
मू. ४.७५
- १६ दुर्गापुष्पाञ्जलि, (प्र० २२), म. स. प० दुर्गाप्रसाद द्विवेदी प्रणीत; संपादक प० श्री गङ्गाधर द्विवेदी (३६-१४७), १९५६ ई० ।
मू. ४.२५
- १७ कर्णकुतूहल एव कृष्णलोलामृत, (प्र० २६), महाकवि भोलानाथ, जयपुर नरेश सवाई प्रतापसिंह समाश्रित विरचित, संपादक - श्री गोपालनारायण बहुरा (२५-३०), १९५७ ई० ।
मू. १.५०
- १८ ईश्वरविलास महाकाव्यम्, (प्र० २९), कविकलानिधि श्रीकृष्णभट्ट विरचित, जयपुर निर्माता सवाई जयसिंह द्वारा अनुष्ठित अद्वैतमेष यज्ञ का प्रत्यक्ष वर्णन एवं जयपुर राजपूत-इतिहास सम्बन्धी अनेक संस्मरण संश्लिष्ट महाकाव्य, संपादक - कविसिरोमणि भट्ट श्री मयुरानाथ शास्त्री (७६-२९३), १९५६ ई० ।
मू. ११.५०
- १९ रसदीपिका, (प्र० ४१), कवि विद्याराम प्रणीत, संस्कृत रसालङ्कारपरक सरल एव लघु कृति, संपादक - श्री गोपालनारायण बहुरा (१२-८०) १९५६ ई० । मू. २.००
- २० पद्यमुक्तावली, (प्र० ३०), कविकलानिधि श्रीकृष्णभट्ट विरचित, अनेक साहित्यिक एव ऐतिहासिक पद्य संग्रह; संपादक - कविसिरोमणि भट्ट श्री मयुरानाथ शास्त्री (२०-१४६), १९५६ ई० ।
मू. ४.००
- २१ काव्यप्रकाश भाग १, (प्र० ४६), मूल ग्रन्थकार मम्मटाचार्य के समकालीन भट्ट सोमेश्वर कृत 'काव्यादर्श' संकेत सहित, जेसलमेर के जैन ग्रन्थ-मठारों से प्राप्त प्राचीन प्रति के आधार पर संपादित; संपादक - श्री रसिकलाल छो० परीख (४-३५२), १९५६ ई० ।
मू. १२.००
- २२ काव्यप्रकाश भाग २, (प्र० ४७), संपादक - श्री रसिकलाल छो० परीख (२२-११०-६४), १९५६ ई० ।
मू. ८.२५
- २३ वस्तुरत्नकोश, (प्र० ४५), अज्ञातकृत, संस्कृत का सामान्यज्ञान-कोश; संपादक - डॉ० कु० प्रियवाला शाह (६-६४), १९५६ ई० ।
मू. ४.००
- २४ वराहवृक्षधनु, (प्र० २३), म. स. प० दुर्गाप्रसाद द्विवेदी कृत, रामचरित्रात्मक संस्कृत-काव्य, संपादक - श्री गङ्गाधर द्विवेदी (४-१५६), १९६० ई० ।
मू. ४.००
- २५ श्री भुवनेश्वरीमहास्तोत्रम् (प्र० ५४), पृथ्वीधराचार्य विरचित, कवि वचनाम प्रणीत भाव्यान्वित, पूजा-गुरुपाङ्गादि संश्लिष्ट, संपादक - श्री गोपालनारायण बहुरा (१-१५६), १९६० ई० ।
मू. ३.७५

(ख) राजस्थानी हिन्दी ग्रन्थ

१. कान्हडदे प्रबन्ध, (प्र. ११) : महाकवि पद्मनाभ विरचित, सुल्तान भलाउद्दीन खिलजी के द्वारा जालोर दुर्ग के प्रतिष्ठ घेरे आदि का वर्णन; सम्पादक - प्रो. के. बी. व्यास (३३+२७५) १९५३ ई.।
मू. १२.२५
२. क्यामला रासा, (प्र. १३) : कवि जान कृत, फतेहपुर के नवाब भलफखान तथा राज-पूताने के क्यामलानी मुस्लिम राजपूतों के उद्गम और इतिहास का रोचक वर्णन; सम्पादक - डॉ. दशरथ शर्मा और भगवन्त भवरलाल नाहटा (५०+१२८) १९५३ ई.
मू. ४.७५
३. लावा रासा, (प्र. १४) अपर नाम कूर्मवधायशप्रकाश, गोपालदान कविमा कृत, नरुका (कछवाहा) राजपूतों और पिढारी पठानों के बीच हुए पाँच युद्धों का समकालीन ओजस्वी वर्णन, सम्पादक - श्री महताबचन्द खारेड, (१९+८६) १९५३ ई.।
मू. ३.७५
४. बाँकीदास री हयात, (प्र. २१) बाँकीदास कृत, राजस्थान के प्राचीन ऐतिहासिक विवरणों का प्रमुख ग्रन्थ; सम्पादक - श्री नरोत्तमदास स्वामी (९+२१८) १९५६ ई.।
मू. ५.५०
५. राजस्थानी साहित्य सग्रह भाग १, (प्र. २७) राजस्थानी भाषा में रचित प्रतिनिधि गद्य कथा सग्रह; सम्पादक - श्री नरोत्तमदास स्वामी (१४+५२) १९५७ ई.। मू. २.२५
६. राजस्थानी साहित्य सग्रह भाग २, (प्र. ५२) तीन ऐतिहासिक घातिका; बगदावल, प्रतापसिंह महोकर्मसिंह और वीरमदे सोनगिरा; सम्पादक - दुखोत्तमलाल मेनारिया; (२४+१०८) १९६० ई.।
मू. २.७५
७. कवीन्द्र कल्पलता, (प्र. ३४) : मुगल बादशाह शाहजहाँ के समकालीन कवीन्द्राचार्य सरस्वती कृत; सम्पादिका - रानी लक्ष्मीकुमारी जूझावल (७+५५+५) १९५८ ई.
मू. २.००
८. जुगलविता, (प्र. ३२) कुशलगढ़ के महाराजा पृथ्वीसिंहजी अपरनाम कवि वीरल कृत; सम्पादिका - रानी लक्ष्मीकुमारी जूझावल, (५+५०) १९२० ई.। मू. १.७५
९. भगतमाता, (४३) चारण ब्रह्मदास दादूपंथी कृत; सम्पादक - श्री उदयराम उज्जवल (८+६४) १९५९ ई.।
मू. १.७५
१०. राजस्थान पराक्रम मन्दिर के हस्तलिखित ग्रन्थों की सूची भाग १, (प्र. ४२) ई. स. १९५६ तक संगृहीत ४००० ग्रन्थों का वर्गीकृत सूचीपत्र; सम्पादक - मुनि जिनविजय, पुराणरवाचार्य, (२+१०२+२०) १९५९ ई.।
मू. ७.५०
११. राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान के हस्तलिखित ग्रन्थों की सूची, भाग २, (प्र. ५१), ७८५५ तक के ग्रन्थों का सूचीपत्र; सम्पादक - श्री गोपामनारायण बहटा, एम.ए., (२+१९१) १९६० ई.।
मू. १२.००

- १२ राजस्थानी हस्तलिखित ग्रन्थ सूची भाग १, (प्र ४४) मार्च १९५८ तक के ग्रंथों का विवरण, सम्पादक - मुनि जिनविजय, पुरातत्त्वानाय, (३०२+१९), १९६० ई., मू ४५०
- १३ राजस्थान हस्तलिखित ग्रन्थ सूची भाग २, (प्र ५८) १९५८-५९ के संगृहीत ग्रंथों का विवरण, सम्पादक - पुरुषोत्तमनाथ मेनारिया (२+६१) १९६१ ई. मू २७५
- १४ स्व पुरोहित हरिनारायणजी विद्याभूषण प्रथम सप्रह, (प्र ५५), सम्पादक - श्री गोपालनारायण बहुरा और श्री लक्ष्मीनारायण गोस्वामी (८+१६३+३८) १९६१ ई. मू ६२५
- १५ मुहता नैणसी री ख्यात भाग १, (प्र ४८), मुहता नैणसी कृत साधारणतः राजस्थान देशीय एवं मुख्यतः (मारवाड़) राज्य का प्रथम प्रामाणिक व ऐतिहासिक ग्रन्थ, सम्पादक मा श्री बदरीप्रसाद साकरिया (११+३६५), १९६० ई. मू ८५०
- १६ मु० नै० री ख्यात भाग २, (प्र ४९), मा श्री बदरीप्रसाद साकरिया (११+३४३) १९६२ ई. मू ९५०
- १७ मु० नै० री ख्यात भाग ३, (२+२६४) १९६४ ई. ,, ,, मू ८००
- १८ सूरजप्रकाश भाग १, (प्र ५६) धारण कच्छीदान कविता कृत, सामान्य रूप से मारवाड़ का ऐतिहासिक विवरण और विशेषतः जोधपुर के महाराजा भगवत्सिंहजी व सरबलम्बदान के बीच हुए अहमदाबाद के युद्ध का समकालीन वर्णन, सम्पादक - श्री सीताराम लालस (२०+३१०+३७), १९६१ ई. मू ८००
- १९ सूरजप्रकाश भाग २, (प्र ५७), सम्पादक - श्री सीताराम लालस (९+३६३+६१) १९६२ ई. मू ९५०
- २० , भाग ३, (प्र ५८) , , (९७+२७५+८४), १९६३ ई. मू ९७५
- २१ नेहतरंग, (प्र ६३) बुदी नरेश राय बुधसिंह हाडा कृत, काव्य शास्त्रीय ग्रन्थ, सम्पादक - श्री रामप्रसाद दाधीच, (३२+१२०) १९६१ ई. मू ४००
- २२ मत्स्य प्रदेश की हिन्दी साहित्य की देन, (प्र ६६) लेखक डॉ० मोतीलाल गुप्त, पूर्वी राजस्थान में हस्तलिखित ग्रंथों की खोज विषयक शोध प्रबन्ध (९+२९६), १९६० ई. मू ७००
- २३ राजस्थान में संस्कृत साहित्य की खोज (प्र ३१) अनु० श्री ब्रह्मदत्त त्रिवेदी, प्रोफसर एस प्रार भाण्डारकर द्वारा हस्तलिखित संस्कृत ग्रंथों की खोज में मध्यप्रदेश व राजस्थान में (१९०५-६) में की गई खोज की रिपोर्ट का हिन्दी अनुवाद (२+७७+१९), १९६३ ई. मू ३००
- २४ समदर्शी भाषाय हरिमद (प्र ६८) लेखक-पं० सुखलालजी, हिन्दी अनुवादक-शान्ति-लाल म जैन, राजस्थान के गणमाय साहित्यकार एवं विचारक भाषाय हरिमद का जीवन-चरित्र और दर्शन, (८+१२२), १९६३ ई० मू ३००

२५. वीरघाण, (प्र. ३३) : डाढी बादर कृत, जोधपुर के वीर शिरोमणि वीरमजी राठौड संघी रचना; सम्पादिका-रानी लक्ष्मीकुमारी धूँडावत
(१६+६२+११२), १९६० ई० । मू. ४.५०
२६. वसन्त-विलास फागु, (प्र. ३६) : अज्ञातकर्तृक, १३वीं शताब्दी का एक प्रचीन राजस्थानी भाषा निबद्ध शृंगारिक काव्य; सम्पादक एम सी. मोदी,
(१४+११६), १९६० ई० । मू. ५.५०
२७. वसन्तीहरण, (प्र. ७४) : महाकवि सायाजी झुला कृत, राजस्थानी भक्तिकाव्य;
सम्पादक-पुरुषोत्तमलाल मेनारिया (५२+११३) १९६४ ई० । मू. ३.५०
२८. बुद्धि-विलास, (प्र. ७३) : बखतराम माह कृत, जोधपुर के संस्थापक सवाई जयसिंहजी का समकालीन ऐतिहासिक वर्णन; सम्पादक-श्री पद्मधर पाठक;
(२४+१७६), १९६४ ई० । मू. ३.७५
२९. रघुवर्जसप्रकाश, (प्र. ५०) : चारण कवि किसनाजी भाड़ा कृत, राजस्थानी भाषा का काव्यशास्त्रीय ग्रन्थ; सम्पादक-श्री सीताराम लालस;
(२०+३७६), १९६० ई० । मू. ८.२५
३०. संस्कृत व प्राकृत ग्रन्थों का सूचीपत्र भाग १ (प्र. ७१) : राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर सग्रह का स्वरित रोमन-लिपि में ४००० का सूचीपत्र, अत में विशिष्ट ग्रन्थों के उद्धरण; सम्पादक-पद्मश्री मुनि जिनविजय पुरातत्वाचार्य;
(१६+८६+३७३+१५६), १९६३ ई० । मू. ३७.५०
३१. संस्कृत व प्राकृत ग्रन्थों का सूचीपत्र भाग २ अ (प्र. ७७) : सम्पादक-पद्मश्री मुनि जिनविजय पुरातत्वाचार्य, (१६+७३+३२६+६६), १९६४ ई० । मू. ३४.५०
३२. सन्त कवि रजब-सम्प्रदाय और साहित्य (प्र. ७६) : लेखक-डॉ. ब्रजलाल वर्मा,
(८+३१४), १९६५ ई० । मू. ७.२५
३३. प्रतापरासी, जाचिक जीवण कृत, (प्र. ७५) : अलवर राज्य के संस्थापक रावराजा प्रतापसिंहजी के शौर्य का ऐतिहासिक वर्णन, भाषा-शास्त्रीय विशिष्ट अध्ययन सहित,
सम्पादक-डॉ. मोतीलाल गुप्त (१६६+११८), १९६५ । मू. ६.७५
३४. भक्तमाल, राघोदास कृत, चतुरदास कृत टीका; सम्पादक-श्री अमरचन्द नाहटा ।
(४२+२७+२८६), १९६५ ई० । मू. ६.७५